आर्थिक भूगोल
[ECONOMIC GEOGRAPHY]

— ❀ —

लेखक
शंकर सहाय सक्सेना एम० ए० (इकान०)
एम० ए० (काम) बी० काम०
प्रिंसिपल महाराणा कालेज उदयपुर तथा डीन कामर्स
फैकल्टी राजपूताना विश्वविद्यालय

रचयिता
भारतीय सहकारिता आन्दोलन, ग्राम्य अर्थशास्त्र, प्रारम्भिक अर्थशास्त्र, भारत का आर्थिक भूगोल, भारतीय मजदूर, भारतीय ग्राम्य अर्थशास्त्र, बैंकिंग तथा भारतीय अर्थशास्त्र की रूपरेखा आदि।
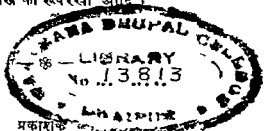
प्रकाशक
रामनारायण लाल
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
इलाहाबाद

संस्करण] १९५१ [मूल्य ७)

मुद्रक—

मंत्री रमजानअली शाह

नेशनल प्रेस

प्रयाग

५ मई १९५१

निवेदन

आर्थिक भूगोल के चतुर्थ संस्करण को लेकर उपस्थित होते हुए लेखक को अत्यन्त हर्ष है। पुस्तक की लोकप्रियता तो इसी से सिद्ध है कि उसका तीसरा संस्करण शीघ्र ही समाप्त हो गया। उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान तथा मध्यप्रदेश में कामर्स के विद्यार्थियों के द्वारा पुस्तक पाठ्य-पुस्तक के रूप में काम मे लाई जा रही है। आज समय भी बदल गया है लेखक का स्वप्न सत्य होने जा रहा है। वह दिन दूर नहीं है जब हिन्दी उच्च शिक्षा का माध्यम बन जावेगी। लेखक उन व्यक्तियों मे से है जिनका विश्वास है कि उच्च शिक्षा भी हिन्दी के माध्यम के द्वारा आसानी से दी जा सकती है। विद्यार्थी जीवन से आज तक लेखक का केवल एक ही लक्ष्य रहा है—अर्थात् हिन्दी में उपयोगी विषयों पर साहित्य उत्पन्न किया जाय। इसी उद्देश्य को लेकर वह पिछले २० वर्षों से हिन्दी में अर्थ शास्त्र सम्बन्धी साहित्य उत्पन्न करने का प्रयत्न करता रहा है। प्रस्तुत पुस्तक उसी प्रेरणा का फल है।

पुस्तक लिखते समय तथा उसका संशोधन करते समय लेखक का बराबर यह ध्यान रहा है कि हिन्दी को वह आर्थिक भूगोल की एक प्रमाणिक पुस्तक दे। यद्यपि पुस्तक कालेजों मे कामर्स के विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर लिखी गई है; किन्तु लेखक ने इस बात की भरसक चेष्टा की है कि पुस्तक मे सभी बातों का समावेश हो। भारत के आर्थिक भूगोल का एक पृथक् भाग में विशद विवेचन किया गया है। प्रथम भाग में पृथ्वी के आर्थिक भूगोल को लिखते समय कुछ बातों को जिनका पाठ्यक्रम में उल्लेख नहीं है, परन्तु [illegible] लेखक जिन्हें आवश्यक समझता है समावेश कर दिया है। लेख[illegible]रियनियों से प्रभावित
n) ने इस विषय पर

है कि पुस्तक इटर-कामर्स तथा बी० काम० परीक्षा के लिए पूर्णतया पयाप्त होगी।

पारिभाषिक शब्दों के अंग्रेजी पर्यायवाची शब्द हिन्दी शब्दों के साथ ही कोष्टक में दे दिये गये हैं जिससे विद्यार्थियों को विषय का अध्ययन करने में कठिनाई न हो।

देश का विभाजन हो जाने से पाकिस्तान अलग हो गया है। इस कारण भारत के आर्थिक भूगोल के भाग को पुन लिखा गया है और विभाजन के बाद का परिस्थिति को ध्यान में रख कर नवीन तम आंकड़े दिए गए हैं। पाकिस्तान पर भी एक परिच्छेद दे दिया गया है।

इस सस्करण में बहुत सुधार किया गया है। अनेकों नये चित्र तथा आंकड़े और जोड़ दिये गये हैं। मुझे विश्वास है कि पुस्तक की उपयोगिता अब पहले से बहुत बढ़ गई है।

महाराणा कालेज
उदयपुर

शंकर सहाय सक्सेना

विषय सूची

प्रथम भाग

पृथ्वी

आर्थि... की प... था खरीद... ते हैं। प्रोफे... ...ली ...पता ...वस्तुओं ...पान ... ले जाने ...स्थितियों से प्रभावित ...ने इस विषय पर

दूसरा भाग

भारतवर्ष

आर्थिक भूगोल

प्रथम परिच्छेद

आर्थिक भूगोल के सिद्धान्त

भूगोल का शाब्दिक अर्थ है पृथ्वी से सम्बन्ध रखने वाला विषय और जब हम भूगोल विषय पर कुछ लिखते हैं तो उसका अर्थ यह होता है कि पृथ्वी और उस पर रहने वाले मनुष्य का पृथ्वी से क्या सम्बन्ध है उसको व्यक्त किया जावे। इस दृष्टि से भूगोल विषय को हम 'विवरणात्मक कला' (Descriptive Art) की श्रेणी में रख सकते हैं। परन्तु आजकल के विद्वान भूगोल विषय को 'विज्ञान' स्वीकार करते हैं और अन्य विज्ञानों की भाँति ही इसमें भी 'कारण और परिणाम' का अध्ययन किया जाता है।

अन्य विज्ञानों की भाँति ही भूगोल विज्ञान का प्रारम्भ भी शुद्ध विवरणात्मक रूप से ही हुआ। आरम्भ में केवल तथ्यों का सकलन मात्र होता था किन्तु जब तथ्यों के सकलन का कार्य समाप्त हो गया तो फिर उनकी व्याख्या करने के लिए सिद्धान्तों और नियमों का निर्माण किया गया। उदाहरण के लिए आज भूगोल के विद्वान इस विषय पर अधिक ध्यान नहीं देते कि कहाँ क्या उत्पन्न होता है परन्तु इस बात की खोज करने का प्रयत्न करते हैं कि अमुक प्रकार के धरातल की बनावट में अमुक खनिज मिलता है अथवा अमुक प्रकार की मिट्टी और जलवायु में अमुक प्रकार की वनस्पति उत्पन्न हो सकती। इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि भूगोल के विद्वान अब तथ्यों का सकलन बिलकुल नहीं करते। नवीन तथ्यों का सकलन तो होता है किन्तु आज भूगोल के विद्वानों का मुख्य कार्य भूगोल शास्त्र के सिद्धान्तों और नियमों की व्याख्या करना है।

आर्थिक भूगोल, भूगोल का एक शाखा मात्र है।

आर्थिक भूगोल की परिभाषा

"आर्थिक भूगोल में हम मनुष्य की भौगोलिक परिस्थिति (Natural Environments) का उसके आर्थिक प्रयत्नों पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन करते हैं।" इसके अध्ययन से हमें यह पता चलता है कि मनुष्य के आर्थिक प्रयत्न जहाँ तक वे वस्तुओं के उत्पादन, उनके एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने तथा खरीद बिक्री से सम्बन्ध रखते हैं वहाँ तक भौगोलिक परिस्थितियों से प्रभावित होते हैं। प्रोफेसर जी० जी० चिशोल्म (G G Chisolm) ने इस विषय पर

लिखते हुए कहा है—"इस विषय के अन्तर्गत उन सब भौगोलिक परिस्थितियों का विवरण होना चाहिए जो वस्तुओं की उत्पत्ति, उनके चलन, तथा क्रय विक्रय पर प्रभाव डालती हैं।"

आर्थिक भूगोल का क्षेत्र (Scope)

मनुष्य अपनी—भोजन-वस्त्र सम्बन्धी तथा अन्य, आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रकृति की सहायता से वस्तुओं को उत्पन्न करता है। उदाहरण के लिए किसान भूमि, वर्षा, धूप, और वायु की मदद से खेतों से बहुत तरह की फसलें पैदा करता है, जंगलों में प्रकृति बहुत प्रकार की बहुमूल्य लकड़ी, तथा अन्य वन सम्पत्ति उत्पन्न करती है जिसके द्वारा मनुष्य तरह तरह की वस्तुयें तैयार करता है। इसी प्रकार प्रकृति ने भूमि के अन्दर बहुत प्रकार की धातुओं को इकट्ठा कर दिया है जिनकी सहायता से मनुष्य बहुत तरह की चीजें बनाता है। सारांश यह है कि खेती-बारी और उद्योग धंधे प्रकृति पर ही निर्भर हैं। इसका दूसरे शब्दों में यह अर्थ हुआ कि किसी देश का समृद्धिशाली अथवा निर्धन होना वहाँ की प्रकृति पर निर्भर है। यदि संयुक्त राज्य अमेरिका तथा ब्रिटेन धनी देश हैं और यदि भारत तथा चीन में कभी उद्योग धंधों की उन्नति होगी तो केवल इस लिए, कि इन देशों की प्रकृति धनी है।

किसी भी देश की "प्रकृति" कैसी है, यह वहाँ के भूगोल को जानने से ही जानी जा सकती है। अतएव आर्थिक तथा व्यापारिक भूगोल (Economic Geography) मनुष्य की आर्थिक (Economic) स्थिति तथा उसके निवास-स्थान का घनिष्ठ सम्बन्ध बतलाता है। मनुष्य समाज उन्नति तभी कर सकता है कि जब प्रकृति उसे यथेष्ट भोजन तथा वे वस्तुयें प्रदान करे जिनकी मनुष्य को नितान्त आवश्यकता होती है।

सच तो यह है कि मनुष्य की आर्थिक उन्नति का आधार उसके निवास-स्थान की भौगोलिक परिस्थिति (Natural Environments) ही है। किसी देश की पैदावार कैसी होगी, कौन कौन सी फसलें उत्पन्न की जावें, वहाँ कौन कौन से धंधे चल सकेंगे, शक्ति (power) का कितना उपयोग हो सकेगा, मजदूरों की कार्य-क्षमता कैसी होगी, व्यापारिक मार्गों की सुविधा होगी या नहीं, इत्यादि सभी बातें किसी देश की भौगोलिक परिस्थिति (Natural Environments) पर ही अवलम्बित हैं। भौगोलिक परिस्थिति के अन्तर्गत धरातल की बनावट, जलवायु, तथा एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश का भौगोलिक सम्बन्ध, इत्यादि सभी बातें आ जाती हैं।

यदि देखा जाय तो मनुष्य की आर्थिक उन्नति का आधार उसके निवास स्थान की भौगोलिक परिस्थिति ही है। परन्तु यदि थोड़ी देर के लिए यह भी मान लिया

विद्यार्थी को इन सभी समस्याओं का अध्ययन करना आवश्यक है। इन समस्याओं के अतिरिक्त हम और भी समस्याओं का अध्ययन करना होगा। जैसे उजाड़ देशों को आबाद करने के कारण, एक देश से दूसरे देश म मनुष्यों क प्रवास का कारण, तथा भिन्न भिन्न जातियों के मिलने से जो आर्थिक समस्याएँ उपस्थित होती हैं उनका भी समावेश इस विषय म होना आवश्यक है।

मनुष्य तथा उसकी परिस्थिति (Environments)

मनुष्य जिस स्थान में निवास करता है वहाँ क अनुसार ही उसे अपना जीवन बनाना पड़ता है। मानवीय भूगोल (Human Geography) के विद्वानों का कथन है कि "जातियाँ अपने निवास स्थान की उपज हैं" किसी देश के निवासियों का मुख्य धंधा क्या होगा? वहाँ का पहनावा क्या होगा? तथा उनका रहन सहन, स्वभाव और कार्यक्षमता कैसी होगी? यह बहुत कुछ उस देश की भौगोलिक परिस्थिति पर ही निर्भर है। मनुष्य का पेशा उसके स्वभाव पर एक प्रकार का विशेष प्रभाव डालता है। भिन्न भिन्न जातियों क स्वभाव का अध्ययन करने से यह बात स्पष्ट हो जावेगी।

संसार की समस्त शिकारी जातियाँ लड़ाकू होती हैं। व जंगलों में पशु पक्षियों को मार कर तथा प्रकृति द्वारा उत्पन्न किये हुये फलों पर अपना गुजारा करती हैं। प्रकृति की दी हुई चीजों को नष्ट करते-करते उनका स्वभाव नष्टकारी बन जाता है, विनाश ही उनका ध्येय होता है, यही कारण है कि ऐसी जातियाँ लड़ने भिड़ने के लिये बहुत उत्सुक रहती हैं, और उनकी दृष्टि में जीवन का मूल्य नहीं होता यही कारण है कि शिकारी जातियों में बल और शक्ति की पूजा होती है और बलवान व्यक्ति ही समाज का नेता माना जाता है। गड़रिये का स्वभाव शिकारियों से भिन्न होता है, क्योंकि वह अपनी भेड़ों तथा पशुओं की रक्षा करता है, उसके लिये जीवन बहुत मूल्यवान है। उसका ध्येय अपनी पशु-सम्पत्ति की रक्षा करना है, फिर वह कलह प्रिय क्यों होगा। इसी प्रकार किसान भी शान्तिप्रिय होता है क्योंकि उसका सम्बन्ध भूमि से है। भूमि पर खेती-बारी तभी ठीक तरह से हो सकती है जब देश में शान्ति हो। भूमि से सम्बन्धित होने के कारण किसान कभी प्रवास (Migration) का विचार ही नहीं करता। वह समाज के अन्दर कोई क्रान्तिकारी उलट फेर पसन्द नहीं करता। यही कारण है कि वह पुराने रीतियों को श्रद्धा की दृष्टि से देखता है, और कोई बात जल्दी ही स्वीकार नहीं करता। उसके अपने वंशपरम्परागत अनुभव पर अधिक विश्वास होता है। पशु पालने वाली जातियाँ शान्ति प्रिय होती हैं, इस लिये वे भी रूढ़िवादी होती हैं और कोई परिवर्तन पसन्द नहीं करती।

अनुभव की बड़ी आवश्यकता होती है यही कारण है कि ...

अनुभव के श्रद्धा से देखा जाता है। जो आयु में बड़ा है वही समाज का नेतृत्व करता है।

बड़े-बड़े कारखाना में काम करने वाले तथा विशाल नगरों में रहने वाले मिल मजदूरों का स्वभाव सर्वथा भिन्न होता है। वह पुरानी रस्मों में विश्वास नहीं रखते और न उन्हें किसी स्थान विशेष से अधिक प्रेम ही होता है। मैनचेस्टर के कारखाने में काम करने वाला मजदूर यदि कनाडा में धन उपार्जन का अच्छा अवसर पाता है तो वह निस्संकोच अपना देश छोड़ कर कनाडा चला जाता है। इसके विपरीत उत्तर प्रदेश का ग्रामीण भूखे रहकर भी अपने बाप-दादों के स्थान को नहीं छोड़ना चाहता। चाहे कोई भी देश क्यों न हो वहाँ की भिन्न भिन्न पेशेवाली जातियों का स्वभाव अवश्य ही भिन्न होगा।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि धंधा या पेशा भौगोलिक परिस्थिति (Natural Environment) पर निर्भर है, अतएव अप्रत्यक्ष रूप से जातियों के स्वभाव तथा उनके विचारों पर भी भौगोलिक परिस्थिति का प्रभाव पड़ता है। धीरे धीरे इन जातियों में कुछ विशेष गुण उत्पन्न हो जाते हैं, यहाँ तक कि वे एक दूसरे से बिलकुल भिन्न हो जाती हैं। हमें जो जातियों में भिन्नता दिखलाई देती है वह उनके निवास-स्थान के प्रभाव के कारण है। केवल स्वभाव और विचार ही नहीं उनके स्वास्थ्य तथा मानसिक विकास पर भी भौगोलिक परिस्थिति का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है, यदि एक बिलोची, बिलोचिस्तान के पहाड़ों की तरह ही कठोर और बलशाली होता है तो केवल इसलिये कि वहाँ की भौगोलिक परिस्थिति ने उसको ऐसा बना दिया है। यदि बंगाल का रहने वाला मनुष्य निर्बल होता है और नैपाल की घाटियों में रहने वाला मनुष्य हृष्टपुष्ट और बलवान होता है तो इसका कारण दोनों देशों की भौगोलिक परिस्थिति में छिपा है।

बिलोचिस्तान के शुष्क पठार में रहने वाला बिलोची इस कारण हृष्ट पुष्ट परन्तु स्वभाव से रूखा होता है क्योंकि वहाँ सूखे पहाड़ हैं प्रकृति बहुत उदार नहीं है अत्यन्त परिश्रम करने पर ही प्रकृति मनुष्य के उदरपोषण योग्य पदार्थ उत्पन्न करती है। खेती करना सिंचाई के लिए कुएँ इत्यादि बनाना तथा आना जाना उस प्रदेश में सरल नहीं है इस कारण बिलोची जन्मजात बलिष्ट होता है।

हिमालय पर्वत के निवासियों को देखिये उनकी टाँगें और विशेषकर उनकी पिंडलियाँ कितनी बलिष्ट और सुन्दर होती हैं क्योंकि युगों युगों से उनको पहाड़ों पर चढ़ना पड़ता है।

पूर्वीय बंगाल के निवासी निर्बल और अशक्त तथा आलसी होते हैं भूमध्य रेखा के गर्म तरी सघन वनों में रहने वाले लोग तो और भी अधिक निर्बल और आलसी

होते हैं क्योंकि वहाँ की प्रकृति इतनी उदार है कि थोड़े से प्रयत्न से ही मनुष्य को वहाँ उदरपूर्ति के लिए यथेष्ट साधन प्राप्त हो जाते हैं।

मरुभूमि की रहने वाली जातियाँ घुमक्कड़ जातियाँ बन जाती हैं क्योंकि उन्हें जल की खोज में अपने पशुओं सहित एक स्थान से दूसरे स्थान पर निरन्तर जाना पड़ता है। इसी प्रकार जातियों के रीति रस्म तथा उनके आचार विचार भी भिन्न हो जाते हैं यही कारण है कि जब एक देश के नाम पर कोई कार्य किया जाता है तो उस देश के निवासी उसमें भरसक सहयोग देते हैं किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय कार्यों में सब उदासीन दिखलाई पड़ते हैं।

पृथ्वी के धरातल की बनावट (Relief) का प्रभाव

पृथ्वी की धरातल की बनावट सब जगह एक सी नहीं होती। कहीं ऊँचे पहाड़ हैं तो कहीं नीचे मैदान। धरातल में धीरे धीरे परिवर्तन होता रहता है। वायु, जल, धूप, पौधे तथा हिम पृथ्वी के धरातल (Relief) का रूप बदलते रहते हैं। नदियों के द्वारा घाटियाँ और नीचे मैदान बनते हैं। वायु एक स्थान की मिट्टी को उड़ाकर दूसरे स्थान पर जमा देती है। वर्षा पौधे तथा तेज धूप भी धीरे धीरे धरातल को तोड़ते रहते हैं। इनके सिवा पृथ्वी के कुछ भाग प्राकृतिक रूप से ही ऊँचे उठते जा रहे हैं और कुछ भाग नीचे होते जा रहे हैं। समुद्र भी कहीं-कहीं पृथ्वी को काटता रहता है तो कहीं वह पृथ्वी से दूर हट जाता है पौधों की जड़ें भी चट्टानों को तोड़ती रहती हैं धूप और पानी भी चट्टानों को तोड़ते हैं। भूकम्पों के कारण तो धरातल में एकाएक भयंकर परिवर्तन हो जाता है, थोड़े से ही समय में धरातल की कायापलट हो जाती है। किंतु अधिकतर परिवर्तन इतने धीरे धीरे होते हैं कि मनुष्य को उसका आभास तक नहीं होता।

धरातल की बनावट मनुष्य की आर्थिक स्थिति पर बहुत प्रभाव डालती है। जलवायु तथा पैदावार बहुत कुछ धरातल की बनावट पर ही निर्भर हैं, परन्तु प्रत्यक्ष रूप से भी धरातल की बनावट (Relief) किसी भी प्रदेश की आर्थिक उन्नति की सीमा को निर्धारित करती है। जैसे, ऊँचे पहाड़ों से भरे हुए प्रदेश की आर्थिक उन्नति अधिक नहीं हो सकती है, क्योंकि न तो वहाँ खेती बारी ही अधिक हो सकती है, न उद्योग धन्धों की ही उन्नति हो सकती है, और न मार्गों की ही सुविधा होती है। यही कारण कि ऐसे प्रदेशों में आबादी घनी नहीं होती। पहाड़ी प्रदेशों के निवासियों के मुख्य धंधे पशु-पालन, खान खोदना, तथा लकड़ी की वस्तुएँ बनाना है। पहाड़ी प्रदेशों के विपरीत जहाँ नीचे मैदान होते हैं वहाँ यदि भूमि उपजाऊ हो तो आबादी घनी होती है, क्योंकि वहाँ खेती-बारी तथा धंधे पनप सकते हैं और मार्गों की सुविधा होने से व्यापार भी उन्नति हो सकती है।

१

यही नहीं, धरातल की बनावट मनुष्य के शरीर पर भी प्रभाव डालता है। उदाहरण के लिये पर्वत पर रहने वाला मनुष्य हृष्टपुष्ट तथा परिश्रमी होता है, क्योंकि वह कड़ी मेहनत के बाद ही अपनी थोड़ी सी आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है। किन्तु मैदानों में रहने वाला कमजोर होता है, क्योंकि वह थोड़े से परिश्रम से ही अपनी बहुत सी आवश्यकताओं को पूरा कर लेता है।

इसके साथ ही हमें नदियों के प्रभाव पर भी विचार करना आवश्यक है। नदियाँ मनुष्य की आर्थिक उन्नति में बहुत अधिक सहायक होती हैं। खेतों की सिंचाई तो नदियों के द्वारा होती ही है, रेलों के पूर्व यही मुख्य व्यापारिक मार्ग थे। आज भी बहुत सी नदियाँ मार्ग की सुविधा प्रदान करती हैं। आधुनिक काल में पानी से सस्ते दामों में बिजली उत्पन्न करने की विधि ने पहाड़ी नदियों के महत्व को बहुत बढ़ा दिया है।

पृथ्वी के धरातल की बनावट का अध्ययन इसलिये भी आवश्यक है कि इससे एक प्रदेश का दूसरे से सम्बन्ध मालूम होता है। यदि कोई विद्यार्थी बम्बई के बन्दरगाह का महत्व जानना चाहता है तो उसे भारत के उस प्रदेश के विषय में जानकारी करना चाहिए जिसकी पैदावार बम्बई से बाहर भेजी जाती है। आधुनिक औद्योगिक केन्द्र उन स्थानों में पाये जाते हैं जहाँ कच्चा माल तथा शक्ति (Power) उत्पन्न करने के साधन आसानी से उपलब्ध हो सकें। हमें केवल धरातल का ही अध्ययन नहीं करना होगा वरन् चट्टानों का भी अध्ययन करना होगा जिनसे कि मिट्टी बना है। चट्टानों की बनावट पर ही धातुओं का होना निर्भर है। यही सब बातें किसी देश की पैदावार, खनिज सम्पत्ति (Mineral wealth) तथा आर्थिक उन्नति को निश्चित करती हैं।

जलवायु का प्रभाव

मनुष्य के जीवन पर जलवायु का बहुत अधिक प्रभाव है। गरमी, जल, तथा वायु मनुष्य के जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं। वनस्पति (Vegetation) भी जलवायु पर ही निर्भर है। यद्यपि गरमी और जल थोड़ा बहुत मात्रा में सब जगह पाया जाता है, फिर भी इनके यथेष्ट मात्रा में न होने से अथवा जरूरत से ज्यादा होने से बहुत से प्रदेश मनुष्य के रहने के लिये उपयुक्त नहीं रहते। गरम रेगिस्तान, बर्फीले मैदान, तथा हिमाच्छादित पर्वत श्रेणियाँ मनुष्य के निवास-स्थान बनने के योग्य नहीं हैं। यद्यपि ऐसे स्थानों में भी कुछ मनुष्य रहते हैं परन्तु उनका जीवन इतना कठिनाई का है कि वहाँ अधिक जन संख्या के निवास करने की कोई सम्भावना नहीं हो सकती।

जलवायु का सम्बन्ध उन पैदावारों से है जिन पर मनुष्य का जीवन निर्भर है अतएव वह जलवायु के प्रभाव से नहीं बच सकता। मनुष्य जलवायु को नहीं बदल सकता। यदि किसी प्रदेश में वर्षा बहुत कम होती है तो मनुष्य पानी नहीं बरसा सकता। अधिक से अधिक वह यह कर सकता है कि जहाँ पानी अधिक बरसता है वहाँ के पानी को नहरों द्वारा लाकर अपनी भूमि सींच ले। परन्तु सिंचाई थोड़ी सी ही भूमि को उपजाऊ बना सकती है, क्योंकि बिना वर्षा के केवल सिंचाई से ही सारा काम नहीं चल सकता। यही कारण है कि रेगिस्तान आज भी रेगिस्तान बने हुये हैं। नील नदी से थोड़ा सा प्रदेश सींचा जा सकता है किन्तु सारे रेगिस्तान को उपजाऊ नहीं बनाया जा सकता। केवल पैदावार ही नहीं, उद्योग धंधे भी बहुत कुछ जलवायु पर निर्भर हैं और अप्रत्यक्ष रूप से जलवायु का व्यापार पर भी प्रभाव पड़ता है।

मनुष्य की सभ्यता भी जलवायु से बिना प्रभावित हुये नहीं रहती। संसार में सबसे पहले सभ्यता उष्ण प्रधान देशों में फैली। भाप का आविष्कार होने के बाद शीतोष्ण (Temperate) देशों में उसका प्रादुर्भाव हुआ। यह सब जलवायु का कारण है। उत्तर तथा दक्षिण ध्रुवों के प्रदेशों (Polar Regions), दलदल, मैदानों, तथा विषुवत् रेखा (Equator) के सघन वनों में जो पिछड़ी हुई जातियाँ रहती हैं वे जलवायु के ही कारण इतनी पिछड़ी हुई हैं। जलवायु का प्रभाव केवल यहाँ तक ही परिमित नहीं है। जिन देशों में ठंड अधिक पड़ती है वहाँ का समुद्र तथा नदियाँ जाड़े में जम जाती हैं और इसका फल यह होता है कि वहाँ का व्यापार रुक जाता है। सायबेरिया सभ्य संसार से केवल इसी कारण पृथक् है कि उसकी नदियाँ तथा समुद्र जाड़े में जम जाते हैं और बन्दरगाहों में जहाज नहीं आ-जा सकते। यही कारण है कि रूस काले-सागर (BlackSea) के द्वारा मैडीटरेनियन सागर में जाने के लिये दरेदानियाल के मुहाने को अपने कब्जे में रखना चाहता था, कि जिससे जाड़े में भी उसको व्यापार की सुविधा हो।

शीतोष्ण (Temperate) तथा ध्रुवों (Poles) के समीप के प्रदेशों में गरमी का मौसम पैदावार तथा व्यापार के लिये अत्यन्त सुविधा जनक होता है, किंतु जाड़ा सुस्ती तथा व्यापार की मन्दी का समय होता है। इन देशों में जाड़े के दिनों में पौधा उग ही नहीं सकता, और यदि उग भी जाय तो ज्यादा दिनों जिंदा नहीं रह सकता। इसका फल यह होता है कि इन देशों में गरमी के मौसम में लोग साल भर के लिये भोजन उत्पन्न करने में बड़ी लगन तथा मेहनत से काम करते हैं तथा जाड़े के दिन आलस्य के होते हैं। बरसात के दिनों में मानसून वाले प्रदेशों में अधिक काम नहीं होता। भारत में वर्षा के दिनों में किसान खाली रहता है, यही कारण है कि इन दिनों यहाँ आल्हा, नौटंकी तथा तमाशों की धूम रहती है।

यही नहीं, धरातल की बनावट मनुष्य के शरीर पर भी प्रभाव डालती है। उदाहरण के लिये पर्वत पर रहने वाला मनुष्य हृष्टपुष्ट, साहसी तथा परिश्रमी होता है, क्योंकि वह बड़ी मेहनत के बाद ही अपनी थोड़ी सी आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है। किन्तु मैदानों में रहने वाला कमजोर होता है, क्योंकि वह थोड़े से परिश्रम से ही अपनी बहुत सी आवश्यकताओं को पूरा कर लेता है।

इसके साथ ही हम नदियों के प्रभाव पर भी विचार करना आवश्यक है। नदियाँ मनुष्य की आर्थिक उन्नति में बहुत अधिक सहायक होती हैं। खेतों की सिंचाई तो नदियों के द्वारा होती ही है, रेलों के पूर्व येही मुख्य व्यापारिक मार्ग थे। आज भी बहुत सी नदियाँ मार्ग की सुविधा प्रदान करती हैं। आधुनिक काल में पानी से सस्ते दामों में बिजली उत्पन्न करने की विधि ने पहाड़ी नदियों के महत्व को बहुत बढ़ा दिया है।

पृथ्वी के धरातल की बनावट का अध्ययन इसलिये भी आवश्यक है कि इससे एक प्रदेश का दूसरे से सम्बन्ध मालूम होता है। यदि कोई विद्यार्थी बम्बई के बन्दरगाह का महत्व जानना चाहता है तो उसे भारत के उस प्रदेश के विषय में जानकारी करना चाहिये जिसकी पैदावार बम्बई से बाहर भेजी जाती है। आधुनिक *औद्योगिक केन्द्र उन स्थानों में पाये जाते हैं जहाँ कच्चा माल तथा शक्ति (Power)* उत्पन्न करने के साधन आसानी से उपलब्ध हो सकें। हम केवल धरातल का ही अध्ययन नहीं करना होगा वरन् चट्टानों का भी अध्ययन करना होगा जिनसे टूटने से मिट्टी बना है। चट्टानों की बनावट पर ही धातुओं का होना निर्भर है। यही सब बातें किसी देश की पैदावार, खनिज सम्पत्ति (Mineral wealth) तथा आर्थिक उन्नति को निश्चित करती हैं।

जलवायु का प्रभाव

मनुष्य के जीवन पर जलवायु का बहुत अधिक प्रभाव है। गरमी, जल, तथा वायु मनुष्य के जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं। वनस्पति (Vegetation) भी जलवायु पर ही निर्भर है। यद्यपि गरमी और जल थोड़ी बहुत मात्रा में सब जगह पाया जाता है, फिर भी इनके यथेष्ट मात्रा में न होने से अथवा जरूरत से ज्यादा होने से बहुत से प्रदेश मनुष्य के रहने के लिये उपयुक्त नहीं रहते। गरम रेगिस्तान, बर्फीले मैदान, तथा हिमाच्छादित पर्वत श्रेणियाँ मनुष्य के निवास-स्थान बनने के योग्य नहीं हैं। यद्यपि ऐसे स्थानों में भी कुछ मनुष्य रहते हैं परन्तु उनका जीवन इतना कठिनाई का है कि यहाँ अधिक जन संख्या के निवास करने की कोई सम्भावना नहीं हो सकती।

जलवायु का सम्बन्ध उन पैदावारों से है जिन पर मनुष्य का जीवन निर्भर है अतएव वह जलवायु के प्रभाव से नहीं बच सकता। मनुष्य जलवायु को नहीं बदल सकता। यदि किसी प्रदेश में वर्षा बहुत कम होती है तो मनुष्य पानी नहीं बरसा सकता। अधिक से अधिक वह यह कर सकता है कि जहाँ पानी अधिक बरसता है वहाँ के पानी को नहरों द्वारा लाकर अपनी भूमि सींच ले। परन्तु सिंचाई थोड़ी सी ही भूमि को उपजाऊ बना सकती है, क्योंकि बिना वर्षा के केवल सिंचाई से ही सारा काम नहीं चल सकता। यही कारण है कि रेगिस्तान आज भी रेगिस्तान बने हुये हैं। नील नदी से थोड़ा सा प्रदेश सींचा जा सकता है किन्तु सारे रेगिस्तान को उपजाऊ नहीं बनाया जा सकता। केवल पैदावार ही नहीं, उद्योग धंधे भी बहुत कुछ जलवायु पर निर्भर हैं और अप्रत्यक्ष रूप से जलवायु का व्यापार पर भी प्रभाव पड़ता है।

मनुष्य की सभ्यता भी जलवायु से बिना प्रभावित हुये नहीं रहती। संसार में सबसे पहले सभ्यता उष्ण प्रधान देशों में फैली। भाप का आविष्कार होने के बाद शीतोष्ण (Temperate) देशों में उसका प्रादुर्भाव हुआ। यह सब जलवायु का कारण है। उत्तर तथा दक्षिण ध्रुवों के प्रदेशों (Polar Regions), दलदल, मैदानों, तथा विषुवत् रेखा (Equator) के सघन वनों में जो पिछड़ी हुई जातियाँ रहती हैं वे जलवायु के ही कारण इतनी पिछड़ी हुई हैं। जलवायु का प्रभाव केवल यहाँ तक ही परिमित नहीं है। जिन देशों में ठंड अधिक पड़ती है वहाँ का समुद्र तथा नदियाँ जाड़े में जम जाती हैं और इसका फल यह होता है कि वहाँ का व्यापार रुक जाता है। सायबेरिया सभ्य संसार से केवल इसी कारण पृथक् है कि उसकी नदियाँ तथा समुद्र जाड़े में जम जाते हैं और बन्दरगाहों में जहाज नहीं आ जा सकते। यही कारण है कि रूस काले-सागर (BlackSea) के द्वारा मैडीटरेनियन सागर में जाने के लिये दरेदानियाल के मुहाने को अपने कब्जे में रखना चाहता था, कि जिसमें जाड़े में भी उसको व्योपार की सुविधा हो।

शीतोष्ण (Temperate) तथा ध्रुवों (Poles) के समीप के प्रदेशों में गरमी का मौसम पैदावार तथा व्यापार के लिये अत्यन्त सुविधा जनक होता है, किंतु जाड़ा सुस्ती तथा व्यापार की मंदी का समय होता है। इन देशों में जाड़े के दिनों में पौधा उग ही नहीं सकता, और यदि उग भी जाय तो ज्यादा दिनों जिंदा नहीं रह सकता। इसका फल यह होता है कि इन देशों में गरमी के मौसम में लोग साल भर के लिये भोजन उत्पन्न करने में बड़ी लगन तथा मेहनत से काम करते हैं तथा जाड़े के दिन आलस्य के होते हैं। बरसात के दिनों में मानसून वाले प्रदेशों में अधिक काम नहीं होता। भारत में वर्षा के दिनों में किसान खाली रहता है, यही कारण है कि इन दिनों यहाँ आल्हा, नौटंकी तथा तमाशों की धूम रहती है।

जो जातियाँ एक से जलवायु में रही हैं उनका रहन-सहन बहुत कुछ एकसी ही होती है। इस कारण ऐसी जातियाँ शीघ्र ही अपने देश के समान जलवायु वाले देशों में जाने को तैयार हो जाती हैं। भिन्न जलवायु मनुष्य के प्रवास के लिये बाधक है। ब्रिटिश जाति के लोग प्रति वर्ष कनाडा तथा संयुक्तराज्य अमेरिका में जाकर बसते हैं किन्तु बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी आस्ट्रेलिया तथा दक्षिण अफ्रीका में अधिक मनुष्य जाकर नहीं बसते। भारत के गरम मैदानों की भीषण गरमी से घबराकर अंग्रेज तथा भारतवासी हिमालय तथा दूसरे पहाड़ी स्थानों पर चले जाते हैं। इस थोड़े काल के प्रवास के ही कारण शिमला, नैनीताल, दार्जलिंग, मसूरी, उटकमंड, पचमढ़ी तथा आबू महत्वपूर्ण स्थान बन गए हैं।

जलवायु और प्रवास (Migration)

मनुष्य को अपने मकान बनाने में जलवायु का बहुत विचार करना पड़ता है। जिन देशों में वर्षा अधिक होती है वहाँ के मकानों की छतें ढालू होती हैं। बहुत ठंडे देशों में मकान बिना आँगन के बनाये जाते हैं और गरम देशों में बिना आँगन का मकान रहने योग्य नहीं होता। ठंडे देशों में कमरे एक दूसरे से सटाकर बनाये जाते हैं जिससे रहने वाले ठंड से बच सकें। गरम देशों में छत ढालू नहीं होती और मकान में ज्यादा हवा आने के लिये बरामदा बनाया जाता है। ठंडे देशों में सड़कें अधिक चौड़ी बनाई जाती हैं जिससे सूरज की धूप खूब मिलती रहे। इसके विपरीत गरम देशों में पतली गलियाँ ही अधिक दिखलाई देती हैं। हाँ जहाँ आमदरफ्त अधिक होती है वहाँ चौड़ी सड़क ही बनानी पड़ती है। संक्षेप में कह सकते हैं कि मनुष्य का दैनिक जीवन जलवायु से बहुत कुछ प्रभावित होता है।

जलवायु और इमारतें

व्यापारिक मार्गों पर भी जलवायु का कुछ कम प्रभाव नहीं है। जिन स्थानों पर बहुत बर्फ पड़ती है वहाँ रेल और जहाज व्यर्थ हो जाते हैं। जाड़े में उत्तर के समुद्र जम जाते हैं और जहाजों का आना जाना रुक जाता है। जहाँ रेलवे लाइनें बर्फ से दब जाती हैं वहाँ भी मार्ग की असुविधा हो जाती है। जिन देशों में वर्षा बहुत अधिक होती है वहाँ भी मार्ग की बहुत असुविधा हो जाती है। जिन देशों में अत्यधिक वर्षा होती है रेलवे लाइनें बह जाती हैं। सड़कों पर पुल न होने के कारण उनका उपयोग नहीं हो सकता, साथ ही कच्चे रास्तों पर आना-जाना ही असम्भव हो जाता है। रेगिस्तानों में हवा रेत की पहाड़ियाँ खड़ी करके रास्ता रोक देती है और रेलवे ट्रेनों को घंटों रुकना पड़ता है। प्राचीन काल में जब जहाज भाप से नहीं चलते थे तब तो हवा ही उनका अवलम्बन था।

जलवायु और व्यापारिक मार्ग

वैसे तो अप्रत्यक्ष रूप से जलवायु का प्रत्येक धंधे पर प्रभाव पड़ता है। किंतु कुछ धंधे प्रत्यक्ष रूप से जलवायु पर निर्भर हैं। उदाहरण के लिए सूती कपड़े के धंधे को नम हवा की आवश्यकता होती है जिससे सूत के तार न टूटें, और फिल्म-व्यवसाय के लिए तेजधूप की आवश्यकता होती है। खेती, फलों का धंधा तथा अन्य धंधे तो बहुत कुछ जलवायु पर ही निर्भर हैं।

जलवायु और उद्योग धंधे

मनुष्य के मस्तिष्क पर भिन्न भिन्न जलवायु का कैसा प्रभाव पड़ता है इसका ठीक अनुमान कर सकना कठिन है। फिर भी यह सब मानते हैं कि ठंडे जलवायु में मनुष्य हृष्टपुष्ट और चुस्त रहता है, और गरम जलवायु सुस्ती उत्पन्न करता है। गरमी में थोड़ा परिश्रम करने पर ही मनुष्य थक जाता है। इसके विपरीत ठंडी हवा मनुष्य के हृदय तथा मस्तिष्क को शक्ति प्रदान करती है। मनुष्य जातियों की विचार शक्ति में जो भिन्नता पाई जाती है वह उन जातियों के निवासस्थान के जलवायु का ही असर है। यदि ऐसा नहीं है तो भिन्न जातियों में विचार शक्ति की समानता क्यों पाई जाती है। नम हवा का प्रभाव मस्तिष्क पर बुरा पड़ता है और शुष्क तथा ठंडी हवा मस्तिष्क के लिए लाभदायक है। यदि देखा जाय तो भिन्न भिन्न देशों के निवासियों का स्वभाव उस देश के जलवायु के अनुसार ही होता है। अंग्रेज लोग खेल-कूद बहुत पसन्द करते हैं, क्योंकि इगलैंड का मेघाच्छन्न आकाश सुस्त रहने वाले मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। पृथ्वी के पूर्वीय देशों में जो उदासीनता दृष्टिगोचर होती है तथा योरोपीय देशों और उत्तरीय अमेरिका में जो चचलता का साम्राज्य है वह इन देशों की भिन्न जलवायु का ही फल है। स्काटलैंड के निवासियों में गम्भीरता, असाम धैर्य, और कल्पना शक्ति का जो बाहुल्य दिखाई देता है वह वहाँ के कुहरे से परिपूर्ण जलवायु का ही प्रभाव है। इगलैंड में गहरे रगों का रिवाज न होने का कारण वहाँ का मेघाच्छन्न आकाश है, और भारत जैसे गरम देश में जो तेज रगों का इतना अधिक प्रचार है इसका कारण यहाँ की तेज धूप है।

जलवायु का मस्तिष्क पर प्रभाव

अमरिका के प्रसिद्ध विद्वान सी० ई० हटिंगटन ने खोज के उपरान्त यह परिणाम निकाला है कि मनुष्य की शारीरिक शक्ति ६०° से ६५° फै० गरमी में सबसे अधिक चैतन्य रहती है, और मस्तिष्क सबसे अच्छा कार्य उस समय करता है जब बाहरी वायु का तापक्रम (Temperatute) ३८° फै० हो। यदि कुहरा अधिक पड़ता हो अथवा तापक्रम सब मैदानों में एकसा रहता हो, या फिर तापक्रम में जल्दी जल्दी परिवर्तन होता हो, तो मनुष्य की कार्य शक्ति कम हो

जलवायु और मनुष्य की कार्य शक्ति

जाती है। जब जलवायु भीषण वेग से चलती है तो मनुष्य के हृदय में उत्तेजना फैलता है। थोड़े में हम कह सकते हैं कि जलवायु का मनुष्य की कार्य शक्ति पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

जलवायु और वनस्पति

वनस्पति जलवायु तथा मिट्टी पर निर्भर होती है। वर्षा, गरमी, रोशनी, और वायु पौधे के लिए आवश्यक हैं। पौधे अपनी पत्तियों के द्वारा हवा से अपना भोजन ले लेते हैं और उनकी जड़ें पृथ्वी से जल खींचती हैं। रोशनी और धूप के द्वारा ही जल और वायु पौधे के लिये भोजन में परिणत होते हैं। भिन्न भिन्न जाति के पौधों के लिये भिन्न भिन्न जलवायु चाहिए किन्तु पौधे अपने अनुकूल जलवायु के अतिरिक्त दूसरे प्रकार के जलवायु में भी उत्पन्न हो सकते हैं। जिस प्रकार ठंडे देश का रहने वाला मनुष्य कम गरम देश में रह सकता है उसी प्रकार पौधा भी भिन्न जलवायु में उत्पन्न हो सकता है।

गरम देशों में पौधे घने और बहुतायत से उत्पन्न होते हैं, तथा ठंडे देशों में बिखरे हुए और कम उत्पन्न होते हैं। पौधे के लिए सूखी हवा हानिकर होता है क्योंकि वह पौधे का रस सुखा देती है। यही कारण है कि प्रकृति ने रेगिस्तान में ऐसे पौधे उत्पन्न कर दिये हैं जिन पर एक प्रकार का गोंद रहता है जिससे पौधे का रस न सूख सके। इसके अतिरिक्त इन पौधों पर पत्तियाँ ही नहीं होतीं, पत्तियों के स्थान पर काँटे होते हैं जिससे हवा रस नहीं सुखा सकती। पौधे के लिए रोशनी भी अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि पौधा रोशनी से ही जल्दी बढ़ता है।

वनस्पति का प्रभाव

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि अत्यधिक गरमी तथा ठंड पौधे को नष्ट नहीं कर देती। रेगिस्तान में १२०° फै० तापक्रम (Temperature) में भी पौधे उगते हैं और ध्रुव प्रदेश में बहुत नीचे तापक्रमों में भी वहाँ की घास मर नहीं जाता। हाँ गरम प्रदेशों में जहाँ जल यथेष्ट होता है वनस्पति बहुत सघन होता है और ठंडे देशों में वनस्पति कम होता है।

वनस्पति दो प्रकार की होता है। सघन वन (Wood lands) और घास के मैदान (Grass lands)। जिस प्रदेश में घास अथवा वन कुछ नहीं होता वह रेगिस्तान कहलाता है। वन भी कई प्रकार के होते हैं। उष्ण कटिबन्ध (Tropics) के सघन वनों से लेकर ठंडे प्रदेशों के पाइन (Pine) के जंगलों तक भिन्न भिन्न प्रकार के वन प्रदेश मिलते हैं। इसी प्रकार घास के मैदानों में भी बहुत तरह के मैदान होते हैं। सघन वनों के लिए अधिक वर्षा की आवश्यकता होती है और घास के मैदानों के लिए यह आवश्यक है कि वर्षा थोड़ा बहुत साल भर होती रहे। वनों

के लिए सूखी हवा हानिकारक है, परन्तु घास के मैदानों पर सूखी हवा का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

वन प्रदेशों से हमें बहुमूल्य लकड़ी मिलती है, जिस पर कागज, दियासलाई, लाख, फर्नीचर, खिलौने, वार्निश इत्यादि अनेक धन्धे निर्भर हैं। इसके अतिरिक्त वनों से और भी आवश्यक वस्तुयें मिलती हैं। वनों के कारण वर्षा अधिक होती है। नदियों में बाढ़ नहीं आती। वनों से खेतों को लाभ पहुँचता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि जंगलों का मनुष्य जीवन पर बहुत प्रभाव पड़ता है। घास के मैदान क्रमशः खेतों में परिणत हो गये हैं और वे भिन्न भिन्न फसलें उत्पन्न करते हैं जिन पर मनुष्य अपने भोजन तथा औद्योगिक कच्चे माल के लिये निर्भर है।

ऊपर दिये हुये विवरण से यह तो ज्ञात हो ही गया होगा कि जलवायु पर ही मनुष्य का जीवन निर्भर है। उसके रहने का ढंग, उसकी कार्य शक्ति तथा उसकी आर्थिक उन्नति जलवायु पर ही अवलम्बित है।

मनुष्य के जीवन पर जीव-जन्तुओं का प्रभाव

पृथ्वी पर अगणित जीव जन्तु रहते हैं। मनुष्य भी इनके साथ ही रहता है अतः उसे इनके द्वारा लाभ हानि दोनों ही पहुँचा करते हैं। कुछ तो ऐसे हैं जिनके बिना मनुष्य का काम ही नहीं चल सकता। उन्हें हम "मित्र" कहेंगे, और कुछ ऐसे हैं जो मनुष्य को हानि अधिक पहुँचाते हैं, उन्हें हम "शत्रु" कहेंगे।

शत्रु

शेर, भेड़िया तथा अन्य जंगली जानवर मनुष्य के शत्रु हैं। बीमारी फैलाने वाली मक्खियाँ और कीड़े भी मनुष्य के कम भयंकर शत्रु नहीं हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे कीड़े भी हैं जो पेड़ और फसलों को नष्ट कर देते हैं। गन्ना, कपास, गेहूँ, रबर, चाय, अंगूर और कहवा की पैदावार बहुत से देशों में केवल इन कीड़ों के द्वारा ही कम हो गई। संसार में सबसे अधिक शराब बनाने वाला देश फ्रांस, फायलौक्सैरा (Phylloxera) नामक कीड़े के कारण भयंकर आर्थिक स्थिति में फँस गया। फ्रांस के कृषि शास्त्रियों को एक दूसरी ही अंगूर की बेल उत्पन्न करनी पड़ी तब जाकर शराब का धन्धा नष्ट होने से बचा। इसी प्रकार कपास के कीड़े, बालवीविल (Bolweevil) के कारण संयुक्तराज्य अमेरिका को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा था। यही नहीं चूहे, खरगोश, सियार, सुअर और बन्दरों के कारण खेती को कितनी हानि होती है, इसका अन्दाजा कर सकना कठिन है। आस्ट्रेलिया में खरगोशों के कारण एक विकट समस्या खड़ी हो गई जिसके लिये सरकार को विशेष प्रयत्न करना पड़ा। भारत में भी इन जानवरों तथा कीड़ों से पैदावार का कम नुकसान नहीं होता।

इन शत्रुओं से फसल को बचाने के लिये किसान का बहुत सा समय और धन नष्ट होता है।

पृथ्वी पर ऐसे भी जीव-जन्तु हैं जिनके बिना मनुष्य का काम ही नहीं चल सकता। गाय, बैल, घोड़ा, गदहा, ऊँट, हाथी, भेड़, बकरा तथा कुछ अन्य पशु मनुष्य के लिये बहुत ही उपयोगी हैं। गाय, भैंस और बकरी से हमें दूध मिलता है, बैल और घोड़ा खेती के लिये आवश्यक हैं, साथ ही बोझा ढोने के काम भी आते हैं। भेड़, बकरा तथा ऊँट से मनुष्य को खाने और पहिनने की वस्तुएँ मिलती हैं। इनके अतिरिक्त रेशम के तथा लाख के कीड़े से हमें रेशम और लाख मिलता है। जिन प्रदेशों में रेलों का विस्तार नहीं हुआ है वहाँ आज भी बैल, घोड़ा, ऊँट हाथी और खच्चर ही सवारी का काम देते हैं। मनुष्य समाज की उन्नति में इन पशुओं का मुख्य भाग रहा है।

मित्र

उद्योग धंधों की उन्नति के लिये मजदूरों की उतनी ही अधिक आवश्यकता है जितनी कच्चे माल तथा शक्ति की। भिन्न भिन्न जाति के मजदूर एक से नहीं होते। कुछ मजदूर बहुत कार्य करने वाले होते हैं और कुछ नीचे दर्जे के होते हैं। किसी भी देश की औद्योगिक उन्नति (Industrial Develeoement) बहुत कुछ वहाँ के मजदूरों पर ही निर्भर होती है। यही कारण है जिन देशों में जन-संख्या कम है और व प्रकृति की देन (Natural Resources) से भरे पूरे हैं वहाँ कुलियों की माँग बहुत रहती है। यद्यपि घनी आबादी वाले पुराने देशों से बहुत से मजदूर प्रतिवर्ष नये उपनिवेशों में जाकर बसते हैं, फिर भी उन नये देशों की जितनी उन्नति हो सकती थी उतनी नहीं हुई है। अमरिका, अफ्रीका, तथा ओशनियाँ के देश इसी कारण अभी तक पूर्ण रूप से उन्नत नहीं हो सके। कुछ ऐसे गरम नये देश भी हैं जहाँ ठंडे देशों के निवासी नहीं रह सकते। इस कारण उन देशों को उन्नत करने के लिये गरम देशों के मजदूरों को वहाँ ले जाकर रक्खा गया। दक्षिणी अफ्रीका, आस्ट्रेलिया तथा कीनिया उपनिवेशों में यह समस्या आज भी वर्तमान है। जब ये उपनिवेश वीरान थे उस समय इनको उन्नत करने के लिये भारत, चीन और जापान से मजदूरों को लाया गया, किन्तु जब वे उपनिवेश उन्नत हो गये तब गोरी जातियाँ एशिया निवासियों को वहाँ रहने देना नहीं चाहतीं। वे उन उपनिवेशों को अपनी सन्तानों के लिये ही सुरक्षित रखना चाहती हैं। दक्षिणी अफ्रीका से भारतीयों को निकाल बाहर करने का प्रयत्न, आस्ट्रेलिया की सफेद नीति, (अर्थात् गोरी जातियों के सिवाय दूसरी जातियों को न आने देना) तथा संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा में एशिया-वासियों को न आने देना इस बात का प्रमाण है

मजदूर और जनसंख्या

कि रंग भेद का प्रश्न जटिल हो गया है। गोरी जातियों का पृथ्वी के अधिकांश भूभाग पर अधिकार है और वे एशिया के घने आबाद देशों अर्थात् भारत, चीन, और जापान के निवासियों को अपने अधिकृत देशों में नहीं बसने देना चाहतीं। जो मजदूर पहले इन उपनिवेशों की उन्नति करने के लिये बुलाये गये थे अब उन्हें भी निकाल बाहर करने का प्रयत्न किया जा रहा है। किन्तु इन उपनिवेशों में कुछ ऐसे देश हैं जहाँ गोरी जातियों के लोग काम ही नहीं कर सकते। उन देशों की उन्नति होना असम्भव है। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में यही समस्या उपस्थित है। गोरी जातियाँ इन देशों को उन्नत नहीं करतीं और सरकार एशिया-वासियों को बसाना नहीं चाहतीं।

आज प्रत्येक देश उद्योग धंधों की उन्नति करने की धुन में है। योरप के औद्योगिक देशों की स्थिति तो यह है कि वे भोज्य पदार्थ तथा कच्चा माल बहुत कम उत्पन्न करते हैं। प्रत्येक देश पक्का माल तैयार करके विदेशों में बेचना चाहता है। इसका फल यह हुआ कि संसार का बहुत भाग भोजन के लिये केवल थोड़े से देशों पर अवलम्बित है। परन्तु भारत, चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, न्यूजीलैंड तथा अरजैन्टाइन जो आज औद्योगिक प्रधान देशों को भोजन दे रहे हैं स्वयं अपनी औद्योगिक उन्नति करने में लगे हुये हैं। क्रमशः नये देशों में भी जन संख्या बढ़ रही है। इन नवीन उपनिवेशों में अभी भोज्य पदार्थ उत्पन्न करने की बहुत गुञ्जाइश है परन्तु मजदूरों की कमी के कारण खेती बारी की पूर्ण उन्नति नहीं हो सकती।

जनसंख्या का निवास

मनुष्य पृथ्वी भर पर फैला हुआ है। उत्तरी ध्रुव (North Pole) के समीप ग्राइसलैंड से लेकर ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों, भूमध्य रेखा (Equator) के सघन वनों, तथा रेगिस्तानों में भी वह पाया जाता है। जो देश रहने के योग्य नहीं है वहाँ भी मनुष्य रहता है। जिन देशों में आबादी आवश्यकता से अधिक है उन देशों को उसकी बढ़वार रोकना पड़ती है, और कुछ ऐसे देश हैं जहाँ जनसंख्या की कमी के कारण उस देश की उन्नति नहीं हो पाती। अस्तु उन देशों में जनसंख्या को बढ़ाने की कोशिश की जाती है।

किसी भी देश की आबादी के घना अथवा बिखरा होने के बहुत से कारण हैं, उनमें भूमि की पैदावार मुख्य है। मनुष्य के लिये भोजन, वस्त्र तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं की जरूरत होती है। अतएव जिन देशों में पैदावार अधिक होती है वहाँ की आबादी घनी होती है और जहाँ पैदावार कम होती है वहाँ आबादी बिखरी होती है। जिस भूमि पर कुछ उत्पन्न नहीं होता वहाँ मनुष्य नहीं रह सकता। रेगिस्तान जहाँ किसी प्रकार की भी पैदावार नहीं हो सकती आज भी जनशून्य है। इसका यह अर्थ

नहीं है कि जहाँ अधिक वनस्पति हो वहाँ अधिक जनसंख्या पाई जावेगी। जंगलों में बहुत कम आबादी होती है। इसका अर्थ यह है कि जिस प्रदेश में भूमि से जितनी अधिक पैदावार उत्पन्न की जा सकेगी अथवा धंधों के द्वारा जितनी अधिक सम्पत्ति (Wealth) उत्पन्न की जा सकेगी उतनी ही अधिक वहाँ आबादी होगी। मनुष्य भिन्न भिन्न धंधों को अपनाकर अपना निर्वाह करता है। शिकारी जातियाँ वनों व पशुओं और वनस्पति पर निर्भर रह कर, चरवाहे पशुओं को पालकर किसान खेती के द्वारा, तथा औद्योगिक जातियाँ पक्का माल तैयार करके उनको भोज्य पदार्थों से बदल कर निर्वाह करता है।

पशु और आबादी का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जंगलों में प्रतिवर्गमील आबादी बहुत कम होती है। इसका कारण है कि शिकारी जातियाँ कोई चीज पैदा नहीं करतीं। वे तो केवल प्रकृति द्वारा उत्पन्न हुई चीजों का उपभोग (Consume) करती हैं। पशु-पक्षियों को मार कर, मछलियों को पकड़ कर, तथा फलों को इकठ्ठा करके ही शिकारी अपना निर्वाह करता है अतएव उसको अपने कुटुम्ब के भरण पोषण के लिये बहुत अधिक क्षेत्रफल (Area) की आवश्यकता होती है।

शिकारी जातियाँ

शिकार द्वारा वनों में भोजन प्राप्त करना कठिन होता है, क्योंकि कभी कभी शिकार नहीं मिलता। इस कठिनाई से बचने के लिये मनुष्य ने पशुओं को पालना आरम्भ किया। पशुओं को पालने से भोजन निश्चित रूप से मिल सकता है। पशुओं को पालकर उनके दूध तथा मांस पर निर्वाह करके थोड़ी भूमि पर भी अधिक जनसंख्या निवास कर सकती है। चरवाहों की आबादी शिकारियों से अधिक घनी होती है। यदि चरागाह अच्छे होते हैं तब तो पशु चराने वाली जातियाँ वहाँ स्थायी रूप से रहती हैं, नहीं तो चारे की खोज में ये जातियाँ एक स्थान से दूसरे स्थान को चली जाती हैं। यही कारण है कि पशु चराने वाली जातियाँ अधिकतर एक स्थान पर नहीं रह सकतीं।

पशु चराने वाला

जिन देशों की भूमि, जलवायु, तथा भौगोलिक परिस्थिति खेती बारी के अनुकूल है वहाँ की आबादी घनी तथा स्थायी होती है। खेती के द्वारा थोड़ी सी भूमि पर भी बहुत से मनुष्य निर्वाह कर सकते हैं। जितनी भूमि एक गाय के निर्वाह के लिये आवश्यक है उतनी भूमि पर अन्न के उत्पन्न करने से आठ मनुष्यों का पालन हो सकता है। अतएव प्रति वर्ग मील भूमि पर खेती करके अधिक मनुष्य निर्वाह कर सकते हैं।

खेती करने वाली जातियाँ

किसान को अपनी भूमि से इतना निकट का सम्बन्ध होता है कि वह अपनी

भूमि को छोड़ कर नहीं जा सकता। खेती-बारी के लिए उपजाऊ भूमि, यथेष्ट जल, और गरमी की आवश्यकता होती है। जिन प्रदेशों में ये तीनों ही बातें हों वहाँ खेती-बारी खूब हो सकती है। कृषक जातियों को शिकारी तथा पशु चराने वाली जातियों की भाँति भोजन के लिए प्रतिदिन की दौड़-धूप नहीं करनी पड़ती। इस कारण ये जातियाँ अवकाश का समय शिक्षा, साहित्य, कला, तथा अन्य विद्याओं को जानने में व्यय करती हैं। सच तो यह है कि सभ्यता का विकास तभी हुआ जब मनुष्य खेती-बारी करने लगा। खेती दो प्रकार की होती है, (१) गहरी खेती (Intensive cultivation) और बिखरी खेती (Extensive cultivation)। यदि गहरी खेती वैज्ञानिक ढंग से की जावे तो उपज अधिक होती है और उस पर अधिक जनसंख्या का निर्वाह हो सकता है। गहरी खेती का अर्थ यह है कि भूमि की खूब जुताई हो, खाद डाला जाय, सिंचाई का प्रबन्ध हो, उत्तम बीज डाला जाय, तथा अत्यन्त सावधानी से खेती-बारी की जाय। चीन अपनी असंख्य जनसंख्या का भरणपोषण केवल गहरी खेती (Intensive cultivation) के ही द्वारा कर रहा है। सच तो यह है कि चीन में खेती इतनी सावधानी से की जाती है कि यदि उनको खेत न कह कर बाग कहें तो अत्युक्ति न होगी।

उद्योगधंधे तथा जनसंख्या

औद्योगिक देशों (Industrial countries) की आबादी बहुत घनी होती है क्योंकि उद्योग धंधों के लिए अधिक भूमि की आवश्यकता नहीं होती। एक कारखाने में जितने मूल्य का माल एक साल में तैयार होता है उतने मूल्य की पैदावार हजारों एकड़ जमीन पर भी उत्पन्न नहीं की जा सकती। औद्योगिक देश पक्के माल के बदले में अन्य देशों से भोज्य पदार्थ तथा कच्चा माल (Raw material) मँगाते हैं। इस कारण इन देशों में थोड़ी सी भूमि पर ही अधिक मनुष्य निर्वाह कर सकते हैं। औद्योगिक देश ही सब से घने आबाद देश हैं। इंगलैंड, बेलजियम, फ्रांस, जर्मनी और जापान इसके उदाहरण हैं। कृषक प्रधान देशों की आबादी औद्योगिक देशों की तुलना में बिखरी होती है क्योंकि किसान को खेती के लिए अधिक भूमि की आवश्यकता होती है। कृषि प्रधान देशों में चीन और भारत ही ऐसे देश हैं जहाँ आबादी घनी है। इसका मुख्य कारण यह है कि इन देशों के निवासी गरीबी में रहकर थोड़े में ही गुजारा कर लेते हैं।

मनुष्य के आर्थिक जीवन पर प्रभाव डालने वाले अभौगोलिक कारण

हम ऊपर लिख चुके हैं कि मनुष्य के आर्थिक कार्यों पर भौगोलिक कारणों का बहुत प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए धरातल की बनावट तथा जलवायु किसी प्रदेश की खेती बारी तथा उद्योगधंधों को निर्धारित करती है। परन्तु मनुष्य

से आर्थिक जीवन को जाताय गुण, धर्म, तथा शासन प्रबन्ध भी बहुत अधिक प्रभावित करते हैं। हम इन्हें सामाजिक (अभौगोलिक) कारण कह सकते हैं जो मनुष्य के आर्थिक जीवन को प्रभावित करते हैं।

पृथ्वी पर मुख्यत तीन जातियाँ पाई जाती हैं —गौर वर्ण, पीतवर्ण और श्याम वर्ण। यह तो हम ऊपर ही कह आये हैं कि जातियाँ भी अपनी भौगोलिक परिस्थितियों की उपज हैं फिर भी उनमें कुछ परम्परागत ऐसे गुण उत्पन्न हो गए हैं जो उनके आर्थिक जीवन को बहुत अधिक प्रभावित करते हैं। गौर वर्ण जातियाँ उन्नतिशील, कार्यकुशल, कुशाग्रबुद्धि और परिश्रमी होती हैं। उन्होंने खेती, धन्धों और व्यापार की यथेष्ट उन्नति की है।

पीत वर्ण जातियाँ भी उन्नत हैं तथा उनमें भी वे सारे गुण मौजूद हैं जो कि गौर वर्ण जातियों में हैं।

श्यामवर्ण जातियाँ मुख्यत भूमध्यरेखा (Equational Belt) के प्रदेश में रहती हैं। वे आर्थिक दृष्टि से पिछड़ी हुई हैं।

धर्म

मनुष्य के धर्म का भी उसके आर्थिक जीवन पर प्रभाव पड़ता है। धर्म मनुष्य को कुछ धंधे करने के लिए मना करता है और कुछ धधों के लिए प्रोत्साहन देता है। उदाहरण के लिए चीन, तथा जापान इत्यादि देशों में बुद्ध धर्म का प्राधान्य होने से वहाँ के निवासी मांस और अन्न के लिए पशुपालन की ओर से उदासीन रहते हैं।

भूमध्यसागर (Mediterranean Sea) के पूर्वीय प्रदेश जो कि अंगूर उत्पन्न करने के लिए बहुत उपयुक्त हैं शराब के धंधे को उन्नत न कर सके क्योंकि वहां के निवासी मुसलमान हैं और इस्लाम शराब का घोर विरोधी है। इसी प्रकार मुसलमानों में बैंकिंग का कारबार नहीं पनप सका क्योंकि इस्लाम सूद लेने की मनाही करता है। धार्मिक भावना के कारण ही मुस्लिम देशों में सुअर नहीं पाला जाता।

इसी प्रकार हिन्दुओं में जाति प्रथा के कारण श्रम विभाजन का पूरा प्रयोग नहीं हो पाता।

ईसाई धर्म इस प्रकार कोई बाधायें खड़ी नहीं करता इसी कारण ईसाई जातियां आर्थिक दृष्टि से अधिक उन्नतिशील हैं।

किसी देश की आर्थिक उन्नति उसकी शासन व्यवस्था पर भी निर्भर रहती है।

अच्छा शासन आर्थिक उन्नति के लिए एक अनिवार्य शर्त है। यदि देश की

शासन-व्यवस्था प्रगतिशील और सुव्यवस्थित नहीं है तो उस देश की आर्थिक उन्नति नहीं हो सकती।

नगर बसने के कारण

नगर अथवा गाँव भौगोलिक सुविधाओं के कारण ही बसाये जाते हैं। गाँवों तथा नगरों की उन्नति को देखने से वहाँ के निवासियों की उन्नति का पता चलता है। नगर एक ऐसी सामाजिक संस्था है जिसका सर्वदा विकास होता रहता है। यद्यपि भौगोलिक सुविधाओं का नगरों की स्थापना पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता जाता है, किन्तु उनकी स्थापना तथा विकास में अन्य बातें भी सहायक होती हैं। कभी कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि नगर स्वयं ही बढ़ रहा है। ऐसा बहुधा देखने में आता है कि किसी भौगोलिक कारण से एक नगर बसा, कुछ हद तक तो भौगोलिक अथवा आर्थिक कारणों से वह बढ़ता रहता है फिर वह जन-संख्या को आकर्षित करने लगता है। मनुष्य का स्वभाव है कि वह बड़े नगरों में जाकर रहना चाहता है। नगरों का जीवन मनुष्य को आकर्षित करता है। इसका परिणाम यह होता है कि गाँवों तथा कस्बों को छोड़कर लोग बड़े शहरों में जाकर बसने लगते हैं। बड़े शहर और अधिक बढ़ते जाते हैं और वहाँ उद्योग-धंधों की आवश्यकता से अधिक जनसंख्या निवास करने लगती है। उदाहरण के लिए भारत में जमींदार तथा पढ़े लिखे लोग गाँव को छोड़ कर शहरों में रहना पसन्द करते हैं। जो भी गाँव का लड़का पढ़ लिख जाता है वह शहर की तरफ भागता है। बात यह है कि शहरों में एक अज्ञात आकर्षण होता है। जो व्यक्ति लखनऊ, देहली या कलकत्ते में रह चुका है वह छोटे शहरों में रहना पसन्द नहीं करता और छोटे शहरों में रहने वाला गाँव में जाकर रहना पसन्द नहीं करता। एक बार जब एक शहर उन्नति कर लेता है तो वह स्वतः ही बढ़ता रहता है।

आगे चल कर हम नगरों के बसने तथा उनकी उन्नति के मुख्य कारणों का विवेचन करेंगे, किन्तु यहाँ हम उन सुविधाओं का संकेत कर देना आवश्यक समझते हैं जिनके कारण किसी स्थान को नगर अथवा गाँव बसाने के लिए उपयुक्त समझा जाता है। वर्ष भर पीने योग्य जल की सुविधा, उपजाऊ भूमि का निकट होना, रास्ते के मिलने से आने जाने की सुविधा, उस स्थान की बाहरी आक्रमण से रक्षा करने की सुविधा, नदी का किनारा इत्यादि कुछ ऐसी सुविधायें हैं जिनको ध्यान में रखकर ही नगर अथवा गाँव बसाया जाता है। किसी नगर अथवा गाँव की स्थापना भौगोलिक कारणों से होती है। किन्तु उसकी उन्नति तभी हो सकती है जब कि या तो वह व्यापारिक मार्गों के मिलने का स्थान हो जिससे वह एक मंडी बन सके अथवा वह औद्योगिक केन्द्र (Industrial centre) हो।

व्यापारिक केन्द्र छोटे और बड़े सभी तरह के होते हैं। भारत में हम छोटी छोटी मंडियों से लेकर कलकत्ता, बम्बई जैसे बड़े व्यापारिक केन्द्र मिलते हैं। जिस व्यापारिक केन्द्र (Commercial Centre) का सहायक प्रदेश (Tributary Area) उपजाऊ और घना होता है वह एक बड़ा शहर बन जाता है। किन्तु कोई भी व्यापारिक केन्द्र अपने सहायक प्रदेश की जरूरत से ज्यादा से ज्यादा उस समय तक नहीं बढ़ सकता जब तक उसमें उद्योग धंधों (Industries) की उन्नति न हो।

व्यापारिक केन्द्र (Commercial centres)

महत्वपूर्ण सड़कों पर, कई रास्तों के मिलन-स्थान पर, बड़ी नदियों के किनारे पर, तथा रेलवे-जंकशनों पर व्यापारिक मंडियाँ या नगर स्थापित होते हैं। महत्वपूर्ण सड़कों तथा कई सड़कों के मिलन-स्थान पर मंडी इसलिये स्थापित हो जाती है कि आने जाने की सुविधा के कारण उनको सहायक प्रदेश (Tributary-Area) से बिक्री के लिए वस्तुयें मिलती रहती हैं। जिस स्थान पर चारों ओर से रास्ते आकर मिलते हैं वह यदि जंक्शन होता है तो शीघ्र ही एक बड़ी व्यापारिक मंडी का रूप धारण कर लेता है, क्योंकि ऐसे स्थान पर प्रत्येक दिशा से आये हुए पदार्थों का विनिमय (Exchange) होने लगता है। पिछले कुछ वर्षों से सड़कों के मिलन-स्थान पर स्थित मंडियों का भी महत्व बढ़ गया है क्योंकि मोटर बसों के प्रचलन के कारण उनका व्यापार बहुत बढ़ गया है। प्राचीन काल में नगर तथा व्यापारिक मंडियाँ अधिकतर नदियों के किनारे बसाये जाते थे क्योंकि नदियों के द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक माल ले जाने की सुविधा थी। आज भी जिन प्रदेशों में रेलवे अथवा सड़कों का अभाव है वहाँ नदियाँ ही व्यापारिक मार्ग का काम देती हैं और उनके किनारे पर व्यापारिक मंडियाँ स्थापित हैं। भारत में गङ्गा तथा अन्य नदियों के किनारे जो बड़े बड़े शहर बसाये गये उसका कारण उपरिलिखित है। प्राचीन समय में ऐसे स्थानों पर भी नगर बसाये गये जहाँ शत्रुओं से नगर की रक्षा करने की सुभीता था। राजपूताने में उदयपुर तथा अन्य शहर सिर्फ पहाड़ियों के बीच में केवल इस कारण बसाये गये कि राजपूत राजाओं को मुगल सेनाओं के आक्रमण का सदा भय रहता था।

आधुनिक काल में वे ही स्थान बड़े नगर हो सकते हैं जो महत्वपूर्ण रेलवे जंक्शन हैं, बन्दरगाह (Seaports) हैं, अथवा औद्योगिक केन्द्र (Industrial centres) हैं। बम्बई, कलकत्ता, तथा कानपुर के बड़े नगर बनने का यही कारण है। यह ध्यान में रखने की बात है कि केवल बन्दरगाह बनने से ही कोई बड़ा नगर नहीं बन जावेगा जब तक कि उसका व्यापारिक प्रदेश (Hinterland) घना न हो तब तक वह बड़ा नगर नहीं बन सकता।

औद्योगिक केन्द्र (Industrial centres)

कोरे व्यापारिक केन्द्रों की तुलना में औद्योगिक केन्द्र (Industrial centres) कहीं बड़े नगर बन जाते हैं। उनकी बढ़वार की कोई सीमा नहीं है। हाँ जब कोई नगर बड़ा औद्योगिक केन्द्र होने के कारण बहुत बढ़ जाता है, आबादी बहुत घनी हो जाती है और मकानों इत्यादि की असुविधा होने लगती है तो उस नगर की बढ़वार कुछ रुकती है। फिर भी औद्योगिक केन्द्र शीघ्रता पूर्वक बढ़ते ही जाते हैं। धंधे किसी स्थान विशेष पर क्यों पनपते और केन्द्रित होते हैं इस विषय पर आगे धन्धों का स्थानीयकरण (Localisation of Industries) लिखा गया है।

स्वास्थ्य वर्धक स्थान

आजकल औद्योगिक केन्द्रों (Industrial centres) में अत्यधिक भीड़ होती है। घनी आबादी तथा कारखानों की चिमनियों के धुँयें के कारण वे स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छे स्थान नहीं रहते। अतएव प्रत्येक देश में ऐसे स्थानों की आवश्यकता है जहाँ छुट्टी के दिनों में नागरिक अपने स्वास्थ्य तथा मनोरंजन के लिए जाकर कुछ दिन रहें। योरोप में पहाड़ी प्रदेश तथा समुद्र के किनारे प्राकृतिक सौंदर्य के इन स्थानों पर छोटे छोटे सुन्दर शहर बस गये हैं जहाँ वर्ष में कुछ दिनों के लिए घने आबाद नगरों के लोग जाकर रहते हैं। भारत में मैदानों की भीषण गरमी से घबराकर अंग्रेजों ने पहाड़ी स्थानों पर हिल-स्टेशन बसाये हैं, जहाँ गरमियों में सरकारी दफ्तर ले जाये जाते हैं तथा जनता भी जाकर रहती है।

खनिज केन्द्र (Mining towns)

खनिज प्रदेश में भी शहर बस जाते हैं जहाँ से आस पास की खानों से निकली हुई धातु बाहर भेजी जाती है। भारत में रानीगंज, आसनसोल और झरिया ऐसे स्थान हैं।

ऊपर लिखे हुये कारणों के अतिरिक्त राजधानी बन जाने से भी नगर की जनसंख्या बढ़ने लगती है। परन्तु आज कल राजधानी होने से कोई नगर इतना बड़ा नहीं होता जितना औद्योगिक केन्द्र होने से। बम्बई और कलकत्ता इसी कारण देहली से बड़े हैं। भारत में तीर्थस्थान भी बड़े नगर बन जाते हैं क्योंकि प्रतिवर्ष वहाँ बहुत से यात्री आते हैं, बनारस, हरिद्वार, मथुरा इत्यादि स्थानों का महत्व केवल तीर्थस्थान होने के कारण ही है।

धंधों का स्थानीयकरण (Location of manufactures)

जिन स्थानों में कच्चा माल (Raw material) उत्पन्न होता है अथवा जिन व्यापारिक मंडियों में वह बिकने को आता है वहीं कभी कभी धन्धे भी खड़े हो जाते हैं। किन्तु यह आवश्यक नहीं है। कभी कभी धन्धे कच्चे माल के उत्पत्ति-स्थान से बहुत दूर स्थापित किये जाते हैं। कोई धन्धा किसी स्थान विशेष पर क्यों उन्नत होता है इसके बहुत से कारण हैं। किन्तु धन्धों के स्थानीयकरण (Localisation of industries) पर भौगोलिक परिस्थिति का बहुत बड़ा प्रभाव होता है। धन्धों कारखानों को स्थापित करते समय प्रत्येक व्यवसायी कुछ सुविधाओं का विचार कर लेता है। किसी भी धन्धे के लिए निम्नलिखित सुविधाओं की आवश्यकता होती है।

कच्चा माल (Raw material)

१—प्रत्येक कारखाने के लिए कच्चा माल चाहिए। कभी कभी कारखाने कच्चा माल उत्पन्न करने वाले स्थान पर ही खोले जाते हैं, किन्तु अधिकांश कारखाने दूर होते हैं और कच्चा माल उन तक लाया जाता है। जिन कारखानों के लिए कच्चा माल आसानी से नहीं लाया जा सकता उनको कच्चा माल उत्पन्न करने वाले स्थानों पर स्थापित किया जाता है। उदाहरण के लिए शक्कर के कारखाने, दूध और मक्खन के कारखाने, तथा मांस तैयार करने वाले कारखाने, उन्हीं स्थानों पर स्थापित किए जा सकते हैं जहाँ कच्चा माल उत्पन्न होता है।

शक्ति का साधन (Source of power)

२—वास्तव में देखा जाय तो शक्ति के साधन का धन्धों के स्थानीयकरण (Localisation) पर बहुत प्रभाव पड़ता है। पृथ्वी के अधिकांश औद्योगिक केन्द्र कोयलों की खानों के समीप स्थापित हैं। जिन धन्धों का कच्चा माल बहुत भारी होता है अर्थात् जिसके ले जाने में व्यय अधिक होता है वह तभी उन्नत हो सकता है जब शक्ति (Power) और कच्चा माल समीप ही पाया जावे। उदाहरण के लिए लोहे का धन्धा तथा अन्य ऐसे ही धन्धे तभी सफलता पूर्वक चलते हैं जब कोयला और लोहा एक ही स्थान पर पाया जाता है। फिर भी यदि लोहा अथवा अन्य धातुयें कोयले की खानों के समीप नहीं मिलती हैं तो कच्ची धातुओं को कोयले की खानों के समीप लाकर वहाँ उनका धन्धा खड़ा किया जाता है। शक्ति (Power) के समीप ही धन्धों को स्थापित करने से कोयले की खानों के समीप बड़े बड़े औद्योगिक केन्द्र स्थापित हो गये हैं। उनकी आबादी बहुत घनी होने के कारण वहाँ रहने के योग्य मकानों की कमी हो गई है तथा अन्य समस्यायें उपस्थित हो गई हैं। जिन धन्धों में शक्ति का इतना अधिक उपयोग नहीं होता वे कोयले की खानों से दूर भी स्थापित किये जा सकते हैं। जैसे जैसे जल विद्युत

(Water power) का अधिकाधिक उपयोग होता जावेगा वैसे वैसे धन्धों का विकेन्द्रीकरण (Decentralisation) हो सकेगा। इसका अर्थ यह है कि जल द्वारा उत्पन्न की हुई सस्ती बिजली को दूर तक पहुँचाया जा सकता है। अतएव *बिजली उत्पन्न करने वाले स्थानों पर ही धंधों को स्थापित करना जरूरी नहीं होगा।* न्यागरा जलप्रपात के जल से उत्पन्न की जाने वाली बिजली उत्पत्ति-स्थान से तीन सौ मील तक ले जाई जाती है और कारखानों इत्यादि में उसका उपयोग होता है। भारत में भी सौ मील तक बिजली ले जाकर उसका भिन्न भिन्न कार्यों के लिए उपयोग किया जाता है। आधुनिक औद्योगिक केन्द्रों में जो अत्यधिक घनी आबादी हो गई है उससे बचने का एक ही उपाय है कि धंधों का एक ही स्थान पर जमघट न होने देना और यह तभी हो सकता है जब बिजली का अधिक उपयोग हो।

व्यवसायियों को कारखाने स्थापित करते समय मजदूरों की समस्या पर भी विचार करना पड़ता है। जहाँ तक साधारण मजदूरों का प्रश्न है उनके मिलने में अधिक कठिनाई नहीं होती, यद्यपि कहीं कहीं साधारण मजदूरों की भी कमी होती है। परन्तु जिन धन्धों में कुशल मजदूरों (Skilled labourers) की विशेष आवश्यकता होती है उनको स्थापित करते समय इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि जहाँ कारखाना स्थापित करना है वहाँ कुशल मजदूर मिल सकते हैं अथवा नहीं। किसी किसी स्थान पर कोई धन्धा केवल इसलिए *केन्द्रित हो जाता है कि उस स्थान पर धन्धे के लिए कुशल मजदूर मिलते हैं।* जब कोई धन्धा कुछ समय तक एक स्थान पर ही चलता रहता है तो वहाँ के मजदूरों को उस धंधे का अनुभव हो जाता है और वे अधिक कुशल हो जाते हैं। अतएव यदि उस चीज को तैयार करने के लिए कोई नया कारखाना स्थापित होता है तो कुशल मजदूरों की सुविधा के कारण उसी स्थान पर खोला जाता है। उदाहरण के लिए लंकाशायर में कपड़े का धंधा केवल इसलिए पनपा कि ऊनी कपड़ा तैयार करने वाले बुनकर (जुलाहे) वहाँ मौजूद थे। इसी प्रकार स्काटलैंड के पूर्वीय जिलों में जूट का धंधा इस कारण पनपा क्योंकि वहाँ सन का कपड़ा पहले से बनता था और वहाँ कुशल मजदूर मौजूद थे। किसी किसी धंधे में कुशल श्रमजीवियों की इतनी अधिक आवश्यकता होती है कि यदि स्थानीय मजदूर नहीं मिलते तो बाहर से बुलाने पड़ते हैं। टाटा के लोहे के कारखाने में काम करने के लिए आरम्भ में विदेशों से कुशल कारीगरों को बुलाना पड़ा। धीरे धीरे जब स्थानीय कारीगर तैयार हो गए तब विदेशी कारीगरों की आवश्यकता नहीं रही।

श्रम (Labour)

कभी कभी धंधे ऐसी जगह स्थापित कर दिये जाते हैं जहाँ भूमि सस्ती होती है और आबादी घनी नहीं होती। ऐसी जगह विशेष कर वे धंधे स्थापित कर दिये जाते हैं जिनमें कोयले की अधिक आवश्यकता

सस्ती भूमि

नहा पड़ती अथवा जो चीज तैयार की जाती है वह अधिक मूल्यवान होती है। अधिकतर रेलवे कम्पनियाँ अपना वर्कशाप ऐसी जगहों पर बनाती हैं जहाँ भूमि की कमी न हो और कोयला इत्यादि वस्तुयें लाने में उन्हें कोई अड़चन न हो।

माल के बेचने की सुविधा

किसी धंधे की सफलता के लिए तैयार किये हुये माल को बेचने की सुविधा का होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि तैयार किया हुआ माल भारी होता है तो यह और भी आवश्यक हो जाता है कि धंधा ऐसे स्थान पर स्थापित किया जावे जहाँ से माल भेजने की सुविधा हो। यही कारण है कि बहुत से धंधे बंदरगाहों में केन्द्रित हैं क्योंकि वहाँ से माल विदेशों को आसानी से भेजा जा सकता है। रेलवे जंकशन तथा बंदरगाह इस कारण औद्योगिक केन्द्र बन जाते हैं। इस सम्बन्ध में रेलवे कम्पनियों की किराये की नीति (Rate policy) का भी बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। कुछ धन्धे तभी पनप सकते हैं जब रेलवे का किराया कम हो। उदाहरण के लिए खेती की पैदावार तभी दूर दूर तक भेजी जा सकती है जब रेल का किराया कम हो। जो भी वस्तुयें कम मूल्यवान तथा भारी होती हैं उनका धन्धा तभी पनप सकता है जब उनको भिन्न भिन्न प्रदेशों में भेजने के लिए सस्ते किराये पर रेलवे कम्पनियाँ ले जाने की सुविधा दें। कहीं कहीं केवल रेलवे कम्पनियों की किराये की नीति के कारण ही किसी विशेष स्थान पर धन्धे स्थापित किये जाते हैं। उदाहरण के लिए भारत में रेलवे कम्पनियों की आरम्भ में यह नीति रही कि जो माल देश के किसी भाग से बन्दरगाहों को जाते अथवा बन्दरगाहों से जो माल देश के किसी अन्दरूनी भाग को जाते उस पर किराया कम लिया जाता था। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय व्यवसायियों ने बन्दरगाहों में ही कारखाने स्थापित किये। बन्दरगाह ही भारत के प्रमुख औद्योगिक केन्द्र बन गये। व्यवसायियों को बन्दरगाहों में कारखाने स्थापित करने से बहुत लाभ होता था। क्योंकि जब वे अन्दर से कच्चा माल मँगवाते तो उन्हें किराया कम देना पड़ता था और जब वे तैयार माल देश की मण्डियों में भेजते तो उस पर भी किराया कम देना पड़ता था। यही कारण है कि सर्वप्रथम धन्धे बन्दरगाहों में स्थापित हुये।

जलवायु का प्रभाव

जलवायु का भी धन्धों के स्थानीय-करण (Location) पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इस सम्बन्ध में जलवायु के प्रकरण में लिख चुके हैं।

अधिकतर धन्धों की किसी स्थान विशेष पर स्थापना करने में भौगोलिक कारण ही मुख्य होते हैं परन्तु कोई कोई धन्धा बिना किसी भौगोलिक कारण

से ही किसी स्थान विशेष पर पनप जाता है। एक बार जब कोई धन्धा कहीं चल पड़ता है तो क्रमश उसके लिये वहाँ अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है। उदाहरण के लिये वहाँ उस धंधे के लिये कुशल कारीगर उत्पन्न हो जाते हैं और उस वस्तु की बिक्री के लिये वह एक मंडी बन जाता है। ऐसी ही दूसरी सुविधायें मिलने लगती हैं और उस धंधे की वहाँ जड़ जम जाती है।

पूर्वारम्भ होने का लाभ

कहीं-कहीं कोई धंधा केवल इस कारण केन्द्रित हो जाता है कि वहाँ जब वह धंधा खड़ा किया गया तो अन्यत्र कहीं धंधा नहीं चलता था। इस कारण उस केन्द्र में उस धंधे के लिये अनुकूल स्थिति उत्पन्न हो जाती है। वहाँ के कारीगर और मजदूर अधिक कुशल बन जाते हैं तथा अन्य सुविधायें भी उपस्थित हो जाती हैं। अस्तु, कहीं-कहीं केवल पूर्वारम्भ के लाभ के कारण ही धंधा केन्द्रित हो जाता है। फिर वहाँ बहुत सी पूँजी भी लग चुकी होती है इस कारण भी धंधा उस स्थान पर चलता रहता है।

बाजार

कोई कोई धंधा केवल बाजार की सुविधा के कारण केन्द्रित हो जाता है। जिन धंधों का माल भारी होता है और उसके लाने तथा ले जाने में अधिक व्यय होता है वे उन स्थानों पर केन्द्रित हो जाते हैं जहाँ उसकी अधिक माँग होती है। उदाहरण के लिये भारी मशीनों का धंधा उस केन्द्र के समीप ही स्थापित हो जाता है जहाँ उन मशीनों की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरण के लिये लंकाशायर के समीप सूती कपड़े के लिए मशीनें बनाई जाती हैं।

प्रतिष्ठा और यश

किसी किसी स्थान की विशेष वस्तु के सम्बन्ध में ऐसी प्रतिष्ठा स्थापित हो जाती है कि वह धंधा उसी स्थान पर ही केन्द्रित हो जाता है। उदाहरण के लिये पैरिस अथवा न्यूयार्क स्त्रियों के काम की वस्तु बनाने के लिए विशेष प्रसिद्ध है। वहाँ से ही नवीन फैशनों का आविष्कार होता है। इसी प्रकार फ्रांस की शराब प्रसिद्ध है। लोग फ्रैंच शराब ही पसन्द करते हैं अस्तु अन्य देशों की शराब फ्रांस भेजी जाती है और वहाँ से फ्रैंच शराब के नाम से प्रसिद्ध होती है।

जातीय गुण तथा सांस्कृतिक स्थिति

किसी देश के निवासियों की कार्य-क्षमता तथा गुण भी धंधों की उन्नति पर प्रभाव डालते हैं तथा उस देश के सांस्कृतिक स्तर पर भी धंधों की उन्नति निर्भर रहती है। उदाहरण के लिये चीन लोग कलाप्रेमी हैं तथा किसी वस्तु की नकल करने में विशेष निपुण होते हैं।

आर्थिक भूगोल का महत्व

पृथ्वी के प्राकृतिक साधन ही मनुष्य की पूँजी है। इन्हीं प्राकृतिक साधनों पर राष्ट्रों का आर्थिक समृद्धि अथवा आर्थिक हीनता निर्भर रहती है। आज के युग में राजनैतिक शक्ति का आधार भी किसी देश के प्राकृतिक साधन ही हैं। पिछले महायुद्ध ने इस बात को सिद्ध कर दिया कि जिस राष्ट्र के पास पर्याप्त प्राकृतिक साधन होते हैं और जो राष्ट्र उन प्राकृतिक साधनों की भली भाँति उन्नति करते हैं वही आर्थिक दृष्टि से समृद्धिशाली तथा राजनैतिक दृष्टि से शक्तिवान होते हैं।

आज कोई भी व्यक्ति अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं तथा समस्याओं का उस समय तक सही-सही अध्ययन नहीं कर सकता जब तक कि उसे आर्थिक-भूगोल का समुचित ज्ञान न हो। उदाहरण के लिये यदि संयुक्तराज्य अमेरिका, सोवियत रूस और ब्रिटेन आज समृद्धिशाली और शक्तिवान राष्ट्र हैं तो उसका रहस्य यह है कि उनको प्राकृतिक देन पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है और उन्होंने उस प्राकृतिक देन का अपने श्रम के द्वारा पूरा उपयोग किया है अर्थात् उसको उन्नत किया है। मध्य पूर्व अर्थात् अरब, पैलेस्टाइन, फारस इत्यादि में जो राजनैतिक बवंडर उठते रहते हैं उसका रहस्य उन प्रदेशों की रेत की नीचे बहने वाले तेल में छिपा है। जो भी आज अन्तर्राष्ट्रीय घटनायें घट रही हैं उनके गर्भ में कोई न कोई आर्थिक कारण अवश्य है। यदि भविष्य में चीन तथा भारत समृद्धिशाली और शक्तिवान राष्ट्र बनेंगे तो उसका कारण यह है कि उन्हें प्राकृतिक देन परियाप्त मात्रा में प्राप्त है। अतएव अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं के अध्ययन करने के लिये आर्थिक भूगोल की जानकारी आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त देश का आर्थिक उन्नति किस प्रकार हो, कौन कौन से उद्योग धंधे किस देश में पनप सकते हैं, किन उद्योग धंधों के लिए देश में प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता है यह जानने के लिये भी हम आर्थिक भूगोल की ही शरण में जाना होगा।

आज यातायात के साधनों का इतना अधिक विकास हो चुका है कि पृथ्वी का प्रत्येक देश एक दूसरे के समीप आ गया है। अतएव अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्य तथा व्यापार बहुत उन्नति कर गया है। अतएव व्यापारियों के लिए भी आर्थिक भूगोल का ज्ञान आवश्यक है।

देश के साधारण नागरिक को भी अपने देश की समस्याओं तथा अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति सही दृष्टिकोण बनाने के लिए आर्थिक भूगोल का अध्ययन आवश्यक है। यही कारण है कि संसार के प्रत्येक विश्वविद्यालय में आर्थिक भूगोल विषय का एक महत्वपूर्ण स्थान बन गया है। हर्ष की बात है कि भारत के विश्वविद्यालय भी आर्थिक भूगोल के महत्व को अब स्वीकार करने लगे हैं।

अभ्यास के प्रश्न

१—आर्थिक भूगोल की परिभाषा (Definition) कीजिए और उसके क्षेत्र (scope) की व्याख्या कीजिए।

२—आर्थिक भूगोल के अध्ययन से व्यापार के विद्यार्थी, व्यापारी तथा उद्योग पतियों को क्या लाभ होता है?

३—"मनुष्य अपनी भौगोलिक परिस्थिति की उपज है" इस कथन की व्याख्या कीजिए और उदाहरण देकर समझाइए कि यह कहाँ तक ठीक है।

४—धरातल की बनावट (Relief) का मनुष्य के आर्थिक प्रयत्नों (Economic activities) पर कहाँ तक प्रभाव पड़ता है?

५—जलवायु का उद्योग धधों पर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से क्या प्रभाव पड़ता है उसकी विवेचना कीजिए।

६—मनुष्य के आर्थिक प्रयत्नों और उसके स्वभाव पर जितना प्रभाव जलवायु का पड़ता है उतना किसी दूसरी बात का नहीं पड़ता। इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं।

७—खेती और उद्योग धधे बहुत कुछ मिट्टी और जलवायु पर अवलम्बित हैं। इस कथन की व्याख्या कीजिए।

८—किसी प्रदेश मे लोग किस प्रकार रहते है, क्या धधा करते हैं उनकी कार्य-क्षमता कैसी है यह बिना कारण नहीं है इसको प्रदेश की भौगोलिक परिस्थिति (Natural Environment) निर्धारित करती है। इस कथन की व्याख्या कीजिये।

९—नगर बसने के क्या कारण होते हैं?

१०—धधों का स्थानीयकरण (Localisation of Industries) किन भौगोलिक कारणों पर निर्भर है?

आर्थिक भूगोल का महत्व

पृथ्वी के प्राकृतिक साधन ही मनुष्य की पूँजी है। इन्हीं प्राकृतिक साधनों पर राष्ट्रों की आर्थिक समृद्धि अथवा आर्थिक हीनता निर्भर रहती है। आज के युग में राजनैतिक शक्ति का आधार भी किसी देश के प्राकृतिक साधन ही हैं। पिछले महायुद्ध ने इस बात को सिद्ध कर दिया कि जिस राष्ट्र के पास पर्याप्त प्राकृतिक साधन होते हैं और जो राष्ट्र उन प्राकृतिक साधनों को भली भाँति उन्नति करते हैं वही आर्थिक दृष्टि से समृद्धिशाली तथा राजनैतिक दृष्टि से शक्तिमान होते हैं।

आज कोई भी व्यक्ति अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं तथा समस्याओं का उस समय तक सही-सही अध्ययन नहीं कर सकता जब तक कि उसे आर्थिक भूगोल का समुचित ज्ञान न हो। उदाहरण के लिये यदि संयुक्तराज्य अमरिका, सोवियत रूस और ब्रिटेन आज समृद्धिशाली और शक्तिवान राष्ट्र हैं तो उसका रहस्य यह है कि उनको प्राकृतिक देन पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है और उन्होंने उस प्राकृतिक देन का अपने श्रम के द्वारा पूरा उपयोग किया है अर्थात् उसको उन्नत किया है। मध्य पूर्व अर्थात् अरब, पैलेस्टाइन, फारस इत्यादि में जो राजनैतिक बवंडर उठते रहते हैं उसका रहस्य उन प्रदेशों की रेत की नीचे बहने वाले तेल में छिपा है। जो भी आज अन्तर्राष्ट्रीय घटनायें घट रही हैं उनके मर्म में कोई न कोई आर्थिक कारण अवश्य हैं। यदि भविष्य में चीन तथा भारत समृद्धशाली और शक्तिमान राष्ट्र बनेंगे तो उसका कारण यह है कि उन्हें प्राकृतिक देन पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है। अतएव अन्तराष्ट्रीय घटनाओं के अध्ययन करने के लिये आर्थिक भूगोल की जानकारी आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त देश की आर्थिक उन्नति किस प्रकार हो, कौन कौन से उद्योग धंधे किस देश में पनप सकते हैं, किन उद्योग धंधों के लिए देश में प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता है यह जानने के लिये भी हमें आर्थिक भूगोल की ही शरण में जाना होगा।

आज यातायात के साधनों का इतना अधिक विकास हो चुका है कि पृथ्वी का प्रत्येक देश एक दूसरे के समीप आ गया है। अतएव अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्य तथा व्यापार बहुत उन्नति कर गया है। अतएव व्यापारियों के लिए भी आर्थिक भूगोल का ज्ञान आवश्यक है।

देश के साधारण नागरिक को भी अपने देश की समस्याओं तथा अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति सही दृष्टिकोण बनाने के लिए आर्थिक भूगोल का अध्ययन आवश्यक है। यही कारण है कि संसार के प्रत्येक विश्वविद्यालय में आर्थिक भूगोल विषय का एक महत्वपूर्ण स्थान बन गया है। हर्ष की बात है कि भारत के विश्वविद्यालय भी आर्थिक भूगोल के महत्व को अब स्वीकार करने लगे हैं।

अभ्यास के प्रश्न

१—आर्थिक भूगोल की परिभाषा (Definition) कीजिए और उसके क्षेत्र (scope) की व्याख्या कीजिए।

२—आर्थिक भूगोल के अध्ययन से व्यापार के विद्यार्थी, व्यापारी तथा उद्योग पतियों का क्या लाभ होता है?

३—'मनुष्य अपनी भौगोलिक परिस्थिति की उपज है" इस कथन की व्याख्या कीजिए और उदाहरण देकर समझाइए कि यह कहाँ तक ठीक है।

४—धरातल की बनावट (Relief) का मनुष्य के आर्थिक प्रयत्नों (Economic activities) पर कहाँ तक प्रभाव पड़ता है?

५—जलवायु का उद्योग धधों पर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से क्या प्रभाव पड़ता है उसकी विवेचना कीजिए।

६—मनुष्य के आर्थिक प्रयत्नों और उसके स्वभाव पर जितना प्रभाव जलवायु का पड़ता है उतना किसी दूसरी बात का नहीं पड़ता। इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं।

७—खेती और उद्योग धंधे बहुत कुछ मिट्टी और जलवायु पर अवलम्बित हैं। इस कथन की व्याख्या कीजिए।

८—किसी प्रदेश में लोग किस प्रकार रहते हैं, क्या धधा करते हैं उनकी कार्य क्षमता कैसी है यह बिना कारण नहीं है इसको प्रदेश की भौगोलिक परिस्थिति (Natural Environment) निर्धारित करती है। इस कथन की व्याख्या कीजिये।

९—नगर बसने के क्या कारण होते हैं?

१०—धधों का स्थानीयकरण (*Localisation of industries*) किन भौगोलिक कारणों पर निर्भर है?

दूसरा परिच्छेद

पृथ्वी के धरातल की बनावट (Relief) और मिट्टी (Soil)

पृथ्वी का क्षेत्रफल लगभग १९७०० लाख वर्ग मील है। इसमें लगभग एक चौथाई सूखा भूमि (५८० लाख वर्ग मील) है और शेष समुद्र है। सूखा भूमि का लगभग दो तिहाई उत्तरी गोलार्द्ध (Northern Hemisphere) में है और शेष एक तिहाई दक्षिणी गोलार्द्ध (Southern Hemisphere) में है। सूखी भूमि के इस असमान वितरण का परिणाम यह हुआ कि मनुष्य की उन्नति उत्तरी गोलार्द्ध में ही अधिक हुई और वहीं यह अधिक फला फूला। उत्तरी गोलार्द्ध में जो भी सूखी भूमि के भूभाग हैं वे एक दूसरे से मिले हुए हैं। किन्तु दक्षिणी गोलार्द्ध में दक्षिणी अमेरिका, दक्षिणी अफ्रीका, तथा आस्ट्रेलिया के बीच-बीच में महासागर लहराते हैं इस कारण वे एक दूसरे के बहुत दूर पड़ गये हैं। यही नहीं दक्षिणी महाद्वीप (Continents) भी उत्तरी गोलार्द्ध के भूभागों से मिले हुये हैं। उत्तरी गोलार्द्ध में ८० प्रतिशत सूखी भूमि, ३०° तथा ६०° उत्तर रेखाओं के बीच में स्थित है, इस कारण ठंडे तथा बदलने वाले जलवायु के कारण यहाँ मनुष्य उद्यमी और पुरुषार्थी होता है। परन्तु दक्षिणी गोलार्द्ध की हुई सूखी भूमि की जलवायु इतनी गरम और एक सी है कि मनुष्य के लिये वहाँ अधिक उन्नति कर सकना कठिन है।

धरातल का रूप सब जगह एक सा नहीं है। कहीं गगनचुम्बी ऊँचे पहाड़ हैं तो कहीं ऊँचे पठार (Plateau,), कहीं नदियों की घाटियाँ (valley) तो कहीं नीचे और चौरस मैदान दिखलाई पड़ते हैं। धरातल के ये भिन्न भिन्न स्वरूप पृथ्वी में होने वाले परिवर्तनों अथवा जलवायु के कारण बने हैं। पृथ्वी में दो प्रकार के परिवर्तन होते हैं। एक तो इतना धीरे होता है कि जिसका मनुष्य को आभास तक नहीं मिलता। उदाहरण के लिये पृथ्वी के कुछ भाग क्रमशः स्वयं ही ऊँचे उठते जा रहे हैं और कुछ भाग नीचे होते जा रहे हैं। दूसरे प्रकार का परिवर्तन भूकम्प अथवा ज्वालामुखी विस्फोट के कारण होता है। इनके द्वारा धरातल में यकायक भयंकर परिवर्तन हो जाते हैं। जलवायु के द्वारा धरातल में जो परिवर्तन होते हैं वे अधिक महत्वपूर्ण हैं। यदि देखा जाय तो धरातल को आधुनिक रूप देने में वर्षा, जल, वायु धूप तथा वृक्षों का अधिक हाथ रहा है। नदियाँ पहाड़ों को काट काट कर घाटियाँ बनाती हैं, चट्टानों को तोड़कर और पत्थरों को पीसकर मिट्टी को नीचे मैदानों पर बिछा देती हैं। हवा एक स्थान से मिट्टी को उड़ाकर दूसरे स्थान पर ले जाती है। वर्षा, और तथा तेज धूप भी धीरे धीरे धरातल को तोड़ते हैं। जब चट्टानों के बीच में ठंडक के कारण बर्फ जम जाती है तो वह चट्टानों को तोड़ देती है। ग्लेशियर

(Glaciers) चट्टानों को तोड़कर उन्हें घिस देता है और जहाँ वह पिघलता है वहाँ उस मिट्टी को बिछा देता है। हवा और पानी ने धीरे धीरे धरातल को बहुत कुछ बदल दिया है। गंगा और सिंध के मैदान इन दो नदियों के द्वारा लाई हुई मिट्टी से बने हैं। उत्तरी चीन में जो उपजाऊ मैदान हैं उनकी मिट्टी हवा द्वारा उड़ाकर लाई गई है। इसी प्रकार उत्तरीय योरोप तथा उत्तरीय अमरिका के मैदान ग्लेशियर (Glaciers) के द्वारा बने हैं।

यदि पृथ्वी के धरातल की बनावट का अध्ययन करें तो हमें ज्ञात होगा कि पृथ्वी पर दो पर्वत मालायें फैली हुई हैं। पूर्वीय गोलार्द्ध (Eastern Hemisphere) तथा दूसरी पश्चिमी गोलार्द्ध (Western Hemisphere) में है। पूर्वीय गोलार्द्ध की पर्वतमाला पामीर के पठार से चार शाखाओं में बँट गई है। पहली शाखा अफगानिस्तान, फारस, टर्की होती हुई दक्षिणी योरोप में फैल गई है। दूसरी शाखा (जो कम ऊँची और टूटी हुई है) अरब और अबसीनिया में होती हुई दक्षिण अफ्रीका में चली गई है, तीसरी मलाया प्रायद्वीप (Peninsula) तथा द्वीप समूह होती हुई आस्ट्रेलिया में चली गई है। और चौथी चीन तथा साइबेरिया में होती हुई बेरिंग जलसंयोजक तक चली गई है। पश्चिमी गोलार्द्ध की पर्वतमाला अलास्का से हार्न अन्तरीप (Cape Horn) तक चली गई है। इन पर्वतमालाओं के अतिरिक्त कुछ फुटकर बिखरे हुए पहाड़ भी हैं। जैसे उत्तर-पश्चिम योरोप के पहाड़, अथवा उत्तर अमरिका के अपलेशियन (Appalachians) तथा ब्राजील के पहाड़। किन्तु ये पहाड़ न तो बहुत ऊँचे ही हैं और न बहुत क्षेत्रफल में ही फैले हुये हैं।

इन पर्वतमालाओं से जुड़े हुये पठार तथा मैदान हैं। नदियाँ इन्हीं पहाड़ों से निकल कर मैदानों में बहती हुई समुद्र में गिरती हैं। कहीं कहीं पानी के एक स्थान पर इकट्ठा हो जाने से झीलें बन जाती हैं।

मैदानों तथा नदियों में उपजाऊ मिट्टी, जल की बहुतायत तथा गमनागमन की सुविधा होने की वजह से खेती बारी और उद्योग धंधों की खूब उन्नति होती है और आबादी घनी होती है। परन्तु पर्वतीय प्रदेश में मनुष्य को बहुत कठिनाइयाँ उठानी पड़ती हैं। वहाँ औद्योगिक उन्नति केवल विशेष अवस्थाओं में ही होती है। अतएव अधिकतर पर्वतीय प्रदेश घने आबाद नहीं होते।

चट्टानें केवल पृथ्वी के धरातल की बनावट का ही अध्ययन करने से काम नहीं चल सकता। हम उन चट्टानों के विषय में भी अध्ययन करना होगा जिनसे धरातल बना है। चट्टानों के टूटने से ही मिट्टी बनती है और चट्टानों की बनावट पर ही धातुओं का होना भी निर्भर है।

चट्टानें तीन प्रकार की होती हैं—(१) आग्नेय (Igneous), तलछट वाली चट्टान (Sedimentary) और परिवर्तित चट्टान (Metamorphic)। अग्निमय चट्टान (Igneous Rocks) पिघले हुए पदार्थ के जम जाने से बनती हैं। पहले पृथ्वी जलता हुआ अग्नि का गोला था और सब पदार्थ पिघली दशा में थे। जब पृथ्वी ठंडी होने के कारण वह पिघला हुआ पदार्थ जम गया उस समय ये चट्टानें बनीं। इसी कारण इन चट्टानों को मुख्य चट्टानें (Primary Rocks) भी कहते हैं। जब ये चट्टानें (मुख्य चट्टानें) हवा, पानी, बर्फ तथा धूप के कारण टूटीं और वह चूरा, हवा अथवा पानी द्वारा दूसरे स्थानों पर जमा दिया गया तब उसमें जो चट्टानें बनीं उन्हें तलछट वाली चट्टान (Sedimentary Rocks) गौण चट्टान (Secondary Rocks) कहते हैं। तीसरे प्रकार की चट्टानें अर्थात् परिवर्तित (Metamorphic) चट्टानें पहली दोनों चट्टानों का बिगड़ा हुआ और परवर्तित रूप हैं। जब अत्यधिक दबाव (Pressure) तथा गर्मी के कारण इन दोनों प्रकार की चट्टानों का पूर्व रूप बिलकुल ही बदल जाता है तब वे पहिचानी ही नहीं जा सकतीं। इसी कारण उन्हें परिवर्तित चट्टानें (Metrmorphic) कहते हैं।

मुख्य (Primary) अथवा अग्निमय (Igneous) चट्टानों में बहुमूल्य धातुयें अधिकता से पाई जाती हैं गौण (Sedimentary) अथवा तलछट वाली (Sedimentary) चट्टानें ही पृथ्वी के अधिकांश भाग पर पाई जाती हैं, जिन प्रदेशों में ये चट्टानें पाई जाती हैं वे घने आबाद तथा समृद्धिशाली हैं। परिवर्तित (Metamorphic) चट्टानों में भी बहुत सी धातुयें मिलती हैं।

आग्नेय अथवा मुख्य चट्टानें

मुख्य चट्टानों में ग्रैनाइट (Granite) बहुत अधिक मिलता है। ग्रैनाइट पत्थर सभी पुराने पहाड़ी प्रदेशों में पाया जाता है। यह भारी और मजबूत होता है इस कारण इमारत के काम में अधिकतर आता है। यह बहुत चिकना (Primary Rocks) और सुन्दर होता है और वर्षा और धूप में सैकड़ों वर्ष रह सकता है। इसी कारण उसका फर्श बनाने, इमारत बनाने, कंकरीट में तथा रेलों की पटरियों के पास डालने में बहुत उपयोग होता है।

तलछट वाली चट्टानें अथवा गौण चट्टानें

गौण चट्टानों में रेत का पत्थर (Sand-stone) सबसे अधिक पाई जाने वाली चट्टान है। रेत का पत्थर चक्कियों के पाट बनाने में बहुत काम आता है। गौण चट्टानों में जो दूसरी सबसे महत्वपूर्ण चट्टानें मिलती हैं वह हैं कई प्रकार की मिट्टियाँ (Clays) और शेल (Shales)। इन्हीं मिट्टियों पर ईंटें और चीनी मिट्टी के बर्तनों

Secondary Rocks

का धंधा निर्भर है। इस कारण ये चट्टानें आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। गौण चट्टानो में तासरा महत्वपूर्ण चट्टान चूने का का पत्थर (Lime-stone) है । चूने का पत्थर इमारत तथा कंक्रीट बनाने में बहुत काम आता है।

परिवर्तित चट्टानें Metamorphic rocks

इस चट्टान में अबरक की चट्टान, स्लेट (जिसका उपयोग इमारत की छतें पाटने मे बहुत होता है), संगमरमर जो इमारत का बहु-मूल्य पत्थर है मुख्य हैं। भूगर्भ विद्या (Geology) के जानने वालो ने चट्टानो का समय के अनुसार भी विभाजन किया है। बात यह है कि आरम्भ में जब पृथ्वी ठंडी हो रही थी उस समय उस पर किसी प्रकार की वनस्पति, कीड़े मकोड़े तथा पशुपक्षी नहीं थे। जैसे जैसे पृथ्वी ठंडी होती गई और पिघले हुए पदार्थो के जमने से चट्टानें बनने लगीं तो क्रमशः वनस्पति, कीड़े, पशु-पक्षियो और मनुष्यो की सृष्टि आरम्भ हुई। जिस युग में चट्टान बनी होती है उस युग के जीवन के उसमें चिन्ह मिलते हैं। उदाहरण के लिये यदि किसी समय पृथ्वी पर सघन वन खड़े थे तो उस समय की बनी हुई चट्टानो में वृक्षों के चिन्ह (Fossil) अंकित मिलते हैं। पृथ्वी पर वनस्पति, पशुपक्षी तथा मानवजाति के प्रगट होने के समय क्रमशः जो चट्टानें बनी उनमें इनके चिन्ह मिलते हैं और इसी आधार पर भूगर्भवेत्ताओं (Geologists) ने चट्टानो के बनने की क्रिया को चार युगों में बाँटा है (१) प्राचीनतम (Archaozoic) युग की चट्टानें, उस समय बनी जब पृथ्वी पर जीवन का प्रादुर्भाव हो रहा था यद्यपि उस युग की चट्टानो में किसी प्रकार के फासिल (Fossil) नहीं मिले हैं। दूसरा युग वनस्पति तथा पशुओं का था। उस समय की बनी हुई चट्टानो में इनके चिन्ह मिलते हैं। इस युग को प्रारम्भिक (Palaeozoic) युग कहते हैं और इस युग की चट्टानों को प्रारम्भिक (Palaeozoic) चट्टानें कहते हैं। तीसरा युग मध्य (Mesozoic) युग कहलाता है, और इस युग की बनी हुई चट्टानों को मध्यकालीन (Mesozoic) चट्टानें कहते हैं। इस युग में पृथ्वी पर सर्पों की बहुतायत थी इस कारण इसे सर्पों का युग भी कहते हैं। चौथा युग अर्वाचीन (Tertiary) युग कहलाता है। इस युग में, अपने बच्चों को दूध पिलाने वाले पशुओं, और मनुष्य का आविर्भाव हुआ और उनकी ही बहुतायत रही। इस कारण यह युग दूध पिलाने वाले पशुओं और मनुष्य का युग कहलाता है। इन चार युगों का भी भूगर्भवेत्ताओं ने छोटे-छोटे युग में विभाजन किया है।

प्राचीनतम युग (Archaeozoic) की चट्टानें संसार में सबसे पुरानी हैं। ये चट्टानें धीरे धीरे घिसती हैं और पृथ्वी पर उपजाऊ मिट्टी बिछाती हैं, इसके अतिरिक्त इन चट्टानों में बहुत सी धातुयें भी पाई जाती हैं। उदाहरण के लिए उत्तरी अमेरिका

की कोयले की खानें इन्हीं चट्टानों में पाई जाती है। कहीं कहीं इन्हीं चट्टानों से लोहे और सोने की खानें भी मिलती हैं।

प्रारम्भिक युग (Palaeozoic) की चट्टानें प्राचीनतम युग की चट्टानों की घिसी हुई मिट्टी के जम जाने से बनी हैं। इन चट्टानों में महत्वपूर्ण धातुओं की खानें बहुतायत से पाई जाती हैं। इसी युग की कैम्ब्रियन (Cambrian) नामक चट्टानों में सोना बहुतायत से मिलता है। इसके अतिरिक्त इन्हीं चट्टानों में तेल की गैस और तेल पाया जाता है। विद्वानों का विश्वास है कि मछलियों इत्यादि के एक स्थान पर चट्टानों में दब जाने से तेल, तथा वनस्पति के दब जाने से गैस बनी। जिस जगह पर परिवर्तित (Metamorphic) तथा अग्निमय (Igneous) चट्टानों का मेल होता है वहाँ टिन, लोहा, तथा ताँबा अधिक पाया जाता है। कारबोनीफेरस (Carboniferous) समय (प्रारम्भिक युग का एक उपयुग) की चट्टानों में ही संसार की समस्त कोयले की चट्टानें पाई जाती हैं। इन्हीं चट्टानों में योरोप, उत्तरी अमेरिका तथा अन्य देशों की खानें मिलती हैं। कहीं कहीं इन्हीं चट्टानों में लोहा भी बहुतायत से मिलता है। परमियन (Permian) चट्टानों (जो प्रारम्भिक युग की ही चट्टान है) के प्रदेशों से ही अधिकतर नमक निकलता है। योरोप में जो कुछ नमक खोदा जाता है वह इन्हीं चट्टानों का प्रसाद है।

मध्यकालीन (Mesozoic) चट्टानें धातुओं की दृष्टि से तो अधिक महत्वपूर्ण नहीं हैं, परन्तु इन चट्टानों से जो मिट्टी बनती है वह अत्यन्त उपजाऊ होती है। इन चट्टानों में से ट्रैसिक (Triassic) उपयुग की चट्टानों में नमक, कोयला, सोना और लोहा भी पाया जाता है।

आधुनिक (Tertiary) युग की चट्टानें भी धातुओं की दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं हैं। हाँ इस युग की चट्टानों में कहीं कहीं कोयला और तेल अवश्य मिलता है। किन्तु इस युग की चट्टानों का मिट्टी पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण क्वाटरनैरी समय की चट्टानें हैं जिनका प्रभाव मिट्टी पर सबसे अधिक पाया जाता है।

वर्तमान

ऊपर लिखे हुए संक्षिप्त विवरण से यह ज्ञात हो गया होगा कि चट्टानों तथा पृथ्वी के धरातल की बनावट का धातुओं तथा मिट्टी से घनिष्ठ सम्बन्ध है। अब हम मिट्टी के विषय में लिखेंगे।

मिट्टी (Soil)

मनुष्य के लिये मिट्टी बहुत महत्वपूर्ण वस्तु है, क्योंकि सारी पैदावार मिट्टी पर ही निर्भर होती है। यदि किसी देश की मिट्टी उर्वरा होती है तो वहाँ खेती की उन्नति हो सकती है अन्यथा नहीं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि मनुष्य के सारे आर्थिक प्रयत्न प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मिट्टी पर निर्भर हैं।

पृथ्वी की ऊपरी सतह पर जो चट्टानों का टूटा हुआ चूर्ण बिखरा हुआ है उसी को मिट्टी कहते हैं। किसी भी प्रदेश की मिट्टी पर तीन बातों का प्रभाव होता है—(१) जिस चट्टान के टूटने से वह मिट्टी बनी है (२) जलवायु (३) उस मिट्टी पर उत्पन्न होने वाली वनस्पति। इन्हीं तीन बातों के आधार पर मिट्टी दो प्रकार की मानी गई है। एक तो वह मिट्टी जिसके बनने में बाहरी शक्ति अर्थात् जलवायु तथा वनस्पति का प्रभाव मुख्य है। दूसरी वह मिट्टी जिस पर उसकी चट्टान का मुख्य प्रभाव है। उदाहरण के लिए पहले प्रकार की मिट्टी प्रेरी (Prairie) मैदानों की मिट्टी है, और दूसरे प्रकार की मिट्टी भारत की काली मिट्टी है।

पहले प्रकार की मिट्टी अधिकतर भागों में पाई जाती है, उस पर जलवायु का अधिक प्रभाव है इस कारण वह जलवायु के आधार पर तीन प्रकार की मानी जाती है—(१) वनों की मिट्टी (Forest Soil), (२) घास के मैदानों की मिट्टी (Grassland Soil) और (३) मरुभूमि की मिट्टी (Desert Soil)।

वनों की मिट्टी

वनों की मिट्टी उन प्रदेशों में पाई जाती है जहाँ पानी की बहुतायत से जंगल खड़े हो जाते हैं। इस प्रकार की मिट्टी घास के मैदानों की मिट्टी से कम उपजाऊ होती है क्योंकि अधिक वर्षा के कारण आवश्यक लवण (Salts) और विशेषकर चूना (Lime) बह जाता है। इस प्रकार की मिट्टी में वनस्पति का अंश भी घास के मैदानों की मिट्टी से कम होता है क्योंकि पेड़ों की जड़ें बहुत गहरी होती हैं। अतएव वे मिट्टी को अधिक उपजाऊ नहीं बना पातीं, और न जड़ शीघ्र ही सड़ती है, क्योंकि पेड़ों का जीवन अधिक लम्बा होता है। पेड़ से जो पत्तियाँ गिरती हैं वे शीघ्र ही सूख जाती हैं। इसलिए वनों की भूमि खेती के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध नहीं होती। लैटेराइट (Laterite) मिट्टी वन की ही मिट्टी है। यह खेती के उपयुक्त नहीं है।

घास के मैदानों की मिट्टी

यह मिट्टी बहुत उपजाऊ होती है, इस कारण खेती के लिए बहुत उपयुक्त है। घास के मैदानों में न तो अधिक वर्षा ही होती है इस कारण मिट्टी के आवश्यक पदार्थ घुलते नहीं हैं और न इसमें वनस्पति का अंश ही अधिक होता है।

मरुभूमि की मिट्टी

मरुभूमि की मिट्टी में वनस्पति का अंश अधिक नहीं होता है परन्तु आवश्यक [illegible] कारण मरुभूमि की मिट्टी रेतीली होती है। किन्तु रेतीली मिट्टी में भी पौधे को उत्पन्न करने की शक्ति होती है। यदि पानी मिल जाय तो रेतीली मिट्टी पर भी खेती की जा सकती है।

दूसरे प्रकार की वह मिट्टी है जिस पर उसकी चट्टान का प्रभाव अधिक है। कुछ चट्टानों की मिट्टी अत्यन्त उपजाऊ होती है तथा कुछ की फसलों के लिए हानिकारक होती है। कणदार चट्टानों (Crystalline) तथा ग्रैनाइट (Granite) चट्टानों में चूने की कमी होने के कारण उनसे बनी हुई मिट्टी खेती के काम की नहीं होती। ज्वालामुखी के फूटने से जो पिघले हुए पदार्थ निकलते हैं उनसे बनी हुई मिट्टी बहुत उपजाऊ होती है। चूने के पत्थर (Lime-stone) से बनी हुई मिट्टी अधिक उपजाऊ होती है।

यह तो हम पहले ही कह आये हैं कि चट्टानों के टूटने से मिट्टी बनती है। चट्टानों के तोड़ने तथा मिट्टी को बनाने का कार्य प्राकृतिक शक्तियाँ करती हैं। वायु, जल, पौधे, धूप एवं जीव जन्तु चट्टानों को लगातार तोड़ते रहते हैं और उनको छोटे छोटे कणों में परिवर्तित करते रहते हैं। चट्टानों की दरारों में जब जल घुस जाता है और उसके जम जाने पर वह फैलता है तो चट्टान को तोड़ देता है। अधिक गर्मी तथा ठंडक से चट्टानें टूट जाती हैं उनमें गहरी दरारें पड़ जाती हैं। पौधे और पेड़ अपनी जड़ों के द्वारा बराबर चट्टानों को तोड़ते रहते हैं। बहता हुआ जल चट्टानों को काट कर घिस देता है। वायु जब तीव्र वेग से चलती है और उसके साथ धूल के कण उड़ते हैं तो वह चट्टानों की दरारों में घुस कर उनको तोड़ती है और चट्टानों के बाहरी भाग को काटती और घिसती रहती है। ऊपर हमने प्राकृतिक शक्तियों के कारण चट्टानों के टूटने और मिट्टी बनने की बात लिखी इनके अतिरिक्त चट्टानों के टूटने के रासायनिक (Chemical) कारण भी हैं। वायु जल, और पौधे स्वयं तो चट्टानों को तोड़ते ही हैं परन्तु साथ ही चट्टानों के ऊपर कार्बन तथा आक्सीजन की प्रतिक्रिया भी करते हैं जिससे चट्टानें नष्ट होती हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि चट्टानों को तोड़ कर मिट्टी बनाने का काम वायु, जल, और पौधों का है।

किन्तु यह न समझ लेना चाहिए कि जो मिट्टी हम अपने गाँव या प्रदेश में देखते हैं वह वहाँ की चट्टानों से ही बनी है। अधिकतर मिट्टी जहाँ बनी वहाँ से प्रकृति की शक्तियों द्वारा दूसरे स्थान पर लाकर जमा दी गई। मिट्टी को एक स्थान से लाकर दूसरे स्थान पर जमा देने में जल, वायु और बर्फ का मुख्य हाथ रहा है। जो मिट्टी नदियाँ चट्टानों को तोड़ कर बनाती हैं और बहाकर नीचे मैदान में बिछा देती हैं उसे कछार (Alluvial) मिट्टी कहते हैं। यह मिट्टी अत्यन्त उपजाऊ होती है। जो मिट्टी हवा द्वारा उड़ाकर दूसरी जगह बिछा दी जाती है उसे लोयस (Loess) कहते हैं। चीन तथा मध्य योरोप में यही मिट्टी पाई जाती है। यह मिट्टी भी अत्यन्त उपजाऊ होती है। एलूवियल (Alluvial) तथा लोयस (Loess) मिट्टी के मैदान संसार में सब से अधिक उपजाऊ हैं। हिमनदी

(Glaciers) के द्वारा जमा की हुई मिट्टी को टिल (Till) कहते हैं। यह भी उपजाऊ होती है।

ऊपर दिये हुए विवरण में इस बात को बतलाने का प्रयत्न किया गया है कि मिट्टी किस प्रकार बनी। अब हम मिट्टी के तीन रूपों का संक्षिप्त विवरण देंगे। मिट्टी के तीन रूप हैं —चीका (Clay) रेत (sand) और दोमट (Loam)। चीका मिट्टी बहुत कड़ी और चिकनी होती है उसमें न तो पानी ही जल्दी पहुँच सकता है और न हवा ही जल्दी पहुँच सकती है। इस कारण चीका मिट्टी खेती के लिए उपयोगी नहीं होती। रेतीली मिट्टी में चीका (Clay) का अंश बहुत कम होता है उसके कण अलग रहते हैं, उसमें कणों को जोड़ देने वाला पदार्थ नहीं होता। इस कारण उसमें उत्पन्न होने वाले पौधे की जड़ तक हवा और पानी सरलता से पहुँच सकता है। रेतीली मिट्टी पर खेती करना आसान होता है किन्तु रेतीली मिट्टी पर खेती करने के लिए पानी की अधिक आवश्यकता होती है। यदि जल की कमी हो तो अधिक पैदावार नहीं होती। दोमट (Loam) में दोनों प्रकार की मिट्टी होती है अर्थात् उसमें रेत और चीका (Clay) समान रूप से मिले रहते हैं। दोमट मिट्टी सब प्रकार की फसलों के लिए उपयुक्त है क्योंकि इसमें दोनों मिट्टियों के गुण होते हैं। कुछ पौधों के लिए रेतीली मिट्टी अधिक उपयोगी होती है और कुछ के लिये रेतीली मिट्टी हानिकर होती है। रेतीली मिट्टी में पानी शीघ्र ही गहराई तक चला जाता है और साथ ही सूर्य की किरणों से वह शीघ्र ही सूख जाता है। अतएव उन पौधों के लिये जिन्हें जड़ के पास अधिक समय तक पानी की आवश्यकता होती है रेतीली मिट्टी उपयोगी सिद्ध नहीं होती। चीका मिट्टी तो खेती के लिये सर्वथा अनुपयुक्त है। क्योंकि एक तो पौधा उसमें अपनी जड़ को ही आसानी से नहीं फैला सकता फिर हवा और पानी भी जड़ तक आसानी से नहीं पहुँचता। इस कारण ऐसी मिट्टी पर खेती नहीं की जाती केवल घास उगती है।

कहीं कहीं मिट्टी पर रेह अथवा शोरा (Alkalies) जम जाने से भी मिट्टी खेती के लिये व्यर्थ हो जाती है। रेह तथा नमकीन मिट्टी पौधे को उगने ही नहीं देती। यह उन स्थानों में पाई जाती है जहाँ पानी कम बरसता है अथवा जहाँ पानी तो काफी बरसता है किन्तु उसका बहाव ठीक न होने के कारण वह बह नहीं सकता। ऐसे स्थानों में वर्षा का पानी घुले हुए नमक के साथ पृथ्वी की तह में चला जाता है। पानी में नमक घुलकर अन्दर ही इकट्ठा हो जाता है। किन्तु जब अन्दर का पानी तेज धूप से भाप बनकर उड़ने लगता है तब नमक ऊपर आकर इकट्ठा हो जाता है। ऐसी भूमि खेती के काम की नहीं रहती।

यह तो हम पहले ही कह आये हैं कि मिट्टी चट्टानों का वह चूर्ण है जिसमें वनस्पति का अंश यथेष्ट मिला होता है। इस पर पौधा उगता है और अपनी जड़ों को इसमें घुसेड़ कर अपने जीवित रहने के लिए आवश्यक तत्वों को प्राप्त करता है। मिट्टी ६ इंच से लेकर ४ फुट तक मोटा होता है। मिट्टी में पौधे के लिये निम्नलिखित चार तत्व आवश्यक होते हैं। नत्रजन (Nitrogen,) कैलसियम, फास्फोरस और पोटैसियम। जिस भूमि में इन तत्वों की कमी हो जाती है उसकी उर्वरा शक्ति घट जाती है और उस पर खेती करने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि खाद देकर उन तत्वों की कमी को पूरा कर दिया जावे।

मिट्टी का कार्य

मिट्टी में परिवर्तन.—यद्यपि साधारण दृष्टि से देखने से हमें यह ज्ञात होता है कि मिट्टी में कोई परिवर्तन नहीं होता किन्तु ऐसा नहीं है। मिट्टी में निरंतर परिवर्तन होता रहता है। मिट्टी में परिवर्तन चार तरह से होता है। (१) पहले प्रकार का परिवर्तन सभी स्थानों पर होता है और सभी प्रकार की मिट्टी में होता है किन्तु वह बहुत धीमे होता है। इस परिवर्तन को "क्रमिक विकास" कहते हैं। वर्षा तथा जल के बहाव तथा वायु और पौधों के प्रभाव के कारण तथा रासायनिक क्रियाओं द्वारा मिट्टी बराबर बदलती रहती है और उसका विकास होता रहता है। इस क्रिया के द्वारा प्रथम चट्टानें टूट कर अपरिपक्व मिट्टी बनती है, दूसरी स्थिति में इन शक्तियों के प्रभाव के कारण अपरिपक्व मिट्टी अच्छी तरुण मिट्टी बनती है, उसमें उन्नति होती है, तीसरी स्थिति में मिट्टी बहुत ही उपजाऊ और पूर्ण रूप से परिपक्व बन जाती है और चौथी स्थिति वह होती है जब मिट्टी निर्बल और पुरानी अर्थात् वृद्ध हो जाती है। उस मिट्टी में से पौधों के पोषण करने की शक्ति नष्ट हो चुकती है। यदि इस मिट्टी को बहुत गहरा पलट कर तथा अन्य उपायों से उसको खेती के उपयुक्त न बनाया जावे तो यह चौथी स्थिति बहुत लम्बे समय तक बनी रहती है। यहाँ यह न भूल जाना चाहिए कि मनुष्य चाहे जितना घोर परिश्रम करे वह स्थायी रूप से मिट्टी के इस 'क्रमिक विकास' को उलट नहीं सकता।

(२) दूसरे प्रकार का परिवर्तन तब होता है जब कि फसलें मिट्टी में कुछ तत्व बहुत तेजी से खींच लेती हैं। इस प्रकार मिट्टी की उर्वरा शक्ति क्षीण हो जाती है वह थक जाती है। यह तब होता है जब प्राकृतिक रीति से मिट्टी में उन तत्वों की होने वाली वृद्धि की तुलना में फसलें उन तत्वों को तेजी से नष्ट करती रहती हैं। यदि इस प्रकार की मिट्टी को थोड़ा विश्राम दिया जावे और उस पर कुछ समय तक फसल उत्पन्न न की जावे तो यह थकी हुई मिट्टी फिर उपजाऊ बनाई जा सकती है। इस प्रकार मिट्टी की उर्वरा शक्ति को कम करने अथवा थका देने वाली क्रिया को रोका जा सकता है।

(३) तीसरे प्रकार का परिवर्तन खाद द्वारा उत्पन्न होता है। कुछ खादें कृत्रिम होती हैं और कुछ प्राकृतिक होती हैं। खाद देने का परिणाम यह होता है कि जो मिट्टी कम उपजाऊ अर्थात् निर्धन चट्टानों से बनी हैं उनकी उपजाऊ शक्ति बढ़ जाती है तथा मिट्टी के पुरानी अर्थात् वृद्ध होने से जो उर्वरता नष्ट हो जाती है वह भी अस्थायी रूप से पूरी हो जाती है।

(४) चौथा परिवर्तन भयंकर होता है और उसको रोकना कठिन होता है। इस भूमि का विलयन या कटाव (Soil erosion) कहते हैं। भूमि का विलयन वायु, जल अथवा बर्फ से होता है, इसमें जल द्वारा भूमि विलयन बहुत भयंकर होता है।

भूमि का कटाव (Soil Erosion)

कुछ समय से मिट्टी के विशेषज्ञों का ध्यान भूमि के कटाव की ओर आकर्षित हुआ है। वास्तव में यह है भी बहुत भयंकर। भूमि के कटाव से प्रतिवर्ष देशों की अनन्त सम्पत्ति बहाकर समुद्रों में डाली जा रही है। हर एक देश में लाखों एकड़ भूमि की उर्वरा मिट्टी को पानी बहाकर समुद्र में डाल देता है। जहाँ वर्षा मनुष्य का बहुत बड़ा सहायक है वहाँ वह खतरनाक भी है। यदि वर्षा के जल का नियन्त्रण न किया जाय तो वह क्रमशः भूमि को रेगिस्तान और खेती के अयोग्य बना देता है। *आज जब कि भूमि के कटाव की समस्या प्रत्येक देश में भयंकर रूप से उठ खड़ी* हुई है तो यह पूछा जाने लगा है कि हमारी भूमि क्या स्थायी उत्पत्ति का साधन है ? भय होने लगा है कि भूमि की उपजाऊ शक्ति कहीं इस प्रकार नष्ट न हो जाय।

विशेषज्ञों का कहना है कि ऊपरी मिट्टी की गहराई ६ इंच से १ फुट तक होती है। यही मिट्टी खेत की जान होती है। भूमि की उत्पादन शक्ति इसी ६ इंच से १ फुट गहरी मिट्टी पर निर्भर रहती है। भूमि विशेषज्ञों का मत है कि यह ऊपरी मिट्टी ४०० वर्षों में एक इंच गहरी तैयार होती है। यही किसान की सबसे बड़ी पूँजी है और यही पूँजी प्रति वर्ष कटाव के कारण नष्ट होती जाती है।

पश्चिमी देशों में इस बात को जानने का प्रयत्न किया गया है कि प्रतिवर्ष भूमि के कटाव से कितनी उपजाऊ मिट्टी नष्ट हो जाती है। संयुक्तराज्य अमेरिका में प्रतिवर्ष १५००० लाख टन मिट्टी समुद्र की ओर बहाकर ले जाई जाती है। श्री बुचानन का अनुमान है कि अमेरिका को इससे प्रतिवर्ष दो अरब डालर की हानि होती है। अधिक खोज के उपरान्त संयुक्तराज्य अमरिका में यह ज्ञात हुआ है कि अमेरिका की भूमि ७५० वर्षों में एक इंच के हिसाब से कम होती जा रही है। चीन, मध्य अमेरिका और अफ्रीका का जो आर्थिक पतन हुआ उसका कारण अत्यधिक भूमि का कटाव ही है। मध्य एशिया में भी बहुत सी उपजाऊ मिट्टी बह बह कर झील में आ गई है।

भूमि का कटाव या क्षालियन दो प्रकार से होता है (१) जल के द्वारा (२) हवा के द्वारा। जल द्वारा होने वाला कटाव दो तरह का होता है, सतह का कटाव (Sheet erosion) और गहरा कटाव (Gulley erosion) सतह के कटाव से बहता हुआ जल धीरे धीरे ऊपरी मिट्टी बहाकर ले जाता है। गहरे कटाव से एक समतल प्रदेश में नाले और खड्डें बन जाती हैं। प्रतिवर्ष यह नाले और खड्डें बढ़ती जाती हैं और कुछ ही वर्षों में ये एक बहुत बड़े क्षेत्र को काट कर नष्ट कर देता है।

पानी द्वारा कटाव नीचे लिखी हुई दशाओं में अधिक होता है (१) यदि मिट्टी ऐसी हो जो पानी को अधिक न सोख सके तो कटाव की सम्भावना अधिक होती है। (२) जो मिट्टी ढाल पर होती है उसका कटाव शीघ्र होता है। (३) यदि पानी थोड़ा थोड़ा न बरस कर मूसलाधार बरसता है तो कटाव अधिक होता है। (४) यदि भूमि पर घास और पौधे अधिक होते हैं तो कटाव कम होता है। अन्यथा अधिक होता है। (५) पहाड़ों के ढालों पर जंगलों को काट कर साफ कर देने से भूमि का कटाव बहुत होता है। (६) यदि खेती करने का ढंग अवैज्ञानिक हो तो भी भूमि का कटाव अधिक होता है।

तेज हवाओं द्वारा रेत तथा धूल के तूफान आते हैं जिनसे भी भूमि का नाश होता है। उपजाऊ भूमि रेत से पट जाता है और खेती के लिए बेकार हो जाती है।

भूमि का इस प्रकार नष्ट होने से बचाने के लिये प्रत्येक देश में उपाय किये जा रहे हैं उनमें से पहाड़ों पर जंगलों को लगाना, चबूतरेदार खेती (Terrace cultivation) करना, वैज्ञानिक खेती करना, नालों और खाइयों में बाँध बनाकर भावी कटाव को रोकना या घास लगाकर उनको न बढ़ने देना, उस प्रदेश की प्राकृतिक बहाव (Drainage) का नियन्त्रण करना इत्यादि मुख्य हैं।

जैसे जैसे प्रत्येक देश की जनसंख्या बढ़ती जाती है वैसे ही वैसे मनुष्य को भूमि की उत्पादन शक्ति बढ़ाने की आवश्यकता अनुभव होती है। वैज्ञानिक खेती और आधुनिक खाद के उपयोग से भूमि की उत्पादन शक्ति को घटने नहीं दिया जाता। भूमि के कटाव को रोककर, रेह वाली भूमि को वैज्ञानिक क्रियाओं द्वारा खेती के योग्य बनाकर, दलदल भूमि को सुखा कर और पथरीली तथा पहाड़ी भूमि को उपजाऊ करके मनुष्य भूमि की कमी को पूरा कर रहा है। आज मनुष्य की आर्थिक उन्नति और सभ्यता के विकास के लिए यह आवश्यक है कि वह भूमि के अपव्यय को रोके। भूमि और सभ्यता का घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि भूमि का अपव्यय होगा तो सभ्यता का विनाश अवश्यम्भावी है।

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि पृथ्वी का धरातल एक सा नहीं है। कहीं गगनचुम्बी पर्वत हैं तो कहीं ऊँचे पठार, तो कहीं नीचे और समतल मैदान हैं। धरातल के बहुत रूप होते हैं किन्तु मोटे तौर पर हम उन्हें ऊपर लिखे तीन भागों में बाँट सकते हैं अर्थात् मैदान, पठार, और पहाड़।

पृथ्वी का धरातल

मैदान नीचे होते हैं, पठार और पहाड़ ऊँचे होते हैं। पठार और पहाड़ २००० फुट से अधिक ऊँचे होते हैं और अधिकतर ३००० फुट से भी ऊँचे होते हैं किन्तु अधिकांश मैदान २००० फुट से नीचे होते हैं।

मैदान (Plains)

पृथ्वी में जो भी भूमि है उसकी ऊँचाई इस प्रकार है —

१५०० फुट से नीचे ५५ प्रतिशत

१५०० फुट से ३०००फुट तक १८ प्रतिशत

३००० फुट से ऊपर २७ प्रतिशत

यह मनुष्य के लिए सौभाग्य की बात है कि पृथ्वी का इतना बड़ा भाग नीचे मैदान के रूप में है क्योंकि मैदानों पर ही वनस्पति, पशु और मनुष्य अधिकतर पलता पूलता है और वहाँ की आर्थिक उन्नति होती है। मैदानों की मिट्टी अधिकतर उपजाऊ होती है और वहाँ पत्थर इत्यादि नहीं होते। यही नहीं, अधिक ऊबड़-खाबड़ न होने के कारण वहाँ भूमि का कटाव कम होता है और मिट्टी उपजाऊ बना रहती है। मैदानों में गमनागमन के साधन (सड़क, रेल इत्यादि) के बनाने में कोई रुकावट नहीं होती और जो नदियाँ मैदानों में बहती हैं वे भी व्यापार के लिए सुविधाजनक जलमार्ग बन जाती हैं। यही कारण है कि मैदान ही पृथ्वी के सबसे घने आबाद प्रदेश हैं। उदाहरण के लिए उत्तर पश्चिम योरोप, दक्षिणी रूस, चीन, भारत, तथा संयुक्तराज्य अमेरिका के मैदान संसार के अत्यन्त घने आबाद प्रदेश हैं। किन्तु जिन मैदानों में अत्यधिक शीत होती है उन मैदानों में जनसंख्या घनी नहीं होती। उदाहरण के लिए सायबेरिया तथा उत्तरी कनाडा के मैदान। जल की कमी भी मैदानों को वीरान बनाने का कारण हो सकता है। उदाहरण के लिए सहारा और अरब के विशाल मैदान जनसंख्या रहित हैं क्योंकि वे अत्यन्त शुष्क प्रदेश हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि पृथ्वी के स्थल भाग का केवल ३० प्रतिशत ही इतना समतल, गरम और नम है जिस पर खेती हो सकती है। पृथ्वी पर मैदान ही कृषि और उद्योग धंधों की उन्नति के स्थान हैं और इन्हीं मैदानों में संसार के सभी प्रसिद्ध नगर बसे हुए हैं और ये मैदान ही संसार की सभ्यताओं और संस्कृति के केन्द्र हैं।

पृथ्वी की लगभग एक तिहाई भूमि २००० फुट से ऊँची है और वह पहाड़ कही जा सकती है। पठारों को नदियाँ काट कर उनमें घाटियाँ बना देती हैं। और खेती तथा आबादी इन्हीं नदियों की तंग घाटियों में फलती-फूलती हैं। जहाँ घाटियाँ बहुत छोटी होती हैं और तले का मैदान बहुत कम होता है वहाँ किसान घाटी के दोनों ओर पहाड़ियों के ढालों पर खेती करने का प्रयत्न करते हैं। किन्तु पहाड़ी ढालों पर मिट्टी की बहुत पतली तह जमी रहती है और बहता हुआ पानी उसका कटाव करता है (Erosion of soil)। इस कारण वहाँ की भूमि अधिक उपजाऊ नहीं होती और न अच्छी खेती ही हो सकती है।

पठार और पहाड़ (Plateaus and mountains)

जहाँ पहाड़ों के आर्थिक महत्व का प्रश्न है पहाड़ों को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। एक तो वे हैं जो अपनी चोटी तक जंगलों, झाड़ियों तथा घास से ढके रहते हैं। दूसरे वे हैं जो उस रेखा से भी ऊँचे हैं जहाँ तक वनस्पति उग सकती है। इन पहाड़ों पर हिमनद (बर्फ) जम जाता है और जब वह पिघलता है तो घाटियों की ओर नीचे उतरता है।

पहले प्रकार के पहाड़ों पर मनुष्य अपना निवासस्थान बना सकता है। यद्यपि वहाँ खेती तो कम ही होती है किन्तु पशु-पालन तथा दूध का धंधा बहुत होता है। भेड़ चराना भी वहाँ एक प्रमुख धंधा है और ढालों पर थोड़ी बहुत खेती भी होती है।

पहाड़ी प्रदेश खनिज केन्द्र बन सकते हैं क्योंकि अधिकांश पहाड़ी प्रदेशों में आग्नेय (Igneous) तथा परिवर्तित (Metamorphic) चट्टानें मिलती हैं जिनमें सोने, चाँदी, जस्ता, शीशा तथा अन्य धातुयें मिलती हैं। संयुक्तराज्य अमेरिका के राकी पहाड़ी (Rockey Mountains) प्रदेश के बहुत से क्षेत्रों में खान खोदना ही मुख्य धन्धा है।

पहाड़ों के कारण गमनागमन में असुविधा होती है इस कारण व्यापार में भी रुकावट उत्पन्न होता है। शताब्दियों तक चीन पश्चिमी राष्ट्रों से पृथक् रहा क्योंकि भीतरी एशिया के पहाड़ उसे घेरे हुए हैं। संयुक्तराज्य अमेरिका में अपलेशियन पर्वतमाला (Appalachian Mountains) ने पश्चिम की ओर आबादी को बढ़ने से बहुत समय तक रोका। आज भी तिब्बत संसार से पृथक् बना हुआ है।

पहाड़ी प्रदेशों में जो भी मार्ग बनाये जाते हैं वे उन तंग दर्रों में से होकर जाते हैं जो बहुत कम चौड़े होते हैं और जिनमें मार्ग बनाना कठिन होता है। ये दर्रे बहुधा जाड़ों में बर्फ से ढक जाते हैं। किन्तु आज मनुष्य ने अच्छी सड़कें बनाने में इतनी अधिक निपुणता प्राप्त कर ली है कि वह पहाड़ों में सुरंग बनाकर रास्ता निकाल

लेता है। किन्तु पहाड़ों के अन्दर सुरंग बनाना सम्भव हो व्ययसाध्य और कठिन कार्य रहेगा अतएव पर्वत श्रेणियाँ सदैव व्यापार के लिए बाधक बनी रहेंगी।

किन्तु पहाड़ों से होने वाले उस आर्थिक लाभ को हम न भूल जाना चाहिये जो हमें परोक्ष रूप से होता है। यह पहाड़ों की ही कृपा है कि उनके नीचे के मैदानों में वर्षा होती है अथवा बरफ पिघल कर नदियों में आता है। बहुत से मैदान आज शुष्क रेगिस्तान होते यदि उनके उपर पहाड़ न खड़े होते।

पठारों की ऊँचाई में बहुत भिन्नता होती है। बहुत ऊँचे पठारों पर, जैसा कि तिब्बत है आर्थिक उन्नति के लिए सुविधा कम होती है और वे कम घने आबाद होते हैं किन्तु कम ऊँचे और साधारण ऊँचे पठारों पर आर्थिक उन्नति तेजी से होती है।

अभ्यास के प्रश्न

१—पृथ्वी की बनावट के भिन्न रूपों—मैदानों, पहाड़ों तथा पठारों के आर्थिक महत्व को बतलाइए।

२—चट्टानें कितने प्रकार की होती हैं ? चट्टानों के आर्थिक महत्व को बतलाइए।

३—मिट्टी कितने तरह की होती है और किस प्रकार बनती है ?

४—चट्टानों को तोड़ने, उनका चूरा बनाने, और मिट्टी को तैयार करने व उसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में कौन सी प्राकृतिक शक्तियों का हाथ होता है, विस्तारपूर्वक लिखिये।

५—घने आबादी वाले मैदान आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण क्यों होते हैं ?

६—पहाड़ों से मनुष्य को क्या लाभ हानि है विस्तारपूर्वक लिखिये।

७—पौधे के लिए मिट्टी में किन तत्वों की आवश्यकता होती है ? खेत के लिए किस प्रकार की मिट्टी अधिक उपयोगी होती है और क्यों ?

जलवायु तथा प्राकृतिक वनस्पति

जलवायु

जलवायु किसी प्रदेश के वर्ष भर के मौसम को कहते हैं। मनुष्य समाज के आर्थिक विकास, जनसंख्या, तथा अन्य हलचलों पर जलवायु का गहरा प्रभाव पड़ता है। जलवायु के अन्तर्गत गरमी (Temperature), दबाव (Pressure), वायु का बहाव, धूप, बादलों का होना, वर्षा इत्यादि सभी बातें आ जाती हैं।

तापक्रम (Temperature)

भाग पर गरमी अधिक होगी या कम, यह तीन बातों पर निर्भर है (१) अक्षांश (Latitudes), (२) भूमि की ऊँचाई और (३) समुद्र से दूरी। सूर्य की किरणें पृथ्वी पर लहरों की भाँति आती हैं और जब वे पृथ्वी के पास पहुँचती हैं तो पृथ्वी के समीप की वायु किरणों को अपने मार्ग से हटा देती है, किन्तु फिर भी अधिकांश किरणें उस वायु को भेद कर पृथ्वी पर गिरती हैं। वायु सूर्य की बहुत कम गरमी को ले पाता है। जिस कोण (Angle) से सूर्य की किरणें पृथ्वी के किसी हिस्से पर गिरती हैं उस पर गरमी का कम ज्यादा होना निर्भर रहता है। जिस भूमि पर सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं उस पर अधिक किरणों के पड़ने के कारण गरमी अधिक पड़ती है और जिस प्रदेश पर किरणें तिरछी होती हैं वहाँ किरणों के कम होने के कारण गरमी कम पड़ती है। जब किरणें तिरछी पड़ती हैं तो उनकी अपेक्षाकृत अधिक गरमी वायु में नष्ट हो जाती है। उदाहरण के लिये "क ख ग घ" घेरे को हम पृथ्वी मान लेते हैं और "य र ल व" घेरे को वायु की निचली घनी तह, तथा "प फ ब भ" को वायु की ऊपरी हलकी तह मानते हैं। अब "त" "थ" "द" किरणों के समूह जो आकार में बराबर हैं पृथ्वी पर गिरते हैं। "थ" किरणसमूह ठीक विषुवत् रेखा (Equator) पर गिरता है, "द" कुछ तिरछा होकर शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate zone) पर गिरता है और "त" बहुत तिरछा होकर उत्तरी ध्रुव (North Pole) पर गिरता है। नीचे दिये हुए चित्र से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि किरणें तिरछी होंगी तो वे अधिक क्षेत्रफल पर फैलेंगी। अस्तु उनके द्वारा पृथ्वी पर गरमी कम उत्पन्न होगी किन्तु उतनी ही किरणें जब विषुवत् रेखा पर पड़ती हैं तो वे कम क्षेत्रफल पर फैलती हैं। अतएव उनके द्वारा अधिक गरमी उत्पन्न होती है। आगे दिये हुये चित्र से यह भी स्पष्ट हो

जाता है कि "त" किरण समूह वायु की निचली घनी तह में से होकर अधिक दूर तक गुजरता है इस कारण वायु में उनकी गरमी अधिक नष्ट होती है। इसके विपरीत 'थ' किरण समूह की गरमी कम नष्ट होती है। गरमी दिन की लम्बाई पर भी
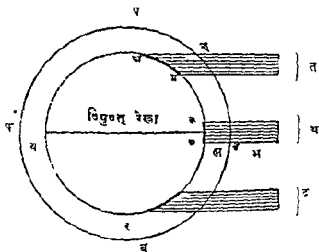
निर्भर है। उष्ण कटिबन्ध (Tropics) में दिन अधिक घटता बढ़ता नहीं है। ब्रिटिश द्वीप में जाड़ों के मौसम में दिन केवल ६ घंटे का और गरमी के मौसम में १८ घंटे तक का होता है। उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुव में ६ महीने का दिन और ६ महीने की रात्रि होती है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि विषुवत् रेखा से उत्तर तथा दक्षिण ध्रुव की ओर गरमी कम होती जाती है।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि सूर्य की किरणों से वायु कुछ गरमी प्राप्त कर लेती है। किन्तु वायु को अधिकांश गरमी पृथ्वी से मिलता है। जो गरमी की किरणें पृथ्वी से निकलती हैं वे दिखलाई नहीं देतीं। अस्तु जितनी ही किसी प्रदेश की ऊँचाई अधिक होगी उतनी ही वायु को पृथ्वी से गरमी कम मात्रा में प्राप्त होगी और जितनी ही भूमि नीची होगी उतनी अधिक गरमी वायु को पृथ्वी से मिलेगी। ऐसा अनुमान किया जाता है कि हर ३०० फीट की ऊँचाई पर १° गरमी कम होती जाती है।

पृथ्वी के द्वारा वायु का गरम होना (Radiation)

भूमध्य रेखा प्रान्त के सदा हरे भरे वन अथवा (Selvas)

८० इंच से अधिक होता है वहाँ वायु और मिट्टी नम रहती है। गरमी और नमी के कारण यहाँ के वृक्ष सघन और उच्च होते हैं। प्रकाश पाने के लिये इन सघन वनों के वृक्ष सदा ऊपर बढ़ने का प्रयत्न करते हैं। जंगली लतायें इन बड़े बड़े वृक्षों पर चढ़ जाती हैं। इनका आकार प्राय इतना बड़ा हो जाता है कि वृक्ष सूख जाते हैं। भूमध्य रेखा के अत्यन्त सघन वनों में पत्तियाँ इतनी सघन होती हैं कि सूर्य का रोशनी भूमि तक नहीं पहुँचती और यहाँ सर्वदा अंधकार रहता है। अमेजन और काँगो के वन ऐसे ही हैं। अन्य वन इतने घने नहीं हैं और थोड़ा बहुत रोशनी पृथ्वी तक पहुँच जाती है। इन वनों में कठोर लकड़ी के वृक्ष मिलते हैं। इनमें महागनी, आबनूस मुख्य है। इन वनों में रबर, सिनकोना, नारियल और ताड़ जैसे व्यापारिक महत्व के वृक्ष भी बहुत पाये जाते हैं।

उष्ण कटिबन्ध के घास के मैदान और सवाना (Savana)

उष्ण कटिबन्धी जलवायु की मुख्य उपज लम्बी घास है। इस घास में कहीं कहीं वृक्ष भी दिखलाई पड़ते हैं। अफ्रीका का बहुत बड़ा भाग सवाना घास से भरा पड़ा है। वर्षा होते ही घास शीघ्रता से उग आती है और गर्मी में सारा प्रदेश सूख कर भूरे रंग का हो जाता है। जिन प्रदेशों में वर्षा कुछ अधिक होती है वहाँ वृक्ष भी अधिक पाये जाते हैं।

मानसूनी प्रदेश

इस प्रदेश में भूमि ऐसे वनों से ढकी होती है जो गरमी के मौसम में अपने पत्ते गिरा देते हैं। जहाँ ४० इंच से अधिक वर्षा होती है उन प्रदेशों में बड़े बड़े वृक्ष होते हैं, जिनकी लकड़ी मूल्यवान होती है। इनमें टीक और साल मुख्य हैं परन्तु जहाँ वर्षा कम होती है वहाँ वृक्ष छोटे रह जाते हैं। यहाँ तक कि मरुस्थलों की भाँति कहीं कहीं वृक्ष काँटेदार हो जाते हैं। ऐसे कम वर्षा वाले प्रदेश गुल्मभूमि (Scrubland) तथा काँटेदार वनों में परिणत हो जाते हैं।

भूमध्य सागरीय जलवायु की वनस्पति

यहाँ पौधे विशेषकर जाड़े में उगते हैं क्योंकि यहाँ वर्षा जाड़े में ही होती है। इस प्रदेश की वनस्पति में छोटे छोटे वृक्ष तथा झाड़ियाँ अधिक होती हैं। गरमियों में यहाँ नमी की कमी होती है, इस कारण प्रकृति ने इन वृक्षों की पत्तियों पर रेशम के समान कोमल रोम उत्पन्न कर दिये हैं। ये पत्तियाँ नमी को नष्ट होने से बचाती हैं। कुछ वृक्ष जैसे कार्क अपनी मोटी छाल द्वारा नमी के नाश से अपनी रक्षा करते हैं। इन प्रदेशों में शहतूत, जैतून तथा फलों के वृक्ष मुख्यतः पाये जाते हैं। अंगूर भी यहाँ बहुत उत्पन्न होता है।

अभ्यास के प्रश्न

१—भूमध्य सागरीय जलवायु तथा मानसूनी जलवायु में क्या अन्तर है ? इन दोनों प्रकार की जलवायु में पैदा होने वाली मुख्य पैदावारें क्या हैं ?

२—भूमध्य रेखा की जलवायु (Equatorial climate) की विशेषताएँ क्या हैं ? समझा कर लिखिये और यह भी बतलाइये कि इन प्रदेशों की आर्थिक उन्नति क्यों नहीं हुई ?

३—मानसूनी जलवायु की विशेषताएँ बतलाइए और उनका इन प्रदेशों की खेती, तथा उद्योग धंधों पर कैसा प्रभाव पड़ता है इसकी व्याख्या कीजिए।

४—प्राकृतिक प्रदेश (Natural Regions) से आप क्या समझते हैं ? आर्थिक भूगोल के विद्यार्थी को उनका अध्ययन क्यों करना चाहिए ?

५—गरम मरुभूमियों का संक्षिप्त विवरण दीजिए और बतलाइए कि वहाँ से व्यापार की कौन सी वस्तुएँ हमें मिलती हैं ?

६—शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone) में पश्चिमीय योरोपीय जलवायु की विशेषताएँ बतलाइए और यह भी बतलाइए कि पश्चिमी योरोप की आर्थिक उन्नति में जलवायु का क्या हाथ है।

७—ध्रुवों की जलवायु का वहाँ के मनुष्यों के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है ? विस्तार-पूर्वक लिखिए।

चौथा परिच्छेद

मुख्य धंधे (Primary Occupations)—मछलियां

धन (Wealth) की उत्पत्ति का आधार प्रकृति की देन है। जिस देश में प्रकृति की देन की बहुतायत है वह समृद्धिशाली हो सकता है। मनुष्य अपने श्रम तथा धन राशि (पूँजी) की सहायता से सम्पत्ति की उत्पत्ति करता है। सम्पत्ति (Wealth) की उत्पत्ति करने की क्रिया को ही धंधा (Occupations) कहते हैं। धंधे दो प्रकार के होते हैं। (१) मुख्य धंधे (Primary Industries) और (२) गौण धंधे (Secondary Occupation)।

मुख्य धंधे (Primary Occupations)

मुख्य धंधों (Primary Occupations) में मनुष्य अपने श्रम तथा पूँजी (Capital) की सहायता से प्रकृति के द्वारा उत्पन्न की हुई वस्तु को प्राप्त करता है। मुख्य धंधों में प्रकृति का भाग मुख्य होता है और श्रम (Labour) तथा पूँजी (Capital) का भाग गौण होता है। मछलियों को पकड़ने का धंधा, वन सम्बन्धी धंधे, खेती और पशुपालन, तथा खनिज पदार्थों को निकालने का धंधा मुख्य धंधे हैं।

गौण धंधे (Secondary Occupations) वे धंधे हैं जिनमें मुख्य धंधों से प्राप्त किए हुए कच्चे माल (Raw material) को पक्के माल (Manufactured articles) में परिवर्तन किया जाता है। उदाहरण के लिये कागज का धंधा, लोहे का धंधा और सूती कपड़े का धंधा। इन धंधों में श्रम (Labour) और पूँजी (Capital) का मुख्य भाग रहता है।

समुद्र का आर्थिक महत्व

समुद्र की लहरें जितना सोना उछालती हैं उतना सोना आज मनुष्य के पास नहीं है। इस रूप का अभी कोई आर्थिक महत्व नहीं है क्योंकि समुद्रों की लहरों से सोना प्राप्त करना बहुत खर्चीला है, पर लाभदायक नहीं है। इसी प्रकार समुद्र की लहरों और ज्वार भाटा (Tides) में जो अनन्त शक्ति (Power) भरी हुई है उसका भी आज कोई आर्थिक महत्व नहीं है। उसका विस्तृत उपयोग किया जा सके इसके लिये यन्त्र तैयार नहीं किये जा सके हैं। यही नहीं समुद्र के गर्भ में ऐसे बहुमूल्य पदार्थ भरे हैं जो आज यद्यपि मनुष्य के लिए एक रहस्य हैं किन्तु भविष्य में मनुष्य उनको उपयोग में लाकर अधिक समृद्धिशाली और सुखी बन सकेगा।

अभ्यास के प्रश्न

१—भूमध्य सागरीय जलवायु तथा मानसूनी जलवायु में क्या अन्तर है? इन दोनों प्रकार की जलवायु में पैदा होने वाली मुख्य पैदावारें क्या हैं?

२—भूमध्य रेखा की जलवायु (Equatorial climate) की विशेषताएँ क्या हैं? समझा कर लिखिये और यह भी बतलाइये कि इन प्रदेशों की आर्थिक उन्नति क्या नहीं हुई?

३—मानसूनी जलवायु की विशेषताएँ बतलाइए और उनका इन प्रदेशों की खेती, तथा उद्योग धंधों पर कैसा प्रभाव पड़ता है इसकी व्याख्या कीजिए।

४—प्राकृतिक प्रदेश (Natural Regions) से आप क्या समझते हैं? आर्थिक भूगोल के विद्यार्थी को उनका अध्ययन क्यों करना चाहिए?

५—गरम मरुभूमियों का संक्षिप्त विवरण दीजिए और बतलाइए कि वहाँ से व्यापार की कौन सी वस्तुएँ हमें मिलती हैं?

६—शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone) में पश्चिमीय योरोपीय जलवायु की विशेषताएँ बतलाइए और यह भी बतलाइए कि पश्चिमी योरोप की आर्थिक उन्नति में जलवायु का क्या हाथ है।

७—ध्रुवों की जलवायु का वहाँ के मनुष्यों के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है? विस्तार पूर्वक लिखिए।

समुद्र के इस रहस्यमय छिपे हुए भण्डार को यदि हम छोड़ भी दें तो भी मनुष्य के लिए समुद्र की जो कुछ देन है और जिसका आज हम उपयोग कर रहे हैं उसका मूल्य का हम आँक नहीं सकते। पृथ्वी के धरातल की बनावट को वर्तमान रूप देने में समुद्र का बहुत ही बड़ा हाथ रहा है। संसार में परतदार चट्टानों (Sedimentary Rocks) का जो विस्तृत भूभाग है वह मनुष्य को समुद्र की ही देन है। जब ये चट्टानें जो वास्तव में पानी द्वारा बहाकर लाये हुए पदार्थों के जमने से बनी थीं ऊँची उठ गईं तो वे वर्तमान स्थल बन गए जो आज सभी महाद्वीपों में फैले हुए हैं। इन्हीं चट्टानों में पेट्रोलियम और कोयला बना हुआ है जिनके बिना आधुनिक सभ्यता ही असम्भव हो जायेगा।

आज भी समुद्र का जलवायु पर जो अमिट प्रभाव है उसका मूल्य रुपए पैसे में नहीं कूता जा सकता। वर्षा जिस पर मनुष्य-जीवन निर्भर है समुद्र का ही प्रसाद है। यही नहीं समुद्र का तापक्रम (Temperature) पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। समुद्र के समीपवर्ती प्रदेश अधिक गरम नहीं रहते हैं।

समुद्र अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का प्रशस्त प्रकृतिदत्त मार्ग है। इसके बनाने तथा इसकी मरम्मत करने में मनुष्य को कुछ व्यय नहीं करना पड़ता।

करोड़ों व्यक्ति जो उष्ण प्रदेशों (Tropics) में रहते हैं और विशेषकर चावल खाने वाले प्रदेशों में, मछली ही खाते हैं जो मनुष्य के भोजन में पौष्टिक तत्व है। पश्चिमी योरोप के देशों में जहाँ खेती के लिए भूमि कम है मछली पकड़ने का ही धंधा वहाँ के निवासियों का मुख्य धंधा है और लाखों की संख्या में लोग इस धंधे में लगे हुए हैं। संयुक्त राज्य अमरिका में भी यह धंधा उन्नत अवस्था में है। विशेषज्ञों का मत है कि मछली में यथेष्ट पौष्टिक लवण है और विटेमिन 'डी' तथा आयोडीन विशेष रूप से पाया जाता है। इस कारण यह बहुमूल्य भोज्य पदार्थ है।

समुद्र की उत्पादन शक्ति

जिस प्रकार हर भूमि एक सी नहीं होती कोई उपजाऊ होती है तो कोई ऊसर होती है उसी प्रकार समुद्र भी सब जगह एक सा नहीं होता। वहाँ समुद्र में भूमि के समान भिन्नता नहीं है। कहीं-कहीं समुद्र बहुत उपजाऊ होता है अर्थात् वहाँ मछलियाँ बहुत उत्पन्न होती हैं और कहीं समुद्र की मरुभूमि होती है जहाँ कुछ उत्पन्न नहीं होता। अत्यन्त सूक्ष्म वनस्पति, प्लैंकटन (Plankton Plants) पौधे ही समुद्र में मछलियों का मुख्य भोजन है जिस पर वे जीवित रहती हैं और क्योंकि इन पौधों के लिए सूर्य की रोशनी आवश्यक है इस कारण यह वनस्पति ६०० फुट से अधिक गहराई पर नहीं मिलती। यही कारण है कि ६०० फुट के

समुद्र (Behring Sea) तथा प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean) के दक्षिण में मिलता है।

फर सील (Fur Seal) उत्तर में बेरिंग समुद्र (Behring Sea) में पाई जाती है। संसार में सब से अधिक फर सील यहीं मिलती है। फर साल दक्षिणी गोलार्द्ध में हार्न अन्तरीप (Cape of Horn), दक्षिणी अफ्रीका, तथा दक्षिणी आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में भी मिलती है। सील मछली को पिछले वर्षों में इस बुरी तरह मारा गया कि सील के समाप्त होने की आशंका होने लगी। अतएव ब्रिटेन, कनाडा, रूस, संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान की सरकारों ने एक समझौता कर लिया है जिससे प्रति वर्ष कितनी सील पकड़ी जायँ यह निश्चित कर दिया जाता है।

जब सील को मारना आरम्भ किया गया था तो उस समय ऐसा अनुमान किया जाता था कि उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुव प्रदेशों में एक करोड़ से अधिक सील मछली थी। क्रमश सील मछली बहुत घट गई और जो कुछ चार पाँच लाख सील बच रहा वह मुख्यत संयुक्तराज्य अमेरिका के आधीन प्रिबिलाफ द्वीपों (Pribilof Islands) में ही रहती थी। यद्यपि संयुक्तराज्य अमेरिका की सरकार ने उस झुंड की रक्षा करने का प्रयत्न किया किन्तु यह सम्भव नहीं हुआ क्योंकि वर्फीली सील का स्वभाव यह है कि वह वर्ष के अधिकांश भाग को समुद्रों में व्यतीत करती थी और वहाँ रूसी, अमेरिकन, जापानी तथा अंग्रेजी जहाजों द्वारा मारी जाती था। अस्तु संयुक्तराज्य अमरिका ने देखा कि सील का नाश होता जा रहा है तो १९११ में एक संधि की गई जिससे सील का मारना रोक दिया गया। जिस समय यह समझौता हुआ तो प्रिबिलॉफ (Pribilof) द्वीप में केवल १२४,००० सील मछलियाँ रह गई थीं। किन्तु उस समझौते के उपरान्त उनकी संख्या बढ़ने लगी और आज पन्द्रह लाख से भी अधिक सील हैं। संसार में फर उत्पन्न करने वाली साल मछला का यही मुख्य झुंड है।

प्रति वर्ष राज्यकर्मचारी सील मछलियों की गणना करते हैं। और ३ वर्ष की उमर की मछलियों में जितनी नस्ल उत्पन्न करने के लिए आवश्यक होती हैं उतनी छोड़ दी जाती हैं। मादा मछली को नहीं मारा जाता और नर मछलियों को जो नस्ल पैदा करने के लिए आवश्यक मछलियों से संख्या में अधिक हैं उनको मारा जाता है। समझौते के अनुसार जितने फर (खालें) मिलते हैं उनके ७० प्रतिशत संयुक्तराज्य अमेरिका को, १५ प्रतिशत ब्रिटेन को और १५ प्रतिशत जापान को बट जाते हैं। वर्ष भर में एक लाख फर उत्पन्न होते हैं।

मोती एक प्रकार की मछली से निकाला जाता है जो गरम समुद्रों में पाई जाता है। माता मलाया समुद्र (Malaya Sea) आस्ट्रेलिया के उत्तर-पश्चिमी तट पर, लका के उत्तर म, फारस की खाड़ी में, लाल समुद्र में, कैलीफार्निया का खाड़ा म, तथा पनामा की खाड़ी में मिलते हैं। कुछ नदियों म विशेषकर जमना, अमरिका और चीन की नदियों में बहुत बड़े और चमकदार मोती पाये जाते हैं।

मोती (Pearl fish)

स्पज एक प्रकार क समुद्री जन्तु का रेशेदार ढाँचा है। इसको साफ करने तथा सुखा कर बाहर भेजा जाता है। सब से अधिक स्पज भूमध्य सागर (Mediterranean) तथा एड्रियाटिक (Adriatic) समुद्र से निकलता है। सब छिछले समुद्र म मिलता है। बहामा द्वीप क समीप भी स्पज बहुत मिलता है। स्पज का अधिक माँग के कारण स्पज को उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जा रहा है। स्पज क बीज (Seed Sponge) पत्थरों पर तारों से बाँध दिये जाते हैं और समुद्र क तल पर बढ़ने के लिए रख दिये जाते हैं।

स्पज (Sponge)

सयुक्त राज्य अमेरिका के तटीय समुद्र म सामन (Salmon) को छोड़कर यही सब से महत्वपूर्ण मछली है। यह मछली खाने म स्वादिष्ट होती है और छिछले समुद्र तथा नदियों क मुहाने म अधिकतर मिलती है। यह इङ्गलिश चैनल (English Channel), बिस्के की खाड़ी (Bay of Biscay) तथा सयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिमी तट पर बहुत मिलती है। सयुक्त राज्य के अटलाटिक समुद्र-तट पर भी आयस्टर बहुत मिलती है।

आयस्टर (Oyster)

मछली शीघ्र ही खराब हो जाने वाली वस्तु है। इस कारण शीत भण्डार रीति (Refrigeration) के आविष्कार होने क उपरान्त उसको पकड़ने का धन्धा उन्नति कर गया है। कुछ समय से मछली को जमा कर बाहर भेजने का रीति का आविष्कार हुआ है जिससे मछली के व्यापार को और भी प्रोत्साहन मिला है।

आजकल मछली का केवल भोजन के लिए ही नहीं पकड़ा जाता। मछली से बहुत तरह के औद्योगिक पदार्थ मिलते हैं, उसकी उत्तम और मूल्यवान खाद बनती है। मछली का तेल औषधियाँ, मशीनों को चिकना करने, साबुन बनाने, चमड़ा कमाने तथा औद्योगिक कार्यों के काम में लाया जाता है। किसी किसी मछली की खाल से बहुत अच्छा चमड़ा तैयार होता है। उदाहरण क लिये शार्क

(Shark) का चमड़ा मूल्यवान होता है। यही नहीं, मछली का उपयोग पशुओं और मुर्गियों को खिलाने में भी होता है। दूध देने वाले पशुओं और अंडा देने वाली मुर्गियों को मछली से बना हुआ भोज्य पदार्थ (Fish Meal) देने से वे दूध और अंडा अधिक देती हैं। इस प्रकार मछली का उपयोग होने से जो बहुत कुछ मछलियों का अंश व्यर्थ में नष्ट हो जाता था वह अब नष्ट नहीं होगा। यह पशु भोजन बहुत ही लाभप्रद है, केवल उसका मूल्य अधिक होने के कारण ही उसका उपयोग कम होता है।

संसार में मछली के धंधे की दृष्टि से निम्नलिखित देश महत्वपूर्ण हैं—जापान ब्रिटेन, संयुक्त-राज्य अमेरिका, नार्वे, जर्मनी, कनाडा, और फ्रांस। जापान की स्थिति मछली के धंधे के बहुत अनुकूल है। बहुत अधिक लम्बाई में हजारों की संख्या में छोटे बड़े द्वीप समुद्र में फैले हुए हैं। इस कारण मनुष्य इस धंधे को आसानी से कर सकते हैं। साथ ही जापान में जनसंख्या घनी है किन्तु खेती योग्य भूमि देश में केवल १६ प्रतिशत है, इस कारण भी जापानियों को मछली के धंधे में लगना पड़ता है। जापान में किसान खेती के साथ मछली पकड़ने का भी काम करते हैं। देश की लगभग १० प्रतिशत जनसंख्या इस धंधे में लगी हुई है। जापान के तटीय समुद्र में ही यह धंधा अधिक होता है। जापान में अधिकांश सारडिन (Sardine), हैरिंग (Herring) तथा मैकेरल (Mackerel) मछलियाँ मिलती हैं। जापानी मछुये चीन समुद्र तथा पीले समुद्र में मछली पकड़ते हैं। नागासाकी (Nagasaki) बन्दरगाह इस धंधे का प्रधान केन्द्र है। होकैडो (Hokkaido) द्वीप भी इस धंधे के लिये बहुत ही उपयुक्त है और यहाँ बहुत अधिक मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

जापान में मछलियों की बहुत खपत है इस कारण वहाँ से अधिक मछली विदेशों को नहीं भेजी जाती। जो कुछ भी मछली बाहर भेजी जाती हैं वह चीन को जाती है।

नदी और तालाब की मछलियाँ

सैकड़ों वर्ष पूर्व चीनी और जापानियों ने यह जान लिया था कि (घने आबाद देशों में) नदियों और तालाबों में मछलियाँ उत्पन्न करके भोजन उत्पन्न करना एक सरल उपाय है। इन देशों में बहुत पुराने समय से मछलियों को तालाबों और नदियों में उत्पन्न करने का धंधा चलता आया है। जर्मनी में भी हजारों बड़े छोटे तालाबों में मछलियाँ उत्पन्न करने का धंधा संगठित रूप में होता है। मछलियों को अनाज, आलू, माल्ट, बूचर खाना का बचा हुआ मांस खिलाया जाता है। यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि बहुत से देशों में मछलियों को पकड़ने में अत्यधिक लापरवाही की गई। इस कारण कुछ मछलियाँ

लगभग समाप्त सी हो गई। अब बहुत से देशों में सरकारी विभाग अरबों की संख्या में अंडा से बच्चे निकालते हैं और मादा (Fry) को नदियों और भीलों में छोड़ देते हैं। इसके अतिरिक्त मछलियों के पकड़ने के ढंग में भी सुधार किये जा रहे हैं, जिससे उनकी कमी न हो जावे।

यदि वास्तव में देखा जावे तो समुद्र में मछलियों के रूप में अनन्त राशि में भोजन भरा हुआ है। मनुष्य ने इस भोजन का अभी पूरा पूरा उपयोग नहीं किया है। भविष्य में यदि वैज्ञानिक ढंग से धंधे को चलाया गया तो मछलियों से अधिकाधिक भोजन प्राप्त हो सकेगा, और मछलियाँ भी कम नहीं होंगी क्योंकि मछलियों की बढ़वार बहुत अधिक होती है।

मछलियाँ मुख्यत ठंडे समुद्र में पाई जाती हैं —

यदि हम मछलियों के वितरण को ध्यानपूर्वक देखें तो हमें एक बात स्पष्ट दृष्टिगोचर होगा। अर्थात् मछली मुख्यत ठंडे प्रदेशों की उपज है। साइबेरिया के पूर्वीय समुद्र-तट, नार्थ सी (उत्तरी सागर), उत्तरी अमरिका का पूर्वी समुद्री तट तथा पश्चिमी समुद्री तट सभी बहुत ठंडे प्रदेश हैं। केवल फारमोसा और चीन का समुद्र-तट ही ऐसा प्रदेश है जहाँ मछली मुख्य भोज्यपदार्थ है और जो ३५° उ अक्षांश के दक्षिण में है।

इसका यह कहने का तात्पर्य कदापि नहीं है कि गरम समुद्र में मछली उत्पन्न हो नहीं होती। *मछलियाँ सभी समुद्रों में पाई जाती हैं किन्तु गरम समुद्रों में* मछलियाँ अपेक्षाकृत बहुत कम होती हैं।

इसका मुख्य कारण यह है कि ठंडे समुद्र में वे बहुत ही सूक्ष्म जीव जो कि मछलियों का मुख्य भोजन होते हैं शीघ्र नष्ट नहीं होते, गरम समुद्र में वे शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। इस कारण ठंडे समुद्र में मछलियों का भोज्यपदार्थ अधिक मिलता है अतएव मछलियाँ भी वहाँ अधिक होती हैं। इसके अतिरिक्त गरम प्रदेशों में मछलियाँ शीघ्र नष्ट हो जाती हैं। यही कारण है कि शीत भंडार रात्रि के आविष्कार के पूर्व गरम प्रदेशों में मछलियों को शीघ्र नष्ट न होने देने से बचाना कठिन था। यही कारण है कि गरम प्रदेशों में समुद्र तट के समीप ही मछली का उपयोग होता है उसको अधिक दूर भेजना खर्चीला है।

ठंडे प्रदेशों के निवासी अधिक परिश्रमी और साहसी होते हैं और मछली पकड़ने का कार्य कठिन और खतरे का है। यह भी एक कारण है कि मछलियों का धंधा उत्तरी ठंडे प्रदेशों में अधिक पनपा।

फिर उत्तरी ठंडे प्रदेशों का समुद्र तट कटा फटा है। समुद्र दूर तक भूमि में घुस आया है, उनके समुद्र तट पर अच्छी मछलियाँ बहुतायत से मिलता है

बन्दरगाह अधिक होने से वहाँ के निवासियों को नाविक बनने का अधिक अवसर मिलता है। साथ ही इन प्रदेशों के समीप ही घने जंगल होने के कारण नावें बनाने की सुविधा है। यही कारण है कि इन प्रदेशों में जहाँ ठंडक बहुत होने के कारण तथा भूमि पथरीली और कठोर होने के कारण खेती अधिक लाभदायक धंधा नहीं है, समुद्र में मछली पकड़ना अधिक लाभदायक धंधा प्रमाणित होता है।

अभ्यास के प्रश्न

१—मछलियों के क्षेत्र का महत्व किन भौगोलिक परिस्थितियों पर निर्भर है? समझा कर लिखिये।

२—संसार के मुख्य मछली क्षेत्र कौन से हैं?

३—अधिकांश मछली क्षेत्र शीतोष्ण कटिबंध में क्या हैं?

४—छिछले समुद्र का मछली के धंधे की दृष्टि से क्या महत्व है?

५—संसार में आर्थिक दृष्टि से मुख्य मछलियाँ कौन सी हैं और वे कहाँ मिलती हैं?

६—जापान के मछली के धंधे का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये?

७—सील मछली का क्या महत्व है, वह कहाँ पाई जाती है, उसकी इतनी कमी क्यों हो गई और उसको बढ़ाने के लिए क्या उपाय किया जा रहा है?

८—अमरीका तथा ब्रिटिश समुद्र-तट के मछली क्षेत्र का वर्णन कीजिए।

के लिए जो कुयें खोदे जाते हैं उनमें पानी कम गहराई पर ही निकल आता है जिनके कारण सिंचाई में सुविधा होती है और व्यय कम होता है।

५—जिस प्रदेश पर वन होते हैं वहाँ की भूमि उपजाऊ बन जाती है क्योंकि उस पर पत्तियाँ, घास, पौधे इत्यादि उत्पन्न होकर फिर सड़ गल और मूल कर मिट्टी में मिलते रहते हैं अतएव वहाँ की भूमि उपजाऊ बन जाती है।

६—वन तेज हवाओं को रोक कर उनकी गति धीमी कर देते हैं जिससे वे खेती तथा आबादी को हानि नहीं पहुँचा पातीं।

अप्रत्यक्ष लाभों के साथ-साथ वनों से हमें बहुत से प्रत्यक्ष लाभ भी हैं —

वनों से होने वाले प्रत्यक्ष लाभ (Direct advantages of Forests)

१—वनों में हमें बहुत प्रकार की बहुमूल्य लकड़ी मिलती है जिसका उपयोग इमारतों, जहाजों, रेल के डिब्बे, रेलवे स्लीपर, फर्नीचर, खिलौने इत्यादि के बनाने में होता है।

२—वनों में हमें कागज, दियासलाई, तारपीन का तेल, चीरोजा, लाख, रबर, गोंद, गटापार्चा, कपूर, चमड़ा कमाने के लिए फल और छाल (Tanning material), ऐल्कोहल बनाने के लिए उपयोगी पदार्थ मिलते हैं।

३—वनों में हमें बहुत प्रकार की जड़ी-बूटी मिलती है जो औषधियों के काम आती है।

४—वनों में जंगली जानवर मिलते हैं जिनकी खाल उपयोगी होती है।

५—वनों में चारे का अटूट भंडार होता है जिससे वहाँ दूध, घी व मक्खन का धंधा खूब पनपता है और पशुपालन खूब होता है।

वन उन्हीं प्रदेशों में उग सकते हैं जहाँ गरमी के महीनों में कम से कम ५०° फै० से गरमी कम न रहती हो, और जहाँ गरमी के महीनों में कम से कम कुछ वर्षा (२ इंच से ५ इंच तक) अवश्य होती हो। जहाँ वर्षा अधिक और गरमी खूब पड़ती है वहाँ सघन वन होते हैं।

वन तीन प्रकार के हैं (१) कोणधारी (Coniferous) वन। इन वनों में उत्पन्न होने वाले वृक्षों की पत्तियाँ नुकीली और लम्बी होती हैं। (२) पतझड़ वाले वन (Deciduous forests)। इनकी पत्तियाँ पतझड़ के मौसम में झड़ जाती हैं। ये वन शीतोष्ण कटिबंध (Temperate zone) में पाये जाते हैं। (३) सदा हरे रहने वाले उष्ण कटिबंध के वन (Tropical ever green forests) ये वन सदा हरे रहते हैं और बहुत ही घने होते हैं। कोणधारी (Coniferous) वनों में उत्पन्न होने वाले वृक्षों की लकड़ी मुलायम होती है

किन्तु पतझड़ तथा सदा हरे रहने वाले उष्ण कटिबन्ध के वनों के वृक्षों की लकड़ी बहुत कड़ी होती है।

पृथ्वी में जितने क्षेत्रफल पर वन प्रदेश हैं (पृथ्वी के क्षेत्रफल का पाँचवाँ भाग वनों से ढका हुआ है) उसका आधा भाग के लगभग सदा हरे रहने वाले उष्ण कटिबन्ध के वनों से आच्छादित है। लगभग ३५% क्षेत्रफल पर कोणधारी (Coniferous) वन हैं और शेष १५ प्रतिशत पर पतझड़ वाले वन (Deciduous forests) खड़े हुए हैं।

पृथ्वी में वनों का विस्तार इस प्रकार है :—

महाद्वीप	लाख एकड़ में	समस्त भूमि की तुलना में	पृथ्वी के समस्त वन प्रदेश का प्रतिशत
एशिया	२०६६°	२२ प्रतिशत के लगभग	२८%
दक्षिणी अमरिका	२०६२°	४६ ,, ,,	२८%
उत्तरी अमरिका	१४४३°	२७ ,, ,,	१९%
अफ्रीका	७६७°	११ ,, ,,	११%
यूरप	७७४°	३१ ,, ,,	१०%
आस्ट्रेलिया	२८३°	१५ ,, ,,	४%

सोवियत रूस प्रजातन्त्र का वन प्रदेश बहुत विस्तृत है। संसार के किसी भी देश में इतने विस्तृत वन नहीं हैं। पृथ्वी के समस्त वन प्रदेश का पाँचवाँ हिस्सा केवल सोवियत रूस में ही है। सोवियत रूस के उपरान्त कनाडा, संयुक्तराज्य अमेरिका, ब्राज़ील तथा हिमालय प्रदेश के वन प्रदेश सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं।

कोणधारी वन (Coniferous)

उत्तरी गोलार्द्ध में कोणधारी वन (Coniferous) उत्तरी अमेरिका और यूरेशिया के उत्तरी भाग में फैले हुए हैं। एशिया में इस वन प्रदेश की दक्षिणी सीमा ५५° अक्षांश (Latitude) तक है। उत्तर-पश्चिम योरोप में इस वन प्रदेश की दक्षिणी सीमा ६०° अक्षांश है। उत्तरी अमेरिका के पूर्व में ये वन ४५° अक्षांश तक मिलते हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध में कोणधारी वन इतने विस्तृत नहीं हैं जितने उत्तरी गोलार्द्ध में। कोणधारी वन निम्नलिखित प्रदेशों में पाये जाते हैं। कनाडा, संयुक्तराज्य अमेरिका, मैक्सिको, योरोप, एशियाई रूस, मंचूकाऊ (मंचूरिया), उत्तरी जापान, न्यूज़ीलैंड, ब्राज़ील,

अरजैनटाइन (Argentine) और चिली (Chile)। ये वन प्रदेश उन भूभागों में हैं जहाँ ठंड के मौसम में ठंड बहुत पड़ती है और गरमियों में गरमी पड़ती है। इन प्रदेशों में वर्षा अधिक नहीं होती किन्तु वर्षा वर्ष भर लगातार होती रहती है। इन वनों में बहुमूल्य लकड़ी उत्पन्न होती है। इन वनों में पाये जाने वाले वृक्षों में पाइन (Pine), हैमलाक (Hemlock), स्प्रूस (Spruce), और सनोवर (fir), लार्च (Larch), लाल लकड़ी (Red wood) के वृक्ष मुख्य हैं। जहाँ की जलवायु अधिक अनुकूल होती है वहाँ ये वृक्ष बहुत बड़े हो जाते हैं। कहीं कहीं पाइन वृक्षों की लकड़ी उपयोगी और नरम होती है। इन्हीं वनों की लकड़ी से तारपीन का तेल (पाइन से निकाला जाता है), बारोजा, तथा अन्य पदार्थ बनाये जाते हैं। लकड़ी का लुग्दा बनाई जाती है जिससे कागज तैयार होता है। और इमारत तथा फर्नीचर के लिए लकड़ी प्राप्त होती है। नोकधारी वन औद्योगिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

संसार में भिन्न भिन्न प्रकार के वनों का विस्तार

(लाख एकड़ों में)

महाद्वीप	नोकधारी वन	शीतोष्ण कठोर लकड़ी के वन	उष्ण कटिबंधीय कठोर लकड़ी के वन
यूरोप	५७६०	१६५०	नहीं है
एशिया	८८६०	५७२०	६२५०
अफ्रीका	७०	१३०	७७२०
आस्ट्रेलिया	१५०	१५०	२५३०
उत्तर अमेरिका	१०४६०	१६०	१०८०
दक्षिणी अमेरिका	१०६०	११५	१८६६
पृथ्वी	२६४५०—३५ (%)	१२०४०—१६ (%)	३६३८ ४६ (%)

पतझड़ के वन (Deciduous forests)

पतझड़ के वन मध्य तथा दक्षिण यूरोप में बहुत फैले हुए हैं। पश्चिमी योरोप तथा मध्य रूस में भी पतझड़ के वन हैं। उत्तर चीन, जापान, अपलेशियन पहाड़ के दोनों ओर, मिसीसिपी नदी के पश्चिम में, पैटेगोनिया (Patagonia) तथा दक्षिण चिली में ये वन फैले हुए हैं। किन्तु अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया में ये नहीं मिलते। पतझड़ वाले वनों में मुख्य वृक्ष निम्नलिखित हैं —

ओक (Oak), एम (Elm), वालनट (Walnut), मैपिल (Maple), चेस्टनट (Chestnut), बीच (Beech), पापलर (Poplar) ऐश (Ash)।

इन वनों की लकड़ी इमारत तथा फर्नीचर के काम अधिक आती है। पतझड़ वाले वनों की लकड़ी नरम नहीं होती वरन कठोर होती है। ये वन उपजाऊ भूमि पर खड़े हुए हैं इस कारण पूर्व काल में इनको साफ करके भूमि पर खेती करने का क्रम लगातार जारी रहा किन्तु अब योरोपीय देशों की सरकारें इनकी सतर्कतापूर्वक रक्षा करती हैं।

उष्ण कटिबन्धीय सदा हरे रहने वाले वन (Tropical forests)

उष्ण कटिबन्ध के सदा हरे रहने वाले वन मुख्यतः दक्षिणी अमेरिका मध्य अमेरिका, अफ्रीका, दक्षिण पूर्व एशिया तथा पूर्वी द्वीप समूह (East Indies) में पाए जाते हैं। इन वनों में देवदारु (Teak), महोगनी (Mahogany) और बाँस अधिक पाया जाता है। लकड़ी की अपेक्षा ये वन लाख, गोंद, भिन्न भिन्न प्रकार की औद्योगिक दृष्टि से महत्वपूर्ण घासों, तथा रंग पैदा करने वाली वस्तुओं को अधिक उत्पन्न करते हैं। ये वस्तुयें वनों से आसानी से इकट्ठी की जा सकती हैं क्योंकि मार्गों की सुविधा न होने पर भी इन्हें इकट्ठा करने में कठिनाई नहीं होती।

यद्यपि उष्ण कटिबन्ध के वनों का विस्तार बहुत अधिक है परन्तु व्यापारिक दृष्टि से उनका महत्व बहुत कम है। व्यापारिक दृष्टि से नोकधारी (Coniferous) वन सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि कागज बनाने के लिए लकड़ी इन्हीं वनों से मिलती है। वनों से मिलने वाले पदार्थों का ८० प्रतिशत इन जङ्गलों में मिलता है। पतझड़ वाले वनों में केवल फर्नीचर के लिए लकड़ी मिलती है। ये वन सब वनों से मिलने वाली लकड़ी का लगभग १८ प्रतिशत उत्पन्न करते हैं और उष्ण कटिबन्ध के वन केवल २% प्रतिशत लकड़ी उत्पन्न करते हैं।

भिन्न भिन्न वृक्षों की लकड़ी जिनका व्यापारिक दृष्टि से अधिक महत्त्व है, निम्नलिखित हैं।

नरम लकड़ियाँ — पाइन (Pine), फर (Fir), हेमलाक (Hemlock), स्प्रूस (Spruce), साइप्रेस, लाल लकड़ी (Red wood), सीडार (Cedar), लार्च (Larch), टेमारक (Tamarack),

कठोर लकड़ियाँ (Hard wood) — ओक (Oak), मैपिल (Maple), पोपलर (Poplar), गम (Gum), चेस्टनट (Chestnut), बीच (Beech), बर्च (Birch), बासवुड (Bass wood), एम (Elm), काटनवुड (Cotton wood), ऐश (Ash), हिकारी (Hickory) वालनट

(Walnut), साइकामार (Sycamore), चैरा (Cherry), महोग्नी (Mahogany) और देवदार (Teak)।

संयुक्त राज्य अमेरिका के वन

संयुक्त राज्य अमेरिका का वन प्रदेश ५५ करोड़ एकड़ भूमि पर फैला हुआ है। इन वनों में अत्यन्त बहुमूल्य लकड़ी भरी पड़ी है। संयुक्त राज्य अमरिका में सात मुख्य लकड़ी के धंधे के क्षेत्र हैं जहाँ के वनों से लकड़ी प्राप्त होती है।

१—उत्तर-पूर्व का वन प्रान्त—इस क्षेत्र में न्यू इङ्गलैंड तथा ऐडिरानडक (Adirondack) के वन सम्मिलित हैं। यहाँ का प्रदेश ऊँचा है और ढाल बहुत पथरीला है इस कारण यह खेती के अनुपयुक्त है। इस पहाड़ी प्रदेश में मार्गों की सुविधा न होने के कारण यहाँ रेल इत्यादि नहीं हैं परन्तु जाड़े में बर्फ जम जाती है। अतएव लकड़ी के लट्ठे घोड़ा द्वारा बर्फ पर आसानी से नीचे लाये जाते हैं। जब लकड़ी के बड़े बड़े ढेर नदी पर आ जाते हैं और नदी का बर्फ पिघलता है तो लकड़ी के लट्ठे उसमें बह कर शहरों के समीप पहुँच जाते हैं। लकड़ी को शहरों के समीप तक लाने की सुविधा के कारण ही प्रान्त में लकड़ी का धंधा पनप उठा है। इस वन प्रदेश में पाइन (Pine), स्प्रूस (Spruce), और हैमलाक (Hemlock) बहुत मिलता है।

झीलों के समीपवर्ती वन प्रदेश

इसमें विसकान्सिन (Wisconsin), मिचिगन तथा मिनसोटा (Minnesota) के वन प्रदेश सम्मिलित हैं। इन वनों में सफेद पाइन, स्प्रूस, और हैमलाक मिलता है। किन्तु यहाँ के वन बहुत कुछ समाप्त हो गए हैं इस कारण उनका महत्व कम हो गया है। झीलों के जलमार्ग तथा बर्फ के जमने से लकड़ी को लाने की यहाँ भी सुविधा है।

अपलेशियन पहाड़ी प्रदेश के वन

अपलाशियन पहाड़ी प्रदेश के वन दक्षिण न्यूयार्क से ज्यार्जिया (Georgia) और अल्बामा (Albama) के उत्तरी भाग तक फैले हुए हैं। इस वनप्रदेश में हैमलाक (Hemlock) बहुत मिलता है। स्प्रूस (Spruce) तथा पीला और सफेद पाइन (Pine) भी इन वनों में अधिकता से पाया जाता है। इस वनप्रदेश में पहाड़ी का अत्यधिक ढाल तथा बर्फ की कमी के कारण स्लेज (एक प्रकार की गाड़ी जो बर्फ पर चलती है) का उपयोग नहीं हो सकता। इस कारण लकड़ी को लोहे के बड़े बड़े वैगनों में भर कर नीचे ले जाते हैं।

ये वन मध्य म स्थित हैं। इनम ओक (Oak), हिकारा (Hickory), चेस्टनट (Chestnut), ट्यूलिप (Tulip), काला वालनट (Black Walnut) तथा एश (Ash) मिलते हैं।

कठोर लकड़ी के जगल

आरकासस (Arkansas), टनेसी (Tennessee), पश्चिम वरजीनिया (West Virginia), मिचिगन और विसकन्सिन (Wisconsin), रियासतें सब से अधिक लकड़ी उत्पन्न करती हैं। इडियाना (Indiana), इवैन्सविला (Evansville) तथा मैमफिस (Memphis) लकड़ी की प्रसिद्ध मंडियाँ हैं। मैमफिस (Memphis) कठोर लकड़ी की ससार में सब स बड़ा मंडा है।

दक्षिण पाइन के वन

ये वन अटलाटिक समुद्र-तट क समानान्तर तटीय मैदान म हैं। इन वन प्रदेशों म सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण वृक्ष पीला पाइन (Yellow pine) है। यह कठोर और बहुत मजबूत होता है। इस वनप्रदेश की भूमि समतल तथा रेतीली है इस कारण वनों म लकड़ी काटकर लाने म तनिक भी कठिनाई नहीं होती। अटलाटिक महासागर क बन्दरगाहों से बहुत लकड़ी विदेशों को जाती है।

पश्चिमी मिसिसिपी तथा राकी पर्वत के वन

मिसिसिपी वन प्रदेश म भी ओक (Oak), मैपिल (Maple), हिकारी (Hickory) तथा ऐश (Ash) इत्यादि वृक्ष मिलते हैं। किन्तु राकी पर्वत पर कोणधारी (Coniferous) वन हैं। यहाँ पाइन, स्प्रूस और फर बहुत मिलता है।

प्रशान्त महासागर के ढाल के वन

ये वन ससार म सबसे अधिक लकड़ी उत्पन्न करते हैं। कैलीफोर्निया (California) क वन तो प्रसिद्ध ही हैं। लाल लकड़ी (Red-Wood), डागलास फर (Doglas fir) मुख्य वृक्ष हैं। इन वृक्षों की ऊँचाई सौ फुट से भी अधिक होती है और उनक तने की मोटाई ८ से १० फुट तक होती है। इतने भारी वृक्षों को लकड़ी क कारखानों तक पहुँचाना कठिन है। इस कारण बहुत सी लकड़ी व्यर्थ म खड़ी खड़ी नष्ट हो जाती है। साधारण गाड़ियों म यह लकड़ी नहीं लाई जा सकती है। इस कारण इंजन एजनों से लकड़ी क लट्ठों को खिंचवाया जाता है। प्रशान्त महासागर क तटीय प्रदेशों क वनों स बहुत लकड़ी पूर्व की तरफ भेजी जाती है।

कनाडा का सारा भूभाग पहले वन स आच्छादित था किन्तु बाद म दक्षिण तथा पूर्व के झील प्रदेश तथा अन्य प्रान्तों म वनों को काटकर

कनाडा के वन — उन्हें साफ कर लिया गया। इसके उत्तर में सारा देश अब भी वनों से भरा है। कनाडा के वन कोणधारी हैं। बहुत उत्तर में वन क्रमशः कम हो गये हैं। कनाडा के वनों में अत्यधिक आग लगते रहने के कारण वहाँ वृक्षों की बढ़वार अधिक नहीं होती। कनाडा में लगभग ६० करोड़ एकड़ भूमि पर वन हैं।

योरोप के वन — भूमध्य सागर (Mediterranean Sea) के उत्तर में सारा योरोप वास्तव में एक वन प्रदेश ही है। किन्तु जनसंख्या की अत्यधिक बढ़वार के कारण वन साफ कर दिये गए हैं। और अब योरोप के अधिकांश देशों में बहुत कम जङ्गल रह गए हैं। इस कारण इन देशों में वैज्ञानिक ढङ्ग से वनों को उगाने और लकड़ी को किफायत से उपयोग करने का प्रयत्न किया जाता है। योरोप में केवल कुछ ही ऐसे देश हैं जो लकड़ी अन्य देशों को भेजते हैं। वे हैं, फिनलैंड (Finland), स्वीडन (Sweden), नार्वे (Norway) और रूस। इन्हीं देशों से अन्य देशों को लकड़ी भेजी जाती है। इसका यह अर्थ नहीं है कि अन्य देशों में वन हैं ही नहीं। योरोपीय देशों के वनों का क्षेत्रफल नीचे लिखे अनुसार है।

देश	वनों का क्षेत्रफल हजार एकड़ में	वनों का देश की तुलना में क्षेत्रफल
ब्रिटेन	३ ३१५	४ ३ प्रतिशत
रूस (योरोपीय)	४४०,०००	३८७ ,,
आस्ट्रिया	१०८३ ५००	३० ५ ,,
फ्रांस	२४,४२०	१८.४ ,,
जर्मनी	३० ६५०	२३ ८ ,, (ये १९२९ के पूर्व के अङ्क हैं)
इटली	१४,०५२	१८.१
स्पेन	१९ ८८६	१३ ६
नार्वे	१७,०९७	२१ ४
स्वीडन	५५,५५०	५४ ८
फिनलैंड	४९,४१०	६० ०
स्विट्जरलैंड	२,१२०	२२ ७

नार्वे तथा स्वीडन का प्रदेश पहाड़ी है, तथा अधिकांश भाग खेती के लिए अनुपयुक्त है। उस पर वनों के अतिरिक्त और कुछ उत्पन्न हो नहीं होता। वास्तव में नार्वे, स्वीडन, तथा बाल्टिक प्रदेश के वन फिनलैंड और रूस म होते हुए सायबेरिया तक फैले हुए हैं। इन प्रदेशों में पाइन, लार्च और स्प्रूस खूब होता है। जब वसंत में फिनलैंड और स्वीडन की नदियों की बर्फ पिघलने लगती है तो ये नदियाँ अनन्त राशि में लकड़ी को बहा कर बाल्टिक समुद्र के कारखानों में ले जाता हैं, जहाँ उनसे लट्ठे, कागज की लुग्दी तथा कागज तैयार होकर बाहर भेजा जाता है। मध्य योरोप में फ्रांस, आल्प्स पर्वतीय प्रदेश, मध्य राइन, उत्तर जर्मनी, जेकोस्लवाकिया तथा पोलैंड के वन हैं जो वास्तव में एक दूसरे से मिले हुए हैं। इन देशों म बड़ी सतर्कता पूर्वक वनों की देख भाल की जाती है तथा उनकी खूब उन्नति की गई है। इनमें अधिकांश वनों को तो लगाया गया है, क्योंकि योरोप में लकड़ी की कमी है। ब्रिटेन ही एक ऐसा देश है जहाँ वन लगभग हैं ही नहीं, केवल ४ प्रतिशत भूमि पर वन खड़े हैं।

रूस के उत्तरी वन प्रान्त कोणधारी (Coniferous) वृक्षों से भरे हुए हैं, बीच में मिलावट के वृक्ष हैं और दक्षिण में केवल पतझड़ वाले वृक्ष ही पाये जाते हैं। उत्तर के कोणधारी (Coniferous) वन बाल्टिक समुद्र से सुदूर पूर्व में ओखट्स्क (Okhotsk) तक फैले हुए हैं। संसार में इन वनों के बराबर बहुमूल्य लकड़ी कहीं भी नहीं है। वास्तव में देखा जावे तो योरोप तथा एशिया के लिए यहाँ प्रकृति ने लकड़ी का अटूट भंडार भर रक्खा है। वैसे तो सारे रूस में लकड़ी का धंधा होता है परन्तु पश्चिम में जहाँ बड़े बड़े नगर हैं यह विशेष रूप से केन्द्रित है। उत्तर में डुइना नदी के समीप यह धन्धा तेजी से बढ़ रहा है। आर्केंजल (Archangel) लकड़ी के धन्धे का प्रसिद्ध केन्द्र है। सोवियत रूस के प्रजातन्त्र संघ में यद्यपि वनप्रदेश संसार में सब से अधिक हैं परन्तु उत्तर में अत्यन्त शीतप्रधान बर्फीले प्रदेश तथा दलदलों के वन व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं हैं। फिर भी रूस तथा सायबेरिया में सबसे अधिक लकड़ी है।

पूर्वी एशिया के वन

पूर्वी एशिया में जापान, कोरिया, मचूरिया, श्याम, इन्डोचीन, बर्मा, फारमोसा तथा चीन के वन सम्मिलित हैं। जापान के वनों में बाँस, कपूर (Camphor) तथा लेकर (Lacquer) के वृक्ष व्यापारिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। फारमोसा से ही अब अधिकांश कपूर बाहर भेजा जाता है। वैसे चीन के फूकीन (Fukien) प्रान्त, जापान के शिकाकू और क्यूिशू द्वीप, कोचीन, चीन, सुमात्रा, जावा, और बोर्नियो में भी कपूर के वृक्ष बहुत उत्पन्न होते हैं। जापान में लगभग ४८ प्रतिशत भूमि पर वन खड़े हैं।

वन प्रदेशों से मिलने वाली लकड़ी, कागज का लुब्दा, कागज, घासें, रबर, लाख, गोंद तथा अन्य प्रकार के पदार्थ मुख्य हैं। कनाडा, रूस,नार्वे स्वीडन, फिनलैंड और संयुक्त-राज्य अमेरिका ही संसार भर को लकड़ी भेजते हैं। कनाडा में नरम लकड़ी का अटूट भण्डार है परन्तु ब्रिटेन तथा योरप से अधिक दूरी पर होने के कारण लकड़ी को भेजने में व्यय अधिक पड़ता है। बाहर भेजा जाने वाला लकड़ियों में पाइन (Pine), फर (Fir) तथा ओक (Oak) मुख्य हैं। महोगनी (Mahogany) मध्य तथा दक्षिणी अमेरिका से विदेशों को बहुत भेजी जाती है। क्यूबा, जलयकी, हैटी तथा मैक्सिको से महोगनी बहुत अधिक बाहर भेजी जाती है। सागौन (Teak) मुख्यतः बर्मा तथा श्याम से जाता है। श्याम के सागौन (Teak) के वन बहुत कम हो गए हैं इस कारण यह लकड़ी मुख्यतः बर्मा से ही बाहर भेजी जाती है। इस लकड़ी का उपयोग जहाज बनाने में होता है, क्योंकि इसमें लोहा खराब नहीं होता। सागौन (Teak) में तेल का अंश होने के कारण दीमक भी नहीं लगती इस कारण इसका उपयोग बढ़िया चीजें बनाने में बहुत होता है। संयुक्त राज्य अमरिका तथा कनाडा को छोड़ कर बाल्टिक देशों से ही लकड़ी बाहर भेजा जाता है। ब्रिटेन सब से अधिक लकड़ी बाहर से मँगाता है।

रबर (Rubber) रबर एक वृक्ष का रस है जो सूखने पर रबर के रूप में परिणत हो जाता है। औद्योगिक युग में रबर की माँग इतनी अधिक बढ़ गई है कि वैज्ञानिक रीतियों से नकली रबर (Synthetic Rubber) बनाने का प्रयत्न किया जारहा है। जब से मोटर का अधिक प्रचार हुआ है तब से तो रबर की माँग बढ़ती ही जा रही है। आरम्भ में रबर का उपयोग कम होता था क्योंकि सूखने पर वह बहुत कठोर और शीघ्र टूटने वाला बन जाती थी। किन्तु जब से गंधक मिलाकर उसको लचीली बनाने की क्रिया का आविष्कार हुआ है तब से इसका उपयोग तथा माँग बहुत बढ़ गई है।

आरम्भ में अमेजन (Amazon) नदी की विस्तृत तराई ही संसार को रबर देती थी। वहाँ के सघन वनों में रबर का वृक्ष जंगली अवस्था में पाया जाता है। रबर जमा करने वाले नदी के द्वारा सघन वन में प्रवेश करते हैं और वृक्षों से रबर जमा करके उसे आग पर सुखाते हैं। जब रबर सूख जाता है तो वह बन्दरगाहों को ले आई जाती है। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक दक्षिण अमरिका, पश्चिमी अफ्रीका, तथा एशिया के उष्ण वनों (Tropical forests) से ही रबर मिलती थी। दक्षिण अमेरिका के अमेजन नदी के वनों से संसार की सम्पूर्ण उत्पत्ति की लगभग ५० प्रतिशत रबर उत्पन्न होती थी। शेष पश्चिमी अफ्रीका तथा एशिया के वनों से मिलती थी। किन्तु अब प्राकृतिक रबर के वनों से बहुत कम रबर प्राप्त होती है। उसका स्थान रबर के लगाये हुए वनों (Rubber Plantations) ने

ले लिया है। आरम्भ में रबर जमा करने में इतनी अधिक लापरवाही की गई कि बहुत से वृक्षों ने रबर देना बन्द कर दिया और रबर के वन लगाने पड़े। अब अधिकांश रबर लगाये हुए वनों (Rubber plantations) से आती है।

संसार की लगभग ६० प्रतिशत रबर एशिया के पूर्वीय देशों तथा द्वीप समूह से प्राप्त होती है।

रबर का वृक्ष उष्ण कटिबन्ध (Tropics) में उत्पन्न होता है। जहाँ कहीं ८०" से १२०" तक वर्षा होती हो और ७५° फ़ै० से लेकर ६०° फ़ै० तक तापक्रम (Temperature) रहता हो वहाँ रबर का वृक्ष उत्पन्न किया जा सकता है। *जो भूमि प्रतिवर्ष जल से ढक जाती है, वह रबर के वृक्ष के लिए अत्यन्त उपयुक्त होती है। इस समय संसार में जो रबर उत्पन्न होती है उसकी लगभग ६५ प्रतिशत* लगाये हुए वनों से प्राप्त होती है।

ब्रिटिश मलाया संसार में सब से अधिक रबर उत्पन्न करता है। संसार की सम्पूर्ण उत्पत्ति की लगभग ६० प्रतिशत रबर ब्रिटिश मलाया से आता है। रबर उत्पन्न करने वाले प्रदेशों में दूसरा स्थान पूर्वीय द्वीप समूह (East Indies) का है। कुल उत्पत्ति का ३५ प्रतिशत के लगभग पूर्वीय द्वीप समूह उत्पन्न करते हैं। इसके अतिरिक्त सीलोन, बोरनियो (Borneo) तथा दक्षिण भारत में भी रबर अधिकता से उत्पन्न होती है। संसार की दो तिहाई रबर ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत ही उत्पन्न होती है।

संयुक्त राज्य अमेरिका (U. S. A.) सब से अधिक रबर विदेशों से मँगाता है। लगभग आधी रबर संयुक्तराज्य अमेरिका को जाती है। उसका कारण यह है *कि संयुक्तराज्य अमेरिका में मोटरकार तैयार करने का धंधा बहुत उन्नति कर गया* है। जितनी रबर संयुक्त राज्य अमेरिका में आती है उसकी दो तिहाई केवल ट्यूब और टायर बनाने के काम में आती है। संयुक्त राज्य अमेरिका के अतिरिक्त ब्रिटेन, जर्मनी, जापान और फ्रांस रबर मँगाने वालों में मुख्य हैं। पिछले दिनों से ब्रिटेन और रूस में रबर की खपत तेजी से बढ़ रही है।

यद्यपि रबर उष्ण कटिबन्ध की पैदावार है परन्तु रबर का सामान संयुक्तराज्य अमेरिका तथा योरोप के औद्योगिक केन्द्रों में ही तैयार होता है। कच्ची रबर कुछ तो सीधी संयुक्त राज्य अमेरिका को ही भेज दी जाती है परन्तु अधिकांश रबर ब्रिटेन तथा अन्य योरोपीय मंडियों को जाती है जहाँ से वह भिन्न भिन्न स्थानों को भेजी जाती है। अभी तक रबर वृक्ष से निकाल कर उसी स्थान पर सुखाई जाती थी और सूख जाने पर फिर बाहर भेजी जाती थी, किन्तु अब यह प्रयत्न हो रहा है कि जहाजों की टंकियों में भर कर कच्ची रबर को संयुक्त राज्य अमेरिका तथा योरोप

के औद्योगिक केन्द्रों में ले जाया जाय। इस प्रकार रबर का सामान बनाने में व्यय कम होगा।

यह एक पेड का रस है जो रबर की भाँति निकाला जाता है। गंधक तथा कार्बन (Carbon) मिलाने से यह कठोर बन जाता है।

गटापार्चा (Guttaparcha) बिजली के तार के ऊपर जो खोल रहता है उसके बनाने में इसका उपयोग होता है। बिजली के अधिक प्रचार के साथ साथ इस कार्य में गटापार्चा का उपयोग बढ़ गया है। गटापार्चा के खिलौने बहुत सुन्दर बनते हैं। अब तो गटापार्चा की सैकड़ों चीजें बनाई जाने लगी हैं। आज ऐसी कोई बिसातखाने की दूकान नहीं मिल सकती जिसमें गटापार्चा का सामान न हो। गटापार्चा अधिकतर मलाया प्रायद्वीप (Malaya Peninsula), पूर्वीय द्वीप समूह (East Indies) तथा अन्य उष्ण कटिबन्ध के प्रदेशों में उत्पन्न होता है और वहीं से विदेशों को जाता है। रबर की तरह इस गटापार्चा के वन भी लगाये गए हैं। आरम्भ में भूल से इस वृक्ष को नष्ट कर डाला गया किन्तु अब तो इसको सावधानी से लगाया गया है।

लाख और गोंद (*Gums and* Resin) पाइन के वृक्ष से तारपीन का तेल (Turpentine oil) तथा बीरोजा (Resin) निकाला जाता है। पाइन वृक्षों को काट कर उनसे गाढ़ा गाढ़ा गोंद (Resin) इकट्ठा किया जाता है। *इसमें से तारपीन का तेल निकाल लिया जाता है और बीरोजा* बच रहता है। इस तेल का उपयोग पेंट, वार्निश, तथा साबुन बनाने में किया जाता है। तारपीन का तेल (Turpentine oil) संयुक्त राज्य अमेरिका, फिनलैंड, रूस, फ्रांस और भारत में बनाया जाता है।

रूस और स्वीडन में इन्हीं वृक्षों की लकड़ी से वुडटार (Wood tar) बनाया जाता है।

कपूर के वृक्ष से कपूर तैयार किया जाता है। आरम्भ में कपूर के वृक्ष को काट कर उसकी लकड़ी के छोटे छोटे टुकड़े करके उसको पानी के साथ गरम करके कपूर निकाला जाता था। किन्तु अब ज्ञात हुआ है कि पत्तियों तथा डालों में तने से भी अधिक कपूर होता है। इस कारण अब वृक्षों को काटने की आवश्यकता नहीं पड़ती। सब से अधिक कपूर फारमोसा (Formosa) से बाहर भेजा जाता है। चीन का फूकीन (Fukien) प्रान्त, जापान के शिकाकू (Shikaku) तथा क्यूशू (Kiushu) द्वीप, कोचीन चीन, सुमात्रा, जावा और बोरनियो (Borneo) से भी कपूर बाहर भेजा जाता है।

उष्ण कटिबन्ध के वनों में बहुत तरह का गोंद (Gum) मिलता है। एक प्रकार का गोंद तो वह होता है जो पानी में घुल जाता है। यह चिपकाने के काम में आता है। यह गोंद भारत, अफ्रीका, सोमालीलैंड, और आस्ट्रेलिया से बाहर भेजा जाता है। दूसरे प्रकार का गोंद जिसे कोपाल कहते हैं, पानी में नहीं घुलता अतएव उसका उपयोग वार्निश में होता है। न्यूजीलैंड, दक्षिण अमरीका, तथा मलाया प्रायद्वीप से दूसरे प्रकार का गोंद कोपाल (Copal) बाहर बहुत राशि में भेजा जाता है। भारत के कुछ वन प्रदेशों में लाख का कीड़ा वृक्षों पर लाख जमा करता है। भारत संसार भर को लाख भेजता है। मलाया प्रायद्वीप में बेंत भी बहुत अधिक उत्पन्न होता है।

वनों से चमड़ा कमाने के लिए छाल तथा फल भी मिलते हैं। हैमलाक (Hemlock) तथा ओक (Oak) की छाल इस काम में बहुत आती है। स्प्रूस (Spruce) और लार्च (Larch) का भी उपयोग चमड़ा कमाने में होता है। गैम्बियर (Gambier) जो एक झाड़ी की पत्तियों से निकाला जाता है चमड़ा कमाने के काम में बहुत आता है। यह झाड़ी मलाया, जावा और सुमात्रा में होती है। भारत के वनों में बहेड़ा (Myrobalans) नामक वृक्ष का फल भी चमड़ा कमाने के उपयोग में बहुत आता है। सिसालियन झाड़ (Sicilian Shrub) तथा उसकी तरह के अन्य पौधों की टहनियों से भी एक पदार्थ सुमच (Sumach) बनाया जाता है जिसका उपयोग चमड़ा कमाने में होता है।

कार्क (Cork) कार्क एक प्रकार के ओक (Oak) वृक्ष की बाहरी मोटी छाल को कहते हैं। कार्क का वृक्ष पुर्तगाल, स्पेन, दक्षिण फ्रांस, तथा अफ्रीका के उत्तरी पहाड़ी प्रदेश, मराको (Morocco), ट्यूनिस (Tunis) और अलजीरिया में पाया जाता है। इन्हीं देशों से कार्क बाहर भेजा जाता है। संयुक्तराज्य अमेरिका में भी इस वृक्ष को लगाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

लकड़ी की लुब्दी और कागज (Wood Pulp) नरम लकड़ी की माँग कागज की माँग के साथ साथ बहुत बढ़ गई है। नरम नरम लकड़ी की लुब्दी से कागज बनाया जाता है। स्प्रूस (Spruce), फर (Fir) तथा पाइन (Pine) की लुब्दी पानी में गला कर बनाई जाती है। ऐस्पन (Aspen), तथा पोपलर (Poplar), इत्यादि कठोर लकड़ियों की लुब्दी रासायनिक ढंग से तैयार की जाती है। रासायनिक ढंग से लुब्दी तैयार करने में कुछ रासायनिक पदार्थों के घोल में लकड़ी को गलाया जाता है। रासायनिक ढंग से बनी लुब्दी का कागज अच्छा होता है। लकड़ी से बनी

हुई लुग्दी का कागज समाचार पत्रों के काम ही में अधिकतर आता है। जैसे जैसे शिक्षा का प्रसार अधिकाधिक होता जाता है वैसे ही वैसे कागज की माँग बढ़ती जा रही है।

लकड़ी से कागज बनाने के लिए इस बात की आवश्यकता है कि वन प्रदेश और जल पास ही पास हों। क्योंकि लुग्दी बनाने के लिए बहुत अधिक स्वच्छ जल की आवश्यकता होती है। लुग्दी बनाकर उसे यन्त्रों से दबाने पर कागज तैयार हो जाता है।

सब से अधिक लकड़ी की लुग्दी संयुक्तराज्य अमेरिका में तैयार होती है उससे कुछ ही कम कनाडा में तैयार होती है। संयुक्तराज्य और कनाडा में लुग्दी बनाने योग्य लकड़ी के वन नदियों से सम्बन्धित हैं। ये नदियाँ लकड़ी को बहा कर लाती हैं और उन्हीं के जल से कारखानों में लुग्दी तैयार होती और कागज बनता है। इन दो देशों को छोड़ कर क्रमशः स्वीडन, जर्मनी, फिनलैंड, तथा रूस लकड़ी की लुग्दी बनाने वाले देशों में मुख्य हैं।

कनाडा, स्वीडन, नार्वे, फिनलैंड, और रूस लकड़ी की लुग्दी बाहर भेजते हैं। कनाडा और स्वीडन सबसे अधिक लुग्दी बाहर भेजते हैं। लुग्दी बाहर से मँगाने वाले देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन और जापान मुख्य हैं। इन देशों में लुग्दी से केवल कागज ही तैयार नहीं किया जाता वरन नकली रेशम भी बनाया जाता है।

लकड़ी की लुग्दी के अतिरिक्त स्पार्टो (Sparta) घास, सबाई (Sabai), भाबर (Bhabar), बैब (Baib) तथा बाँस की भी लुग्दी बनाई जाती है। स्पार्टो घास स्पेन तथा उत्तरी अफ्रीका में बहुत होती है। सबाई, भाबर तथा बैब का भारत में कागज बनाने में बहुत उपयोग होता है। बाँस की लुग्दी से भी बढ़िया कागज तैयार हो सकता है। कागज की बढ़ती हुई माँग के कारण लकड़ी की लुग्दी की माँग बहुत बढ़ गई है इस कारण लुग्दी बनाने योग्य लकड़ी शीघ्रता पूर्वक समाप्त होता जा रहा है। लुग्दी तैयार करने योग्य वृक्षों को लगभग ६० वर्ष पूरे बढ़ने में लगते हैं इस कारण नये वृक्ष धीरे धीरे ही तैयार होते हैं। जितनी लकड़ी प्रतिवर्ष कागज बनाने के लिए काट ली जाती है उतनी उत्पन्न नहीं होती। इस कारण क्रमशः लुग्दी बनाने योग्य लकड़ी कम होती जा रही है। भविष्य में जब लकड़ी की कमी पड़ जावेगी तब भारत तथा बर्मा इत्यादि के मानसून वन प्रदेश की घासें तथा अनन्त राशि में खड़े हुए बाँस से अधिकाधिक कागज तैयार किया जा सकेगा।

वन सम्बन्धी धधों (Forestry) के लिये दो बातों की आवश्यकता है। मजदूरों की और मार्गों की। यदि वन प्रदेश में ही जलप्रपात हो तो और भी अच्छा है क्योंकि पानी की शक्ति से वृक्षों को चीरने की सुविधा हो जाती है जिससे वहाँ चीरने के कारखाने (Sawmills) स्थापित किए जा सकते हैं। लकड़ी एक भारी चीज है इस कारण यदि वनों के पास ही लकड़ी की खपत के केन्द्र भी हों तो यह धंधा उस स्थान पर शीघ्र ही पनप उठता है। अन्यथा बाहर तो बहुत कामती लकड़ी ही भेजी जाती है।

वन सम्बन्धी धन्धों (Forestry) की दृष्टि से शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate zones) के वन अधिक महत्वपूर्ण हैं। एक तो इन वनों में नरम तथा कम कठोर लकड़ी मिलती है जो व्यापारिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है दूसरे इन वनों में झाड़ी तथा छोटे-छोटे पौधे और बेलें नहीं होतीं इस कारण लकड़ी के बड़े बड़े लट्ठों को वनों से लाने में कठिनाई नहीं होती। नरम लकड़ी के वन अधिकतर शीतप्रधान देशों में हैं अस्तु जाड़े में जब बर्फ गिरकर जम जाता है तो लकड़ी के वनों से ले जाने के लिए सुगम मार्ग बन जाता है। घोड़ों के द्वारा वनों में इकट्ठी की हुई लकड़ी जमी हुई नदियों तक ले जाई जाती है। जब नदियाँ पिघलती हैं तब यह लकड़ी नीचे जाती है और लकड़ी चीरने के कारखानों में इसको चीरा जाता है। बर्फ तथा पानी के द्वारा इन वनों से लकड़ी बहुत कम खर्च से कारखानों तक पहुँच जाती है। अधिकांश नरम लकड़ी के वन प्रदेशों में जाड़ा में इतनी अधिक ठण्ड होती है कि खेती नहीं हो सकती। इस कारण उन दिनों में खेती में लगे हुए लोग वनों में लकड़ी काटने का काम करते हैं। इस कारण मजदूरी भी कम देनी पड़ती है। इन सुविधाओं के अतिरिक्त शीतोष्णकटिबन्ध के वनों में कुछ पेड़ बहुत विस्तृत क्षेत्र में पाये जाते हैं। उदाहरण के लिए यदि कहीं पाइन (Pine) मिलता है तो मीलों तक पाइन के ही पेड़ दिखाई देते हैं। बहुत बड़े क्षेत्रफल में एक जाति के ही वृक्ष होने से उनके काटने में सुविधा होती है।

यदि वन-प्रदेशों में जल प्रपात (Waterfalls) होते हैं तो लकड़ी चीरने के लिए जल-शक्ति का उपयोग आसानी से हो सकता है। विशेषकर कागज तैयार करने के लिए लुग्दी बनाने में तो जल-राशि का बहुत उपयोग होता है। बात यह है कि लकड़ी बहुत मूल्यवान चीज तो है नहीं जो उस पर बहुत खर्च किया जा सके। अतएव उसको वनों से लाने में तथा चीरने और उसकी लुग्दी बनाने में जल शक्ति का उपयोग आवश्यक हो जाता है क्योंकि जल शक्ति बहुत सस्ती होती है। कनाडा और नार्वे में जल-शक्ति की अधिकता से ही वहाँ लकड़ी का धन्धा इतना अधिक पनप उठा है। एक बात और भी है जिससे सस्ती शक्ति का महत्व बढ़ जाता

है। लकड़ी चीरने के कारखानों (Saw mills) में बहुत सा लकड़ा व्यर्थ में नष्ट हो जाता है। यदि वहाँ शक्ति सस्ते दामों पर मिल सके तो उस लकड़ी को लुग्दी तथा अन्य पदार्थों में परिणत करके बाहर भेजा जा सकता है। अन्यथा उस लकड़ी का कुछ उपयोग नहीं हो सकता।

लकड़ी भारी चीज है इस कारण वह अधिक भाड़ा सहन नहीं कर सकती। अस्तु लकड़ी के उत्पन्न होने के स्थान के समीपवर्ती प्रदेश में ही यदि उसकी माँग हो तो धन्धा बहुत उन्नति कर सकता है। शीतोष्ण कटिबन्ध में वन प्रदेशों के समीप ही औद्योगिक केन्द्र हैं तथा उनके समीप ही उपजाऊ और घने आबाद प्रदेश हैं। अतएव लकड़ी की खपत वहीं हो जाती है। ऊपर लिखे हुए सुविधाओं के कारण शीतोष्ण कटिबन्ध में वन प्रदेशों की लकड़ी का खूब उपयोग होता है और वनों से सम्बन्धित धन्धे उन्नति कर गए हैं।

उष्ण कटिबन्ध के वनों में ऊपर लिखी हुई सुविधायें नहीं मिलतीं। छोटी-छोटी घनी झाड़ियाँ, पौधे तथा बेल वन को इस तरह ढँके रहती हैं कि वनों में चलना और लकड़ी को लाना कठिन हो जाता है। अत्यधिक वर्षा होने के कारण बहुधा दलदल हो जाता है जिसको पार करना कठिन होता है। अधिकांश वनों का जलवायु खराब होता है जिससे वनों में काम करने के लिए अधिक संख्या में मजदूर तैयार नहीं होते। इन वनों में भिन्न भिन्न तरह के वृक्ष एक साथ उगे हुए होते हैं इस कारण उनको काटने और अलग अलग रखने में बड़ी ही कठिनाई होती है। उदाहरण के लिए यदि महोगनी (Mahogany) को काटना हो तो भिन्न स्थानों पर वह खड़ा मिलता है। उसको सघन वन में ढूँढने में बहुत समय और परिश्रम नष्ट होता है। यही नहीं, उष्ण कटिबन्ध (Tropics) के वनों को न शक्ति की सुविधा है और न समीपवर्ती प्रदेश औद्योगिक तथा कृषि की दृष्टि से उन्नत दशा में ही हैं।

इन वनों में असुविधायें अधिक होते हुए भी कुछ सुविधायें हैं। एक तो बड़ी बड़ी नदियाँ होने के कारण लकड़ी को बहाकर लाने में सुविधा होती है, दूसरे ये प्रदेश पिछड़े हैं। इस कारण यहाँ मजदूरी सस्ती है। इसके अतिरिक्त इन प्रदेशों में महोगनी, टीक (Teak) और एबोनी (Ebony) जैसी सुन्दर, मजबूत और मूल्यवान लकड़ी [illegible] जिसकी संसार में बहुत अधिक माँग है।

केन्द्रों में मुख्यतः

३—पतझड़ के वन (Deciduous Forests) तथा कोणधारी वन (Coniferous Forests) के मुख्य वृक्ष कौन से हैं ? उनका आर्थिक महत्व क्या है ? और वे कहाँ पाये जाते हैं ?

४—संयुक्तराज्य अमेरिका के वनों का विस्तारपूर्वक विवरण कीजिए और उनके आर्थिक महत्व को समझाइए।

५—उष्ण कटिबन्ध के सदा हरे रहने वाले वन (Tropical Ever Green Forests) कहाँ मिलते हैं और उनका आर्थिक महत्व क्या है ?

छठा परिच्छेद

मुख्य धन्धे—पशु-पक्षियों पर अवलंबित धन्धे

संसार में पालतू पशु-पक्षियों की संख्या अधिक नहीं है। मनुष्य समाज को पशु से मांस, दूध तथा अन्य कच्चे पदार्थ (Raw materials) मिलते हैं। जब मनुष्य समाज उन्नत अवस्था में नहीं था तभी पशु-पालन आरम्भ हो गया था। अपने दिन के अनुभव से मनुष्य ने जान लिया कि पशु बहुत उपयोगी है। इसी कारण सीधे और उपयोगी पशु पालतू बनाये गए। असंख्य वर्षों से पाले जाने के कारण पशु मनुष्य के आज्ञाकारी बन गए। जब रेलों का आविष्कार नहीं हुआ था तब पशुओं की पीठ पर बैठ कर अथवा उनके द्वारा खींची गई गाड़ियों में ही बैठकर मनुष्य एक स्थान से दूसरे स्थान को जाता था। आज भी पहाड़ी प्रदेशों, रेगिस्तानों, तथा कृषिप्रधान देशों में पशुओं का बहुत महत्व है।

पशु मनुष्य के लिए इतने अधिक मूल्यवान हैं कि उनसे मनुष्य का भोजन, वस्त्र, तथा औद्योगिक कच्चा माल मिलता है, वे खेती, यातायात में काम आते हैं, फिर भी यह आश्चर्य की बात है कि मनुष्य ने बहुत थोड़े पशुओं को पालतू बनाया। पृथ्वी पर ३५०० प्रकार के पशुओं में से केवल १७ पशु, १३,००० प्रकार की चिड़ियों में से केवल ५ चिड़ियाँ, और ४,७०,००० कीड़ों में से केवल दो प्रकार के कीड़े पालतू बनाये गए। यदि हम देखें तो पशुओं का नीचे लिखे अनुसार उपयोग होता है। [१] भोजन [२] यातायात [३] वस्त्र, [४] औद्योगिक कच्चा माल [५] खाद [६] रक्षा [७] शिकार [८] सफाई [६] मनोरंजन तथा सौंदर्यदर्शन के लिए। वास्तव में पहले चार उपयोगों का ही विशेष महत्व है। अस्तु सबसे अधिक महत्वपूर्ण पशु वे हैं जो ऊपर लिखे चारों काम में आते हैं। मनुष्य ने पशुओं को पालने के लिए छाँटते समय नीचे लिखी बातों का विशेष रूप से ध्यान रक्खा। उसने उन्हीं पशुओं को छाँटा जो घास पर रह सकते हैं, जिनको पालना खतरनाक न हो, जो झुंड में रहना पसन्द करते हों। नहीं तो उनका पालना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं होता, और जिनमें सन्तानोत्पत्ति जल्दी जल्दी हो और वे शीघ्र ही बढ़ने वाले हों। अधिकांश पशु ऐसे हैं जिनका उपयोग कई बातों में होता है। जैसे बहुत से पशु दूध और मांस उत्पन्न करते हैं कुछ पशु औद्योगिक कच्चा माल उत्पन्न करते हैं और दूध और मांस भी उत्पन्न करते हैं।

पृथ्वी पर पालतू पशुओं की संख्या

भेड़	७० करोड
गाय बैल	६५ करोड़
सुअर	३५ करोड़
बकरा	११ करोड़
घोड़े	६ करोड़ ६० लाख
भैंस	७ करोड़ ३० लाख
गदहे	३ करोड़ ३० लाख
खच्चर	१ करोड़ ६० लाख
ऊँट	६० लाख
रेंडियर	२० लाख
लामा और अल्पका	२० लाख
मुर्गियाँ	१ अरब ६० करोड़
बत्तखें	११ करोड़
हंस (Geese)	७ करोड़ ५० लाख
टर्की	२ करोड़ ३० लाख

पशुओं की उपयोगिता के आधार

ससार मे असख्य पशु-पक्षी हैं परन्तु मनुष्य ने केवल थोड़े से पशु पक्षिया को पालने के लिए चुना। इसका क्या कारण है? हमे इसकी जाँच करनी चाहिए। मनुष्य के लिए पशु-पक्षियों के नीचे लिखे उपयोग हैं [१] भोजन [२] यातायात [३] वस्त्र [४] औद्योगिक कच्चा माल [५] खाद [६] सुरक्षा [७] शिकार [८] गन्दगी साफ करना [६] सजावट, सगीत तथा कलात्मक प्रवृत्ति को तृप्त करने के लिए। इनमें पहले चार उपयोग ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। अस्तु सबमे अधिक उपयोगी और महत्वपूर्ण पशु वे हैं जिनका उपयोग भोजन, यातायात, वस्त्र, तथा औद्योगिक कच्चा माल उत्पन्न करने के लिए होता है। परन्तु इनमे भी उन्हीं पशुओं को मनुष्य पाल सकता था जिनमें नीचे लिखी विशेषतायें हों।

[१] पशु घास पर जीवित रह सके क्योंकि घास सर्वत्र मिलती है। [२] पशु बहुत अधिक खतरनाक न हो उसकी देख भाल आसानी से की जा सके। शेरनी का दूध अच्छा भी हो तो उसको पाला नहीं जा सकता। [३] तीसरा गुण पशु में यह होना चाहिए कि वह झुंड मे रहना पसन्द करे जिससे उसको पालने में कम व्यय

संसार के प्रमुख देशों में गाय-बैलों की संख्या

संसार में पशुगणना के अनुसार कुल ६६ करोड़ ढोर थे जिनमें २१२ करोड़ केवल भारत और पाकिस्तान में थे। दूसरे शब्दों में इन देशों में संसार के लगभग एक तिहाई गाय बैल थे। अब हम नीचे कुछ मुख्य देशों में गाय-बैलों की संख्या देते हैं —

(००० छोड़ दिये गए हैं)

भारत तथा पाकिस्तान	२१५,०००
संयुक्त राज्य अमेरिका	६०,६६७
सोवियत रूस	६५,०००
ब्राजील	४७,४६२
अरजैनटाइना	३२,३१३
चीन	२३,०००
जर्मनी	१६,१३६
फ्रांस	१५,६४३
आस्ट्रेलिया	१२,७८३
दक्षिण अफ्रीका	१०,७५१
मैक्सिको	१०,०८३

संयुक्त राज्य अमेरिका में मास का धन्धा

संयुक्तराज्य अमेरिका में गाय बैल व मास का धंधा बहुत उन्नत अवस्था में है। इस धन्धे का मुख्य केन्द्र शिकागो (Chicago) है। इसके उपरान्त निम्नलिखित केन्द्र महत्वपूर्ण हैं —सेंट-पाल, ओहामा, सेंट लुइस, कैन्सास सिटी, सेंटजोसेफ, इन्डियानापोलिस, फोर्ट वर्थ, (Fort Worth), मिलवाकी (Milawakee) डेनवर (Denver) तथा औक्लोहामा सिटी। संयुक्त राज्य में मांस की बहुत अधिक खपत है इस कारण वहाँ से विदेशों को अधिक मांस नहीं भेजा जाता। जो कुछ भी मांस यहाँ से बाहर जाता है वह अधिकतर हवाई द्वीप, प्यूटोरिको (Puerto Rico) तथा अलास्का को जाता है।

दक्षिण अमेरिका का मास का धन्धा

अरजैनटाइना और यूरुगे (Uruguay) म मास का धन्धा मुख्य धन्धा है। यहाँ आरम्भ में पशुपालन इस कारण बढ़ गया कि यहाँ विस्तृत मैदानों पर अत्यन्त पौष्टिक घास उत्पन्न होती थी। इन घास के मैदानों को पाम्पास (Pampas) के घास के मैदान कहते हैं। यहाँ जाड़ा साधारण होता है। यहाँ वर्ष भर पशुओं को चराया जा सकता है। इस कारण भी यह धन्धा यहाँ केन्द्रित हो गया।

इन घासों के अतिरिक्त अल्फाफा (Alfalfa) घास यहाँ खेतों पर बहुत अधिक उत्पन्न की जाती है जिसके कारण यहाँ अच्छे चारे की बहुतायत है। अरजैन्टाइना तथा यूरुग्वे की जनसख्या बहुत कम होने के कारण यहाँ से मास योरोप को बहुत अधिक भेजा जाता है।

आस्ट्रेलिया में गो मांस का धधा

आस्ट्रेलिया में यह धधा क्वीन्सलैंड तथा उत्तर पश्चिमाय आस्ट्रेलिया के अर्धशुष्क प्रदेशों म केन्द्रित है। आस्ट्रेलिया मे जन सख्या बहुत कम है इस कारण अधिकाश मास विदेशों, विशेष कर योरोप को भेजा जाता है। म स जमा कर भेजा जाता है क्योंकि एक तो दूरी बहुत है दूसरे गरम प्रदेश में से होकर जाता है। न्यूजीलैंड से भी बहुत सा गो मास योरोप भेजा जाता है।

योरोप

यद्यपि योरोप मे गाय बैल बहुत हैं किन्तु वहाँ ब्रिटेन तथा आयरलैंड के कुछ भागो को छोड़कर इन पशुओं को मास के लिये नहीं पाला जाता। उनका उपयोग खेती के लिये अथवा दूध के धन्धे के लिए होता है। यद्यपि प्रत्येक योरोपीय देश मे कुछ सीमा तक यह धन्धा होता है परन्तु जनसख्या बहुत अधिक होने के कारण यहाँ बाहर से बहुत सा मास मँगवाना पड़ता है।

गाय और बैल से अपेक्षाकृत मांस उत्पन्न करने की दृष्टि मे सूअर मुख्य हैं।

सूअर (Pig)

सूअरों को अधिकतर खेतों पर ही किसान पालते हैं। सबमे अधिक सूअर सयुक्त राज्य अमेरिका म पाले जाते हैं। जो देश मक्खन और दूध अधिक उत्पन्न करते हैं वहाँ सूअर अधिकता से पाला जाता है, क्योंकि मक्खन निकाला हुआ दूध सूअरों को खिलाने क काम आता है। सयुक्त-राज्य अमेरिका म मक्का सूअरो को बहुत खिलाई जाती है। इसी कारण वहाँ मक्का की खेती इतना अधिक बढ़ गई। ससार के लगभग आधे सूअर सयुक्त राज्य अमेरिका मे पाले जाते हैं। उसको छोड़कर क्रमश जर्मनी, रूस, फ्रास, डैनमार्क सूअर पालने वालों म मुख्य है। चीन और ब्राजील मे भी सूअर बहुत पाले जाते हैं।

यदि देखा जाये तो सुअर में कुछ ऐसे गुण हैं कि आर्थिक दृष्टि से उसको पालना बहुत लाभदायक है। सुअर इतनी जल्दी जल्दी सन्तानोत्पत्ति करता है और एक बार में सुअरिया इतने अधिक बच्चे उत्पन्न करती है कि सुअर जितना भोजन खाता है उसकी तुलना में बहुत अधिक मास उत्पन्न करता है। सुअर का दूसरा गुण यह है कि वह सड़ी हुई वनस्पति, मल, खराब अनाज इत्यादि बहुत प्रकार के भोजन पर रह सकता है। जो भोजन अन्य पशु नहीं खाते उस पर सुअर भली भाँति रह

सकता है। सुअर का तीसरा गुण यह है कि वह सभी प्रकार के जलवायु तथा भौगोलिक परिस्थिति में रह सकता है।

इतनी विशेषतायें होते हुए भी सुअर गाय, बैल, घोड़े, मुर्गी और भेड़ की तुलना में कम पाला जाता है। इसके मुख्य कारण नीचे लिखे हैं —

यद्यपि सुअर प्रत्येक वस्तु पर रह सकता है किन्तु उसका पालना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक वहीं हो सकता है जहाँ नीचे लिखा सुअर का भोजन बहुतायत से और सस्ता मिलता हो। मक्का—जैसे संयुक्तराज्य अमेरिका तथा ब्राजील में, आलू—बेलजियम तथा निदरलैंड और जर्मनी में, जौ और मक्खन निकला दूध डेनमार्क में। जहाँ ये वस्तुएं सस्ती नहीं मिलतीं सुअर नहीं पाला जा सकता।

सुअर के अधिक न पाले जाने का दूसरा कारण उसका गंदा और बदसूरत होना है। उसमें एक तरह की बदबू आती है इस कारण बहुधा लोग उसे नहीं पालते।

मुसलमान तथा यहूदी धार्मिक दृष्टि से सूअर को त्याज्य समझते हैं। वे न उसको पालते हैं और न उसका मांस खाते हैं। यही कारण है कि एशिया तथा अफ्रीका में जहाँ मुसलमान आबादी अधिक है सुअर नहीं पाला जाता।

सूअर का मांस बाहर भेजने वाले देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका प्रमुख है। लगभग सैकड़ा का आधा सूअर का मांस संयुक्त राज्य अमेरिका से आता है। इसके अतिरिक्त डेनमार्क, आयरलैंड, हालैंड, बेलजियम और कनाडा सूअर का मांस भेजते हैं। सब से अधिक सूअर का मांस ब्रिटेन मँगाता है। जर्मनी और फ्रांस भी सूअर का मांस मँगाते हैं। सूअर का मांस तैयार करने वाले कारखाने में सूअर के शरीर का अणु अणु काम में ले आया जाता है कोई वस्तु भी नष्ट नहीं होती।

संसार के प्रमुख सूअर पैदा करने वाले देश

(००० छोड़ दिये गए हैं)

देश	संख्या	देश	संख्या
चीन	६०४,८०	सोवियत रूस	१२,०६८
संयुक्त राज्य अमेरिका	३०,००७	फ्रांस	६,४८८
जर्मनी	२३,८९०	पोलैंड	५,७५३
ब्राजील	२१,६१५	डेनमार्क	४,४००

संसार में सूअर का पालन केवल योरोप तथा अमेरिका में होता है क्योंकि मुसलमान, हिन्दू और यहूदी सूअर का मांस नहीं खाते।

यह धंधा संयुक्त राज्य अमेरिका में बहुत उन्नत दशा में है और वहाँ अधिकतर

मक्का उत्पन्न करने वाले प्रदेशों में सूअर पाला जाता है। आयोवा (Iowa), इलीनियास (Illinois), इंडियाना, ओहियो, कान्सास, और नैब्रास्का रियासतों में अधिकांश सूअर पाले जाते हैं और यहाँ पर सूअर का मांस बनाने के कारखाने हैं।

सुअर में कुछ ऐसे गुण हैं कि यह सर्वत्र पाला जा सकता है। पहला गुण तो यह है कि सुअरिया के इतने जल्दी जल्दी बच्चे होते हैं और इतने अधिक होते हैं कि सूअर को जितना खिलाया जाता है उसकी तुलना में मांस बहुत उत्पन्न होता है। दूसरा गुण सूअर का यह है कि यह मैला तक खा लेता है और सभी प्रकार का भोजन वह कर लेता है। अतएव उसको पालना अधिक खर्चीला नहीं है। सूअर भिन्न भिन्न प्रकार की जलवायु में पनप सकता है।

इतने गुण होते हुए भी गाय-बैल या भेड़ की तुलना में सूअर कम पाला जाता है। कारण यह है कि यह गन्दा होता है। उसके शरीर से दुर्गंधि आती है। इस कारण लोग उसको पसन्द नहीं करते और मुसलमान उसको नहीं पालते। दूसरा कारण यह है कि यद्यपि सूअर प्रत्येक वस्तु को खाता है परन्तु उसको पालना अधिक लाभदायक वहीं है जहाँ मक्का, आलू, जौ अथवा मक्खन निकला दूध बहुत अधिक और सस्ता हो।

भेड़ (Sheep)

भेड़ का मांस (Mutton), गाय और बैल का मांस (Beef) तथा सूअर के मांस (Pork) से कम महत्वपूर्ण है। भेड़ के सम्बन्ध में एक बात विशेष उल्लेखनीय है कि जो जाति अच्छा मटन उत्पन्न करती है वह ऊन उत्पन्न नहीं करती और जिसका ऊन अच्छा होता है उसका मांस अच्छा नहीं होता। अब कुछ ऐसी नस्लें उत्पन्न की गई हैं जो मांस और ऊन दोनों ही उत्पन्न करती हैं। मटन उत्पन्न करने वाले देशों में न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, अरजैनटाइना तथा उरग्वे (Uruguay) मुख्य हैं। न्यूजीलैंड में मटन बनाने का धन्धा पिछले दिनों में विशेष उन्नति कर गया है।

भेड़ उन प्रदेशों में नहीं पाली जाती जहाँ जनसंख्या घनी है। यहाँ घोड़ा, गाय तथा बैल अधिक पाला जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि भेड़ घोड़े तथा गाय बैलों की अपेक्षा अधिक सूखे तथा कम उपजाऊ तथा बीहड़ प्रदेश में जीवन निर्वाह कर सकती है। भेड़ इतनी छोटी घास पर रह सकती है जिसको अन्य पशु कुतर भी नहीं सकते। भेड़ पहाड़ों के ढालों पर बड़ी सरलता से चढ़ सकती है। बकरी को छोड़ कर अन्य कोई ऐसा पशु नहीं है जो पहाड़ों के ढालों पर इतनी सुविधा से चर सके। भेड़ के लिए चारा ही यथेष्ट होता है उसे दाने के रूप में *अनाज नहीं खिलाना* पड़ता जैसा कि अन्य पशुओं को खिलाना पड़ता है। इसके अतिरिक्त ऊन पशुओं द्वारा उत्पन्न की जाने वाली वस्तुओं (मांस, दूध, मक्खन इत्यादि) की तुलना में

बहुत सरलता से एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजा जा सकता है। भेड़ों के पालने में एक बड़ी सुविधा यह कि अपेक्षाकृत बहुत थोड़े आदमी बहुत अधिक संख्या में भेड़ों की देख भाल कर सकते हैं। ऊन को काट कर आसानी से रस्द या भेजा जा सकता है। यही कारण है कि भेड़ को पालना अधिक सुविधाजनक लाभदायक है।

ऊन (wool)

संसार के पालतू पशुओं में भेड़ों की संख्या सबसे अधिक है। संसार में भेड़ों की संख्या की दृष्टि से क्रमशः निम्नलिखित देश महत्वपूर्ण हैं:—आस्ट्रेलिया, रूस, संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिण अफ्रीका, अरजैनटाइना तथा न्यूजीलैंड। आस्ट्रेलिया में लगभग ग्यारह करोड़ भेड़ें हैं।

भेड़ें अधिकतर शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate zone) के शुष्क प्रदेशों में पाली जाती हैं। भेड़ में एक विशेषता यह है कि वह शुष्क प्रदेशों तथा पहाड़ी स्थानों में जहाँ कि थोड़ी सी भी घास उत्पन्न होती हो रह सकती है। भेड़ के लिए नम और अधिक गरम जलवायु उपयुक्त नहीं है। भेड़ ऊँचे प्रदेश में रहने वाला पशु है। इस कारण इसके पालने से खेत के योग्य भूमि नष्ट नहीं होती। जनसंख्या के अधिक बढ़ने पर नये देशों में इतने अधिक गाय और बैल न पाले जा सकेंगे जितने कि आज पाले जाते हैं, किन्तु भेड़ों की संख्या में कोई अन्तर नहीं आ सकता। भेड़ एक ऐसा पशु है जो कठिन परिस्थिति में भी रह सकता है। यही कारण है कि बहुत से द्वीप तथा प्रदेश जहाँ खेती बारी तथा दूसरे धन्धों के लिए परिस्थिति अनुकूल नहीं है भेड़ पालकर ऊन बाहर भेजते हैं। कुछ प्रदेश तो ऐसे हैं कि जहाँ भेड़ों को पालने के अतिरिक्त और कोई धन्धा ही नहीं होता। फाकलैंड (Falkland) तथा आइसलैंड (Iceland) के निवासियों का भेड़ चराना ही एकमात्र धन्धा है। आरम्भ में लिखे हुए देशों के अतिरिक्त ब्रिटेन में भी भेड़ों को चराने का धन्धा बहुत पुराने समय से होता आ रहा है।

गाय, बैल और घोड़े के बाद भेड़ ही मनुष्य के लिए सब से उपयोगी पशु है। परन्तु जहाँ गाय-बैल और घोड़ा उन प्रदेशों में बहुत पाया जाता है जहाँ आबादी घनी है और खेती गहरी होती है वहाँ भेड़ अधिकतर उन प्रदेशों में पाई जाती है जो कि सूखे और पथरीले हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि भेड़ उस छोटी घास के तिनके पर भी निर्भर रह सकती है जिसे बैल या घोड़ा कुतर ही नहीं सकता। यही नहीं भेड़ें पहाड़ों के ढालों पर भी आसानी से चर सकती हैं जबकि पहाड़ों के ढालों पर बकरी को छोड़ कर और पालतू पशु उतनी आसानी से नहीं चर सकते। भेड़ के साथ एक विशेषता यह भी है कि भेड़ को केवल मात्र घास पर ही रखकर

मोटा किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त ऊन ऐसा पशुओं द्वारा उत्पन्न पदार्थ है कि जिसको आसानी से तैयार किया जा सकता है और बिना किसी कठिनाई के एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाया जा सकता है। भेड़ पालने में एक बड़ी सुविधा यह है कि भेड़ों की देख भाल के लिए बहुत थोड़े से व्यक्ति चाहिए। भेड़ों का ऊन काट कर ऊन को कहीं भी भेजा जा सकता है। जहाँ भेड़ों की देखभाल के लिए अपेक्षाकृत कम आदमी चाहिए वहाँ भेड़ पालने के लिए विस्तृत मैदान चाहिये नहीं तो थोड़ी सी भेड़ों पर गड़रियों को रखना लाभदायक नहीं होता। यही कारण है कि भेड़ पालने का धन्धा उन्हीं प्रदेशों में होता है जहाँ भूमि पथरीली है शुष्कता है और जनसंख्या बहुत कम है।

ऊन भेड़ की ही उपज है। ऊन तीन प्रकार का होता है। मरिनो ऊन जो (Merino) जाति की भेड़ से उत्पन्न होता है, क्रासब्रेड (Crossbred) तथा कारपेट (Carpet) ऊन। मैरिनो जाति की भेड़ सबसे उत्तम ऊन उत्पन्न करती है भिन्न भिन्न नस्लों के संसर्ग से ऐसी भेड़ें उत्पन्न की गई हैं जो इतना अधिक ऊन उत्पन्न करती हैं कि ऊन के बोझ से वे चल फिर भी नहीं सकती। किसी किसी जाति की मैरिनो भेड़ पर एक फुट से भी लम्बा ऊन उत्पन्न होता है। ऊन का अच्छा अथवा बुरा होना उन स्थानों पर निर्भर है जहाँ भेड़ें पाली जाती हैं। यदि भेड़ के लिये यथेष्ट पानी न हुआ अथवा बीमारी हुई तो ऊन घटिया होगा। लम्बा ऊन कीमती होता है और बढ़िया कपड़े बनाने के काम में आता है और छोटे रेशे वाला ऊन कम्बल, गलीचे तथा अन्य मोटी वस्तुओं के बनाने के काम में आता है।

संसार में सबसे अधिक मैरिनो ऊन (४० %) उत्पन्न होता है। यही नहीं मैरिनो ऊन की उत्पत्ति दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है। क्रासब्रेड (Cross bred) तथा कारपेट (Carpet) ऊन क्रमशः ३५% उत्पन्न होता है।

आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में मैरिनो ऊन बहुत उत्पन्न होता है। यूरुग्वे (Uruguay) तथा अरजैनटाइना (Argentina) में भी कुछ मैरिनो ऊन उत्पन्न होता है। क्रासब्रेड (Crossbred) ऊन को उत्पन्न करने वाले देशों में क्रमशः अरजैनटाइना, न्यूजीलैंड, संयुक्त राज्य अमेरिका आस्ट्रेलिया, यूरुग्वे (Uruguay) तथा ब्रिटेन मुख्य हैं।

संसार में सबसे अधिक ऊन आस्ट्रेलिया में उत्पन्न होता है। भेड़ पालने का धंधा न्यू साऊथ वेल्स में बहुत होता है। पश्चिमी भाग में भी ऊन के लिये भेड़ें बहुत पाली जाती हैं। आस्ट्रेलिया के विशाल मरुभूमि प्रदेश में भेड़ें चराने की

सुविधा नहीं है क्योंकि वहाँ पानी नहीं है। साथ ही वहाँ गरमी बहुत पड़ती है इस कारण वहाँ भेड़ें नहीं पाला जाता है। आस्ट्रेलिया के भेड़ चराने वालों को कुछ भागों में भेड़ों की बीमारियों का सामना करना पड़ता है। इन बीमारियों के कारण कहीं-कहीं भेड़ को पालने में कठिनाई उत्पन्न हो गई है। यही नहीं, आस्ट्रेलिया में एक प्रकार की काँटेदार वनस्पति (Prickly Pear) होती है जो भेड़ के ऊन में चिपट जाती है और ऊन को खराब कर देती है। आस्ट्रेलिया के पूर्वी तट पर पहाड़ का एक ऊँची और लम्बी दीवार खड़ी है। यह दीवार पानी का हवाओं को रोक लेता है। अतएव पहाड़ तथा समुद्र के बीच पतली पट्टी में खेती के लिए यथेष्ट पानी बरसता है। किन्तु पहाड़ के पश्चिम की ओर पानी बहुत कम होता है। अस्तु वहाँ केवल घास ही उत्पन्न हो सकती है। ये घास के मैदान प्रसिद्ध भेड़ चराने के मैदान हैं। किन्तु जहाँ वर्षा बहुत कम होता है वहाँ भेड़ें पाली जा सकती हैं। अस्तु भेड़ों का पालना वर्षा के ऊपर निर्भर है। जहाँ बहुत अधिक वर्षा होती है उन प्रदेशों में भी भेड़ नहीं पाली जा सकती। भेड़ को सूखा प्रदेश चाहिये किन्तु ऐसा सूखा भी न हो कि घास ही उत्पन्न न हो सके।

संसार में ऊन उत्पन्न करने वाले देशों में क्रमशः निम्नलिखित मुख्य हैं—आस्ट्रेलिया, संयुक्त राज्य अमेरिका, अरजैनटाइना, न्यूजीलैंड, दक्षिण अफ्रीका, रूस, यूराग्वे और ब्रिटेन।

ऊन को विदेशों में भेजने वाले देशों में आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, न्यूजीलैंड, अरजैनटाइना तथा यूराग्वे मुख्य हैं। अधिकांश ऊन योरोपीय देशों को जाता है जहाँ कारखानों में उसका कपड़ा तैयार होता है। ऊन मँगाने वालों में ब्रिटेन, फ्रांस, संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी और जापान मुख्य हैं।

भेड़ के ऊन के अतिरिक्त मोहेर तथा काश्मीरी बकरी का बाल भी ऊनी कपड़े के बनाने में काम आता है। मोहेर का बाल बहुत चिकना और मुलायम होता है अतएव यह बढ़िया कपड़ा बनाने के काम में आता है। ऊँट के बाल से भी कपड़ा बनता है। अलपका और लामा में ऊँट के से बालों से बहुत बढ़िया कपड़े तैयार किये जाते हैं। मोहेर दक्षिण अफ्रीका में बहुत पाला जाता है।

एशिया के सभी देशों में अर्थात् एशियामायनर, फारस, अफगानिस्तान, भारत के पहाड़ी प्रदेश, तिब्बत, मंगोलिया तथा चीन के भीतरी भाग में भेड़ें बहुत संख्या में पाली जाती है। किन्तु एशियामायनर के अतिरिक्त अन्य देशों में ऊन बढ़िया नहीं है।

मेड़ उत्पन्न करने वाले मुख्य देशों के आँकड़े

(००० छोड़ दिए गए हैं)

आस्ट्रेलिया.. ...... ११४, ०००	न्यूजीलैंड २७, ७५६
संयुक्त राज्य अमेरिका ४६, ७६६	चीन...... .... .. २६, ००८
सोवियत रूस... .. .४५, ७००	ब्रिटेन...... .... २५, ८११
अरजैनटाइन...... .. ४४, ४४०	दुनिया की कुल भेड़ों का
दक्षिण अफ्रीका......४८, ७००	अनुमान...... .... ७४२, ८८८
भारत ४३, ५८१	

ऊन उत्पन्न करने वाले देश व आँकड़े टनों म

(००० छोड़ दिए गए हैं)

आस्ट्रेलिया...	५१५
संयुक्त राज्य अमेरिका... ..	२१०
अरजैनटाइना........ ...	१८०
न्यूजीलैंड......	१४५
दक्षिण अफ्रीका	१२५
सोवियत रूस...... . .	१६०
भारत............	४५

वैसे तो दूध देने वाले पशु बहुत से हैं परन्तु गाय, भैंस, बकरा, तथा भेड़ मुख्य हैं। भैंस का दूध भारत में हा अधिक होता है। संसार में दूध का धंधा मुख्यत गाय है' दूध देने वाला पशु है अतएव जहाँ गाय पालने Dairy farming) की सुविधा है वहीं दूध का धंधा उन्नति कर गया है। दूध अधिकतर तरल पदार्थ के रूप में ही पिया जाता है। अधिकांश दूध का उपयोग पीने में अथवा चाय के साथ होता है। इसके अतिरिक्त मक्खन और पनीर के रूप में भी दूध का बहुत उपयोग होता है। भारत में दूध से घी, तथा अन्य पदार्थ बनाये जाते हैं।

संसार में क्रमशः दूध और दूध से तैयार होने वाले पदार्थों का खपत बढ़ती जा रही है। जैसे-जैसे भूमि की कमी होगी वैसे ही वैसे मांस का खपत कम और दूध का उपयोग बढ़ता जावेगा क्योंकि दूध का धन्धा खेती का एक सहायक धंधा है। गहरी खेती (Intensive cultivation) का यह एक आवश्यक अंग है। गहरी खेती का अर्थ यह है कि थोड़ी सी भूमि से अधिक सम्पत्ति उत्पन्न की जावे। अस्तु, घनी आबादी वाले देशों में किसान खेती के साथ साथ दूध का भी धंधा करता है। खेत में उत्पन्न किये हुए चारे तथा अनाज को खिलाकर वह बहुत अधिक मूल्य

ब्रिटेन तथा अन्य योरोपीय देशों में बहुत बिकता है। आज न्यूजीलैंड ने मक्खन बनाने में इतनी अधिक उन्नति कर ली है कि डैनमार्क के बाद मक्खन बनाने वाले देशों में उसका सबसे ऊँचा स्थान है। केवल मक्खन ही नहीं न्यूजीलैंड में पनीर भी बहुत तैयार होता है। प्रतिवर्ष न्यूजीलैंड से अधिकाधिक मक्खन और पनीर बाहर भेजा जाता है। इसके अतिरिक्त जमा हुआ दूध (Condensed Milk) भी न्यूजीलैंड से बाहर जाता है।

दूध का धन्धा अब बहुत उन्नत दशा में है। गायों की नस्ल को सुधार कर उनसे अधिक से अधिक दूध उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जा रहा है। गायों के पालन तथा उन्हें खिलाने के तरीकों में बहुत सुधार किये गए हैं तथा मक्खन और पनीर बनाने के आधुनिक वैज्ञानिक ढंग ढूँढ़ निकाल लिए गये हैं। विज्ञान के प्रभाव से दूध, मक्खन, और पनीर को सुरक्षित रखने तथा उसे दूर तक भेजने की सुविधा हो गई है। इसका परिणाम यह हुआ है कि दूध, मक्खन और पनीर का धन्धा दिन प्रति दिन उन्नति कर रहा है।

संसार के प्रमुख देशों में दूध की उत्पत्ति और उपयोग

देश	दूध की उत्पत्ति (लाख गैलनों में)	प्रति मनुष्य पीछे दैनिक दूध की उत्पत्ति औंस में	प्रति मनुष्य पीछे दूध की खपत औंस में
न्यूजीलैंड	८१००	२४४	५६
डैनमार्क	१२०००	१४८	४०
फिनलैंड	६२००	७४	६३
स्वीडन	६८००	६६	६१
आस्ट्रिया	१०४६०	६६	५५
कनाडा	१५८००	६६	३५
स्विट्जरलैंड	६०७०	६५	४६
नीदरलैंड	६७००	५४	३५
नार्वे	२६००	४५	४३
संयुक्त राज्य	१०३८००	३७	३५
जकोस्लोवाकिया	१२०००	३६	३६
बेल्जियम	६५१०	३५	२५
आस्ट्रेलिया	५४५०	३५	३०
जर्मनी	५०६६०	३४	३५
फ्रांस	३१५००	३३	३०

पोलैंड	१६०००"	२७	२२
ब्रिटेन	१४७५०	१४	३६
इटली	१०५००	११	१०
रूमानिया	३८२०	६	६
भारत तथा पाकिस्तान	६४०००	८	७

(८० करोड़ मन)

मुर्गी पालने का धन्धा (Poultry-Farming)

मुर्गी पालने का धन्धा यद्यपि साधारण व्यक्ति की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण नहीं है किन्तु आर्थिक दृष्टि से उसका बहुत महत्व है। संयुक्त राज्य अमेरिका में उत्पन्न होने वाले अंडों का मूल्य वहाँ उत्पन्न होने वाले लोहे से कहीं अधिक है। किन्तु इस धन्धे ने लोगों का ध्यान आकर्षित नहीं किया क्योंकि इसमें अधिक पूँजी नहीं लगती और यह सभी देशों में थोड़ा-बहुत होता है विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका, योरोप, तथा पूर्वी एशिया में तो यह धन्धा महत्वपूर्ण है।

मुर्गी पालने का धन्धा उन्हीं देशों में अधिक होता है जहाँ आबादी घनी है और गहरी खेती (Intensive cultivation) होती है। मुर्गी खेत तथा घर के कूड़े पर निर्वाह कर लेती है। किसान के परवाले मुर्गियों की आसानी से देख-भाल कर लेते हैं। केवल जाड़े में उनको ठंड से बचने की आवश्यकता होती है। अन्यथा खेत के कूड़े और बचत पर ही ये पल सकती हैं। जहाँ गहरी खेती होती है वहाँ किसान खेती के साथ साथ दूध और मुर्गी पालने का धन्धा भी करता है। इस प्रकार थोड़ी सी भूमि से अधिक से अधिक धन उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जाता है।

मुर्गी में कुछ विशेषतायें हैं जिनके कारण वह बहुत अधिक पाली जाती है। पहली विशेषता मुर्गी की यह है कि वह बहुत प्रकार के जलवायु में रह सकती है। मुर्गी की दूसरी विशेषता यह है कि वह सभी प्रकार का भोजन कर लेती है। सुअर की भाँति वह गन्दगी तक खा सकती है। मुर्गी की तीसरी विशेषता यह है कि वह अंडे जैसा उपयोगी खाद्य पदार्थ उत्पन्न करती है। अंडा शीघ्र टूट सकता है अतएव उसको दूर भेजने में कठिनाई होती है। यही कारण है कि प्रत्येक स्थान पर मुर्गी को पालकर अंडे को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा में असंख्य मुर्गियाँ पाली जाती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में मक्का उत्पन्न करने वाले प्रदेशों में बहुत मुर्गियाँ पाली जाती हैं। चीन में भी मुर्गियाँ बहुत पाली जाती हैं। प्रत्येक चीनी किसान मुर्गी पाल कर अंडे उत्पन्न करता है। चीन से अंडे बहुत बड़ी राशि में बाहर भेजे जाते हैं। शंघाई

ब्रिटेन तथा अन्य योरोपीय देशों में बहुत बिकता है। आज न्यूजीलैंड ने मक्खन बनाने में इतनी अधिक उन्नति कर ली है कि डैनमार्क के बाद मक्खन बनाने वाले देशों में उसका सबसे ऊँचा स्थान है। केवल मक्खन ही नहीं न्यूजीलैंड में पनीर भी बहुत तैयार होता है। प्रतिवर्ष न्यूजीलैंड से अधिकाधिक मक्खन और पनीर बाहर भेजा जाता है। इसके अतिरिक्त जमा हुआ दूध (Condensed Milk) भी न्यूजीलैंड से बाहर जाता है।

दूध का धन्धा अब बहुत उन्नत दशा में है। गायों की नस्ल को सुधार कर उनसे अधिक से अधिक दूध उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जा रहा है। गायों के पालने तथा उन्हें खिलाने के तरीकों में बहुत सुधार किये गए हैं तथा मक्खन और पनीर बनाने के आधुनिक वैज्ञानिक ढंग ढूँढ निकाले गये हैं। विज्ञान के प्रभाव से दूध, मक्खन, और पनीर को सुरक्षित रखने तथा उसे दूर तक भेजने की सुविधा हो गई है। इसका परिणाम यह हुआ है कि दूध, मक्खन और पनीर का धन्धा दिन प्रति दिन उन्नति कर रहा है।

संसार के प्रमुख देशों में दूध की उत्पत्ति और उपयोग

देश	दूध की उत्पत्ति (लाख गैलनों में)	प्रति मनुष्य पीछे दैनिक दूध की उत्पत्ति औंस में	प्रति मनुष्य पीछे दूध की खपत औंस में
न्यूज़ीलैंड	८३००	२४४	५६
डैनमार्क	१२०००	१४८	४०
फिनलैंड	६२००	७४	६२
स्वीडन	९८००	६९	९१
आस्ट्रेलिया	१०४९०	६९	५५
कनाडा	१५८००	६६	५५
स्विटज़रलैंड	६०३०	६५	४८
नीदरलैंड	६७००	५४	३५
नार्वे	२९००	४५	४३
संयुक्त राज्य	१०३८००	३७	३५
जैकोस्लोवाकिया	१२०००	३६	३६
बेल्जियम	६५१०	३५	३५
आस्ट्रेलिया	५४५०	३५	१०
जर्मनी	५०९६०	३४	१५
फ्रांस	३१५००	३३	३०

पोलैंड	१६०००	२७	२२
ब्रिटेन	१४७४०	१४	३६
इटली	१०५००	११	१०
रूमानिय	३८२०	६	६
भारत तथा पाकिस्तान	६४०००	८	७

(८० करोड़ मन)

मुर्गी पालने का धन्धा (Poultry-Farming)

मुर्गी पालने का धन्धा यद्यपि साधारण व्यक्ति की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण नहीं है किन्तु आर्थिक दृष्टि से उसका बहुत महत्त्व है। संयुक्त राज्य अमेरिका में उत्पन्न होने वाले अडों का मूल्य वहाँ उत्पन्न होने वाले लोहे से कहीं अधिक है। किन्तु इस धन्धे ने लोगों का ध्यान आकर्षित नहीं किया क्योंकि इसमें अधिक पूँजी नहीं लगती और यह सभी देशों में थोड़ा-बहुत होता है विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका, योरोप, तथा पूर्व एशिया में तो यह धन्धा महत्त्वपूर्ण है।

मुर्गी पालने का धन्धा उन्हीं देशों में अधिक होता है जहाँ आबादी घनी है और गहरी खेती (Intensive cultivation) होती है। मुर्गी खेत तथा घर के कूड़े पर निर्वाह कर लेती है। किसान के घरवाले मुर्गियों की आसानी से देख-भाल कर लेते हैं। केवल जाड़े में उनको ठंड से बचाने की आवश्यकता होती है। अन्यथा खेत के कूड़े और बचत पर ही ये पल सकती हैं। जहाँ गहरी खेती होती है वहाँ किसान खेती के साथ साथ दूध और मुर्गी पालने का धन्धा भी करता है। इस प्रकार थोड़ी सी भूमि से अधिक से अधिक धन उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जाता है।

मुर्गी में कुछ विशेषतायें हैं जिनके कारण वह बहुत अधिक पाली जाती है। पहली विशेषता मुर्गी की यह है कि वह बहुत प्रकार के जलवायु में रह सकती है। मुर्गी की दूसरी विशेषता यह है कि वह सभी प्रकार का भोजन कर लेती है। सुअर की भाँति वह गन्दगी तक खा सकती है। मुर्गी की तीसरी विशेषता यह है कि वह अंडे जैसा उपयोगी खाद्य पदार्थ उत्पन्न करती है। अंडा शीघ्र टूट सकता है अतएव उसको दूर भेजने में कठिनाई होती है। यही कारण है कि प्रत्येक स्थान पर मुर्गी को पालकर अंडे को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा में असंख्य मुर्गियाँ पाली जाती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में मक्का उत्पन्न करने वाले प्रदेशों में बहुत मुर्गियाँ पाली जाती हैं। चीन में भी मुर्गियाँ बहुत पाली जाती हैं। प्रत्येक चीनी किसान मुर्गी पाल कर अंडे उत्पन्न करता है। चीन से अंडे बहुत बड़ी राशि में बाहर भेजे जाते हैं। शायद

प्रायद्वीप तथा अन्य स्थानों पर बहुत से कारखाने हैं जहाँ करोड़ों अंडों तथा उनके सफेद पदार्थ को सुखा कर विदेशों को भेजा जाता है।

सम्भवत चीन को छोड़ कर सबसे अधिक अडे योरोप में उत्पन्न होते हैं। डैनमार्क, हालैंड, आयरलैंड, पोलैंड तथा बैलजियम में मुर्गी पालने का धन्धा बहुत उन्नत दशा में है और बहुत अधिक राशि में अडे इन देशों में उत्पन्न किये जाते हैं। डैनमार्क में मक्खन की ही तरह बहुत अच्छे अडे उत्पन्न किये जाते हैं क्योंकि सरकार ने मुर्गी पालने के धन्धे को भी खूब ही प्रोत्साहन दिया है।

ब्रिटेन और जर्मनी बहुत अधिक राशि में अडे बाहर से मँगाते हैं। चीन, डैनमार्क, सयुक्तराज्य अमेरिका, हालैंड, पोलैंड, रूमानियाँ और यूक्रेन से अडे इन देशों को भेजे जाते हैं।

अडे की माँग बढ़ने के कारण व्यापारिक ढग से बड़ी मात्रा में अडे उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जा रहा है। बड़े बड़े फार्मों (खेतों) पर हजारों की सख्या में मुर्गियाँ पाली जाती हैं और बहुत प्रकार का बना हुआ भोजन उन्हें खिलाया जाता है। ऐसे यन्त्र भी तैयार कर लिये गए हैं जिनसे अंडे को गरमी पहुँचा कर बच्चे निकाल लिये जाते हैं। पिछले दिनों से बड़ी मात्रा में अंडे उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जा रहा है क्योंकि शीत भण्डार-रीति (Refrigeration) के द्वारा अब अडे दूर दूर भेजे जा सकते हैं। किन्तु फिर भी अडे का धन्धा मुख्यत छोटी मात्रा में ही अधिकतर होता है और उसमें सफलता भी अधिक मिलती है।

शुतुर्मुर्ग (Ostrich) पालने का धन्धा अधिकतर दक्षिण अफ्रीका तथा सूडान में होता है। शुतुर्मुर्ग को उसके मुलायम और सुन्दर परों के लिए पाला जाता है, क्योंकि उनका उपयोग सुन्दर तथा फैशनेबिल वस्त्रों को तैयार करने में किया जाता है। अफ्रीका के अतिरिक्त आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, अरजैनटाइन, तथा फ्लौरिडा में भी यह पक्षी पाला जाता है।

शहद की मक्खी पालना

वैसे तो शहद ससार के प्रत्येक देश में थोड़ा बहुत उत्पन्न होता है। जहाँ वर्षा खूब होती है और वनस्पति खूब लहलहाती है वहाँ शहद अधिक उत्पन्न होता है, क्योंकि शहद की मक्खी फूलों तथा कलियों से ही शहद इकट्ठा करती है। उष्ण कटिबन्ध (Tropics) के जगलों में शहद खूब उत्पन्न होता है क्योंकि वहाँ के अधिकाश वृक्षों में शहद होता है। किसान शहद की मक्खी को पाल लेते हैं और उनसे अधिकाधिक शहद उत्पन्न करते हैं। शहद की मक्खी पालने का धन्धा सयुक्तराज्य अमेरिका तथा उत्तरी योरोप में बहुत फैला हुआ है। यह किसान

का सहायक धन्धा (Subsidiary Occupation) है और वह अपने अवकाश का समय इस धन्धे में लगा कर अपनी आय को बढ़ा लेता है।

शहद की मक्खी तथा मुर्गी पालने के धन्धे में परिस्थिति इतनी सहायक नहीं होती है जितनी कि मनुष्य की कुशलता तथा उसका परिश्रम। यही कारण है जहाँ के किसान अधिक परिश्रमी तथा कुशल हैं वहाँ ये धन्धे बहुत उन्नति कर गए हैं।

बोझा ढोने वाले पशु

पशु केवल भोजन (मांस-दूध इत्यादि) तथा चमड़ा ही नहीं देते हैं उनका उपयोग खेती में तथा बोझा ढोने में बहुत अधिक होता है।

घोड़ा

घोड़ा बहुत उपयोगी जानवर है। मनुष्य-समाज के लिए यदि गाय और बैल को छोड़ कर कोई महत्वपूर्ण पशु है तो वह घोड़ा ही है। पश्चिमी प्रदेशों में बैल खेती बारी के काम के लिए इतना उपयोगी नहीं है जितना घोड़ा। किन्तु पूर्वीय देशों में भी घोड़े का महत्व कुछ कम नहीं है। आज भी पूर्वीय देशों में घोड़े का उपयोग सवारी में बहुत होता है। जहाँ रेलपथ नहीं है वहाँ घोड़ा ही सवारी का मुख्य साधन है। फौजों में आज भी घोड़ों का महत्व है। घोड़े के लिए शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate zone) की जलवायु बहुत अनुकूल है। घोड़ा मरुभूमि, उष्ण कटिबन्ध के वनों, तथा उत्तर के अत्यन्त शीत प्रदेशों में नहीं होता है। उष्ण कटिबन्ध (Tropics) के सूखे प्रदेशों में घोड़ा बहुत पाया जाता है किन्तु जहाँ वर्षा बहुत होती है वहाँ नहीं होता। संयुक्तराज्य अमेरिका, कनाडा, योरोप के सब देशों, एशियाटिक रूस, तथा पश्चिमी एशिया में घोड़े बहुत पाले जाते हैं।

अरबी घोड़ा संसार में अपनी तेजी के लिए प्रसिद्ध है। यह सवारी के काम आता है, बोझा ढोने के काम में इसका उपयोग नहीं होता। योरोप तथा विशेषकर ब्रिटेन की भिन्न भिन्न घोड़ों की जातियाँ अरबी घोड़ों के संसर्ग से ही उत्पन्न हुई हैं। जर्मनी, फ्रांस, बैलजियम तथा मध्य योरोप में घोड़े पालने का धन्धा बहुत उन्नति कर गया है। आस्ट्रेलिया में वेलर जाति के घोड़े प्रसिद्ध हैं किन्तु ये सवारी के काम के नहीं होते। संयुक्तराज्य अमेरिका में भी अच्छी जाति के घोड़े बहुत पाले जाते हैं। भारत में काठियावाड़ के घोड़े प्रसिद्ध हैं।

खच्चर और गदहा (Mule &

खच्चर, गदहे और घोड़े के संसर्ग से उत्पन्न हुआ पशु है। घोड़ा बहुत तेज जानवर है परन्तु वह कठोर जीवन का अभ्यस्त नहीं होता और न अधिक बोझा ही खींच सकता है। गदहे में तेजी नहीं होती किन्तु ऊपर लिखे हुए सब गुण होते हैं। यही कारण है कि

Donkey) गच्चर में शरीर की सुन्दरता और तेजी तो घोड़े की होती है, और बोझा ढोने की शक्ति तथा अधिक परिश्रम करने का अभ्यास गदहे के दिए हुए गुण हैं। गदहे में एक विशेषता यह है कि वह बुरा से बुरा चारा पाकर भी खूब परिश्रम कर सकता है। बोझा ढोने की तो उसमें अकथनीय शक्ति होती है। यदि घोड़े को एक दिन भी अच्छा चारा तथा दाना न मिले तो वह काम नहीं देता परन्तु गदहा भोजन न मिलने पर भी मेहनत कर सकता है। यद्यपि गदहा सब प्रकार से घोड़े से श्रेष्ठ पशु है परन्तु मनुष्य ने उसका कभी आदर नहीं किया।

चीन, टर्की तथा भारत में संसार के दो तिहाई गदहे मिलते हैं। इनके अतिरिक्त स्पेन, इटली, ईजिप्ट तथा मरक्को (Morocco) में संसार के लगभग एक चौथाई गदहे हैं। खच्चर दक्षिण फ्रांस और स्पेन में बहुत हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिण के ऐन्डीज पर्वतीय प्रदेश तथा चीन और मंचूरिया में खच्चर बहुत पाये जाते हैं। पहाड़ी प्रदेशों में बोझा ढोने के लिए तथा फौज का सामान ढोने के लिए खच्चरों का बहुत उपयोग होता है।

ऊँट ऊँट गरम देश में रहने वाला जानवर है। रेगिस्तानों तथा पर्वतीय प्रदेशों में जहाँ सघन वन न हों वहाँ उसका उपयोग सवारी तथा बोझ ढोने के लिए होता है। गरम प्रदेशों तथा मरुभूमि में तो यह मनुष्य के जीवन का आधार ही है। मध्य अफ्रीका के सहारा रेगिस्तान से लेकर अरब, फारस, तुर्किस्तान, तथा मध्य एशिया होता हुआ जो गरम और सूखा प्रदेश मंगोलिया तक जाता है उसमें मुख्यतः ऊँट का ही उपयोग होता है। अफ्रीका तथा एशिया के रेगिस्तानों में यदि ऊँट न होता तो वहाँ मनुष्य निवास ही न कर सकता। भारत के पश्चिमी भाग में भी ऊँट का बहुत उपयोग होता है। अब आस्ट्रेलिया के रेगिस्तान में भी ऊँट पहुँच गया है। ऊँट रेगिस्तान की सूखी घास तथा काँटेदार झाड़ियों को खाकर रह सकता है। इसी कारण जलरहित प्रदेशों में इसका इतना अधिक महत्व है।

हाथी यह सबसे बड़ा पशु है। अब इसका अधिक उपयोग नहीं होता क्योंकि इसके पालने में खर्च बहुत होता है। हाथी सघन वनों में मिलता है। मध्य अफ्रीका, बर्मा, तथा श्याम के वनों में हाथी बहुत पाया जाता है। हाथी की हड्डी तथा दाँत बहुमूल्य व्यापारिक वस्तु हैं। बर्मा तथा श्याम के पहाड़ी प्रदेशों में यह लकड़ी ढोने के काम आता है।

इनके अतिरिक्त रैनडियर (Reindeer) उत्तरी ध्रुव के समीपवर्ती अत्यन्त ठंडे प्रदेश का मुख्य पशु है। इस शीत प्रदेश में उत्पन्न होने वाली झाड़ियाँ, थोड़ी

घास और बर्फ पर उत्पन्न होने वाली काई तक पर वह निर्वाह कर लेता है। नार्वे से लेकर बेरिंग (Bering Strait) तक यूरेशिया में, तथा उत्तरी कनाडा में यह बहुत पाया जाता है। हिमालय के प्रदेश में याक (Yak) नामक बैल जो बर्फ पर भी चल सकता है बोझ ढोने के लिए अत्यन्त उपयोगी है। यह भी बहुत थोड़े भोजन पर निर्वाह कर सकता है। दक्षिण अमेरिका के ऐंडीज पहाड़ी प्रदेश मे लामा (Lama) माल ढोने के काम में बहुत आता है।

खेतों पर बैल, घोड़ा और मोटर का उपयोग

बहुधा लोगों का यह विचार है कि घोड़े ने बैल को तथा मोटर ने घोड़ों को खेती की दृष्टि से व्यर्थ कर दिया है। परन्तु यह भ्रमपूर्ण है। आज भी भारत, जापान, हिंद चीन, टर्की-ग्रीस, स्पेन तथा योरोप के अन्य भागों में बैल खेती और माल ढोने का काम करता है। फ्रांस जैसे देश में बैलगाड़ी मोटरों के साथ साथ सड़कों पर चलती दिखलाई देती है। नवास्कोशिया, क्वीबेक तथा अपलेशियन पर्वतमाला के दक्षिणी भाग में आज भी ट्रैक्टरों की अपेक्षा बैल अधिक हैं। बैल सस्ते हैं अस्तु निर्धन प्रदेशों में आज भी उनका उपयोग होता है। यही दशा घोड़ों की है। इंगलैंड जर्मनी तथा अन्य देशों में आज भी खेती में घोड़ों का बहुत महत्व है।

रेशम (Silk)

रेशम को उत्पन्न करने वाला एक कीड़ा होता है परन्तु इस कीड़े का शहतूत के वृक्ष से घनिष्ट संबंध है। यह कीड़ा शहतूत की पत्तियों (Mulberry leaves) पर ही निर्वाह करता है। शहतूत की पत्तियों पर रेशम का कीड़ा पाला जाता है। यही उसका भोजन है। इस कारण जहाँ शहतूत का वृक्ष उत्पन्न हो सकता है वहीं पर रेशम उत्पन्न किया जा सकता है।

शहतूत का वृक्ष बहुत प्रकार की जलवायु में उत्पन्न हो सकता है। परन्तु रेशम का कीड़ा सफलतापूर्वक वहीं पाला जा सकता है जहाँ वृक्ष वर्ष में पत्तियों की दो फसलें उन्हीं प्रदेशों में उत्पन्न करते हों जहाँ न अधिक ठंड हो और न बहुत गरमी और जहाँ का औसत तापक्रम ५४५ फै० हो। शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate zone) का गरम भाग और उष्ण कटिबन्ध (Tropics) का वह भाग जो बहुत गरम न हो शहतूत के वृक्ष उत्पन्न करने के लिए बहुत उपयुक्त है। अस्तु रेशम का कीड़ा भूमध्य रेखा (Equator) के १५° उत्तर से लेकर ४५° उत्तर और १५° दक्षिण से लेकर ४५° दक्षिण के भूभाग में पाला जाता है। इन्हीं प्रदेशों में कीड़ा पाला जा सकता है क्योंकि उसका मुख्य भोजन यहीं उत्पन्न होता है। रेशम के कीड़े पालने के लिए दूसरी आवश्यकता है सस्ते मजदूरों की। रेशम के कीड़े पालने का काम बहुत झंझट

था है और इसमें अपेक्षाकृत अधिक मजदूरों की जरूरत होती है। चीन और जापान रेशम के कीड़े पालने के लिए बहुत उपयुक्त हैं, क्योंकि वहाँ की जलवायु शहतूत के वृक्ष के अनुकूल है और वहाँ मजदूर सस्ते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका की कुछ रियासतों की जलवायु शहतूत के वृक्ष के लिए उपयुक्त है किन्तु मजदूरी बहुत महँगी होने के कारण वहाँ रेशम के कीड़े पालने का धंधा पनप नहीं सकता।

कीड़े से रेशम को पृथक् करने में बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है। रेशम के कीड़ों को पालने में बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ता है। अधिकतर उनकी देख भाल स्त्रियाँ और बच्चे करते हैं। रेशम कीमती होने के साथ साथ बहुत हल्का होता है इस कारण यह बहुत दूर तक भेजा जा सकता है। रेशम का कीड़ा जब सुप्त अवस्था में आने को होता है तो सिर के छिद्रों से बहुत बारीक तार निकालने लगता है, और यह रेशम का तार उसके शरीर पर चारों ओर लिपट जाता है।

चीन और जापान संसार का अधिकांश रेशम उत्पन्न करते हैं। चीन से बहुत सा रेशम विदेशों को भेजा जाता है परन्तु जापान रेशम के कपड़े बना कर बाहर भेजता है। रेशम का सूत जापान से भारत में बहुत आता है। इनके अतिरिक्त एशिया में फारस, एशिया माइनर और ट्रांस काकेशिया (Trans Caucasia) में भी कीड़े पाले जाते हैं तथा थोड़ा रेशम उत्पन्न होता है।

योरोप के अन्तर्गत इटली और फ्रांस रेशम उत्पन्न करने वाले देशों में मुख्य हैं। इटली में मिलन (Milan) और फ्रांस में लियान्स (Lyons) रेशमी कपड़ा बनाने के मुख्य केन्द्र हैं। स्पेन में भी कुछ रेशम उत्पन्न होता है। संसार में रेशम की उत्पत्ति क्रमशः बढ़ती जा रही है। किन्तु असली रेशम की स्थिति बहुत डावाँडोल है क्योंकि सन् १९२० के उपरान्त नकली रेशम बहुत बनने लगा है और क्रमशः नकली रेशम असली रेशम से घोर प्रतिद्वन्द्विता करने लगा है।

ब्रिटेन, जर्मनी और संयुक्तराष्ट्र अमेरिका बहुत सा रेशम इन देशों से मँगाते हैं और रेशमी कपड़ा तैयार करते हैं। नकली रेशम का कपड़ा सस्ता होने के कारण अधिक बिकता है। फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि वह असली रेशम की खपत को बहुत अधिक घटा देगा।

बकरी

बकरी का उपयोग मांस और दूध के लिए होता है। बकरी वर्ष में ५०० से १००० पौंड तक दूध देती है। साथ ही बकरी उन प्रदेशों में जहाँ सूखा बहुत है, ऊबड़ खाबड़ प्रदेश है चारा अच्छा नहीं होता वहाँ भी रह सकती है। गाय की अपेक्षा बकरी कठोर परिस्थितियों में निर्वाह कर सकती है। यह निर्धन व्यक्तियों और निर्धन प्रदेशों की गाय है। यही कारण है अपेक्षाकृत सूखे देशों जैसे दक्षिण अमेरिका,

उत्तर भारत, मैक्सिको, तथा भूमध्यसागरीय देशों में बकरी बहुत पाली जाती है। इन प्रदेशों में किसानों के लड़कों को बहुधा भेड़ और बकरी को साथ साथ ऊबड़ खाबड़ भूमि पर चराते देखा जा सकता है।

अभ्यास के प्रश्न

१—पशु पालन के धन्धे के लिए कैसी जलवायु और भूमि की आवश्यकता है? पशु पालन का धन्धा कहाँ अधिक होता है?

२—गो पालन के धन्धे का वर्णन कीजिए और बतलाइए कि वह कहाँ अधिकतर केन्द्रित है और क्यों?

३—ऊन उत्पन्न करने वाले मुख्य देश कौन से हैं और वहाँ ऊन का धन्धा किस प्रकार होता है?

४—दूध और मक्खन के धन्धे का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

५—रेशम किन देशों में अधिकतर उत्पन्न होता है? उनका संक्षिप्त विवरण लिखिए।

६—पशुओं को खेती, माल ढोने तथा गमनागमन के साधनों को उपलब्ध करने में कितना उपयोग होता है? विस्तारपूर्वक लिखिए।

सातवाँ परिच्छेद

मुख्य धन्धे—कृषि (Agriculture)

आरम्भ में मनुष्य जब वनों में रह कर वहाँ के पशु-पक्षियों को मारकर तथा फलों इत्यादि से अपनी उदर पूर्ति करता था उस समय उसमें कृषि का प्रादुर्भाव तथा पशुओं में विशेष अन्तर नहीं था। किन्तु क्रमशः मनुष्य की जनसंख्या बढ़ती गई और उसके लिए अधिकाधिक भोजन की आवश्यकता हुई। बढ़ती हुई जनसंख्या के भोजन के लिए केवल वनों से यथेष्ट भोजन नहीं प्राप्त हो सकता था अतएव मनुष्य ने पशुओं को न मारकर उन्हें पालना आरम्भ किया। क्योंकि उन्हें मार कर खाने में जितना भोजन प्राप्त हो सकता था उससे कहीं अधिक भोजन उन्हें पालकर उत्पन्न किया जा सकता था। साथ ही पशुओं को पालने से भोजन अधिक निश्चित रूप से प्राप्त हो सकता था। अतएव मनुष्य ने उपयोगी पशुओं के पालने का धंधा अपना लिया। वनों से फल इत्यादि इकट्ठा करने से मनुष्य को यह भी ज्ञात हो गया कि कुछ पौधे (गेहूँ, चावल, इत्यादि) उसके लिए अधिक उपयोग के हैं और अन्य पौधे उपयोगी नहीं हैं। आरम्भ में प्रत्येक पौधा जंगली अवस्था में उत्पन्न होता था, अतएव उपयोगी पौधों के आस पास अनुपयोगी पौधे भी उगे रहते थे। मनुष्यों को उपयोगी पौधों के अनाज को इकट्ठा करने में बड़ी कठिनाई होती थी। अतएव उसने अनुपयोगी पौधों को काटना आरम्भ कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि एक जमीन के टुकड़े पर केवल उपयोगी पौधे ही रहने दिये जाते थे और जब अनाज पकता था उस समय आसानी से अनाज को काट कर इकट्ठा किया जा सकता था। अब मनुष्य ने देखा कि इस प्रकार अनुपयोगी पौधों को नष्ट कर देने से उपयोगी पौधों की बढ़वार अच्छी होती है, और वे अनाज अधिक उत्पन्न करते हैं। इधर जनसंख्या के बराबर बढ़ने के कारण मनुष्य को अधिक भोजन की आवश्यकता थी। उसने देखा कि इस प्रकार अनाज इकट्ठा करने से बहुत सी भूमि व्यर्थ में नष्ट हो जाती है क्योंकि दो पौधों के बीच में बहुत सी भूमि छूटी रहती थी अतएव उसने सारे टुकड़े को साफ करके उसे जोत कर उपयोगी पौधों के बीज बराबर बराबर दूरी पर डाल कर खेती करना आरम्भ कर दी। आरम्भ में मनुष्य जंगलों को जलाकर साफ कर लेने और फिर कुछ वर्ष लगातार उस पर फसल पैदा करते रहते थे। जब इस प्रकार खेती करने से भूमि निर्बल हो जाती तब वे उस टुकड़े को छोड़ कर दूसरे टुकड़े को साफ

करते और उस पर खेती करने लगते। आज भी कतिपय पिछड़े हुये भूभागों में जगली जातियाँ इसी प्रकार खेती करती हैं। परन्तु जैसे जैसे जनसख्या बढ़ती गई और भूमि की कमी होती गई इस प्रकार की खेती करना असम्भव होता गया। अब मनुष्य एक ही स्थान पर जम कर रहने लगा और उसी भूमि पर लगातार खेती करने के लिए विवश हो गया किन्तु ऐसा करने से बहुत सी समस्यायें उठ खड़ी हुई। भूमि की उपजाऊ शक्ति को कम न होने देना, पानी की कमी होने पर सिंचाई का प्रबन्ध करना, तथा फसल के शत्रुओं से फसल की रक्षा करना इत्यादि। जैसे जैसे मनुष्य को खेती का अनुभव होता गया वैसे ही वैसे वह खेती की उन्नति करता गया।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि खेती जलवायु और भूमि पर निर्भर है। किन्तु जलवायु तथा भूमि सब जगह एक सी नहीं होती। अतएव भिन्न प्रकार की जलवायु तथा भूमि पर खेती करने के ढग में थोड़ा हेर फेर करना पड़ा। यही नहीं खेती की अन्य समस्याओं को हल करने के लिए मनुष्य ने सिंचाई, खाद, और फसल की रक्षा का प्रबन्ध किया तथा भिन्न भिन्न जलवायु में उत्पन्न हो सकने वाले बीज उत्पन्न किए। सच तो यह है कि मुख्य धधों (Primary Industries) म खेती ही एक ऐसा धधा है कि जिसम मनुष्य के श्रम का महत्वपूर्ण स्थान है अन्यथा अन्य मुख्य धधों (Primary Industries) म प्रकृति का ही मुख्य हाथ रहता है। मनुष्य केवल प्रकृति की देन को एकत्रित कर लेता है, वनों, खानों तथा समुद्री मछलियों से क्रमश लकड़ी, धातु और मछलियाँ इकट्ठी करने म मनुष्य का कोई विशेष हाथ नहीं रहता।

आधुनिक काल में खेती वैज्ञानिक ढग से की जाती है और जनसख्या के अधिक बढ़ जाने के कारण थोड़ी भूमि से आवश्यक भोज्य पदार्थ तथा कच्चा माल उत्पन्न करना पड़ता है, इस कारण अधिकाश देशों में गहरी खेती (Intensive Cultivation) की जाती है। (अर्थात् थोड़ी भूमि पर अधिक से अधिक पूँजी (Capital) और श्रम (Labour) लगा कर उत्पत्ति बढ़ाने का प्रयत्न करना)।

आधुनिक काल म मनुष्य ने खाद का उपयोग सीख कर भूमि की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने का उपाय ढूँढ निकाला है। जहाँ पानी की कमी होती है वहाँ सिंचाई के साधन उपलब्ध कर दिये हैं। और यदि किसी प्रदेश की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि उसका वह कोई उपाय नहीं ढूँढ सकता तो वह खेती मे ही आवश्यक हेर फेर कर लेता है। उदाहरण के लिए उत्तरी अमेरिका म पाला अधिक

रहने के कारण विशेषज्ञों ने ऐसा गेहूँ उत्पन्न किया है जो शीघ्र ही पक जावे और फसल को पाले से हानि न पहुँचे। यदि देखा जावे तो गरमी ही एक ऐसी चीज है जिसकी कमी को मनुष्य किसी प्रकार पूरा नहीं कर पाता। अस्तु खेती की उन्नति होगी या नहीं यह बहुत कुछ गरमी पर ही निर्भर रहता है। अस्तु जिन देशों में गरमी कम होती है वहाँ खेती उन्नति नहीं कर सकती। साधारणतः जिस प्रदेश में सबसे अधिक गरम महीने में ५०°फै० से कम गरमी होती है वहाँ खेती हो ही नहीं सकती। खेती की सफलता के लिए लम्बी गरमियाँ आवश्यक हैं क्योंकि गरमी में ही पौधा उगता और बढ़ता है। उत्तर में गरमियाँ लम्बी नहीं होतीं किन्तु दिन लम्बा होने के कारण फसल के लिए यथेष्ट गरमी मिल जाती है।

पौधे के लिए कितने जल की आवश्यकता होगी यह इस बात पर निर्भर है कि उस प्रदेश में गरमी कैसी पड़ती है। यदि गरमी अधिक पड़ती है तो अधिक जल की आवश्यकता होगी और यदि गरमी कम पड़ती है तो कम जल की आवश्यकता होगी। साधारणतया शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate zone) में कम से कम २० इंच वर्षा खेती के लिए आवश्यक है, और उष्ण कटिबन्ध (Tropics) में ३० इंच से ४० इंच तक वर्षा आवश्यक है। इससे कम वर्षा होने पर खेती होना कठिन है। हाँ सिंचाई के द्वारा ऐसे स्थानों पर खेती की जा सकती है।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि मिट्टी कैसी है—इस पर खेती बहुत कुछ निर्भर रहती है। यदि मिट्टी उपजाऊ होगी तो फसल अच्छी उत्पन्न होगी और यदि मिट्टी कम उपजाऊ होगी तो फसल अच्छी उत्पन्न नहीं होगी। जिस मिट्टी में चिकनी मिट्टी (Clay) का अंश अधिक होता है वह वर्षा के जल को अपने कणों में सुरक्षित रखती है और इस कारण जहाँ वर्षा कम होती है और गरमी अधिक होती है वहाँ इस प्रकार की मिट्टी खेती के लिए उपयोगी सिद्ध होती है, क्योंकि वह पानी को भाप बन कर नहीं उड़ने देती। किन्तु जहाँ वर्षा अधिक होती है वहाँ इस प्रकार की मिट्टी हानिकारक होती है क्योंकि वहाँ फिर भूमि में आवश्यकता से अधिक नमी रहती है। जिस मिट्टी में रेत का अंश अधिक होता है वह पानी को अपने कणों में सुरक्षित नहीं रख सकती, अस्तु अधिकांश जल भाप बन कर उड़ जाता है।

पौधों को मिट्टी में मिले हुए पानी द्वारा भोजन मिलता है। कुछ ऐसे तत्त्व हैं जो पौधों को पैदा करने के लिए बहुत जरूरी हैं और जिन्हें पौधे अपनी जड़ों द्वारा खींचते हैं। इन आवश्यक तत्त्वों को हम दो भागों में बाँट सकते हैं। पहले जो हवा और पानी से प्राप्त होते हैं जैसे कार्बन (Carbon), ओषजन (Oxygen), उद्जन (Hydrogen), और दूसरे वे जो मिट्टी से प्राप्त होते हैं, जैसे नोषजन

(Nitrogen), हरिन (Chlorine), गंधक (Sulphur), पोटेशियम (Potassium), खटिक (Calcium) मगनीसियम (Magnesium) और लोहा इत्यादि।

इस तरह पौधा मिट्टी से सदैव यह आवश्यक तत्व खींचता रहता है। परन्तु लगातार फसल उत्पन्न करने तथा पानी के साथ बह जाने के कारण यह तत्व कम होते रहते हैं। किसान का यह कर्तव्य है कि वह इन तत्वों की कमी को पूरा कर दे नहीं तो भूमि की उपजाऊ शक्ति घटती जायेगी। सब अच्छी मिट्टियों में वनस्पति का अंश (Humus) होना आवश्यक है। यद्यपि ह्यूमस (Humus) पौधे को स्वयं भोजन नहीं देता किन्तु वह नोषजन को सुरक्षित रखने तथा उससे वनस्पति नोषैत (Nitrate) को उत्पन्न करने का काम करता है।

खेती में मिट्टी का बहुत अधिक महत्व है यही कारण है कि खेती की अधिकांश समस्यायें मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखने से सबन्ध रखती हैं। अब हम यहाँ उनके विषय में लिखेंगे।

मिट्टी का कटाव (Soil Erosion)

वर्षा का पानी मिट्टी के उपजाऊ अंश को बहा ले जाता है, इसी को मिट्टी का कटाव कहते हैं। जहाँ वर्षा बहुत अधिक और तेज होती है वहाँ यह समस्या उपस्थित हो जाती है। यह कटाव दो प्रकार से होता है। (१) समतल कटाव (Sheet erosion) तथा गहरा कटाव (Gully erosion)। समतल कटाव (Sheet erosion) अधिक हानिकर नहीं होता क्योंकि प्रति वर्ष थोड़ी सी ही मिट्टी पानी द्वारा बहती है। यद्यपि इस प्रकार मिट्टी की उपजाऊ शक्ति कम होती रहती है किन्तु उस पर खेती की जा सकती है। परन्तु गहरा कटाव (Gully erosion) बहुत भयंकर होता है। पानी जोर से बहकर भूमि को काट देता है, भूमि में गहरे नाले बन जाते हैं, प्रतिवर्ष अधिकाधिक भूमि कटती जाती है और थोड़े ही वर्षों में बहुत विस्तृत मैदान में नाले ही नाले बन जाते हैं। इसका फल यह होता है कि वह सारी भूमि खेती के लिए अनुपयुक्त हो जाती है। जमुना और चम्बल के प्रदेश में इस प्रकार का कटाव बहुत देखने को मिलता है।

गहरे कटाव से खेती और भूमि को भयंकर क्षति पहुँचती है। जब कटाव आरम्भ हुआ प्रति वर्ष वह बढ़ता ही जाता है और देखते देखते बहुत बड़े प्रदेश में गहरी गहरी नालियाँ और गार बन जाते हैं। सारा प्रदेश ऊबड़ खाबड़ और खेती के लिए अनुपयुक्त हो जाता है। गहरे कटाव का एक भयंकर दुष्परिणाम होता है कि वर्षा का जल पृथ्वी पर न ठहर कर बड़े वेग से बहता है, भूमि को और अधिक काटता है तथा पृथ्वी जल को सोख नहीं पाती और फल-स्वरूप पृथ्वी के अन्दर जल

MAIN REGIONS OF SOIL EROSION
भूमि के क्षरण के मुख्य प्रदेश

श्रोत और अधिक गहराई पर चला जाता है। उस प्रदेश म जितने कुएँ होते हैं व बेकार हो जाते हैं तथा सिंचाई की समस्या भयंकर रूप धारण कर लेती है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में मिट्टी की अनुसंधानशाला (Soil Laboratory) के विशेषज्ञों का मत है कि संयुक्तराज्य अमेरिका में प्रतिवर्ष तीन बिलियन टन मिट्टी बह जाती है। यह मिट्टी जो प्रतिवर्ष बह जाती है उसमें ४ करोड़ ३० लाख टन फासफोरस, नत्रजन, तथा पोटेशियम होता है। यहाँ यह बात ध्यान में रखने की है कि प्रतिवर्ष अमेरिका के *किसान जितनी खाद देते हैं उससे यह हानि इक्कीस गुनी अधिक है।* संयुक्त राज्य अमेरिका में लगभग पाँच करोड़ एकड़ भूमि कटाव से बिलकुल नष्ट होगई और पाँच करोड़ एकड़ आधा नष्ट हो गई। इसके अतिरिक्त दस करोड़ एकड़ भूमि की ऊपरी उपजाऊ मिट्टी बह गई। यहाँ यह बात याद रखनी चाहिए कि यदि खेती समतल भूमि पर की जावे तो भूमि का कटाव कम होता है। ढालों पर खेत करने से कटाव बहुत अधिक होता है।

भूमि का कटाव वायु के द्वारा भी होता है। जब आंधी चलती है तो वह भूमि के ऊपरी सतह का उपजाऊ मिट्टी को उठा ले जाता है।

भूमि के कटाव को रोकने के लिए मनुष्यों ने बहुत से उपाय निकाले हैं। अधिकांश पहाड़ों के ढालों पर, जहाँ भूमि का कटाव बहुत अधिक होता है, केवल खेती की जाती है। *अर्थात् सीढ़ियों के आकार की पतली चौरस पट्टी* (Terrecs) बनाई जाती है और उस पर खेती की जाती है। इसमें बहुत श्रम होता है तथा भूमि इतनी कम चौड़ी होती है कि ट्रैक्टर इत्यादि उस पर काम नहीं दे सकते। चीन, जापान, हिमालय प्रदेश, दक्षिणी भारत के पहाड़ी प्रदेश में इसी प्रकार खेती करके भूमि के कटाव को रोकने का प्रयत्न किया गया है।

सतह के कटाव को रोकने का एक उपाय यह है कि खेती इस प्रकार की जावे कि जिससे मिट्टी वर्षा तथा तेज आँधियों के दिनों में खाली और ढीली न रहे। अर्थात् उस पर उन दिनों यदि फसल खड़ी हो तो कटाव रुक सकता है।

गहरे कटाव को तुरन्त रोकने का प्रयत्न करना चाहिए नहीं तो शीघ्र ही सारा प्रदेश खड्डों से भर जाता है। इसके लिए बहाव को कम करने के लिए बांध बनाना चाहिए, और उस प्रदेश म *वृक्षों का बाग लगाना चाहिए।* पेड़ों की जड़ें मिट्टी को जकड़े रहती हैं पानी उसे काट नहीं सकता।

भूमि के कटाव के मुख्य प्रदेश

स्रोत और अधिक गहराई पर चला जाता है। उस प्रदेश में जितने कुएँ होते हैं वे बेकार हो जाते हैं तथा सिंचाई की समस्या भयंकर रूप धारण कर लेती है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में मिट्टी की अनुसंधानशाला (Soil Laboratory) के विशेषज्ञों का मत है कि संयुक्तराज्य अमेरिका में प्रतिवर्ष तीन बिलियन टन मिट्टी बह जाती है। यह मिट्टी जो प्रतिवर्ष बह जाती है उसमें ४ करोड़ ३० लाख टन फासफोरस, नत्रजन, तथा पोटेशियम होता है। यहाँ यह बात ध्यान में रखने की है कि प्रतिवर्ष अमेरिका के किसान जितनी खाद देते हैं उससे यह हानि सत्तर गुनी अधिक है। संयुक्त राज्य अमेरिका में लगभग पाँच करोड़ एकड़ भूमि कटाव से बिलकुल नष्ट होगई और पाँच करोड़ एकड़ आधा नष्ट हो गई। इसके अतिरिक्त दस करोड़ एकड़ भूमि की ऊपरी उपजाऊ मिट्टी बह गई। यहाँ यह बात याद रखनी चाहिए कि यदि खेती समतल भूमि पर की जावे तो भूमि का कटाव कम होता है। ढालों पर खेती करने से कटाव बहुत अधिक होता है।

भूमि का कटाव वायु के द्वारा भी होता है। जब आंधी चलती है तो वह भूमि के ऊपरी सतह का उपजाऊ मिट्टी को उठा ले जाती है।

भूमि के कटाव को रोकने के लिए मनुष्यों ने बहुत से उपाय निकाले हैं। अधिकांश पहाड़ों के ढालों पर जहाँ भूमि का कटाव बहुत अधिक होता है केवल खेती की जाती है। अर्थात् सीढ़ियों के आकार की पतली चौरस पट्टी (Terrecs) बनाई जाती है और उस पर खेती की जाती है। इसमें बहुत श्रम होता है तथा भूमि इतनी कम चौड़ी होती है कि ट्रैक्टर इत्यादि उस पर काम नहीं दे सकते। चीन, जापान, हिमालय प्रदेश, दक्षिणी फ्रांस के पहाड़ी प्रदेश में इसी प्रकार खेती करके भूमि के कटाव को रोकने का प्रयत्न किया गया है।

सतह के कटाव को रोकने का एक उपाय यह है कि खेती इस प्रकार की जावे कि जिससे मिट्टी वर्षा तथा तेज आँधियों के दिनों में खाली और ढीली न रहे। अर्थात् उस पर उन दिनों यदि फसल खड़ी हो तो कटाव रुक सकता है।

गहरे कटाव को तुरन्त रोकने का प्रयत्न करना चाहिए नहीं तो शीघ्र ही सारा प्रदेश खड्डों से भर जाता है। इसके लिए बहाव को कम करने के लिए बांध बनाना चाहिए और उस प्रदेश में वृक्षों का बाग लगाना चाहिए। पेड़ों की जड़ें मिट्टी को जकड़े रहती हैं पानी उसे काट नहीं सकता।

मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को घटने से रोकना

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि फसल को उत्पन्न करने में मिट्टी के कुछ तत्व कम हो जाते हैं। सच यह है कि प्रत्येक फसल किन्हीं विशेष तत्वों को कम करती है और कुछ तत्वों को भूमि में बढ़ाती है। अतएव यदि लगातार एक ही फसल बहुत समय तक भूमि पर उत्पन्न की जावे और भूमि पर खाद न डाला जावे तो उन नमकों (Salts) की कमी के कारण जिन्हें फसल कम कर देती है भूमि की उपजाऊ शक्ति कम हो जावेगी। भूमि की उपजाऊ शक्ति को रखने के लिए किसान तीन उपाय काम में लाता है (१) फसलों का हेर फेर (Rotation of crops), (२) भूमि को विश्राम देना, (३) भूमि पर खाद डालना। फसलों के हेर फेर का अर्थ यह है कि एक बार जिस फसल को भूमि पर उत्पन्न किया गया है उसी को दूसरी बार उत्पन्न न किया जावे। किसान ने अनुभव से यह जान लिया है कि कुछ फसलें जिन नमकों (Salts) को भूमि में कम कर देती हैं वही तत्व या नमक दूसरी फसलें भूमि में बढ़ा देती हैं। अतएव वह एक के बाद दूसरी उस फसल को उत्पन्न करता है जो एक दूसरे की पूरक हों।

अनुभव से यह भी ज्ञात हुआ है कि यदि भूमि को थोड़ा विश्राम दिया जावे अर्थात् उस पर कोई फसल उत्पन्न न की जावे तो भूमि हवा से खोये हुए तत्वों या नमकों को फिर प्राप्त कर लेती है। किन्तु ऊपर लिखे उपायों से कुछ हद तक ही काम चल सकता है। क्योंकि जिन देशों की आबादी घनी है वे न तो भूमि को उचित विश्राम ही दे सकते हैं और न फसलों के हेर फेर से खोये हुए तत्वों को पूरा पूरा प्राप्त किया जा सकता है। इस कारण किसान को भूमि पर खाद डालना आवश्यक हो जाता है।

अधिकतर भूमि में आवश्यक तत्वों में नोषजन (Nitrogen), पोटैशियम (Potassium) तथा फास्फोरस (Phosphorus) में ही कमी होती है। अतएव किसान खाद डाल कर इन तत्वों की कमी को पूरा करता है। किसान पशुओं के गोबर, घास तथा चारा इत्यादि से तैयार की हुई खाद को भूमि पर डालता है, अथवा खेत पर विशेष फसलें उत्पन्न करके उन्हें खेत में ही जोत देता है जो सड़कर खाद बन जाती हैं। अथवा पशुओं को खेत पर रखकर उनके गोबर तथा पेशाब के द्वारा भूमि को उपजाऊ बनाता है।

कुछ समय से पश्चिमी देशों में रासायनिक खाद का भी उपयोग होने लगा है। आवश्यकता पड़ने पर किसान सोडा-नाइट्रेट (Nitrate of Soda), अमोनिया सल्फेट (Sulphate of Amonia) तथा फास्फेट्स (Phosphates) का उपयोग करता है। किन्तु ये रासायनिक खाद (Chemical fertilizers)

अधिक खर्चीला होता है इस कारण उनका उपयोग केवल अधिक मूल्यवान फसलों के लिए होता है। साथ ही केवल वे ही किसान इसका उपयोग करते हैं जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी हो। जैसे जैसे जनसंख्या बढ़ती जा रही है और उसके लिए अधिकाधिक भोजन को उत्पन्न करने की आवश्यकता भी बढ़ रही है वैसे ही वैसे अधिकाधिक खाद का उपयोग बढ़ रहा है।

खेती में जल का महत्व

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि खेती के लिए जल भी नितान्त आवश्यक है। अधिकांश भूभाग में खेती वर्षा के जल से ही होती है। किन्तु जिन प्रदेशों में २० इंच से भी कम वर्षा होती है वहाँ जल की कमी के कारण खेती बिना सिंचाई के नहीं हो सकती। यह न भूल जाना चाहिए कि संसार में जितनी भूमि पर खेती होती है उसका अधिकांश बिना सिंचाई के फसलें उत्पन्न करता है। उसकी तुलना में सींची जाने वाली भूमि बहुत थोड़ी है।

सिंचाई (Irrigation)

जिन प्रदेशों में वर्षा लगातार नहीं होती वरन किसी खास मौसम में होती है वहाँ सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरण के लिए, मानसून वाले प्रदेशों में जहाँ वर्षा केवल वर्ष के तीन चार महीनों में ही होती है बिना सिंचाई के खेती नहीं की जा सकती। यही नहीं, जहाँ वर्षा आवश्यकता से कम होती है वहाँ भी सिंचाई की जाती है। सिंचाई के द्वारा खेती करने में खर्च तथा श्रम अधिक पड़ता है। किन्तु सिंचाई पर निर्भर रह कर खेती करने वालों को एक सुविधा यह रहती है कि पानी उनके अधिकार में रहता है, जब आवश्यकता होती है तभी वे खेत को पानी दे सकते हैं। इस कारण सिंचाई द्वारा खेती करने से पैदावार अधिक होती है।

सिंचाई के निम्नलिखित तीन साधन हैं (१) नदियों से नहरें निकाल कर सिंचाई की जाती है। नदियाँ ऐसी होनी चाहिये जिनमें सदैव पानी रहता हो। (२) तालाब अथवा झील में वर्षा का पानी इकट्ठा कर लिया जाता है और फिर सूखे मौसम में उसका उपयोग सिंचाई के लिये होता है। (३) पृथ्वी के अन्दर बहते हुए पानी को कुयें खोद कर सिंचाई के काम में लाया जाता है।

सिंचाई के साधनों तथा धरातल की बनावट का गहरा सम्बन्ध है। यदि भूमि पथरीली हो और प्रदेश पहाड़ी हो तो नहरें नहीं खोदी जा सकती क्योंकि नहरें खोदने में बहुत अधिक व्यय पड़ेगा। साथ ही नहरें उन्हीं नदियों से निकाली जा सकती हैं जिनमें बराबर पानी रहता हो। भारत में केवल उन्हीं नदियों से नहरें निकाली गई हैं जो बर्फीले पहाड़ों से निकलती हैं। तालाब और झील बनाने

में अधिक व्यय नहीं होता क्योंकि उसमें केवल बाँध बना कर पानी को रोकना पड़ता है। किन्तु भूमि पथरीला होने पर कुओं का खोदना तथा विशेष कर पातालफोड़ कुआ (Artesian wells) का बनाना बहुत कष्टसाध्य तथा खर्चीला होता है।

सिंचाई केवल उन्हीं प्रदेशों में नहीं होती जहाँ वर्षा कम होती है, जहाँ वर्षा यथेष्ट होती है वहाँ भी सिंचाई होती है क्योंकि किन्हीं किन्हीं प्रदेशों में वर्षा तो साधारणतः यथेष्ट होती है किन्तु वह अनिश्चित होती है इस कारण वहाँ सिंचाई की जाती है। साधारणतः यह विश्वास किया जाता है कि यदि पंद्रह दिन के अन्दर एक इंच से कम वर्षा होती तो फसल को हानि पहुँचने की सम्भावना रहती है। अतएव जिन प्रदेशों में वर्षा तो यथेष्ट होती है किन्तु धान धान में पंद्रह दिन से अधिक सूखा पड़ता है वहाँ सिंचाई की आवश्यकता होती है।

संसार में सबसे अधिक भूमि भारत तथा पाकिस्तान में सींचा जाता है। यहाँ बड़े बड़े तालाब तथा नहरों के द्वारा सिंचाई की जाती है। संसार के भिन्न भिन्न देशों में सिंचाई के द्वारा खेती की जाने वाली भूमि इस प्रकार है।

भारत तथा पाकिस्तान—पाँच करोड़ एकड़
संयुक्त राज्य अमरिका—दो करोड़ एकड़
रूस——८० लाख एकड़
जापान—७० " "
मिश्र (Egypt)—६० लाख एकड़
मैक्सिको (Mexico)—५० " "
इटली——————४५ " "

सिंचाई द्वारा जितना भूमि पर खेती होती है उसका क्षेत्रफल भविष्य में बढ़ जायेगा क्योंकि भारत तथा मिश्र देशों में नई नई नहरें तथा तालाब बनाने का काम जारी है। संसार में नील, सिंध, गंगा, पंजाब की नहरों, अन्य भारतीय नदियों से निकलने वाली नहरों, यांग्टसीकियांग तथा यूफ्रेटीज और टाइग्रीस नदियों से बहुत अधिक सिंचाई होती है। सच तो यह है कि इन नदियों के समीपवर्ती प्रदेश इनके पानी से ही जीवित हैं।

कुछ प्रदेश तो ऐसे भी हैं जो बहुत ही सूखे हैं। जहाँ वर्षा तो बहुत कम होती ही है साथ ही सिंचाई के साधन भी नहीं होते वहाँ सूखी खेती (Dry farming) के द्वारा फसल उत्पन्न की जाती है। सूखी खेती में किसान बाहर के पानी का उपयोग नहीं करता वरन् जो कुछ थोड़ा बहुत जल वर्षा के दिनों में गिरता है उसका अधिक से अधिक उपयोग करने का प्रयत्न करता है।

सूखी खेती (Dry farming)

सूखी खेती (Dry farming) में किसान फसल काटने के उपरान्त ही खेती को खूब गहरा जोत देता है जिससे जो भी वर्षा का जल गिरे वह इधर उधर न बह कर पृथ्वी में सूख जाय। यही नहीं किसान समय समय पर भूमि को जोतता रहता है जिससे व्यर्थ पौधे उग कर भूमि को नष्ट न कर दें। इसके अतिरिक्त वह भूमि की ऊपरी सतह की मिट्टी को बहुत ही बारीक कर देता है जिससे पानी भाप बन कर न उड़ सके। सूखी खेती प्रतिवर्ष नहीं होती। कहीं कहीं एक वर्ष छोड़कर दूसरे वर्ष खेती की जाती है जिससे फसल भूमि में जमा किए हुये पानी का उपयोग कर सके। सूखी खेती में इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता है कि केवल वही फसल पैदा की जाय जो शुष्कता को सहन कर सके और जो कम खर्चीली हो।

संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिमी भाग में सूखी खेती का खूब उपयोग किया गया है। गेहूँ, कपास, जो, ओट, रुई तथा अन्य अनाज सूखी खेती के द्वारा उन प्रदेशों में उत्पन्न किये जाते हैं जहाँ साधारणतया फसल उत्पन्न हो नहीं हो सकती। सबसे पहले सूखी खेती का प्रयोग संयुक्तराज्य में ही हुआ और अब क्रमशः यह उन प्रदेशों में फैल रही है जो बहुत सूखे हैं। संयुक्तराज्य अमेरिका के अतिरिक्त कनाडा, आस्ट्रेलिया, पश्चिमी एशिया, और दक्षिण अफ्रीका में सूखी खेती के द्वारा फसलें उत्पन्न की जाती हैं।

सूखी खेती प्रत्येक देश में एक ही तरह से नहीं हो सकती क्योंकि प्रत्येक देश की जलवायु तथा भूमि एक सी नहीं होती। जलवायु तथा भूमि की भिन्नता के साथ सूखी खेती की पद्धति में भी हेर फेर करना पड़ता है। कहीं कहीं जहाँ धूप तेज पड़ती है वहाँ भूमि को अच्छी तरह से जोत कर वर्षा के पानी को उसमें सुखा कर ऊपर से पत्थर के टुकड़े बिछा दिये जाते हैं जिससे पानी भाप बन कर न उड़ सके। कहीं कहीं जहाँ नीचे की तह में कड़ी चिकनी मिट्टी की तह नहीं होती वहाँ एक या दो फुट मिट्टी हटा कर नीचे की भूमि को पीट कर कठोर कर दिया जाता है और मिट्टी को फिर उस पर डाल दिया जाता है जिससे वर्षा का पानी बहुत गहराई तक न जा सके। सूखी खेती की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि जल्दी पकने वाली फसलें उत्पन्न की जायें।

अभ्यास के प्रश्न

१—भूमि के कटाव (Soil Erosion) से क्या हानियाँ होती हैं? उसे किस प्रकार रोका जा सकता है?

२—खेती के लिये खाद और सिंचाई का क्या महत्व है?

३—सूखी खेती (Dry farming) किसे कहते हैं? विस्तारपूर्वक लिखिए।

आठवाँ परिच्छेद

खेती की पैदावार—भोज्य पदार्थ

✓ गेहूँ

गेहूँ सबसे अधिक महत्वपूर्ण अनाज है। मनुष्य जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग गेहूँ ही खाता है, यद्यपि चावल खाने वालों की संख्या गेहूँ खाने वालों से कम नहीं है। गेहूँ की खेती अत्यन्त प्राचीन काल से होती आ रही है और भिन्न भिन्न जलवायु में इसको उत्पन्न करने का प्रयत्न किया गया है इस कारण इसकी अगणित जातियाँ हैं। रूस के उत्तरी भाग में उत्पन्न होने वाला गेहूँ भारत में उत्पन्न नहीं हो सकता। भारत का गेहूँ शीघ्र पकने वाला होता है। इसीलिये प्रत्येक देश में वहाँ की जलवायु के अनुकूल ही गेहूँ के बीज को उत्पन्न करने का प्रयत्न किया गया है।
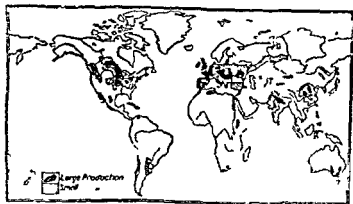
.गेहूँ शीतोष्ण (Temperate) प्रदेशों की पैदावार है। उष्ण कटिबन्ध (Tropics) में इसकी पैदावार लगभग नहीं के बराबर होती है। यही कारण है कि ६०% गेहूँ की उत्पत्ति उत्तरी गोलार्द्ध के शीतोष्ण प्रदेशों में होती है। गेहूँ के बोने के समय ठंड और नमी होना आवश्यक है। जब पौधा धीरे धीरे बढ़ता है उस समय भी ठंड की जरूरत होती है। गेहूँ की अच्छी फसल के लिये ठंड और नमी बहुत लाभदायक है किन्तु फसल के पकने के समय तेज धूप उतनी ही आवश्यक है। यदि पकने के समय गरमी न पड़े अथवा वायु में नमी आ जाय तो भी फसल को हानि पहुँचती है। यह अनाज उन प्रदेशों में भी उत्पन्न हो सकता है जहाँ अत्यधिक ठंड पड़ती है परन्तु पकने के समय गरमी और सूखी हवा नितान्त

आठवाँ परिच्छेद

खेती की पैदावार—भोज्य पदार्थ

✓ **गेहूँ**

गेहूँ सबसे अधिक महत्वपूर्ण अनाज है। मनुष्य जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग गेहूँ ही खाता है, यद्यपि चावल खाने वालों की संख्या गेहूँ खाने वालों से कम नहीं है। गेहूँ की खेती अत्यन्त प्राचीन काल से होती आ रही है और भिन्न भिन्न जलवायु में इसको उत्पन्न करने का प्रयत्न किया गया है इस कारण इसकी अगणित जातियाँ हैं। रूस के उत्तरी भाग में उत्पन्न होने वाला गेहूँ भारत में उत्पन्न नहीं हो सकता। भारत का गेहूँ शीघ्र पकने वाला होता है। इसीलिये प्रत्येक देश में वहाँ की जलवायु के अनुकूल ही गेहूँ के बीज को उत्पन्न करने का प्रयत्न किया गया है।

गेहूँ शीतोष्ण (Temperate) प्रदेशों की पैदावार है। उष्ण कटिबन्ध (Tropics) में इसकी पैदावार लगभग नहीं के बराबर होती है। यही कारण है कि ६०% गेहूँ की उत्पत्ति उत्तरी गोलार्द्ध के शीतोष्ण प्रदेशों में होती है। गेहूँ के बोने के समय ठंड और नमी होना आवश्यक है। जब पौधा धीरे धीरे बढ़ता है उस समय भी ठंड की जरूरत होती है। गेहूँ की अच्छी फसल के लिये ठंड और नमी बहुत लाभदायक है किन्तु फसल के पकने के समय तेज धूप उतनी ही आवश्यक है। यदि पकने के समय गरमी न पड़े अथवा वायु में नमी आ जाय तो भी फसल को हानि पहुँचती है। यह अनाज उन प्रदेशों में भी उत्पन्न हो सकता है जहाँ अत्यधिक ठंड पड़ती है परन्तु पकने के समय गरमी और सूखी हवा नितान्त

घट गई। किन्तु पिछले पन्द्रह वर्षों में सोवियट सरकार की पंचवर्षीय योजनाओं (Five Year Plans) के कारण रूस में गेहूँ की पैदावार आश्चर्यजनक रीति से बढ़ी है। १९१४ के पूर्व भारत भी गेहूँ उत्पन्न करने वाले देशों में प्रमुख था किन्तु युद्ध के उपरान्त वहाँ की पैदावार बहुत घट गई और अब वह गेहूँ बाहर नहीं भेजता। पहले भारत से भी विदेशों को यथेष्ट गेहूँ जाता था किन्तु कुछ वर्षों से गेहूँ का बाहर जाना कम होता है क्योंकि देश में ही गेहूँ की खपत बढ़ती जा रही है।

पृथ्वी के प्रमुख गेहूँ उत्पन्न करने वाले भूभाग निम्नलिखित हैं —

१—दक्षिण रूस के मैदान तथा डैन्यूब नदी की घाटी। २—भूमध्य सागर (Mediterranean) के समीप वाले प्रदेश ३—उत्तर-पश्चिमी योरोप, ४—कनाडा तथा संयुक्तराज्य के मैदान, ५—उत्तर पश्चिमी भारत, ६—अरजनटाइन, ७—दक्षिणी आस्ट्रेलिया, ८—पाकिस्तान।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि योरोप और एशिया मिलकर संसार का दो तिहाई से अधिक गेहूँ उत्पन्न करते हैं और अकेला योरोप ही संसार का लगभग आधा गेहूँ उत्पन्न करता है। योरोप का एक भी देश ऐसा नहीं है जहाँ गेहूँ उत्पन्न न होता हो। ब्रिटिश द्वीप समूह, जर्मनी, इटली, बेलजियम, डैनमार्क, हालैंड, स्पेन, फ्रांस, हंगरी, रूमानियाँ, बल्गेरिया, रूस, स्वीडन, नार्वे और स्वीटजरलैंड तथा ग्रीस सभी देश गेहूँ उत्पन्न करते हैं। किन्तु इनकी औद्योगिक उन्नति हो चुकने के कारण आबादी घना है अतएव इनमें से रूस, रूमानिया, बल्गेरिया और हंगरी को छोड़ कर सभी देशों को गेहूँ बाहर से मँगाना पड़ता है। जो भी देश गेहूँ बाहर भेजते हैं वह सब योरोप में ही आता है। ब्रिटेन संसार में सबसे अधिक गेहूँ बाहर से मँगाता है इसके बाद क्रमशः इटली, जर्मनी, बेलजियम, फ्रांस, डैनमार्क, जापान, नार्वे स्वीडन तथा स्विट्ज़रलैंड विदेशों से गेहूँ मँगाने वालों में मुख्य हैं। पिछले दिनों भारत भी विदेशों से गेहूँ मँगाने लगा है। इनके अतिरिक्त चीन और ब्राज़ील भी विदेशी गेहूँ पर निर्भर रहते हैं।

संसार में गेहूँ बाहर भेजने वालों में क्रमशः निम्नलिखित देश मुख्य हैं.—

१—कानाडा
२—संयुक्तराज्य अमेरिका
३—सोवियट रूस
४—अरजनटाइना
५—आस्ट्रेलिया
६—रूमानिया
७—बल्गेरिया

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि गेहूँ उत्पन्न होने लिये ठंडक और थोड़ी वर्षा, और पकने के लिये गरमी और सूखी वायु की आवश्यकता है। इस कारण जिन देशों में भी उपयुक्त जलवायु मिलती है गेहूँ उत्पन्न होता है। भिन्न-

भिन्न देशों की भौगोलिक परिस्थिति में भिन्नता होने के कारण गेहूँ प्रत्येक महीने में किसी न किसी देश में अवश्य काटा जाता है। यही कारण है कि गेहूँ का बाजार अन्तर्राष्ट्रीय (International) बन गया है और मूल्य सब कहीं लगभग एक सा रहता है।

फसल कटने का समय

नवम्बर, दिसम्बर, जनवरी—अरजेनटाइना, चिली, आस्ट्रेलिया दक्षिण अफ्रीका, न्यूजीलैंड

फरवरी, मार्च—मिश्र और भारत

अप्रैल, मई—मैक्सिको, ईरान, चीन और जापान

जून, जुलाई—दक्षिणी और मध्य सयुक्त राज्य अमेरिका, पश्चिमी और भूमध्य सागर के पास का यारोप

अगस्त—पोलैंड, मध्य रूस, उत्तरी सयुक्तराज्य अमेरिका और कनाडा

सितम्बर, अक्टूबर—स्काटलैंड, स्वीडन, और नारवे।

ससार में गेहूँ उत्पन्न करने वाले देशो की तुलनात्मक स्थिति इस प्रकार है —

(१९४० की पैदावार लाख मैटरिक क्विन्टल Quintal में)

[१ मैटारक क्विन्टल बराबर है ३ ६७४३ बुशल के]

सोवियत रूस	४०६०	जर्मनी	५६०
सयुक्तराज्य अमेरिका	२२२०	फ्रास	५२०
चीन	१६००	टर्की	४२०
कनाडा	१५००	पौलैंड	२३०
भारत तथा पाकिस्तान	१०६०	आस्ट्रलिया	२२०
अरजैनटाइन	७४०	स्पेन	२१०
इटली	७१०	हगरी	२००

प्रति एकड़ पीछे गेहूँ की उत्पत्ति

(बुशल में)

हालैंड	५४	इटली	२१
डैनमार्क	४३	कनाडा	१६
ब्रिटेन	३३	सयुक्तराज्य अमेरिका	१५
जर्मनी	३२	अरजैनटाइना	१३
न्यूजीलैंड	३०	सोवियत रूस	११
जापान	२८	अस्ट्रेलिया	११
फ्रास	२४	भारत और पाकिस्तान	१०

ऊपर के आँकड़ों से पता चलता है कि भारत में प्रति एकड़ सबसे कम पैदावार होती है। गेहूँ उत्पन्न करने वाले देशों को हम दो भागों में बाँट सकते हैं एक तो वे देश जो कि गेहूँ उत्पन्न तो बहुत करते हैं किन्तु घना आबादी होने के कारण बाहर नहीं भेज सकते। उदाहरण के लिये सोवियत रूस, संयुक्तराज्य अमेरिका, चीन, और भारत संसार में सबसे बड़े गेहूँ उत्पन्न करने वाले देश। म से हैं परन्तु ये बहुत कम गेहूँ बाहर भेजते हैं। कनाडा, आस्ट्रेलिया और अरजनटाइन, संसार में गेहूँ का जितना निर्यात व्यापार (Export Trade) होता है उसका ८२% गेहूँ भेजते हैं यद्यपि वे केवल संसार का १२% गेहूँ उत्पन्न करते हैं। संयुक्तराज्य अमेरिका में मुख्यतः गेहूँ कानसास, उत्तरी डकोटा, नैब्रास्का, आक्लोहामा, इलीनायस, वाशिंग्टन, मिसूरी, मिनीसोटा तथा आहियो रियासतों में होता है। मिनियापोलिस, डूलुथ, शिकागो और बफैलो गेहूँ की बड़ी मंडियाँ हैं और यहाँ गेहूँ का आटा तैयार करने के बड़े बड़े कारखाने हैं।

सोवियत रूस संसार में सबसे अधिक गेहूँ उत्पन्न करता है। यहाँ केवल काली मिट्टी के प्रदेश यूक्रेन में ही अब गेहूँ उत्पन्न नहीं होता वरन् उत्तर रूस, पूर्वी तथा पश्चिमी साइबेरिया तथा ओरनबर्ग के प्रदेश में भी बहुत गेहूँ उत्पन्न होने लगा है। फिर भी युक्रेन सबसे अधिक गेहूँ उत्पन्न करता है। रस्तोव और ओडेसा के बन्दरगाहों से (काले सागर पर) कुछ गेहूँ बाहर भेजा जाता है। इनके अतिरिक्त मास्को, गोरकी और ओरनबर्ग गेहूँ के मुख्य केन्द्र हैं।

कनाडा संसार को सबसे अधिक गेहूँ भेजता है। मनीटोबा, सस्कैचुआन, एल्बर्टा, और आन्टेरियो प्रान्तों में बहुत गेहूँ उत्पन्न होता है। विनीपेग तथा पोर्ट आर्थर गेहूँ के मुख्य केन्द्र हैं।

चावल उष्ण कटिबन्ध (Tropics) की पैदावार है। संसार की तिहाई आबादी चावल पर निर्भर करती है। एशिया के पूर्वी देशों का तो यह मुख्य भोजन है। चावल बहुत तरह का होता है किन्तु जलवायु सब के लिए लगभग एक सी ही चाहिए।

60 ✓ चावल

चावल के लिए उपजाऊ भूमि की आवश्यकता होती है। यह अधिकतर नदियों के डेल्टा तथा उनकी घाटियों में उत्पन्न किया जाता है। क्योंकि नदियाँ प्रतिवर्ष नई मिट्टी लाकर खेतों में जमा कर देती हैं जिससे उन खेतों की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है।

चावल के लिए अधिक वर्षा और गरमी अत्यन्त आवश्यक है। यदि चावल के छोटे पौधे आरम्भ में पानी में डूबे रहें तो पैदावार अच्छी होती है। जिन देशों में वर्षा ६०" के लगभग हो और तापक्रम (Temperature) ८०° फै० तक

रहता हो वे देश चावल की खेती के योग्य हैं। चावल की वर्ष में दो और कहीं कहीं तीन फसलें भी उत्पन्न की जाती हैं। यही कारण है कि चावल उत्पन्न करने वाले देशों की जनसंख्या बहुत घनी है। क्योंकि एक एकड़ पर जितना अनाज चावल उत्पन्न करके पैदा किया जा सकता है उतना अन्य किसी फसल के द्वारा नहीं किया जा सकता।

चावल की पैदावार की दृष्टि से क्रमशः नीचे लिखे देश महत्वपूर्ण हैं :—

१—चीन (मुख्यतः चावल की पैदावार यांग्टसी तथा सी किआंग नदियों की घाटियों में होती है)

२—भारत (भारत में चावल मुख्यतः गंगा की घाटी में उत्पन्न होता है)

३—बर्मा (मुख्यतः इरावदी की घाटी में)

४—जापान

५—मलाया प्राय द्वीप

६—इंडो-चीन

७—जावा-सुमात्रा

८—कोरिया और फारमोसा

९—पूर्वी तथा पश्चिमी द्वीपसमूह (East and West Indies)

१०—मिश्र, लम्बार्डी के मैदान, मैडेगास्कर, जैंजीबार के दक्षिण में अफ्रीका के समुद्र तट पर, नाइजर नदी की घाटी, मिसीसिपी नदी की घाटी, मध्य अमेरिका, ब्रिटिश गायना, सूडान, फारस, रूसी तुर्किस्तान, लंका, स्पेन और इटली में पो नदी की घाटी।

संसार में चावल की कुल पैदावार प्रति वर्ष १, ५००, ०००, ००० क्विन्टल कूती जाती है। इस प्रकार संसार में मक्का से भी अधिक चावल उत्पन्न होता है और किसी किसी वर्ष तो चावल की पैदावार गेहूँ से भी अधिक होता है।

चावल की उत्पत्ति

(लाख क्विन्टल में)

चीन	४८०	श्याम	५१
भारत तथा पाकिस्तान	३८५	कोरिया	२७
जापान	१२८	फिलीपाइन्स	२१
हिन्द चीन	७१	संयुक्तराष्ट्र अमरिका	११
बर्मा	७१	इटली	८

चावल पहाड़ों पर भी उत्पन्न हो सकता है, किन्तु गरमी तथा वर्षा आवश्यक है। संसार में चावल खाने वालों की संख्या का ठीक ठीक अनुमान करना कठिन है, मानसून जलवायु के देशों का तो यह मुख्य भोजन है। चावल की खेती दो प्रकार से होती है—*एक तो बीज बोकर, दूसरे पौधे लगा कर।* छोटी छोटी क्यारियों में चावल का बीज बो दिया जाता है और जब पौधा कुछ बड़ा होता है तो उसे जड़ से इन उखाड़ कर खेत में रख देते हैं। दूसरे प्रकार का चावल अच्छा होता है।

चावल का व्यापार बहुत कम होता है। क्योंकि चीन, भारत, जापान इत्यादि प्रमुख देश इतने घने आबाद हैं कि उन्हीं के लिए पूरा नहीं होता। चावल बाहर भेजने वालों में क्रमशः बर्मा, इन्डोचीन तथा श्याम मुख्य हैं। सबसे अधिक चावल चीन, जापान, ब्रिटिश मलाया तथा पूर्वी द्वीपसमूह बाहर से मँगाते हैं। यद्यपि इन देशों में चावल की बहुत पैदावार होती है परन्तु आबादी घनी होने के कारण इन्हें चावल बाहर से मँगाना पड़ता है। यौरोप में जर्मनी और फ्रांस चावल मँगाने वालों में मुख्य हैं।

चावल का निर्यात (Export)

(हजार टनों में)

बर्मा	२२२४
इन्डोचीन	१३७५

श्याम	११८५
कोरिया	८०६
फारमोसा	३३२
इटली	१९८
संयुक्तराज्य अमेरिका	१०१
स्पेन	५४
ब्रिटिश गायना	२२

गन्ना संसार को भारत की देन है। मूलतः यह भारत का पौधा है। यहाँ से यह पौधा चीन को गया और वहाँ से अन्य देशों को, मुख्यतः अफ्रीका तथा अमरीका के समीपवर्ती द्वीपों को गया।

गन्ना (Sugar cane)

गन्ना एक प्रकार की घास है जिससे शक्कर तैयार होती है। इसकी लम्बाई १० फुट के लगभग होती है। प्रतिवर्ष फूलने के पूर्व ही गन्ना काट लिया जाता है किन्तु जड़ छोड़ दी जाती है, उसी जड़ से दूसरे वर्ष भी फसल तैयार हो सकती है। किन्तु कुछ देशों में प्रतिवर्ष

गन्ना बोया जाता है। गन्ने के छोटे छोटे टुकड़े काट कर खेत में रख दिये जाते हैं। कुछ गन्ने की जातियाँ ८ महीने में पक कर तैयार हो जाती हैं किन्तु अधिकतर १२ से २४ महीने तक लेती हैं।

गन्ने की फसल के लिए ५०° फै० से लेकर ८०° फै० तापक्रम (Temperature) आवश्यक है। गन्ने के लिए केवल अधिक गरमी ही नहीं अधिक वर्षा की भी आवश्यकता है। कम से कम ६०" वर्षा तो होनी ही चाहिए। जहाँ वर्षा कम होती है वहाँ सिंचाई से काम लिया जाता है। गन्ने के लिए पाला

अत्यन्त हानिकारक है अतएव ऐसे देशों में जहाँ पाला पड़ता है गन्ना उत्पन्न नहीं हो सकता। गन्ने की पैदावार के लिए साधारण भूमि उपयुक्त नहीं है। उसके लिए उर्वरा भूमि चाहिए। कोहरा गन्ने की फसल के लिए हानिकर है। गन्ने की खेती में मजदूरों की अधिक आवश्यकता होती है इस कारण इसकी पैदावार उन गरम देशों में होती है जहाँ औद्योगिक उन्नति नहीं हुई है और मजदूर सस्ते हैं। गन्ने की पैदावार अधिकतर उष्ण कटिबन्ध (Tropics) में ही होती है।

जब गन्ना बढ़ रहा हो तब जल की बहुत आवश्यकता होती है चाहे वह वर्षा से मिले (और अच्छा हो यदि सिंचाई से मिले)। नम उष्ण कटिबन्ध का जलवायु और तेज धूप यह गन्ने के लिए आदर्श जलवायु है। इससे गन्ना मोटा, लम्बा और अधिक शक्कर उत्पन्न करनेवाला होता है। जब गन्ना पक रहा हो तो मौसम सूखा होना चाहिए। यदि उस समय अधिक वर्षा हो जावे तो रस पतला पड़ जाता है और शक्कर कम बैठता है। यही कारण है कि गन्ना अमेजन नदी तथा कांगो नदी के उष्ण प्रदेश में उत्पन्न नहीं किया जा सकता जहाँ लगातार वर्षा होती रहती है। गन्ने की पैदावार उन्हीं प्रदेशों में होती है जहाँ कोहरा या पाला नहीं पड़ता, जहाँ कम से कम ५०" वर्षा है अथवा सिंचाई के साधन हैं और जहाँ कुछ समय तक सूखा मौसम रहता है और जहाँ गरमी खूब पड़ती है।

पहले संसार में क्यूबा सबसे अधिक गन्ना उत्पन्न करता था किन्तु अब संसार में सबसे अधिक गन्ना भारत में उत्पन्न होता है। भारत के बाद क्यूबा, जावा और हवाई द्वीप गन्ना उत्पन्न करने वालों में मुख्य हैं। मैक्सिको, मध्य अमेरिका, डच द्वीप समूह, फिलीपाइन्स, पोर्टोरिको, तथा संयुक्तराज्य अमेरिका में भी गन्ने की अच्छी पैदावार होती है। दक्षिण अमेरिका, ब्राजील, पीरू तथा अर्जेनटाइन में गन्ने की पैदावार बढ़ रही है। इनके अतिरिक्त फारमोसा, मॉरिशस तथा मिश्र और नैटाल में भी गन्ने की पैदावार तेजी से बढ़ती जा रही है।

चुकन्दर से भी शक्कर तैयार होती है। जब इंगलैंड का नैपोलियन से युद्ध आरम्भ हुआ तो मध्य यूरोप को शक्कर मिलना बंद हो गया। अतएव नैपोलियन ने मध्य यूरोप में चुकन्दर की अधिकाधिक खेती कराना आरम्भ किया। तब से बराबर गन्ने की शक्कर तथा चुकन्दर की शक्कर में प्रतिद्वन्दिता रही है, किन्तु गन्ने की शक्कर आज भी अधिकतर खाई जाती है।

चुकन्दर (Beet)

गन्ने और चुकन्दर के अतिरिक्त शक्कर की उत्पत्ति के और भी साधन हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और कनाडा में मैपल (maple) नाम की एक प्रकार की वनस्पति होती है जिसके रस से शक्कर बनाई जाती है। जब गन्ने और चुकन्दर

की शकर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में नहीं आती थी उस समय इस प्रकार की शकर का स्थानीय महत्व बहुत काफी था। परन्तु अब इसका महत्व बहुत कम हो गया है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये यह बिलकुल अनुपयुक्त है।

मैपल के अतिरिक्त एक प्रकार की और वनस्पति होती है जिसको सरगम (Sorghum) कहते हैं। इससे भी शकर निकाली जाती है। यह संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के दक्षिण, मध्य और दक्षिण पश्चिम के भागों में पाई जाती है। पहले इसका काफी महत्व था परन्तु अब गन्ने और चुकन्दर की शकर के आगे इसका भी महत्व बहुत कम हो गया है।

चुकन्दर शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate zone) की पैदावार है। इसके लिए मटियार भूमि अधिक उपयुक्त है। जिस जमीन पर चुकन्दर की पैदावार हो उसका ढालू होना जरूरी है जिससे पानी एक जगह पर न ठहर सके। चुकन्दर के लिए ६०° फै० से लेकर ७०° फै० तापक्रम (Temperature) लाभदायक होता है। यदि वर्ष भर वर्षा होती रहे तो भी फसल को हानि नहीं पहुँच सकती, किन्तु सितम्बर में सूर्य की तेज धूप तथा सूखी हवा अत्यन्त आवश्यक है। नहीं तो फसल पक नहीं सकती। चुकन्दर की खेती प्रतिवर्ष होती है और पौधे को अधिक बढ़ने नहीं दिया जाता। इसकी खेती में मेहनत बहुत करनी पड़ती है। इस कारण अधिकतर लड़के और स्त्रियाँ ही खेतों पर काम करने के लिए रक्खी जाती हैं, जिससे मजदूरी कम देनी पड़े। ऐसा अनुमान है कि एक एकड़ चुकन्दर के खेत पर मक्का के खेत से छः गुने कुली चाहिए।

चुकन्दर की फसल सितम्बर अथवा अक्टूबर में तैयार होती है। कुछ वर्ष पहले संसार में जर्मनी सबसे अधिक चुकन्दर पैदा करता था। किन्तु अब उसका स्थान सोवियट रूस ने ले लिया है। रूस के बाद क्रमशः जर्मनी, संयुक्तराज्य अमेरिका, फ्रांस, जैकोस्लावाकिया, पोलैंड, इटली, हालैंड और बेलजियम मुख्य चुकन्दर उत्पन्न करने वाले देश हैं। इंगलैंड में भी अब चुकन्दर की पैदावार बढ़ रही है।

गन्ने में चुकन्दर से कहीं अधिक शकर होती है। शकर बनाने में केवल सफेद चुकन्दर काम में आता है, लाल चुकन्दर में शकर बहुत कम होता है। गन्ने की शकर बनने में पहले गन्ने को कोल्हू अथवा मशीन से पेर कर रस निकाल लिया जाता है फिर चूना तथा अन्य पदार्थों को मिलाकर गरम किया जाता है। तदुपरान्त राब बना लेते हैं। राब से शीरे को अलग करके दानेदार शकर तैयार की जाती है। चुकन्दर को धोकर मशीन के द्वारा उसके छोटे छोटे टुकड़े कर लिए जाते हैं फिर उनको गरम पानी में डाला जाता है जिससे पानी में शकर का अंश घुल

जाता है। फिर रस की तरह ही उस मीठे पानी से शक्कर बना लेते हैं। चुकन्दर की पत्तियाँ तथा टहनियाँ पशुओं के खाने में आती हैं। चुकन्दर का लुग्दा भी जानवरों को खिलाई जाता है। चुकन्दर का खेती घने आबाद कृषि प्रधान देशों में अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि खेती में काम आने वाले पशुओं को सहज में ही चारा मिल जाता है।

गन्ना और चुकन्दर जिन देशों में उत्पन्न होता है वहाँ शक्कर भी तैयार की जाती है किन्तु अधिकांश चुकन्दर उत्पन्न करने वाले देशों में ही सारी शक्कर खर्च जाता है, बाहर भेजने के लिए कुछ नहीं बचती। केवल जैकोस्लोवाकिया ही चुकन्दर की चीनी विदेशों में भेजता है। कुछ चीनी पोलैंड से भी विदेशों को जाती है। शक्कर का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार अधिकतर गन्ने की शक्कर में ही होता है। १६२६ ई० के पूर्व भारत बहुत सी शक्कर बाहर से (विशेष कर जावा से) मँगाता था। किन्तु १६४८ में शक्कर के धन्धे को सरकार ने संरक्षण (Protection) प्रदान किया तब से शक्कर के कारखानों की भारत में इस तेजी से स्थापना हुई कि अब भारत अधिक शक्कर तैयार करता है किन्तु यहाँ से विदेशों को शक्कर नहीं जाती। गन्ने की शक्कर बाहर भेजने वाले में क्रमशः क्यूबा, जावा, हवाई, फिलीपाइन्स और पीरू मुख्य हैं। शक्कर बाहर से मँगाने वालों में संयुक्तराज्य अमरिका तथा ब्रिटेन मुख्य हैं। थोड़ी सी शक्कर जापान, चीन और भारत में भी आती है।

गन्ना और सफेद चुकन्दर के अतिरिक्त कनाडा और संयुक्तराज्य अमरिका में मैपिल (Maple tree) से, चीन तथा संयुक्तराज्य अमरिका में ज्वार बाजरा-मक्का सारगम (Sarghum) से, तथा गरम देशों (Tropics) में नारियल, साबू (Sago) तथा खजूर (Palmyra palm) से भी थोड़ी शक्कर उत्पन्न की जाती है।

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि क्यूबा, जावा, तथा हवाई द्वीपों में गन्ने का धंधा बहुत उन्नति कर गया है। हम यहाँ उसका संक्षिप्त विवरण देंगे।

शक्कर का धंधा (Sugar Industry)

क्यूबा (Cuba) की जलवायु गन्ने की पैदावार के लिए आदर्श है। हाँ, कभी कभी सूखा पड़ जाता है। गन्ने की फसल को तैयार होने में १२ से १५ महीने लगते हैं। और एक बार गन्ना बो देने से कई वर्षों तक लगातार पेड़ी से ही फसल पैदा की जाता है। हर साल फसल बोई नहीं जाती। भूमि उर्वरा है और बहुत सस्ता है। यही नहीं वहाँ भूमि की बहुतायत भी है। हाँ जनसंख्या कम है इस कारण मजदूरी ऊँची है।

जब से क्यूबा स्वतंत्र हुआ वहाँ शक्कर का धंधा बहुत उन्नति कर गया। अमरिकन पूँजीपतियों ने वहाँ शक्कर के कारखाने स्थापित किए हैं जिनमें अधिकतर

कच्ची शकर तैयार की जाती है और संयुक्त राज्य के फिलाडेलफिया, बालटिमार, न्यूयार्क, तथा न्यू आरलियन्स (New arleans) को भेजी जाती है जहाँ वे साफ की जाती है।

जावा में शकर का धन्धा डच पूँजीपतियों के हाथ में है। जावा में जनसंख्या घनी होने के कारण मजदूर सस्ते हैं। जलवायु गन्ने के लिए आदर्श है क्योंकि मानसून जलवायु में कुछ दिन सूखे मिल जाते हैं जो गन्ने के रस को गाढ़ा कर देते हैं। जावा की भूमि भी उपजाऊ है किन्तु वहाँ भूमि का मूल्य बहुत अधिक है और भारत की तरह हर साल फसल बोनी पड़ती है। इससे व्यय अधिक होता है। इस दोष को गन्ने की गहरी खेती (Intensive cultivation) करके दूर किया गया है और गन्ने की बड़ी मात्रा में खेती करने वालों और वैज्ञानिकों में गहरा सहयोग है जिसके फलस्वरूप जावा में प्रति एकड़ संसार में सब से अधिक गन्ना उत्पन्न होता है।

हवाई द्वीप की समुद्री जलवायु है वहाँ अधिक गरमी नहीं पड़ती। इस कारण गन्ने की फसल २० से २४ महीने तक ले लेता है। उत्तर पूर्व में वर्षा बहुत होती है किन्तु पहाड़ों के पीछे वर्षा कम होती है इस कारण सिंचाई के द्वारा गन्ने की खेती होती है। हवाई द्वीप की सारी शकर संयुक्तराज्य अमेरिका के प्रशान्त महासागरीय तट तथा अटलांटिक महासागर के तट पर स्थित शकर के कारखानों में शुद्ध होने के लिए भेज दी जाती हैं।

इनके अतिरिक्त पोर्टोरिको (Porto Rico), पीरू (दक्षिण अमेरिका में) ब्राजील और अरजनटाइन में शकर का धन्धा पनप उठा है और वहाँ गन्ना उत्पन्न किया जाता है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में दक्षिण लूनियाना (Louisiana) में गन्ना उत्पन्न होता है और शकर तैयार की जाती है। यद्यपि राष्ट्रीय दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है किन्तु संसार के उत्पादन की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण नहीं है।

इनके अतिरिक्त फिलीपाइन्स, फारमोसा, क्वीन्सलैन्ड (आस्ट्रेलिया में), नैटाल, मारिशस में भी गन्ना खूब पैदा होता है।

प्रति मनुष्य पीछे भिन्न भिन्न देशों में शकर की खपत

प्रति मनुष्य पीछे वार्षिक खपत

देश	पौंडा मे
आस्ट्रेलिया	१२८
हवाई	१२?
डेनमार्क	११२

संयुक्तराज्य अमेरिका	११२
क्यूबा	६७
ब्रिटेन	६२
कनाडा	६०
स्विट्जरलैंड	८६
इटली	२०
भारत तथा पाकिस्तान	२४
मिश्र	१६
चीन	६

गन्ने की पैदावार

(लाख क्विन्टल Quintals में)

भारत तथा पाकिस्तान	... ३५०	फारमोसा	. ८०
क्यूबा	... २७०	आस्ट्रेलिया	७०
जावा	१६०	अरजैनटाइन	.. ५०
ब्राजील	... १२०	पीरू	... ४४
फिलीपाइन्स	... ६०	मारिशस	... ३०
हवाई	... ८०	संयुक्तराज्य अमेरिका	.. ३०

संसार का कुल गन्ने की पैदावार १,८००, ००० ००० क्विन्टल कूता जाता है। इस युद्ध के पूर्व जावा का शक्कर का धन्धा बहुत अच्छी अवस्था में था किन्तु जापान के आक्रमण तथा युद्ध के उपरान्त राजनैतिक अशान्ति के कारण धन्धे को हानि पहुँचा है।

चुकन्दर की शक्कर की उत्पत्ति

(लाख क्विन्टल Quintals में)

सोवियत रूस	... २४०	इटली	४०
जरमनी	... २१०	पोलैंड	... ४०
फ्रांस	. ६०	संयुक्तराज्य अमेरिका	. १५०
चैकोस्लावाकिया	. . ५०	संसार का कुल उत्पत्ति	...१०५०
ब्रिटेन	... ५०		

सोवियत रूस सबसे अधिक चुकन्दर की चीनी उत्पन्न करता है। ग्राम कारेशिया, पश्चिमीय सायबेरिया, उत्तरी तथा मध्य रूस में चुकन्दर खूब पैदा होता है।

कुछ वर्षों पूर्व चुकन्दर की चीनी की संसार में प्राधान्य था किन्तु अब गन्ने की शक्कर की प्रधानता है, इसका कारण यह है कि गन्ने की खेती सरल है और एक एकड़ में पैदावार बहुत होती है। गरम देशों में जहाँ गन्ना उत्पन्न होता है मजदूरी सस्ती है। किन्तु योरोपीय देशों ने चुकन्दर की चीनी के धंधे को राजकीय प्रोत्साहन देकर उसको जीवित रक्खा है क्योंकि वे समझते हैं कि शक्कर के लिए विदेशों पर नितान्त निर्भर हो जाना उचित नहीं है।

मक्का शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone) के गरम प्रदेशों में उत्पन्न होने वाला अनाज है। संयुक्तराज्य अमेरिका इसका मुख्य उत्पादन-स्थान है।

मक्का

मक्का की अच्छी पैदावार के लिए रेत मिली हुई मटियार भूमि की आवश्यकता होती है। यदि भूमि ढालू हो तो और भी अच्छा, जिससे वर्षा का जल एक स्थान पर न ठहर सके। जिन प्रदेशों में ४ से ७ महीने तक गरमी रहती हो, तापक्रम (Temperature) ७०° फ़ै० से ८०° फ़ै० तक रहता हो, तथा वर्षा १५ इंच से ३० इंच तक होती हो, वे इसकी पैदावार के लिए उपयुक्त हैं। मक्का की फसल के लिए पाला बहुत हानिकारक है।

मक्का की पैदावार प्रति एकड़ गेहूँ से लगभग दुगनी होती है और इसमें शरीर को मोटा बना देने का आश्चर्यजनक गुण है। अतएव संसार में मक्का का उपयोग मुख्यतः पशु को खिलाने में होता है। हाँ निर्धन देशों में यह मनुष्य भोजन के उपयोग में भी लाया जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका संसार का तीन चौथाई मक्का से कुछ कम उत्पन्न करता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद क्रमशः अरजनटाइन, रूमानिया, सोवियट रूस, ब्राजील, यूगोस्लाविया, भारत, मिश्र, मेक्सिको, दक्षिण अफ्रीका और इटली मुख्य मक्का उत्पन्न करने वाले देश हैं। यद्यपि संयुक्त राज्य अमेरिका संसार में सबसे अधिक मक्का उत्पन्न करता है किन्तु वह मक्का बाहर नहीं भेजता। वहाँ मक्का पशुओं के खिलाने के काम आता है क्योंकि संयुक्त राज्य अमेरिका में असंख्य पशुओं को मोटा करके उन्हें मांस के लिए तैयार किया जाता है। संसार में अरजनटाइन तथा रूमानिया मक्का बाहर भेजने वालों में मुख्य हैं। थोड़ा मक्का यूगोस्लाविया तथा दक्षिण अफ्रीका से भी भेजा जाता है। इंगलैंड, फ्रांस और हालैंड अधिकांश मक्का अपने पशुओं को खिलाने के लिये लेते हैं।

मक्का का उपयोग शराब, स्टार्च तथा ग्लूकोज बनाने में भी होता है।

मक्का (Maize) की पैदावार
(लाख क्विन्टल में)

संयुक्तराज्य अमेरिका	६६५०	इटली	... २६०
अर्जेन्टाइन	.. १०६०	सोवियत रूस	... २५०
चीन	६१०	हंगरी	.. २३०
रूमानिया	६००	भारत	२१०
ब्राज़ील	.. ६००	डच पूर्वी द्वीप समूह	... २००
यूगोस्लाविया	.. ४००	मैक्सिको	... १७०
मंचूरिया	.. ३००	मिश्र	. १५०

संसार में मक्का की कुल उत्पत्ति लगभग १२,३०० लाख क्विन्टल है।

जौ — जौ गेहूँ की ही जाति का अनाज है, किन्तु यह अन्य अनाजों से अधिक कठोर होता है। उर्वरा भूमि में जौ की पैदावार खूब होती है परन्तु साधारण भूमि भी जौ की खेती के लिए उपयुक्त है। जौ गेहूँ से अधिक शीत को सहन कर सकता है। जौ की पैदावार उत्तरी ध्रुव (North pole) के समीप भी होती है। जौ को अधिक वर्षा की आवश्यकता नहीं होती, जहाँ वर्षा अधिक होती है वहाँ जौ उत्पन्न नहीं हो सकता।

संसार में क्रमशः सोवियत रूस, फिनलैंड, संयुक्तराज्य अमेरिका, जर्मनी, और भारत जौ उत्पन्न करने वाले देशों में मुख्य हैं। जौ केवल ठंडे ही देशों में उत्पन्न नहीं होता वरन् गरम देशों में भी उत्पन्न होता है। जहाँ एक ओर जौ की पैदावार नार्वे तथा स्वीडन में खूब होती है वहाँ दूसरी ओर नील नदी की घाटी, सूडान और भारत में भी इसकी खूब पैदावार होती है। प्रति एकड़ जौ की पैदावार और अनाजों से अधिक होती है। कुछ समय पूर्व जौ योरोपीय देशों का भोज्य पदार्थ था किन्तु अब स्कैन्डिनविया, जर्मनी, रूस, तथा दक्षिण पूर्व योरोप के देशों के अतिरिक्त कहीं इसका उपयोग खाने में नहीं होता। अधिकतर जौ का उपयोग पशुओं को खिलाने तथा बियर, माल्ट और ह्विस्की नामक शराब बनाने में होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा में जौ का उपयोग पशुओं को खिलाने के लिये होता है तथा इंगलैंड और जर्मनी में जौ का उपयोग शराब बनाने में होता है।

सबसे अधिक जौ योरोप में उत्पन्न होता है। सोवियत रूस संसार में सबसे अधिक जौ उत्पन्न करता है। रूस के अतिरिक्त संयुक्तराज्य अमेरिका, जर्मनी और भारत जौ उत्पन्न करने वाले देशों में मुख्य हैं। परन्तु *आस्ट्रिया, हंगरी, रूमानिया,* फ्रांस, इटली, चीन, नार्वे, स्वीडन, डैनमार्क, टर्की, ब्रिटेन, स्पेन, जापान और कोरिया में भी जौ की अच्छी पैदावार होती है।

पहुँचता है। प्रतिवर्ष केवल मलाया प्रायद्वीप ही दस लाख पौंड का अनन्नास ब्रिटेन को भेज देता है।

खजूर (Date) खजूर रेगिस्तान का फल है। यद्यपि यह फल रेगिस्तान में पाया जाता है, परन्तु खजूर के वृक्ष को जल की बहुत आवश्यकता होती है। मिश्र, सहारा और सुदान में खजूर बहुत होता है। लेकिन संसार में सबसे अधिक पैदावार इराक में होती है। प्रतिवर्ष इराक एक लाख पचास हजार टन के लगभग खजूर विदेशों को भेज देता है। यूफ्रैटीज नदी के किनारे डेढ़ सौ मील दोनों ओर तीन-तीन मील तक खजूर ही खजूर दिखाई देता है। इराक से खजूर एशिया के देशों तथा ब्रिटेन को भेजा जाता है। खजूर की अधिकतर पैदावार रेगिस्तान के जल-स्रोतों के पास ही होती है। इन जल-स्रोतों के समीप रहने वालों का यह जीवन आधार ही है।

शीतभण्डार रीति (Cold Storage System) के द्वारा अब फल दूर-दूर तक भेजे जा सकते हैं और सभ्य समाज में इनके खाने का रिवाज प्रत्येक देश में बढ़ रहा है। सूखे हुये मेवे तथा डिब्बों में बन्द किये हुये फलों का भी अब बहुत अधिक व्यापार होता है।

पेय पदार्थ (Beverages)

चाय (Tea) चाय एक प्रकार की झाड़ी की पत्ती है। सम्भवत इसका मूल निवासस्थान चीन व भारत है। चीन में बहुत समय से चाय का प्रचार था, परन्तु योरोप में इसका प्रवेश केवल अट्ठारहवीं शताब्दी में हुआ और तब से इसकी माँग बेहद बढ़ गई है। आज तो चाय सभ्य समाज का एक आवश्यक पेय पदार्थ बन गया है। संसार के प्रत्येक देश में चाय का प्रचार बढ़ रहा है।

चाय का पेड़ उष्ण कटिबंध (Tropics) में ही उत्पन्न हो सकता है। इसकी पैदावार के लिए गरम तथा नमी की अत्यन्त आवश्यकता होती है। यदि जल पेड़ की जड़ों के पास ठहर जावे तो चाय की पैदावार नहीं हो सकती। यह ढालू पृथ्वी पर ही अच्छी तरह उत्पन्न होता है। यही कारण है कि चाय के बाग अधिकतर पहाड़ी स्थानों में ही पाए जाते हैं। चाय की खेती के लिए कम से कम ५४° फै० तथा अधिक से अधिक ८०° फै० गरमी की आवश्यकता है। अच्छी पैदावार के लिए ६०" इंच वर्षा से कम न होनी चाहिए। हाँ यदि ढाल अच्छा हो तो अधिक वर्षा फसल के लिए लाभदायक होती है।

चाय की खेती में केवल जलवायु और भूमि ही महत्वपूर्ण नहीं है। कुलियों की समस्या इनसे भी अधिक महत्वपूर्ण है। अभी तक ऐसा कोई यंत्र नहीं बन सका जो

बिना पत्तियों को हानि पहुँचाये पत्तियों को तोड़ सकें। चाय की पत्तियाँ केवल हाथ से ही तोड़ी जा सकती हैं। पत्तियों को यदि सावधानी से न तोड़ा जाये तो अच्छी

चाय नहीं बन सकती। अतएव चाय की पत्तियों को तोड़ने का कार्य अधिकतर बच्चे और स्त्रियाँ ही करती हैं। खेती का कठिन कार्य पुरुष करते हैं। इस कारण चाय की खेती में बड़ी संख्या में कुलियों की आवश्यकता होती है। जिन देशों में कुली सस्ते दामों पर नहीं मिल सकते, वहाँ जलवायु के अनुकूल होने पर भी चाय उत्पन्न नहीं हो सकती।

चाय का पौधा लगभग पाँच वर्षों में चाय उत्पन्न करने योग्य हो जाता है। इसकी ऊँचाई अधिक होती है किन्तु इसको अधिक बढ़ने नहीं दिया जाता। साधारणतः इसकी ऊँचाई ३ फीट से लेकर ८ फीट तक होती है। अधिक पत्तियाँ उत्पन्न करने के लिये भूमि में नत्रजन (Nitrogen,) फासफोरिक एसिड और पोटाश का होना जरूरी है। अतएव चाय के बगीचों में प्रतिवर्ष खाद द्वारा इन आवश्यक पदार्थों की पूर्ति करनी पड़ती है। मानसून वनों से भरे हुए पहाड़ी ढाल चाय के लिए आदर्श भूमि है। क्योंकि वनों को साफ करके निकाली गई भूमि में वनस्पति का अंश बहुत होता है जो चाय की खेती के लिये उपयोगी है। पाला और ठंडक पत्तियों को हानि पहुँचाते हैं किन्तु वृक्ष नष्ट नहीं होता। चाय की खेती के लिये गर्मियों में वर्षा होना विशेष लाभदायक है।

वर्ष में पत्तियाँ चार बार चुनी जाती हैं। अधिकतर औरतें अपनी कोमल अँगुलियों से पत्तियाँ तोड़ती हैं। जितनी ही मुलायम पत्ती होगी उतनी ही अच्छी चाय बनेगी और सख्त पत्ता घटिया चाय बनाने के काम में आती है। जब पत्तियाँ इकट्ठा हो जाती हैं तो उन्हें धूप में सुखाया जाता है। पत्तियों के सूख जाने पर उन्हें

मशीन से रोल (Rolling) करते हैं। जिन बागों में मशीन से काम नहीं लिया जाता वहाँ पत्तियों को हाथ से ही मसलते हैं। जब पत्तियाँ मसल (Roll) ली जाती हैं तब उन्हें सीमन्ट के फर्श पर बिछा दिया जाता है और ऊपर से गीला कपड़ा डाल दिया जाता है। इसके उपरान्त ये नम पत्तियाँ फायरिंग मशीन के बड़े तख्तों पर फैला दी जाती हैं। गरम हवा के द्वारा पत्तियों को भूना और सुखाया जाता है जब तक वे बिलकुल सूखी और काली न हो जायें।

चाय दो प्रकार की होती हैं—काली चाय (Black Tea) और हरी चाय (Green Tea)। यह कोई भिन्न प्रकार की पत्तियाँ नहीं होतीं। केवल उनके तैयार करने में ही थोड़ा सा अन्तर होता है। हरी चाय बनाने के लिए पत्तियों को तोड़ने के उपरान्त बड़े बड़े कड़ाहों में भून लिया जाता है जिससे पत्तियों का रंग न बदल सके। भूने जाने के उपरान्त हरी चाय तैयार हो जाती है। भारत, सीलोन और डच पूर्वीय द्वीप समूह में काली चाय ही तैयार की जाती है। जापान में हरी चाय और चीन में दोनों प्रकार की चाय बनती है।

सम्भवतः चीन संसार में सबसे अधिक चाय उत्पन्न करता है किन्तु उसके विषय में कुछ ठीक ठीक ज्ञान नहीं है। ७० वर्ष पूर्व तो चीन ही संसार को चाय पिलाता था। किन्तु अब चीन बहुत कम चाय विदेशों को भेजता है क्योंकि अधिकांश चाय की खपत चीन में ही हो जाती है। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में भारत में चाय की पैदावार आरम्भ हुई और क्रमशः भारत चाय उत्पन्न करने वाले देशों में प्रमुख हो गया। चाय उत्पन्न करने वालों में क्रमशः निम्नलिखित देश मुख्य हैं—चीन, भारत, सीलोन, जापान, जावा, नैटाल, फिजी और फारमोसा। ब्राजील और कैलीफोर्निया में भी चाय की पैदावार होती है।

सबसे अधिक चाय भारत से विदेशों को जाती है। दूसरा नम्बर लंका का है। भारत और लंका मिलकर विदेशों में भेजी जाने वाली चाय की दो तिहाई चाय भेजते हैं। इनके उपरान्त जावा, चीन, जापान और फारमोसा चाय बाहर भेजने वालों में मुख्य हैं। चाय मँगाने वालों में क्रमशः ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, रूस और कनाडा मुख्य हैं। पिछले वर्षों में चाय की पैदावार बहुत बढ़ गई, इस कारण उसकी कीमत घट गई है। जहाँ अंग्रेज लोग बसे हैं वहाँ चाय की खपत बहुत है और जहाँ अंग्रेज लोग नहीं हैं वहाँ कहवा पिया जाता है।

संसार में चाय की पैदावार
(मैटरिक क्विन्टल में)

चीन
भारत तथा पाकिस्तान

लंका	११,२०,०००
डच पूर्वी द्वीप समूह	८,१६,०००
जापान	५,७५,०००

संसार में सबसे अधिक चाय चीन उत्पन्न करता है, किन्तु सबसे अधिक चाय भारत विदेशों को भेजता है।

चाय का निर्यात (Export)

(टनों में)

भारत तथा पाकिस्तान	१६६,०००
सीलोन (लंका)	११५,०००
चीन	७७,०००
डच पूर्वी द्वीप समूह	७७,०००
जापान	१२,०००
फारमोसा	६,०००

कहवा (Coffee) कहवा भी उष्ण कटिबन्ध (Tropics) की उपज है। कहवा चाय की ही भाँति पीने के काम में आता है। कहवा का वृक्ष गरमी और जल अधिक चाहता है। कहवे की अच्छी पैदावार के लिए ६०° फै० से ७०° फै० तक गरमी और ६०" से लेकर ७०" वर्षा होना आवश्यक है। किन्तु कहवे का पौधा आरम्भ में सूर्य की तेज धूप को सहन नहीं कर सकता। इस कारण रबर इत्यादि बड़े बड़े पेड़ों की छाया में इसको उत्पन्न करते हैं। पाला पड़ने से कहवे का वृक्ष नष्ट हो जाता है। इसी कारण इसकी पैदावार ठंडे देशों में नहीं हो सकती। कहवे का वृक्ष ३० से ४० वर्ष तक फसल देता रहता है, परन्तु ४० वर्ष के उपरान्त वृक्ष फसल देना बन्द कर देता है।

बाजार में जो कहवा मिलता है उसे बनाने में बहुत परिश्रम करना पड़ता है। कहवा का फल वृक्ष से तोड़ लिया जाता है। फल के गूदे में दो बीज होते हैं। मशीन के द्वारा इन बीजों को गूदे से निकाल लिया जाता है। फिर बीज सात दिन तक धूप में सुखाये जाते हैं। जब बीज बिलकुल सूख जाते हैं तब भूसी मशीन के द्वारा साफ की जाती है।

अरब में लाल सागर के समीप यमन का एक छोटा सा राज्य है। यहाँ का कहवा संसार में उत्तमता के लिये प्रसिद्ध है। यद्यपि यहाँ अधिक वर्षा नहीं होती पर मैदानों पर एक प्रकार की ओस पड़ती है तथा आकाश पर धुंधलापन रहता है जिससे सूर्य की तेज धूप पौधे को हानि नहीं पहुँचाती।

जौ (Barley) की पैदावार
(लाख टनों में)

संयुक्तराज्य अमेरिका	६६	स्पेन	२६
सोवियत रूस	५०	उत्तरी अफ्रीका	२१
जर्मनी	३२	रूमानिया	१५
जापान	२६	पोलैंड	१८
भारत तथा पाकिस्तान	२४	जैकोस्लावाकिया	१५
कनाडा	१८		

संसार में जौ की कुल उत्पत्ति ४०८ लाख टन के लगभग है।

ओट की पैदावार नम और ठंडे प्रदेशों में अधिक होता है। ओट के लिये गेहूँ की तरह ही उपजाऊ भूमि आवश्यक है। ओट का खेती में समय अधिक लगता है क्योंकि इसके पकने में देर लगती है। ओट की खेती उन देशों में अधिक महत्वपूर्ण है जहाँ

ओट (Oat)

वर्षा अधिक होती है और गरमी कम पड़ती है। यही कारण है कि ओट की पैदावार उत्तरी योरोप में अधिक होती है परन्तु भूमध्य सागर (Mediterranean Sea) के देश उसके लिये अनुपयुक्त हैं। यद्यपि ओट की अच्छी पैदावार के लिये उपजाऊ मिट्टी चाहिये किन्तु वह कम उपजाऊ भूमि पर भी पैदा किया जा सकता है।

यह अनाज मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त लाभदायक है परन्तु इस रहस्य को स्काटलैंड निवासियों के अतिरिक्त कोई नहीं जानता। अन्य देशों में ओट का उपयोग पशुओं, विशेष कर घोड़े के खिलाने में होता है। उपज की दृष्टि से योरप अत्यन्त महत्वपूर्ण है। संसार में रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका सब से अधिक ओट उत्पन्न करते हैं। इन दो देशों को छोड़ कर क्रमशः आयरलैंड, स्काटलैंड, स्वीडन, जर्मनी, पोलैंड, तथा फ्रांस ओट उत्पन्न करने वाले देशों में मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त अरजनटाइन, इटली, हंगरी, डैनमार्क, नार्वे, कनाडा, आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड में भी ओट का अच्छी पैदावार होती है। संयुक्तराज्य अमेरिका में ओट की इतनी अधिक पैदावार होने पर भी वह ओट को बाहर नहीं भेजता। ओट बाहर भेजने वालों में जर्मनी, अरजनटाइन और सोवियत रूस मुख्य हैं। अधिकतर ब्रिटेन, स्वीटजरलैंड, बेलजियम और इटली बाहर से ओट मँगाते हैं।

ओट (Oats) की पैदावार
(लाख टनों में)

संयुक्तराज्य अमेरिका	१८१
सोवियत रूस	११२

जर्मनी	६६
कनाडा	६०
फ्रांस	४८
पोलैंड	२८
ब्रिटेन	२३

संसार में ओट (Oats) की कुल पैदावार ६४४ लाख टन के लगभग है।

रई (Rye) रई गेहूँ और जौ की ही भाँति एक अनाज है जो भूमि गेहूँ की खेती के लिए उपयोगी न हो उस कम उर्वरा भूमि में रई की पैदावार खूब होती है। मध्य योरप रई का घर है किन्तु उत्तर में इसकी पैदावार बहुत कम हो जाती है क्योंकि रई का पौधा कोहरेयुक्त जलवायु में उत्पन्न नहीं हो सकता। रई यद्यपि देखने में गेहूँ की ही भाँति होती है परन्तु इसका मूल्य गेहूँ से बहुत कम है इस कारण उपजाऊ भूमि पर गेहूँ उत्पन्न किया जाता है और कम उपजाऊ भूमि पर रई की खेती होती है। रई गेहूँ से भी अधिक ठंडी जलवायु में पनप सकता है। किन्तु रई को जल की गेहूँ से अधिक आवश्यकता होती है।

रई योरोपीय देशों का मुख्य भोजन है। किन्तु इसका उपयोग केवल उन्हीं प्रदेशों में होता है जहाँ कि ग्रामीण जनता धनी नहीं है। रई की रोटी अधिकतर मध्य योरप, नार्वे, स्वीडन तथा रूस में खाई जाती है। संसार में सब से अधिक रई रूस में उत्पन्न होती है। रूस के बाद जर्मनी और पोलैंड रई उत्पन्न करने वाले देशों में मुख्य हैं। योरप के बाहर रई बहुत कम उत्पन्न होती है। केवल संयुक्तराज्य अमेरिका की रियासतों में ही थोड़ी रई उत्पन्न होती है। रई का भूसा पशुओं के खाने के काम में नहीं आता। हाँ रई का उपयोग पशुओं के खाने में अवश्य बढ़ रहा है। रई अधिकतर स्थानीय आवश्यकता को पूरी करने के लिए ही उत्पन्न की जाती है, अतएव इसका व्यापार नहीं होता।

रई (Rye) की पैदावार

(लाख टनों में)

सोवियट रूस	८२०	भारत तथा पाकिस्तान	२१०
संयुक्तराज्य अमेरिका	६७०	जापान	१८०
स्पेन	६४०	पोलैंड	१५०
जर्मनी	४३०	फ्रांस	१३०
टर्की	२३०	जैकोस्लावाकिया	१३०
कनाडा	२२०	इराक	११०

संसार में रुई की कुल उत्पत्ति ४५०० लाख टन से अधिक है।

ज्वार और बाजरा (Millets) ज्वार और बाजरा उष्ण कटिबन्ध (Tropics) में उत्पन्न होने वाले अनाज हैं। जहाँ थोड़ी सी भी वर्षा होती है वहाँ ये उत्पन्न किये जा सकते हैं। २० इंच वर्षा से जहाँ अधिक वर्षा होती है वहाँ इनकी पैदावार अधिक नहीं होती। अनुपजाऊ भूमि में भी यह उत्पन्न किये जा सकते हैं। बाजरा तो ज्वार से भी अधिक सूखे प्रदेशों की पैदावार है। बहुत से शुष्क प्रदेश जहाँ वर्षा बहुत कम होती है बाजरा के ही कारण आबाद हैं। ये दोनों अनाज भारत में बहुतायत से उत्पन्न होते हैं। यहाँ का यह मुख्य भोजन है। चीन, जापान, भारत और अफ्रीका में इनका उपयोग खाने के लिए होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में सारगम (Sorjhum) नामक अनाज जो ज्वार बाजरा के समान ही होता है पशुओं के लिये उत्पन्न किया जाता है। ज्वार और बाजरे को चारे के लिये भी उत्पन्न किया जाता है।

बकव्हीट (Buckwheat) बकव्हीट महत्वपूर्ण अनाज नहीं है। चाहे जितनी अनुपजाऊ भूमि हो और चाहे जितनी जलवायु प्रतिकूल हो बकव्हीट वहाँ भी उत्पन्न हो सकता है। इसकी फसल बहुत जल्दी पक जाती है। यही कारण है कि जहाँ दूसरा अनाज उत्पन्न नहीं हो सकता वहाँ बकव्हीट उत्पन्न होता है। बकव्हीट शरीर को शक्ति देने वाला अनाज है। इसका उपयोग पशुओं और मुर्गियों को खिलाने तथा रोटी बनाने में होता है। रूस, जापान, फ्रांस और संयुक्तराज्य अमेरिका इसको उत्पन्न करने वाले देशों में मुख्य हैं।

सागो (Sago) सागो इसी नाम के वृक्ष के गूदे से तैयार किया जाता है। सागो का वृक्ष ३० से ४० फीट तक ऊँचा होता है। यह वृक्ष नम और गरम प्रदेशों में बहुतायत से उत्पन्न होता है। इसकी खेती बहुत आसानी से की जा सकती है और एक वृक्ष से लगभग ६०० पौंड सागो प्राप्त होता है। जैसे ही वृक्षों में फूल आते हैं उनको काट लिया जाता है, उनके तनों को चीर कर उनके गूदे को निकाल लेते हैं। उस गूदे को सुखाकर पीस लेते हैं और फिर पानी में मिला देते हैं। इसके उपरान्त पानी को छान देते हैं और सागो तैयार हो जाता है। विदेशों को भेजने के लिये, सागो की छोटी-छोटी गोलियाँ, बनाते हैं जिन्हें हम साबूदाना कहते हैं। मलाया प्रायद्वीप तथा उसके समीपवर्ती द्वीप समूह तथा प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean) के द्वीपों में सागो बहुतायत से उत्पन्न होता है और हजारों आदमियों का यह मुख्य भोजन है।

अरारोट कतिपय गरम देशों के पौधों की जड़ों से प्राप्त किया जाता है। इसकी पैदावार मुख्यत पाश्चमी द्वीप समूह पूर्वी द्वीप समूह, नेटाल, क्वीन्सलैंड और बंगाल म होती है।

अरारोट (Arrowroot)

आलू

आलू का उपयोग सर्वव्यापी है। संयुक्तराज्य अमरिका तथा योरोप के देशों म ता यह भोजन का मुख्य अग हा है, किन्तु भारत तथा चीन जैसे गरम देशों म भी आलू बहुत खाया जाता है। आलू का मूलस्थान अमरिका है। मैक्सिको के पहाड़ी प्रदेशों म आज भा यह जगली अवस्था में पाया जाता है। भोजन में अनाज के उपरान्त यदि कोई महत्वपूर्ण वस्तु है ता वह आलू है, इसी कारण इसकी पैदावार प्रत्येक देश में हाती है।

आलू भिन्न जलवायु में उत्पन्न हो सकता है। जहाँ अलास्का के ठडे प्रदेश में आलू का अच्छी पैदावार होती है वहाँ भारत जैसे गरम देश म भी इसकी पैदावार हाती है। आलू की खेती के लिए गेहूँ उत्पन्न करने वाली भूमि अधिक उपयोगी है, परन्तु आलू म एक विशेषता है कि वह कम उपजाऊ भूमि पर भी उत्पन्न हो सकता है। हाँ आलू के लिए अधिक मटियार भूमि उपयोगी नहीं होता। आलू ठडे से ठडे अर्थात् ध्रुव प्रदेश (Polar Regions) और उष्ण प्रदेशों (Tropics) सभी म एक समान उत्पन्न होता है।

आलू की फसल और अनाजों की अपेक्षा बहुत अधिक होती है। प्रति एकड़ भूमि में आलू गेहूँ से पाँच गुना अधिक उत्पन्न होता है। किन्तु आलू की खेती में परिश्रम अधिक करना पड़ता है। साथ ही आलू में कीड़ा बहुत जल्दी लग जाता है। योरोपीय देशों म आलू एक महत्वपूर्ण भोज्य पदार्थ है। पूर्वीय जर्मनी और आयरलैंड के निवासियों का तो यह मुख्य भोजन है। भोजन के अतिरिक्त इसका उपयोग स्टार्च (Starch) तथा एलकोहल (Alcohol) बनाने म भी किया जाता है। भारत में आलू का उपयोग सब्जी के रूप में करते हैं। आलू का अब आटा भी तैयार किया जाने लगा है। भविष्य में सम्भव है कि आलू का आटा गेहूँ और चावल म प्रतिद्वंद्विता करने लगे। अभी तो जर्मनी का छोड़कर और कहीं इसकी रोटी नहीं बनाई जाती है। आयरलैंड में तो आलू ही मुख्य भोजन है, यदि किसी कारण वहाँ आलू की फसल नष्ट हो जाती है तो वहाँ अकाल पड़ जाता है।

आलू उत्पन्न करने वाले देशों म जर्मनी, आयरलैंड, आस्ट्रिया, हंगरी, रूस, फ्रांस, संयुक्तराज्य अमरिका, कनाडा, इंगलैंड, चेकोस्लोवाकिया और इटली मुख्य हैं। यद्यपि आलू बहुत से देशों म उत्पन्न हाता है किन्तु उसका व्यापार नहीं होता इसका कारण यह है कि वह भारी और सस्ता होता है।

शकरकद आलू से अधिक पौष्टिक तथा मीठा होता है। यह रेतीला भूमि म अच्छी तरह से उत्पन्न हो सकता है। शकरकन्द गरम प्रदेशों की पैदावार है। प्रति एकड़ शकरकद की भी पैदावार बहुत अधिक होती है। यदि शकरकद के आटे का भोजन में अधिकाधिक उपयोग होने लगे तो इसकी पैदावार बहुत आसानी से बढाई जा सकती है और यह एक महत्वपूर्ण भोज्य पदार्थ बन सकता है। अभी यह अधिक महत्वपूर्ण नहीं है और न इसका व्यापार ही होता है। सयुक्तराज्य अमेरिका के गरम भागों म, दक्षिण अमरिका, अफ्रीका तथा मलाया प्रायद्वीप में इसकी पैदावार अधिक होती है।

शकरकद (Sweet Potato)

केसावा आलू की भाँति उपजाऊ रेतीली भूमि पर उत्पन्न होता है। इसके लिए नमी की अधिक आवश्यकता होती है। यह उष्ण कटिबन्ध (Tropics) की पैदावार है। इसका पौधा झाड़ी की तरह होता है और लम्बाई ८ फीट के लगभग होती है। दक्षिण अमेरिका म भूमध्य रेखा के समीपवर्ती प्रदेश (Equatorial belt) पश्चिमी द्वीप समूह पश्चिमी अफ्रीका, पूर्वी द्वीप समूह और मलाया प्रायद्वीप मे निर्धन ग्रामीण जनता का यह मुख्य भोजन है। इस पौधे की जड़ को खाया जाता है। यह दो प्रकार का होता है—एक मीठा और दूसरा कड़वा। कड़वे में जहर होता है किन्तु वही मुख्य भोज्य पदार्थ है। विष को गरमी के द्वारा आसानी से उड़ा दिया जाता है इस कारण इसके खाने में कोई हानि नहीं होती।

केसावा (Cassava)

दालें अधिकतर उष्ण कटिबन्ध (Tropics) और शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone) में उत्पन्न होती हैं। जो लोग मांस नहीं खाते उनके लिये दालें मुख्य भोज्य पदार्थ हैं। विशेषकर मानसूनी प्रदेशों म तो दालें बहुत खाई जाती हैं।

दालें

मटर ठंडे जलवायु म खूब पैदा होती है। गरम देशों म यह गहूँ के साथ जाड़े म उत्पन्न की जाती है। बाकुला की फली उष्ण कटिबन्ध (Tropics) की पैदावार है। सोयाबीन (Soya Bean) जो मचूरिया और कोरिया में बहुतायत से पैदा की जाती है, बहुत तरह के जलवायु म उत्पन्न हो सकती है। यह फली अधिक वर्षा नहीं चाहती, सूखे प्रदेशों म यह भलीभाँति उत्पन्न की जाती है। पाला भी इसको हानि नहीं पहुँचा सकता। सयुक्तराज्य अमरिका म भी सोयाबीन बहुत उत्पन्न होती है। मचूरिया, कोरिया तथा सयुक्तराज्य अमरिका से सोयाबीन विदेशों को भेजी जाती है। भारत में भिन्न भिन्न जातियों की दालें उत्पन्न की जाती हैं। यहाँ दाल भोजन की आवश्यक वस्तु है। मूग, उर्द, अरहर, मटर, चना, मसूर इत्यादि यहाँ

अरारोट कतिपय गरम देशों के पौधों की जड़ों से प्राप्त किया जाता है। इसकी
अरारोट पैदावार मुख्यतः पश्चिमी द्वीप समूह, पूर्वी द्वीप समूह, नैटाल,
(Arrow root) क्वीन्सलैंड और बंगाल में होती है।

आलू आलू का उपयोग सर्वव्यापी है। संयुक्तराज्य अमेरिका तथा योरोप के देशों में तो यह भोजन का मुख्य अंग ही है, किन्तु भारत तथा चीन जैसे गरम देशों में भी आलू बहुत खाया जाता है। आलू का मूलस्थान अमेरिका है। मैक्सिको के पहाड़ी प्रदेशों में आज भी यह जंगली अवस्था में पाया जाता है। भोजन में अनाज के उपरान्त यदि कोई महत्वपूर्ण वस्तु है तो वह आलू है, इसी कारण इसकी पैदावार प्रत्येक देश में होती है।

आलू भिन्न जलवायु में उत्पन्न हो सकता है। जहाँ अलास्का के ठंडे प्रदेश में आलू की अच्छी पैदावार होती है वहाँ भारत जैसे गरम देश में भी इसकी पैदावार होती है। आलू की खेती के लिए गेहूँ उत्पन्न करने वाली भूमि अधिक उपयोगी है, परन्तु आलू में एक विशेषता है कि यह कम उपजाऊ भूमि पर भी उत्पन्न हो सकता है। हाँ आलू के लिए अधिक मटियार भूमि उपयोगी नहीं होता। आलू ठंडे से ठंडे अर्थात् ध्रुव प्रदेश (Polar Regions) और उष्ण प्रदेशों (Tropics) सभी में एक समान उत्पन्न होता है।

आलू की फसल और अनाजों की अपेक्षा बहुत अधिक होती है। प्रति एकड़ भूमि में आलू गेहूँ से पाँच गुना अधिक उत्पन्न होता है। किन्तु आलू की खेती में परिश्रम अधिक करना पड़ता है। साथ ही आलू में कीड़ा बहुत जल्दी लग जाता है। योरोपीय देशों में आलू एक महत्वपूर्ण भोज्य पदार्थ है। पूर्वीय जर्मनी और आयरलैंड के निवासियों का तो यह मुख्य भोजन है। भोजन के अतिरिक्त इसका उपयोग स्टार्च (Starch) तथा एलकोहल (Alcohol) बनाने में भी किया जाता है। भारत में आलू का उपयोग सब्जी के रूप में करते हैं। आलू का अब आटा भी तैयार किया जाने लगा है। भविष्य में सम्भव है कि आलू का आटा गेहूँ और चावल से प्रतिद्वन्द्विता करने लगे। अभी तो जर्मनी को छोड़कर और कहीं इसका आटा नहीं बनाया जाता है। आयरलैंड में तो आलू ही मुख्य भोजन है, यदि किसी कारण वहाँ आलू की फसल नष्ट हो जाता है तो वहाँ अकाल पड़ जाता है।

आलू उत्पन्न करने वाले देशों में जर्मनी, आयरलैंड, आस्ट्रिया, हंगरी, रूस, फ्रांस, संयुक्तराज्य अमेरिका, कनाडा, इंगलैंड, जेकोस्लावाकिया और इटली मुख्य हैं। यद्यपि आलू बहुत से देशों में उत्पन्न होता है किन्तु उसका व्यापार नहीं होता इसका कारण यह है कि वह भारी और सस्ता होता है।

शकरकद (Sweet Potato) — शकरकद आलू से अधिक पौष्टिक तथा मीठा होता है। यह रेतीली भूमि में अच्छी तरह से उत्पन्न हो सकता है। शकरकद गरम प्रदेशों की पैदावार है। प्रति एकड़ शकरकद की भी पैदावार बहुत अधिक होती है। यदि शकरकद के आटे या भोजन में अधिकाधिक उपयोग होने लगे तो इसकी पैदावार बहुत आसानी से बढ़ाई जा सकती है और यह एक महत्वपूर्ण भोज्य पदार्थ बन सकता है। अभी यह अधिक महत्वपूर्ण नहीं है और न इसका व्यापार ही होता है। संयुक्तराज्य अमेरिका के गरम भागों में, दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका तथा मलाया प्रायद्वीप में इसकी पैदावार अधिक होती है।

केसावा (Cassava) — केसावा आलू की भाँति उपजाऊ रेतीली भूमि पर उत्पन्न होता है। इसके लिए नमी की अधिक आवश्यकता होती है। यह उष्ण कटिबन्ध (Tropics) की पैदावार है। इसका पौधा झाड़ी की तरह होता है और लम्बाई ८ फीट के लगभग होती है। दक्षिण अमेरिका में भूमध्य रेखा के समीपवर्ती प्रदेश (Equatorial belt) पश्चिमी द्वीप समूह पश्चिमी अफ्रीका, पूर्वी द्वीप समूह और मलाया प्रायद्वीप में निर्धन ग्रामीण जनता का यह मुख्य भोजन है। इस पौधे की जड़ को खाया जाता है। यह दो प्रकार का होता है—एक मीठा और दूसरा कड़वा। कड़ुवे में जहर होता है किन्तु वही मुख्य भोज्य पदार्थ है। विष को गर्मी के द्वारा आसानी से उड़ा दिया जाता है इस कारण इसके खाने में कोई हानि नहीं होती।

दालें — दालें अधिकतर उष्ण कटिबन्ध (Tropics) और शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone) में उत्पन्न होती हैं। जो लोग मांस नहीं खाते उनके लिये दालें मुख्य भोज्य पदार्थ हैं। विशेषकर मानसूनी प्रदेशों में तो दालें बहुत खाई जाती हैं।

मटर ठंडे जलवायु में खूब पैदा होती है। गरम देशों में यह गेहूँ के साथ जाड़े में उत्पन्न की जाती है। बाकुला की फली उष्ण कटिबन्ध (Tropics) की पैदावार है। सोयाबीन (Soya Bean) जो मंचूरिया और कोरिया में बहुतायत से पैदा की जाती है, बहुत तरह के जलवायु में उत्पन्न हो सकती है। यह फली अधिक वर्षा नहीं चाहती, सूखे प्रदेशों में यह भलीभाँति उत्पन्न की जाती है। पाला भी इसको हानि नहीं पहुँचा सकता। संयुक्तराज्य अमेरिका में भी सोयाबीन बहुत उत्पन्न होता है। मंचूरिया, कोरिया तथा संयुक्तराज्य अमेरिका से सोयाबीन विदेशों को भेजी जाती है। भारत में भिन्न भिन्न जातियों की दालें उत्पन्न की जाती हैं। यहाँ दाल भोजन की आवश्यक वस्तु है। मूंग, उर्द, अरहर, मटर, चना, मसूर इत्यादि यहाँ

बड़ी मात्रा में उत्पन्न की जाती हैं, परन्तु इनका निर्यात अधिक नहीं होता क्योंकि देश के अन्दर ही इनकी खपत बहुत होती है। मसूर ठंडे देशों में अधिक उत्पन्न होता है। मानसूना देश घने आबाद हैं। यहाँ की जनसंख्या अधिकतर निर्धन है और यहाँ माँस भी कम मिलता है अस्तु भोजन में दालों का महत्वपूर्ण स्थान है।

साग सब्जी (Vegetables)

पिछले कुछ वर्षों में योरोप, अमेरिका तथा एशिया में सब्जी की माँग बेहद बढ़ गई है क्योंकि वैज्ञानिक अनुसंधान से पता लगा कि साग-सब्जी में विटामिन (Vitamins) बहुत अधिक मात्रा में मौजूद हैं और जो स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं। आँकड़े देखने से ज्ञात होता है, कि अनाज के उपरान्त सब्जी ही मुख्य भोज्य पदार्थ है। इन्गिल्स महोदय ने अनुमान लगाया है कि संसार में प्रतिवर्ष १, ४०, ००० डालर की सब्जी उत्पन्न की जाती है।

सब्जी अधिकतर शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone) की पैदावार है। इसका यह अर्थ नहीं है कि सब्जी गरम देशों में पैदा नहीं हो सकती या पैदा नहीं की जाती है। भेद इतना ही है कि शीतोष्ण कटिबन्ध में ठंडक अधिक होने के कारण यह आवश्यक नहीं है कि सब्जी बड़े बड़े शहरों के पास ही उत्पन्न की जावे। जहाँ की जलवायु तथा भूमि अनुकूल होती है वहाँ बड़ी मात्रा में सब्जी पैदा की जाती है और वहाँ से बड़े-बड़े शहरों को भेज दी जाती है। किन्तु गरम देशों में सब्जी जल्दी सड़ जाती है इस कारण अधिकतर सब्जी की खेती बड़े-बड़े शहरों के पास ही की जाती है जिससे उसे दूर भेजने की आवश्यकता न पड़े।

वास्तव में देखा जाये तो सब्जी की बड़ी मात्रा में खेती तो बड़े-बड़े शहरों के लिये ही होती है क्योंकि गाँवों में तो भूमि की कमी नहीं होती और किसान अपने घर के उद्यान में ही अपने लायक सब्जी उत्पन्न कर सकता है। यही कारण है कि योरोप तथा उत्तरी अमेरिका में ही सब्जी की खेती बहुत होती है क्योंकि वहाँ बहुत बड़े-बड़े औद्योगिक (Industrial) तथा व्यापारिक केन्द्र हैं।

सब्जी की खेती के लिये जलवायु तथा भूमि की अनुकूलता अत्यन्त आवश्यक है। सब्जी के लिये शीतोष्ण जलवायु बहुत अनुकूल पड़ती है किन्तु वह पाले को बिल्कुल सहन नहीं कर सकती। यही कारण है कि उत्तर अमेरिका तथा योरोप में सब्जी उत्पन्न करने वाले प्रदेश सब समुद्र के किनारे स्थित हैं। क्योंकि समुद्र पाले को रोकता है। संयुक्तराज्य अमेरिका का पूर्वीय समुद्र तट का प्रदेश, कैलिफोर्निया, फ्रांस, ब्रिटेनी (Brittany) का प्रदेश तथा इंगलैंड का दक्षिण-पश्चिमी समुद्र तट का प्रदेश अनन्त राशि में सब्जी उत्पन्न करते हैं।

सब्जी के लिये रेतीली दोमट मिट्टी उपयुक्त होता है क्योंकि रेत का अंश होने से मिट्टी शीघ्र गरम हो जाती है इससे फसल जल्दी तैयार हो जाती है। साथ ही रेतीली दोमट मिट्टी को जोतने में आसानी होती है। सब्जी के लिये भूमि की गहरी जुताई करने तथा उसमें अत्यधिक खाद डालने की आवश्यकता पड़ती है। सब्जी की खेती गहरी (Intensive cultivation) होती है। उसमें बहुत मजदूरों की जरूरत पड़ती है। साधारणतः तो औद्योगिक केन्द्रों (Industrial centres) में मजदूरी बहुत होती है किन्तु इन शहरों में स्त्रियों तथा बच्चों को कारखाने में काम कठिनाई से मिलता है अतएव वे सस्ती मजदूरी पर इन खेतों पर काम करते हैं।

जैसे जैसे गमनागमन के साधनों की उन्नति होती है वैसे ही वैसे सब्जी की खेती बड़े बड़े शहरों से दूर अनुकूल जलवायु तथा उपयुक्त भूमि पर अधिकाधिक होती जा रही है। संयुक्तराज्य अमेरिका में सब्जी का ऐक्सप्रेस तेजी से ताजी सब्जी औद्योगिक केन्द्रों में सुबह होते ही पहुँचा देता है। इन सब्जी की स्पेशलों के लिए पैसेंजर ऐक्सप्रेसों तक को खड़े रहना पड़ता है और सब्जी की ऐक्सप्रेसें तेजी से निकल जाती हैं। शीत भण्डार रीति (Cold Storage) तथा सब्जी को सुरक्षित रखने के अन्य तरीकों की उन्नति होने के कारण अब सब्जी हर मौसम में खाई जा सकती है। अतएव उसका प्रचार बेहद बढ़ गया है।

फल

शीतोष्ण कटिबन्ध के फल

सेव (Apple) यह फल शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone) में बहुत उत्पन्न होता है। सेव का वृक्ष बड़ा होता है और एक फसल में एक से डेढ़ मन तक फल उत्पन्न करता है। यह ऐसा फल है जो बहुत ऊँचे पर तथा ६५° उत्तर अक्षांश रेखाओं (Latitudes) तक उत्पन्न किया जाता है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में सेव बहुतायत से उत्पन्न होता है। वैसे तो ऐसा कोई रियासत नहीं जिसमें सेव की पैदावार न होती हो किन्तु न्यू यार्क पैनसलवेनिया, ओहियो तथा मिचिगन रियासत सेव उत्पन्न करने के लिये विशेष प्रसिद्ध हैं। संयुक्तराज्य के पश्चिमी भाग कैलीफोर्निया में भी सेव बहुतायत से उत्पन्न होता है।

कनाडा में भी सेव बहुत उत्पन्न होता है। नोवास्कोशिया (Nova Scotia) तथा ईरी और आन्टैरियो झीलों के समीपवर्ती मैदान में भी सेव उत्पन्न करते हैं। कनाडा में पश्चिम की ओर राकी पर्वतमाला में भी सेव बहुत उत्पन्न होता है। ब्रिटिश कोलम्बिया तो सेव का घर है। कनाडा प्रतिवर्ष बहुत सा सेव इंगलैंड को भेजता है।

सेब का मूल-स्थान यूरेशिया है। स्पेन से लेकर जापान तक सेब उत्पन्न होता है। इंगलैंड, स्विट्जरलैंड, जर्मनी का दक्षिणी भाग तथा आस्ट्रिया का पहाड़ी प्रान्त सेब उत्पन्न करने के लिए प्रसिद्ध हैं। बर्लिन, पैरिस और लंदन सेब की योरोप में मुख्य मंडियाँ हैं जहां आस पास के प्रदेशों से सेब आता है।

एशिया में जापान, चीन और कोरिया में सेब बहुत उत्पन्न होता है। इनके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, चिली (Chile) और टस्मैनिया में भी सेब की पैदावार बहुत होती है। भारत में भी सेब, काश्मीर तथा हिमालय के पहाड़ी प्रदेश में कहीं-कहीं थोड़ी मात्रा में उत्पन्न होता है। सेब यदि सावधानी से रक्खा जाय तो बहुत दिनों तक खराब नहीं होता। संयुक्तराज्य अमरिका तथा कनाडा से बहुत सारा सब योरोपीय देशों को जाता है।

नीबू (Lemon) नारंगी (Oranges)

नारंगी और नीबू उष्ण (Tropics) तथा गरम शीतोष्ण कटिबंध में उत्पन्न होने वाले फल हैं। नारंगी का मूलस्थान चीन है परन्तु भारत में भी यह बहुत समय से उत्पन्न किया जा रहा है। पन्द्रहवीं शताब्दी में यह पौधा योरोप में पहुँचा और वहाँ से इसको अमरिका ले जाया गया। नारंगी के लिए पाला हानिकारक है। नारंगी की फसल बहुधा बहुत अच्छी होती है। इस कारण थोड़ी सी भूमि पर भी बहुत सी फसल उत्पन्न की जा सकती है। लेकिन नारंगी का व्यापार इतना अधिक नहीं होता जितना और फलों का। क्योंकि यह शीघ्र खराब हो जाती है तथा इसको दूर भेजने में अड़चन होती है। भूमध्य सागर (Mediterranean Sea) के देशों में नारंगी खूब ही उत्पन्न होती है। योरोप में स्पेन, इटली, सिसली, माल्टा, फ्रांस, तथा ग्रीस में इसकी अधिक पैदावार होती है। दक्षिण अमरिका में ब्राज़ील और परेग्वे (Paraguay) में इसकी बहुत पैदावार होती है किन्तु इनका व्यापार नहीं होता। संयुक्त राज्य अमेरिका का फ्लारिडा (Florida) नामक रियासत बहुत नारंगियाँ उत्पन्न करती है। एक प्रकार से यों कहना चाहिए कि यहाँ से ही नारंगियाँ सारे देश को भेजी जाती हैं। पश्चिमी द्वीप समूह (West Indies) में भी नारंगियों की बहुत पैदावार होती है, किन्तु विदेशों को यहाँ से नारंगियाँ नहीं भेजी जातीं। कैलीफोर्निया की रियासत में भी नीबू और नारंगी के बहुत बाग हैं। एशिया में नारंगी की बहुत कम पैदावार होती है। चीन, जापान और भारत में ही थोड़ी सी नारंगी उत्पन्न होती है।

नारंगी उष्ण कटिबंध तथा भूमध्य सागर की जलवायु में खूब पैदा होती है।[1] ब्राज़ील और परेग्वे (Paraguay) में नारंगी के लिए प्राकृतिक स्थिति इतनी अनुकूल है कि नारंगी के जंगली पेड़ बहुत मिलते हैं और नारंगी जंगली अवस्था

में उत्पन्न होती है। भूमध्य सागर के देशों में नारंगी का धंधा बहुत उन्नत अवस्था में है क्योंकि वहाँ पाला नहीं पड़ता और गमनागमन के साधन उपलब्ध होने से शीघ्र ही योरोपीय देशों को भेजा जा सकता है।

भूमध्य सागर के देश

स्पेन संसार में सबसे अधिक नारंगियाँ विदेशों को भेजता है। स्पेन का भूमध्य सागर (Mediterranean Sea) का प्रदेश वैलेंशिया नारंगी उत्पन्न करने में मुख्य है। स्पेन अधिकतर अपनी नारंगी ब्रिटेन और जर्मनी को भेजता है। यों थोड़ी नारंगी फ्रांस, बलजियम, डेनमार्क तथा नार्वे स्वीडन को भी जाती हैं। स्पेन की नारंगी की कुल पैदावार ४ करोड़ बाक्सों (७० पौंड प्रति बाक्स) के लगभग प्रति वर्ष होती है।

इटली का नारंगी उत्पन्न करने वालों में छठा नम्बर है किन्तु नारंगी विदेशों को भेजने में इटली दूसरा महत्वपूर्ण देश है। इटली की नारंगी की पैदावार प्रति वर्ष एक करोड़ बाक्स (७० पौंड प्रति बाक्स) के लगभग होती है जिसका ४० प्रति शत विदेशों को भेज दिया जाता है।

पिछले दिनों में जब से यहूदी पैलेस्टाइन में जाकर बसे हैं उन्होंने वैज्ञानिक ढंग से नारंगी के बड़े बड़े बाग लगाये हैं, इस कारण पैलेस्टाइन भी प्रति वर्ष बहुत सी नारंगी विदेशों को भेज देता है। यहाँ तक कि वह इटली से भी अधिक नारंगी बाहर भेजता है। १९३९ में तो पैलेस्टाइन से १२५००,००० बाक्स नारंगी विदेशों को भेजी गई।

इनके अतिरिक्त अलजीरिया, सीरिया, मिश्र, ग्रीस, ट्यूनीसिया, टर्की और साइप्रस में भी नारंगी अधिक उत्पन्न होती है किन्तु वे ऊपर लिखे देशों के समान महत्वपूर्ण नहीं हैं।

दक्षिण अफ्रीका और आस्ट्रेलिया

पिछले कुछ वर्षों में दक्षिण अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में भी नारंगी की पैदावार खूब होने लगी है। दक्षिण अफ्रीका से चालीस लाख बाक्स प्रतिवर्ष ब्रिटेन को भेजे जाते हैं। आस्ट्रेलिया से नारंगी अधिकतर न्यूजीलैंड को जाती है।

दक्षिण अमेरिका

दक्षिण अमरिका के अन्य राज्यों में नारंगी देश की खपत के योग्य उत्पन्न होती है किन्तु ब्राजील से नारंगी बाहर भी बहुत भेजी जाती है। ब्राजील में प्रति वर्ष लगभग ६० लाख बाक्स नारंगी बाहर भेजी जाती है। यहाँ 'नेवल' नामक जाड़े की ऋतु की नारंगी उत्पन्न की जाती है। ब्राजील की नारंगी अब स्पेन और संयुक्त राज्य अमेरिका की नारंगी से होड़ करने लगी है।

चीन सम्भवत चीन नारगी का मूल स्थान है और वहाँ नारगी उत्पन्न भी बहुत होती है किन्तु देश में ही उसकी खपत हो जाती है बाहर नहीं भेजी जाती।

जापान जापान का नारगी उत्पन्न करने वाले देशों में चौथा स्थान है। उसका वार्षिक पैदावार १२ ०००,००० बाक्स है। जापान का नारगी अधिकतर जापान, कोरिया, मचूरिया और चीन में ही खप जाती है फिर भी सयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा को भी काफी नारगी भेजी जाती है।

सयुक्त राज्य अमेरिका सयुक्त राज्य अमेरिका ससार म सब से अधिक नारगी उत्पन्न करता है। अधिकाश नारगी कैलीफोर्निया और फ्लौरिडा (Florida) में उत्पन्न होती है। इनके अतिरिक्त टैक्सास (Texas) ऐरिजोन (Arizona) तथा लूसियाना (Louisiana) मे भी नारगी उत्पन्न होती है।

नीबू नीबू के लिए उत्तम भूमि, यथेष्ट जल, धूप तथा सम शीतोष्ण (Mild) जलवायु उपयुक्त है। इसको पाला और कीड़े से बहुत हानि पहुँचती है। कैलीफोर्निया म तो बागों म गरमी पहुँचाई जाती है जिससे पाला हानि न पहुँचा सके और कीड़े से वृक्षों की रक्षा का विशेष उपाय किया जाता है।

नीबू अधिकतर सिसली, इटली, स्पेन, पोर्तुगाल, कैलीफोर्निया, फ्लौरिडा और इंगलैंड तथा क्वीसलैंड से बाहर भेजा जाता है। मोटे छिलके वाला, चकोतरा (Citron) भूमध्यसागर के समीपवर्ती प्रदेशों, जापान और भारत से बाहर भेजा जाता है। क्रमश इसकी पैदावार घट रही है और नीबू इसका स्थान ले रहा है।

ससार में सबसे अधिक नीबू इटली में (१ करोड़ २० लाख बाक्स) उत्पन्न होता है। इसकी ६० % पैदावार इटली के सिसली द्वीप म होता है। नीबू उत्पन्न करने में दूसरा नम्बर सयुक्त राज्य अमेरिका का है जहाँ लगभग एक करोड़ बाक्स (एक बक्स में ७० पौंड नीबू होते हैं) नीबू वार्षिक उत्पन्न होते हैं। सयुक्त राज्य अमेरिका का अधिकाश नीबू कैलीफोर्निया में उत्पन्न होता है। तीसरा नम्बर स्पेन का है। जहाँ ५ लाख बाक्स नीबू उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त भूमध्य सागर (Mediterranean Sea) के समीपवर्ती सब प्रदेशों में नीबू उत्पन्न होते हैं मुख्यत मिस्र में। इसके अतिरिक्त दक्षिण अमेरिका, फ्लौरिडा, आस्ट्रेलिया तथा मैक्सिको में भी नीबू की अच्छी पैदावार होती है। इटली, कैल्

फार्निया तथा स्पेन के अतिरिक्त थोड़ा सा नीबू पैलेस्टाइन, सीरिया और मैक्सिको से भी विदेशों को भेजा जाता है किन्तु पहले तीन देश ही संसार को मुख्यतः नीबू देते हैं।

नाशपाती (Pears) (Stone Fruits), बेर (Plums), खुबानी (Apricots), आड़ू (Peaches) शीतोष्ण प्रदेशों के फल हैं और ब्रिटिश कालम्बिया, कैलीफोर्निया, टसमानिया, युगोस्लाविया, आस्ट्रिया, दक्षिण अफ्रीका, ओनटैरियो (Ontario) और फ्रांस में इनकी पैदावार अधिक होती है। अंजीर (Fig) नारंगी की तरह पाले से नष्ट नहीं हो जाता और इसका फल आसानी से भेजा जा सकता है। अधिकतर इसे सुखा कर भेजते हैं। स्पेन, इटली, एशियामाइनर, ग्रीस, अलजीरिया, और टर्की से यह अधिकतर विदेशों को भेजा जाता है। स्मर्ना अंजीर के व्यापार का मुख्य केन्द्र है। संयुक्त राज्य अमरिका में कैलीफोर्निया और टैक्सास में भी अंजीर बहुत पैदा होता है। अंगूर अधिकतर शराब बनाने के काम आता है किन्तु जिन प्रदेशों में शराब बनाने के योग्य नहीं होता वहाँ से वह फल के रूप में बाहर भेज दिया जाता है। अंगूर अफ्रीका के केप आव गुड होप प्रान्त, स्पेन, तथा पोर्तुगाल से अधिकतर बाहर भेजा जाता है। पाकिस्तान में भी अंगूर की थोड़ी पैदावार होती है। सूखे हुए अंगूर अर्थात् किशमिश और मुनक्का (Currants and Raisins) अधिकतर स्पेन, टर्की, आस्ट्रेलिया, ग्रीस, कैलीफोर्निया, भारत, साइप्रस (Cyprus) और अफ्रीका के केप प्रान्त (Cape of Good Hope Province) से बाहर भेजे जाते हैं। बादाम (Almonds) अधिकतर, स्पेन, मरक्को, इटली, पोर्टुगाल, फ्रांस, कैलीफोर्निया और पैलेस्टाइन से बाहर भेजा जाता है। चेस्टनट (Chestnuts), वालनट, (Walnuts) काला शहतूत (Black Mulberry), पौमग्रेनेट (Pomegranate) पिश्ता (Pistachio nut) और जैतून (Olive) का फल अधिकतर दक्षिण योरोप और उत्तर अफ्रीका में उत्पन्न होता है। जैतून का फल खाया जाता है और उसका तेल निकाला जाता है। यह स्पेन, इटली और पोर्तुगाल में बहुतायत से उत्पन्न होता है। संसार का ८० % जैतून इन्हीं तीनों देशों में होता है।

आजकल सूखे हुए फलों का व्यापार बहुत बढ़ गया है। प्रत्येक देश में सूखे हुए फलों की खपत बढ़ती जाती है। संयुक्त राज्य की कैलीफोर्निया रियासत सूखे फल बाहर भेजने में सबसे चढ़ी बढ़ी है। भूमध्य सागर (Mediterranean Sea) के समीपवर्ती देश बहुत राशि में फल सुखा कर विदेशों को भेज देते हैं। फलों को वैज्ञानिक ढंग से सुखाने के लिए बड़े बड़े कारखाने स्थापित किये गए हैं। किशमिश मुनक्का सूर्य की गरमी में ही सुखाए जाते हैं।

गरम देशों के फल

केला (Banana) केला उष्ण कटिबन्ध (Tropics) का मुख्य फल है। जहाँ अधिक गर्मी और वर्षा होती है वहाँ केला उत्पन्न हो सकता है। भूमध्य रेखा (Equatorial) के घने जंगलों में केले की पैदावर बहुतायत से होती है। केले की खेती में बहुत कम परिश्रम करना पड़ता है। एक बार केले को लगा देने से ही केले की फसल तैयार हो जाती है। जब तक केले में पहली बार फल आते हैं तब तक उसके समीप और पौधे फल देने के लिए तैयार हो जाते हैं। भूमध्य रेखा के प्रदेश (Equatorial Belt) का यह मुख्य भोज्य पदार्थ है। गरीब लोग इसे अपने झोपड़े के पास बड़ी ही आसानी से उत्पन्न कर लेते हैं और इसके फल पर निर्वाह करते हैं। मध्य अफ्रीका तथा कांगो नदी के प्रदेश में लाखों हब्शी जाति के मनुष्यों का एकमात्र यही भोजन है। पूर्वी द्वीप समूह (East Indies), दक्षिण चीन, भारत, पश्चिमी द्वीप समूह (West Indies), मध्य अमेरिका, मैक्सिको और फिलीपाइन्स में इसकी बहुत अधिक पैदावार होती है।

यद्यपि केला योरप तथा उत्तरीय अमेरिका को इन देशों से भेजा जाता है परन्तु शीघ्र ही खराब हो जाने के कारण इसका व्यापार अधिक नहीं बढ़ सका। कुछ वर्षों से केले का आटा भी बनाया जाने लगा है। यदि भविष्य में केले का आटा खाया जाने लगा तो इसकी खेती बहुत बढ़ जायगी क्योंकि अभी तो केला केवल स्थानीय माँग के लिए ही उत्पन्न किया जाता है। सम्भव है कि भविष्य में यह फल घनी आबादी वाले देशों में भोजन का काम दे। किन्तु केले का आटा शीघ्र ही व्यापारिक वस्तु नहीं बन सकती, क्योंकि मनुष्य भोजन में शीघ्र ही परिवर्तन नहीं कर सकता।

अनन्नास (Pine Apple) अनन्नास (Pine Apple) के लिए बहुत अधिक गर्मी की आवश्यकता होती है। यदि जाड़े में पाला पड़ता हो तो यह नष्ट हो जाता है। अनन्नास की योरप में बहुत माँग है। ब्राज़ील अनन्नास का मूल स्थान है जहाँ समुद्र के किनारे रेतीली भूमि में यह अब भी जंगली अवस्था में उत्पन्न होता है। किन्तु अब पश्चिमी द्वीप समूह (West Indies) फ्लौरिडा, नैटाल, क्वीन्सलैंड, हवाई द्वीप (Hawaii Island) तथा मलाया प्रायद्वीप में यह बहुतायत से उत्पन्न किया जाता है। अनन्नास गोल-गोल टुकड़े काट कर शक्कर के रस में रख कर टीन के डब्बों में बंद कर दिये जाते हैं। इस प्रकार अनन्नास संसार के प्रत्येक देश में

ब्राजील कहवा उत्पन्न करने वाले देशों में प्रमुख है। संसार का दो तिहाई कहवा ब्राजील में ही उत्पन्न होता है। साओ-पोलो (Sao Polo) रायो डी जैनिरो (Rio-De Janeiro) और सैन्टो (Santo) ब्राजील में कहवा को उत्पन्न करने वाली मुख्य रियासतें हैं। यद्यपि ब्राजील संसार में सबसे अधिक कहवा उत्पन्न करता है किन्तु वहाँ का कहवा घटिया होता है। ब्राजील में लगभग २ अरब ७५ करोड़ के कहवे के वृक्ष हैं। दक्षिण अमेरिका में ब्राजील के अतिरिक्त वैनीजुला (Venezuela) कोलम्बिया तथा इक्वेडर (Equador) राज्यों में भी कहवा बहुत उत्पन्न होता है। पश्चिमी द्वीप समूह (West Indies) के प्रत्येक द्वीप में कहवा उत्पन्न हो सकता है परन्तु हेटी (Haiti) का द्वीप मुख्य है। यहाँ से बहुत सा कहवा बाहर भेजा जाता है। जमायका (Jamaica) में सबसे कीमती कहवा जिसे नीले पर्वत

का कहवा (Blue Mountain Coffee) कहते हैं, उत्पन्न किया जाता है। इनके अतिरिक्त मैक्सिको, डच पूर्वी द्वीप समूह (Dutch East Indies) तथा भारत कहवा उत्पन्न करने वालों में मुख्य हैं। आरम्भ में लंका में भी कहवा के बहुत बाग लगाये गये थे किन्तु एक बीमारी के कारण कहवा के बाग नष्ट हो गये तब बाग के मालिकों ने कहवा के स्थान पर चाय और सिनकोना (कुनैन) के बाग लगाना आरम्भ किये।

कहवा लेने वालों में संयुक्त राज्य अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी, इटली, तथा अन्य योरोपीय देश मुख्य हैं। जितना कहवा उत्पन्न करने वाले देशों से बाहर भेजा जाता है उसका ७०% ऊपर लिखे देश मँगाते हैं। इनमें संयुक्त राज्य अमेरिका ही लगभग ५०% कहवा लेता है।

यह तो हम ऊपर लिख चुके हैं कि ब्राजील संसार का दो तिहाई कहवा उत्पन्न करता है। कहवे का धंधा इतना अधिक लाभदायक सिद्ध हुआ कि ब्राज़ील में अत्यधिक वृक्ष लगा दिये गये। इसका परिणाम यह हुआ कि कहवा बहुत अधिक उत्पन्न होने लगा और उसका मूल्य तेजी से गिरने लगा। ब्राज़ील सरकार बहुधा कहवे के बागों से कहवा खरीद कर अपने भंडारों में भर लेती थी और सरकार को वह कहवा नष्ट कर देना पड़ता था। ब्राजील सरकार को इस प्रकार करोड़ों डालरों का घाटा सहना पड़ा परन्तु फिर भी सरकार कहवे के मूल्य को ऊँचा करने में अधिक सफल नहीं हुई। यह इस बात का उदाहरण है कि किसी भी देश को एक धंधे पर इतना अधिक निर्भर नहीं रहना चाहिए।

संसार में कहवा की पैदावार

(क्विन्टल में)

ब्राजील	१२५,००,०००
कोलम्बिया	२६,७०,०००
डच पूर्वी द्वीप समूह	१०,७१,०००
मैक्सिको	५००,०००
वैनीज़ुला	६५०,०००
सालवेडर	५४०,०००
ग्वाटेमाला	५५०,०००
ब्रिटिश पूर्वी अफ्रीका	३८५,०००
हैटी (Haiti)	२५०,०००
क्यूबा	३२०,०००
कास्टारिका (Costa Rica)	२४०,०००
मैडेगास्कर	३००,०००
बैल्जियन कांगो	२३०,०००

संसार में कहवा की उत्पत्ति २ करोड़ २० लाख क्विन्टल है।

कोको (Cocoa) कोको के वृक्ष का मूल निवास स्थान अमेरिका के गरम प्रदेश हैं। मैक्सिको तथा अमेजन (Amazon River) के बेसिन में यह वृक्ष जंगली अवस्था में पाया जाता है।

यद्यपि यह वृक्ष कहवा से अधिक गरमी चाहता है फिर भी सूर्य की तेज धूप सहन नहीं कर सकता, इस कारण इसको ऊँचे वृक्षों की छाया में उत्पन्न किया जाता है। कोको की खेती के लिये उपजाऊ भूमि तथा अधिक जल आवश्यक है, यही कारण है कि उसकी पैदावार उष्ण कटिबन्ध (Tropics) के मैदानों में जहाँ

वर्षा अधिक हो, दृष्टिगोचर होती है। काको का फल बहुत बड़ा होता है। इसके अन्दर ३० से ६० तक बीज निकलते हैं। यदि हवा तेज चले तो फल कच्चा अवस्था म ही गिर पड़ता है, इस कारण जिन देशों म आँधी अधिक आता है वहाँ इसकी पैदावार सफलतापूर्वक नहीं हो सकती। ३ या ४ वर्ष की अवस्था में वृक्ष फल देने लगता है और ४० वर्ष तक फल देता रहता है। काको क नाम से जो चाय बाजार म बिकती है वह इस फल के बीज होते हैं। फल क गूदे की टिकियाँ तैयार की जाती हैं जिन्हें चाकलेट (Chocolate) कहते हैं। काको उत्पन्न करने वाले देशों में अफ्रीका का गोल्ड कोस्ट (Gold Coast), ब्राजील, इक्वेडर (Equador), कालम्बिया और पश्चिमी द्वीप समूह (West Indies) मुख्य हैं। इन देशों की जलवायु कोको क लिए अनुकूल है क्योंकि यह उष्ण कटिबन्ध का वह भाग है जहाँ हवा तेजी से नहीं बहती। लेकिन इन देशों में एक बड़ी कठिनाई यह है कि यहाँ ठंडे देशों क मनुष्य आकर नहीं रह सकते। और जब तक यहाँ पूँजी लगा कर बाग न लगवाये जायँ इसकी पैदावार नहीं बढ़ सकता।

अधिकाश कोको सयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन जर्मनी, हालैंड, बैलजियम और फ्रांस को जाता है। ब्राजील, कालम्बिया और ट्रिनीडाड इक्वेडर, नाइजरिया कोको भेजने वालों म मुख्य हैं। सयुक्तराज्य अमरिका ससार की कुल उत्पत्ति का आधा भाग खरीदता है।

ससार में कोको की उत्पत्ति

(क्विन्टल मे)

गोल्ड कास्ट	२,७४७,०००
ब्राजील	१,१००,०००
नाइजरिया	६६५,०००
फ्रैंच पश्चिमी अफ्रीका	५१८,०००
डामनिकन रिपब्लिक	२८३,०००
फ्रैंच कैमरुन	२३७,०००
ट्रिनीडाड	२०१,०००
इक्वेडर	१६७,०००
स्पैनिश गायना	१४६,०००
वैनीजुला	१४२,०००

अंगूर का अधिकतर उपयोग शराब बनाने में होता है। अंगूर की खेती के लिए गरमी अत्यन्त आवश्यक है। जिन देशों में सितम्बर तक

अंगूर की शराब

कड़ी गरमी पड़ती है वहाँ अंगूर की पैदावार बहुत अच्छी होती है। अंगूर की बेल की जड़ें जमीन के अन्दर गहरी चली जाती हैं, इस कारण सूखी भूमि पर भी अंगूर की खेती बिना सिंचाई के होती है। अधिक जल अंगूर के लिए हानिकर है। वर्षा अधिक होने से अंगूर की बेल में कीड़ा लग जाने का भय रहता है। यही कारण है कि भारत चीन और जापान में जहाँ गरमियों में अधिक वर्षा होती है अंगूर की पैदावार नहीं होती। अंगूर के लिए ढालू भूमि बहुत उपयोगी सिद्ध होती है। ढालू भूमि पर वर्षा का जल नहीं ठहरता और धूप भी तेज पड़ती है। यही कारण है कि अंगूर की पैदावार नदियों की घाटियों के ढालों पर अधिक होती है। जाड़े के दिनों में अंगूर की बेल में पत्तियाँ नहीं रहतीं इस कारण पाला बेल को नष्ट नहीं कर सकता।

अंगूर के द्वारा शराब बनाने में फ्रांस सर्वप्रथम है। इसके उपरान्त स्पेन, इटली, जर्मनी का राइन प्रदेश, पोर्तुगाल, आस्ट्रिया, हंगरी, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अमरीका, स्वीटजरलैंड तथा दक्षिणी पश्चिमी रूस क्रमशः अंगूर की शराब उत्पन्न करने वालों में मुख्य हैं। फ्रांस, स्पेन और इटली तीनों मिला कर संसार का तीन चौथाई शराब तैयार करते हैं।

अंगूर की खेती करने तथा उसकी शराब बनाने के लिए बहुत कुशल मजदूरों की जरूरत होती है। तनिक सी भी लापरवाही से शराब घटिया हो सकती है।

इसके अतिरिक्त शराब एक ऐसी वस्तु है, कि जो जिस शराब को पसन्द करता है वह दूसरी शराब को पसन्द नहीं करता। फ्रांस की शराब जगत प्रसिद्ध है, इस कारण अन्य देशों से शराब फ्रांस में आती है और वह फ्रेंच शराब के नाम से बिकती है। स्पेन, इटली, पोर्तुगाल तथा जर्मनी की भी शराब प्रसिद्ध हो चुकी है। यही कारण है कि अन्य देशों की शराब बाजार में अच्छे दामों पर नहीं बिकती।

फ्रांसीसी लोग अंगूर की खेती करने और शराब को तैयार करने में बहुत कुशल हैं। क्लैरेट (Claret), शैम्पेन (Champaigne), तथा बरगंडी (Burgundy) नाम की शराब संसार में अत्यन्त प्रसिद्ध हैं, जो फ्रांस के इन्हीं नामों के प्रदेशों में तैयार होती हैं। शराब फ्रांस की मुख्य व्यापारिक वस्तु है। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में फाइलाक्सेरा (Phylloxera) नामक कीड़ा फ्रांस में संयुक्त राज्य अमेरिका से पहुँचा और थोड़े ही दिनों में इसने अंगूर की खेती को नष्ट कर डाला। समस्त फ्रेंच राष्ट्र इस कीड़े के प्रकोप से भयभीत हो उठा क्योंकि शराब बनाने का ही धंधा उनका मुख्य धंधा था। अन्त में एक युक्ति निकाली गई जिससे अंगूर की खेती नष्ट

हाने से बच गई। अमेरिका की बेल की जड़ पर फ्रांस की बेल कलम लगाने से कीड़ा बेल को नष्ट नहीं कर सकता था।

इटली के आल्प्स पहाड़ों की ढालों पर अंगूर की खेती बहुत अधिक होती है। फ्रांस के उपरान्त इटली ही मुख्य शराब तैयार करने वाला देश है। इटली की शराब बहुत बढ़िया नहीं होती। फिर भी मारसला (Marsala) सिसली की, काप्री (Capri) नेपिल्स की, शियान्टी (Chianti) फ्लोरैन्स की प्रसिद्ध शराब हैं। स्पेन की शैरी (Sherry) तथा पोर्तुगाल की पोर्ट (Port) भी बहुत प्रसिद्ध हैं। हाक (Hock), मोसले (Moselle) जर्मनी की मशहूर शराब हैं, किन्तु जर्मनी अधिक शराब उत्पन्न नहीं करता।

कुछ वर्षों से आस्ट्रेलिया और दक्षिणी अफ्रीका अधिकाधिक शराब ब्रिटेन को भेजते हैं। आस्ट्रेलिया और अफ्रीका की शराब क्रमशः प्रसिद्धि प्राप्त करती जा रही है और उसकी उत्पत्ति भी बढ़ रही है। कुछ लोगों का तो यहाँ तक कहना है कि आस्ट्रेलिया की शराब बहुत अच्छी होती है। दक्षिण आस्ट्रेलिया तथा विक्टोरिया में अंगूर की अधिक खेती होती है।

दक्षिण अफ्रीका में केप कालोनी में अधिकतर अंगूर की पैदावार होती है। दक्षिण अमरीका में चिली (Chile) तथा अरजन्टाइन (Argentine) में अंगूर की पैदावार अच्छी होती है। यद्यपि संयुक्त राज्य अमरिका के दक्षिणी भाग तथा कैलीफोर्निया में अंगूर की पैदावार खूब होती है किन्तु शराब नहीं बनाई जाती। भूमध्य सागर के देशों में प्रतिवर्ष ५५०, ०००००० गेलन शराब तैयार की जाती है।

तम्बाकू (Tobacco)

तम्बाकू पत्तियों से बनाई जाती है। तम्बाकू का प्रचार सारे संसार में है। तम्बाकू का पौधा यद्यपि उष्ण कटिबन्ध (Tropics) का उपज है परन्तु यह बहुत प्रकार की जलवायु में उत्पन्न हो सकता है। हाँ, गरम तथा ठंड रेगिस्तान इसके लिए अनुपयुक्त हैं। पाला तम्बाकू के लिए अत्यन्त हानिकर है। पत्तों के पकने समय गरमी की अधिक आवश्यकता होती है। तम्बाकू की खेती के लिए बहुत उपजाऊ भूमि की आवश्यकता होती है, चूना और पोटाश मिली हुई मिट्टी तम्बाकू की खेती के लिए अधिक उपयुक्त है। तम्बाकू की अगणित जातियाँ हैं और उनके उपयोग भी भिन्न भिन्न हैं। तम्बाकू को बनाने में बहुत परिश्रम करना पड़ता है। तम्बाकू उत्पन्न करने वाले

तम्बाकू

प्राचीन समय से पूर्वी एशिया योरोप को मसाले भेजता आ रहा है। मसाले के व्यापार के कारण ही पश्चिमी देशों के लोग पूर्वी एशिया को जानते थे। मसाले उत्पन्न करने वाले देश अधिकतर भूमध्य रेखा के समीप हैं। स्ट्रेट सैटिलमैंट (Strait Settlement) जावा स्याम, इडोचीन तथा भारत का मलाबार प्रान्त मसाले उत्पन्न करते हैं। इन्हीं देशों से मसाले विदेशों विशेषकर योरोपीय देशों तथा संयुक्तराज्य अमेरिका को भेजे जाते हैं। दक्षिण अफ्रीका में भी मसाले उत्पन्न होते हैं।

मसाले (Spices)

मसालों में काली मिर्च सबसे महत्वपूर्ण है। इसकी एक बेल होती है जो अत्यन्त गरम और नम प्रदेशों में उत्पन्न होती है। काली मिर्च का फल लाल होता है और एक गुच्छे में २० से ५० तक फल होते हैं। सूखने पर यह काली हो जाती है। काली मिर्च मुख्यत डच पूर्वी द्वीप समूह (जावा, सुमात्रा, बोरनियो) में उत्पन्न होता है। ससार की ७० % काली मिर्च इन द्वीपों में उत्पन्न होता है। सिंगापुर इसकी सबसे बड़ी मडी है। उसके अतिरिक्त भारत में मालाबार, हिंदुस्तान के दक्षिण पश्चिमी तट, साराबार द्वीप, लंका और ब्रिटिश मलाया में भी काली मिर्च उत्पन्न होता है। काली मिर्च का जब छिलका उतार दिया जाता है तो वह सफेद मिर्च कहलाती है।

काली मिर्च (Pepper)

यह एक उष्ण कटिबध के पेड़ का सूखा हुआ फूल होता है। यह अधिकतर जैंजाबार तथा पैम्बा द्वीपों में उत्पन्न होती है और वहाँ से ससार के देशों को भेजी जाती है। कुछ लौंग पिनाग तथा भारत में भी उत्पन्न होती है। भारत में लौंग मद्रास में उत्पन्न होती है।

लौंग (Clove)

यह एशिया, अफ्रीका और अमेरिका के उष्ण प्रदेशों (Tropics) में बहुत लालमिर्च (Chillies) उत्पन्न होती है। भारत में भी इसकी खूब पैदावार होती है।

दक्षिणी चीन, भारत, जमायका (Jamaica), मध्य अमरिका, दक्षिण अमरिका पश्चिमी अफ्रीका तथा पश्चिम द्वीप समूह (West Indies) में यह बहुतायत से उत्पन्न होती है। यह ताजी भी काम में आती है और सुखा कर भी काम में आती है।

अदरक (Ginger)

यह एक छोटे पेड़ की सूखी हुई छाल होती है जो मूलत लका का निवासी था। यह मुख्यत सीलोन (लका) के नम पहाड़ी ढालों तथा मैदानों पर उत्पन्न होती है। कुछ दारचीनी जावा में भी उत्पन्न होता है क्योंकि पेड़ से अधिक से अधिक छाल लेना

दारचीनी (Cinnamon)

अभीष्ट होता है इस कारण उसको छाँट देते हैं और उसे झाड़ी में परिणत कर देते हैं।

सीलौन ने घटिया जाति की दारचीनी का पेड़ दक्षिण भारत, डच पूर्वी द्वीप समूह (Dutch East Indies), हिन्द चीन और दक्षिणी चीन में बहुत उत्पन्न किया जाता है और अधिकतर यही दारचीनी काम में आती है।

जायफल (Nutmeg)

जायफल मुख्यतः डच पूर्वी द्वीप समूह में उत्पन्न होता है।

कपास ८२ (Cotton)

कपास एक झाड़ी सदृश पौधे का फूल है जिसके रेशे से सूत तैयार किया जाता है। कपास का जितना उपयोग मनुष्य समाज अपने कपड़ों के तैयार करने में करता है, सम्भवतः उतना उपयोग अन्य किसी वस्तु का नहीं करता। अधिकतर मनुष्य सूती कपड़े ही पहनते हैं। गरम देशों में तो सूती कपड़े का उपयोग होता ही है ठंडे देशों में भी सूती कपड़े की कम माँग नहीं है। कपास का पौधा भारत का मूल निवासी है। यहाँ अत्यन्त प्राचीन काल से इसकी खेती होती आ रही है। यहाँ से ही कपास का पौधा अन्य देशों को गया। कपास बहुत तरह की होती है। परन्तु व्यापारिक दृष्टि से तीन प्रकार की कपास महत्वपूर्ण है। संयुक्त राज्य अमरिका, भारत और मिश्र से ही अधिकतर कपास अन्य देशों को भेजी जाती है।

कपास उष्ण कटिबन्ध (Tropics) की पैदावार है। ४०° उत्तर तथा ३०° दक्षिण अक्षांशों (Latitudes) के बीच में यह पौधा सब जगह उत्पन्न किया जा सकता है। कपास की पैदावार के लिये गरमी और धूप की नितान्त आवश्यकता है परन्तु अत्यधिक गरमी इसे हानि पहुँचाती है। गरमी के बिना

प्राचीन समय से पूर्वी एशिया योरोप को मसाले भेजता आ रहा है। मसाले के व्यापार के कारण ही पश्चिमी देशों के लोग पूर्वी एशिया को जानते थे। मसाले उत्पन्न करने वाले देश अधिकतर भूमध्य रेखा के समीप हैं। स्ट्रेट सैटिलमैंट (Strait Settlement) जावा, स्याम, इंडोचीन तथा भारत का मलाबार प्रान्त मसाले उत्पन्न करते हैं। इन्हीं देशों से मसाले विदेशों विशेषकर योरोपीय देशों तथा संयुक्तराज्य अमेरिका को भेजे जाते हैं। दक्षिण अफ्रीका में भी मसाले उत्पन्न होते हैं।

मसाले (Spices)

मसालों में काली मिर्च सबसे महत्वपूर्ण है। इसकी एक बेल होती है जो अत्यन्त गरम और नम प्रदेशों में उत्पन्न होती है। काली मिर्च का फल लाल होता है और एक गुच्छे में २० से ५० तक फल होते हैं। सूखने पर यह काला हो जाता है। काली मिर्च मुख्यतः डच पूर्वी द्वीप समूह (जावा, सुमात्रा, बोरनियो) में उत्पन्न होती है। संसार का ७० % काली मिर्च इन द्वीपों में उत्पन्न होता है। सिंगापुर इसका सबसे बड़ी मंडी है। इसके अतिरिक्त भारत में मालाबार, हिंदचीन, दक्षिणी पश्चिमी तट, सारावाक द्वीप, लंका और ब्रिटिश मलाया में भी काली मिर्च उत्पन्न होता है। काली मिर्च का ऊपर छिलका उतार दिया जाता है तो वह सफेद मिर्च कहलाता है।

काली मिर्च (Pepper)

यह एक उष्ण कटिबंध के पेड़ का सूखा हुआ फूल होता है। यह अधिकतर जैंजीबार तथा पैम्बा द्वीपों में उत्पन्न होती है और वहाँ से संसार के देशों को भेजा जाती है। कुछ लौंग पिनांग तथा भारत में भी उत्पन्न होती है। भारत में लौंग मद्रास में उत्पन्न होती है।

लौंग (Clove)

यह एशिया अफ्रीका और अमेरिका के उष्ण प्रदेशों (Tropics) में बहुत लालमिर्च (Chillies) उत्पन्न होती है। भारत में भी इसकी खूब पैदावार होती है।

दक्षिणी चीन, भारत, जमायका (Jamaica), मध्य अमेरिका, दक्षिण अमेरिका, पश्चिमी अफ्रीका तथा पश्चिम द्वीप समूह (West Indies) में यह बहुतायत से उत्पन्न होती है। यह ताजी भी काम में आता है और सुखा कर भी काम में आती है।

अदरक (Ginger)

यह एक छोटे पेड़ का सूखा हुई छाल होती है जो मूलतः लंका का निवासी था। यह मुख्यतः सीलोन (लंका) के नम पहाड़ी ढालों तथा मैदानों पर उत्पन्न होता है। कुछ दालचीनी जावा में भी उत्पन्न होता है क्योंकि पेड़ से अधिक से अधिक छाल लेना

दालचीनी (Cinnamon)

अभीष्ट होता है इस कारण उसको छाँट देते हैं और उसे झाड़ी में परिणत कर देते हैं।

सीलौन मे घटिया जाति की दारचीनी का पेड़ दक्षिण भारत, डच पूर्वी द्वीप समूह (Dutch East Indies), हिन्द चीन और दक्षिणी चीन में बहुत उत्पन्न किया जाता है और अधिकतर यही दारचीनी काम म आती है।

जायफल (Nutmeg)

जायफल मुख्यत डच पूर्वी द्वीप समूह में उत्पन्न होता है।

कपास ८२ (Cotton)

कपास एक झाड़ी सदृश पौधे का फूल है जिसके रेशे से सूत तैयार किया जाता है। कपास का जितना उपयोग मनुष्य समाज अपने कपड़ों के तैयार करने में करता है, सम्भवत उतना उपयोग अन्य किसी वस्तु का नहीं करता। अधिकतर मनुष्य सूती कपड़े ही पहनते हैं। गरम देशों म तो सूती कपड़े का उपयोग होता ही है ठंडे देशों म भी सूती कपड़े की कम माँग नहीं है। कपास का पौधा भारत का मूल निवासी है। यहाँ अत्यन्त प्राचीन काल से इसकी खेती होती आ रही है। यहाँ से ही कपास का पौधा अन्य देशों को गया। कपास बहुत तरह की होती है। परन्तु व्यापारिक दृष्टि से तीन प्रकार की कपास महत्वपूर्ण है। संयुक्त राज्य अमरिका, भारत और मिश्र से ही अधिकतर कपास अन्य देशों को भेजी जाती है।

कपास उष्ण कटिबन्ध (Tropics) की पैदावार है। ४०° उत्तर तथा ३०° दक्षिण अक्षांशों (Latitudes) के बीच में यह पौधा सब जगह उत्पन्न किया जा सकता है। कपास की पैदावार के लिये गरमी और धूप की नितान्त आवश्यकता है परन्तु अत्यधिक गरमी इसे हानि पहुँचाती है। गरमी के २०

मसाले (Spices)

प्राचीन समय से पूर्वी एशिया योरोप को मसाले भेजता आ रहा है। मसाले के व्यापार के कारण ही पश्चिमी देशों के लोग पूर्वी एशिया को जानते थे। मसाले उत्पन्न करने वाले देश अधिकतर भूमध्य रेखा के समीप हैं। स्ट्रेट सैटिलमैंट (Strait Settlement) जावा स्याम, इंडोचीन तथा भारत का मलाबार प्रान्त मसाले उत्पन्न करते हैं। इन्हीं देशों से मसाले विदेशों विशेषकर योरोपीय देशों तथा संयुक्तराज्य अमेरिका को भेजे जाते हैं। दक्षिण अमरीका में भी मसाले उत्पन्न होते हैं।

काली मिर्च (Pepper)

मसालों में काली मिर्च सबसे महत्वपूर्ण है। इसकी एक बेल होती है जो अत्यन्त गरम और नम प्रदेशों में उत्पन्न होती है। काली मिर्च का फल लाल होता है और एक गुच्छे में २० से ५० तक फल होते हैं। सूखने पर यह काली हो जाती है। काली मिर्च मुख्यतः इन पूर्वी द्वीप समूह (जावा, सुमात्रा, बोरनियो) में उत्पन्न होता है। संसार की ७० % काली मिर्च इन द्वीपों में उत्पन्न होती है। सिंगापुर इसकी सबसे बड़ी मंडी है। उसके अतिरिक्त भारत में मालाबार, हिंदचीन के दक्षिणी-पश्चिमी तट, मालाबार द्वीप, लंका और ब्रिटिश मलाया में भी काली मिर्च उत्पन्न होती है। काली मिर्च का जब छिलका उतार दिया जाता है तो वह सफेद मिर्च कहलाती है।

लौंग (Clove)

यह एक उष्ण कटिबन्ध के पेड़ का सूखा हुआ फूल होता है। यह अधिकतर जैंजीबार तथा पेम्बा द्वीपों में उत्पन्न होती है और वहाँ से संसार के देशों को भेजी जाती है। कुछ लौंग पिनांग तथा भारत में भी उत्पन्न होती है। भारत में लौंग मद्रास में उत्पन्न होती है।

यह एशिया, अफ्रीका और अमरिका के उष्ण प्रदेशों (Tropics) में बहुत लालमिर्च (Chillies) उत्पन्न होती है। भारत में भी इसकी खूब पैदावार होती है।

अदरक (Ginger)

दक्षिणी चीन, भारत, जमायका (Jamaica), मध्य अमरिका, दक्षिण अमरिका पश्चिमी अफ्रीका तथा पश्चिम द्वीप समूह (West Indies) में यह बहुतायत से उत्पन्न होती है। यह ताजा भी काम में आती है और सुखा कर भी काम में आती है।

दारचीनी (Cinnamon)

यह एक छोटे पेड़ की सूखी हुई छाल होती है जो मूलतः लंका का निवासी था। यह मुख्यतः सीलोन (लंका) के नम पहाड़ी ढालों तथा मैदानों पर उत्पन्न होती है। कुछ दारचीनी जावा में भी उत्पन्न होती है क्योंकि पेड़ से अधिक से अधिक छाल लेना

अभीष्ट होता है इस कारण उसको छाँट देते हैं और उसे झाड़ी में परिणत कर देते हैं।

सीलौन में घटिया जाति की दारचीनी का पेड़ दक्षिण भारत, डच पूर्वी द्वीप समूह (Dutch East Indies), हिन्द चीन और दक्षिणी चीन में बहुत उत्पन्न किया जाता है और अधिकतर यही दारचीनी काम म आती है।

जायफल (Nutmeg)

जायफल मुख्यत डच पूर्वी द्वीप समूह म उत्पन्न होता है।

कपास ८२ (Cotton)

कपास एक झाड़ी सदृश पौधे का फूल है जिसके रेशे से सूत तैयार किया जाता है। कपास का जितना उपयोग मनुष्य समाज अपने कपड़ों के तैयार करने में करता है, सम्भवत उतना उपभोग अन्य किसी वस्तु का नहीं करता। अधिकतर मनुष्य सूती कपड़े ही पहनते हैं। गरम देशों में तो सूती कपडे का उपयोग होता ही है ठंडे देशों म भी सूती कपड़े की कम माँग नहीं है। कपास का पौधा भारत का मूल निवासी है। यहाँ अत्यन्त प्राचीन काल से इसकी खेती होती आ रही है। यहाँ से ही कपास का पौधा अन्य देशों को गया। कपास बहुत तरह की होती है। परन्तु व्यापारिक दृष्टि से तीन प्रकार की कपास महत्वपूर्ण है। संयुक्त राज्य अमरिका, भारत और मिश्र से ही अधिकतर कपास अन्य देशों को भेजी जाती है।

कपास उष्ण कटिबन्ध (Tropics) की पैदावार है। ४०° उत्तर तथा ३०° दक्षिण अक्षांशों (Latitudes) के बीच में यह पौधा सब जगह उत्पन्न किया जा सकता है। कपास की पैदावार के लिये गरमी और धूप की नितान्त आवश्यकता है परन्तु अत्यधिक गरमी इसे हानि पहुँचाती है। गरमी के दिनों

में साधारण वर्षा की आवश्यकता होती है, किन्तु अधिक वर्षा पैदावार को हानि पहुँचाती है। पौधे की बढवार के समय यदि गरमी बढ़ती जाय तो फसल अच्छी होती है। परन्तु जब पौधा पूरा बढ़ जाये, तब गरमी कम हो जानी चाहिये। जहाँ समय पर वर्षा नहीं होता वहाँ सिंचाई करनी पड़ती है। पाला कपास का भयंकर शत्रु है। पाला पड़ जाने से फसल नष्ट हो जाती है। इस कारण कपास की खेती उन देशों में नहीं हो सकती जहाँ कि पाला पड़ता हो।

कपास की खेती के लिए हल्की मटियार भूमि जिसमें चूना मिला हो अथवा रेतीली दोमट मिट्टी अधिक उपयुक्त है। यदि दिन में धूप निकले और रात्रि को ओस पड़े तो वह पौधे की बढ़वार के लिए विशेष लाभदायक है। कपास के लिए ६ या ७ महीने गरम मौसम की आवश्यकता होती है। कपास की खेती में बहुत परिश्रम तथा सावधानी की आवश्यकता है। यही कारण है कि कुछ देशों ही में इसकी पैदावार होती है।

संसार में सर्वश्रेष्ठ कपास समुद्र के समीपवर्ती नीचे मैदानों में उत्पन्न होती है, उसे समुद्र तटीय कपास (Sea Island Cotton) कहते हैं। यह कपास रेशम की भाँति मुलायम और इसका फूल सब कपासों से अधिक लम्बा होता है। इस कपास का रेशा बहुत ही मजबूत और चिकना होता है। बहुत बारीक और मजबूत कपड़ा बनाने में यही कपास काम में आती है। पहले संयुक्त राज्य अमेरिका के समुद्री तट के समीप यह कपास बहुत अधिक उत्पन्न होती थी। किंतु १८९२ ई० में कपास के भयंकर शत्रु बाल-वीविल (Boll Weevil) नामक कीड़े ने अमेरिका में प्रवेश किया, जिसने समुद्र तट के नीचे मैदानों में उत्पन्न होने वाली समुद्र तटीय कपास (Sea Island Cotton) की खेती तो बिलकुल चौपट हो गई। किन्तु भीतरी प्रदेश में उत्पन्न होने वाली कपास (Upland Cotton) को वह कीड़ा अधिक हानि नहीं पहुँचा सका। पहले तो समस्या बड़ी कठिन हो गई थी। ऐसा प्रतीत होता था कि समुद्र तट के मैदानों में कपास की खेती हो ही नहीं सकती परन्तु मीड (Meade) जाति की कपास उत्पन्न करने में सफलता मिल जाने से कठिनाई दूर हो गई। यह कपास समुद्र तटीय कपास (Sea Island Cotton) की जैसी अच्छी नहीं होती किन्तु शीघ्र पक जाने के कारण इसमें कीड़ा नहीं लग पाता। जब से बाल-वीविल (Boll-Weevil) ने समुद्र तटीय कपास (Sea Island Cotton) की खेती को चौपट कर दिया तब से इसकी पैदावार केवल कुछ द्वीपों (Islands) में ही सीमित है। अब समुद्रतटीय कपास (Sea Island Cotton) की खेती चार्ल्सटन बन्दरगाहों के समीप जेम्स, एडिस्टो और सेन्ट जोन्स नामक द्वीपों में तथा पश्चिमी द्वीप समूह (West Indies)

व पोर्टारिको (Porto Rico) इत्यादि द्वीपों में ही होती है। अब इसकी पैदावार दस हजार गाँठों से अधिक नहीं होती। दुर्भाग्यवश बाल वीविल कीड़ा इस कपास को हर समय लग सकता है। इस कारण इसकी पैदावार बढ़ाई नहीं जा सकती। कीड़ा लगने से पहले संयुक्त राज्य अमरिका म इसकी बहुत पैदावार होता था किन्तु अब तो बहुत कम हो गई है। समुद्रतटीय कपास (Sea Island Cotton) का फूल १½ इंच से २½ इंच तक लंबा होता है। इस कपास से घटकर मिश्र (Egypt) की साकल (Sakel) और जोनाविच (Joanovich) जाति की कपास लंबाई के लिये प्रसिद्ध है। ऊपर दिये हुए प्रदेशों के अतिरिक्त नई और पुरानी दुनिया के सभी देशों में ऊँचे प्रदेश वाली कपास (Upland Cotton) उत्पन्न की जाती है जिसकी लंबाई एक इंच के लगभग होती है।

लंबाई के आधार पर कपास को हम तीन जातियों में बाँट सकते हैं। (१) लंबा कपास (Long Staple) जिसके फूल की लंबाई १½ इंच से २½ इंच तक हो (२) मझोल कपास (Medium Staple) जिसके फूल की लम्बाई १" इंच से १½" इंच तक होती है। (३) छोटी कपास (Short Staple) जिसकी लम्बाई १" इंच से कम होती है। मझोली कपास (Medium Staple) संयुक्त राज्य अमरिका, मिश्र तथा अन्य अफ्रीकन प्रदेशों में उत्पन्न होती है। छोटी कपास (Short Staple) उन देशों में उत्पन्न होती है जहाँ वर्षा अधिक होती है। भारत की कपास छोटी जाति की ही होती है। यहाँ की कपास की लम्बाई लगभग आध इंच है। यही नहीं कि भारत की कपास की लम्बाई कम है वह मुलायम और चिकनी भी नहीं होती। छोटी कपास से घटिया और मोटा वस्त्र ही तैयार किया जाता है। हाँ घटिया कपास को अच्छी कपास में मिलाकर बारीक और सुन्दर वस्त्र बनाने का सफल प्रयत्न किया गया है। जापान में यह मिलाने की कला बहुत उन्नति कर गई है। बात यह है कि प्रतिद्वन्द्विता के कारण प्रत्येक देश सस्ते दामों पर कपड़ा बेचना चाहता है। किन्तु बढ़िया कपास का सूत तैयार करने से कीमत अधिक हो जाती है इस कारण बढ़िया और घटिया कपास को मिलाकर बारीक सूत तैयार किया जाता है।

यद्यपि बाल वीविल (Boll Weevil) ने संयुक्त राज्य अमरिका की खेती को बहुत अधिक हानि पहुँचाई है और यह कीड़ा समस्त कपास उत्पन्न करने वाले क्षेत्र में पहुँच गया है परन्तु फिर भी संयुक्तराज्य अमेरिका संसार में सबसे अधिक ५० % से (कुछ कम) कपास उत्पन्न करता है। यहाँ की कपास अच्छी होती है। लंकाशायर तथा मैंचेस्टर की मिलें, फ्रांस तथा अन्य योरोपीय देश अधिकांश में अमरिका की कपास का ही उपयोग करते हैं। संयुक्त राज्य अमरिका

में लगभग ६५,००० वर्ग मील भूमि पर कपास की पैदावार होती है। प्रति एकड़ यहाँ की उत्पत्ति लगभग १६५ पौंड के है। संयुक्त राज्य अमरिका में कपास उत्पन्न करने योग्य बहुत सी भूमि बिना जुती हुई पड़ी है परन्तु मजदूरी अधिक होने के कारण उस पर कपास उत्पन्न करना व्यापारिक दृष्टि से लाभदायक नहीं हो सकता।

बात यह है कि कपास की खेती में मजदूरों की बहुत आवश्यकता होती है क्योंकि कपास का फूल हाथ से ही चुना जाता है। इस कारण कपास की खेती में मजदूरों की बहुत आवश्यकता होती है। यही कारण था कि पहले अमेरिका में कपास की खेती के लिए अफ्रीका से दासों को लाया जाता था। अमेरिका में मिसिसिपी की बेसिन, टैक्सास, अल्बामा तथा आक्लेहोमा में अधिकांश कपास उत्पन्न होता है।

संयुक्तराज्य अमेरिका को छोड़कर भारत और पाकिस्तान संसार में सबसे अधिक कपास उत्पन्न करते हैं। यहाँ की कपास छोटी होती है। प्रति एकड़ यहाँ की पैदावार ८८ पौंड के लगभग है। यहाँ लगभग ४०,००० वर्ग मील पर कपास उत्पन्न की जाती है। भारत और पाकिस्तान संसार की २० प्रतिशत कपास उत्पन्न करते हैं और अधिकतर यहाँ की कपास जापान को जाती है।

१९४७ में भारत के विभाजन के बाद पाकिस्तान का निर्माण हुआ। पंजाब का पश्चिमी भाग तथा सिंध पाकिस्तान में चले गए। पिछले दस वर्षों में लम्बे फूल वाली कपास पैदा करने के जो भी प्रयत्न भारत में किए गए वे सब के सब सिंध और पंजाब में किए गए। अस्तु भारत में जो कुछ भी लम्बे फूल वाली कपास उत्पन्न होती थी अब वह पाकिस्तान क्षेत्र में चली गई। सम्पूर्ण भारत में जितनी कपास उत्पन्न होती थी उसकी १३% कपास पाकिस्तान में उत्पन्न होती है और लम्बे फूल वाली कपास जो भी भारत में उत्पन्न की जाती थी वह पाकिस्तान में पैदा होती है।

मिश्र (Egypt) में नील नदी के बेसिन में ही कपास की खेती होती है। यहाँ भूमि कम होने के कारण पैदावार तो अधिक नहीं होती किन्तु प्रति एकड़ यहाँ कपास की उत्पत्ति सबसे अधिक अर्थात् ४०० पौंड प्रति एकड़ से अधिक है। मिश्र में लगभग तीन हजार वर्ग मील पर कपास की खेती होती है। मिश्र संसार का केवल ६% के लगभग कपास उत्पन्न करता है। मिश्र का कपास संयुक्तराज्य अमरिका, ब्रिटेन और जापान को जाता है।

चीन में भी बहुत कपास उत्पन्न होती है। जबसे यहाँ अफीम की खेती बन्द हुई तब से कपास की खेती बहुत तेजी से बढ़ी है। चीन की कुल पैदावार मिश्र (Egypt) से अधिक (संसार की ६·५% होती) है। परन्तु प्रति एकड़

में की पैदावार केवल २२५ पौंड होती है। चीन अपनी कपास को बाहर नहीं भेजता। अधिकतर कपास देश में ही खप जाती है।

पिछले वर्षों में सोवियत रूस (U. S S R) ने अपने यहाँ बड़ा तेजी से कपास की पैदावार बढ़ाने का प्रयत्न किया है और इस समय वहाँ मिश्र चीन और (Egypt) से भी अधिक कपास उत्पन्न होती है। बात यह है कि रूसी तुर्किस्तान तथा कास्पस प्रान्त में सरकार अनाज की खेती कम करवा कर कपास की खेती करवा रही है। क्योंकि अनाज तो सोवियत रूस के अन्य भागों में भी उत्पन्न होता है। रूस संसार की १०% से भी अधिक कपास उत्पन्न करता है। यहाँ प्रति एकड़ लगभग २५० पौंड कपास उत्पन्न होती है, रूस भी कपास बाहर नहीं भेजता। सोवियत रूस में कपास की खेती बहुत बढ़ गई है और अब ५० लाख एकड़ पर कपास उत्पन्न होती है।

इनके अतिरिक्त नायजरिया (Nigeria) युगंडा, (Uganda) पश्चिमी द्वीप समूह (West Indies), ईजिपशियन सुडान (Sudan), रोडेशिया (Rhodesia), पीरू (Peru) और ब्राजील (Brazil) अरजैनटाइना में भी कपास की खेती बढ़ती जा रही है। पिछलेदिनों ब्राजील में कपास की पैदावार बहुत बढ़ गई है। विदेशों को कपास भेजने वाले देशों में उसका चौथा नम्बर है।

कपास बाहर से मँगाने वालों में जापान, ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, इटली और ज़ैकोस्लोवाकिया (Czechoslovakia) क्रमशः मुख्य हैं। जापान और ब्रिटेन पच्चीस पच्चीस % कपास मोल लेते हैं, जर्मनी और फ्रांस लगभग बारह बारह % और इटली लगभग ८ % कपास मँगाते हैं।

कपास की पैदावार
(क्विन्टल में)

संयुक्त राज्य अमेरिका	२७,२४५,०००
भारत तथा पाकिस्तान	१०,४६६,०००
सोवियत रूस	८,५००,०००
ब्राजील	५,४६६,०००
चीन	७,०००,०००
मिश्र (Egypt)	४,१२०,०००
युगन्डा	४,१२०,०००
ऐंग्लो इजिपशियन सुडान	४६६,०००

भिन्न भिन्न देशों में कपास की प्रति एकड़ पैदावार

मिश्र (Egypt)	५३१
पेरू	५०८
सुडान	३०७
अर्जेनटाइना	१५१
सोवियत यूनियन	३२२
संयुक्त राज्य अमेरिका	२६४
ब्राजील	१५४
युगन्डा	८८
भारत तथा पाकिस्तान	८४

लंकाशायर के व्यवसायी संयुक्त राज्य अमेरिका पर ही सोलह आना कपास के लिए निर्भर हैं। क्रमशः संयुक्त राज्य अमेरिका अपनी कपास को बाहर भेजना कम करता जाता है क्योंकि वहाँ कपड़े का धंधा तेजी से बढ़ रहा है।

भारत भी लंकाशायर को कपास नहीं दे सकता। कुछ वर्षों पूर्व भारत विदेशों और विशेषकर जापान को कपास भेजता था। किन्तु भारत में सूती वस्त्र का धंधा तेजी से बढ़ता गया जिससे भारत में ही कपास की खपत बढ़ती गई। यहाँ तक कि भारत को लम्बी कपास मिश्र से मंगानी पड़ती थी। भारत में भी लम्बे रेशे की कपास को उत्पन्न करने का प्रयत्न किया गया। किन्तु भारत के विभाजन हो जाने के फलस्वरूप भारत में कपास की कमी हो गई। अच्छी कपास उत्पन्न करने वाले प्रान्त पाकिस्तान में चले गए। अस्तु भारत को स्वयं ही कपास बाहर से मंगाना पड़ता है।

लंकाशायर के व्यवसाइयों को कपास के लिए चिन्तित होना स्वाभाविक था क्योंकि भारत भी उन्हें कपास नहीं दे सकता था अस्तु वे कपास की कमी की आशंका से मर्माहत हो उठे और उन्होंने ब्रिटिश कपास संघ स्थापित करके अफ्रीका और विशेषकर सुडान में कपास की खेती बढ़ाने का प्रयत्न किया।

कपास के बीज को बिनौला कहते हैं। इसका अधिक उपयोग तेल निकालने में होता है। इसकी खली का उपयोग खाद के रूप में होता है। बिनौला दूध देने वाले पशुओं को भी खिलाया जाता है। अधिकतर संयुक्त राज्य अमेरिका, भारत तथा चीन से बिनौला बाहर भेजा जाता है। ब्रिटेन और संयुक्तराज्य अमेरिका अधिकांश बिनौले का तेल बाहर भेजते हैं और डैनमार्क, हालैंड, बेल्जियम

बिनौला (Cotton Seed)

तथा कनाडा में बिनौले का तेल दूध देने वाले पशुओं को खिलाने के लिए मँगाया जाता है।

जूट (Jute) जूट एक प्रकार के लम्बे पौधे का छिलका होता है। इस रेशेदार छिलके को कातकर सुतली तैयार की जाती है और बोरे बनाये जाते हैं।

जूट की खेती के लिये अति वृष्टि तथा अधिक गरमी की आवश्यकता होती है। जूट की खेती से भूमि शीघ्र ही कमजोर हो जाती है। इस कारण जूट की खेती उन्हीं स्थानों पर की जा सकती है जहाँ प्रतिवर्ष नदियाँ उपजाऊ मिट्टी लाकर जमा कर देती हैं। जो भूमि प्रतिवर्ष प्रकृति की सहायता से उपजाऊ मिट्टी पा जाती हो वही जूट की खेती के लिए उपयुक्त है।

पाकिस्तान में पूर्वी बंगाल तथा भारत में पश्चिमी बंगाल, बिहार, नैपाल और आसाम के नीचे के मैदानों में ही जूट की खेती होती है। संसार में भारत तथा पाकिस्तान ही जूट उत्पन्न करता है। यद्यपि थोड़ा सा जूट चीन, फारमोसा, मलाया तथा जापान में भी उत्पन्न होता है किन्तु वह नगण्य है। संसार को जूट भारत तथा पाकिस्तान से ही जाता है। भारत में कलकत्ते के समीप हुगली के किनारे जूट के बड़े-बड़े कारखाने स्थापित हैं जिनमें भारत का आधे से अधिक जूट खप जाता है। शेष जूट बाहर भेजा जाता है। जूट मँगाने वालों में ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, संयुक्तराज्य अमेरिका तथा इटली मुख्य हैं। युद्ध के समय जर्मनी से व्यापार बंद है।

१९४७ में भारत के विभाजन के फलस्वरूप पूर्वी बंगाल का हिस्सा पूर्वी पाकिस्तान में चला गया इस कारण देश की जूट की पैदावार का अधिकांश भाग पाकिस्तान में चला गया। बटवारे से पूर्व जितना जूट समस्त भारत में उत्पन्न होता था उसका ७२% अब पाकिस्तान में उत्पन्न होता है और २८% भारत में उत्पन्न होता है।

सन (Flax) कपास के बाद सन ही मुख्य रेशेदार पदार्थ है। इसके छिलके से मोटे कपड़े (Linen), रस्सी तथा अन्य वस्तुयें बनाई जाती हैं। सन शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate zone) की पैदावार है परन्तु इसकी खेती भिन्न प्रकार की जलवायु में भी हो सकती है। सन की खेती के लिये उपजाऊ भूमि और जल की अत्यन्त आवश्यकता है। सन भी भूमि को शीघ्र ही निर्बल बना डालता है इस कारण इसकी खेती उपजाऊ भूमि पर ही हो सकती है। सन का बीज भी व्यापारिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उसका तेल निकाला जाता है जो कि बहुत से उपयोग में आता है। परन्तु सन की खेती की विशेषता यह है कि यदि बीज अधिक उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जाये तो छिलका कम और घटिया होता है और यदि छिलके की उत्पत्ति बढ़ाने का प्रयत्न

मैनिला हैम्प (Manila Hemp) — मैनिला हैम्प फिलीपाइन्स द्वीप समूह की पैदावार है। एक प्रकार के केले का रेशा होता है जो फिलीपाइन्स में बहुतायत से उत्पन्न होता है। यह बहुत मजबूत, कड़ा और चिकना होने के कारण मोटे रस्से बनाने के काम आता है।

सिसल हैम्प (Sisal Hemp) — यह एक प्रकार के पेड़ की तलवार जैसी बड़ी-बड़ी पत्तियों से निकाला जाता है। यह मध्य अमेरिका, बहामा (Bahama), किनिया, टगनियाका (Tanganyika), न्यूसलैंड (Nyasaland) पश्चिमी द्वीप समूह (West Indies), क्वीन्सलैंड तथा हवाई द्वीप में उत्पन्न होता है।

चीनी घास (China Grass) — यह घास मलाया, भारत, पश्चिमी द्वीप समूह, किनिया, चीन, मैक्सिको, उत्तरी अफ्रीका तथा मध्य योरोप म मिलता है। इस पौधे के तने से रेशा निकाला जाता है। किन्तु गोंद का अधिकता होने के कारण रेशे को निकालने में कठिनाई होता है। इसका रस्सा तथा मोटे कपड़े बनते हैं।

इनके अतिरिक्त नारियल (Coconut) के वृक्ष की जड़ों से भी रस्से तैयार होते हैं।

तिलहन (Oilseeds) — ससार में बहुत प्रकार के ऐसे फल और बीज हैं जिनसे तेल निकाला जाता है। इन बीजों का तेल खाने में, औषधि में, साबुन, वार्निश, पेन्ट तथा अन्य वस्तुओं के तैयार करने के काम में आता है। यही कारण है कि तिलहन का माँग बहुत है।

खजूर का तेल (Palm oil) — खजूर के फल से यह तेल निकाला जाता है। यह अधिकतर अफ्रीका में उत्पन्न होता है। इसके लिये उपजाऊ भूमि की आवश्यकता होती है। इस वृक्ष को जल और गरम का भी बहुत आवश्यकता होती है, ७०" के लगभग वर्षा में यह खूब उत्पन्न होता है। पश्चिमी अफ्रीका में इसके सघन वन हैं। यह अधिकतर साबुन तथा मोमबत्ती बनाने के काम आता है। अफ्रीका में यह भोजन के साथ खाया भी जाता है। अधिकतर यहाँ से योरोप को यह तेल भेजा जाता है।

नारियल का तेल (Coconut oil) — नारियल, तेल उत्पन्न करने वालों में विशेष महत्वपूर्ण है। उष्ण कटिबन्ध के समुद्रीय प्रदेशों म यह सब जगह पाया जाता है। वृक्ष छः वर्ष की आयु में फल देने लगता है और पचास वर्ष तक फल देता रहता है। इसका गरी व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। गरी से ही तेल निकलता है। तेल निकली हुई गरी

पशुओं को खिलाई जाती है। लंका (Ceylon) भारत का दक्षिणी भाग, मलाया, आस्ट्रेलिया, पश्चिमी द्वीप समूह (West Indies), मारिशस, फिजी, केनिया, (Kenya), जंजीबार (Zanzibar) तथा गोल्ड कोस्ट (Gold Coast) में नारियल बहुतायत से उत्पन्न होता है।

पूर्वी देशों से बहुत सा गरा ऐन्टवर्प (Antwerp) लिवरपूल (Liverpool), हैम्बर्ग (Hamburg) तथा मार्सलीज (Marseilles) में साबुन बनाने के कारखानों को प्रतिवर्ष भेजी जाती है। ट्रिनीडाड तथा जमैका (Jamaica) से भी नारियल संयुक्तराज्य अमेरिका को भेजा जाता है। उष्ण कटिबन्ध (Tropics) के बहुत से टापू केवल नारियल के व्यापार के ही कारण आबाद हैं।

अंडी का तेल (Castor oil)

इसका पौधा एक झाड़ी के आकार का होता है। इसके फल में जो बीज निकलते हैं उनमें ही अंडी का तेल तैयार किया जाता है। अंडी का तेल साबुन बनाने तथा दवा के काम में आता है। यह अधिकतर भारत, जावा, कैलीफोर्निया, इटली तथा दक्षिण चीन में उत्पन्न होता है और यहाँ से ही बाहर भेजा जाता है।

जैतून (Olive)

जैतून भूमध्य सागर (Mediterranean Sea) की जलवायु में बहुत पैदा होता है। जैतून के वृक्ष के फल से तेल निकाला जाता है। जैतून का तेल खाने में बहुत उपयुक्त होता है इससे एक प्रकार की चर्बी (Fat) तैयार की जाती है जो दूध तथा मक्खन की स्थानापन्न होती है। भूमध्य सागर के प्रदेश में पशुपालन के लिये जलवायु अनुकूल नहीं है इस कारण जैतून का तेल अत्यन्त उपयोगी पदार्थ है। इसका उपयोग साबुन बनाने में भी किया जाता है। इसकी पैदावार फ्रांस, इटली, स्पेन, तथा एशिया माइनर में अधिक होता है।

मूंगफली का तेल (Ground-nut Oil)

मूंगफली सूखे प्रदेशों में अधिक उत्पन्न होती है। इसकी उत्पत्ति भारत, पश्चिमी अफ्रीका, पश्चिमी द्वीप समूह, (West Indies), सूडान (Sudan), मलाया, अरजनटाइन तथा संयुक्तराज्य अमेरिका में अधिक होती है। मूंगफली का तेल साबुन बनाने के काम में आता है।

लाही का तेल (Rape Seed)

यह अधिकतर योरप तथा भारत में उत्पन्न होता है। इसका तेल मशीन के पुर्जों को चिकना करने के लिए डालते हैं, कहीं-कहीं यह जलाया भी जाता है।

तिल का तेल (Seamum) यह जाड़े में पैदा होता है। इसमें तेल बहुत निकलता है। इसकी पैदावार मिश्र (Egypt), भारत, एशियामायनर, केनिया (Kenya), युगंडा (Uganda), पश्चिमी अफ्रीका, ब्राजील, मैक्सिको और पश्चिमी द्वीप समूह में बहुत उत्पन्न होता है। तिल के तेल का साबुन बनाने में उपयोग होता है।

सरसों का तेल (Mustard Oil) सरसों भारत में बहुत उत्पन्न होती है इसके लिए गेहूँ की जलवायु तथा भूमि अनुकूल पड़ती है। सरसों का तेल बहुत उपयोगी है। रोशनी करने में, खाने में तथा साबुन बनाने में इसका उपयोग होता है। यहाँ से प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये की सरसों मुख्यतः फ्रांस को भेजी जाती है।

बिनौले तथा सन के बीजों का तेल

(देखो कपास तथा सन का विवरण)

सोयाबीन का तेल (Soya Bean Oil) यह सोयाबीन के बीज से निकाला जाता है। इसकी पैदावार अधिकतर मंचूरिया, चीन और जापान में होती है। इसका उपयोग रबर के स्थान पर तथा साबुन बनाने में होता है।

अभ्यास के प्रश्न

१—चुकन्दर (Beet) और गन्ने की पैदावार के लिए किस प्रकार की भौगोलिक परिस्थिति आवश्यक है। इनकी पैदावार कहाँ होती है?

२—कपास की खेती के लिए किस प्रकार की भूमि और जलवायु चाहिए। कपास की खेती के लिए और किन बातों की आवश्यकता है। संसार में कपास की खेती कहाँ-कहाँ होती है?

३—चाय और कहवे की खेती के लिए किस प्रकार की जलवायु चाहिए। चाय और कहवा किस प्रकार तैयार किया जाता है। उसका वर्णन कीजिए और बतलाइए कि चाय और कहवा कहाँ उत्पन्न होते हैं?

४—आगे लिखी पैदावारें कहाँ होती हैं:—चावल, जूट, मसाले और तम्बाकू।

५—कपास और गेहूँ की खेती के लिए किस प्रकार की जलवायु चाहिए? कौन से देश कपास और गेहूँ बाहर भेजते हैं और कौन से देश गेहूँ और कपास बाहर से मंगवाते हैं?

६—भूमध्य सागर के प्रदेश फलों को उत्पन्न करने के लिये क्यों उपयुक्त स्थान है, समझा कर लिखिये। अंगूर, नारंगी तथा सूखे फल कहाँ अधिकतर उत्पन्न होते हैं, विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए?

७—मांस के धन्धे के बारे में आप क्या जानते हैं विस्तारपूर्वक लिखिए ?

८—कोको (cocoa) की पैदावार के लिए किस प्रकार की जलवायु चाहिए। कोको की पैदावार कहाँ अधिक होती है ?

९—कपास कितनी तरह की होता है। भारत और पाकिस्तान में कैसा कपास उत्पन्न होता है। कपास के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार (International Trade) का वर्णन कीजिए।

नवाँ परिच्छेद

मुख्य धंधे—खनिज सम्पत्ति और शक्ति के साधन

(Mineral Wealth)

आधुनिक औद्योगिक उन्नति का आधार खनिज पदार्थ ही हैं। मनुष्य को खनिज पदार्थों (Minerals) का उपयोग बहुत पीछे ज्ञात हुआ। प्राचीन समय में मनुष्य पत्थर तथा अन्य कठोर वस्तुओं से काटने तथा छीलने का काम लेता था। परन्तु धीरे धीरे धातुओं का पता लगा और उनका उपयोग किया जाने लगा। यदि मनुष्य समाज के पास धातुयें न होती तो उसकी उत्पादन शक्ति बहुत कम होती। बिना धातुओं का उपयोग किये जो औद्योगिक उन्नति आज दिखलाई देती है वह हो ही नहीं सकती। सभ्यता के विकास में धातुओं का बहुत बड़ा भाग रहा है। जब तक लोहे को गला कर मनुष्य ने हल तथा खेती के अन्य औजार बनाना नहीं सीखा तब तक खेती बहुत नरम जमीन पर ही सम्भव थी। आज कल बिना लोहे और कोयले के औद्योगिक उन्नति ही सम्भव नहीं है। बीसवीं शताब्दी में जल विद्युत् (Water power) उत्पन्न की जाने लगी है परन्तु फिर भी थोड़ा बहुत कोयले की आवश्यकता तो बनी ही रहेगी। लोहे के बिना तो किसी देश का भी औद्योगिक उन्नति नहीं हो सकती। केवल लोहा ही नहीं, बीसवीं शताब्दी के वैज्ञानिक युग में मनुष्य समाज अन्य वस्तुओं का इतना अधिक उपयोग करने लगा है कि उनके बिना उसका एक दिन भी काम नहीं चल सकता।

वनस्पति की भाँति खनिज पदार्थ (Minerals) भिन्न भिन्न स्थानों पर उपजाये नहीं जा सकते। वे पृथ्वी के गर्भ में प्रकृति के द्वारा उत्पन्न किए जाते हैं। यदि मनुष्य खनिज पदार्थों को खोदकर न निकाले तो वे अनन्त काल तक पृथ्वी के गर्भ में ही पड़े रहें। मनुष्य लाख प्रयत्न करने पर भी धातुओं को उत्पन्न नहीं कर सकता। हाँ वह यह अवश्य जान सकता है कि ये धातुयें कहाँ मिलेंगी। एक बार खनिज पदार्थ को निकाल लेने के उपरान्त उन खानों में फिर से धातु उत्पन्न नहीं की जा सकती। इस कारण खान को खोदना प्रकृति के जुटाये हुए धन को निकाल लेना है। यदि मनुष्य मूर्खतावश खानों को शीघ्र ही खोदकर खाली कर दे तो आने वाली पीढ़ियों को अपने पूर्वजों की मूर्खता का फल बिना मिले नहीं रह सकता। यही कारण है कि बहुत से विद्वानों का कहना है कि आवश्यक धातुओं का उपयोग बहुत किफायत के साथ होनी चाहिए। क्योंकि धातुयें समाप्त भी हो सकती हैं। उस समय

मनुष्य समाज के सामने बहुत कठिन समस्या उठ खड़ी होगी। पौधों की भाँति खनिज पदार्थों (Minerals) का सम्बन्ध वर्तमान जलवायु से नहीं है, वरन् इसके उत्पादन में प्राचीन जलवायु का प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि खनिज-पदार्थ प्रत्येक देश में पाये जाते हैं।

धातुओं की बढ़ती हुई माँग के कारण मनुष्य ने सारी पृथ्वी छान डाला, यहाँ तक कि जिन प्रदेशों में वनस्पति उत्पन्न नहीं हो सकती, और जहाँ पहिले मनुष्य जाति निवास भी नहीं करती थी वे केवल खनिज पदार्थों के कारण आबाद हो गए। उत्तरी अमरिका का यूकान (Yukan) का प्रान्त जो अत्यन्त ठंडा है केवल सोना उत्पन्न करने के कारण ही आबाद है। पश्चिमी आस्ट्रेलिया में कालगूर्ली (Kalgoorli) और कूलगार्डी (Koolgardi) की खानों के समीप नगर बस गए हैं। ये दोनों स्थान मरुभूमि में स्थित हैं, इस कारण लगभग ३०० मील की दूरी से नलों द्वारा यहाँ जल लाया जाता है। उस मरुभूमि में आबादी केवल सोने की खानों के कारण ही दिखाई देती है।

प्रकृति ने धातुओं को पृथ्वी के गर्भ में बहुत नीचे इकट्ठा किया है, इस कारण अधिकतर खनिज पदार्थ पुरानी चट्टानों में ही पाये जाते हैं। जहाँ गहराई में स्थित चट्टानों को प्रकृति ने खोल दिया है और उन चट्टानों में विशेष परिवर्तन कर दिया है, वहीं अधिकतर खानें पाई जाती हैं। अधिकांश खनिज प्रदेश पुराने और टूटे हुए पर्वती प्रदेश में मिलते हैं आग्नेय (Igneous) चट्टानों में जो धातुओं के कण होते हैं उनको एक स्थान पर इकट्ठा करने के लिए ज्वालामुखी परिवर्तन (Volcanism) तथा पानी की सहायता आवश्यक है। ज्वालामुखी परिवर्तन (Volcanism) के द्वारा प्रकृति ने चट्टानों के धातु-कणों को एक स्थान पर इकट्ठा करने का कार्य किया है। ज्वालामुखी विस्फोट के कारण जल को पृथ्वी के गर्भ में गहराई तक जाने का अवसर मिलता है, पानी धातु के कणों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाता है। लावा ने भी बहुत सी धातुओं को एक स्थान पर इकट्ठा करने में बहुत सहायता दी है। जब पानी चट्टानों से छन छन कर अन्दर जाता है तो वह धातुओं के कणों को बहा कर एक एक स्थान पर इकट्ठा कर देता है। आग्नेय (Igneous) चट्टानें जो गरम पानी छोड़ती हैं वह धातुओं को ऊपर की ओर ले आता है। इस प्रकार प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में ज्वालामुखी परिवर्तन ही संसार के अधिकांश खनिज पदार्थों को उत्पन्न करता है। साधारण धातुयें प्रत्येक युग की चट्टानों में मिलती हैं परन्तु अधिकतर खनिज पदार्थ आग्नेय (Igneous) तथा कणदार (Crystalline) चट्टानों में पाये जाते हैं। जिन चट्टानों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है उनमें खनिज

पदार्थ नहीं होते। यही कारण है कि गङ्गवार (Alluvial) मिट्टी के मैदानों में धातुयें बहुत कम मिलती हैं।

यह तो पहले ही बतलाया जा चुका है कि खनिज सम्पत्ति समाप्त हो जाने वाली है। यह सम्भव है कि भविष्य में खानें खोदने की कला में उन्नति होने तथा कच्ची धातु (Ore) से धातु निकालने में कम व्यय होने के कारण अधिक गहराई के खनिज पदार्थों को निकालना लाभदायक हो जावे, किन्तु फिर भी अन्ततः खनिज पदार्थ समाप्त हो जावेंगे इसमें कोई सन्देह नहीं है। अतएव खानों का धन्धा अस्थायी है।

खान खोदने के धन्धे में खान की गहराई महत्त्वपूर्ण है। जितनी ही खान गहरी होगी खनिज पदार्थ निकालने का व्यय उतना ही अधिक होगा। अधिक गहराई में गरमी अधिक होने से मजदूरों को काम करने में कठिनाई होती है तथा हवा पहुँचाने की समस्या कठिन होती जाती है। अभी तक संसार में जितनी भी खानें हैं उनकी गहराई एक मील से अधिक नहीं है। जैसे जैसे खान गहरी होती जाती है गरमी बढ़ती जाती है यहाँ तक कि यदि खान दो मील गहरी हो तो हवा इतनी गरम हो जावेगी जितना खौलता हुआ पानी। मनुष्य बहुत देर तक १२०° फैं० से अधिक सूखी गरमी तथा १०५° फैं० नम गरमी को सहन नहीं कर सकता। खान खोदने के धन्धे में जो कुछ भी पूँजी होती है वह केवल खान के अन्दर रेल डालने तथा ऊपर तक धातु को उठाने के लिए साधन उपलब्ध करने में लगती है। अतएव खान जितनी भी गहरी होगा पूँजी भी उतनी ही अधिक लगाना होगा।

खानों को खोदना उतना कठिन नहीं है जितना कि धातु का उन स्थान तक ले जाना जहाँ कि उनकी माँग है। अतएव खान खोदने का धन्धा रेलवे लाइनों के ऊपर बहुत कुछ निर्भर है। पहाड़ी प्रदेश में रेलों के न होने से बहुत सी खानें व्यर्थ पड़ी हैं। उनका उपयोग तब तक नहीं हो सकता जब तक कि गमनागमन (Transportation) के साधन वहाँ उपलब्ध न हो जावें।

संसार का ऐसा कोई भी देश नहीं है जहाँ कि यह धातु न पाई जाती हो। थोड़े बहुत अंश में लोहा सभी देशों में मिलता है। यद्यपि कच्चे लोहे

लोहा (Iron)

में अन्य धातुओं की मिलावट कम होती है तथा वह बहुत गहराई पर नहीं होता तो भी उसको खोद कर निकालना व्यापारिक दृष्टि से लाभदायक होता है। लोहा पृथ्वी के अन्दर बहुत से अन्य खनिज पदार्थों से मिला रहता है। इस कारण उसे गला कर साफ करना पड़ता है। कहीं-कहीं कच्चे लोहे में मिश्रित पदार्थ कम होते हैं और किसी किसी जाति के लोहे में अन्य पदार्थ अधिक मात्रा में होते हैं। जिस लोहे में अन्य प्रकार के पदार्थ कम मात्रा में मिले

होते हैं वहां अच्छी जाति का लोहा है। लोहा बहुत प्रकार का होता है, उनकी निम्नलिखित जातियाँ मुख्य हैं।

यों तो कच्चा लोहा कई रूपों में पाया जाता है परन्तु हैमेटाइट (Hematite), मैगनेटाइट (Magnetite), लिमोनाइट (Limonite) तथा सिडेराइट (Siderite) अधिक महत्वपूर्ण हैं। इनमें भी हैमेटाइट तथा मैगनेटाइट अच्छी जाति का कच्चा लोहा है। हैमेटाइट देखने में लाल या भूरा होता है तथा मैगनेटाइट देखने में काला होता है।

हैमेटाइट (Hematite) तथा मैगनेटाइट (Magnetite) लोहे में ६५ से ७० % लोहा रहता है, और ३० से ३५ % तक अन्य पदार्थ रहते हैं। जिस कच्चे लोहे में ६० % भी लोहा हो उसको खोद कर निकालने में लाभ होता है। कच्चे लोहे (Iron ore) में अन्य पदार्थ मिले हुए होते हैं। उनको अलग करके शुद्ध लोहा निकाला जाता है। कच्चे लोहे में दो प्रकार की अशुद्धता होती है। एक तो कैलशियम कारबन (Calcium and Carbonate) इत्यादि, जिनसे अधिक हानि नहीं होती क्योंकि उनसे लोहा कमजोर नहीं होता। दूसरी प्रकार की अशुद्धियाँ अर्थात् गंधक, फास्फोरस (Phosphorus) की मिलावट अधिक हानिकारक होता है क्योंकि उनसे लोहा कमजोर हो जाता है। इन हानिकारक पदार्थों को लोहे से अलग करने के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के उपाय किए जाते हैं।

लोहे को उत्पन्न करने वाले मुख्य प्रदेश निम्नलिखित हैं —

(१) संयुक्तराज्य अमरिका (U S A) का झील प्रदेश, (२) योरोप का उत्तर पश्चिमी प्रदेश, जिसमें स्वीडन (Sweden) और इंगलैंड मुख्य हैं।

(३) पश्चिमी योरोप, जिसमें फ्रांस और स्पेन की खानें हैं। इसके अतिरिक्त भारत, न्यू फाउन्डलैंड (New Foundland) और अलजीरिया (Algeria) में भी लोहे की खानें हैं। इनके अतिरिक्त रूस के कुर्स्क प्रान्त (Kursk Province) तथा एशियाई प्रदेश में लोहा बहुत अधिक राशि में भरा पड़ा है किन्तु अभी तक उसको निकाला नहीं गया था।

पिछले युद्ध के समय में सोवियत रूस ने अपने लोह-क्षेत्र की बहुत उन्नति की क्योंकि लोहे की बहुत आवश्यकता थी। पहले केवल दक्षिण यूराल तथा डानेज बेसिन (Donetz Basin) में लोहा निकाला जाता था किन्तु अब बहुत से लौह प्रदेशों की उन्नति की गई है और वहाँ से लोहा निकाला जाता है। रूस के मुख्य लौह प्रदेश नीचे लिखे हैं —

१—कुर्स्क प्रान्त (Kursk) में
२—दक्षिण यूराल (Southern Urals)
३—कूजबास (Kujbas) प्रदेश में तेलबस (Telb-s) में
४—मुरमस्क प्रायद्वीप(Murmansk Peninsula)
५—यूराल में मैगनेट पहाड़ियाँ
६—यूक्रेन में क्रिवाइ राग (Krivoi Rog) में

ऐसा अनुमान किया जाता है कि ब्राजील में लोहा अनन्त राशि में भरा हुआ है किन्तु अभी तक खोदने की वहाँ उन्नति नहीं हुई है।

संसार के अनुमानित लोहे का २३% ब्राजील (Brazil) में, १६.५% संयुक्त राज्य अमरिका में, १६.३३% फ्रांस में, १०.१३% न्यू फाउ डलैंड (New foundland) में, ६.३७% क्यूबा में, तथा शेष २०% अन्य देशों में पाया जाता है। इसमें रूस के कुर्स्क प्रांत (Kursk) तथा एशियाई रूस के लोहे को सम्मिलित नहीं किया गया है क्योंकि उसके सम्बंध में अभी तक ठीक ठाक कुछ भी ज्ञात नहीं है।

इस समय संसार में जो लोहा उत्पन्न होता है उसका लगभग ४२% संयुक्त राज्य अमरिका उत्पन्न करता है। फ्रांस २५%, ब्रिटेन ७%, स्वीडन ५%, लक्समबर्ग जर्मनी ४%, स्पेन ३%, रूस २.५%, भारत १%।

संसार में स्टील की उत्पत्ति

(लाख टनों में)

संयुक्त राज्य अमरिका	७६६
सोवियत रूस	१८७

यूनाइटेड किंगडम	१२७
फ्रांस	५७
जर्मनी (१९३८)	२५३
बैलजियम	२६
भारत सघ	१२

संसार में संयुक्तराज्य अमरीका सबसे अधिक लोहा उत्पन्न करता है। सुपीरियर झील (Superior Lake) के निकटवर्ती प्रदेश में सबसे अधिक लोहा पाया जाता है। सुपीरियर झील (Superior Lake) प्रदेश के अन्तर्गत मिशिगन (Michigan), मिनासोटा (Minnesota) तथा उत्तर विस्कान्सिन (Wisconsin) की रियासतें हैं। इनके अतिरिक्त दक्षिण अपलेशियन (Appalachians) रियासतों, विशेषकर अल्बामा (Albama) में भी लोहा निकलता है। संयुक्तराज्य अमरीका में जितना लोहा निकलता है उसका लगभग ८५% सुपीरियर झील (Superior Lake) के प्रदेश से निकलता है।

सुपीरियर झील (Superior Lake) का प्रदेश संसार में लोहा उत्पन्न करने वाले प्रदेशों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। इसके निम्नलिखित कारण हैं —

इस प्रदेश की खानों में अनन्त राशि में लोहा भरा पड़ा है और इस कच्चे लोहे (Iron ore) में शुद्ध लोहे का अंश बहुत अधिक है। कच्चा लोहा इस प्रदेश में धरातल के ऊपरी सतह के इतने पास है कि लोहा निकालने में व्यय बहुत कम होता है। इसके अतिरिक्त इन झीलों से मिलने वाली नदियों ने जो एक अद्भुत जलमार्ग प्रस्तुत कर दिया है उसके द्वारा कच्चा लोहा बड़ी आसानी और कम खर्च से दूर तक भेजा जा सकता है। लोहे की खानों के समीप तक अनेकों रेलवे लाइनें डाल दी गई हैं जिसका परिणाम होता है कि लोहे को बड़ी आसानी और कम खर्च से दक्षिण औद्योगिक स्थानों पर भेजा जा सकता है। वास्तव बात तो यह है कि गमनागमन (Transportation) की सुविधा के कारण ही संयुक्त राज्य अमेरिका का यह खनिज प्रदेश इतना प्रसिद्ध है। मार्गों की इतनी सुविधा न होती तो लोहे के धंधे की उन्नति इतनी शीघ्रतापूर्वक नहीं हो पाती।

लोरेन (Lorraine) का लौह प्रदेश

लोरेन (Lorraine) प्रदेश की खानें सुपीरियर झील के लौह प्रदेश को छोड़कर सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। लोरेन की लोहे की खानें फ्रांस और जर्मनी की सीमा पर स्थित हैं। पिछले योरप के महायुद्ध के फलस्वरूप लोरेन की लोहे की खानें जर्मनी से फ्रांस ने छीन ली थीं। अब वे फिर जर्मनी के अधिकार में पहुँच गई हैं। उत्तर में लोरेन (Lorraine) का प्रदेश लक्समबर्ग (Luxemberg) तथा बैलजियम तक फैला हुआ है। यह लौह प्रदेश

एक समतल धरातल में फैला हुआ है, जिसकी मोटाई ६० से १२० फीट तक है। यह लोहे की मोटी सतह भूमि के अन्दर ३०० से ७५० फीट की गहराई पर पाई जाती है। यद्यपि लोरेन (Lorraine) की खानों से निकले हुए कच्चे लोह (Iron ore) में केवल ४० या ४२% ही शुद्ध लोहा निकलता है परन्तु लोहा अच्छी जाति का होने के कारण व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस लोहे में फासफारस (Phosphorus) का अंश अधिक है। इस कारण इस लोहे से बने हुए पिग आयरन (Pig Iron) का उपयोग बेसिक स्टील (Basic Steel) बनाने में अधिक होता है।

ब्रिटेन की खानें यार्कशायर (Yorkshire) से डारसेट (Dorset) तक फैली हुई चौड़ी भूमि में स्थित हैं। क्लीवलैंड (Cleveland) के प्रदेश में सबसे अधिक खानें हैं और ब्रिटेन का अधिकांश लोहा यहीं से निकलता है। ब्रिटेन का लोहा लारेन की खानों जैसा ही है और कच्चे लोहे में शुद्ध लोहा २७%के लग भग ही निकलता है। फिर भी यहाँ खानें खोदी जाती हैं।

स्पेन लोहे की उत्पत्ति की दृष्टि से योरोप में एक विशेष स्थान रखता है। यहाँ की खानों से निकला हुआ लोहा बहुत बढ़िया होता है। यही नहीं कच्चे लोहे में शुद्ध लोहा भी बहुत अधिक (६० %) निकलता है। जर्मनी और इंगलैंड बहुत कुछ स्पेन के लोहे पर ही निर्भर हैं। लोहा बहुत कम गहराई पर मिलता है इस कारण खानों में से खोद कर निकालने में अधिक व्यय नहीं होता। किन्तु खानों के पहाड़ी प्रदेश में होने के कारण उसको खानों से बंदरगाहों तक ले जाने में कठिनाई होती है और व्यय बहुत अधिक होता है। छोटी-छोटी रेलवे लाइनों तथा ऊँचे तार पर चलने वाले खटोलों से लोहा खानों से अभीष्ट स्थान पर पहुँचाया जाता है।

स्पेन का कनटैब्रियन (Cantabrian) प्रदेश जिसमें विजकाया (Vizcaya), सैनटन्डर (Santandar) और ओविडो (Oviedo) प्रान्त है, स्पेन का लगभग दो तिहाई लोहा उत्पन्न करता है। दक्षिण में जिब्राल्टर के पूर्व में जो लोहे की खाने हैं वे भी महत्वपूर्ण हैं।

स्वीडन (Sweden) भी लोहा उत्पन्न करने वाले देशों में मुख्य है। स्वीडन की खानें दो प्रदेशों में पाई जाती हैं। एक तो उत्तर के लैपलैंड (Lapland) प्रदेश में और दूसरी दक्षिण में स्टाकहाम के समीपवर्ती प्रदेश में। उत्तर की खानों में अनन्त राशि में बहुत बढ़िया लोहा भरा पड़ा है। यही नहीं कि लोहा बहुत उत्तम जाति का है, साथ ही कच्चे लोहे में ६०%से भी अधिक शुद्ध लोहा निकलता है। उत्तर की खानें बहुत कम गहरी हैं इस कारण लोहा निकालने में

अधिक व्यय भी नहीं होता। लेपलैंड से निकलने वाले लोहे में फास्फोरस (Phosphorus) का अंश अधिक होता है। स्टाकहाम (Stockholm) के समीप वाली खानों में उत्तर की तुलना में लोहा कम है, किन्तु इन खानों से निकलने वाले लोहे में फास्फोरस तथा गंधक का अंश कम है। स्वीडन का अधिकांश लोहा रूर (Ruhr) के कारखानों में खपता और थोड़ा सा इंगलैंड को भेजा जाता है।

लोहे को छोड़कर ताँबा (Copper) ही सबसे अधिक उपयोगी धातु है। मानव समाज इस धातु का उपयोग ऐतिहासिक काल के पूर्व से करता आया है। जब ताँबे को जस्ता (zinc) के साथ मिला देते हैं तो वह पीतल बन जाता है। ताँबे को टिन (Tin) के अथवा ऐलूमीनियम (Aluminium) के साथ मिलाने से काँसा (Bronze) बनाया जाता है और ताँबे को निकल (Nickel) के साथ सम्मिश्रण करने से जर्मन सिल्वर बनता है। ताँबे का उपयोग बिजली की करंट को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने वाले तार (Wire) बनाने में बहुत अधिक होता है। जैसे-जैसे बिजली का उपयोग बढ़ता जा रहा है वैसे ही वैसे ताँबे की माँग अधिकाधिक बढ़ती जा रही है। संयुक्त राज्य अमेरिका संसार में सबसे अधिक ताँबा उत्पन्न करता है। संसार की सम्पूर्ण उत्पत्ति का आधे से अधिक केवल संयुक्त राज्य अमेरिका में ही उत्पन्न होता है।

ताँबा (Copper)

संयुक्त राज्य अमेरिका में ताँबा अधिकतर राकी (Rocky) पर्वतीय प्रदेश में पाया जाता है। ऐरिज़ोना (Arizona), मोन्टाना (Montana) न्यूमैक्सिको (New Mexico) और नेवाडा (Nevada) रियासतें अधिकांश ताँबा उत्पन्न करती हैं। इनके अतिरिक्त मिचिगन (Michigan) की खानों से बहुत ताँबा निकलता है। संयुक्तराज्य अमेरिका के उपरान्त मैक्सिको (Mexico) सबसे अधिक ताँबा उत्पन्न करता है। यद्यपि संयुक्तराज्य अमेरिका की तुलना में वह बहुत कम होता है। इनके अतिरिक्त जापान, चिली (Chile), पीरू (Peru), स्पेन, आस्ट्रेलिया, बेलजियन कांगो (Belgian Congo) कनाडा, रूस न्यूफाउंड लैंड (New Founland), जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया, दक्षिण अफ्रीका तथा क्यूबा (Cuba) ताँबा उत्पन्न करने वाले देशों में मुख्य हैं। अलास्का (Alaska) तथा यूनान (Yunan) में ताँबा अधिक पाया जाता है किन्तु अभी उसे खोदने का प्रयत्न नहीं किया गया। योरोप के देशों को ताँबे की बहुत आवश्यकता रहती है क्योंकि योरोप में ताँबा बहुत कम उत्पन्न होता है। संयुक्तराज्य अमेरिका पका ताँबा (Manufactured) तथा बेलजियम कांगो कच्चा ताँबा विदेशों को सबसे अधिक

इंगलैंड की कार्नवाल (Cornwall) की खानें, आस्ट्रेलिया में क्वीन्सलैंड, न्यू साऊथवेल्स, तथा टसमानिया से भी टिन निकलता है। मलाया प्रायद्वीप (Malaya Peninsula) को छोड़कर बोलीविया में सबसे अधिक टिन निकलता है। इन्हीं दो प्रदेशों से टिन विदेशों को भेजा जाता है। पेनाँग (Penang) तथा सिंगापुर (Singapore) के बन्दरगाह से ही अधिकांश टिन भेजा जाता है। टिन मँगाने वालों में संयुक्तराज्य अमेरिका (U S A) ब्रिटेन तथा योरोपीय देश मुख्य हैं। संसार की टिन की सम्पूर्ण उत्पत्ति का लगभग आधा संयुक्त राज्य अमेरिका को जाता है, क्योंकि वहाँ मोटरकार बनाने का धंधा बहुत उन्नत दशा में है और उसमें टिन का उपयोग होता है।

संसार में टिन की उत्पत्ति

मलाया स्टेट	६४,००० टन
डच पूर्वी द्वीप समूह	३५,००० टन
बोलीविया	२८,००० टन
स्याम (थाईलैंड)	१६,००० टन
चीन	१०,००० टन
नाइजरिया	१०,००० टन
बेलजियन कांगो	८,००० टन
अन्य देश	१६,५०० टन

जस्ता (Zinc) जस्ता को लोहे, ताँबे तथा सीसे (Lead) से मिलाकर बहुत सी वस्तुयें बनाई जाती हैं। जस्ता लोहे तथा तार पर चढ़ाया जाता है जिससे उन पर जंग न चढ़े। रबर बनाने में भी जस्ते का उपयोग अनिवार्य है, इसको पेन्ट बनाने में भी काम में लाते हैं। जस्ता की उत्पत्ति अधिकतर संयुक्तराज्य अमरिका के मिसौरी (Missouri), कन्सास (Kansas), आक्लोहामा (Oklohama) और मानटन (Montana) रियासतों में, जर्मनी के सिलीशिया (Silesia) प्रान्त में तथा आस्ट्रेलिया (Austalia) की न्यू साथ वेल्स (New South Wales) तथा टसमानिया (Tasmania) राज्यों में होता है। इनके अतिरिक्त थोड़ा सा जस्ता कनाडा, बेलजियम, रोडेशिया (Rhodesia) तथा स्पेन में भी निकाला जाता है। किन्तु अधिकतर जस्ता संयुक्तराज्य अमेरिका, जर्मनी तथा आस्ट्रेलिया से ही बाहर भेजा जाता है।

सीसा के साथ चाँदी भी निकलती है। यह धातु मुलायम होने के कारण थोड़ी गरमी से ही पिघल जाती है। वायु और जल का इस पर प्रभाव नहीं पड़ता, यही कारण है कि इसका अधिक उपयोग पाइप तथा छत्तों के लगाने में होता है। सीसा जलाकर वार्निश बनाने के काम आता है। टिन और सीसा मिल कर जो धातु तैयार होती है उसका उपयोग भिन्न-भिन्न औद्योगिक पदार्थों के तैयार करने में होता है।

सीसा (Lead)

ससार में संयुक्तराज्य अमेरिका सबसे अधिक सीसा उत्पन्न करता है। ससार की सम्पूर्ण उत्पत्ति का ४० % यहाँ की खानों से ही निकलता है। संयुक्तराज्य अमेरिका की इडाहो (Idaho) मिसौरा (Missouri) उटह (Utha) तथा कोलोरैडो (Colorado) रियासतों में बहुत अधिक सीसा (Lead) उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त स्पेन, जर्मनी, मैक्सिको, ग्रीस तथा आस्ट्रेलिया की ब्रोकिन हिल (Broken Hill) नामक पर्वतीय प्रदेश में भी इसकी बहुत सी खानें हैं। कुछ सीसा बर्मा, कनाडा तथा ब्रिटेन में भी निकलता है।

एलूमीनियम (Aluminium)

यह ससार की मुख्य धातुओं में सबसे बाद को प्राप्त हुआ। इस धातु की विशेषता यह है कि बहुत मजबूत और टिकाऊ होने पर भी यह बहुत ही हल्का है। इसमें जंग शाम हो नहीं लगता। बिजली के तार के लिए तो यह ताँबे से भी अधिक उपयोगी है। एलूमीनियम का बर्तनों के अतिरिक्त हवाई जहाज बनाने में भी बहुत उपयोग होता है। एलूमीनियम साधारण मिट्टी में भी अच्छी राशि में मिलती है, किन्तु इस धातु को निकालना बहुत कठिन है, क्योंकि इसे शुद्ध करने में बहुत अधिक व्यय होता है। बिजली की शक्ति से भट्टियों में एलूमीनियम तैयार किया जाता है। इस कारण उन देशों में जहाँ जल द्वारा बिजली कम खर्चे से उत्पन्न की जा सकती है वहाँ इस धातु को शुद्ध करने का धन्धा सरलता-पूर्वक पनप सकता है।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि एलूमीनियम प्रत्येक प्रकार की मिट्टी में मिलती है। किन्तु बाक्साइट (Bauxite) में इसका अधिक अंश होता है। अतएव अधिकतर बाक्साइट (Bauxite) में ही एलूमीनियम तैयार किया जाता है। बाक्साइट (Bauxite) को शुद्ध करके पिघले हुए क्रायोलाइट (Cryolite) में मिलाते हैं और तब उसको बिजली की भट्टियों में लगाया जाता है। इस क्रिया के परिणाम स्वरूप एलूमीनियम नीचे बैठ जाता है और उसको निकाल लिया जाता है। क्रायोलाइट (Cryolite) ग्रीनलैंड (Greenland) के दक्षिण पश्चिम भाग में पाया जाता है किन्तु बाक्साइट (Bauxite) अमेरिका

तथा योरोप में बहुत से स्थानों पर मिलता है। सयुक्तराज्य की अरकान्सास (Arkansas), ज्यार्जिया (Georgia) और अल्बामा (Albama) रियासतों में, उत्तरी आइरलैंड, फ्रास, जर्मनी, इटली तथा गायना (Guinea) में बाक्साइट निकाला जाता है। सब बाक्साइट केवल एलूमीनियम के बनाने के उपयोग में ही नहीं आता वरन् अन्य धन्धों में भी उसका उपयोग होता है। किन्तु ससार की तीन चौथाई उत्पत्ति एलूमीनियम बनाने में ही व्यय हो जाती है।

बाक्साइट (Bauxite) की उत्पत्ति

टनों में

फ्रास	७२५,२००
हगरी	४८०,०००
सुरीनाम	४२५,०००
इटली	४००,०००
ब्रिटिश गायना	३६०,०००
सयुक्तराज्य अमेरिका	३६०,०००
यूगोस्लाविया	२५०,०००
सोवियत रूस	२५०,०००
डच पूर्वी द्वीप समूह	३२५,०००

लड़ाई के पूर्व जर्मनी ने एलूमीनियम के धन्धे की बहुत उन्नति की और वह ससार में अधिक एलूमीनियम तैयार करने लगा था। १६४० में एलूमीनियम की उत्पत्ति इस प्रकार थी:—

जर्मनी	१४६,०००	टन
सयुक्तराज्य अमेरिका	१३८,०००	टन
कनाडा	६०,०००	टन
सोवियत रूस	४३,०००	टन
फ्रास	४१,०००	टन
इटली	२४,०००	टन
स्वीटजरलैंड	२३,०००	टन
ब्रिटेन	२१,०००	टन

मैंगनीज (Manganese) मैंगनीज का महत्व पिछले कुछ वर्षों से बहुत अधिक बढ़ गया है। इसका उपयोग स्टील (इस्पात) को कठोर बनाने में होता है। इसके अतिरिक्त चीनी बर्तनों को रगने के लिए, शीशे पर से पीले धब्बे छुटाने के लिये तथा बिजली के काम में भी इसका

उपयोग होता है। मैंगनीज से बने हुए स्टील में चुम्बकीय शक्ति नहीं होती इस कारण इसका उपयोग जहाजों के बनाने में बहुत होता है।

१६१४ १८ के योरोपीय महायुद्ध के पूर्व रूस संसार में सबसे अधिक मैंगनीज उत्पन्न करता था, किन्तु युद्ध के उपरान्त रूस की उत्पत्ति बहुत घट गई थी। अब फिर सोवियत रूस ने अपनी पञ्चवर्षीय योजनाओं (Five Year Plans) के फल स्वरूप पुरानी स्थिति को प्राप्त कर लिया है। संसार की समस्त उत्पत्ति का लगभग ३५ % सोवियत रूस के काकेशिया (Caucasia) प्रान्त से निकाला जाता है। सोवियत रूस के उपरान्त भारत मैंगनीज उत्पन्न करने वालों में प्रमुख है। भारत संसार की सम्पूर्ण उत्पत्ति का ३० % के लगभग मैंगनीज उत्पन्न करता है। यही नहीं कि भारत मैंगनीज उत्पन्न करने वालों में प्रमुख है वरन् यहाँ का मैंगनीज बहुत अच्छी जाति का होता है। कच्चे मैंगनीज (Manganese Ore) में ५० % से भी अधिक शुद्ध मैंगनीज निकलता है। भारत में मध्यप्रदेश अधिकांश मैंगनीज उत्पन्न करता है। गोल्ड-कोस्ट (Gold Coast) ब्राजील, और मिश्र (Egypt) में भी मैंगनीज अधिक निकलता है। इन प्रमुख उत्पादकों के अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन तथा स्वीडन में भी थोड़ा सा मैंगनीज निकलता है। मैंगनीज बाहर भेजने वालों में भारत, रूस, गोल्डकोस्ट (Gold Coast) और ब्राजील मुख्य हैं। मैंगनीज मँगाने वालों में क्रमशः फ्राँस, संयुक्तराज्य अमेरिका, जर्मनी, बैल्जियम, ब्रिटेन तथा नार्वे मुख्य हैं।

टंगस्टन (Tungsten) यह धातु कभी अलहदा नहीं निकलती। अधिकतर यह वोलफ्रम (Wolfram) स्यूलाइट (Schulite) के साथ मिलती है। यह बढ़िया स्टील (High Speed Steel) बनाने के लिए एक नितान्त आवश्यक पदार्थ है। बर्मा, पोर्तुगाल, संयुक्तराज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, न्यूसाऊथवेल्स, विक्टोरिया, क्वीन्सलैंड, तथा टसमानिया कनाडा, चीन, तथा कार्नवाल (Cornwall) में यह बहुत निकाला जाता है।

निकिल स्टील को कठोर बनाने, अन्य धातुओं के साथ मिलाने, तथा अन्य धातुओं पर निकिल प्लेटिंग करने के काम में आता है।

निकिल (Nickel) अधिकतर निकिल आनटैरियो (Ontario), न्यू कैलाडोनिया, नार्वे, टसमानिया (Tasmania) दक्षिण अफ्रीका, मिश्र (Egypt) तथा न्यू-फाउंडलैंड (Newfoundland) की खानों से निकलता है।

क्रोमियम (Chromium) — क्रोमियम अधिकतर क्रोम आयरनस्टोन (Chrome Iron Stone) से निकाला जाता है। इसका उपयोग भी स्टील को कठोर बनाने में होता है। यह अधिकतर टर्की, नार्वे, सिलीशिया (Silesia), फ्रांस, संयुक्त राज्य अमरीका तथा न्यू-साउथ वेल्स (New South Wales) में पाया जाता है।

पारा (mercury) — पारा ही एक ऐसा धातु है जो कि साधारण तापक्रम (Temperature) पर पिघला हुई रहती है। पारा अन्य धातुओं से जल्दी ही मिल जाता है इस कारण पिसी हुई चट्टानों में से सोना तथा चाँदी निकालने के काम में पहले यह बहुत आता था, किन्तु अब नवीन रीतियों से काम लिया है जिनमें पारे का उपयोग नहीं होता। अब इसका उपयोग वैज्ञानिक यन्त्र बनाने में ही होता है। इस धातु का मूल्य अधिक है इस कारण जिस कच्चे पारे में शुद्ध पारा अधिक नहीं निकलता उससे भी धातु का निकालना लाभदायक है। पहले स्पेन के अलमैडन (Almaden) प्रान्त में सबसे अधिक पारा निकलता था किन्तु अब कैलीफोर्निया (California) में बहुत पारा निकाला जाता है। स्पेन और संयुक्तराज्य अमेरिका के अतिरिक्त रूस, मैक्सिको, इटली, पीरू, जापान, चीन और बोलीविया (Bolivia) में भी पारा निकाला जाता है।

प्लैटिनम (Platinum) — यह धातु संसार में बहुत कम पाई जाती है। इस धातु की विशेषता यह है कि यह कठोर होती है। वायु गरमी तथा तेजाब का इस पर कोई असर नहीं होता। इस कारण इस धातु का उपयोग वैज्ञानिक कार्यों में होता है तथा आभूषण बनाने में भी इसका उपयोग होने लगा है। यह मुख्यत रूस के यूराल पर्वतीय प्रदेश में, कोलम्बिया (Columbia), साइबेरिया, कनाडा और संयुक्तराज्य अमरिका के कैलीफोर्निया (California) तथा ओरेगन (Oregon) रियासतों से निकाला जाता है।

चाँदी (Silver) — चाँदी बहुत प्रकार की कच्ची धातुओं में पाई जाती है। लगभग तमाम सीसे (Lead) तथा ताँबे (Copper) की कच्ची धातु में चाँदी रहती है। चाँदी और सोना ही ऐसी धातुयें हैं जो देखने में सुन्दर, मजबूत तथा कभी जंग न लगने वाली हैं। साथ ही इन धातुओं को गलाकर आसानी से जिस रूप में चाहें ढाल सकते हैं। यही कारण है कि इन धातुओं का उपयोग आभूषण तथा अन्य बहुमूल्य पदार्थों के बनाने में

होता है। चाँदी का उपयोग सिक्के बनाने तथा बर्तन बनाने म भी होता है। चाँदी पिसी हुई चट्टानों से बड़ी आसानी से निकाली जा सकती है।

मैक्सिको (Mexico) ससार में सब से अधिक चाँदी निकलता है। इसके उपरान्त सयुक्त राज्य अमेरिका की गणना होती है। सयुक्तराज्य अमरिका तथा मैक्सिको मिलकर ससार की ७० % चाँदी उत्पन्न करते हैं। सयुक्तराज्य अमेरिका के राकी (Rocky) पर्वतीय प्रदेश में चाँदी की बहुत खानें हैं। इनके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया (ब्रोकिन हिल Broken Hill), कनाडा के आँटेरियो (Ontario) ब्रिटिश कोलम्बिया (Br Columbia) पीरू (Peru) बोलीविया (Bolivia), बर्मा, जर्मनी, स्पेन और जापान में भी चाँदी की खानें हैं।

सोना थोड़ा बहुत प्रत्येक देश में पाया जाता है। किन्तु ऐसे देश बहुत कम हैं जहाँ कि धातु अधिक राशि में निकलती हो। सोना बहुत प्राचीन काल से उपयोग में लाया जा रहा है। आभूषण, सिक्कों तथा बहुमूल्य पदार्थों के बनाने में इसका उपयोग होता है।

सोना (Gold)

जिन प्रदेशों में सोना चट्टानों म मिला नहीं रहता अर्थात् अलहदा मिलता है वहाँ इस धातु का निकालना सहज होता है, परन्तु जहाँ चट्टानों को तोड़ कर भिन्न भिन्न क्रियाओं द्वारा सोना निकाला जाता है वहाँ बहुत परिश्रम तथा पूँजी की आवश्यकता होती है। सोना बहुत मुलायम होता है। देखने में सुन्दर और जल तथा वायु के प्रभाव स खराब न होने वाली यह धातु अत्यन्त मूल्यवान है। यही कारण है कि ससार में ऐसा कोई भी प्रदेश नहीं है जहाँ सोना पाया जाता हो और मनुष्य वहाँ न पहुँचा हो। अलास्का (Alaska) तथा सायबेरिया (Sibaria) जैसे ठडे प्रदेशों में भी सोने की खानों के समीप नगर बस गये। सोने को कठोर बनाने के लिए इसमें ताँबा मिलाया जाता है।

अफ्रीका का ट्रांसवाल (Transvaal) प्रान्त ससार का आधे से अधिक सोना उत्पन्न करता है। जोहन्सबर्ग (Johannesburg) इसका खनिज केन्द्र है। ट्रांसवाल के समीप ही रोडेशिया की खानें हैं जहाँ से बहुत सा सोना निकाला जाता है। ट्राँसवाल के उपरान्त सयुक्तराज्य अमेरिका की गणना होती है। सयुक्तराज्य अमेरिका की अलास्का (Alaska) कैलीफोर्निया (California) कोलोरैडो (Colorado) नेवाडा (Navada) डकोटा (Dakota) मानटाना (Montana) ऐरीजोना (Arizona), और यूटा (Utah), रियासतों में सोना बहुत निकाला जाता है। इनके अतिरिक्त कनाडा, मैक्सिको, आस्ट्रेलिया, भारत, जापान, न्यूजीलैंड, गोल्ड कोस्ट (Gold Coast) ब्रिटिश गायना (Br Guiana) रूस और रूमानिया में भी सोना निकाला जाता है। दक्षिण अमेरिका के कोलम्बिया (Columbia)

पीरू (Peru) बोलीविया (Bolivia) तथा वेनेजुला (Venezula) में भी कुछ सोने की खानें हैं।

नमक (Salt)

नमक बहुत देशों में निकाला जाता है, किन्तु उसका अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार (International Commerce) में अधिक महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। नमक या तो चट्टानों के रूप में अथवा झीलों में तथा दानेदार जमाव के रूप में मिलता है। अधिकांश नमक संयुक्तराज्य अमरिका (U S A) ब्रिटेन, भारत, जर्मनी, रूस, फ्रांस, स्पेन, इटली, चिली (Chile) पीरू (Peru) और पुतगाल में तैयार किया जाता है।

गंधक (Sulphur)

जिन देशों में ज्वालामुखी पर्वतों के फूटने से निकला हुआ लावा तथा अन्य पिघले हुए पदार्थ चट्टानों के रूप में जम गए हैं, वहीं पर अधिकतर गंधक पाई जाती है। गंधक बारूद बनाने, तेजाब तैयार करने, तथा अन्य वैज्ञानिक कार्यों के काम आता है। संयुक्तराज्य अमरिका की लूजियाना (Louisiana), उटाह (Utah) तथा वयामिंग (Wyoming) तथा टैक्सास रियासतों में सिसली (Sicily), जापान, इटली, आइसलैंड (Iceland) तथा न्यूजीलैंड में बहुत गंधक पाई जाती है। कच्ची गंधक में लगभग २५% शुद्ध गंधक निकलती है। जापान और मैक्सिको में भी गंधक निकाली जाती है।

गंधक के उपयोग

गंधक का उपयोग गंधक का तेजाब (Sulphuric acid) तथा कागज बनाने में बहुत होता है। बिना गंधक के यह बन ही नहीं सकते। यह दियासलाई, बारूद बनाने, दवाओं के लिए तथा रबर को मजबूत बनाने के काम में बहुत आती है।

गंधक की कुल उत्पत्ति लगभग ३० लाख टन वार्षिक है। जिसमें ८० % संयुक्तराज्य अमेरिका उत्पन्न करता है १० या १२ % इटली उत्पन्न करता है। इनके अतिरिक्त जापान, स्पेन और चिली (Chile) ही ऐसे देश हैं जहाँ गंधक उल्लेखनीय है।

असफाल्ट (Asfalt)

यह काला या भूरे रंग का लगभग ठोस पदार्थ होता है। यह पैट्रोलियम के समान बहुत गाढ़ा हो जाने से जम जाता है। इसका अधिकतर उपयोग सड़कों पर डालने के लिए होता है किन्तु इसको छत बनाने तथा वाटर प्रूफ (Waterproof) तैयार करने के भी काम में लाते हैं। यह मुख्यतः स्विटजरलैंड, बारबैडास (Barbados) ट्रीनीडाड (जिसमें प्रसिद्ध पिच झील Pitch lake) असराउ

से भरी हुई है। वैनाजुला (Venezula) का बरमुडेज (Bermudez) झील, कैलीफोर्निया तथा क्यूबा (Cuba) में निकाला जाता है।

शोरा (Nitrate)

शोरा बहुत उपयोगी वस्तु है। बारूद बनाने में तथा खेतों में खाद के रूप में डालने के लिए इसका बहुत उपयोग होता है। चिली में प्रकृति ने पानी न बरसाकर बहुत सा शोरा जमा कर दिया है। इस कारण चिली (Chile) हा संसार को शोरा भेजता है। पिछले महायुद्ध के समय से शोरे की माँग बहुत बढ़ गई थी। अब जर्मनी और नार्वे में वैज्ञानिक रीतियों द्वारा शोरा (Nitrate) तैयार किया जाने लगा है।

मिट्टी, शीशा बनाने की रेत तथा चीनी मिट्टी

संसार में प्रत्येक देश के अन्दर मिट्टी द्वारा बहुत सी वस्तुओं को तैयार किया जाता है। मिट्टी के बर्तन, पाइप, ईंटें तथा खपड़ैल सभी देशों में मिट्टी से ही तैयार होता हैं। यह धंधा केवल उन्हीं स्थानों पर चल सकता है जहाँ कि इन वस्तुओं की माँग हो, क्योंकि दूर तक भेजने में एक तो इनके टूटने का डर रहता है दूसरे व्यय बहुत होता है इस कारण यह धंधा बड़े बड़े नगरों के समीप ही पनप सकता है।

संयुक्तराज्य अमेरिका की सभी रियासतों में मिट्टी के द्वारा खपड़ैल तथा पाइप बनाने के बड़े-बड़े कारखाने हैं। जर्मनी में चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने का धंधा बहुत उन्नत अवस्था में है। फ्रांस और ब्रिटेन में भी चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने के कारखाने (Pottery Works) बहुत हैं और यह तीनों देश संयुक्तराज्य अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया तथा अन्य देशों को चीनी मिट्टी के बर्तन भेजते हैं। इनके अतिरिक्त योरोप में बोहेमिया तथा जेकोस्लावाकिया (Czechoslovakia) में भी चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने के बहुत से कारखाने हैं।

एशिया में जापान में यह धंधा बहुत उन्नत अवस्था में है। चीन और भारत में भी चीनी मिट्टी के बर्तन बनते हैं।

शीशा (Glass)

शीशा एक प्रकार के रेत से तैयार किया जाता है। रेत को गला कर तथा उसमें अन्य पदार्थों को मिलाने से शीशा तैयार होता है। शीशे की वस्तुयें बनाने में संयुक्तराज्य अमेरिका अन्य देशों से बढ़ा हुआ है। विशेषकर पिट्सबर्ग (Pittsburgh), पेन्सिलवेनिया (Pennsylvania), तथा ओहियो (Ohio), तो इस धन्धे के मुख्य केन्द्र हैं। योरोप में जर्मनी में यह अन्य देशों से अधिक उन्नत अवस्था में है। सैक्सनी (Saxony) और सिलीसिया (Silesia) में इस धंधे के मुख्य केन्द्र हैं। फ्रांस, इंगलैंड, बैलजियम तथा जेकोस्लावाकिया (Czechoslovakia) में भी शीशे

का धधा अच्छी अवस्था में है। पिछले बीस वर्षों में जापान ने भी शीशे के धन्धे में विशेष उन्नति कर ली है। ऊपर दिये हुए देशों से ससार के अन्य देशों को शीशे का बहुत अधिक सामान भेजा जाता है।

बहुमूल्य पत्थर (Precious Stones)

बहुमूल्य पत्थर जहाँ भी पाये जाते हैं, वहाँ उनको निकालने का प्रयत्न किया जाता है क्योंकि उनका मूल्य बहुत होता है। हीरा (Diamond) दक्षिण अफ्रीका की किम्बरले (Kimberley) की खानों से निकलता है। किम्बरले की खानें इस समय संसार की उत्पत्ति का अधिकाश भाग उत्पन्न करती हैं। किम्बरले की खानों में हीरे सुप्त ज्वाला-मुखी (Dormant Volcanoes) पहाड़ों के पाइप में नीली चट्टानों तथा मिट्टी में मिलते हैं और इसी कारण उनको निकालने में बहुत श्रम तथा पूँजी की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त ब्राजील, ब्रिटिश गायना, और न्यू-साऊथ वेल्स तथा भारत में भी हीरे निकलते हैं। लाल (Ruby & Sapphire) देखने में बहुत सुन्दर तथा कम होने के कारण अधिक मूल्यवान होते हैं। लाल (Ruby) अधिकतर सीलौन, बर्मा और स्याम में निकाला जाता है। ऊपरी बर्मा में मैगाक (Magok) इस धधे का प्रधान केन्द्र है। एमेरेल्ड (Emeralds), कालम्बिया (Columbia) सायबेरिया, और न्यू साऊथ वेल्स में मिलते हैं। टापाज (Topazes) ब्राजील और रूस के यूराल पर्वतीय प्रदेश में मिलते हैं।

Tourmalines सीलौन सायबेरिया, तथा सयुक्तराज्य अमेरिका में निकाले जाते हैं। ओपल (Opals) क्वीन्सलैंड (Queensland) हगरी और सैक्सनी (Saxony) में पाये जाते हैं। ऐम्बर (Amber) बाल्टिक समुद्र के तटवर्ती प्रदेश में निकलता है। मोती (Pearls) मनार की खाड़ी, बैहरिन द्वीप (Bahrein Island) सुलू द्वीप (Sulu Island) कैलीफोर्निया की खाड़ी, और आस्ट्रेलिया के उत्तरी तथा पश्चिमी समुद्र तट के किनारे छिछले समुद्र में निकलते हैं।

शक्ति के साधन (Sources of power)

मनुष्य समाज जैसे जैसे अपनी सभ्यता का विकास करता गया, वैसे ही वैसे वह प्रकृति से अधिक लाभ उठाता गया। जब मनुष्य प्रकृति के अधीन था उस समय उसे बहुत थोड़ी वस्तुओं पर ही निर्वाह करना पड़ता था। परन्तु जैसे जैसे उसने प्रकृति पर अपना अधिकार जमाना आरम्भ किया वैसे ही वैसे उसने बहुत से पदार्थ बनाना शुरू कर दिये। किन्तु वस्तुओं को बनाने के लिए कच्चे माल (Raw Material) तथा शक्ति की आवश्यकता होती है। यदि यन्त्र

तथा मशीनों को चलाने के लिए सचालन शक्ति (Mechanical Power) न हो तो वे बेकार पड़े रहें। यदि मनुष्य शक्ति के नये नये साधन (भाप और बिजली) न ढूँढ निकालता तो आधुनिक औद्योगिक उन्नति सम्भव ही नहीं होती। वास्तव में यन्त्र तो शक्ति का उपयोग कर लेने के साधनमात्र हैं। किसी भी देश की आर्थिक उन्नति शक्ति (Power) पर ही निर्भर होती है। आधुनिक युग में यह बात बहुत स्पष्ट रूप में दिखाई दे रही है कि जिन देशों ने सचालन शक्ति को बढ़ा लिया वे ही औद्योगिक उन्नति कर सके हैं। नीचे दी हुई तालिका से यह और भी स्पष्ट हो जावेगा —

देश	घोड़ों की शक्ति, प्रति कुली
संयुक्तराज्य अमेरिका	३ ६
इङ्गलैंड	२ ४
जर्मनी	१ ५
फ्रांस	० ६७
इटली	० ३१
चीन	० १२

कुछ वर्षों से रूस और जापान ने अपनी शक्ति (Power) को बढ़ाया है।

यदि प्रत्येक देश में प्रति कुली शक्ति की उपलब्धि को ध्यान में रखा जाये तो यह समझ लेने में कठिनाई नहीं होती कि इसी क्रम से इन देशों की सम्पत्ति भी लिखी जा सकती है। उपरोक्त कथन से यह तो स्पष्ट ही हो गया कि औद्योगिक उन्नति के लिये सचालन शक्ति की आवश्यकता है। अब देखना यह है कि मनुष्य के पास कौन-कौन सी शक्ति उत्पन्न करने के साधन उपलब्ध हैं और उनका औद्योगिक उन्नति पर क्या प्रभाव पड़ा है।

आरम्भ में मनुष्य स्वयं अपनी शारीरिक शक्ति के द्वारा ही सारे उत्पादन कार्य करता था। धीरे धीरे उसे ज्ञात हुआ कि पशुओं की शक्ति उससे कहीं अधिक है। अस्तु भारी कामों में पशुओं का उपयोग किया जाने लगा। गदहा, घोड़ा, बैल, ऊँट इत्यादि पशु खेती-बारी का काम करने, बोझा लादने, पहियों को घुमाने, तथा मनुष्य को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुए। यद्यपि आधुनिक काल में मनुष्य अपनी तथा पशुओं की शक्ति का उपयोग कम करता है फिर भी कृषि तथा माल ढोने में पशुओं का यथेष्ट उपयोग होता है। पश्चिम में यद्यपि भाप और बिजली का अधिक उपयोग होता है किन्तु पशु शक्ति का उपयोग बिलकुल नष्ट नहीं हो गया है। मनुष्य का स्थान अब यन्त्र ने ले लिया है, वह केवल

यन्त्र की देख भाल करता है। जैसे-जैसे शक्तियों के नवीन साधन ढूंढ निकाले गये वैसे ही वैसे मनुष्य तथा पशु-शक्ति का उपयोग कम होता गया।

सबसे पहले जल-शक्ति का उपयोग किया गया। बहते हुए जल में कितनी शक्ति है, इसका अनुमान नदी की तेज धार देख कर ही मालूम किया जा सकता है। आजकल भी जहाँ जल बराबर तेजी से बहता रहता है वहाँ आटे की चक्कियाँ पानी की शक्ति से ही चलाई जाती हैं। भाप के आविष्कार के पूर्व जल का ही शक्ति के रूप में अधिक उपयोग होता था। प्राचीन काल में औद्योगिक केन्द्र नदियों के किनारे इसी कारण बसाये गए। अधिकांश औद्योगिक नगर उस समय पहाड़ों की घाटियों में बसाये गए थे, क्योंकि नदियों की धार पहाड़ों में तेज होती है। इङ्गलैंड में पैनाइन (Pennine) पहाड़ी प्रदेश में ऊनी कपड़े का धंधा इसी कारण उन्नत हो सका। स्काटलैंड, आयरलैंड तथा योरोप के अन्य देशों में पहले जल के द्वारा ही कपड़े के कारखाने में कपड़ा तैयार होता था। आज भी मिसिसिपी नदी (Mississippi) के तट पर स्थित मिनियापोलिस (Mineapolis) नगर में आटे के बड़े कारखाने जल-शक्ति से ही चलते हैं। नार्वे, स्वीडन तथा फिनलैंड में आज भी लकड़ी चीरने के कारखानों में जल शक्ति का उपयोग होता है। परन्तु जल शक्ति स्थायी नहीं होती। ठंडे देशों में जाड़े के दिनों में पानी जम जाता है तथा कहीं-कहीं नदियाँ सूख जाती हैं। ऐसी दशा में कारखाने नहीं चल सकते। इसके अतिरिक्त पहाड़ी प्रान्त में जहाँ कि जल शक्ति अधिक मिल सकती है, रेलपथ नहीं बन सकते, इस कारण भी जल शक्ति का अधिक उपयोग नहीं हो सकता।

मनुष्य ने केवल जल का ही उपयोग नहीं किया, हवा से भी उत्पादन कार्य में सहायता ली गई। यद्यपि हवा का उपयोग सब स्थानों पर नहीं हो सकता परन्तु जहाँ भी हवा तेज चलती है वहाँ हवा से ही कारखाने चलाये गये। हवा में अनन्त शक्ति है। उन्नीसवीं शताब्दी तक मनुष्य ने जहाजों के चलाने में हवा का ही उपयोग किया। हालैंड और बैलजियम के समुद्री तट पर आज भी आटा पीसने के कारखाने हवा से ही चलते हैं। परन्तु हवा भी स्थायी रूप से नहीं बहती, कभी तेज तो कभी धीरे तथा उसकी दिशा का एक न होना, इस कारण इसका भी अधिक उपयोग नहीं किया जा सकता।

अत्यन्त प्राचीन काल से लकड़ी का ईंधन के रूप में उपयोग होता आया है। जहाँ कोयला नहीं मिलता वहाँ आज भी लकड़ी के कोयले का उपयोग होता है। स्वीडन की रेलों के एञ्जिनों में लकड़ी जलाई जाती है। कांगो नदी की बेसिन में स्टीम बोट लकड़ी का ही उपयोग करती हैं। किन्तु लकड़ी भारी वस्तु है उसे ले जाने में व्यय अधिक होता है। इसके अतिरिक्त यदि शक्ति उत्पन्न करने में लकड़ी

कोयला कई प्रकार का होता है। कार्बन (Carbon) का अंश अधिक होता है वैसा उतनी ही अधिक गरमी उत्पन्न कर सकता है। आधार पर कोयले को कई जातियों में बाँटा जाता है—

(१) ऐन्थ्रासाइट (Anthracite) कोयले में कार्बन Carbon सब अधिक होता है। इसमें ९५% कार्बन होता है, इसमें बहुत कम निकलता है और न अधिक राख ही बचती है। यह सबसे अधिक गरमी उत्पन्न करता है। ऐन्थ्रासाइट (Anthracite) सबसे अधिक कठोर होता है, इस कारण कठिनाई से जलता है।

बिटूमिनस (Bituminous) कोयला कई प्रकार का होता है उसमें कार्बन ७०% से लेकर ९०% तक होता है। इसमें गैस तथा अन्य पदार्थ अधिक होते हैं। यह आसानी से जल जाता है किन्तु जलते समय अधिक धुआँ उत्पन्न करता है और उसकी राख भी बहुत होती है।

कनल (Cannel) कोयला निम्न श्रेणी का होता है। इसमें ४०% कार्बन होता है। इस कोयले में गैस बहुत अधिक होती है इसी कारण इस गैस का कोयला भी कहते हैं।

लिगनाइट (Lignite) — लिगनाइट कोयले से गरमी कम उत्पन्न होती है, यद्यपि इसमें ४६% तक कार्बन होता है।

पीट (Peat) — पीट वास्तव में पूर्ण रूप से कोयला नहीं होता वह लिगनाइट तथा लकड़ी के बीच की स्थिति में होता है। यही कारण है कि वह लकड़ी की भाँति ही जलता और धुआँ बहुत देता है, किन्तु गरमी बहुत कम उत्पन्न करता है।

कोयले की खानों के लिए कुली अच्छी संख्या में होना आवश्यक है इसके अतिरिक्त गमनागमन के साधन भी बहुत आवश्यक हैं क्योंकि या तो कोयले को औद्योगिक केन्द्रों में भेजना पड़ता है और यदि खानों के समीप ही औद्योगिक केन्द्र स्थापित किये जाते हैं तो उन तक कच्चा माल (Raw Material) लाना पड़ता है। कोयले की बढ़ती हुई माँग के कारण साधारण खानें भी खुदने लगी हैं। कोयले की खानों में लगभग २५% प्रतिशत कोयला खोदते समय व्यर्थ में नष्ट हो जाता है।

कोयले की अधिकाधिक माँग तथा उसकी भावी कमी का विचार करके अब कोयला निकालने में कोयला व्यर्थ में नष्ट न हो इसका ध्यान रक्खा जाता है।

पृथ्वी पर कोयला उत्पन्न करने वाले देशों में सयुक्तराज्य अमेरिका (U. S. A.), चीन और इगलैंड मुख्य हैं। ये तीनों देश ससार का लगभग तीन चौथाई कोयला उत्पन्न करते हैं। किन्तु इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे देश हैं जिनमें अनन्त राशि में कोयला भरा पड़ा है किन्तु अभी उसको खोदा नहीं गया है। चीन, सायबेरिया, आस्ट्रेलिया में बहुत कोयला पृथ्वी के गर्भ में छिपा हुआ है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि सयुक्तराज्य अमेरिका, चीन, कनाडा, जर्मनी, ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया तथा सायबेरिया में ससार का ६०% कोयला दबा हुआ है।

संसार में कोयले की अनुमानित राशि

देश का नाम	कोयले का अनुमान १० लाख (metric) मैट्रिक टन में
सयुक्तराज्य अमेरिका	३,५००
चीन	६०० से १,५००
कनाडा (अधिकांश लिगनाइट)	१,२००
जर्मनी (अधिकांश बिटुमिनस)	४०० से अधिक
ब्रिटिश द्वीप समूह	१६०
सायबेरिया (अधिकांश लिगनाइट)	१७४
आस्ट्रेलिया (न्यू साऊथ वेल्स में)	१६६
भारत	७६
रूस	५८
दक्षिण अफ्रीका	५६
जापान	७
फ्रांस	१७
बैलजियम	१०
शेष पृथ्वी	७४००

ऊपर दी हुई तालिका से ज्ञात होगा कि सयुक्तराज्य अमेरिका ससार में सबसे अधिक कोयला उत्पन्न ही नहीं करता वरन् उसकी खानों में सबसे अधिक कोयला भरा हुआ है। जितना कोयला इस समय उद्योग-धन्धों में प्रति वर्ष व्यय हो रहा है यदि इतना ही व्यय होता रहे तो समस्त पृथ्वी का कोयला ५००० वर्षों में समाप्त हो जावेगा, किन्तु कुछ देशों का कोयला तो बहुत जल्दी ही समाप्त हो जावेगा। उदाहरण के लिए ब्रिटेन का कोयला इस हिसाब से ४५० वर्षों में समाप्त हो जावेगा और सयुक्तराज्य अमेरिका का कोयला २००० वर्षों तक चलेगा।

संयुक्तराज्य अमरिका में अपलेशियन (Appalachian) का पहाड़ी प्रदेश कायला उत्पन्न करने वाले प्रदेशों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। देश की उत्पत्ति का लगभग तीन चौथाइ से अधिक कोयला इसी प्रदेश से निकाला जाता है। इन प्रदेश म निकलन वाला कोयला बहुत अच्छा हाना है। अपलेशियन प्रदेश की कायले की खानें उत्तर में पेनसिलवेनिया (Pennsylvania) से अलबामा (Albama) तक फैली हुइ हैं। यहाँ की भौगोलिक स्थिति खान खोदने के अनुकूल

है। यहा कारण है कि सयुक्तराज्य अमरिका में इङ्गलैंड से कम खर्च में कोयला खोदा जाता है। यहा नहीं इस प्रदेश में नदियों तथा अन्य गमनागमन के साधनों की सुविधा हाने के कारण कोयले को इच्छित स्थानों पर ले जाने में कम व्यय और सुविधा हाती है। इसा कारण अपलेशियन प्रदेश इतना महत्त्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त एक और भी कारण है कि जिससे यह प्रदेश महत्त्वपूर्ण है। संयुक्तराज्य अमरिका म जितना भी एन्थासाइट (Anthracite) कायला उत्पन्न होता है वह सब इसा प्रदेश म मिलता है।

अपलेशियन क अतिरिक्त भीतर की तरफ उत्तर में मिचिगन (Michigan) इत्यादि, पूर्व म इलिनायस (Illinois) इत्यादि तथा पश्चिम में आइवा (Lowa) इत्यादि की खानें विशेष महत्त्वपूर्ण हैं।

पिछले योरोपीय युद्ध के पूर्व जमनी और ब्रिटेन में से प्रत्येक ससार की उत्पत्ति का २०% के लगभग कोयला उत्पन्न करते थे। वार्साई सन्धि के अनुसार जमनी से सार बेसिन (*Saar Basin*) तथा सिलेशिया (*Silesia*) प्रान्त की महत्त्वपूर्ण कोयले की खानें छीन ली गईं। परन्तु विश्व युद्ध में जमनी ने पुन अपने खनिज प्रदेशों पर ही अधिकार नहीं कर लिया था वरन चेकोस्लावकिया

का महत्त्वपूर्ण खानें भी उसके अधिकार में आगई थीं, जिससे जर्मनी के पास पहले से भी अधिक कोयला हो गया था। परन्तु युद्ध में पराजित हो जाने से फिर उसकी उत्पादन-शक्ति क्षीण हो गई है।

योरोप में इन दो देशों के अतिरिक्त केवल फ्रांस, बेलजियम और रूस में ही कोयला निकाला जाता है।

एशिया में चीन कोयले की दृष्टि से सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि जब उसके कोयले की खानें भविष्य में खोदी जायेंगी तब वह संसार के कोयला उत्पन्न करने वाले देशों में प्रमुख स्थान प्राप्त करेगा। चीन में इस समय कोयला निकाला नहीं जाता। चीन के अतिरिक्त भारत और जापान में भी कोयला निकाला जाता है।

आस्ट्रेलिया में कोयला केवल न्यू साउथ-वेल्स (New South Wales) में निकाला जाता है।

दक्षिण अमरीका तथा अफ्रीका में कोयला बहुत कम मिलता है। सच तो यह कि दक्षिण गोलार्द्ध में कोयला कम है इस कारण जहाँ कहीं कोयला मिलता है उसका महत्त्व बढ़ जाता है। दक्षिण अफ्रीका में नेटाल (Natal) ट्रांसवाल (Transvaal) तथा आरेंज फ्री-स्टेट (Orange Free State) में कोयला पाया जाता है। रोडेशिया में भी कोयला है किन्तु खोदा नहीं गया है। दक्षिण अमेरिका में कालम्बिया (Columbia) तथा पीरू (Peru) में थोड़ा कोयला मिलता है, परन्तु समुद्र तट के समीप न होने के कारण इसका उपयोग नहीं किया जा सकता।

कोयले के अतिरिक्त आयरलैंड, स्काटलैंड तथा जर्मनी में पीट (Peat) भी बहुत पाया जाता है। भविष्य में इन खानों का भी उपयोग किया जावेगा।

संसार में सबसे अधिक कोयला ब्रिटेन भेजता है। कुल जितना कोयला इन देशों से निर्यात (Export) होता है उसका आधे से अधिक केवल ब्रिटेन से जाता है। ब्रिटेन की खानें समुद्र तट के पास हैं इस कारण कोयले को बाहर भेजने में बहुत सुविधा रहती है। वहाँ पर कोई भी खान समुद्र से २० मील से दूर नहीं है। तथा (U S. A.) में संयुक्तराज्य अमेरिका तथा जर्मनी की कोयले की खानें बन्दरगाहों से दूर अन्दर की तरफ हैं। इस कारण कोयले को बन्दरगाहों तक लाने में व्यय अधिक हो जाता है। ब्रिटेन अधिकांश में पक्का माल (Manufactured Articles) विदेशों को भेजता है अतएव ब्रिटेन से जाने वाले जहाजों में बहुत स्थान खाली रहता है। अस्तु कोयला उस खाली स्थान को भर देता है, यही कारण है कि जहाज सस्ते किराये पर कोयले को ले जाते हैं।

संयुक्तराज्य अमेरिका (U S A.) यद्यपि संसार में सबसे अधिक कोयला उत्पन्न करता है किन्तु वह कोयला विदेशों को नहीं भेजता। कारण यह है कि संयुक्तराज्य अमेरिका की कोयले की खानें लगभग २०० मील अन्दर की तरफ हैं इस कारण कोयले को बन्दरगाहों तक लाने में व्यय बहुत होता है। दूसरा कारण यह है कि योरोप जहाँ कि कोयले की माँग है संयुक्तराज्य अमेरिका (U S A) से बहुत दूर है। तीसरे संयुक्तराज्य अमेरिका कच्चा माल (Raw Materials) बाहर भेजता है और पक्का माल बाहर से मँगाता है। इस कारण इधर से जाने वाले जहाजों में जगह नहीं रहती। दक्षिण अमेरिका में औद्योगिक उन्नति न होने के कारण संयुक्तराज्य अमेरिका से वहाँ भी अधिक कोयला नहीं जाता।

जर्मनी और पोलैंड भी योरोपीय देशों को कोयला भेजते हैं। कोयला बाहर से मँगाने वाले देशों में फ्रांस, इटली तथा बाल्टिक प्रदेश के राज्य मुख्य हैं।

कोयले के अतिरिक्त मनुष्य ने शक्ति के और भी साधन ढूँढ निकाले हैं। घटिया कोयले का उपयोग बिजली और गैस उत्पन्न करने में होता है। क्रमशः इङ्गलैंड और जर्मनी में लिगनाइट कोयले का उपयोग बिजली और गैस तैयार करने में बढ़ता जा रहा है। इसके अतिरिक्त तेल (Petroleum) तथा जल विद्युत् (Hydro Electricity) का भी अधिकाधिक उपयोग हो रहा है। यहीं जहाजों में कोयला तथा तेल मिला कर उपयोग में लाने की बात भी सोची जा रही है। यद्यपि अन्य शक्ति के साधन (Sources of Power) ढूँढ निकाले गये हैं, परन्तु फिर भी कोयला मुख्य औद्योगिक शक्ति का साधन है और उसकी माँग घट नहीं रही है।

कोयले से अन्य महत्वपूर्ण गौण पदार्थ (By Products) भी निकाले जाते हैं। भिन्न क्रियाओं द्वारा कोयले को धुँआ रहित कोक (Coke) में परिणत किया जाता है, साथ ही बहुत से तेल, खाद और कोलतार इत्यादि निकाले जाते हैं। कोयले के मुख्य गौण पदार्थ (By Products) निम्नलिखित हैं —

कोलतार (Tar) तथा उससे उत्पन्न होने वाली वस्तुएँ। अमोनिया (Ammonia Sulphate) जो खाद के रूप में काम आता है। इसके अतिरिक्त गैस, तेल, बैन्जाल (Benzol), नैप्था (Naphtha), मोटर बैंजाल (Motor Benzol) तथा अन्य प्रकार के तेल निकाले जाते हैं। कुछ फुटकर पदार्थ गंधक (Sulphur) इत्यादि भी निकलते हैं।

कोयले की बढ़ती हुई माँग के कारण प्रत्येक देश में इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि कोयले को किफायत से खर्च किया जाय। खानों को खोदने के तरीके

में सुधार किया जा रहा है, तथा ऐसे एंजिन बनाये जा रहे हैं, जिनमें कोयला कम खर्च हो।

कोयले की उत्पत्ति

(दस लाख टनों में)

संयुक्तराज्य अमेरिका	४५६
ब्रिटेन	२३१
जर्मनी	१८६
सोवियत रूस	१४७
जापान	५३
फ्रांस	४६
पोलैंड	३८
भारत	२९
बेलजियम	२५
चीन	१७
मंचूरिया	११

संसार की कुल कोयले की उत्पत्ति १,२३२,०००,००० टन है।

प्रति मनुष्य पीछे कोयले का सुरक्षित भंडार

(हजार टनों में)

संयुक्तराज्य अमेरिका	२७ ४
इंगलैंड	३ ५
जर्मनी	१ ९
सोवियत रूस	७·६
फ्रांस	०·५
जापान	२ ०
दक्षिण अफ्रीका	६ ५
आस्ट्रेलिया	२७ १
कनाडा	१२८·२
चीन	२ ५
भारत	० २४

प्रति मनुष्य पीछे कोयले का उत्पादन

(टनों में)

संयुक्त राज्य अमरिका	३ ५
इंगलैंड	४ ६
जर्मनी	२ ४
सोवियत रूस	*० ७
फ्रांस	१ ?
जापान	० ६
बेलजियम	३ ४
भारत	० ०९
चीन	० ०५
दक्षिण अफ्रीका	२ ३
आस्ट्रेलिया	१ ८
कनाडा	१ १

तेल (Petroleum) 69, 65

खनिज तेल एक बहता हुआ पदार्थ है, जो पृथ्वी के गर्भ में पाया जाता है। तेल जलाने में, मशीनों में, तथा एञ्जिनों के चलाने में काम आता है। जब तेल कुएँ से निकलता है तो उसके साथ मिट्टी तथा अन्य धातुएँ मिली रहती हैं। मिट्टी तथा धातुओं को साफ करके तेल निकाला जाता है। तेल बहुत तरह का होता है, कहीं कच्चे तेल में मिट्टी तथा धातुएँ अधिक रहती हैं और कहीं कम। बाज़ार में जो मिट्टी का तेल मिलता है वह साफ किया हुआ हल्का तेल होता है, जो जलाने के काम में आता है। पट्रोलियम को साफ करके पेट्रोल (Petrol) तैयार करते हैं जो मोटर तथा हवाई जहाज के चलाने में काम आता है। आधुनिक समय में युद्ध में हवाई जहाजों के अत्यधिक उपयोग के कारण पेट्रोल का महत्त्व बहुत बढ़ गया है। प्रत्येक देश तेल की खानों पर अपना अधिकार करना चाहता है। पैराफिन (मोम) मोमबत्ती बनाने के काम में आता है। कच्चे तेल से कुछ भारी तेल भी तैयार किए जाते हैं, जो मशीन के पुर्जों को चिकना करने के काम में आते हैं। नैप्था (Naphtha) तथा वैसलीन (Vaseline) भी मिट्टी के भारी तेलों से ही तैयार की जाती है।

डिसल एँजिन (Diesel Engine) के आविष्कार के कारण तेल की माँग बहुत बढ़ गई, क्योंकि उसमें पेट्रोल के स्थान पर कच्चा तेल ही काम में आता है।

जहाँ बिजली नहीं है और जहाँ बड़े-बड़े एंजिन जो भाप से चलते हैं, काम में नहीं आ सकते, वहाँ यह छोटा सा एंजिन तेल से चलने के कारण अधिक उपयोगी सिद्ध होता है। गाँवों में, खेतों पर, समुद्री तथा हवाई जहाजों में, डिसल एंजिन ने कोयले को अपने स्थान से हटा दिया है, किन्तु बड़े बड़े कारखानों में इसका उपयोग नहीं किया जा सकता, क्योंकि उसमें व्यय अधिक होता है।

मिट्टी का तेल जिन देशों में निकाला जाता है वहाँ इसका उपयोग अधिक नहीं होता, अधिकांश तेल विदेशों को भेजा जाता है। अधिकतर तेल की खानें समुद्र-तट से दूर हैं, इस कारण कच्चे तेल को पाइप लाइनों के द्वारा बन्दरगाहों तक ले जाया जाता है और वहाँ कारखानों (Refineries) में शुद्ध किया जाता है। वहाँ से तेल बाहर भेजा जाता है। मिट्टी के तेल की माँग बढ़ जाने से नई-नई तेल की खानें ढूँढ़ निकाली गई हैं। तेल (Petroleum) की खानों को अपने अधिकार में लाने के लिए संसार के प्रबल साम्राज्यवादी राष्ट्रों में आपस में बहुत कुछ संघर्ष हुआ है और बहुत से प्रदेशों को अपनी स्वाधीनता केवल इसलिए खोनी पड़ी है क्योंकि
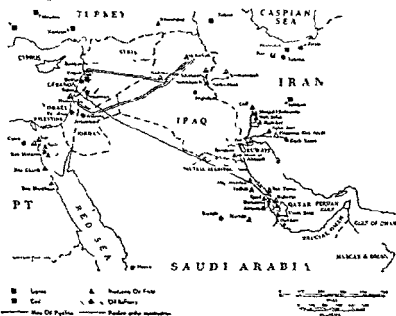
मध्य पूर्व में पेट्रोलियम

उनके धरातल के नीचे तेल बहता था। पारस का भी आजकल यही हाल है। वहाँ के तेल के लिए इंगलैंड और रूस दोनों ही लालायित हैं। अतः सम्भव है

युद्ध हो और पारस की स्वाधीनता खतरे में पड़ जाय। खनिज तेल ने वनस्पति के तेल का महत्व बढ़ा दिया है। खनिज तेल कोयले से भी अधिक शक्ति उत्पन्न करता है, किन्तु उसको भर कर रखने में बड़ी सावधानी की आवश्यकता है।

संसार के भिन्न भिन्न देशों में खनिज तेल (Petroleum) का अनुमान इस प्रकार है —

देश	दस लाख—बैरल (Barrel) में (१ बैरल=४२ गैलन)
संयुक्तराज्य अमरिका (U S A)	७००० से ६००० तक
फारस और इराक़	५८२१
रूस (दक्षिण-पूर्व)	६०००
मैक्सिको (Mexico)	४४२५
दक्षिण अमेरिका (उत्तरी भाग)	५७३०
" " (दक्षिणी भाग)	३५५०
पूर्वी द्वीप समूह (East Indies)	३०१५
भारत	६००
कनाडा	६००
कुल पृथ्वी का अनुमानित तेल	४३००० से ६५००० तक
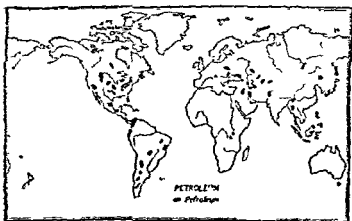
संयुक्तराज्य अमरिका (U S. A) संसार में सबसे अधिक तेल प्रतिवर्ष उत्पन्न करता है। यही नहीं, उसकी अनुमानित तेल-राशि भी संसार में सबसे अधिक है

संयुक्तराज्य अमेरिका के उपरान्त रूस तथा पारस और इराक (मैसोपोटैमिया) में सबसे अधिक तेल पाया जाता है। संसार में संयुक्तराज्य अमेरिका तथा वैनीज़ुला (Venezula) सबसे अधिक तेल विदेशों को भेजते हैं, परन्तु संयुक्तराज्य अमेरिका संसार में सबसे अधिक तेल मँगाता भी है। इसका कारण यह है कि संयुक्तराज्य अमेरिका में तेल-शोधक कारखाने (Refineries) बहुत हैं, जहाँ दक्षिण अमेरिका की खानों का कच्चा तेल शुद्ध होने के लिए आता है। संयुक्तराज्य अमेरिका के अतिरिक्त ब्रिटेन और जर्मनी भी बहुत अधिक तेल विदेशों से मँगाते हैं।

अभी तक तेल के सम्बन्ध में यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है कि संसार में कितना तेल है। नई-नई खानों को ढूँढ़ने का प्रयत्न जारी है, साथ ही तेल निकालने के तरीकों में सुधार और परिवर्तन किये जा रहे हैं। साधारणतः जब तेल का कुआँ खोदा जाता है तो गैस अथवा पानी के भार के कारण तेल स्वयं ऊपर आ जाता है। यदि तेल स्वयं ऊपर नहीं आता तो फिर कुएँ में पम्प करके तेल को निकालते हैं। इसके उपरान्त कुएँ को छोड़ दिया जाता है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि काफी तेल (५० %) चट्टानों के भीतर ही रह जाता है, क्योंकि एक सीमा के बाद पम्प करने में खर्च बहुत अधिक पड़ता है। भिन्न भिन्न प्रदेशों के कुओं का जीवन भिन्न होता है। कोई देर में समाप्त होते हैं, तो कोई-कोई शीघ्र समाप्त हो जाते हैं। तेल खोदते समय सर्वप्रथम गैस का बाहर आना आवश्यक है। यह गैस संकेत करती है कि अमुक स्थान पर तेल है। यदि गैस बाहर न निकले तो समझ लेना चाहिये कि यहाँ पर नीचे तेल नहीं है।

मिट्टी का तेल उत्पन्न करने में संयुक्तराज्य अमेरिका की पूर्वी तथा मध्य की रियासतें मुख्य हैं। मध्य की रियासतों से नलों द्वारा तेल मैक्सिको की खाड़ी तथा अटलांटिक महासागर के बन्दरगाहों तक ले जाया जाता है। रूस का काकेशस प्रान्त तथा दक्षिणी पश्चिमी साइबेरिया तेल की उत्पत्ति की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। बाकू और बाटूम (Baku and Battum) तक तेल पाइपों द्वारा ले जाया जाता है। पारस तथा इराक की खानों को अभी थोड़े दिनों से खोदा गया है। मैक्सिको की खानों से भी बहुत तेल निकलता है। अब तेल नलों द्वारा ले जाया जाकर सीधा जहाजों में भर दिया जाता है, इस कारण तेल को बंदरगाहों में भर कर नहीं रखना पड़ता। दक्षिण अमेरिका के उत्तरी प्रदेश तथा पीरू (Peru) में भी तेल निकाला जाता है। पूर्व में पूर्वी द्वीप-समूह (East Indies), बर्मा, चीन, जापान, फारमोसा, गैलीशिया (Galicia) तथा मिश्र में भी तेल की खानें हैं। योरोप में रूमानिया की खानों की उत्पत्ति भी पिछले दिनों में बहुत बढ़ गई है।

पेट्रोलियम की उत्पत्ति

देश	समस्त संसार की उत्पत्ति का %
संयुक्तराज्य अमेरिका	६० ८१%
सोवियत रूस	१० ७५%
वेन जुला	१० ३%
ईरान	३ ७%
डच पूर्वी द्वीप समूह	२ ६७%
रूमानिया	२ ४५%
मैक्सिको	१ ६७%
इराक	१ ५६%
कालम्बिया	१ ११%

संसार की कुल उत्पत्ति २७५,८०५,००० टन के लगभग है।

प्राकृतिक गैस (Natural G s)

यह गैस तेल का ही एक रूप है। संयुक्तराज्य अमेरिका संसार में सबसे अधिक गैस उत्पन्न करता है। आरम्भ में बहुत सी गैस व्यर्थ नष्ट कर दी गई थी, क्योंकि उस समय उसका उपयोग ज्ञात नहीं था। संयुक्तराज्य अमेरिका के अतिरिक्त पश्चिमी कनाडा तथा पोलैंड में भी प्राकृतिक गैस (Natural Gas) निकलती है। पैनसिलवेनिया (Pennsylvania) और ओहियो (Ohio) की रियासतों से गैस को पाइपों के द्वारा औद्योगिक केन्द्रों (Industrial Centrcs) में कारखानों तथा घरों के उपयोग के लिए ले जाया जाता है। पिट्सबर्ग (Pittsburg) इत्यादि केन्द्रों में गैस का बहुत उपयोग होता है।

जल विद्युत शक्ति (Hydro Elec tric Power)

बीसवीं शताब्दी में पानी के द्वारा बिजली उत्पन्न करने का नवीन आविष्कार हुआ है। पानी के द्वारा बिजली उत्पन्न करने में व्यय कम होता है, साथ ही बिजली को दूर तक ले जाया जा सकता है। औद्योगिक क्रान्ति (Industrial Revolution) के उपरान्त औद्योगिक केन्द्र कोयले की खानों के पास होते थे, किन्तु अब उन प्रदेशों में भी औद्योगिक उन्नति हो सकेगी, जहाँ कि कोयला नहीं है किन्तु जल द्वारा बिजली उत्पन्न करने की सुविधा है।

जल शक्ति (Water power) पानी की बहुतायत तथा धरातल की बनावट पर निर्भर है। जल शक्ति निम्नलिखित स्थानों पर उत्पन्न की जा सकती है —(१) जहाँ जल प्रपात (Waterfalls) हो, (२) जहाँ नदियों में पानी बहुत अधिक घटता बढ़ता न हो, क्योंकि बाढ़ आने से प्लान्ट (Plant) को हानि पहुँचना

है, और पानी कम हो जाने से काम रोकना पड़ता है। यह ध्यान में रखने की बात है कि जल-शक्ति को उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि पानी बहुत अधिक ऊँचाई से ही गिरता हो।

फ्रांस की सरकार ने अपने देश की जल-शक्ति का अनुमान करने के लिए विशेषज्ञों की एक कमेटी बिठाई थी। उस कमेटी ने संसार के अन्य देशों की जल-शक्ति का भी अनुमान किया है, जो इस प्रकार है।

संसार की जल शक्ति ८१

देश	देश की जल शक्ति के अंक, जो भविष्य में उत्पन्न की जा सकेगी (घोड़ों की शक्ति में)
संयुक्तराज्य अमेरिका (U S. A.)	२, ८०, ००, ०००
कनाडा	२, ००, ००, ०००
फ्रांस	४७, ००, ०००
नार्वे (Norway)	५, ५१, ००, ०००
स्वीडन (Sweden)	४५, ००, ०००
इटली	३८, ००, ०००
स्विटजरलैंड	१४, ००, ०००
जर्मनी	१३, ५०, ०००
जापान	६०, ००, ०००
स्पेन	४०, ००, ०००
मैक्सिको (Mexico)	६०, ००, ०००
ब्राजील (Brazil)	२, ५०, ००, ०००
ब्रिटेन	५, ८५, ०००
फिनलैंड	१५, ००, ०००
भारत	२, ७०, ००, ०००
बैलजियन कांगो	६, ००, ००, ०००
फ्रैंच कांगो	३, ५०, ००, ०००
चीन	२, ००, ००, ०००
फ्रैंच कैमेरून (French Cameroon)	१, ३०, ००, ०००
सायबेरिया	१, ८०, ००, ०००
नायगेरिया (Nigeria)	६०, ००, ०००

ऊपर दिये हुए विवरण से एक बात स्पष्ट हो जाती है कि जहाँ कोयला कम है वहाँ जल शक्ति अधिक मिलती है। कुछ देश ऐसे भी हैं जहाँ कच्चा माल उत्पन्न

नहीं होता, परन्तु जल शक्ति बहुत है। आइसलैंड (Iceland) ऐसे ही देशों में से है, जहाँ जल शक्ति बहुत है। अतएव वहाँ बिजली के द्वारा रासायनिक पदार्थ बनाने के कारखाने खोले गये हैं।

ऊपर लिखा जा चुका है कि जल द्वारा बिजली उन्हीं स्थानों पर उत्पन्न हो सकती है जहाँ जल प्रपात (Waterfall) हो, नदी में पानी एक सा रहता हो। किन्तु इनके साथ ही इस बात की भी आवश्यकता है कि शक्ति के उत्पत्ति स्थान से औद्योगिक केन्द्र अधिक दूरी पर न हो। क्योंकि अनुभव से यह ज्ञात हुआ है कि जितनी ही दूर बिजली ले जाई जावगी उतनी ही शक्ति अधिक नष्ट होगी। यहाँ तक कि ५०० मील बिजली ले जाने में २० % शक्ति नष्ट हो जाती है। जिन स्थानों पर कोयला अथवा पैट्रोलियम सस्ते दामों पर नहीं मिलता वहाँ बिजली उत्पन्न करने की अधिक सुविधा होती है क्योंकि हाइड्रो इलेक्ट्रिक प्लांट को खड़ा करने में बहुत पूँजी की आवश्यकता होती है। यदि कहीं प्राकृतिक जलप्रपात नहीं हुआ और नदियों में पानी का वर्ष भर एक-सा बहाव न हुआ तो बाँध या अथवा नदी का पानी इकट्ठा करने के लिए बड़ी बड़ी झीलें बनानी पड़ती हैं (जैसा कि भारत में है) और उनमें बहुत अधिक पूँजी लग जाती है। उस पूँजी का सूद व्यय में जोड़ने से शक्ति का लागत खर्च अधिक बैठता है। परन्तु यदि पानी सिंचाई के काम में लाया जा सके, जैसा कि संयुक्तराज्य में हुआ है, तो यह खर्चा कम हो सकता है।

अभी तक जल शक्ति का यथेष्ट उपयोग नहीं हो सका है। अनुमान यह किया जाता है कि पृथ्वी की समस्त जल शक्ति की केवल ५ % जल शक्ति इस समय उत्पन्न की जा रही है।

सबसे अधिक जल शक्ति संयुक्तराज्य अमेरिका तथा कनाडा में उत्पन्न की जाती है। नायगरा (Niagara) जलप्रपात से अनन्त जल विद्युत्-शक्ति उत्पन्न की जा सकती है। नायगरा नदी ईरी (Erie) तथा आन्टेरियो के बीच में ३२७ फुट की ऊँचाई से गिरती है। नायगरा जलप्रपात के जल से कनाडा तथा संयुक्तराज्य अमेरिका दोनों ही बिजली उत्पन्न करते हैं। अधिकांश बिजली उत्पत्ति-स्थान के समीपवर्ती प्रदेश में ही काम आती है। वैसे नायगरा जलप्रपात की बिजली २५० मील तक ले जाई गई है। अभी हाल में सेंट लारेंस नदी के जल से भी बिजली उत्पन्न की जाने लगी है। सच तो यह है कि राकी पर्वत-माला अपलेशियन पहाड़ों में जल विद्युत् का अत्यधिक विस्तार हुआ है।

यदि भविष्य में जल विद्युत् को उत्पन्न करने में विशेष उन्नति हुई तो फिर एक औद्योगिक क्रान्ति (Industrial Revolution) होगी। जल विद्युत् के

सुलभ हो जाने पर धन्धों के केन्द्रीयकरण (Centralisation) की आवश्यकता नहीं होगी, वरन् वे कहीं भी ग्रामों में स्थापित किये जा सकेंगे। इसका परिणाम यह होगा कि घनी आबादी से उत्पन्न होने वाली समस्याएँ स्वत ही हल हो जावेंगी। कारखाने के मजदूर खुली हवा में अपने घरों के स्वास्थ्यप्रद वातावरण में रह सकेंगे। चिमनियों से निकलकर धुआँ शहरों पर नहीं फैलेगा और शहरों की गन्दगी बहुत कुछ दूर हो जावेगी। यही नहीं, जलशक्ति के सुलभ होने पर कुटीर उद्योग धन्धा (Cottage Industries) की भी उन्नति हो सकेगी। क्योंकि उस दशा में प्रत्येक कारीगर शक्ति का उपयोग आसानी से कर सकेगा और सस्ते तथा हल्के यन्त्रों द्वारा चीजें बनाकर वह भी बड़े कारखानों की प्रतिद्वन्द्विता में अपना माल बेच सकेगा। बड़ी मात्रा की उत्पत्ति (Large Scale Production) की सबसे अधिक बचत इसमें है कि उसमें शक्ति का उपयोग हो सकता है, किन्तु एक जुलाहा या एक ग्राम एञ्जिन मोल नहीं ले सकता। बिजली के सुलभ होने पर यह अड़चन नहीं रहेगी। यही नहीं, बिजली के उपयोग से एक लाभ यह भी होगा कि जहाँ कच्चा माल (Raw Material) मिलेगा वहीं कारखाना खड़ा किया जा सकेगा। कच्चे माल को कारखाने तक लाने का खर्चा बच जायगा। सच तो यह है कि इस सफ़ेद कोयले (White Coal) (जल विद्युत्) के द्वारा उद्योग धन्धों की काया पलट हो जावेगी।

संसार में जल विद्युत् की उत्पत्ति

संयुक्तराज्य अमरिका	११, ११०, ०० किलोवाट
कनाडा	४, ५८०, ००० "
इटली	३, ६०७, ००० "
जापान	३, ०५०, ००० "
फ्रांस	२, ७५०, ००० "
जर्मनी	१, ४६०, ००० "
अन्य देश	७, ४२०, ००० "

पिछले दिनों में सोवियत रूस में जल विद्युत् का बहुत विस्तार हुआ है किन्तु उसके आँकड़े प्राप्त नहीं हैं।

जल-विद्युत् का विकास

(प्रति १००० व्यक्तियों के पीछे घोडे की शक्ति)

जिन देशों का वर्षा तथा धरातल उपयुक्त है		जहाँ जल विद्युत का विकास मौसमी वर्षा के कारण अधिक नहीं हुआ ।			
१—नारवे	७६०	जापान	७५	होंडूरास	४
२—न्यूफाउडलैंड	६४२	पनामा	७२	कोलम्बिया	३
३—कनाडा	७४०	हवाई	६७	भारत	१
४—स्वट्ज़रलैंड	६७२	स्पेन	५६	चीन	०
५—अलास्का	५८२	कास्टारिका	५४		
६—स्वीडन	३००	चिली	४२		
७—न्यूज़ीलैंड	२५५	मैक्सिको	२४		
८—पुराना आस्ट्रिया	१४८	ब्राज़ील	१७		
९—इटली	१४२	फ्रेंच मरक्को	१२		
१०—संयुक्त राज्य अमेरिका	१३६	ग्वाटामाला	१०		
११—फ्रांस	१२५	चोलन	१०		
१२—फिनलैंड	१२३	पीरू	८		
		बोलीविया	४		
		वैनीज़ुला	४		

यह देश जिनका धरातल कम उपयुक्त है।

१३—जर्मनी	३३
१४—आस्ट्रेलिया	२१
१५—पुरानी चैकोस्लावाकिया	२०
१६—यूगोस्लाविया	१७
१७—यूरोपीय रूस	११
१८—ब्रिटेन	९
१९—अरजैनटाइन	६
२०—बैलजियम	४
२१—एशियाई रूस	१

संयुक्तराज्य अमेरिका में अपलेशियन पहाड़ी प्रदेश तथा राकी पर्वत माला में अत्यधिक जल विद्युत उत्पन्न होता है। कनाडा में तो इतनी जल-विद्युत् होती है कि

प्रत्येक औद्योगिक केन्द्र को यह बिजली मिलती है। योरोप में आल्प्स पर्वत माला के प्रदेश में जल विद्युत् का खूब प्रचार हुआ है।

एलकाहल (Alcohol) सम्भवतः भविष्य में एलकाहल (Alcohol) भी शक्ति उत्पन्न करने के साधनों में महत्त्वपूर्ण हो जावेगा। इसकी कीमत कम होने के कारण यह पैट्रोलियम के स्थान पर उपयोग में लाया जाता है। एलकाहल कतिपय वनस्पतियों से बनता है। इस कारण इसकी उत्पत्ति उन वनस्पतियों को पैदा करने से बढ़ सकती है।

मनुष्य ने शक्ति के अन्य साधन भी ढूँढ़ निकाले हैं और अधिक की खोज में है। प्रकृति के भण्डार में अनन्त शक्ति भरी पड़ी है। ज्वार भाटों के चढ़ाव उतार तथा तेज धूप से भी शक्ति उत्पन्न की जा सकती है। परन्तु अभी व्यापारिक दृष्टि से इन साधनों का उपयोग सफल नहीं हुआ है। भविष्य में आशा की जाती है कि सूरज की किरणों तथा समुद्र की लहरों से शक्ति उत्पन्न की जा सकेगी। यदि इन प्रयत्नों में सफलता मिल गई तो उष्ण कटिबन्ध के देशों में तथा समुद्रतट के किनारे शक्ति उत्पन्न करने में बहुत आसानी हो जावेगी।

अभ्यास के प्रश्न

१—लोहे की खानें कहाँ कहाँ मिलती हैं विस्तार पूर्वक लिखिए।

२—कोयले की खानों का उल्लेख कीजिए। उसका औद्योगिक महत्व बतलाइए।

३—पैट्रोलियम का क्या उपयोग है? वह कहाँ पाया जाता है? 60, 63

४—जल विद्युत् के बारे में आप क्या जानते हैं और उसका कहाँ कहाँ उपयोग हुआ है? 61

625—आधुनिक काल में कोयला और लोहा सोने और हीरों से अधिक महत्वपूर्ण हैं। इस पर अपना मत लिखिए।

६—मैंगनीज, बाक्साइट, सीसा कहाँ मिलता है?

७—टिन, ताँबा और चाँदी की खानें कहाँ अधिक हैं?

८—पैट्रोलियम का पिछले दिनों इतना महत्व क्यों बढ़ गया?

जल-विद्युत् का विकास

(प्रति १००० व्यक्तियों के पीछे घोड़े की शक्ति)

जिन देशों का वर्षा तथा धरातल उपयुक्त है		जहाँ जल विद्युत का विकास मौसमी वर्षा के कारण अधिक नहीं हुआ।			
१—नारवे	७६०	जापान	७५	हॉंड्रास	४
२—न्यूफाउंडलैंड	६४२	पनामा	७२	कालम्बिया	३
३—कनाडा	७१०	हवाई	६७	भारत	१
४—स्वट्ज़रलैंड	६७२	स्पेन	५६	चीन	०
५—अलास्का	५८२	कास्टारिका	५४		
६—स्वीडन	३००	चिला	४२		
७—न्यूज़ीलैंड	२५५	मैक्सिको	२४		
८—पुराना आस्ट्रिया	१४८	ब्राज़ील	१७		
६—इटली	१४२	फ्रेंच मरक्को	१२		
१०—संयुक्त राज्य अमेरिका	१२६	ग्वाटामाला	१०		
११—फ्रांस	१२५	चोलन	१०		
१२—फिनलैंड	१२३	पीरू	८		
		बोलाविया	४		
		वैनीजुला	४		

वह देश जिनका धरातल कम उपयुक्त है।

१३—जर्मनी	२३
१४—आस्ट्रेलिया	२१
१५—पुरानी जैकोस्लावाकिया	२०
१६—यूगस्लाविया	१७
१७—यूरापाय रूस	११
१८—ब्रिटेन	६
१_—अरजैनटाइन	६
२०—बैलजियम	४
२१—एशियाई रूस	१

संयुक्तराज्य अमारका में अपलेशियन पहाड़ी प्रदेश तथा राकी पर्वत माला म अत्यधिक जल विद्युत उत्पन्न हाना है। कनाडा में तो इतनी जल विद्युत् होती है कि

प्रत्येक औद्योगिक केन्द्र को वह बिजली मिलती है। योरोप में आल्प्स पर्वत माला के प्रदेश में जल-विद्युत् का खूब प्रसार हुआ है।

सम्भवतः भविष्य में एलकाहल (Alcohol) भी शक्ति उत्पन्न करने के साधनों में महत्वपूर्ण हो जावेगा। इसकी कीमत कम होने के कारण यह पैट्रोलियम के स्थान पर उपयोग में लाया जाता है। एलकाहल कतिपय वनस्पतियों से बनता है। इस कारण इसकी उत्पत्ति उन वनस्पतियों को पैदा करने से बढ़ सकती है।

एलकाहल (Alcohol)

मनुष्य ने शक्ति के अन्य साधन भी ढूँढ निकाले हैं और अधिक की खोज में हैं। प्रकृति के भण्डार में अनन्त शक्ति भरी पड़ी है। ज्वार भाटों के चढ़ाव उतार तथा तेज धूप से भी शक्ति उत्पन्न की जा सकती है। परन्तु अभी व्यापारिक दृष्टि से इन साधनों का उपयोग सफल नहीं हुआ है। भविष्य में आशा की जाती है कि सूरज की किरणों तथा समुद्र की लहरों से शक्ति उत्पन्न की जा सकेगी। यदि इन प्रयत्नों में सफलता मिल गई तो उष्ण कटिबन्ध के देशों में तथा समुद्रतट के किनारे शक्ति उत्पन्न करने में बहुत आसानी हो जावेगी।

अभ्यास के प्रश्न

१—लोहे की खानें कहाँ कहाँ मिलता है विस्तार पूर्वक लिखिए।

२—कोयले की खानों का उल्लेख कीजिए। उसका औद्योगिक महत्व बतलाइए।

३—पैट्रोलियम का क्या उपयोग है? वह कहाँ पाया जाता है? 60-63

४—जल-विद्युत् के बारे में आप क्या जानते हैं और उसका कहाँ कहाँ उपयोग हुआ है? 61

62 ५—आधुनिक काल में कोयला और लोहा सोने और हीरों से अधिक महत्वपूर्ण हैं। इस पर अपना मत लिखिए।

६—मैंगनीज, बाक्साइट, सीसा कहाँ मिलता है?

७—टिन, ताँबा और चाँदी की खानें कहाँ अधिक हैं?

८—पैट्रोलियम का पिछले दिनों इतना महत्व क्यों बढ़ गया?

दसवाँ परिच्छेद

गौण उद्योग-धन्धे (Secondary Industries)

यह तो पहले परिच्छेद में ही कहा जा चुका है कि उद्योग धन्धों का स्थानीयकरण निम्नलिखित बातों पर निर्भर है —

(१) शक्ति के साधन, (२) कच्चा माल, (३) कुशल श्रमजीवी, (४) सस्ते दामों पर यातायात की सुविधा, (५) बाज़ार, (६) जलवायु। यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक धन्धे के स्थानीयकरण में इन सभी बातों की आवश्यकता हो। साधारणतः शक्ति के साधन और विशेष कर कोयले की खानों के समीप उद्योग धन्धे स्थापित होते हैं। कोयले की खानों के प्रदेश मुख्य औद्योगिक प्रदेश हैं क्योंकि कोयले को दूर ले जाने में व्यय अधिक होता है। कभी कभी धन्धे कोयले की खानों के प्रदेश से दूर स्थापित किये जाते हैं जिससे कि अन्य सुविधायें प्राप्त हो सकें। जिन धन्धों का कच्चा माल भारी और कम मूल्यवान होता है वे कच्चा माल उत्पन्न करने वाले प्रदेश में ही स्थापित किये जाते हैं। उदाहरण के लिए लकड़ी का धन्धा। यदि कच्चे माल के प्रदेश में शक्ति की भी सुविधा हो तब तो कहना ही क्या है। उस दशा में धन्धा खूब उन्नति करता है। यातायात की सुविधा के बिना तो कोई धन्धा पनप ही नहीं सकता। किसी किसी धन्धे में कुशल कारीगरों का बहुत महत्व होता है। ऐसे धन्धे उन्हीं स्थानों पर स्थापित होते हैं जहाँ कुशल मज़दूर मिलते हैं। उदाहरण के लिए जोधपुर का छपाई रंगाई का धन्धा। बाज़ार का समीप होना अथवा बाज़ार में माल ले जाने की सुविधा का होना धन्धों की स्थापना के लिए अत्यन्त आवश्यक है। किन्तु आजकल प्रतिस्पर्द्धा (Competition) बढ़ जाने से आयात कर (Import duties) के अधिकाधिक लगाये जाने के कारण धन्धे बाज़ार के समीप ही स्थापित किये जाने लगे हैं। भारत में जो सूती कपड़े के कारखाने, उत्तर प्रदेश तथा बंगाल इत्यादि में स्थापित किये गये तथा फोर्ड इत्यादि ने अपने कारखाने भारत में स्थापित किए वह इसी कारण से।

ऊपर हमने धन्धों के स्थानीयकरण के सम्बन्ध में मुख्य कारणों का उल्लेख किया किन्तु कुछ और भी कारण हैं जिनके कारण धन्धों का स्थानीयकरण होता है।

यथेष्ट पूँजी की व्यवस्था भी स्थानीयकरण में सहायक होती है जिस प्रदेश में पूँजी यथेष्ट मिल सकती है वहाँ धन्धा केन्द्रित हो जाता है। इसके

अतिरिक्त धन्धे के पूर्वारम्भ होने का लाभ (Advantages of Early Start) भी धन्धे को केन्द्रित करने में सहायक होता है। क्योंकि कारखानों की अर्जित कुशलता तथा प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा भी उस धन्धे को वहीं केन्द्रित करने में सहायक होती है। उदाहरण के लिए फ्रांस की शराब बहुत प्रसिद्ध है। अन्य देशों में भी शराब उतनी ही बढ़िया तैयार होने लगी है किन्तु फ्रांस की शराब की बाजार में प्रतिष्ठा है अतएव अन्य देशों की शराब फ्रांस में आकर फ्रैंच शराब के नाम से विदेशों को जाती है।

अन्त में किसी प्रदेश के निवासियों की योग्यता तथा कार्यक्षमता तथा उनकी सांस्कृतिक उन्नति भी उद्योग धन्धों की उन्नति में सहायक होती है। बहुधा देखा गया है कि जिन प्रदेशों में साधारणतः मनुष्य अधिक विकास कर चुके हैं वहीं धन्धे भी अधिक उन्नति करते हैं।

लोहे और कोयले का धन्धों के विकास पर प्रभाव

कुछ विद्वानों का कहना है कि जिन प्रदेशों में लोहे और कोयले की बहुतायत होती है वे शीघ्र औद्योगिक उन्नति करते हैं। एक सीमा तक यह सत्य है परन्तु प्रत्येक दशा में यह सत्य हो ऐसी बात नहीं है। कुछ देश ऐसे हैं जो औद्योगिक दृष्टि से बहुत उन्नत अवस्था में हैं परन्तु उन देशों में कोयला और लोहा या तो बिलकुल नहीं पाया जाता या बहुत कम पाया जाता है। उदाहरण के लिए स्वीट्ज़रलैंड और जापान को लीजिए। इन देशों ने उन धन्धों की ओर अधिक ध्यान दिया कि जिनमें लोहे या कोयले की आवश्यकता नहीं पड़ती है। हम नीचे एक तालिका देते हैं जिससे देशों के औद्योगिक विकास तथा लोहे और कोयले की उत्पत्ति का सम्बन्ध स्पष्ट हो जावेगा।

देश	धन्धों में लगे हुए व्यक्तियों का प्रतिशत	कुल जन संख्या पर प्रति व्यक्ति पीछे कोयले का उपयोग (टनों में)	कुल जन संख्या पर प्रति व्यक्ति पीछे कोयले की उत्पत्ति (टनों में)	प्रति व्यक्ति पीछे लोहे की उत्पत्ति (टनों में)
स्वीट्ज़रलैंड	४५%	१/१० टन	बिलकुल नहीं	बिलकुल नहीं
जर्मनी	४५%	२४ टन	२६ टन	१/१० टन
बेलजियम	४०%	४५ टन	३६ टन	१/२५ टन
ब्रिटेन	४०%	४ टन	५५ टन	३/१० टन
निदरलैंड	४०%	१८ टन	१५ टन	बिलकुल नहीं

चेकोस्लावाकिया	३७%	१.५ टन	१ ८ टन	१/१० टन
स्वीडन	१५%	१ ५ टन	नगण्य	१ ६ टन
फ्रांस	३५%	२ टन	१.५ टन	१.२ टन
आस्ट्रेलिया	३०%	१.५ टन	१ २ टन	१/१० टन
संयुक्तराज्य-अमेरिका	३०%	१ ८ टन	१ ८ टन	१/२ टन
कनाडा	२६%	२ ८ टन	१ टन	नगण्य
नार्वे	२६%	१ ८ टन	नगण्य	१/१० टन
इटली	२५%	१/२ टन	नहीं	नगण्य

कोयले के उपयोग तथा कोयले और लोहे का उत्पादन की दृष्टि से देशों का औद्योगिक विकास।

६०
लोहा और स्पात का धंधा (Iron & Steel Industry)

लोहे और स्पात का धंधा एक अत्यन्त महत्वपूर्ण धंधा है। क्योंकि यंत्र, औजार, रेल, जहाज, मोटर इत्यादि सभी आवश्यक चीजों को तैयार करने में लोहे और स्पात की जरूरत होती है। लोहे का धंधा उन्हीं स्थानों पर पनप सकता है जहाँ कि कोयला, लोहा, तथा लाइमस्टोन मिलता हो। क्योंकि यह कच्चा माल भारी और कम मूल्यवान होता है इस कारण दूर नहीं ले जाया जा सकता। यही नहीं, लोहा और स्टील की बनी हुई चीजें यंत्र तथा रेल इत्यादि भारी होती हैं। इस कारण उन्हें बाजारों तक ले जाने की भी एक समस्या होती है। इस कारण यह धन्धा उन्हीं स्थानों पर स्थापित किया जाता है जहाँ से माल बाजारों में आसानी से भेजा जा सके। इसके अतिरिक्त पानी, मजदूरों तथा यातायात के साधनों की सुविधा भी आवश्यक होती है।

लोहे और स्पात के धंधे में कोयले की बहुत अधिक आवश्यकता होती है। एक टन लोहे को गलाने के लिए लगभग दो टन कोयला और एक टन लाइमस्टोन की जरूरत होती है। अधिकतर लाइमस्टोन कोयले की खानों के समीप ही मिलता है। इस कारण कोयला उत्पन्न करने वाले प्रदेशों में यह धंधा अधिकतर स्थापित किया जाता है। भारत में टाटा का स्टील का कारखाना लोहे की खानों से कोयले की खानों के अधिक समीप है।

कच्चे लोहे से शुद्ध लोहे को निकालने के लिये उसे बड़ी बड़ी भट्टियों में कोयले और लाइमस्टोन के साथ गलाया जाता है। भट्टी में इन तीनों चीजों को रख देने के उपरान्त तेज गरम हवा पहुँचाई जाती है जिससे धातु गलकर बहने

लगती है। धातु उसमें मिले हुये पदार्थों से हल्की होती है इस कारण पिघले हुये पदार्थ के ऊपर आ जाती है। अन्य पदार्थों को लाइमस्टोन सोख लेता है। यह पिघली हुई धातु भट्टी से नली द्वारा बड़े बड़े रेत के बने हुए स्थानों पर ले जाकर ठंडी कर ली जाती है। यही पिग आयरन (Pig Iron) कहलाता है। किन्तु इसमें भी कुछ अशुद्धियाँ विशेषकर गंधक, फास्फोरस, तथा कार्बन रहता है, इस कारण यह टूट जाता है। पिग आयरन को अधिक कठोर बनाने के लिये उसे राट आयरन में परिणत करते हैं। राट आयरन साधारणतः कठोर होता है किन्तु बहुत अधिक कठोर नहीं होता। राट आयरन इतना कठोर नहीं होता कि उससे यन्त्र, जहाज, रेल तथा पुल इत्यादि बनाये जा सकें। पिग आयरन को किसी लम्बी वस्तु से चलाने से राट आयरन तैयार होता है क्योंकि इस क्रिया से कार्बन आयरन से निकल जाती है।

पिग आयरन से स्पात (Steel) बनाने की बहुत सी क्रियायें हैं, किन्तु तीन क्रियायें मुख्य हैं, (१) बैसीमर (Bessemer), ओपिन हर्थ (Open Hearth) तथा बेसिक (Basic) बैसीमर क्रिया में पिग आयरन की समस्त अशुद्धियों को लोहे में से ठंडी हवा पास करके नष्ट कर देते हैं। जब लोहा बिलकुल शुद्ध हो जाता है, कोई अशुद्धि नहीं रहती तब आवश्यकतानुसार कार्बन मिला देते हैं। ओपिन हर्थ (Open Hearth) में पिग आयरन की समस्त अशुद्धियों को भट्टा में गरम कर जला देते हैं। ओपिन हर्थ तथा बैसीमर क्रिया में भेद केवल भट्टों का है। जब पिग आयरन की सब अशुद्धियाँ जल जाती हैं तो कार्बन भी जल जाता है। इस कारण बाद में आवश्यकतानुसार कार्बन मिला लिया जाता है। पिछले कुछ वर्षों में बेसिक (Basic) क्रिया अधिक प्रचलित हो गई है और अधिकतर स्पात इसी क्रिया से तैयार किया जाता है। इस क्रिया में लाइम के द्वारा लोहे में जितना भी फास्फोरस होता है वह निकाल लिया जाता है। इस कारण अब उस कच्चे लोहे से भी स्पात तैयार हो सकता है जिसमें फास्फोरस का अंश अधिक हो। जर्मनी का स्पात का धंधा इस क्रिया के आविष्कार के उपरान्त अधिक चमक उठा क्योंकि लारेन के लोहे में फास्फोरस का अंश अधिक था।

कुछ वर्षों से स्पात के साथ भिन्न भिन्न धातुओं को मिलाकर भिन्न भिन्न कार्यों के लिये स्टील तैयार किया जाता है। निकल, मैंगनीज, क्रोम, टंगस्टन, तथा वैनेडियम को स्टील के साथ मिलाया जाता है। पिछले वर्षों में स्टील तथा पिग आयरन की उत्पत्ति बहुत तेजी से बढ़ गई है। विशेष कर सन् १९१८ के उपरान्त तो स्टील और पिग आयरन की उत्पत्ति बेहद बढ़ गई। क्योंकि दिन प्रतिदिन उद्योग धंधों की उन्नति हो रही है और रेल तथा जहाज़ों का चलन बढ़ रहा है।

सयुक्तराज्य अमेरिका में सबसे अधिक लोहा और स्पात तैयार किया जाता है। सयुक्तराज्य की लोहे की खानों म अनन्त राशि में लोहा भरा पड़ा है और समीप ही कोयले की खानें हैं। अतएव यहाँ लोहे के धधे की स्थापना के लिये सभी सुविधाय मौजूद हैं। सयुक्तराज्य अमेरिका में लोहे और स्पात (Steel) का धधा मिसिसिपी नदी के पूर्व में ही दिखलाई पड़ता है। क्योंकि पूर्वी भाग ही म लोहे और कोयले की खानें हैं। यही नहीं, सयुक्तराज्य अमरिका के पूर्वी भाग म ही देश क प्रधान औद्योगिक केन्द्र हैं। अपलेशियन पर्वत माला के आस पास लोहे के बहुत से कारखाने स्थापित हैं जो प्रतिवर्ष बहुत बड़ी राशि में लोहा और स्पात तैयार करते हैं।

सयुक्त राज्य अमेरिका का लोहे तथा स्पात का धधा

सयुक्त राज्य अमरिका म पिट्सबर्ग तथा ओहायो नदी की घाटी का प्रदेश लोहे तथा स्पात क धधों का मुख्य केन्द्र है। पिट्स्बर्ग को ससार म लोहे क धधे का सबसे बड़ा केन्द्र होने का गौरव प्राप्त है। पिट्स्बर्ग क समीप ही कोयले की खानें हैं और लोहा भी मिलता है। इस कारण लोहे का धधा आरम्भ में यहां स्थापित हो गया। ओहायो नदी की घाटी क मुँह पर स्थित होने क कारण यहाँ लोहा तथा कोयला आसानी से आ सकता है। यही नहीं, तैयार माल को यहाँ से अन्य केन्द्रों तक ले जाने की भी सुविधा है। इस कारण यहाँ धधा खूब चमक उठा। अब यद्यपि कच्चा लोहा मुख्यत झील प्रदेश से आता है फिर भी धधे को क्षति नहीं पहुँची। क्योंकि लोहे को दूरस्थ खानों से लाने के लिये यातायात का उत्तम प्रबन्ध कर दिया गया है जिससे पिट्स्बर्ग क कारखानों तक झील प्रदेश स लोहा लाने में अधिक व्यय नहीं होता। फिर भी पिट्स्बर्ग अर्थात् उत्तरी अपलाशियन प्रदेश की यही एक कमी है। उत्तम कोयले का समीप ही मिलना, नदी का जल तथा उससे यातायात की सुविधा, घनी आबादी क कारण लोहे की अत्यधिक माँग, तथा रेलवे लाइनों का विस्तार, ये कुछ ऐसी सुविधायें हैं जिनके कारण आज भी पिट्स्बर्ग इस धन्धे का प्रमुख केन्द्र बना हुआ है।

पिट्स्बर्ग तथा ओहियो का प्रदेश

झील प्रदेश म लोहे और स्पात का धधा ईरी (Erie) झील के डैट्रायट (Detroit), क्लीवलैंड (Cleveland) और बफैलो इत्यादि बन्दरगाहों, मिचिगन झील के सिरे के केन्द्रों में शिकागो (Chicago), गारी (Gary) जिलों में, तथा सुपीरियर झील (Superior Lake) के प्रदेश में डुलुथ

झील-प्रदेश (Lake Region)

(Duluth) में केन्द्रित है। इन केन्द्रों को एक बड़ी सुविधा यह है कि झीलों पर स्थित होने के कारण लोहा तथा कोयला इत्यादि सुविधा तथा कम खर्च में यहाँ तक पहुँच सकता है। यह केन्द्र लोहे और स्पात के बाजार से दूर है। बात यह है कि यह केन्द्र घनी आबादी तथा औद्योगिक प्रदेश में नहीं है। इस कारण इन कारखानों में तैयार होने वाले लोहे और स्पात की माँग उस प्रदेश में नहीं है। किन्तु कच्चे माल के मिलने की सुविधा होने के कारण तथा यातायात (Transportation) की सुविधा होने के कारण यह प्रदेश इस धंधे की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गया है।

अटलांटिक समुद्र से मिले हुये प्रदेश में मध्य अटलांटिक का प्रदेश महत्वपूर्ण है। न्यूयार्क (New York) फिलेडैलफिया, (Philadelphia) तथा बाल्टीमोर (Baltimore) के प्रदेश इसके मुख्य केन्द्र हैं। इस प्रदेश को दो मुख्य सुविधायें प्राप्त हैं। प्रथम यह प्रदेश अत्यन्त घनी आबादी का औद्योगिक प्रदेश है। दूसरे समुद्र के समीप होने से तैयार माल विदेशों को आसानी से भेजा जा सकता है तथा क्यूबा (Cuba) और चिली (Chile) से कच्चा लोहा आसानी से आ सकता है। मध्य अटलांटिक का ही प्रदेश ऐसा है जहाँ स्थानीय आवश्यकता से अधिक लोहा और स्पात तैयार होता है।

दक्षिण अपेलेशियन के अलबामा (Albama) राज्य में लोहा और स्पात तैयार करने की जैसी सुविधा है वैसी अन्य किसी भी देश में नहीं है। अलबामा प्रान्त में बर्मिंघम (Birmingham) जिले में लोहा कोयला तथा चूने का पत्थर तीनों ही पास-पास मिलते हैं। इस कारण यह प्रदेश लोहे के धंधे की दृष्टि से उन्नति कर रहा है। यातायात के साधन की भी यहाँ सुविधा है। इस कारण दक्षिण में लोहे और स्पात की बढ़ती हुई माँग को यह पूरा करता है। फिर भी यहाँ स्थानीय आवश्यकता से अधिक पिग आयरन तैयार होता है जो उत्तर की ओर भेज दिया जाता है।

संयुक्तराज्य अमरीका में लोहे और स्पात (Steel) के धंधे की उन्नति पिछले योरोपीय महायुद्ध (१९१४-१८) के उपरान्त विशेषकर हुई। उस समय लोहे और स्टील की माँग इतनी अधिक बढ़ गई थी कि संयुक्तराज्य अमरिका के कारखानों ने अपनी शक्ति के बाहर लोहा और स्टील बनाने का प्रयत्न किया। इसके उपरान्त भी संसार में लोहे तथा स्टील की माँग बढ़ती गई। यद्यपि संयुक्तराज्य अमरिका संसार में सबसे अधिक लोहा और स्टील तैयार करता है किन्तु अधिकांश लोहा और स्टील देश में ही खप जाता है। कुल उत्पत्ति का केवल पाँच प्रतिशत स्टील विदेशों को जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि संयुक्तराज्य अमरिका

में ही लोहे और स्टील की माँग बहुत है। यंत्र तथा मोटर इत्यादि का धंधा संयुक्त राज्य अमेरिका में इस तेजी से बढ़ा है कि सारा लोहा और स्टील इन धन्धों में ही खप जाता है।

योरोप के लोहे तथा स्पात का धन्धा

योरोप में ब्रिटिश, रूर, लारेन, सिलीशिया (जर्मनी में) तथा स्वीडन में लोहे का धन्धा मुख्यतः स्थापित है। इन प्रदेशों में लोहा और कोयला समीप ही मिलता है। इस कारण वहाँ यह धन्धा पनप उठा है। यही नहीं कि इन प्रदेशों में लोहा और कोयला बहुतायत से मिलता है वरन् ब्रिटिश लौह केन्द्रों तथा रूर लारेन (Rhur Lorraine) के समुद्र के समीप होने से माल को बाहर भेजने की विशेष सुविधा है। हाँ सिलीशिया (Silesia) अवश्य ही समुद्र से दूर अन्दर की तरफ है।

ब्रिटेन का धन्धा

लोहे और स्टील का धन्धा सबसे पहले ब्रिटेन में ही स्थापित हुआ और आरम्भ में बहुत समय तक ब्रिटेन ही संसार में सबसे अधिक लोहा और स्पात तैयार करता था। ब्रिटेन में लोहे और कोयले की खानें बहुत पास हैं और वे समुद्र से भी दूर नहीं हैं। इस कारण यहाँ धन्धे के पनप जाने के लिए सभी सुविधाएँ मौजूद हैं। क्रमशः कुल लोहे की खानें समाप्त हो गईं तथा बैसामर (Bessemer) क्रिया का आविष्कार हो जाने के उपरान्त विदेशों से फास्फोरस रहित कच्चे लोहे (Iron ore) तथा अन्य प्रकार के कच्चे लोहे को मँगाने की आवश्यकता हुई। इस कारण जो केन्द्र बन्दरगाहों के समीप थे उन्हें और भी सुविधा हो गई। तटवर्ती केन्द्रों को बाहर से कच्चा लोहा मँगाने की तथा तैयार माल को बाहर भेजने की विशेष सुविधा प्राप्त है। इसी कारण अधिकांश मुख्य केन्द्र समुद्र के किनारे हैं जो अन्दर की तरफ हैं वे भी समुद्र से अधिक दूरी पर नहीं हैं। बर्मिंघम (Birmingham) तथा शैफील्ड ब्रिटेन के प्रधान केन्द्र हैं। यद्यपि यह कुछ अन्दर की तरफ हैं परन्तु फिर भी उन्हें यातायात की बहुत सुविधा है। इसी कारण वे इतने महत्वपूर्ण हैं। ब्रिटेन के लोहे और स्टील के धन्धे की यही एक विशेषता है। लोहा और कोयला समीप ही मिलने के अतिरिक्त बाहर से लोहा मँगाने तथा तैयार माल को बाहर भेजने की भी उन्हें विशेष सुविधा है। इसी भौगोलिक अनुकूलता के ही कारण ब्रिटेन का धन्धा इतना अधिक उन्नति कर गया है।

ब्रिटेन के लोहे तथा स्पात के निम्नलिखित मुख्य केन्द्र हैं—उत्तरी पूर्वी समुद्र तट, डर्बी (Derby), लेसेस्टर (Leicester) इत्यादि, दक्षिण वेल्स (South

Wales), लिकन शायर ,(Lincoshire), पश्चिमी समुद्रतट, स्काटलैंड, शैफील्ड (Sheffield) इत्यादि, स्टैफर्डशायर (Stafford shire) इत्यादि।

ब्रिटेन के कच्चे लोहे की माँग देश की खानों से ही पूरी नहीं हो जाती। लगभग एक चौथाई कच्चा लोहा ब्रिटेन को विदेशों से मँगाना पड़ता है। यह ध्यान में रखने की बात है कि अधिकतर खानों में घटिया लोहा निकलता है। इस कारण हैमेटाइट (Hematite) लोहा बाहर से मँगाया जाता है। ब्रिटेन की अधिकांश लोहे की खानों में से निकले कच्चे लोहे में २५ से ३० % शुद्ध लोहा होता है। परन्तु कोयले की खानों के समीप होने के कारण यह घटिया लोहा काम में लाया जा सकता है। ब्रिटेन में स्टील केवल उन्हीं प्रदेशों में तैयार किया जाता है जहाँ कि अच्छा कोयला मिलता है। दक्षिण वेल्स, उत्तरी पूर्वी समुद्र तट, तथा स्काटलैंड स्पात बनाने की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। पश्चिमी समुद्र तट के समीप उत्तम जाति का कोयला न मिलने के कारण स्पात का धंधा उन्नति नहीं कर सका। यहाँ अधिकतर पिग आयरन ही बनता है।

पिछले योरोपीय महायुद्ध (सन् १९१४-१८) में यहाँ कारखानों ने अधिक से अधिक लोहा और स्पात बनाना शुरू किया था। तबसे यहाँ यह धंधा बहुत बढ़ गया है। पिग आयरन की उत्पत्ति इतनी अधिक नहीं बढ़ी जितनी की स्पात की। इस कारण बाहर से लोहा मँगा कर तथा पुराने लोहे (टूटी फूटी लोहे की चीज़ों) से स्पात बनाया जाता है। १९३९ में आरम्भ होने वाले द्वितीय महायुद्ध के पूर्व ब्रिटेन के सामने एक समस्या भयंकर रूप से खड़ी हुई थी अर्थात् ब्रिटेन के कारखाने जितना स्पात (Steel) तैयार करते थे उतनी देश में खपत नहीं हो पाती थी। साथ ही विदेशों में प्रतिस्पर्धा इतनी अधिक बढ़ गई थी कि ब्रिटिश स्पात जर्मनी तथा अन्य योरोपीय देशों के स्पात की प्रतिस्पर्द्धा में महँगा पड़ता था। इसका मुख्य कारण यह था कि ब्रिटेन में मजदूरी इन देशों की अपेक्षा कहीं अधिक थी। इसका परिणाम यह हुआ कि ब्रिटेन से विदेशों—मुख्यतः ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तरगत देशों को जाने वाले स्टील में प्रतिवर्ष कमी होती गई। यही नहीं द्वितीय योरोपीय महायुद्ध के पूर्व ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, बेलजियम और लक्सम्बर्ग से थोड़ा स्पात मँगाता था।

रूर लोरेन प्रान्त (Ruhr Lorrine)

यह प्रदेश लोहे और स्टील के धंधे के लिए योरोप में प्रसिद्ध है। यहाँ के लोहे में फासफोरस का अंश अधिक है। इस कारण जब तक बेसीमर (Bessemor) क्रिया का आविष्कार नहीं हुआ इसका उपयोग स्टील बनाने में नहीं हो सकता था। अतएव बसीमर क्रिया के आविष्कार के उपरान्त ही लोरेन प्रान्त में स्पात का धंधा चमका। रूर-लोरेन प्रदेश फ्रांस, बेलजियम,

लक्सम्बर्ग, तथा पश्चिमी- जर्मनी में स्थित है। इस प्रदेश को रूर की कोयले की खानों से ही अधिकांश कोयला मिलता है। सार (Saar) की कोयले की खानें अधिक महत्वपूर्ण नहीं हैं। अस्तु रूर (Ruhr) प्रदेश का कोयला तथा लोरेन (Lorraine) प्रदेश का लोहा ही इस खनिज केन्द्र के आधार हैं। इस प्रदेश में रूर तथा लोरेन ही लोहे तथा स्पात के धन्धे के मुख्य केन्द्र हैं। लोहे के धंधे में कोयला ही मुख्य वस्तु है। इस कारण लोहे का धंधा कोयले की खानों के समीप ही बहुधा स्थित होता है, परन्तु रूर और लोरेन में इतनी कम दूरी है कि लोरेन के लोहे के कारखाने रूर के कोयले का उपयोग कर लेते हैं।

पिछले योरोपीय महायुद्ध (सन् १९१४–१८) के उपरान्त वार्साई संधि के अनुसार रूर लोरेन प्रांत का बटवारा इस प्रकार कर दिया गया कि जर्मनी के हिस्से में अधिकांश कोयला, और फ्रांस के हिस्से में अधिकांश लोहा चला गया। इससे पूर्व जर्मनी संयुक्तराज्य अमेरिका को छोड़कर अन्य सब देशों से अधिक लोहा और स्टील तैयार करता था और संसार में सबसे अधिक लोहा और स्पात बाहर भेजता था। वार्साई संधि के उपरान्त लोरेन का प्रांत जर्मनी से छीन लिया गया। इस कारण जर्मनी के धन्धे को क्षति पहुँच गई। कुछ दिनों तक तो फ्रांस और जर्मनी में तनातनी रही। जर्मनी अपना कोयला फ्रांस को तथा फ्रांस अपना लोहा जर्मनी को नहीं देना चाहता था, किन्तु फिर भी जर्मनी के रूर प्रांत की स्थिति लोरेन प्रान्त से अच्छी थी क्योंकि वह स्पेन तथा स्वीडन से लोहा मँगा सकता था किन्तु लोरेन को यथेष्ट कोयला मिलना कठिन था। कुछ समय के उपरान्त दोनों में समझौता हो गया और कोयला तथा कच्चा लोहा आपस में ले देकर दोनों काम चलाने लगे। वार्साई संधि के उपरान्त फिर जर्मनी ने अपने धन्धे को बढ़ाना आरम्भ किया और कुछ ही वर्षों में उसके कारखानों की उत्पत्ति १९१४ की उत्पत्ति से कुछ ही कम रह गई।

बेलजियम के लोहे तथा स्पात (Steel) के धंधे का आधार वहाँ का कोयला तथा सस्ते मजदूर हैं। आरम्भ में वहाँ लोहा भी निकलता था किन्तु अब तो लोहे की खानें प्रायः समाप्त हो गई हैं और लोरेन प्रदेश के लोहे का उपयोग होता है। कोयला भी बेलजियम में यथेष्ट नहीं है इस कारण कोयला भी बाहर से मँगवाना पड़ता है।

जर्मनी का लोहे का धन्धा

संसार में जर्मनी, संयुक्तराज्य अमेरिका को छोड़ कर सब से अधिक लोहा तथा स्टील तैयार करता है। पिछले योरोपीय महायुद्ध के फल स्वरूप जर्मनी के हाथ से लोरेन (Lorraine) तथा लक्सम्बर्ग (Luxemberg) की लोहे की खानें निकल जाने

से तथा रूर की कुछ कोयले की खानें भी फ्रांस को मिल जाने से जर्मनी के धन्धे को बहुत क्षति पहुँची किन्तु जर्मनी ने पिछले वर्षों में बड़ी शीघ्रता से अपने धन्धे को बढ़ाया है। जर्मनी में जो लोहे की खानें हैं उनमें अधिक लोहा नहीं है। और कच्चे लोहे में शुद्ध लोहे का प्रतिशत भी बहुत कम है। अतएव जर्मनी को स्पेन, स्वीडन, तथा अन्य देशों से लोहा मँगाना पड़ता है।

जर्मनी में लोहे तथा स्टील के धन्धे का प्रधान केन्द्र रैनिश-वेस्टफैलिया (Rhenish West Phalia) का प्रदेश है। इसके अतिरिक्त सीगरलैन्ड (Siegerland), सिलीसिया (silesia), उत्तर, मध्य, तथा दक्षिण जर्मनी तथा सैक्सनी (Saxony) में भी लोहे के कारखाने हैं। रूर की घाटी में एसेन (Essen) का प्रसिद्ध लोह केन्द्र है जहाँ कि संसार प्रसिद्ध क्रप (Krupp) के कारखाने हैं। जर्मनी में जितना लोहा और स्टील तैयार होता है उसका दो तिहाई से अधिक जर्मनी में ही खप जाता है। शेष विदेशों को जाता है।

ऊपर लिखी हुई स्थिति सन् १६३६ के पूर्व की है। द्वितीय योरोपीय महायुद्ध के आरम्भ होने पर तो सारी स्थिति ही बदल गई। फ्रांस का पराभव हो गया। लोरेन (Lorrain) तथा लक्सम्बर्ग (Luxemberg) ये प्रदेश जर्मनी ने फिर अपने साम्राज्य में मिला लिये। यही नहीं पोलैंड, आस्ट्रिया तथा चैकोस्लावाकिया के लोहे के केन्द्र भी जर्मन साम्राज्य में सम्मिलित कर लिए गए। परन्तु युद्ध की समाप्ति होने पर ये फिर जर्मनी के हाथ से निकल गए।

स्वीडन (Sweden)

स्वीडन में लोहे की बहुत खानें हैं और उनमें बहुत अच्छा लोहा भरा पड़ा है। उत्तरी ध्रुव रेखा (Arctic Circle) के आगे बोथनिया (Bothnia) की खाड़ी के पास बहुत अधिक लोहा निकाला जाता है। यहाँ की खानों में लोहा बहुत बड़ा राशि में भरा हुआ है। स्वीडन में कोयला नहीं है इस कारण स्वीडन अपना अधिकांश लोहा जर्मनी, ब्रिटेन तथा संयुक्तराज्य अमेरिका को भेज देता है। स्वीडन में वन बहुत हैं। देश के आधे से अधिक क्षेत्र फल पर वन खड़े हुए हैं। इस कारण स्वीडन में लोहे को लकड़ी के कोयले से गलाया जाता है। लकड़ी के कोयले से तैयार किया हुआ लोहा कोयले से तैयार किये हुए लोहे की अपेक्षा अच्छा होता है। इस कारण उस लोहे की प्रत्येक देश में माँग रहती है। शैफील्ड (Sheffield) में चाकू, कैंची स्वीडन के लोहे से ही तैयार होती हैं। लकड़ी के कोयले से बने हुए लोहे और स्टील का उपयोग अब बढ़िया यन्त्रों के बनाने में किया जाने लगा है। स्वीडन में यन्त्र बनाने का अच्छा धन्धा क्रमशः उन्नति कर रहा है।

पिछले योरोपीय महायुद्ध (१९१४-१८) के उपरान्त जब जेकोस्लावाकिया का नवीन राष्ट्र बनाया गया तो बोहेमिया का प्रान्त जिसमें बहुत सी कोयले की और कुछ लोहे की खानें भी जेकोस्लावाकिया को मिल गया। इसी प्रदेश में संसार प्रसिद्ध स्कोडा (Skoda) के कारखाने हैं।

भूमध्य सागर (Mediterranean Sea) के समीपवर्ती प्रदेश में लोहे का चिह्न भी नहीं मिलता। केवल रूस में अजोव (Azov) बेसिन में लोहे और स्टील का धन्धा स्थापित है। पञ्चवर्षीय योजना के फलस्वरूप इस प्रदेश में लोहे और स्टील का धन्धा आश्चर्यजनक गति से उन्नति कर गया है। स्पेन में बलबाओ (Balbao) के बन्दरगाह में लोहे का धन्धा स्थापित है। स्पेन में कोयला न होने के कारण कोयला ब्रिटेन से आता है। कोयला न होने के कारण स्पेन का अधिकांश कच्चा लोहा ब्रिटेन को भेज दिया जाता है।

एशिया में लोहे और स्टील का धन्धा अभी तक अधिक उन्नति नहीं कर सका। जापान में न तो कोयला ही है और न लोहा ही। जो कुछ लोहा और कोयला है भी वह बहुत घटिया है। आरम्भ में तो जापान योरोपीय देशों से लोहा मँगाता था। किन्तु अब कुछ वर्षों से लोहे के कारखाने जापान में भी स्थापित हुए हैं जिनमें मध्य चीन की खानों से निकला हुआ लोहा काम में आता है।

चीन में बहुत उत्तम जाति का लोहा पृथ्वी के गर्भ में भरा पड़ा है। सम्भवतः संयुक्तराज्य अमेरिका को छोड़ कर किसी भी अन्य देश में इतना अधिक लोहा नहीं है। लोहा और कोयला तो चीन में है ही, वहाँ मजदूरी भी बहुत सस्ती है। इस कारण भविष्य में यदि चीन को अवसर मिले तो वह संसार का प्रमुख लोहा और स्टील तैयार करने वाला देश बन सकता है। चीन की खनिज सम्पत्ति के ही आकर्षण ने

जापान को उस पर आक्रमण करने को प्रोत्साहित किया है। चीन में इस्पात में आधुनिक ढंग के कारखाने हैं किन्तु अभी यह धन्धा वहाँ पनपा नहीं है। भविष्य में चीन में यह धन्धा पनपेगा इसमें तनिक भी सन्देह नहीं। भारत में भी यह धन्धा क्रमशः उन्नति कर रहा है।

लोहे का धन्धा यद्यपि बहुत उन्नति कर गया है परन्तु अभी तक अधिकतर अच्छी जाति का लोहा ही काम में लाया जाता है। किन्तु संसार में अधिकांश लोहा घटिया है। अभी तक जहाँ भी लोहे और स्टील का धन्धा केन्द्रित है वह समीपवर्ती प्रदेशों से ही कच्चा लोहा मँगाते हैं। किन्तु यदि लोहा जलमार्ग से लाया जा सकता हो तो बहुत दूर से भी मँगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए स्पेन से लोहा ब्रिटेन को जाता है। स्वीडन से राइन नदी के द्वारा लोहा जर्मनी को आता है, तथा सुपीरियर झील के प्रदेश का लोहा पिट्सबर्ग जाता है। यहाँ तक कि ब्राजिल, मध्य अमेरिका तथा मैक्सिको (Mexico) का कच्चा लोहा भी संयुक्तराज्य अमेरिका के कारखानों में काम आता है।

कुछ समय हुआ जब से बिजली द्वारा लोहे को गलाने का प्रयत्न किया गया है। नार्वे और स्वीडन में बिजली द्वारा लोहा गलाने में व्यापारिक सफलता भी मिली है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि जिस कच्चे लोहे में ४० % शुद्ध लोहा हो उसे बिजली से गलाया जा सकता है। यदि बिजली द्वारा कम खर्चे से लोहा गलाने में सफलता मिल गई तो नार्वे तथा स्वीडन में यह धन्धा खूब चमक उठेगा क्योंकि वहाँ पानी द्वारा बिजली सस्ते दामों में उत्पन्न की जा सकती है।

इस्पात (Steel) की उत्पत्ति

संसार की उत्पत्ति का प्रतिशत

संयुक्तराज्य अमेरिका	३७%
जर्मनी	१६% (युद्ध के पूर्व)
सोवियत रूस	११%
ब्रिटेन	६%
फ्रांस	६%
जापान	४% (युद्ध के पूर्व)
बेलजियम	३%
इटली	२%
जेकोस्लावाकिया	२%
लक्सम्बर्ग	२%

कनाडा	११०%
पोलैंड	१५०%
स्वीडन	१०%

यद्यपि मोटरकार का धन्धा अभी पचास वर्ष का पुराना भी नहीं है किन्तु उसका प्रचार इतना अधिक बढ़ गया है कि उसका उपयोग रेल से मोटरकार का धंधा अधिक है। जिस प्रकार वाष्प (Steam) का आविष्कार होने से अधिक दूर के यातायात में घोर क्रान्ति हुई उसी प्रकार मोटर के आविष्कार से थोड़ा दूर के यातायात में भीषण क्रान्ति हो गई है। मोटरकार का धन्धा अधिक लोहे और इस्पात के धन्धे पर ही निर्भर है इस कारण औद्योगिक देशों में ही यह धन्धा भी पनप सका।

सर्वप्रथम १८६१ में फ्रास में मोटरकार बनाई गई। किन्तु प्रारम्भिक मोटरकार बहुत ही भद्दी तथा कठिनाई से चलने वाली सवारी थी, क्योंकि उसमें एक सिलिंडर का गैस इंजन लगाया जाता था। क्रमशः अमेरिकन इंजीनियरों ने उसमें चार सिलिंडर लगा कर उसको सवारी के उपयुक्त बनाया। यही कारण है कि संयुक्तराज्य अमेरिका में यह धंधा उन्नति कर गया। संयुक्तराज्य अमेरिका में प्रति ६ मनुष्य पीछे एक मोटरकार है। फ्रास में ६० मनुष्य पीछे १ मोटरकार है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में निचला झील प्रदेश (Lower Lake Region) इस धन्धे का मुख्य स्थान है। लोहा, कोयला लकड़ी मिलने की सुविधा के अतिरिक्त यह प्रदेश मुख्य रेलवे लाइनों के द्वारा पूर्व के सभी प्रधान औद्योगिक केन्द्रों से जुड़ा है। मोटरकार बनाने वाले कारखानों के मुख्य केन्द्र डैट्राइट (Detroit), शिकागो (Chicago), इंडियानापोलिस (Indianapolis), ओहियो (Ohio), क्लीवलैंड (Cleveland) तथा टालैडो (Toledo) इत्यादि हैं। इनमें डैट्राइट (Detroit) इस धन्धे का प्रमुख केन्द्र है। इसी केन्द्र में संसार प्रसिद्ध फोर्ड कम्पनी के कारखाने हैं। संयुक्तराज्य अमेरिका ने सस्ती तथा स्टैंडर्ड कारें बनाने में बहुत उन्नति की है। इसका मुख्य कारण यह है कि संयुक्तराज्य अमेरिका में मोटरकार की बहुत माँग है वहाँ का साधारण किसान भी कार रखता है।

संयुक्तराज्य अमेरिका के अतिरिक्त फ्रास, ब्रिटेन तथा जर्मनी मुख्य कार तैयार करने वाले देश हैं। फोर्ड कम्पनी ने मैनचेस्टर में अपना विशाल कारखाना स्थापित किया है। फ्रास, इंगलैंड तथा जर्मनी में अधिकतर अधिक मूल्य की बढ़िया कारें बनाई जाती हैं। किन्तु पिछले वर्षों में योरोपीय देशों ने भी सस्ती कार बनाने की ओर ध्यान दिया है और प्रतिस्पर्धा की जा रही है। भारत में भी यह धन्धा स्थापित हो गया है।

भिन्न भिन्न देशों में मोटरकार

देश	संख्या
संयुक्तराज्य अमेरिका	३,६,२,६६,०००
कनाडा	१६,७२,०००
इंगलैंड	२१,६१,०००
आस्ट्रेलिया	६,५५,०००
न्यूजीलैंड	२,३१,०००
दक्षिण अफ्रीका	१,५२,०००
बेल्जियम	२,२७,०००
स्विट्जरलैंड	१,२३,०००
अर्जेन्टाइना	४,३६,०००
मैक्सिको	१,३४,०००

यन्त्र (Machinery) मुख्यतः लोहे और स्पात से बनाये जाते हैं। थोड़ी बहुत लकड़ी भी काम में आती है। इस कारण जो यन्त्र बहुत बड़े और भारी होते हैं वे अधिकतर उन्हीं स्थानों पर बनाये जाते हैं जहाँ उनकी माँग होती है। उदाहरण के लिए फिलेडेल्फिया (Philadelphia) में कपड़े के धंधे में काम आने वाले यन्त्र तैयार किये जाते हैं क्योंकि वहाँ कपड़े का धंधा स्थापित है। इसी प्रकार मैनचेस्टर में भी कपड़े के धन्धे में काम आने वाले यन्त्र तैयार किये जाते हैं। जो यन्त्र भारी नहीं होते किंतु जिनमें श्रम बहुत अधिक आवश्यक होता है वह ऐसे स्थानों पर स्थापित किये जाते हैं जहाँ अन्य सुविधाओं के साथ कुशल मजदूर मिल सकें। उदाहरण के लिये घड़ियों का धन्धा।

यन्त्र बनाने का धंधा (Machinery)

अधिकतर यंत्रों (Machineries) का धन्धा वहीं स्थापित होता है जहाँ कि उन यंत्रों की माँग होती है। इसमें केवल यही लाभ नहीं होता कि यातायात का खर्च बचता है साथ ही उसमें दो लाभ और भी होते हैं। प्रथम, यंत्र बनाने वाले कारखाने अपने इंजिनियरों के द्वारा उन मशीनों का फिटिंग इत्यादि करवा सकते हैं, दूसरे मशीनों में क्या कमी है किस दिशा में सुधार की आवश्यकता है इसकी जानकारी आसानी से हो सकती है। जो लोग मशीनों पर काम करते रहते हैं वे उसमें सुधार किस दिशा में होना चाहिये यह भली प्रकार बता सकते हैं। अस्तु अधिकतर मशीनों का धन्धा उन्हीं स्थानों पर केन्द्रित है जहाँ उनकी विशेष माँग है।

संयुक्तराज्य अमेरिका, जर्मनी, और इंगलैंड इस धन्धे में प्रमुख हैं। संयुक्तराज्य अमेरिका में खेती के यंत्र सबसे अधिक तैयार किये जाते हैं। मशीन टूल

(मशीनों की मरम्मत करने वाले यंत्र) ऐंजिन, मोटर तथा अन्य प्रकार की मशीनें औद्योगिक केन्द्रों में तैयार की जाती हैं। ऐंजिन बनाने में जर्मनी प्रमुख है। रेलवे एंजिन तैयार करने का संसार भर में सबसे प्रसिद्ध केन्द्र फिलाडैलफिया है।

सूती कपड़े के धन्धे के यन्त्र (Textile Machinery)

यह यन्त्रों का धन्धा संयुक्तराज्य अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी और इटली में मुख्यतः केन्द्रित है। संयुक्तराज्य अमेरिका में इस धंधे का मुख्य केन्द्र मैसाचुसेट्स (Massachusetts) है और अब दक्षिण में कैरोलिना में भी यह धंधा उन्नति कर गया है।

खेत के यन्त्र

संयुक्तराज्य अमेरिका संसार में सबसे अधिक खेती के यन्त्र तैयार करता है। जिन देशों में मजदूर सस्ते हैं जैसे भारत और चीन में वहाँ खेतों में यंत्रों का उपयोग नहीं होता किन्तु जहाँ मजदूरों की कमी है जैसे कनाडा, संयुक्तराज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, अरजैनटाइन इत्यादि वहाँ यंत्रों का खेती में बहुत उपयोग होता है। इलीनायस (Illinois) तथा विस्कानसिन (Wisconsin) इस धंधे के मुख्य केन्द्र हैं। इंडियाना, और न्यू यार्क में इसके कारखाने हैं।

समुद्री जहाज बनाने का धंधा

समुद्री जहाज बनाने का धंधा मुख्यतः ब्रिटेन में केन्द्रित है। ब्रिटेन के नौकाश्रयों (Docks) को एक यह सुविधा है कि वे लोहे के धंधे के समीप ही स्थित हैं तथा तट प्रदेश के अत्यधिक टूटे फूटे होने के कारण वहाँ के नौकाश्रयों में जहाज बनाने की बहुत सुविधा है। संसार के सब देशों में जितने जहाज बनते हैं उनके आधे के लगभग ब्रिटेन में तैयार होते हैं। पश्चिमी स्काटलैंड में क्लाइड नदी (River Clyde) उत्तरी इङ्गलैंड में टाइन नदी पर तथा आयरलैंड के बैलफास्ट बन्दरगाह पर ब्रिटेन के मुख्य जहाज बनाने के केन्द्र स्थित हैं।

संयुक्तराज्य अमेरिका में यह धंधा न्यू इङ्गलैंड, अटलांटिक महासागर के तटीय प्रदेश, तथा गल्फ कोस्ट पर स्थित हैं। जर्मनी में यह धंधा मुख्यतः हैम्बर्ग बन्दरगाह में केन्द्रित है। फ्रांस में मार्सेल्ज, हैवर, तथा बोर्डियो, इटली में जिनोआ नेपिल्स, तथा वेनिस इस धंधे के केन्द्र हैं। जापान में यद्यपि जहाज बनाने के लिये लोहा इत्यादि नहीं है किन्तु, फिर भी वहाँ बन्दरगाहों में जहाज बनाये जाते हैं।

भोजन के उपरांत मनुष्य जीवन के लिये कपड़ा ही सबसे अधिक आवश्यक वस्तु है। किन्तु जहाँ कपड़ा आवश्यक है वहाँ कपड़े में नई-नई डिजाइनों, तथा फैशन-परिवर्तन के लिए बहुत गुञ्जाइश है। इस कारण कपड़े का धन्धा बहुत महत्वपूर्ण बन गया है। जहाँ एक ओर यह आवश्यक वस्त्र को तैयार करता है वहाँ दूसरी ओर यह विलासिता (Luxuries) की वस्तु भी तैयार करता है। कपड़े के धन्धे में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण धन्धा सूती कपड़े का है क्योंकि संसार के सभी देशों में इसका अत्यधिक उपयोग होता है।

कपड़े का धन्धा (Textiles)

सूती कपड़े का धन्धा कच्चे माल (कपास) पर अधिक निर्भर नहीं रहता। क्योंकि रुई आसानी से अभीष्ट स्थान पर ले जाई जा सकती है। इसमें अधिक खर्च नहीं होता। सूती कपड़े का धन्धा मुख्यतः जलवायु, शक्ति, श्रमजीवियों की सुविधा तथा बाजार पर निर्भर है।

सूती कपड़े का धन्धा (Cotton Textile)

जलवायु का इस धन्धे पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। सूत के कातने समय तथा कपड़ा बिनते समय वायु में नमी होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि वायु शुष्क होगा तो तार टूट जावेंगे। जितना अधिक बारीक सूत होगा उतनी ही नमी का अधिक आवश्यकता होगी। लंकाशायर का सूती कपड़े का धन्धा जलवायु के *कारण ही वहाँ केन्द्रित है। इङ्गलैंड के पश्चिमी भाग में पहाड़ियों के कारण* पूर्वी शुष्क वायु नहीं पहुंच सकती। इसके अतिरिक्त सब महीनों में वर्षा होती है इस कारण वायु में नमी बनी रहती है। किन्तु अब पानी की भाप तैयार करके उसको पाइपों द्वारा कारखाने के कमरों में (जहाँ कपड़ा-बुनाई होता है) छोड़ने से कारखाने के अंदर की वायु नम कर दी जाती है। इस नवीन पद्धति के आविष्कार से उन स्थानों में भी सूती धन्धा पनप उठा है जहाँ की वायु शुष्क है। उदाहरण के लिये भारत में अहमदाबाद इत्यादि केन्द्रों की वायु गर्मी के मौसम में बहुत शुष्क होती है किन्तु भाप के द्वारा कारखाने की वायु को नम बना लेते हैं। हाँ उसमें कुछ खर्चा बढ़ जाता है। सूती कपड़े के धन्धे में पानी की भी आवश्यकता पड़ती है। भिन्न भिन्न धोने की क्रियाओं में पानी की आवश्यकता होती है अतएव जहाँ पानी की बहुतायत होती है वहाँ धन्धे को स्थापित करने में सुविधा होती है। लंकाशायर में सूती कपड़े के कारखाने अधिकतर नहरों अथवा नदियों के किनारे बसे हुये हैं। परन्तु पानी धन्धे के लिये नम वायु की तुलना में कम महत्वपूर्ण है।

कुशल जुलाहे (Weavers) तथा अन्य मजदूरों के ऊपर भी कपड़े का धन्धा बहुत कुछ निर्भर रहता है। ब्रिटेन में जो सूती कपड़े का धन्धा इतना अधिक

उन्नति कर गया है, और पैनाइन (Pennine) प्रदेश में जो यह धंधा केन्द्रित हो गया उसका मुख्य कारण यह है कि वहाँ ऊनी कपड़े का धन्धा पहले से ही उन्नत अवस्था में था, तथा ऊनी कपड़ों को बुनने वाले कुशल बुनकर मौजूद थे। आज भी जो लकाशायर केन्द्र अन्य सूती कपड़े के केन्द्रों की प्रतिस्पर्धा में खड़ा हुआ है उसका मुख्य कारण यह है कि यहाँ कुशल बुनकर तथा अन्य कारीगर मिलते हैं। जापान के सूती धन्धे को रेशमी कपड़ा बुनने वालों के कारण बहुत सहायता मिली है। भारत में भी बम्बई तथा अहमदाबाद में अधिकांश जुलाहे और कोरी, जो पहिले हाथ कर्घे पर कपड़ा बुनते थे, काम करते हैं।

सूती कपड़े के धन्धे के लिये तैयार माल बाजार तक ले जाने की सुविधा अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है। संसार के सभी प्रमुख सूती कपड़े के केन्द्र उन प्रदेशों से दूर हैं जहाँ कपड़े की माँग अधिक है। उदाहरण के लिये लकाशायर के सूती कपड़ों के कारखानों का कपड़ा पूर्वी देशों में बिकता है, जापान के कपड़े का बाजार भारत तथा चीन इत्यादि देशों में है, तथा संयुक्तराज्य अमेरिका में बना हुआ कपड़ा, दक्षिण अमेरिका तथा पश्चिमी द्वीप समूह में बिकता है। अतएव माल लाने और ले जाने की सुविधा पर भी सूती कपड़े के धन्धे का केन्द्रित होना निर्भर है। भारत में जो सर्वप्रथम बम्बई में सूती कपड़े का धन्धा केन्द्रित हुआ वह केवल इस कारण कि वहाँ समुद्र द्वारा योरोप से मशीनरी तथा कोयला मँगाने की सुविधा थी और कपास को भीतरी भाग से मँगाने तथा कपड़े को अन्दरूनी भाग में रेल द्वारा ले जाने की सुविधा थी।

सूती कपड़े के धन्धे के लिये बाजार सबसे महत्वपूर्ण है। ब्रिटेन का सूती कपड़े का धन्धा केवल इस कारण इतना अधिक चमक उठा क्योंकि उसका साम्राज्य विशाल था और उस राजनैतिक प्रभुत्व का फल यह हुआ कि ब्रिटिश माल के लिये वह विस्तृत बाजार बन गया। जैसे जैसे ब्रिटेन का यह राजनैतिक और आर्थिक प्रभाव कम होता जा रहा है वैसे ही वैसे उसके धन्धे की गति मन्द होती जा रही है। आज ब्रिटेन के सूती कपड़े की स्थिति इतनी अच्छी नहीं है जितनी की आज से २५ या ३० वर्ष पहिले थी। भारत में बम्बई की प्रतिस्पर्धा में जो अहमदाबाद, सूरत, नागपुर, कानपुर तथा अन्य केन्द्र स्थापित हो गये और क्रमशः धन्धा देश के भीतरी भाग की ओर बढ़ने लगा उसका एक मात्र कारण यह है कि यह केन्द्र सूती कपड़े के बाजार के मध्य में स्थित हैं।

सूती कपड़े के धन्धे की दृष्टि से जगत में निम्नलिखित देश प्रमुख हैं—

१ ब्रिटेन, २ संयुक्तराज्य अमेरिका, ३ जापान, ४ जर्मनी, ५ फ्रांस, ६ भारत, ७ इटली, ८ चीन। इनमें ब्रिटेन, संयुक्तराज्य अमेरिका तथा जापान सबमें

अधिक महत्वपूर्ण है। पिछले वर्षों में लंकाशायर के धंधे को अन्य देशों की प्रतिस्पर्द्धा के कारण गहरा धक्का लगा है और क्रमश: लंकाशायर की उत्पत्ति पहले से कुछ कम होती जा रही है। हाँ जापान ने पिछले वर्षों में बहुत उन्नति कर ली है। प्रतिवर्ष वह अधिकाधिक सस्ता कपड़ा बनाकर पूर्वी एशिया के बाजारों में बेचता है। किन्तु चीन से युद्ध में फँस जाने के कारण उसके धंधे की गति भी कुछ वर्षों के लिये मंद पड़ गई। एशिया के बाजारों में प्रथम योरोपीय महायुद्ध (१९१४) के पूर्व लंकाशायर का ही प्राधान्य था। जापान का सूती कपड़े का धंधा उस समय शैशव अवस्था में था। किन्तु महायुद्ध के दिनों में लंकाशायर का कपड़ा आना बन्द हो गया। इस कारण जापान को अपूर्व अवसर मिला। सच तो यह है कि उस समय भारत तथा अन्य एशियाई देशों में सूती कपड़े का अकाल पड़ गया। युद्ध के समय भारत के सूती कपड़े का व्यवसाय भी

चमका किन्तु जापान के सूती वस्त्र व्यवसाय ने तो आश्चर्य जनक उन्नति कर ली। चीन, भारत तथा अन्य एशियाई देशों के बाजारों को जापान ने हथिया लिया।

यद्यपि प्रथम योरोपीय युद्ध के समाप्त होने पर लंकाशायर का माल भारतीय तथा अन्य उपनिवेशों में फिर आने लगा किन्तु जापान और संयुक्तराज्य अमेरिका के सूती वस्त्र व्यवसाय की उन चार वर्षों में जो आशातीत उन्नति हो गई उसके फल स्वरूप लंकाशायर के दो प्रबल प्रतिद्वन्द्वी उत्पन्न हो गए। यही नहीं भारत तथा चीन इत्यादि देशों में भी सूती वस्त्र व्यवसाय पनप उठा। अतएव लंकाशायर का व्यवसाय पूर्व स्थिति को नहीं पहुँच सका।

ब्रिटेन का सूती कपड़े का धंधा

सूती कपड़े का प्रधान केन्द्र लंकाशायर का प्रान्त है। यह काउंटी यद्यपि पहाड़ियों से भरी हुई है परन्तु पहाड़ियाँ अधिक ऊँची नहीं हैं। यहाँ कोयले की खानें भी बहुत हैं। इन्हीं खानों के समीप कारखाने के केन्द्र स्थापित हैं। लंकाशायर के अतिरिक्त यार्कशायर, डरबीशायर, तथा चेशायर (Cheshire) में सूती कपड़े के कारखाने हैं। ब्रिटेन अन्य सब देशों से अधिक कपड़ा बनाता है। ब्रिटेन में सूती धंधे की उन्नति के मुख्य कारणों का हम दिग्दर्शन ऊपर करा चुके हैं। जलवायु, कोयला, कुशल श्रमजीवी, बाजार पर प्रभुत्व और माल ले आने की सुविधा के ही कारण यहाँ का धंधा इतनी अधिक उन्नति कर गया है।

ब्रिटेन में कपास उत्पन्न नहीं होती क्योंकि यहाँ की जलवायु में कपास उत्पन्न हो ही नहीं सकती। अतएव कपास संयुक्तराज्य अमेरिका से मँगाई जाती है।

लंकाशायर का नम जलवायु बारीक और बढ़िया सूत कातने तथा कपड़ा बुनने के लिए बहुत ही उपयुक्त है। कुछ वर्षों से संयुक्तराज्य अमेरिका कपास कम भेजने लगा है क्योंकि सूती कपड़े का धंधा वहाँ भी बहुत उन्नति कर गया है। इस कारण लंकाशायर के मिल मालिकों को यह भय होने लगा था कि भविष्य में बढ़िया कपास यथेष्ट राशि में नहीं मिल सकेगी। इसी कारण ईजिप्शियन सूदान (Sudan) और गायना (Guinea) में कपास की पैदावार बढ़ाने का प्रयत्न किया गया। जितनी कपास ब्रिटेन विदेशों से मँगाता है उसकी लगभग ७०% संयुक्तराज्य अमेरिका से और शेष (मिश्र) युगांडा, तथा अन्य अफ्रीका प्रदेशों से आता है। पिछले दिनों में भारत से कुछ कपास लंकाशायर को जाने लगा है।

यह तो पूर्व ही कहा जा चुका है कि लंकाशायर में यह धंधा केन्द्रित है। किन्तु लंकाशायर के भिन्न भिन्न भागों में भिन्न भिन्न क्रियाओं की प्रधानता है। उदाहरण के लिये लंकाशायर के दक्षिणी भाग में तथा चेशायर और डर्बीशायर के निकटवर्ती प्रदेश में सूत कातने का धंधा केन्द्रित है। मैंचेस्टर ओल्डहम (Oldham), बोल्टन (Bolton), स्टैलीब्रिज (Stalybridge) तथा बरी (Bury) सूत कातने के प्रधान केन्द्र हैं। लंकाशायर के उत्तर में कपड़ा बुनने का धंधा केन्द्रित है। ब्लैकबर्न (Blackburn) प्रेस्टन (Preston), डारविन (Darwen), तथा नेल्सन (Nelson) सूती कपड़े के धंधे के मुख्य केन्द्र हैं। सूती कपड़े के केन्द्रों में भी भिन्न भिन्न केन्द्र एक विशेष प्रकार के कपड़े तैयार करते हैं। उदाहरण के लिये प्रेस्टन में बढ़िया कपड़े (Fancy goods) तैयार होते हैं। रंगीन कपड़े कोलने (Colne) में तथा थोड़ा ब्लैकबर्न में बनता है। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि कपड़ा बुनने के केन्द्रों में सूत कातने के कारखाने नहीं हैं अथवा सूत कातने के केन्द्रों में कपड़ा बुनने के केन्द्र नहीं हैं। लंकाशायर के बाहर लॉग ईटन (Long-Eaton), ग्लासगो (Glasgow), नाटिंघम (Nottingham), तथा पैस्ले (Paisley) मुख्य सूती कपड़े के धन्धे के केन्द्र हैं। ये केन्द्र ऐसी जगह स्थित हैं जहाँ समुद्र की नम हवा खूब आती है।

ब्रिटेन के सूती कपड़े के धन्धे की विशेषता यह है कि यहाँ बढ़िया कपड़ा ही अधिकतर तैयार किया जाता है। मोटा कपड़ा बहुत कम बनाया जाता है। जब से जापानी और भारतीय कपड़े की स्पर्द्धा बढ़ गई तबसे तो ब्रिटेन के कारखानों ने अधिकाधिक बढ़िया कपड़ा बनाने की ओर ही अधिक ध्यान दिया है। पिछले वर्षों में जापान की प्रतिस्पर्द्धा इतनी तीव्र हो गई कि ब्रिटेन के धन्धे में बहुत परिवर्तन हो गए हैं। यही नहीं कि वहाँ के कारखाने अधिकाधिक बढ़िया कपड़ा बनाने लगे हैं। वरन प्रबन्ध तथा व्यवस्था में सुधार करने तथा व्यय को कम करने की दृष्टि से मिलों का एकीकरण (Amalgamation) किया जा रहा है जिससे जापान की प्रतिस्पर्द्धा का सामना किया जा सके।

इस प्रदेश में सूती कपड़े के धंधे के साथ ही साथ रंगाई, छपाई तथा कपड़े के धंधे की मशीनें बनाने का धन्धा भी चल पड़ा है। कारण यह है कि कपड़े की रंगाई और छपाई होती है अतएव यह सहायक धंधे (Secondary Occupation) भी मुख्य धंधे के आस पास ही केन्द्रित हैं। कोयला और लोहा समीप ही होने के कारण मशीनें बनाने का धन्धा भी यहाँ उन्नति कर गया है क्योंकि उनकी माँग इसी प्रदेश में है।

ब्रिटेन के निर्यात व्यापार (Export Trade) में सूती कपड़ा सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। जितने मूल्य का कुल निर्यात (Export) व्यापार होता है। उसके २०% मूल्य का केवल कपड़ा बाहर जाता है। अधिकतर ब्रिटेन का कपड़ा भारत तथा ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत देशों को जाता है। लिवरपूल और मैंचेस्टर यहाँ के मुख्य बंदरगाह हैं। लिवरपूल अमेरिका से आई हुई कपास की बहुत बड़ी मंडी है।

संयुक्तराज्य अमेरिका का सूती कपड़े का धंधा

जगत् में संयुक्तराज्य अमेरिका का सूती कपड़ा तैयार करने वाले देशों में दूसरा स्थान है। वास्तव में संयुक्तराज्य अमेरिका का सूती कपड़े का धन्धा अपलेशियन (Appalachian) पर्वतमाला के पूर्व में मेन (Maine) से अलबामा (Alabama) तक जो प्रदेश फैला हुआ है उसमें स्थित है। सूती कपड़े का धंधा इस पूर्वी प्रदेश के तीन विभागों में विशेष रूप से केन्द्रित है। (१) न्यूइंगलैंड (New England) रियासत, (२) मध्य अटलांटिक रियासतें (३) दक्षिणी रियासतें। आरम्भ में न्यू इंगलैंड में सबसे अधिक कारखाने थे किन्तु अब दक्षिणी रियासतों की उन्नति बहुत बढ़ गई है और दक्षिणी प्रदेश ही सूती धंधे का प्रमुख केन्द्र बन गया है। फाल रिवर (Fall River) न्यू बेडफोर्ड (New Bedford) न्यू इंगलैंड प्रमुख केन्द्र हैं। मध्य अटलांटिक रियासतों में फिलेडैल्फिया (Philadelphia), पैनसलवेनिया (Pennsylvania), न्यूयार्क (New York) तथा मैरीलैंड (Maryland) में सूती कपड़े के कारखाने हैं, इनमें फिलेडैलफिया प्रमुख केन्द्र है। मध्य अटलांटिक रियासतों में बनियायन, मोजा तथा अन्य बुनावट की चीजें बहुत तैयार होती हैं। न्यूयार्क पैनसलवेनिया फिलेडैल्फिया तथा मोहाक की घाटी में स्थित कोहोज (Cohoes) में निटिंग का धंधा (Knitting Industry) केन्द्रित है। दक्षिण में उत्तरी तथा दक्षिणी करोलिना (Carolina) तथा ज्यार्जिया (Georgia) में भी यह धंधा केन्द्रित है।

न्यू इंगलैंड में सूती कपड़े का धन्धा आरम्भ में जल शक्ति की बहुतायत के कारण स्थापित हुआ। फाल रिवर (Fall River) लावेल (Lowell) इत्यादि केन्द्रों में सूती कपड़े के कारखाने इस कारण स्थापित किये गए क्योंकि यहाँ जल शक्ति मिलने की सुविधा है। किन्तु आगे चल कर सूती कपड़े के धन्धे में वाष्प का अधिक उपयोग होने लगा इस कारण न्यू इंगलैंड के दक्षिण में स्थित केन्द्रों की अधिक उन्नति हो गई क्योंकि वहाँ कोयला मिलने की सुविधा है। न्यू

इङ्गलैंड के कारखाने अधिकतर बढ़िया कपड़ा तैयार करते हैं। फिनिशिंग, रंगाई और छपाई का काम भी यहाँ बहुत होता है। दक्षिण के कारखानों का बना हुआ कपड़ा यहाँ रँगाई, छपाई तथा फिनिशिंग के लिये आता है।

पिछले कुछ वर्षों में दक्षिणी रियासतों में इस धन्धे की आश्चर्यजनक उन्नति हुई है। अब दक्षिण की रियासतें ही सबसे अधिक कपड़ा तैयार करती हैं। दक्षिण में सूती कपड़े के धन्धे को निम्नलिखित सुविधायें हैं। (१) दक्षिण कपास बहुत अधिक उत्पन्न करता है अतएव दक्षिण में स्थित कारखानों को कपास सस्ते दामों पर मिल जाता है क्योंकि उन्हें कपास को लाने तथा उसे गाँठों में बाँधने का व्यय नहीं देना पड़ता (२) इस प्रदेश में भी जल शक्ति का बहुतायत होने से शक्ति सस्ते दामों पर मिलती है। (३) इन रियासतों को सस्ते मजदूरों का बहुत बड़ा सुविधा है। पाइमाँट (Piedmont) के प्रदेश से अधिकांश मजदूर इन कारखानों में काम करने आते हैं। यहाँ मजदूरी संयुक्तराज्य के अन्य प्रदेशों से कम है। यही कारण है कि दक्षिणी रियासतों ने पिछले दिनों में आश्चर्यजनक उन्नति कर ली है। किन्तु दक्षिणी रियासतों में सब सुविधायें होते हुए भी एक असुविधा है—यहाँ का पानी फिनिशिंग के लिए अनुपयुक्त है। इसी कारण अधिकतर कपड़ा न्यू इंगलैंड में फिनिशिंग के लिए भेजा जाता है किंतु अब कुएँ खोदकर तथा पानी को छानकर ब्लीचिंग (Bleaching) के योग्य बनाया जाता है और फिनिशिंग की क्रिया की जाने लगी है।

अधिकतर संयुक्तराज्य अमेरिका में और विशेषकर दक्षिणी रियासतों में मोटा कपड़ा तैयार किया जाता है। ब्रिटेन की तुलना में संयुक्तराज्य अमेरिका का कपड़ा बहुत घटिया और मोटा होता है यही कारण है कि संयुक्तराज्य अमेरिका के कारखानों में ब्रिटेन तथा अन्य देशों की अपेक्षा कहीं अधिक कपास खप जाती है।

जापान का सूती कपड़े का धंधा

जापान के सूती कपड़े के धन्धे की उन्नति पिछले चालीस वर्षों में आश्चर्यजनक गति से हुई है। जहाँ १९०० में जापान के कारखानों में केवल १३६० लाख गज कपड़ा तैयार हुआ वहाँ १९३० में लगभग एक अरब साठ करोड़ गज से भी अधिक कपड़े तैयार किये गये। देखते देखते जापान ने लंकाशायर की प्रतिस्पर्द्धा में उसके कपड़े के बाजारों को छीन लिया। ऐसा प्रतीत होने लगा कि यदि जापान ने इसी प्रकार उन्नति की तो वह सम्भवतः बहुत बढ़ जायेगा।

जापानी सूती कपड़े के धन्धे की इस आश्चर्यजनक उन्नति के निम्नलिखित कारण हैं—(१) जलवायु की अनुकूलता, (२) सस्ती जल शक्ति, (३) माल लाने तथा ले जाने की सुविधा, (४) सस्ते और कुशल मजदूर (५) भारत तथा चीन

जैसे निकट महाराष्ट्रों के समीप होने के कारण वहाँ से कपास मँगाने तथा उन देशों के बाजारों में कपड़ा बेचने की सुविधा, (६) राज्य का प्रोत्साहन तथा संरक्षण, (७) धंधे की व्यवस्था और संगठन अन्य देशों की अपेक्षा कहीं अच्छा होना, (८) मशीनों का उपयोग करना।

जापान में मिल मजदूर बहुत कम मजदूरी पर काम करते हैं। सूती कपड़े के धंधे में अधिकांश मजदूर स्त्रियाँ हैं। उनकी मजदूरी अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। किंतु इससे यह न समझ लेना चाहिए कि मजदूर कुशल नहीं होंगे, जापानी मजदूर कुशल होते हैं और अच्छा काम करते हैं। जापानियों ने मशीनों में बहुत सुधार किया है जिससे कपड़ा तैयार करने का खर्चा बहुत कम होता है। उनका बराबर यह प्रयत्न रहता है कि किसी प्रकार लागत व्यय कम किया जाय। जापानी कारखाने रात और दिन काम करते हैं अस्तु वहाँ मशीनों का पूरा पूरा उपयोग होता है और मशीनों के पुरानी हो जाने तथा घिस जाने पर नई और बढ़िया मशीन खरीद ली जाती है।

जापान से चीन और भारत पास है इस कारण तैयार माल को इन बाजारों में भेजने की सुविधा रहती है। साथ ही जापानी रेलें तथा जहाजी कम्पनियाँ जो माल विदेशों को जाता है उस पर अपेक्षाकृत बहुत कम किराया लेती हैं। किसी किसी माल पर तो जहाजी कम्पनियाँ अन्य देशों की कम्पनियों से पचास % कम किराया लेती हैं।

जापान के दक्षिणी प्रदेश में मुख्यतः यह धंधा केन्द्रित है। इस धंधे के मुख्य केन्द्र ओसाका (Osaka), नगोया (Nagoya) और टोकियो (Tokiyo) हैं। ओसाका प्रमुख केन्द्र है। अभी तक जापानी कारखाने अधिकतर घटिया कपड़ा तैयार करते थे किन्तु पिछले कुछ वर्षों से बढ़िया कपड़े तैयार करने का प्रयत्न किया जा रहा है अस्तु अमेरिकन कपास की खपत तेजी से बढ़ रही है। जापानी कपड़े के मुख्य खरीदार भारत तथा चीन हैं। चीन और जापान युद्ध के कारण जापानी कपड़े की माँग चीन में बहुत कम हो गई। इस कारण जापानी धंधे को क्षति पहुँची थी।

जापान में कपास उत्पन्न नहीं होती। अधिकांश कपास भारत तथा संयुक्तराज्य आती है। कुछ कपास मिस्र तथा चीन से भी आती है। पिछले वर्षों में जापान ने संयुक्तराज्य अमेरिका की कपास को पहले की अपेक्षा अधिक खरीदना आरम्भ किया है क्योंकि वहाँ बढ़िया कपड़ा तैयार किया जाने लगा है। जापानी कारखानों में भारतीय कपास को बढ़िया अमेरिका की कपास में मिलाकर बारीक सूत कातने का आविष्कार किया गया है। यह खोज बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। पहले जापान

भारत से अपनी आवश्यकता की ६५% कपास खरीदता था किन्तु अब ४५% से कुछ ही अधिक खरीदता है। मिश्र की कपास की खपत भी जापान में बढ़ रही है। चीन-जापान युद्ध से जापान के धंधे की प्रगति रुक गई थी। यदि इस युद्ध के फलस्वरूप जापान का चीन पर प्रभुत्व स्थापित हो जाता तब तो जापान का सूती कपड़े का धन्धा और भी पनप उठता। यदि चीन विजयी हो जाता तो चीन का बाजार जापान के हाथ से निकल जाता जिसका बुरा प्रभाव धंधे पर अवश्य पड़ता। किन्तु विश्व युद्ध में जापान के पराजित हो जाने से जापान के औद्योगिक प्रगति को बहुत क्षति पहुँची है।

जर्मनी — जर्मनी में सूती कपड़े का धन्धा मुख्यतः सैक्सनी (Saxony) तथा वेस्टफेलिया (Westphalia) के प्रदेश हैं। सैक्सनी में कैमनिज (Chemnitz), प्लानेन (Planen) ज्वीकाउ (Zwickau), तथा वेस्टफेलिया में मुनचन (Munchen), ग्लैडबाच (Gladbach), बारमन (Bermen) और ऐलबरफेल्ड (Alberfeld) मुख्य केन्द्र हैं। इनके अतिरिक्त राइनलैंड, सिलीशिया दक्षिण जर्मनी में भी कुछ केन्द्र हैं जहाँ सूती कपड़े का धन्धा केन्द्रित है। पिछले योरोपीय युद्ध के फलस्वरूप जर्मनी का सूती कपड़े का प्रमुख केन्द्र अल्सैशियन (Alsatian) उससे छिन गया। अल्सैशियन ही जर्मनी का ऐसा केन्द्र था जहाँ की जलवायु बढ़िया तथा बारीक सूत कातने तथा बढ़िया कपड़ा बुनने के लिए अनुकूल था। जर्मनी ने १९३९ के युद्ध में उसे फिर अपने अधिकार में कर लिया।

फ्रांस — फ्रांस में भिन्न भिन्न प्रकार के फैशनेबिल डिजाइन का कपड़ा बनाने का चलन है। एक ही प्रकार का बहुत कपड़ा वहाँ नहीं बनाया जाता। उत्तरी पूर्वी कोयले की खानों के समीप वोसजेस (Vosges) प्रदेश में तथा अल्सेस (Alsace) और सेंट इटिनी (St. Etienne) के जिलों में केन्द्रित है। इनके अतिरिक्त रोयन (Rouen) नानते (Nantes) जिलों में भी सूती कपड़े के कारखाने हैं।

इन देशों के अतिरिक्त इटली, चीन तथा भारत में भी यह धन्धा उन्नति कर रहा है। प्रथम योरोपीय महायुद्ध के पूर्व १९१३ में ब्रिटेन जगत का तीन चौथाई कपड़ा तैयार करता था किन्तु अब वह पैंतालीस प्रतिशत से भी कम कपड़ा तैयार करता है। भविष्य में जापान, अमेरिका तथा अन्य देशों की प्रतिस्पर्द्धा में लंकाशायर तभी खड़ा रह सकेगा जब कि वह लागत खर्च के घटाने तथा धन्धे का नवीन व्यवस्था करने में सफल होगा।

सूती कपड़े के धन्धे के साथ-साथ सब देशों में कारखानों की खराब कपास (Waste Cotton) को कातकर उसका मोटा कपड़ा बनाने का धन्धा चल पड़ा है। लंकाशायर में यह धन्धा बहुत उन्नति कर गया है। यहाँ तक कि अन्य देशों से कारखानों की खराब कपास (Waste Cotton) मँगाकर वहाँ उसको कात कर मोटा कपड़ा तैयार किया जाता है।

संसार में प्रमुख देशों में तकुओं (Spindles) की संख्या

संयुक्तराज्य अमेरिका	२५,३७८,०००
जापान	११,५०२,०००
भारत	१६,०५४,०००
चीन	४,४५०,०००
ब्रिटेन	३६,३२२,०००
जर्मनी आस्ट्रिया	१२,६६७,०००
रूस	२०,३५०,०००
फ्रांस	६,७६४,००६
इटली	५,३२४,०००
ब्राजील	२,७६५,०००

ऊनी कपड़े का धन्धा

ऊनी कपड़े की माँग ठंडे प्रदेशों में बहुत अधिक है। इसी कारण ऊनी कपड़े का धन्धा शीतोष्ण (Temperate) देशों में ही पाया जाता है। ऊनी धन्धे की विशेषता यह है कि जहाँ ऊन उत्पन्न होता है वहीं ऊनी कपड़े के कारखाने स्थापित किए गए हैं।

ऊनी कपड़े के धन्धे के लिए निम्नलिखित सुविधाओं की आवश्यकता होती है। (१) ऊन मिलने की सुविधा, (२) मीठा और स्वच्छ जल जिससे ऊन को धोने, रंगने तथा अन्य क्रियाओं के करने की सुविधा हो। (३) शक्ति, (४) कुशल मजदूर, (५) माल लाने तथा ले जाने की सुविधा। यद्यपि ऊनी कपड़े का धन्धा आधुनिक ढंग से संगठित हो गया है और बड़े-बड़े कारखाने स्थापित हो गए हैं परन्तु फिर भी प्रत्येक देश में जहाँ ऊन उत्पन्न होता है ऊनी कपड़ा कम्बल तथा अन्य ऊनी सामान तैयार करने का कुटीर उद्योग (Cottage Industry) प्रचलित है। ऐसा कोई देश नहीं है जहाँ ऊनी कपड़े का कुटीर-उद्योग प्रचलित न हो। जिन देशों में ऊन उत्पन्न होता है वहाँ आज भी यह धन्धा जीवित अवस्था में है। स्काटलैंड, वल्स, दक्षिण अमेरिका, भारत, जर्मनी, फ्रांस तथा अन्य देशों में कुटीर उद्योग गाँवों में और खेतों पर खूब होता है।

ऊन एक सा नहीं होता, कपास से अधिक कीमती होता है और उसका कपड़ा बनाना सूती कपड़े की तुलना में कठिन है। किन्तु उसके शरीर की गरमी की रक्षा करने के अद्भुत गुण के कारण उसकी ठंडे देशों में बहुत माँग है। यह तो पहले कहा जा चुका है कि ऊन एक सा नहीं होता। ऊन की गाँठों में अच्छा साधारण तथा बुरा सभी प्रकार का ऊन निकलता है। अतएव कारखानों में ऊन को छाँटा जाता है। इसके उपरान्त ऊन को साफ मीठे पानी के हौज में जिसमें साबुन या अमोनिया घुला रहता है, डाला जाता है। एक किनारे से दूसरे किनारे तक ऊन को चलाया जाता है फिर उसको रोलरों से दबाते हैं। इससे जो भी ऊन की गन्दगी होती है, निकल जाती है। जो कुछ मिट्टी तथा काँटे इत्यादि रह जाते हैं उनको रोलरों के द्वारा निकाल दिया जाता है। इसके उपरान्त ऊन को रोलरों में दबाकर उसको एकसा किया जाता है। इसे *कार्डिंग (Carding)* कहते हैं। इसके उपरान्त ऊन की पट्टियाँ या लम्बी पोनी बना ली जाती हैं। ऊन को कॉटेदार कातने तथा बुनने की क्रियाएँ रुई जैसी ही हैं। जब कपड़ा तैयार हो जाता है तो फिर उसे धोकर साबुन घुले हुए पानी में तर करके लपेट दिया जाता है। इससे लाभ यह होता है कि कपड़े की सतह एक सी हो जाती है। बुनावट नहीं मालूम पड़ती। इसे फुलिंग (Fulling) कहते हैं। इसके उपरान्त कपड़े को साफ करके भाप से सुखा कर दबाया जाता है।

ऊनी कपड़े का धन्धा विशेषकर ब्रिटेन, संयुक्तराज्य अमेरिका, जर्मनी, रूस, फ्रांस, जापान, जेकोस्लोवेकिया तथा बेलजियम में होता है। इधर कुछ वर्षों से इटली, आस्ट्रेलिया तथा जापान में भी यह धन्धा पनप रहा है। इन देशों में ऊनी कपड़े के कारखाने इस कारण स्थापित हुए क्योंकि यहाँ ऊन उत्पन्न होता है।

ब्रिटेन संसार में सबसे अधिक ऊनी कपड़ा तैयार करता है। ऊन का धन्धा ब्रिटेन के बहुत पुराने धन्धों में से है। पैनाइन (Pennines) पर्वत माला के

पश्चिम में यार्क शायर (Riding of Yorkshire) की काउन्टी इसका प्रमुख केन्द्र है। लंकाशायर में भी कुछ ऊनी कपड़े के कारखाने हैं। इस धंधे का पैनाइन पर्वतमाला के प्रदेश में केन्द्रित होने का मुख्य कारण यह है कि पूर्व काल में यहाँ भेड़ें बहुत चराई जाती थीं, और यहाँ से ऊन फ्लैंडर्स (Flanders) को भेजा जाता था। पीछे जब धार्मिक विद्वेष के कारण फ्लैंडर्स के कुशल कारीगरों को अपना देश छोड़ना पड़ा तो वे बहुत बड़ी संख्या में यहाँ आकर बस गए इस कारण यहाँ ऊनी कपड़े का धंधा चमक उठा। कोयला समीप हो होने के कारण यन्त्र युग में यह धंधा और भी उन्नति कर गया। ऊनी कपड़े के यहाँ बहुत से केन्द्र हैं। प्रत्येक केन्द्र किसी विशेष प्रकार के कपड़े को तैयार करता है। लीड्स (Leeds) हडर्स-फील्ड (Huddersfield) तथा ब्रेडफोर्ड (Bradford) बढ़िया ऊनी कपड़ा तैयार करते हैं। हैलीफैक्स (Halifax) में गलीचे बहुत बनाये जाते हैं। बैटले और ड्यूसबरी (Dewsbury) में फ्लालैन बनती है, और सलटेर (Saltaire) में अल्पाका का कपड़ा बनता है। स्काटलैंड में हाविक (Hawick), गेलाशील्स (Galashiels) इत्यादि केन्द्रों में ट्वीड (Tweed) बहुत बनती है। अलोआ (Alloa) और पैसले (Paisley) में बुनने का ऊन, तथा शाल बनाये जाते हैं। ब्रैडफोर्ड-आन ऐवन (Bradford-on-Avon) स्ट्राऊड (Stroud) ट्राऊब्रिज तथा फ्रोम (Frome) में प्रसिद्ध ब्राडक्लाथ तैयार होता है।

फ्रांस में फ्लैंडर्स (Flanders) कोयले का प्रदेश ऊनी कपड़े के धंधे का केन्द्र है। टोरकोइंग (Tourcoing) तथा रोबेक्स (Roubaix) इस धंधे के मुख्य केन्द्र हैं। फ्रांस अधिकतर सुन्दर और बढ़िया ऊनी कपड़े तैयार करता है। काश्मीर, मैरिनो, तथा डिलेनस इत्यादि बढ़िया कपड़े यहाँ की विशेषता है।

जर्मनी का ऊनी कपड़े का धंधा सैक्सनी में, वेस्टफेलिया (Westphalia) के बर्मन (Bermen) तथा एल्वरफेल्ड (Alberfeld) केन्द्रों में, थूरिंगिया, सिलीशिया तथा दक्षिण जर्मनी में फैला हुआ है। जर्मनी जितना सूती कपड़ा तैयार करता है उसका लगभग आधा ऊनी कपड़ा तैयार करता है।

पिछले वर्षों में संयुक्तराज्य अमेरिका, जापान, तथा आस्ट्रेलिया में भी ऊनी कपड़े का धंधा तेजी से बढ़ रहा है। यही कारण है कि संयुक्तराज्य अमेरिका तथा जापान प्रतिवर्ष अधिकाधिक ऊन बाहर से मँगाते हैं। क्रमशः इन देशों में ऊन की खपत बढ़ रही है। संयुक्तराज्य अमेरिका में न्यू इगलैंड रियासतों में इस धंधे के केन्द्र हैं। फिलाडैल्फिया, बोस्टन, न्यूयार्क प्रावीडैंस तथा लारेंस इस धन्धे के मुख्य केन्द्र हैं।

ब्रिटेन में ऊन पैदा होता है किन्तु वह देश की माँग का १५% से अधिक नहीं होता अतएव अधिकांश ऊन आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड से मँगाना पड़ता है। लंदन ऊन की बहुत बड़ी मंडी है। यहाँ से ऊन अन्य देशों को भी भेजा जाता है। किन्तु अब संयुक्तराज्य अमेरिका तथा जापान लंदन से ऊन न मँगा कर सीधा आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड से मँगा लेते हैं। कुछ वर्षों से ब्रिटेन का ऊनी कपड़े का धन्धा उन्नति कर रहा है। फ्रांस की प्रतिस्पर्द्धा से उसकी उन्नति रुक गई है। कारण यह है कि विदेशों में फ्रैंच डिज़ाइनों को लोग अधिक पसंद करते हैं। क्रमशः फ्रांस का धन्धा उन्नति कर रहा है और ब्रिटेन के धन्धे में अवनति के चिह्न दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

रेशमी कपड़े का धंधा

रेशम को तैयार करने में सबसे पहिली क्रिया रेशम के कवून (Cocoon) को गरम करने की होती है। इस क्रिया से रेशम का कीड़ा अन्दर ही मर जाता है। इसके उपरान्त रेशम को गरम पानी में उबालते हैं जिससे रेशम पर जो गोंद या तरह चिपचिपा पदार्थ होता है वह पिघल जाता है। इसके उपरान्त रेशम के तार को निकाला जाता है। इस क्रिया को रीलिंग (Reeling) कहते हैं। यह क्रिया हाथ से ही होती है। रेशम का तार लम्बा और एक सा होता है अतएव उसे कातने की आवश्यकता नहीं पड़ती रेशम का तार लगभग ५०० गज का होता है। रेशम के तार से ही रेशमी कपड़े तैयार किए जाते हैं। यदि रेशम को सूत अथवा

ऊन में मिलाना होता है तो इनके साथ रेशम के तार को मिला कर काता जाता है। शुद्ध रेशमी डोरा तैयार करने में तो केवल रेशमी तार को थोड़ा ऐंठ दिया जाता है।

कच्चा रेशम

अधिक मजबूत तार तैयार करने के लिये कई तारों को एक साथ मिला कर ऐंठ देते हैं। किंतु सब रेशम इसी प्रकार का नहीं होता। बहुधा ककून ऐसे भी होते हैं जिनका तार निकाला नहीं जा सकता। इन ककूनों को साफ करके उनको कातना पड़ता है। किंतु कते हुए रेशम में वह चमक और सुन्दरता नहीं रहती जो रीलिंग (Reeling) द्वारा निकाले हुये रेशमी तारों में रहती है। अधिकतर कते हुये रेशम का उपयोग सूता तथा ऊनी कपड़ों में मिलाने के लिये, घटिया रेशमी कपड़ा इत्यादि बनाने, रेशमी डोरा तैयार करने तथा रिबन और वैल्वट तैयार करने में होता है।

रेशमी कपड़े की माँग पिछले दिनों में बहुत बढ़ गई है। रेशमी कपड़े का प्रचार बढ़ने के कारण इसकी माँग भी बढ़ गई। जब से रेशम को सूत, ऊन, तथा नकली रेशम के साथ मिला कर सस्ते रेशमी कपड़े तैयार करने में सफलता मिल गई है तब से इनकी माँग बहुत बढ़ गई क्योंकि मूल्य कम हो जाने से सर्व साधारण भी इसका उपयोग करने लगे हैं। मूल्य के कम होने का एक कारण यह भी हुआ कि अब अधिकतर रेशमी कपड़ा पावरलूम (शक्ति-सचालित कर्घा) से तैयार होने लगा है। इससे पहले अधिकांश बढ़िया रेशमी कपड़ा कारीगरों द्वारा हाथ के कर्घों पर तैयार होता था।

रेशम बहुत हल्का तथा मूल्यवान कच्चा माल है अतएव वह आसानी से उन स्थानों पर ले जाया जा सकता है जहाँ धन्धे के लिये सुविधायें हों। रेशमी कपड़े के धन्धे के लिए मुख्य आवश्यकता कुशल कारीगरों की है। जहाँ कुशल मजदूर तथा अन्य सुविधायें हों वहीं यह धन्धा पनप सकता है। जगत में संयुक्तराज्य अमेरिका,

फ्रांस, जापान, इटली, जर्मनी और ब्रिटेन रेशमी कपड़ा तैयार करने वालों में मुख्य हैं।

फ्रांस में रेशमी कपड़े का धन्धा लायन्स (Lyons) के समीपवर्ती प्रदेश विशेष कर रोन की घाटी में केन्द्रित है। कोई भी देश फ्रांस जैसा सुन्दर डिजाइन वाले तथा सुन्दर रंगीन रेशमी कपड़े तैयार नहीं करता। संयुक्तराज्य अमेरिका में सबसे अधिक रेशमी कपड़ा तैयार होता है। रेशमी कपड़ा न्यू जर्सी (New Jersey) में बहुत तैयार किया जाता है। इसका मुख्य केन्द्र पैटरसन (Paterson) है। इसके अतिरिक्त पैनसिलवेनिया (Pennsylvania) कनेक्टिकट (Connecticut) तथा न्यू यार्क रियासतों में भी रेशमी कपड़े के कारखाने हैं। न्यू यार्क संसार में सबसे बड़ी रेशम की मंडी है। संयुक्तराज्य अमेरिका से रेशमी कपड़ा कनाडा तथा दक्षिण अमेरिका को बहुत जाता है। जर्मनी का रेशमी कपड़े का धन्धा अधिक महत्वपूर्ण नहीं है। बर्लिन तथा क्रेफेल्ड (Krefeld) इसके प्रधान केन्द्र हैं। ब्रिटेन का रेशमी कपड़े का धन्धा भी अधिक महत्वपूर्ण नहीं है। वहाँ अधिकतर बने हुए रेशम का घटिया कपड़ा ही तैयार होता है। मैकलेस फील्ड (Macclesfield), कांगलटन (Congleton), डर्बी, कावेंटरी (*Coventry*), ब्रेडफोर्ड (Bradford) तथा मैंचेस्टर इसके मुख्य केन्द्र हैं।

जापान में रेशम बहुत उत्पन्न होता है। किसान रेशमी कीड़े पालने का भी धन्धा करते हैं और कूकूनों को बेच देते हैं। याकोहामा (Yokohama) रेशम का मुख्य मंडी है। यहाँ से ही रेशम विदेशों को भेजा जाता है। जापान और चीन संसार का लगभग ८५% कच्चा रेशम उत्पन्न करते हैं। अस्तु अधिकतर कच्चा रेशम इन्हीं दो देशों से जाता है। चीन में रेशम के कीड़े पालने का धन्धा निचली यांगटिसी बेसिन में बहुत होता है। इसके मुख्य केन्द्र शंघाई, हाँगचाऊ, सूचाऊ, हांकाऊ, कैंटन और चाफू हैं। जापान का रेशम बहुत बढ़िया नहीं होता

है। योरप में इटली कच्चा रेशम बाहर भेजने वालों में मुख्य है। इटली का रेशम बढ़िया होता है। इटली में पीडमाट (Piedmont), लम्बार्डी (Lombardy) तथा वेनेशिया (Venetia) रेशम उत्पन्न करने के मुख्य केन्द्र हैं।

संयुक्तराज्य अमेरिका में बढ़िया रेशमी कपड़े की बहुत माँग है, इस कारण बाहर से रेशमी कपड़ा तथा रेशम बहुत आता है। संयुक्तराज्य अमेरिका के बाद ब्रिटेन रेशम तथा रेशमी कपड़ा मंगाने वालों में मुख्य है। रेशमी कपड़ा बाहर भेजने वालों में फ्रांस, जापान और इटली प्रमुख हैं।

वेस्ट सिल्क (कारखानों का बना हुआ रेशम) का धन्धा उन सभी देशों में होता है जहाँ रेशम का धंधा होता है। किंतु विशेष रूप से यह धंधा पूर्वी स्वीटजरलैंड, दक्षिणी पूर्वी फ्रांस तथा जापान में केन्द्रित है।

नकली रेशमी कपड़े का धंधा

पिछले कुछ वर्षों से नकली रेशम बहुत बनने लगा है। धीरे धीरे नकली रेशमी कपड़े की माँग भी बढ़ती जा रही है। इस कारण यह धन्धा बहुत जल्दी ही उन्नति कर गया। सर्वप्रथम नकली रेशम बनाने का धंधा फ्रांस में १८९५ में स्थापित हुआ और वहाँ से योरोप के अन्य देशों में फैला।

नकली रेशम सैलुलाज (Cellulose) से बनाया जाता है। सैलुलाज एक पदार्थ है जो कि वृक्षों और पौधों से निकाला जाता है। अधिकतर सैलुलाज (Cellulose) लकड़ी की लुग्दी (Woodpulp) विशेष कर पाइन (Pine) और स्प्रूस की लुग्दी से तथा कपास से निकाला जाता है। तदुपरान्त सैलुलाज (Cellullose) को रासायनिक क्रियाओं द्वारा चिपकने वाली पतली लुग्दी में परिणत कर लिया जाता है। यह पतली लुग्दी जब पतली नलियों में दबाई जाती है तो रस्सा के रूप में परिणत हो जाती है जो कि कात ली जाती है और सूत तैयार हो जाता है। नकली रेशम बनाने के चार मुख्य तरीके हैं परन्तु अधिकांश नकली रेशम ९०% ऊपर बताये हुए तरीके से ही तैयार होता है।

अधिकतर नकली रेशम स्प्रूस (Spruce) तथा पाइन (Pine)की लकड़ी से बनता है। थोड़ा सा रेशम कारखानों की बची हुई कपास से भी बनाया जाता है। अतएव लकड़ी ही इस धंधे का मुख्य कच्चा माल है। इनके अतिरिक्त अन्य रासायनिक द्रव्यों की भी जरूरत पड़ती है। १९२० के उपरान्त इस धंधे ने आश्चर्यजनक उन्नति कर ली और यह बहुत तेजी से बढ़ा। नकली रेशम के धन्धे में सस्ते मजदूरों की आवश्यकता है, अतएव अधिकतर स्त्रियाँ ही इन कारखानों में काम

करती हैं। इन सुविधाओं के अतिरिक्त सस्ती जल शक्ति की बहुतायत भी धन्धे के लिए आवश्यक है।

नकली रेशम तैयार करने वालों में संयुक्तराज्य अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस, ब्रिटेन, जापान, और इटली मुख्य हैं। संयुक्तराज्य, सबसे अधिक नकली रेशम तैयार करता है। योरोप में इटली, ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, हालैंड तथा बैलजियम में यह धंधा होता है।

यद्यपि संयुक्तराज्य अमेरिका सब से अधिक नकली रेशम तैयार करता है फिर भी सबसे अधिक नकली रेशम बाहर से मँगाता है। बाहर से नकली रेशम मँगाने वालों में ब्रिटन का स्थान दूसरा है। जापान और इटली नकली रेशम विदेशों को भेजने वालों में मुख्य हैं।

अब धीरे धीरे सभी सूती कपड़े के केन्द्रों में नकली रेशम का धन्धा स्थापित होता जा रहा है क्योंकि कारखानों की बची हुई रूई (Waste cotton) से नकली रेशम तैयार होता है। इस प्रकार कारखाने की बची हुई खराब रूई का उपयोग हो जाता है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में यह धन्धा अपलेशियन पर्वतमाला के दोनों ओर केन्द्रित है। ब्रिटेन म यह धन्धा कावेंटरी, डर्बी, वोलवरहैम्पटन, फ्लिंट, मैंचेस्टर, तथा लिवरपूल में केन्द्रित है। इटली में यह धन्धा उत्तर म केन्द्रित है। जर्मनी में कलोन (Cologne) तथा ब्लैक फारेस्ट प्रदेशों में यह धन्धा स्थापित है। फ्रांस में उत्तर पूर्वीय कोयले के प्रदेश में तथा रोन नदी की घाटी में यह धन्धा स्थापित है। जापान म यह धन्धा पिछले वर्षों म बहुत उन्नति कर गया है।

नकली रेशम अधिकतर मोजे, बनियाइन इत्यादि हौजियरी का सामान बनाने, साधारण कपड़ा तैयार करने, अंडर वियर, रिबन इत्यादि तैयार करने तथा सूत, रेशम, और ऊन के साथ मिलाने के काम म आता है। अधिकतर नकली रेशम का उपयोग मिलावट के लिए ही होता है। क्रमशः नकली रेशम के कपड़े की माँग तेजी से बढ़ती जा रही है। अभी यह कह सकना कठिन है कि नकली रेशम शुद्ध रेशम तथा बढ़िया सूती कपड़े की माँग को कितना कम कर सकेगा किन्तु इसमें संदेह नहीं कि इनकी माँग कुछ कम अवश्य हो जायगी।

संसार में नकली रेशम की उत्पत्ति

संयुक्त राज्य अमेरिका	१२६,००० टन
जापान	१२०,००० ,,
जर्मनी	६०,००० ,,

ब्रिटेन	५०,००० „
फ्रांस	३८,००० „
निदरलैन्ड	१०,००० „
बेलजियम	५,००० „
स्विटजरलैन्ड	७,५०० „

अभी तक पहिनने के वस्त्र छोटे-छोटे कारीगरों (दर्जियों) द्वारा होता है।

पहिनने के कपड़ों का धन्धा

परन्तु अब कुछ देशों में बड़े-बड़े कारखानों में पहिनने के कपड़े तैयार किए जाते हैं। संयुक्तराज्य अमेरिका में यह धधा बहुत उन्नति कर गया है। संयुक्तराज्य में अधिकांश पुरुष और यथेष्ट स्त्रियाँ बने बनाये वस्त्र पहिनती हैं। अब योरोप में भी यह धन्धा बढ़ रहा है, यह धन्धा न्यू यार्क, न्यू जरसी (New Jersey) फिलीडेलफिया, शिकागो, लास एंजिल्स (Los Angeles) सेन्ट लुईस तथा बोस्टन में केन्द्रित है।

सन के कपड़े का धन्धा (Linen Industry)

पट सन (Flax) के पौधे को जड़ से उखाड़ कर उसके बीज को पृथक् कर दिया जाता है। इसके उपरान्त सन के डांठों को बड़े बड़े बंडलों में बाँध कर पानी में १० से १५ दिन तक डुबो कर रक्खा जाता है। सन को सड़ाने के लिए बहुत शुद्ध जल की आवश्यकता है। जब सन सड़ जाता है तब उसको पानी से निकाल कर सूखने के लिए डाल दिया जाता है। सूखने पर उसको रोलरों के बीच में दबाकर रेशों को लकड़ी से पृथक् कर लिया जाता है। जब रेशा साफ हो जाता है तब उसको कात कर बुनते हैं। सन की बुनाई तभी हो सकती है जब सन का डोरा गरम और भीगा हो। इस कारण बुनने के पूर्व डोरे को गरम पानी में डाला जाता है। सन बहुत मजबूत और सुन्दर होता है।

सन का कपड़ा (Linen) अधिकतर आइरलैन्ड में तैयार होता है। संसार में सन के कपड़े का सबसे बड़ा केन्द्र बैलफास्ट है। बैलफास्ट (Belfast) के अतिरिक्त लंडनडैरी (Londonderry), लिस्बर्न (Lisburn) तथा नारवी (Norvy) आयरलैन्ड में इस धधे के मुख्य केन्द्र हैं। जर्मनी में इस धधे के गोरलिज (Gorlitz) दक्षिण पूर्व में, तथा बीलेफेल्ड (Bielefeld) वेस्टफेलिया (Westphalia) में मुख्य केन्द्र हैं। लिली (Lille) और ककराई (Kachrai) फ्रांस में तथा डंडी (Dundee) और डनफरमलाइन (Dunfermline) स्काटलैन्ड में इस धन्धे के प्रमुख केन्द्र हैं। बेलजियम केघेंट (Ghent) और कोटराई (Coutrai) केन्द्रों में भी इसके कारखाने हैं। इन केन्द्रों के लिए सन

अधिकतर रूस तथा बाल्टिक देशों से आता है। कुछ सन बाल्कन देशों से भी आता है।

जूट का धंधा अधिकतर भारत, स्काटलैंड के डंडी (Dundee) इत्यादि केन्द्रों, और संयुक्तराज्य अमेरिका में केन्द्रित है। कुछ कारखाने घेंट (Ghent) में भी हैं (बेलजियम)।

रासायनिक धंधे (Chemical) (Industries)

यदि देखा जाये तो रासायनिक धंधे (Chemical Industries) आधार भूत धंधे हैं। क्योंकि अधिकांश धंधे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से रासायनिक धन्धों पर निर्भर हैं। उदाहरण के लिए *सूती कपड़े का धन्धा बहुत कुछ रासायनिक धन्धों पर निर्भर है।* जब तक कि रासायनिक धन्धों की उन्नति न हो तब तक कपड़े की धुलाई, रंगाई और छपाई अच्छी तरह से हो ही नहीं सकता। इसी प्रकार अन्य धन्धों में भी रासायनिक पदार्थों की आवश्यकता पड़ती है। अतएव प्रत्येक प्रमुख औद्योगिक केन्द्र में रासायनिक धन्धे स्थापित हो गए हैं। रासायनिक क्रियायें और धन्धे अगणित हैं किन्तु चार प्रकार के मुख्य हैं (१) गंधक का तेजाब तथा अल्काली (Alkalis) जैसे रासायनिक पदार्थ। (२) कोलतार से निकलने वाले रंग तथा ड्रग इत्यादि (३) ऐलैक्ट्रो केमिकल (Electro-Chemical) *जैसे हवा का नाइट्रोजन को खाद के रूप में पृथ्वी पर जमाना।* (४) साबुन, कागज, चमड़ा और शीशा इत्यादि।

जर्मनी रासायनिक पदार्थ तथा रंग इत्यादि बनाने में संसार भर में सर्वश्रेष्ठ है। जर्मनी में पोटाश तथा अन्य साल्टों (Salts) की बहुतायत वैज्ञानिक खोज की उन्नति तथा कारीगरी की उन्नति के कारण ही यह धन्धा वहाँ इतनी उन्नत दशा में है। जर्मनी में इस धन्धे के मुख्य केन्द्र लुडविग शेफेन (Ludwigshfen), एसेन (Essen), एल्बरफेल्ड (Elberfeld), फ्रैंकफर्ट आन मेन (Frankfurt Maine), स्टैसफर्ट (Stassfurt) तथा म्यूनिक (Munich) हैं। जर्मनी केवल रासायनिक पदार्थों, रासायनिक खाद, तथा रंग में ही अन्य देशों से आगे नहीं है वरन औषधियों, तथा शीशे के धन्धे में भी बहुत आगे है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में भी रासायनिक धन्धों की पिछले दिनों में बहुत उन्नति हुई है। वहाँ विशेषकर रंग बहुत तैयार होता है। विलमिंगटन, बफैलो, और न्यूयार्क इस धन्धे के केन्द्र हैं। संयुक्तराज्य अमेरिका में भी पोटाश, कोक बनाने की *भट्टियों की बहुतायत, तथा कुशल कारीगरों के कारण, यह धंधा उन्नति कर गया है।*

ब्रिटेन में यह धंधा मुख्यतः चेशायर के मैदान (Cheshire Plain) में केन्द्रित है। रनकार्न (Runcorn), नार्थविच, ग्लासगो, मिडिल्सबरो, न्यू कैसिल,

इङ्गलैण्ड, पैडफोर्ड, मैंचेस्टर इसके मुख्य केन्द्र हैं। फ्रांस और बेलजियम में भी यह धन्धा अच्छी दशा में है। ऐलैक्ट्रो केमिकल धन्धा स्कैन्डिनेविया, स्वीटजरलैन्ड तथा उत्तरी इटली में स्थापित है।

शीशे के धन्धे के लिए रेता, चूना, रेह (Alkali), फ्लिंट (Flint) तथा अन्य रासायनिक पदार्थों की आवश्यकता होती है। संसार में शीशे का सामान बनाने वाले देशों में जर्मनी, जेकोस्लावाकिया, आस्ट्रिया, पोलैन्ड, बेल्जियम, इटली, संयुक्तराज्य अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, और जापान मुख्य हैं।

साबुन, सोडा, पोटाश और चर्बी तथा तेलों के मिश्रण से बनता है। साबुन तथा अन्य टायलट सामग्री तैयार करने वालों में संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी और फ्रांस प्रमुख हैं।

खाल को कमाने (टैन करने) से चमड़ा तैयार होता है। खाल को टैन करने (कमाने) के लिए या तो कुछ वृक्षों की छाल और फल का उपयोग होता है अथवा खनिज पदार्थों का उपयोग किया जाता है। बढ़िया चमड़ा तैयार करने वाले देशों में संयुक्तराज्य अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस, और ब्रिटेन मुख्य हैं।

चीनी मिट्टी के बर्तन (Pottery)

चीनी मिट्टी के बर्तन बहुत प्रकार की मिट्टी से बनते हैं। हाँ, मिट्टी में लोहे का अंश न होना चाहिए नहीं तो पकाने में बर्तन खराब हो जाते हैं। मिट्टी के अतिरिक्त फ्लिंट (Flint) चूना (Phosphate of lime) तथा फल्सपार (Feldspar) की आवश्यकता होती है। सबसे बढ़िया बर्तन काओलिन (Kaolin) से बनते हैं जो फ्रांस, जर्मनी और संयुक्त राज्य अमेरिका में पाई जाती है। बर्तन के ऊपर ग्लेज चढ़ाकर उसे सुन्दर तथा टिकाऊ बनाते हैं। पाटरी तीन प्रकार की होती है। मिट्टी के बर्तन, पत्थर के बर्तन, तथा पोर्सिलेन (Porcelain)।

चीन और जापान के पोर्सिलेन संसार प्रसिद्ध हैं। अब फ्रांस, जर्मनी, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा ब्रिटेन में यह धन्धा विशेष उन्नति कर गया है। इन्हीं देशों में यह धन्धा केन्द्रित है।

चमड़े तथा चमड़े की वस्तुएँ बनाने का धन्धा

चमड़े का सभ्य संसार में बहुत उपयोग होता है। अधिकांश चमड़ा जूते बनाने के काम आता है किन्तु कारखानों की मशीनों का बेल्ट, सूट केस, दस्ताने, पर्स तथा अन्य विलासिता की सामग्री भी चमड़े की ही बनती है।

चमड़ा गाय, बैल, भेड़, बकरी, सुअर, साँप और मगर की खाल से तैयार किया जाता है। इन खालों को कुछ छालों, वृक्षों की पत्तियों और फलों की सहायता से कमाया जाता है और चमड़ा तैयार होता

है। इनमें चमड़े को रासायनिक पदार्थों से कमाया जाता है। सयुक्त राज्य अमेरिका में आधा चमड़ा क्रोम पद्धति से तैयार किया जाता है। चमड़ा कमाने का धन्धा सभी देशों में होता है किन्तु मुख्य नीचे लिखे हैं :—सयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, ब्रिटेन, और फ्रांस। इन देशों में खाल बहुत कम होती है। वे खाल बाहर से मँगाते हैं। खालें भेजने वालों में अरजैनटाइन, यूरग्वे, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, तथा भारत मुख्य हैं। सयुक्त राज्य अमरिका में जूते का धन्धा मैसाचुसट्स (Mascachusetts), न्यू-यार्क, इलीनायस (Illinois) विसकौंसिन (Wisconsin) और न्यूजरसी (New Jersey) में केन्द्रित है। सयुक्त राज्य अमेरिका के अतिरिक्त ब्रिटेन, फ्रांस तथा जैकोस्लावाकिया जूता बनाने के लिए प्रसिद्ध हैं।

सभ्यता व विकास के साथ-साथ कागज की माँग बहुत बढ़ गई है। पुस्तकों, पत्रों और मासिक पत्रों का प्रकाशन ससार में इस तेजी से बढ़ा है कि
कागज का धन्धा *जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। अधिकाश कागज नरम लकड़ी कोणधारी का बनता है इस कारण लकड़ी की* माँग इस धन्धे के लिए बेहद बढ़ गई है। अधिकतर कागज स्प्रूस (Spruce) और हैमलाक (Hamlock) का बनता है किन्तु पिछले दिनों पीला पापलर (Yellow Poplar) तथा ऐसपन (Aspen) बहुत काम में आने लगा है। इन पेड़ों की नरम लकड़ी की लुग्दी (Pulp) बनाई जाती है। लकड़ी की लुग्दी दो प्रकार से बनाई जाती है। एक यात्रिक पद्धति (Mechanical Process) द्वारा दूसरे रासायनिक पद्धति (Chemical Process) द्वारा रासायनिक पद्धति में लुग्दी को भाप द्वारा पकाया जाता है और उसमें भिन्न भिन्न रासायनिक पदार्थ मिलाये जाते हैं। पहली पद्धति से न्यूजप्रिंट (अखबारी कागज) तथा घटिया कागज बनता है किन्तु सस्ता होता है। दूसरी पद्धति में व्यय अधिक होता है किन्तु पुस्तकों के लिए अधिक टिकाऊ सफेद और बढ़िया कागज तैयार होता है।

लुग्दी बनाने के लिए केवल सस्ती लकड़ी ही नहीं चाहिए वरन यथेष्ट जल शक्ति भी आवश्यक होती है। यही कारण है कि धन्धा सयुक्त राज्य अमेरिका के कोणधारी वनों के प्रदेश के दक्षिणी सिरे पर तथा फिनलैंड, नारवे, और स्वीडन के समुद्र तट पर केन्द्रित है जहाँ लकड़ी और जलशक्ति दोनों की ही बहुतायत है। यह धन्धा सयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, जर्मनी, स्वीडन, नारवे, फिनलैंड और रूस में केन्द्रित है। सयुक्त राज्य अमेरिका में कागज के कारखाने वाशिंगटन, मेन, विसकानसिन और न्यू यार्क में केन्द्रित है। सयुक्त राज्य अमेरिका में कागज की इतनी खपत है और इतना कागज तैयार होता है कि वहाँ बहुत से वन साफ हो गए।

लकड़ी की कमी के कारण बहुत सा न्यूजप्रिंट, लुग्दी और लकड़ी प्रतिवर्ष कनाडा से मँगवानी पड़ती है। संयुक्त राज्य के वाशिंगटन और ओरीगान (Oregon) में कुछ वर्षों से यह धन्धा पनप उठा है। कनाडा में यह धंधा क्यूबैक (Quebec) तथा ग्रानटैरियो (Ontario) में प्रमुख है। किन्तु अब यह धन्धा पश्चिमी तट के पास भी स्थापित हो गया। वहाँ समीप ही कोलम्बिया के विस्तृत वन हैं।

कागज की बढ़ती हुई माँग के कारण बहुत से कोणधारी वन साफ हो गए। यद्यपि अभी उत्तर ध्रुव प्रदेश के नीचे नरम लकड़ी के वन हैं फिर भी वनों की रक्षा की ओर ध्यान गया है और सभी देशों में वनों की विशेष रूप से रक्षा और उन्नति की जा रही है।

अभ्यास के प्रश्न

१—धन्धों के स्थानीयकरण (Localisation) से क्या लाभ होता है ! धन्धों का स्थानीयकरण क्यों होता है ? उसके भौगोलिक कारण लिखिए।

२—स्पात (Steel) बनाने की भिन्न भिन्न क्रियायें क्या हैं ? उनका वर्णन कीजिए।

३—पिट्सबर्ग स्टील के धन्धे का मुख्य केन्द्र क्यों है कारण बताइये !

४—संयुक्तराज्य अमेरिका के लोहे और स्टील के धन्धे का विवरण दीजिए।

५—सूती वस्त्र व्यवसाय के केन्द्रित होने के लिए किन बातों की आवश्यकता है समझा कर लिखिए और बतलाइए कि मैंचेस्टर में यह धन्धा क्या केन्द्रित है !

६—जापान में सूती कपड़े का धन्धा इतना उन्नति क्यों कर गया ?

७—ऊन के धन्धे का विवरण दीजिए और बतलाइए कि वह कहाँ केन्द्रित है ?

८—कागज के धन्धे के लिए किन बातों की आवश्यकता है और यह कहाँ केन्द्रित है ?

९—संयुक्तराज्य अमेरिका के सूती वस्त्र के धन्धे का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

यदि किसी देश में जनसंख्या बहुत कम है और प्रकृति की देन अर्थात् उपजाऊ भूमि, खेती के योग्य जलवायु, यथेष्ट खनिज तथा वन-सम्पत्ति है तो वहाँ खेती तथा कच्चा माल उत्पन्न करने के धन्धे अर्थात् मुख्य धन्धे (Primary Industries) स्थापित होंगे। किसी देश में क्या क्या वस्तु उत्पन्न होगी यह वहाँ की भूमि तथा जलवायु निर्धारित करती है। किसी देश में कौन से धन्धे स्थापित होंगे यह वहाँ की जलवायु, शक्ति के साधन, मजदूरों की कुशलता, गमनागमन के साधन बाजार के सामीप्य (Nearness to Market) तथा कच्चे माल के प्राप्त करने की सुविधा पर निर्भर है। प्रकृति की देन तथा किसी भी देश की सभ्यता का वहाँ के धन्धों पर मुख्य प्रभाव पड़ता है।

यह तो पहले परिच्छेद में ही हम लिख चुके हैं कि मनुष्य अपनी भौगोलिक परिस्थिति की उपज है। शीतोष्ण कटिबन्ध तथा ऊष्ण कटिबन्ध के वह भाग जो विषुवत रेखा के अधिक समीप नहीं है वहाँ के रहने वाले क्षमता वाले होते हैं। यही कारण है कि इन देशों में व्यापार और उद्योग धंधों की अधिकता है। विषुवत रेखा पर स्थित प्रदेशों के रहने वाले व्यापार तथा धंधों में प्राप्त अधिक अभिरुचि नहीं रखते क्योंकि वहाँ जीवन की आवश्यकतायें थोड़ी होती हैं और वह भी बिना अधिक श्रम किए ही पूरी हो जाती हैं।

जिन देशों का विस्तार कम है उनका प्रति मनुष्य पीछे विदेशी व्यापार का औसत अधिक है। इसका मुख्य कारण यह है कि देश जितना ही छोटा होगा उतनी जलवायु तथा भूमि सब भागों में एक सी ही होगी अर्थात् भूमि और जलवायु की भिन्नता कम होगी इस कारण भिन्न भिन्न प्रकार की फसलें न उत्पन्न हो सकेंगी और न भिन्न भिन्न प्रकार की वस्तुयें ही तैयार हो सकेंगी। उदाहरण के लिए ब्रिटेन को ले लें। इसके विपरीत चीन जैसे महादेश में उत्तर से लेकर दक्षिण तक भिन्न भिन्न प्रकार की जलवायु तथा भूमि है। अतएव वहाँ गरम और ठंडे देशों की सभी पैदावारें हो सकती हैं। अस्तु उसे बाहर से कम वस्तुयें मँगाने की आवश्यकता पड़ती है। जो बहुत ही छोटे देश हैं उनका विदेशी व्यापार सबसे अधिक है। ब्रिटेन बेलजियम की अपेक्षा बड़ा देश है। इसी कारण प्रति मनुष्य पीछे ब्रिटेन का व्यापार बेलजियम से कम है। फाकलैंड (Falkland) द्वीप में भेड़ चराने के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। यही कारण है इस छोटे से द्वीप का वैदेशिक व्यापार प्रति मनुष्य पीछे बहुत अधिक है।

प्रत्येक देश आयात पदार्थों (Imports) का मूल्य पदार्थों का निर्यात (Export) करके चुकाता है। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि कोई देश जितने

मूल्य का माल बाहर से मँगाता है ठीक उतने ही मूल्य का माल बाहर भेजेगा, कम या ज्यादा नहीं भेजेगा। *किसी निश्चित समय में कोई देश जितना माल बाहर से मँगाता है ठीक उतने ही मूल्य का माल बाहर भेजेगा, कम या ज्यादा नहीं भेजेगा।* किसी निश्चित समय में कोई देश जितना माल बाहर से मँगाता है उसमे अधिक या कम बाहर भेजता है। इस अन्तर को व्यापार का अन्तर (Balance of Trade) कहते हैं। व्यापार का अन्तर किसी देश के पक्ष अथवा विपक्ष में हो सकता है। *किन्तु अन्ततः आयात और निर्यात बराबर हो जाते हैं।*

आधुनिक युग में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की अत्यधिक उन्नति हुई है। इस अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को द्रव्य (Money) के चलन, बिल (हुंडी) के प्रचार, बैंकिंग की सुविधा, समुद्री बीमा, जहाज, रेल तथा हवाई मार्ग की सुविधाओं, तार, बेतार तथा रेडियो के आविष्कार से बहुत प्रोत्साहन मिला है। इनके कारण बाजार भाव एक क्षण में सब देशों में प्रकट हो जाता है। माल भेजने को सुविधा हो गई और लेन-देन का हिसाब आसानी से निबट जाता है। यदि ये सब सुविधायें न होतीं तो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार इतना नहीं बढ़ पाता।

जहाँ ऊपर बताई हुई सुविधाओं से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहन मिला है वहाँ कुछ ऐसी बातें भी हैं जिनसे व्यापार में रुकावट पड़ती हैं। प्रत्येक देश आज अपने उद्योग धन्धे की उन्नति का प्रयत्न कर रहा है अतएव बाहर से आने वाले माल पर चुंगी (कर) बिठाई जाती है। कभी कभी बाहर से आने वाले माल पर इतना अधिक कर लगा दिया जाता है कि वह देश में बिक ही न सके। इस संरक्षण नीति (Protection) के कारण व्यापार में रुकावट पड़ती है। इसके अतिरिक्त व्यापारिक समझौते तथा सधियाँ (Commercial agreements) भी व्यापार के स्वाभाविक प्रवाह को रोकते हैं। इन सब के ऊपर यह जो आये दिन युद्ध होते रहते हैं यह व्यापार को सबसे अधिक हानि पहुँचाते हैं। फिर भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार होता है और होता रहेगा यह प्राकृतिक है।

व्यापार और भौगोलिक परिस्थितियाँ

व्यापार पर भौगोलिक तथा सामाजिक परिस्थितियों का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। अतएव हम यहाँ उनका अध्ययन करेंगे।

स्थिति Situation

किसी देश के व्यापार पर वहाँ की स्थिति का बहुत प्रभाव पड़ता है। जिन देशों की स्थिति ऐसी है कि संसार के मुख्य व्यापार मार्गों से उसका सम्बन्ध है *तब तो वहाँ की व्यापारिक उन्नति शीघ्र* होगी और यदि जिसकी स्थिति ऐसी है कि वह देश अकेला पड़ जाता है तो उसका व्यापारिक महत्व कम हो जाता है।

उदाहरण के लिये रूस, सायबेरिया, मध्य एशिया व्यापारिक मार्गों से दूर अन्दर की ओर हैं किन्तु ब्रिटेन, भारत, संयुक्तराज्य अमेरिका की स्थिति अच्छी है। ब्रिटेन के व्यापार की जो इतनी अधिक उन्नति हुई इसका एक कारण यह भी है कि वह उन्नतशील महाद्वीपों के मध्य में है। आजकल जो देश समुद्र के किनारे नहीं हैं समुद्र से दूर हैं वे व्यापारिक उन्नति नहीं कर सकते। यदि देश की स्थिति ऐसी है कि वह सुरक्षित है तो उसके उद्योग धन्धे और व्यापार की उन्नति होगी।

कटा हुआ समुद्र तट (Broken coastline)

जिन देशों का समुद्र तट बहुत कटा हुआ होता है वहाँ बन्दरगाह अधिक होते हैं, देश का प्रत्येक भाग समुद्र के समीप हो जाता है। इस कारण वहाँ व्यापार अधिक होता है। यही नहीं वहाँ के निवासी सामुद्रिक यात्रा के अभ्यस्त होने के कारण अधिक साहसी होते हैं इस कारण उस देश की औद्योगिक तथा व्यापारिक उन्नति होती है। ब्रिटेन तथा हालैंड का समुद्र तट उनकी आर्थिक उन्नति में बहुत ही सहायक हुआ है।

नदियाँ

नदियाँ भी व्यापार के लिये बहुत महत्वपूर्ण हैं। संसार में कुछ नदियों ने तो वहाँ की सभ्यता का निर्माण करने में बहुत महत्वपूर्ण भाग लिया है। उदाहरण के लिये नील, गङ्गा, सिंध, यूफ्रेटीज और टाइग्रीज तथा यांग्टिसीक्यिांग और ह्वांगहो का घाटियाँ इन देशों की सभ्यता का निर्माण करने वाली हैं। यदि नदियों में यथेष्ट जल होता है और वे खुले हुए समुद्र में गिरती हैं तो वे व्यापार का एक मुख्य साधन बन जाती हैं। नदियों की घाटियों में पैदावार खूब होती है और उसके आधार पर व्यापार होता है।

पहाड़—मैदान

पहाड़ अधिकतर जनसंख्या के विस्तार तथा व्यापार के लिए बाधक होते हैं क्योंकि मार्गों की सुविधा उनमें नहीं होती। किन्तु मैदान व्यापार तथा जनसंख्या के विस्तार में सहायक सिद्ध होते हैं। क्योंकि वहाँ पैदावार भी खूब होती है और मार्गों की सुविधा भी होती है।

जलवायु

जलवायु खेती की पैदावार, वन सम्पत्ति को निर्धारित करती है और वहाँ के उद्योग धन्धों पर भी प्रभाव डालती है इस कारण जलवायु का भी व्यापार पर प्रभाव पड़ता है। जिन देशों की जलवायु स्फूर्तिदायक है और धन्धा और खेती की पैदावार के लिये अनुकूल है वहाँ व्यापार भी चमक उठता है।

सबसे अच्छी जलवायु वही समझी जाती है जिसमें निम्नांकित तीनों बातें पायी जाती हैं —

१—जाड़ का निम्नतम तापक्रम ३८° फै० से कभी कम न हो। यह तापक्रम मास्तिष्क की उन्नति के लिए सब से अधिक लाभदायक होता है। गर्मी के दिनों का तापक्रम ६४° फै० से अधिक न हो। ऐसा तापक्रम शारीरिक उन्नति के लिए अति आवश्यकीय है।

२—आपेक्षिक नमी (Relative Humidity) को निरन्तर उच्च रखने के लिए हवायें महासागर अथवा बड़ी बड़ी झीलों में होकर आयें और साल भर बराबर जलवृष्टि करती रहें। ऐसा वर्षा धनधार (Down Pours) न हो बल्कि थोड़ा थोड़ा करके समय समय होती रहे।

३—चक्रवातों का क्रम निरन्तर जारी रहे। चक्रवात तापक्रम में परिवर्तन लाते रहते हैं, जो स्वास्थ्य की दृष्टि से भी अति आवश्यकीय हैं।

४—ऐसा जलवायु जिसमें उपरोक्त लगभग सभी शर्तें पायी जाती हैं, पश्चिमी यूरोप, उत्तरी संयुक्तराष्ट्र उत्तरी अमरिका के पश्चिमी तट पर कैलीफोर्निया से ब्रिटिश कोलम्बिया तक और न्यूजीलैंड (New Zealand) में पायी जाती है। जापान की जलवायु यद्यपि उपरोक्त देशों की जलवायु की समता नहीं कर सकती, फिर भी यहाँ की जलवायु आदर्श जलवायु के बिल्कुल सन्निकट है। जिस देश की जलवायु अच्छी होगी वह देश हर दिशा में उन्नति कर सकता है। उपरोक्त सभी देश आजकल व्यापार और सभ्यता के क्षेत्र में संसार में सबसे आगे हैं। संक्षेप में ४०° उत्तर से ७०° उत्तर और ४०° दक्षिण से ७०° दक्षिण की जलवायु औद्योगिक सभ्यता (Industrial Civilization) की दृष्टि से सर्वोत्तम है। इन्हीं अक्षांशों के अन्दर उपरोक्त सभी देश आ जाते हैं।

व्यापार तथा समृद्धि

जब अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नहीं था तो मनुष्य को केवल उन्हीं वस्तुओं से अपना काम चलाना पड़ता था जो कि उसके आस पास उत्पन्न होती थीं या तैयार की जाती थीं। किन्तु आज किसी मजदूर या किसान के मकान को भी यदि हम देखें तो उसके झोपड़े में संसार के प्रत्येक देश की बनी हुई कोई न कोई चीज अवश्य मिल जावेगी। व्यापार से मानव समाज को एक बड़ा लाभ यह हुआ कि उसको पहले की अपेक्षा बहुत अधिक वस्तुएँ उपयोग के लिए प्राप्त हो गई। आज जिस देश या स्थान में जिस किसी वस्तु के पैदा करने या बनाने के लिए अनुकूल परिस्थिति होती है वहीं वह वस्तु अधिक राशि में उत्पन्न या तैयार की जाती है और वहाँ से अन्य देशों या स्थानों को भेज दी जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि मानव समाज आज पहले की अपेक्षा अधिक सुखी और समृद्ध है। यह केवल व्यापार के कारण ही है।

अब हम इसका अध्ययन करेंगे कि किन परिस्थितियों में व्यापार अधिकतम होता है।

उपयुक्त वस्तुओं की उत्पत्ति

अधिकतम व्यापार के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि प्रत्येक क्षेत्र अथवा केन्द्र उसी वस्तु का निर्माण अथवा उत्पादन करे जिसके लिए वहाँ अनुकूल परिस्थिति है। उदाहरण के लिए यदि भारत में जूट के लिए उपयुक्त परिस्थिति है तो भारत को जूट तथा जूट का सामान खूब तैयार करना चाहिये और यदि जर्मनी में रासायनिक पदार्थ तैयार करने के लिए उपयुक्त परिस्थिति है तो जर्मनी को रासायनिक पदार्थ भेज कर भारत से जूट मँगवाना चाहिए। यदि प्रत्येक देश केवल उन धन्धों की ही उन्नति करे जिनके लिए वहाँ अनुकूल परिस्थिति है और उस माल को भेज कर अन्य देशों से दूसरा माल मँगवाये तो व्यापार की भी वृद्धि हो और मानव समाज भी अधिक समृद्धिशाली बने। किन्तु आज संसार में आर्थिक राष्ट्रीयतावाद इतना अधिक फैल गया है कि प्रत्येक देश सभी धन्धों को बढ़ाना चाहता है तथा विदेशी माल पर कर बिठाता है।

माल लाने तथा ले जाने के व्यय को कम करना

गमनागमन के साधनों की उन्नति से भी व्यापार खूब चमकता है। रेलवे, जहाज, हवाई जहाज, बेतार का तार इत्यादि सन्देश वाहक साधनों में उन्नति होने, स्वेज नहर तथा पनामा नहर के बन जाने से, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बहुत बढ़ गया है। फिर भी व्यापारी यह ध्यान रखता है कि किस स्थान से माल लाने से व्यय कम होता है।

राजनैतिक हस्तक्षेप न होना

अधिकतम व्यापार के लिए यह आवश्यक है कि राजनैतिक हस्तक्षेप न हो, प्रत्येक देश उन वस्तुओं को ही बनावे जिनके लिए उसको सबसे अधिक अनुकूल परिस्थिति प्राप्त है। परन्तु आज यह हो नहीं रहा है। प्रत्येक देश सब चीजों के लिए स्वावलम्बी बनने का प्रयत्न करता है। इसका परिणाम यह होता है कि वस्तुएँ महँगी मिलती हैं। यदि संसार का बाजार खुला हो और प्रत्येक देश केवल उन वस्तुओं को बनावे जिनके लिए उसे अनुकूल परिस्थिति हो तो सब को सस्ते से सस्ते दामों पर प्रत्येक वस्तु मिले।

जनसंख्या का आदर्श

अधिकतम व्यापार के लिए यह भी आवश्यक है कि उस प्रदेश के अनुसार जनसंख्या न तो अधिक हो और न कम हो। यदि प्राकृतिक साधनों को देखते हुए जनसंख्या अधिक होगी तो प्रत्येक व्यक्ति पूरा काम नहीं पा सकेगा और साधारण व्यक्ति निर्धन

घनत्व — रहेगा। उदाहरण के लिए भारत और चीन को ले लें। यहाँ अधिकांश जनसंख्या खेती पर निर्भर है और प्रत्येक किसान के पास भूमि बहुत ही कम है। इसका परिणाम यह होता है कि भारतीय किसान को अपने खेत पर पूरा काम नहीं मिलता और उसकी क्रय-शक्ति निर्धनता के कारण कम है इस कारण वह अधिक वस्तुएँ खरीद ही नहीं सकता। यदि प्राकृतिक देन देखते जनसंख्या कम है तो उसकी पूरी पूरी उन्नति नहीं हो सकती।

व्यापार इस बात पर भी निर्भर रहता है कि जनता के रहन सहन का दर्जा तथा कार्य शक्ति कैसी है। उदाहरण के लिए भूमध्य रेखा के प्रदेश में बहुत कुछ उत्पत्ति हो सकती है किन्तु वहाँ के लोग इतने सुस्त हैं कि कुछ करना ही नहीं चाहते। प्रकृति जो कुछ भोजन वनों में उत्पन्न कर देता है उसी पर निर्भर रहते हैं। उनकी आवश्यकताएँ बहुत कम हैं इस कारण वहाँ व्यापार भी बहुत कम होता है। भिन्न भिन्न प्रकार की जल-वायु तथा पैदावार के देशों में व्यापार अधिक होता है। जिन देशों में एक सी पैदावार तथा जलवायु होती है उनमें अधिक व्यापार नहीं हो सकता।

रेहन सहन का स्तर तथा मनुष्यों की कार्य-शक्ति

अभ्यास के प्रश्न

१—व्यापार क्यों आवश्यक है और व्यापार से देशों को क्या लाभ है?

२—व्यापार के लिए किन सुविधाओं की आवश्यकताएँ हैं?

बारहवाँ परिच्छेद

व्यापारिक मार्ग तथा व्यापारिक केन्द्र

गमनागमन के साधनों की प्रत्येक समय और प्रत्येक देश में आवश्यकता पड़ती है। बिना गमनागमन के साधनों के व्यापार हो ही नहीं सकता। यदि गमनागमन के साधन न हों तो प्रत्येक छोटा-छोटा प्रदेश एक पृथक् क्षेत्र बन जाये और उसका अन्य प्रदेशों से कोई सम्बन्ध ही न रहे। मानव समाज की सभ्यता के विकास में गमनागमन के साधनों का महत्त्वपूर्ण भाग रहा है। आज भी चाहे अफ्रीका के पिछड़े महाद्वीप को ले लीजिए और चाहे उन्नतिशील योरप को लीजिए—गमनागमन के साधनों की आवश्यकता सभी जगह प्रतीत होती है। माल लाने और ले जाने के साधनों (Transportation) के बिना व्यापार हो ही नहीं सकता और गमनागमन के लिए व्यापारिक मार्ग (Trade routes) चाहिए।

गमनागमन तथा माल लाने ले जाने के साधन भिन्न प्रकार के हैं। भिन्न भिन्न साधनों को हम तीन श्रेणियों में बाँट सकते हैं—(१) मनुष्यों द्वारा, (२) पशुओं द्वारा, (३) यंत्रों द्वारा।

अत्यन्त प्राचीन काल में एक स्थान से दूसरे स्थान तक माल ले जाने के लिए मनुष्य का उपयोग होता था। उस समय केवल पगडंडियाँ ही व्यापारिक मार्ग थीं। बड़े और चौड़े मार्गों की आवश्यकता ही न थी। किन्तु मनुष्य अपेक्षाकृत बहुत कम बोझा ले जा सकता है। आज भी घने जंगलों तथा पहाड़ी प्रदेशों में जहाँ मार्ग नहीं है मनुष्य ही माल ले जाने का मुख्य साधन है।

जब मनुष्य ने अपने पालतू जानवरों का उपयोग माल ले जाने और लाने में करना आरम्भ किया तो पगडंडियों के स्थान पर चौड़े मार्गों की आवश्यकता हुई क्योंकि पगडंडियों पर माल लदे हुये पशु नहीं चल सकते थे। किन्तु उस समय भी कोई विधिवत मार्ग बनाया जाता था। सौदागर माल से लदे हुए पशुओं के कारवाँ को ऐसे रास्तों से ले जाते थे जो सुविधाजनक थे और पशुओं के लगातार चलने से चौड़े मार्ग बन जाते थे। तदुपरान्त गाड़ियों का आविष्कार हुआ और पहियेदार गाड़ियों में पशुओं को जोत कर कई गुना अधिक माल ले जाया जाने लगा। एक घोड़ा या बैल जितना बोझ पीठ पर लाद कर ले जा सकता है उससे कई गुना माल से भरी हुई गाड़ी को आसानी से खींच सकता है। पहियेदार गाड़ी के उपयोग से अच्छे और मजबूत मार्गों की आवश्यकता पड़ी और सड़कों को बनाया गया।

घनत्व रहेगा। उदाहरण के लिए भारत और चीन को ले लें। यहाँ अधिकाश जनसख्या खेतो पर निर्भर है और प्रत्येक किसान के पास भूमि बहुत ही कम है। इसका परिणाम यह होता है कि भारतीय किसान को अपने खेत पर पूरा काम नहीं मिलता और उसकी क्रय-शक्ति निर्धनता के कारण कम है इस कारण वह अधिक वस्तुएँ खरीद ही नहीं सकता। यदि प्राकृतिक देन देखते जनसख्या कम है तो उसकी पूरी पूरी उन्नति नहीं हो सकती।

रहन सहन का स्तर तथा मनुष्यों की कार्य-शक्ति

व्यापार इस बात पर भी निर्भर रहता है कि जनता के रहन सहन का दर्जा तथा कार्य शक्ति कैसी है। उदाहरण के लिए भूमध्य रेखा के प्रदेश में बहुत कुछ उत्पत्ति हो सकती है किन्तु वहाँ के लोग इतने सुस्त हैं कि कुछ करना ही नहीं चाहते। प्रकृति जो कुछ भोजन वनों में उत्पन्न कर देती है उसी पर निर्भर रहते हैं। उनकी आवश्यकताएँ बहुत कम हैं इस कारण वहाँ व्यापार भी बहुत कम होता है। भिन्न भिन्न प्रकार की जल-वायु तथा पैदावार के देशों में व्यापार अधिक होता है। जिन देशों में एक सी पैदावार तथा जलवायु होती है उनमें अधिक व्यापार नहीं हो सकता।

अभ्यास के प्रश्न

१—व्यापार क्यों आवश्यक है और व्यापार से देशों को क्या लाभ है?

२—व्यापार के लिए किन सुविधाओं की आवश्यकताएँ हैं?

बारहवाँ परिच्छेद

व्यापारिक मार्ग तथा व्यापारिक केन्द्र

गमनागमन के साधनों की प्रत्येक समय और प्रत्येक देश में आवश्यकता पड़ती है। बिना गमनागमन के साधनों के व्यापार हो ही नहीं सकता। यदि गमनागमन के साधन न हों तो प्रत्येक छोटा-छोटा प्रदेश एक पृथक् क्षेत्र बन जाये और उसका अन्य प्रदेशों से कोई सम्बन्ध ही न रहे। मानव समाज की सभ्यता के विकास में गमनागमन के साधनों का महत्वपूर्ण भाग रहा है। आज भी चाहे अफ्रीका के पिछड़े महाद्वीप को ले लीजिए और चाहे उन्नतिशील योरप को लीजिए—गमनागमन के साधनों की आवश्यकता सभी जगह प्रतीत होती है। माल लाने और ले जाने के साधनों (Transportation) के बिना व्यापार हो ही नहीं सकता और गमनागमन के लिए व्यापारिक मार्ग (Trade routes) चाहिए।

गमनागमन तथा माल लाने ले जाने के साधन भिन्न प्रकार के हैं। भिन्न भिन्न साधनों को हम तीन श्रेणियों में बाँट सकते हैं—(१) मनुष्यों द्वारा, (२) पशुओं द्वारा, (३) यन्त्रों द्वारा।

अत्यन्त प्राचीन काल में एक स्थान से दूसरे स्थान तक माल ले जाने के लिए मनुष्य का उपयोग होता था। उस समय केवल पगडंडियाँ ही व्यापारिक मार्ग थीं। बड़े और चौड़े मार्गों की आवश्यकता ही न थी। किन्तु मनुष्य अपेक्षाकृत बहुत कम बोझा ले जा सकता है। आज भी घने जंगलों तथा पहाड़ी प्रदेशों में जहाँ मार्ग नहीं है मनुष्य ही माल ले जाने का मुख्य साधन है।

जब मनुष्य ने अपने पालतू जानवरों का उपयोग माल ले जाने और लाने में करना आरम्भ किया तो पगडंडियों के स्थान पर चौड़े मार्गों की आवश्यकता हुई क्योंकि पगडंडियों पर माल लदे हुये पशु नहीं चल सकते थे। किन्तु उस समय भी कोई विधिवत मार्ग बनाया जाता था। सौदागर माल से लदे हुए पशुओं के कारवाँ को ऐसे रास्तों से ले जाते थे जो सुविधाजनक थे और पशुओं के लगातार चलने से चौड़े मार्ग बन जाते थे। तदुपरान्त गाड़ियों का आविष्कार हुआ और पहियेदार गाड़ियों में पशुओं को जोत कर कई गुना अधिक माल ले जाया जाने लगा। एक घोड़ा या बैल जितना बोझ पीठ पर लाद कर ले जा सकता है उससे कई गुना माल से भरी हुई गाड़ी को आसानी से खींच सकता है। पहियेदार गाड़ी के उपयोग से अच्छे और मजबूत मार्गों की आवश्यकता पड़ी और सड़कों को बनाया गया।

उन्नीसवीं शताब्दी में यांत्रिक गमनागमन के साधनों के आविष्कार के कारण मार्गों में फिर परिवर्तन हुआ है। मोटर बस ट्रैफिक के लिए साधारण मार्गों से काम नहीं चलता, बढ़िया और मजबूत सड़कों की आवश्यकता होती है। रेलों के लिए तो और भी अधिक मजबूत रेल मार्गों की आवश्यकता पड़ती है।

आज तो जलमार्ग भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गये हैं। जब से स्टीमशिप (भाप द्वारा चलने वाले जहाज) बनने लगे हैं तब से जलमार्गों का महत्व बहुत बढ़ गया है। जलमार्गों के बनाने में कुछ व्यय नहीं होता। प्रकृति ने मार्ग का व्यवस्था कर दी है। हाँ जब नदियों को काट कर नहरें निकाली जाती हैं और उनका उपयोग व्यापारिक मार्ग के रूप में किया जाता है तब अवश्य मार्ग बनाने में व्यय होता है। क्रमशः वायुयानों द्वारा आने जाने तथा माल ले जाने की सुविधा बढ़ती जा रही है। यद्यपि अभी वायुयानों का व्यापार के लिए अधिक उपयोग नहीं हो सका है। वायुयानों के लिए भी मार्ग बनाने में व्यय नहीं होता, आकाश ही उनका मार्ग है।

गमनागमन के साधनों और व्यापारिक मार्गों के बनाने तथा उनके महत्व पर भौगोलिक परिस्थिति का विशेष प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक माल ले जाने के देश अथवा भूभाग में कौन से साधन काम में लाये जायेगा भिन्न भिन्न साधनों तथा व्यापारिक मार्गों का कितना उपयोग हो सकेगा यह वहाँ के धरातल की बनावट और जलवायु पर ही निर्भर रहता है। सड़कें अधिकतर मैदानों में ही बनाई जाती हैं और पहाड़ी प्रदेशों में जो सड़कें बनाई जाती हैं वे घाटियों में ही बनाई जाती हैं। पहाड़ी प्रदेश में सड़कों को बनाते समय इस बात का ध्यान रक्खा जाता है कि बहुत अधिक चढ़ाई और दर्रों को बचाया जाय नहीं तो सड़क बनाने में बहुत अधिक व्यय होता है। मैदानों में भी सड़कों को केवल इसलिए घुमा करके बनाया जाता है कि उससे नदी के ऊपर पुल बनाने के लिए उचित स्थान मिलने की सुविधा हो। सड़क बनाने के लिए कंकड़-पत्थर इत्यादि का उपयोग होता है और वह भी उस प्रदेश की धरातल की बनावट पर निर्भर है।

धरातल और व्यापारिक मार्गों पर भौगोलिक स्थिति का प्रभाव

रेलवे-लाइनों के बनाने में भी ऊपर लिखी हुई बातों का ध्यान रखना पड़ता है। रेलवे लाइनें भी अधिकतर मैदानों में ही बनाई जाती हैं। पहाड़ों में रेलवे लाइन बनाने में बहुत कठिनाई और व्यय होता है। अधिकांश पहाड़ों में रेलवे लाइनें नदियों की घाटियों में ही बनाई जाती हैं।

जलवायु का भी व्यापारिक मार्गों पर कुछ कम प्रभाव नहीं है। जिन प्रदेशों में वर्षा अधिक होती है और नदियों में बाढ़ अधिक आती है वहाँ सड़कों तथा रेलों

के बनाने तथा उनको ठीक रखने में अधिक व्यय होता है। और जहाँ अधिक वर्षा तथा बाढ़ नहीं आती वहाँ कठिनाई नहीं होती। जलमार्गों पर तो जलवायु का बहुत अधिक प्रभाव है। बहुत से समुद्र तथा जलमार्ग जाड़ों में जम जाते हैं इस कारण उनका व्यापार के लिए उपयोग ही नहीं हो सकता। नदियाँ और नहरें भी उन ठंडे प्रदेशों में जाड़े के दिनों में बेकार हो जाती हैं। हवाएँ जहाजों के मार्ग को निर्धारित करती हैं। जब जहाज पालों के द्वारा चलते थे उस समय तो वे बिलकुल हवाओं के रुख पर निर्भर रहते थे किन्तु भाप से चलने वाले जहाजों को भी हवाओं का ध्यान रख कर अपना मार्ग निर्धारित करना पड़ता है। ठंडे देशों में पृथ्वी के नीचे चलने वाली रेलें ट्राम तथा सड़कें बनाई जा सकती हैं किन्तु गरम देशों में यह सम्भव नहीं है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि धरातल की बनावट तथा जलवायु मार्ग किधर होकर जायेगा, मार्ग बनाने में कितना व्यय होगा तथा उसको ठीक रखने में कितना व्यय होगा, निश्चित करता है। यही नहीं धरातल की बनावट तथा जलवायु उस प्रदेश की पैदावार को भी निर्धारित करते हैं और भिन्न भिन्न प्रदेशों की पैदावार को ले जाने और लाने के लिए ही मार्गों की आवश्यकता होती है। इस प्रकार भौगोलिक परिस्थिति का मार्गों पर व्यापक प्रभाव पड़ता है।

माल ले जाने के भिन्न भिन्न साधन

यद्यपि मनुष्य का उपयोग बोझा ढोने में बहुत कम हो गया है परन्तु आज भी कुछ पहाड़ी प्रदेशों में मनुष्य ही माल ले जाने का मुख्य साधन है। भूमध्य रेखा के समीपवर्ती घने जंगलों और एशिया के हिमालय तथा अन्य पहाड़ी प्रदेशों में मनुष्य ही माल ले जाने का मुख्य साधन है। एक मनुष्य केवल ३५ पौंड बोझ लाद कर प्रति दिन ६ या ७ मील के हिसाब से चल सकता है। मनुष्य अधिक बोझ नहीं ले जा सकता। इसी कारण उससे उपयोग केवल वहीं होता है जहाँ अन्य साधन उपलब्ध नहीं हैं।

मनुष्य

यद्यपि रेल और मोटर बस के कारण पशुओं का माल ले जाने में कम उपयोग होने लगा है, फिर भी पशु एक महत्वपूर्ण साधन है किन्तु एक ही पशु सब स्थानों पर काम नहीं दे सकता। भिन्न प्रदेशों में भिन्न पशुओं का उपयोग होता है।

पशु

घोड़ा अच्छा भोजन चाहता है और अच्छी जलवायु में ही रह सकता है। इस कारण उसका उपयोग अधिकतर मैदानों में ही होता है। पीठ पर लाद कर घोड़ा २०० पौंड बोझ आसानी से ले जा सकता है। किन्तु गाड़ी में जुत कर घोड़ा एक दिन बोझ ६ से ८ मील

घोड़ा

प्रति घण्टा ले जा सकता है। कुछ घोड़े इससे भी अधिक बोझ खींच सकते हैं।

गदहा और खच्चर सूखी घास और खराब चारे पर भी निर्वाह कर सकते हैं। ये घोड़े से अधिक कठोर होते हैं। इस कारण इनका उपयोग शुष्क प्रदेशों, तथा पहाड़ी प्रदेशों में होता है। खच्चर साधारण घोड़े के बराबर ही बोझ पीठ पर लाद कर (३०० पौंड) तथा खींच कर (१ टन) ले जा सकता है। गदहा खच्चर से कुछ ही कम बोझा लाद और खींच कर ले जा सकता है।

गदहा और खच्चर

बैल धीरे धीरे चलने वाला है। यह अधिकतर उष्ण कटिबन्ध तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के गरम भागों में बोझा ढोने का काम करता है। पीठ पर लाद कर यह १५० पौंड बोझ ले जा सकता है तथा खींच कर २००० पौंड ले जाता है।

बैल

ऊँट रेगिस्तान का जहाज है। ऊँट १० दिन तक बिना पानी और चारे के रह सकता है। रेगिस्तान की सूखी घास तथा अन्य चारे पर निर्वाह कर सकता है। इस कारण रेगिस्तानों में बोझा ढोने का कार्य ऊँट ही करते हैं। पीठ पर लाद कर ४५० पौंड बोझ प्रतिदिन १५ से २० मील ले जा सकता है। खींच कर ऊँट १२०० पौंड बोझ प्रति दिन २ से ३ मील तक ले जा सकता है।

ऊँट

हाथी को बहुत अधिक चारे की आवश्यकता पड़ती है। इसका उपयोग अधिकतर पहाड़ी तथा नम प्रदेश में होता है। बर्मा तथा दक्षिण पूर्व एशिया के जंगलों तथा दिन की खानों के प्रदेश में इसका उपयोग होता है। हाथी बहुत शक्तिशाली जानवर होता है इस कारण वह पीठ पर लाद कर १००० पौंड तथा खींचकर २ से ३ टन तक बोझ ले जा सकता है। किन्तु हाथी बहुत धीरे चलता है इस कारण उसका अधिक उपयोग नहीं होता।

हाथी

इनके अतिरिक्त लामा (Lama) एन्डीज पर्वतमाला के बहुत ऊँचे भागों में बोझ ढोने के काम में आता है। जहाँ बहुत ठंड पड़ती है और ऊँचाई अधिक होती है वहाँ बोझ ढोने का काम यही पशु करता है। यह १०० पौंड बोझ लादकर १२ से १४ मील प्रति दिन चल सकता है।

मध्य एशिया के बर्फीले हिमालय प्रदेश में याक बोझ ढोने का काम करता है। याक १०० पौंड बोझा ले जाता है। याक के अतिरिक्त निचले पहाड़ी प्रदेश में (मध्य एशिया) भेड़ और बकरों का भी बोझ ढोने के लिये उपयोग होता है किन्तु यह २५ ३० पौंड से अधिक बोझ नहीं ले जा सकते।

उत्तर के बर्फीले प्रदेश (टुंड्रा) में रेंडियर बोझ ढोने के काम आता है। यह साधारण बैल से कम बोझ ले जा सकता है। इनके अतिरिक्त उन प्रदेशों में जहाँ अन्य पशु नहीं मिलते वहाँ कुत्तों का भी उपयोग होता है।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि पशुओं के द्वारा खींची जाने वाली पहियेदार गाड़ियों का आविष्कार होने पर सड़कों का आवश्यकता हुई। किन्तु आज तो मोटर बस के अधिक प्रचलित हो जाने से सड़कों का महत्व बहुत बढ़ गया है। मोटर बस ट्रैफिक के लिए बहुत अच्छी और मजबूत सड़कों की आवश्यकता है। पिछले बीस-पचास वर्षों में मोटर बसों की प्रतिस्पर्द्धा के कारण रेलों की आय कम हो गई। प्रत्येक देश में मोटर रेल स्पर्द्धा ने भीषण रूप धारण कर लिया है। मोटर के लिये विशेष प्रकार के मार्ग, स्टेशन तथा अन्य बातों की आवश्यकता नहीं पड़ती। साथ ही मोटर में सामान ले जाने में माल को भिन्न भिन्न स्थानों पर उतारना चढ़ाना नहीं पड़ता। फिर भी अधिक दूरी तथा भारी चीजों के लिये रेल ही अधिक उपयुक्त और सस्ती रहती है।

सड़कें

गाँवों में गमनागमन के लिये सड़क ही अधिक उपयुक्त होती है क्योंकि वहाँ इतना गमनागमन और माल नहीं होता कि रेलों का खोलना लाभदायक हो। यदि रेलों को गाँवों से सड़कों द्वारा जोड़ दिया जाय तो गाँवों का माल वहाँ आ सकता है और वहाँ से दूसरे स्थानों को जा सकता है। पिछले दिनों में सड़कों का महत्व बहुत बढ़ गया है। इस सम्बन्ध में यहाँ कुछ आँकड़े देते हैं:—

देश	मोटर योग्य सड़क की लम्बाई	मोटरों की संख्या (लाखों में)
संयुक्तराज्य अमेरिका	३० लाख मील	३०१
फ्रांस	४६४,०६० मील	२२
ब्रिटेन	१७७,००० मील	२१
जर्मनी	१७१,२५० मील	१६
कनाडा	३६४,३०० मील	१४
भारत	७५,००० मील	

संसार में कुल ६,२२५,००० मील सड़क है जिस पर मोटर चल सकती है उसमें से लगभग एक तिहाई संयुक्तराज्य अमेरिका में है। यहाँ संसार में मोटर द्वारा गमनागमन बहुत है। संसार की ७५% मोटरें संयुक्तराज्य अमेरिका में हैं।

भारत में मोटर योग्य सड़कें केवल ७५,००० मील हैं। ये कच्ची सड़कें

मिलाकर ३ लाख मील सड़कें भारत में हैं। भारत जैसे विशाल देश के लिये बहुत कम है।

रेल

स्टीम इंजिन का आविष्कार होने के बाद रेलों का प्रचार बढ़ा और अब प्रायः सभी देशों में व्यापार और यात्रा रेलों के द्वारा ही होता है। वास्तव में रेलों का व्यापार तथा उद्योग धंधों पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा है। यदि किसी देश में रेलों का प्रबन्ध अच्छा है, रेलवे कम्पनियाँ देश के व्यापार को बढ़ाना चाहती हैं तो वहाँ का व्यापार शीघ्र ही बढ़ जाता है। उदाहरण के लिये संयुक्तराज्य अमेरिका के पश्चिमी भाग को आबाद तथा उन्नत करने में रेलों का बहुत बड़ा हाथ रहा है। रेलवे कंपनियों ने उन भागों को सामान ले जाने तथा वहाँ से माल लाने के भाड़े को कम करके उन प्रदेशों को बसाने तथा उनकी उन्नति करने में सहायता पहुँचाई। बिना रेलवे लाइनों के देश के उद्योग धंधे और व्यापार पनप ही नहीं सकते। सभ्य संसार में कुछ ही देश ऐसे हैं जहाँ रेलें नहीं हैं। जिन देशों में रेल-पथ कम हैं वे औद्योगिक तथा व्यापारिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं।

रेल का विशेष गुण यह है कि वह कम भाड़े में माल तथा मुसाफिरों को तेज़ी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचा देती है। समय की बचत अर्थात् तेज़ रफ्तार ही रेलों का विशेष गुण है। किंतु रेलों को तेज़ चलाने के लिये चौरस भूमि पर पटरी डालना आवश्यक है। यदि चढ़ाई होगी तो रेल की रफ्तार बहुत कम हो जावेगी। थोड़ी सी चढ़ाई के कारण ही रेल की चाल बहुत धीमी हो जाती है। यही कारण है कि पर्वतीय प्रदेशों में टनल बना कर तथा चक्कर देकर ऊँचाई को बनाया जाता है किंतु इसका परिणाम यह होता है कि इन प्रदेशों में रेल बनाने में अत्यधिक व्यय होता है।

रेलों के खुल जाने से बहुत से वीरान देश आबाद हो गये। कनाडा और साइबेरिया में जो कुछ उन्नति हुई है वह रेलों का ही प्रसाद है। यदि आस्ट्रेलिया में सब रियासतें रेलवे लाइनों द्वारा न जोड़ दी जातीं तो केन्द्रीय सरकार का संगठन होना बहुत कठिन था। भारत तथा चीन जैसे महराष्ट्रों को एक सूत्र में बाँधने का कार्य रेलों ने ही किया है। जो देश मनुष्य निवास के योग्य नहीं हैं किंतु जहाँ खनिज पदार्थ भरे पड़े हैं बिना रेलों के खुले उन्नति नहीं कर सकते। जिन देशों में कच्चा माल बन्दरगाहों से दूर उत्पन्न होता है वहाँ रेलों के द्वारा ही वह बन्दरगाहों तक लाया जाता है।

किंतु रेलों का उपयोग अभी तक देश के अन्दर के व्यापार के ही लिये हो सका है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये इनका अधिक महत्व नहीं है। इनके दो मुख्य

कारण हैं। प्रथम, रेलों द्वारा माल ले जाने में जहाजों की अपेक्षा व्यय अधिक होता है, दूसरे भिन्न भिन्न देशों में लाइनों की चौड़ाई भिन्न होने से माल को भिन्न भिन्न स्थानों पर उतारना चढ़ाना पड़ता है। योरोप में ही रूस की रेलवे लाइनों की चौड़ाई ५ फीट है, स्पेन पोर्तुगाल की चौड़ाई ५ फीट ५½ इंच तथा अन्य योरोपीय देशों की लाइनें ४ फीट ८½ इंच चौड़ी हैं। प्रत्येक देश में यदि एक ही चौड़ाई की रेलवे लाइनें हों तो रेलों का भी उपयोग अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये हो सकता है। किंतु सैनिक दृष्टि से एक ही चौड़ाई की लाइनें होना देश की रक्षा के लिये भयानक सिद्ध हो सकता है। इस कारण प्रत्येक देश अपने पड़ोसी देश से भिन्न चौड़ाई की रेलवे लाइन बनाता है।

रेलों के विस्तार पर पृथ्वी की बनावट और जलवायु का प्रभाव बहुत पड़ता है। जहाँ हिम अधिक पड़ता है वहाँ पहाड़ी दर्रों को हिम रोक देता और रेल नहीं निकल सकती और जहाँ वर्षा बहुत अधिक होती है वहाँ की भूमि इतनी नम हो जाती है कि रेल नहीं निकाली जा सकती। उदाहरण के लिये उत्तरीय ध्रुव के समीपवर्ती प्रदेशों तथा भूमध्य रेखा (Equator) के समीपवर्ती प्रदेश में रेलों का विस्तार नहीं हो सकता।

धरातल की बनावट रेलों को किस ओर से निकाला जावेगा यह निर्धारित करती है। उदाहरण के लिये पहाड़ी प्रदेशों में नदियों की घाटियों और दर्रों में से होकर ही रेलें निकाली जाती हैं। पहाड़ रेलों के विस्तार में बहुत रुकावट डालते हैं। यद्यपि कहीं कहीं सुरंग बनाकर पहाड़ों में से रेलें निकाली गई हैं फिर भी पहाड़ी प्रदेश में रेलों का विस्तार कम हुआ है।

संसार के प्रमुख देशों में रेलों का विस्तार

संयुक्तराज्य अमेरिका	२४२, ७४४ मील
सोवियत रूस	६०, ००० ,,
जर्मनी	४२, ३०० ,,
कनाडा	३६, ७०० ,,
भारत	४१, १५७ ,,
आस्ट्रेलिया	२७ ६६२ .
अरजैनटाइन	२६,–२४६ ,,
फ्रांस	२६, ४२७ ,,
ब्राजील	२४, ००० ,,

ब्रिटिश द्वीप समूह	२२, ६१५	"
जापान	१५, २५४	"
पोलैंड	१२, ७००	"
दक्षिण अफ्रीका	१३, २४४	"
इटली	१४, ५५०	"
चिली	५, २००	"
बेलजियम	३, १८६	"

संसार की कुछ प्रमुख महादेशीय रेलें

१ ट्रांस सायबेरियन रेलवे

इस रेल के द्वारा योरोपीय रूस को सुदूर पूर्व से जोड़ दिया गया है। यह मास्को से चलती है और प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean) पर स्थित व्लाडीवास्टक (Vladivostok) पर समाप्त होती है। इसकी लम्बाई ५४०० मील है। यह संसार में सबसे लम्बी रेल है। मध्य तथा पूर्वीय सायबेरिया में जो आबादी और आर्थिक उन्नति दिखलाई देती है वह इसी रेल का प्रसाद है। मास्को से लाइन यूराल पर्वत को पार करके ओमस्क (Omsk) को आती है। यह अत्यन्त उपजाऊ भाग है और उसमें गेहूँ की पैदावार खूब होती है। ओमस्क से लाइन ठीक पूर्व की तरफ जाती है। बीच में 'ओबी' और यनिसी महानदियों को पार करती हुई वह बैकाल झील और इरकूटस्क (Irkutsk) पहुँचती है। इसके उपरान्त यह लाइन आमूर नदी की घाटी में होती हुई मंचूरिया होकर व्लाडिवास्टक पहुँचती है। मंचूरिया में इस रेल की एक दक्षिणी शाखा हार्बिन

से निकाली गई है जो 'मकडन' होती हुई 'पोर्ट आर्थर' पहुँचती है। मकडन को पीकिंग से रेल द्वारा जोड़ दिया गया है।

ट्रांस कैस्पियन रेलवे (Trans Caspian Railway)

ट्रांस कैस्पियन रेलवे मध्य एशिया को योरोपीय रूस से जोड़ती है। यह उस सम्भावित रेल मार्ग का एक भाग है जो योरोप और भारत को जोड़ सकता है। यह लाइन क्रैस्नोवोडस्क (Krasnovodsk) जो कास्पियन समुद्र पर है वहाँ से यह लाइन चलती है और तुरकिस्तान के कपास के क्षेत्र के मध्य तक जाती है। इसकी एक शाख अफगानिस्तान की सीमा तक (मैरी Mery स कुश्क Kusk) गई है। क्रैस्नोवोडस्क ताशकंद के द्वारा मास्को से रेल द्वारा जुड़ गया है।

कनैडियन पैसिफिक रेलवे (Canadian Pacific Railway)
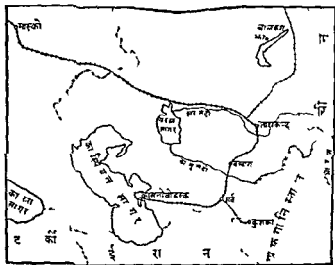
यह रेलवे १८८६ में बन कर तैयार हुई। इसकी लम्बाई ३५०० मील है। यह लाइन कनाडा के अटलांटिक समुद्र तक प्रशान्त महासागर के तट से मिलती है। यह लाइन लीवरपूल (इंगलैंड) को जापान और चीन के समीप ला देती है। समुद्र से जाने से १२०० मील अधिक चलना पड़ता है। यह इतनी दूरी को कम कर देती है। यह लाइन हैलीफैक्स और सेंट जोन्स से मौंट्रियल को आती है। वहाँ से यह लाइन कनाडा की सबसे बड़ी गेहूँ की मंडी विनीपेग को जाती है। विनीपेग से रेगिना होकर यह विस्तृत मैदानों को पार करती हुई राकी पर्वत माला में मैडिसन हैट (Medicine Hat) पहुँचती है। मैडिसन से यह किकिंग हार्स पास

(Kicking Horse Pass) होती हुई वैंकोवर पहुँचती है। इस रेलवे से कनाडा का विशाल भूभाग एक सूत्र में बध गया है इस कारण इसका राजनैतिक महत्व भी है। आर्थिक महत्व तो इसका स्पष्ट ही है। एक प्रकार से कनाडा के व्यापार का यह प्राण है। यद्यपि कनाडा में जल-मार्ग भी महत्वपूर्ण हैं परन्तु वे जाड़ों में वर्फ से जम जाने के कारण बेकार हो जाते हैं।
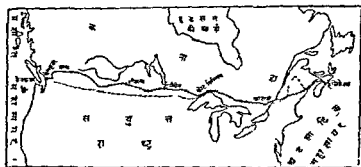
चिली-अरजैनटाइन रेलवे Chile Argentine Railway) दक्षिण अमेरिका की चिली-अरजैनटाइन रेलवे ब्यूनासायरस (Buenos aires) को वालपरैजो (Valparaiso) से जोड़ती है। इसकी लम्बाई ६०० मील है। यह रेलवे लाइन १९१० में बनकर तैयार हुई किन्तु इसमें एक बड़ी कमी है कि अरजैनटाइन और चिली में रेल की पटरी की चौड़ाई भिन्न है इस कारण सीमाओं पर सवारियों को गाड़ी बदलनी पड़ती है। अधिकायतः इस रेल का उपयोग यात्रियों और डाक के लिए होता है। बात यह है कि व्यापार यहाँ बहुत कम है।

केप कैरो मार्ग (Cape Cairo Route) अफ्रीका में केप से कैरो तक ६०० मील का अन्तर है जो रेल, नदी, झील और सड़क से पार करना पड़ता है। सैसिल रोड्स की यह योजना थी कि केप से कैरो तक ब्रिटिश रेलवे लाइन बन जावे किन्तु वह योजना पूर्ण न हो सकी। केप टाउन से एक रेलवे लाइन बेलजियन कांगो की सीमा तक जाती है। वहाँ से नदी तथा कारवाँ मार्ग के द्वारा विक्टोरिया झील तक जाता है। वहाँ से एक मोटर की सड़क नील नदी तक (नाइल गार्ड) जाती है। वहाँ से खारतुम तक स्टीमर चलते हैं। खारतुम से वादी हैफा तक रेल है। वहाँ से शैलाल तक फिर नदी से जाना होता है। शैलाल से कैरो तक रेलवे लाइन है। इस प्रकार यह कठिन मार्ग पूरा होता है।

भीतरी जलमार्ग—नदियाँ और नहरें

प्राचीन समय में जब रेलों तथा मोटरों का आविष्कार नहीं हुआ था नदियाँ ही मुख्य व्यापारिक मार्ग थे। उस समय बड़े बड़े नगर नदियों के ही किनारे बसाये जाते थे। संसार के जितने भी प्राचीन बड़े-बड़े नगर हैं वे सब नदियों के किनारे पर ही स्थित हैं। मनुष्य समाज की सभ्यता के विकास में नदियों का बहुत बड़ा हाथ रहा है। आधुनिक जहाज भी नदियों की नावों का उन्नत रूप है। यद्यपि रेलों और मोटरों के कारण नदियों का महत्व कम हो गया है परन्तु फिर भी उनका उपयोग बिलकुल नष्ट नहीं हो गया है।

योरप में जर्मनी, फ्रांस, हालैंड तथा बेलजियम में नदियाँ और नहरें आज भी महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग हैं। अधिकांश नहरें औद्योगिक प्रदेशों में हैं जहाँ नहरों तथा नदियों के द्वारा कच्चा माल और कोयला ले जाने में सुविधा होती है। जर्मनी में नदियों और उनकी नहरों के द्वारा बहुत व्यापार होता है। यल्व, वेसर, और ओडर नदियों में ५०० टन वाले स्टीमर चलते हैं। राइन तो पश्चिमी योरोप का मुख्य व्यापारिक जलमार्ग है। राइन में समुद्री जहाज आ जा सकते हैं। इसी कारण राइन नदी के दोनों किनारों पर बहुत से कारखाने स्थापित हैं। राइन नदी पर इतना अधिक माल आता-जाता है जितना संसार में किसी नदी पर नहीं आता जाता। इसमें मेन (Main), मैनहीम और स्ट्रेसबर्ग तक स्टीमर जा सकते हैं। यल्व नदी भी व्यापार का साधन है। यह जैकोस्लोवेकिया तक नावों द्वारा आई जा सकती है और उस पर ड्रेसडन, मैगडेबर्ग और हैम्बर्ग जैसे प्रसिद्ध नगर हैं। डैन्यूब जो कई देशों में से होकर आती है योरोप का प्रमुख जलमार्ग है। आयरन गेट तक डैन्यूब में समुद्री जहाज आ जा सकते हैं। राइन और डैन्यूब को नहर के द्वारा जोड़ दिया गया है। ओडर भी जर्मनी का प्रसिद्ध जलमार्ग है और वह जर्मनी के औद्योगिक प्रदेश सिलीशिया में होकर आती है। ब्रेसला और फ्रैंकफर्ट उस पर मुख्य केन्द्र हैं। जर्मनी की नदियाँ एक दूसरे से नहरों द्वारा जुड़ी हुई हैं। वेसर नदी यल्व से मैगडेबर्ग और हैम्बर्ग द्वारा जुड़ी है। डार्टमन्ड-एम्स नहर रूर की कोयले की खानों को हैम्बर्ग से जोड़ती है। लडविग नहर डैन्यूब को राइन की सहायक मेन से जोड़ती है।

उत्तरी अमेरिका की उन्नति बहुत कुछ नदियों, झीलों और नहरों के कारण ही हुई है। आज भी वे उत्तरी अमेरिका में बहुत महत्वपूर्ण जलमार्ग हैं।

सेंट लारेंस नदी और पाँचों झीलों का जलमार्ग व्यापार की दृष्टि से संसार में सब से महत्वपूर्ण है। इस जलमार्ग के रास्ते जहाज २३०० मील की दूरी पोर्ट आर्थर तक जा सकते हैं। यद्यपि नदी तथा झीलों के जम जाने से वर्ष में यह

मार्ग केवल ८ महीने ही उपयोगी है परन्तु फिर भी इसके द्वारा बहुत व्यापार होता है। सेन्ट लारेंस नदी इन झीलों को जोड़ती है किन्तु बीच बीच में जल प्रपातों के कारण जहाज के लिए अनुपयुक्त है। अतएव इन झीलों को नहरों द्वारा जोड़ दिया गया है। और इन जलप्रपातों को बचा दिया गया है। इन नहरों में सू नहर (Soo Canal) अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कोहरा बहुत होने के कारण दुर्घटनाओं की सम्भावना रहती है इसके लिये तेज रोशनी फेंकी जाती है और हार्न बजा कर जहाजों को आगाह किया जाता है। जाड़ों में बर्फ तोड़ने वाले जहाज इसको खुला रखते हैं। इसके अतिरिक्त कनाडा में रैड, अल्बैनी, सक्केचुआन्, मैकेंजी, और यूकान भी महत्वपूर्ण नदियाँ हैं जो व्यापार के लिए महत्वपूर्ण हैं। किन्तु उन पर स्थानीय व्यापार ही होता है।

संयुक्तराज्य अमेरिका के जलमार्ग

संयुक्तराज्य अमेरिका का भीतरी जलमार्ग भी बहुत ही महत्वपूर्ण है। यहाँ लगभग २०,००० मील जलमार्ग है। मिसीसिपी और मसूरी नदियों के बेसिन में ही १६,००० मील जलमार्ग है। मिसीसिपी अपने मुहाने से सेंट पाल तक २००० मील तक स्टीमरों द्वारा जाई जा सकती है। ऊपरी मिसीसिपी में अत्यधिक माल ढोया जाता है। इस नदी का एक दोष यह है कि इसमें बाढ़ बहुत आती है। ओहियो जो मिसीसिपी की सहायक नदी है पैंसेलवेनिया तक खेई जा सकती है और उससे कोयले का व्यापार बहुत होता है। मिसूरी जो मिसीसिपी से सेन्ट लुई (St Luis) पर मिलती है राकी पहाड़ों तक खेई जा सकती है। क्योंकि मिसीसिपी और सेंट लारेंस समीप से ही निकलती हैं इस कारण दोनों को एक नहर से जोड़ दिया गया है।

फ्रांस के जलमार्ग

फ्रांस के जलमार्ग भी बहुत पूर्ण हैं। फ्रांस में सभी महत्वपूर्ण नदियों को एक दूसरे से जोड़ दिया गया है। फ्रांस की अधिकांश नदियाँ खेने योग्य हैं और पहाड़ी प्रदेशों को छोड़कर जहाँ से वे निकलती हैं अधिकांश लम्बाई में खेई जा सकती हैं। रोन नदी अधिक महत्वपूर्ण जलमार्ग नहीं है। किन्तु सेआोन (Saone) नदी अत्यन्त महत्वपूर्ण जलमार्ग है। सीन नदी बरगंडी की पहाड़ियों से निकल कर पैरिस के प्रदेश में से होकर इंग्लिश चैनल में गिरती है। यह एक महत्वपूर्ण जलमार्ग है। लायर बिस्के की खाड़ी में गिरती है और एक महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग है। ड्रोन (Drodogne) और गैरोन (Garone) भी महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग हैं।

रूस की नदियाँ

रूस में बहुत बड़ी-बड़ी नदियाँ हैं किन्तु वे या तो उत्तरी महासागर में गिरती हैं अथवा काला सागर, बाल्टिक समुद्र और कैस्पियन सागर में गिरती हैं यही इनका बड़ा दोष है। क्योंकि उत्तरी महासागर

वर्ष से जमा रहता है और कैस्पियन सागर बंद समुद्र है। बाल्टिक समुद्र और काला सागर भीतरी समुद्र हैं। यह दोष होते हुए भी रूस की नदियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग हैं। वोल्गा योरोप की दूसरी महत्वपूर्ण नदी है। इस नदी के द्वारा उत्तर और दक्षिण रूस का व्यापार होता है। यह रूस के उत्तरी भाग को दक्षिण से मिलाती है। क्योंकि यह कैस्पियन सागर में गिरती है जो बंद समुद्र है। यह केवल रूस के व्यापार के ही लिए महत्वपूर्ण है।

दक्षिण अमेरिका के जलमार्ग

दक्षिण अमेरिका के जलमार्ग व्यापार के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। अमेजन नदी इस महाद्वीप की सबसे बड़ी नदी है। वर्षा के मौसम में अपनी सहायक नदियों सहित वह ५०,००० मील का जलमार्ग प्रस्तुत करती है जिसमें नावें आ जा सकती हैं किन्तु सूखे मौसम में केवल २०,००० मील का जलमार्ग ही नावों के योग्य रहता है। यद्यपि अमेजन नदी एक बड़ा जलमार्ग है किन्तु इस प्रदेश में जनसंख्या बहुत कम होने के कारण तथा वन आच्छादित और पिछड़ा होने के कारण इसका अधिक उपयोग नहीं होता। ओरिनिको जो वैनजुला से होकर बहती है एक लम्बा मार्ग है। किन्तु सबसे महत्वपूर्ण जलमार्ग पराना नदी का है जो अरजैनटाइन, परेग्वे, युरेग्वे होता हुआ दक्षिण ब्राजील तक पहुँचता है। दक्षिण अमेरिका के दक्षिणी भाग में रायो नीग्रो पैटेगोनिया के भेड़ प्रदेश से होकर जाती है।

अफ्रीका के जलमार्ग

यद्यपि नील अफ्रीका की सब से बड़ी नदी है किन्तु वह ऊँचे स्थानों से गिरती है और भयंकर जल प्रपात हैं साथ ही साथ मध्य में भी वह ऊबड़ खाबड़ प्रदेश से बहती है। इस कारण वह केवल डेल्टा में ही खेने योग्य है। जैम्बसा २५० मील खेई जा सकती है। अफ्रीका में कांगो सबसे महत्वपूर्ण जलमार्ग है उसकी मुख्य सहायक नदी उबाँगी अपने मूल स्थान तक खेई जा सकती है। पश्चिमी अफ्रीका में नाइजर ५०० मील तक और गैम्बिया २०० मील तक खेई जा सकती है। क्योंकि अफ्रीका में रेलों का विस्तार नहीं हुआ है इस कारण नदियाँ ही यहाँ का मुख्य मार्ग हैं।

चीन के जलमार्ग

चीन की तीन प्रमुख नदियाँ ह्यांगहो, यांगटिसी कियांग और सीकियांग मुख्य जलमार्ग हैं। यांगटिसी पर मूल स्थान से १००० मील तक स्टीमर जा सकते हैं और हंकाऊ तक जो समुद्र से ६८० मील ऊपर है समुद्री जहाज पहुँच सकते हैं। ऊपरी हिस्से में यह नदी जैचुआनप्रदेश में होकर बहती है जो अफीम, रेशम, कपास तथा खनिज सम्पत्ति का धनी है उस कारण इस भाग में बहुत व्यापार होता है। ह्यांगहो व्यापारिक दृष्टि

स महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि वह बहुत तेज और छिछला है। हांगहो 'चान का शोक' कहा जाती है क्योंकि उसकी बाढ़ों से घन जन का बहुत नाश होता है। यांगटिसीकियांग में बहुत दूर तक स्टीमर जा सकते हैं इस कारण वह एक महत्वपूर्ण मार्ग है। पो हो भी एक महत्वपूर्ण मार्ग है और टिंटसिन तक खेई जा सकता है।

उत्तरी भारत के जलमार्ग बहुत महत्वपूर्ण हैं। गंगा कानपुर तक स्टीमरों द्वारा खेई जा सकती है। यह नदी भारत के अत्यन्त उपजाऊ प्रदेशों भारत के जलमार्ग में स होकर बहती है इस कारण यह महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग है। रेलों के निकलने के पूर्व उत्तर भारत का यही मुख्य व्यापारिक मार्ग था। यद्यपि रेलों के निकल जाने से इसका महत्व घट गया है किन्तु नीचे के भाग में (बिहार और पश्चिमी बंगाल में) अब भी वह अन्य न महत्वपूर्ण व्यापारिक प्रदेश में मुख्य मार्ग है।

नदियों के सम्बन्ध में एक बात ध्यान में रखने की है। जहाँ अन्य सुविधा-जनक मार्ग नहीं हैं अथवा जहाँ उनकी प्राकृतिक स्थिति ऐसी है कि बिना उनका उपयोग
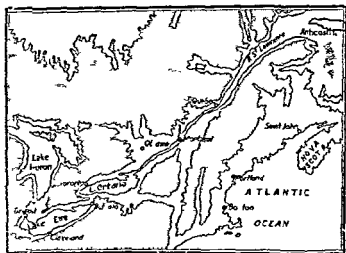
किए काम नहीं चल सकता वहीं वे महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग हैं। अन्यथा रेल की तुलना में नदियाँ और नहरें सुविधाजनक व्यापारिक मार्ग नहीं हैं। नदियों और नहरों से माल ले जाने में कुछ असुविधायें हैं। नदियों और नहरों के द्वारा माल

अधिक देर में पहुँचता है, रेलवे साइडिंग पर माल को रखने और जब आवश्यकता हो तब भर कर ले जाने की सुविधा होती है जो नदियों और नहरों से माल ले जाने में नहीं होती। फिर भी भारी तथा अधिक दिनों तक खराब न होने वाला माल नहरों और नदियों से कम खर्चे से एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजा जा सकता है। यही भीतरी जलमार्ग का प्रधान गुण है।

समुद्री मार्ग

आज पाँच सौ वर्ष पूर्व समुद्र पृथ्वी के भिन्न भिन्न भू मार्गों के बीच में एक बड़ी रुकावट के रूप में था। जब तक कि समुद्र में चलने योग्य जहाज नहीं बन गए तथा जहाज खेने की कला में इतनी उन्नति नहीं हो गई कि नाविक अपने निर्धारित मार्ग पर जहाज को ले जा सकें तब तक समुद्र का व्यापार के लिए उपयोग न हो सका। किन्तु आज तो समुद्र अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का मुख्य साधन बन गया है और एक देश दूसरे देश के बहुत समीप आ गया है।

समुद्री जलमार्ग के द्वारा माल बहुत सस्ते भाड़े में एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाया जा सकता है। जहाज द्वारा मान्ट्रियल से लिवरपूल तक गेहूँ ले जाने में प्रति टन प्रति मील ०६ पैं० खर्च पड़ता है, किन्तु इंगलैंड में रेल से गेहूँ ले जाने में प्रति टन प्रति मील १०३ पैं० खर्च पड़ता है। यद्यपि जहाज द्वारा माल ले जाने में खर्च बहुत कम होता है परन्तु जहाज रेल की अपेक्षा धीरे चलता है। यही नहीं जहाज साधारणतः ८००० से १०,००० टन बोझा ले जा सकता है जब कि रेलवे ट्रेन ६०० टन बोझा ही ले जाती है।

जहाज द्वारा कम खर्च से माल ले जा सकने के निम्नलिखित मुख्य कारण हैं —

समुद्र ने एक प्रकृतिदत्त जहाज मार्ग उपस्थित कर दिया है। उसको बनाने में कुछ व्यय नहीं होता। यही समुद्री मार्ग सब दिशाओं में है अतएव जहाज जहाँ भी आवश्यकता हो जा सकता है। इसके विपरीत रेलवे लाइनें डालने में पचास हजार से लेकर एक लाख रुपया प्रति मील व्यय हो जाता है फिर भी सब स्थानों पर रेल नहीं पहुँच सकी। समुद्र सब देशों के लिए खुला है अतएव प्रत्येक देश के जहाज समुद्र का स्वतन्त्रतापूर्वक उपयोग कर सकते हैं अतएव जहाजी कम्पनियों को व्यापार का एकाधिकार नहीं होता। जहाजों को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धा का सामना करना पड़ता है इस कारण जहाजों के चलाने की कला में उन्नति करने, मुसाफिरों तथा व्यापारियों को सुविधा देने, और कम किराया लेने की ओर जहाजी कम्पनियों का विशेष ध्यान रहता है।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक (१८२४) पालों से चलने वाले जहाजों का प्राधान्य था किन्तु पिछले १०० वर्षों में भाप से चलने वाले जहाजों का इतना अधिक उपयोग होने लगा है कि हवा से चलने वाले जहाज (Sailing Ships) महत्वहीन हो गए। आज भी अधिकांश हवा से चलने वाले जहाज तटीय व्यापार तथा कम दूरी की यात्रा करते हैं और भारी सामान को जो जल्दी नष्ट होने वाला न हो ले जाते हैं। परन्तु थोड़े से हवा द्वारा चलने वाले जहाज दूर की यात्रा भी करते हैं। स्टीमर हवा से चलने वाले जहाजों की अपेक्षा अधिक सामान ले जा सकता है, उनकी चाल तेज होती है तथा वायु का उस पर कोई असर नहीं होता। क्रमशः हवा से चलने वाले जहाजों का उपयोग समाप्त हो रहा है। किन्तु भाप से चलने वाले जहाजों के लिए कोयला अथवा तेल की आवश्यकता होती है इस कारण तेल तथा कोयले के स्टेशनों को स्थापित करने की आवश्यकता पड़ी।

जैसे जैसे जहाजों का आकार बढ़ाया जाने लगा और उनकी चाल को तेज किया गया वैसे वैसे अधिकाधिक कोयले की आवश्यकता पड़ने लगी। कोयला जहाज में बहुत सा स्थान घेरने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि जहाजों में माल भरने के लिये कम स्थान रहता था। इस कठिनाई को दूर करने के लिए बहुत से प्रयत्न किए गये। एंजिनों में सुधार किया गया जिससे कम कोयला खर्च हो। १६२० के उपरान्त ऐसे जहाज भी बनने लगे जिनमें कोयले के स्थान पर तेल का उपयोग होता है। तेल का उपयोग करने में अनेकों लाभ हैं। तेल को जहाज में भरने में खर्च कम होता है, जहाज अधिक साफ रहता है, तेल भरने में एक चौथाई समय लगता है अतएव जहाज का कार्यशील जीवन बढ़ जाता है। तेल को कोयले की अपेक्षा आधी जगह चाहिए अतएव माल भरने को अधिक जगह बच रहती है। तेल से चलने वाले जहाज के एंजिन रूम में कम आदमियों की आवश्यकता होती है इस कारण मजदूरी भी कम देनी पड़ती है। किन्तु इन गुणों के साथ-साथ तेल का मूल्य कोयले से अधिक है। यह दोष भी है। कुछ वर्षों से मोटर शिप भी तैयार किये जाने लगे हैं जिनमें तेल का ही उपयोग होता है किन्तु खर्च कम होता है। संसार में तेल की माँग बहुत है और वह सब जगहों पर नहीं मिल सकता साथ ही उसके भर कर रखने में कठिनाई बहुत है। इस कारण इस बात की सम्भावना तो नहीं है कि कोयले का उपयोग बहुत कम हो जावेगा परन्तु भविष्य में जहाजों में तेल का और भी अधिक उपयोग होगा इसमें सन्देह नहीं।

जहाज दो प्रकार के होते हैं—ट्रैम्प (Tramp) और लाइनर (Liner)। लाइनर जहाज एक निर्धारित मार्ग से होकर जाते हैं। जिन बन्दरगाहों पर उनका

जाना निश्चित है उन पर वे अवश्य ही जायेंगे। उसका समय भी निश्चित रहता है। ट्रैम्प जहाजों का न तो कोई निश्चित मार्ग ही होता है और न उनका समय ही निश्चित होता है। ट्रैम्प जहाँ के लिए उन्हें माल मिल जाता है वहीं के लिए प्रस्थान करते हैं। ट्रैम्प जहाजों के द्वारा खाद्य पदार्थ तथा कच्चा माल बहुत अधिक राशि में एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजा जाता है। संसार का आधे से अधिक व्यापार इन ट्रैम्प जहाजों के द्वारा ही होता है। किन्तु ट्रैम्प जहाज केवल उन्हीं व्यापारियों के काम के होते हैं जो पूरे जहाज के लायक माल भेजते हैं। लाइनर तैयार माल, जल्दी खराब होने वाले माल, तथा कीमती सामान को ले जाते हैं। जिन व्यापारियों के पास पूरे जहाज के लायक माल भेजने को नहीं होता वे लाइनर से ही अपना माल भेजते हैं। जब ट्रैम्प एक स्थान पर माल उतार देते हैं तब बेतार के तार से उन्हें सूचित कर दिया जाता है कि उन्हें कहाँ जाकर माल लादना चाहिए। इस प्रकार ट्रैम्प जहाजों के माल मिलने में कठिनाई नहीं होती। ट्रैम्प जहाज एक बड़ी आवश्यकता को पूरा करते हैं। कारण यह है कि किन्हीं स्थानों पर जब फसल का समय होता है तब तो माल लादने को रहता है, नहीं तो वर्ष के शेष दिनों में वहाँ से माल नहीं भेजा जाता। ऐसे भारवह (ट्रेफिक) के लिये ट्रैम्प ही अधिक उपयुक्त हैं।

समुद्री मार्ग व्यापार पर निर्भर रहते हैं। जहाँ माल लादने को अधिक मिलता है, जहाज वहीं जाता है फिर चाहे उसको चक्कर खाकर ही क्यों न जाना हो। यद्यपि माल मिलने की सुविधा मुख्यत जहाजों के मार्ग को निर्धारित करती है, परन्तु अन्य बातें भी समुद्री मार्गों को निर्धारित करती हैं।

(१) यदि मार्ग में कोयले की स्टेशनें अधिक हैं तो जहाजों को थोड़ा कोयला ही भरना पड़ता है और माल लादने के लिए जगह मिल जाती है। यही कारण है कि बहुत से ऐसे स्थानों पर भी जहाज नियमित रूप से जाते हैं जहाँ माल लादने को नहीं मिलता किन्तु कोयला सस्ता मिलता है।

कोयले के मिलने की सुविधा

(२) जहाँ तक सम्भव होता है समुद्री मार्ग ग्रेट सर्किल रूट (Great Circle Route) का अनुसरण करते हैं क्योंकि वही दो स्थानों के बीच में सबसे छोटा रास्ता होता है। पृथ्वी पर भूमध्य रेखा सबसे बड़ा वृत्त (Circle) है और ध्रुवों पर सबसे छोटे वृत्त होते हैं। अतएव किन्हीं दो स्थानों में सबसे कम अन्तर सीधा मार्ग नहीं होता, वरन् ग्रेट सर्किल रूट होता है। यही कारण है कि समुद्री मार्ग उत्तर में उत्तरी ध्रुव की ओर और दक्षिण में दक्षिण ध्रुव की ओर जाते हैं जिससे जहाजों को कम से कम दूरी पार करना पड़े। किन्तु अन्य कारणों से—

माल मिलने की सम्भावना जलवायु तथा कोयले के मिलने की सुविधा के कारण— जहाजों को ग्रेट सर्किल-रूट छोड़ना भी पड़ता है।

कहीं-कहीं नदियाँ तथा बन्दरगाह जाड़ों में जम जाते हैं तब जहाजों को सुविधाजनक मार्ग ग्रहण करना पड़ता है। उदाहरण के लिए जब सेंट-लारेंस जम जाती है तब जहाज दक्षिण बन्दरगाहों की ओर जाते हैं। यद्यपि हडसन की खाड़ी का मार्ग इगलैंड के लिए सबसे निकट का मार्ग है किन्तु उसके अधिकतर जमे रहने के कारण अधिकतर जहाज उस मार्ग का उपयोग नहीं करते।

यद्यपि स्टीमशिप हवा से अधिक प्रभावित नहीं होते किन्तु फिर भी हवा का थोड़ा बहुत असर रहता ही है। यही कारण है कि लिवरपूल से आस्ट्रेलिया जाने वाले जहाज केप आव गुड होप के मार्ग से जाते हैं क्योंकि पश्चिमी हवायें (Westerlies) उनके अनुकूल पड़ती हैं जिससे उन्हें सुविधा होती है। आस्ट्रेलिया से लौटते समय उस मार्ग से न आकर स्वेज नहर के मार्ग से आते हैं जिससे उन्हें पश्चिमी हवाओं का सामना न करना पड़े। यदि वे उस मार्ग से आवें तो जहाजों को अधिक कोयला जलाना पड़े और उनकी चाल धीमी हो जावे।

यदि समुद्रीय व्यापारिक मार्गों के मानचित्र (नकशे) को देखा जावे तो यह स्पष्ट हो जाता है कि सभी प्रमुख व्यापारिक मार्ग पश्चिमी योरप पर आकर समाप्त होते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि पश्चिमी योरप जगत का सबसे महत्वपूर्ण औद्योगिक भाग है। संसार में सबसे अधिक कच्चे माल की खपत इसी भाग में होती है और यह भाग सबसे अधिक तैयार माल अन्य भागों को भेजता है। अतएव यह स्वाभाविक ही है कि व्यापारिक मार्ग पश्चिमी योरोप पर केन्द्रित हों। पश्चिमी योरोप में कोयले की बहुतायत होने के कारण ही वह उद्योग प्रधान है। यही नहीं कोयले के मिलने की सुविधा के कारण भी जहाज इस ओर आकर्षित होते हैं। अतएव कोयले ही प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सामुद्रिक मार्गों का पश्चिमी योरोप में केन्द्रित होने का मुख्य कारण है।

मुख्य सामुद्रिक व्यापारिक मार्ग निम्नलिखित हैं —

(१) **उत्तरी अटलांटिक मार्ग** — यह मार्ग उत्तरी अमेरिका के पूर्वी तट को पश्चिमी योरप के समुद्र तट से मिलाता है। यह मार्ग अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि यह संयुक्तराज्य अमेरिका और कनाडा जैसे उपजाऊ तथा पश्चिमी योरोप के औद्योगिक भाग को जोड़ता है। दोनों किनारों पर कोयला यथेष्ट है परन्तु बीच में कोई कोलिंग स्टेशन नहीं है। बीच में कोई रुकावट नहीं है। जहाजों को केवल न्यू फाउंडलैंड के

किनारे बर्फ तथा कोहरे के कारण ग्रेट-सर्किल रूट को छोड़ना पड़ता है। दोनों किनारों पर महत्वपूर्ण बन्दरगाह हैं। योरोपीय किनारे पर लिवरपूल, लन्दन,
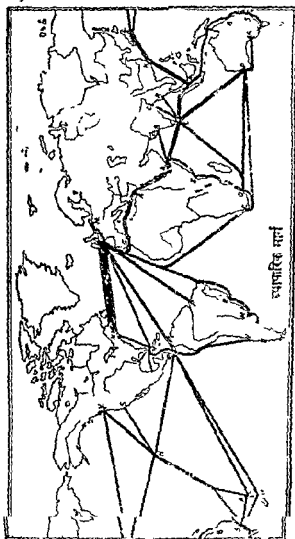
ग्लासगो, ब्रिस्टल, हैम्बर्ग, ब्रेमन, ऐमस्टर्डम, एंटवर्प और हैवर मुख्य हैं। अमेरिकन किनारे पर माण्ट्रियल और क्वीबक (केवल गर्मियों में) हैलीफैक्स, न्यू यार्क, सेंट जान,

बोस्टन, फिलेडैल्फिया, पोर्टलैंड, बाल्टिमोर, न्यूपोर्ट, नारफाक, न्यू आर्लियन्स तथा चार्ल्सटन मुख्य हैं।

भूमध्य सागर का (एशियाई) जल मार्ग

अटलांटिक मार्ग को छोड़कर यह जलमार्ग सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। योरोप से भूमध्य-सागर होता हुआ स्वेज नहर के द्वारा यह मार्ग भारत, सुदूर पूर्व, तथा आस्ट्रेलिया को जाता है। यह मार्ग वास्तव में स्वेज नहर का मार्ग है। १८६९ में स्वेज नहर के खुल जाने से यह मार्ग बना और इसके कारण केप आव गुड होप के मार्ग का बहुत कुछ महत्व जाता रहा। लन्दन से कलकत्ता स्वेज नहर के द्वारा जाने से लगभग ३७०० मील की बचत होती है। स्वेज मार्ग के पश्चिमी किनारे दो हैं—एक पूर्वी संयुक्तराज्य और दूसरा पश्चिमी योरोप। जिब्राल्टर पर दोनों रास्ते मिलते हैं। वहाँ से माल्टा और पोर्ट-सेद होते हुए स्वेज नहर के द्वारा यह मार्ग हिन्द महासागर में पहुँचता है। लाल सागर से निकल कर मार्ग फिर विभाजित होता है। मुख्य मार्ग तो कोलम्बो की ओर जाता है किंतु शाखायें बम्बई तथा अफ्रीकन बंदरगाहों की ओर जाती हैं। कोलम्बो से शाखायें कलकत्ता, बर्मा, तथा मदरास की ओर जाती हैं। मुख्य मार्ग कोलम्बो से मलक्का जलसंयोजक से निकलकर सिंगापुर होता हुआ हांगकांग, शंघाई, कोब तथा याकोहामा को चला जाता है। किंतु सिंगापुर से एक शाखा आस्ट्रेलिया की ओर जाती है। लन्दन से स्वेज नहर के रास्ते सिडनी १२,५०० मील, याकोहामा ११,६०० मील, तथा कलकत्ता ८००० मील है। यह मार्ग अन्य सब मार्गों की अपेक्षा अधिक जनसंख्या द्वारा काम में लाया जाता है। यह मार्ग बहुत घने आबाद देशों को छूता है और उनकी पैदावार को अन्य देशों में पहुँचाता है।

प्रशान्त महासागर का मार्ग

१९१४ ई० में पनामा नहर के बन जाने से प्रशान्त महासागर भी व्यापार की दृष्टि से महत्वपूर्ण बन गया है। एक महत्वपूर्ण मार्ग तो वह है जो पूर्व एशिया के बंदरगाहों, याकोहामा, शंघाई, हांगकांग और मैनिला को पश्चिमी संयुक्तराज्य के बंदरगाहों पोर्टलैंड, सान् फ्रैंसिस्को, वैंकोवर, तथा प्रिंसरुपर्ट को जोड़ता है। दूसरा मार्ग योरोपीय बंदरगाहों को आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड से जोड़ता है। यह मार्ग पनामा नहर से होकर जाता है। इस मार्ग में संयुक्तराज्य अमेरिका के पूर्वी तट से आने वाले मार्ग भी मिलते हैं। इन दो मार्गों के अतिरिक्त संयुक्तराज्य अमेरिका के पश्चिमी तट के बंदरगाहों को आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड से जोड़ने वाले मार्ग भी हैं।

पश्चिमी योरोप से एक मार्ग केप आव गुड होप से होता हुआ, अफ्रीका के

दक्षिण अमरीका का मार्ग पूर्वी तट पर स्थित मोम्बासा तथा जँजीबार इत्यादि बंदरगाहों को जोड़ता है। यही नहीं संयुक्तराज्य अमेरिका तथा योरोप से माल ले जाने वाले जहाज़ अधिकतर केप आव गुड होप के मार्ग से ही आस्ट्रेलिया को जाते हैं। यद्यपि योरोप से आस्ट्रेलिया आने वाले जहाजों को इस मार्ग से आने में १००० मील अधिक चलना पड़ता है परन्तु अधिकांश जहाज इस मार्ग का ही उपयोग करते हैं क्योंकि स्वेज नहर से निकलने की फीस इतनी अधिक है कि माल ले जाने वाले जहाजों को केप आव गुड होप का मार्ग सस्ता पड़ता है। संयुक्तराज्य से आस्ट्रेलिया की दूरी दोनों मार्गों से बराबर है।

उन्नीसवीं शताब्दी में जहाजों के योग्य नहरें बन जाने से इन व्यापारिक मार्गों का महत्व और भी अधिक बढ़ गया है। इन नहरों के द्वारा या तो दूरी कम हो गई है अथवा जहाजों के लिए विशेष सुविधा हो गई है। संसार की मुख्य नहरें जिनका उपयोग जहाज करते हैं निम्नलिखित हैं (१) स्वेज नहर, (२) पनामा नहर, (३) साल्ट-सू-सैंट मेरी नहर, (४) मैंचेस्टर नहर, (५) कील नहर, (६) नार्थ सी नहर, (अमस्टर्डम और नार्थ सी के बीच में) (७) नार्थ सी तथा राटर्डम के बीच की नहर।

स्वेज नहर स्वेज नहर ऊपर दी हुई सब नहरों से बड़ी है। यह नहर स्वेज जलडमरूमध्य (Isthmus) के बीच से काटकर निकाली गई है और भूमध्यसागर (Mediterranean Sea) को लाल सागर (Red Sea) से जोड़ती है। इस नहर को एक फ्रैंच इञ्जीनियर फर्डीनैंड डि लेसेप्स (Ferdinand De Lesseps) ने बनाया और सन् १८६९ में यह व्यापार के लिये खोल दी गई। नहर की कुल लम्बाई ८७ मील है जिसमें दो झीलें हैं। नहर चौरस मैदान में से होकर गई है और उसमें एक भी द्वार (Lock) नहीं है। नहर की कम से कम गहराई ३५ फीट और कम से कम चौड़ाई १७० फीट है। नहर के अन्दर जहाज ६ मील प्रति घंटे की चाल से अधिक नहीं चल
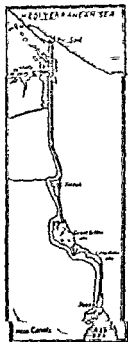
सकते। नहर को पार करने में जहाजों को १५ घंटे लग जाते हैं। साधारणत दो छोटे जहाज नहर में साथ-साथ निकल सकते हैं, किन्तु बड़े जहाज एक साथ नहीं निकल सकते। इस कारण जब तक एक जहाज नहर से न निकल जाये तब तक दूसरे जहाज को एक किनारे पर रुकना पड़ता है।

स्वेज नहर के खुलने के पूर्व जहाज केप आव गुड होप होकर आते थे। किंतु स्वेज नहर के खुल जाने से योरोप तथा भारत की दूरी में बहुत कमी हो गई। लन्दन से बम्बई आने में केप मार्ग १०८०७ मील का फासला था किंतु स्वेज नहर के रास्ते केवल ६२६० मील ही है। हांगकांग का अन्तर १२७३७ मील से घटकर ६३८८ मील, फ्रीमैंटल का अन्तर १०६०० मील से घट कर केवल ६३४० मील रह गया। स्वेज की नहर खुल जाने से ब्रिटेन का अपने पूर्वी साम्राज्य से अन्तर कम हो गया और उसके व्यापार को बहुत प्रोत्साहन मिला।

स्वेज नहर का उपयोग प्रतिवर्ष लगभग ६००० जहाज करते हैं। इनमें सबसे अधिक जहाज ब्रिटेन के होते हैं। ५५% के लगभग जहाज ब्रिटेन के, १०% जर्मनी के, ६% हालैंड के, ७% फ्रांस के, ५% इटली के, ४% जापान के, तथा ३% संयुक्तराज्य अमेरिका के जहाज होते हैं। पिछले वर्षों में ब्रिटेन के जहाजों का अनुपात घटता गया है और जापान, इटली तथा फ्रैंच जहाजों का अनुपात बढ़ता गया है।

यद्यपि स्वेज नहर मिश्र की सीमा में है और एक कम्पनी की सम्पत्ति है परन्तु १८८८ के समझौते के अनुसार इसकी घेराबन्दी (Blockade) नहीं की जा सकती और इसमें से होकर सब राष्ट्रों के जहाज चाहे वह माल से लदे हों अथवा युद्ध सामग्री से लदे हों किसी भी समय शान्ति अथवा युद्ध में जा सकते हैं।

स्वेज नहर से होकर जाने वाले जहाजों को नहर की फीस देनी होती है। पनामा नहर की तुलना में स्वेज नहर की फीस बहुत अधिक है। यही नहीं अब नए जहाज ऐसे बनने लगे हैं जो ४० फीट पानी के अन्दर रहते हैं। ऐसे जहाज स्वेज नहर में से होकर नहीं जा सकते। अतएव नहर को अधिक गहरा करने का विचार किया जा रहा है।

पनामा नहर

पनामा नहर १६१४ में व्यापार के लिए खुली। यह नहर अटलांटिक समुद्र को प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean) से जोड़ती है। इस नहर की लम्बाई ५० मील है। इसमें तीन द्वार (Lock) हैं। सब द्वार (Lock) दोहरे हैं। इस कारण जहाज एक ही

समय आ-जा सकते हैं और स्वेज की तरह उन्हें खड़ा नहीं रहना पड़ता। नहर की गहराई गाटुन झील (Gatun Lake) में अधिक से अधिक ६५ फीट अटलांटिक
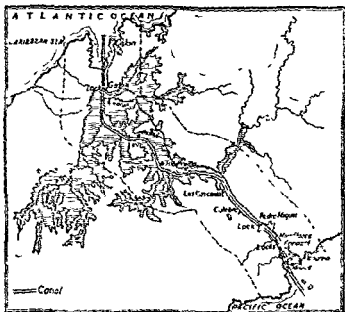
तट की ओर ४२ फीट, तथा प्रशान्त महासागर की ओर ४५ फीट है। नहर की कम से कम चौड़ाई ३०० फीट है। इसको पार करने में जहाज़ों को १० से १२ घंटे तक लगते हैं।

पनामा नहर के खुल जाने से संयुक्तराज्य अमेरिका के व्यापार को बहुत प्रोत्साहन मिला है, इसी कारण संयुक्तराज्य के जहाज ही इसका सबसे अधिक उपयोग करते हैं। इस नहर के खुल जाने का एक परिणाम यह हुआ कि उत्तरी अमेरिका का पूर्वी तथा पश्चिमी समुद्र तट निकट हो गया। प्रशान्त महासागर में पनामा नहर के ही कारण संयुक्तराज्य अमेरिका को योरोपीय देशों की अपेक्षा अधिक सुविधायें प्राप्त हैं। हांगकांग के उत्तर में, दक्षिण अमेरिका के पश्चिमी तट पर, तथा आस्ट्रेलिया के पूर्वी तट पर जो बंदरगाह हैं वे पनामा नहर के कारण संयुक्तराज्य अमेरिका के योरोपीय देशों की अपेक्षा अधिक पास है। न्यूजीलैंड तथा आस्ट्रेलिया का पश्चिमी तट योरोप के अब अधिक पास आगया है।

नाचे दी हुई तालिका से यह ज्ञात हो जायगा कि मुख्य-मुख्य बन्दरगाहों का अन्तर पनामा नहर क बन जाने से पहले का अपेक्षा कितना कम हो गया है।

को	मार्ग	न्यूयार्क स	लिवरपूल से
सिदेग्ल	हार्न (अन्तराप पनामा)	१३,६१० ६, ०३६	१४, ३२० ८, ६५४
बचत		७, ८७१	५, ६६६
वालपरैजो	हार्न (अन्तराप पनामा)	८, ३८० ४, ६३३	८, ७४७ ७, २०७
बचत		३, ७४७	१, ५४०
मैलबोर्न	केप आव गुड हाप स्वेज पनामा	१३, ६६२ —— १०, ३६२	—— ११, ६५४ १२, ६६६
बचत	—	२, ७७०	१, ३१२ बढ़ गया
हागकाग	स्वेज पनामा	११, ६६१ ११, ६७३	६, ७८५ ३१, ६५७
बचत	—	१८	४, १७२ बढ़ गया

इसी प्रकार लिवरपूल तथा न्यूयार्क से सैन फ्रैंसिसको को जाने में पनामा के मार्ग से क्रमश ५,६६६ मील तथा ७८७३ माल का बचत हाती है।

पनामा नहर में से हाकर जाने वालों में लगभग ५०% जहाज अमेरिका के तथा २५% ब्रिटिश जहाज हाते हैं। अधिकाश अमेरिकन जहाज जो इस नहर का उपयोग करते हैं वे अमेरिका के तटीय व्यापार में लगे रहते हैं।

स्वज और पनामा नहर ससार का अत्यन्त महत्वपूर्ण जहाजी नहरें हैं। स्वज हिन्द महासागर को तथा पनामा प्रशान्त महासागर का नहर है। स्वेज नहर के मार्ग को एक बहुत बड़ी सुविधा यह है कि मार्ग में कोलिंग स्टेशन बहुत हैं। छोटे छोटे द्वीपों और बदरगाहों का बहुतायत है। साथ ही उस मार्ग के समीपवर्ती देशों

में कोयला उत्पन्न होता है। इस कारण इसमें कोयला मिलने में कठिनाई नहीं होती और कोयला सस्ता मिलता है। इसके विपरीत पनामा के मार्ग में कोलिंग स्टेशनों का अभाव है। बीच में टापू नहीं है और जिन प्रदेशों में से होकर पनामा का मार्ग जाता है उसमें कोयला कम है किन्तु तेल बहुत मिलता है। स्वेज मार्ग अत्यन्त घने आबाद देशों को छूता हुआ जाता है इस कारण इस मार्ग पर व्यापार अधिक होता है। पनामा का मार्ग पहाड़ी रेगिस्तानी और निर्धन देशों को छूता हुआ जाता है इस कारण उस पर इतना अधिक व्यापार नहीं होता। स्वेज नहर मैदान में से होकर निकाली गई है इस कारण उसमें द्वार (Lock) नहीं हैं। उसके बनाने में व्यय कम हुआ है परन्तु पनामा ऊबड़ खाबड़ पहाड़ी भूमि में खोदी गई है, इस कारण उसके बनाने में व्यय भी अधिक हुआ है और उसमें द्वार (Lock) भी हैं। परन्तु पनामा नहर स्वेज से अधिक गहरी है और उसमें स्वेज की तरह जहाजों को खड़े रहकर प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। इसके अतिरिक्त स्वेज में जहाजों से पनामा की अपेक्षा ड्योढ़ी चुंगी ली जाती है।

सू नहर (Soo Canal)

सूनहर संसार में सबसे बड़ी जहाजी नहर है। यह नहर सुपीरियर झील तथा ह्यूरन झील के मध्य में सेंट मैरी नदी के प्रपात को बचाने के लिए बनाई गई है। यह नदी एक साथ २० फीट की ऊँचाई से गिरती है। इस कारण इसका उपयोग जहाज नहीं कर सकते थे। अतएव सू-नहर के द्वारा इस जल प्रपात को बचा दिया गया है। सूनहर उत्तरी अमेरिका के व्यापार के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस नहर का महत्व तो इसी से ज्ञात होता है कि सू नहर से जाने वाला माल स्वेज और पनामा से निकलने वाले माल का लगभग ४ गुना होता है। सू नहर के अतिरिक्त अन्य झीलों को भी जोड़ने वाली नहरें बनाई गई हैं जिनके द्वारा सेंट-लारेंस नदी के जल प्रपातों को बचा दिया गया है।

कील नहर (Kiel Canal)

बाल्टिक समुद्र में जटलैंड (Jutland) का प्रायद्वीप बाहर को निकला हुआ है। यल्ब को जटलैंड का चक्कर लगाकर बाल्टिक समुद्र में जाने से ६०० मील का अधिक फासला तय करना पड़ता है। फिर चट्टानों के कारण यह यात्रा अत्यन्त खतरनाक भी है, इस कारण कील नहर निकाली गई है। यह नहर बाल्टिक समुद्र को उत्तरी सागर (North Sea) से यल्ब के पास मिलाती है और केवल ६१ मील लम्बी है। यह १८९५ में बनी थी। यह ३८ फीट गहरी है और तले में १४४ फीट चौड़ी है इस कारण बड़े जहाज आसानी से उसमें से जा सकते हैं। यह नहर विशेषकर जर्मनी के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

यह नहर १८६४ में बनी। मरसी नदी के पूर्वी किनारे पर लिवर ईस्थम से मैनचेस्टर तक यह ३५½ मील लम्बा है। इसकी कम से कम गहराई २८ फीट और कम से कम चौड़ाई १२० फीट है। यह व्यापारिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। इसके बनने के पूर्व मैंचेस्टर को कपास लिवरपूल बन्दरगाह से रेल द्वारा आती थी किन्तु इस नहर में होकर अब जहाज सीधे मैंचेस्टर तक पहुँच जाते हैं।

मैनचेस्टर शिप नहर

ऐम्सटर्डम नहर ऐम्सटर्डम नहर ऐम्सटर्डम को उत्तरी सागर (North Sea) से सीधा सम्बन्ध स्थापित करती है।

स्टैलिन नहर स्टैलिन नहर के द्वारा बाल्टिक समुद्र को आर्कटिक महासागर से मिला दिया गया है। यह नहर लीननग्राड को श्वेत सागर (White Sea) से जोड़ती है।

पुराने समय में समुद्र अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये बाधक था किन्तु आज तो समुद्र सबसे अधिक महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग बन गया है। जो देश समुद्र के किनारे स्थित हैं आज उन्हीं का व्यापार उन्नत अवस्था में है। आधुनिक समय में व्यापार के लिए बन्दरगाह आवश्यक हैं। यही कारण है कि जिन देशों के पास बन्दरगाह नहीं हैं वे दूसरे देशों के बन्दरगाहों को छीन लेना चाहते हैं। बीसवीं शताब्दी में समुद्र के समीपवर्ती देशों का महत्व बहुत बढ़ गया है। आजकल सामुद्रिक मार्ग का महत्व इतना अधिक बढ़ गया है कि देशों की शक्ति तथा व्यापारिक उन्नति का अनुमान जहाजों से किया जाता है। ब्रिटेन तथा संयुक्तराज्य अमरिका की उन्नति का कारण उनकी बढ़ी हुई नाविक शक्ति ही है।

पृष्ठ २६१ पर दिये हुए अंकों से संसार के मुख्य देशों के व्यापारिक जहाजों की शक्ति (Merchant Tonnage) का पता चलता है।

हवाई मार्ग हवाई जहाजों का अभी तक केवल डाक तथा यात्रियों के लाने और ले जाने में ही अधिक उपयोग हुआ है। हाँ बम वर्षा तथा युद्ध में तो अब मुख्यतः हवाई शक्ति का ही उपयोग होता है। परन्तु व्यापार की दृष्टि से हवाई जहाज महत्वपूर्ण नहीं है। अभी तक मूल्यवान वस्तुओं के नमूने तथा पार्सल ही हवाई जहाजों के द्वारा भेजे जाते हैं। वह समय बहुत दूर है जब कि हवाई जहाज से माल एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाया जा सकेगा। इसका कारण है यह कि प्रति टन प्रति मील हवाई जहाज से माल ले जाने में व्यय बहुत होता है। ब्रिटिश हवाई जहाज प्रति टन प्रति मील १ शि॰

देश का नाम	हजार टन में १९२६ में	हजार टन में १९३८	हजार टन में १९४९ में
ब्रिटेन और आयरलैंड	१७, ७८१	२०, १६६	१८, ०००
संयुक्तराज्य अमेरिका	११ ६३६	१४, ३७७	३२, ५००
जापान	५, ००७	४, १८७	२, ५००
जर्मनी	४, २४४	४, ०६२	२, ०००
फ्रांस	२, ६०३	३, ३७६	३, ०००
इटली	३, २६०	३, २८५	२, ५००
हालैंड	४ ६१४	३, २८४	३, ५००
भारत	२ ६३६	२, ८५५	(अज्ञात)
नार्वे	३, ०००	४, ०००	५, ०००

१० पैं० के हिसाब से किराया लेते हैं जबकि रेल से माल भेजने पर १½ पैं० प्रति टन प्रति मील देना होता है और समुद्र से भेजने से इससे भी कम व्यय होता है। हाँ शीघ्र यात्रा करने वालों के लिए हवाई जहाज सुविधाजनक है। ३०० मील से अधिक की यात्रा करने पर हवाई जहाज से रेल की अपेक्षा दुगना किराया लगता है।

हवाई मार्ग जलवायु तथा धरातल की बनावट से बहुत कुछ प्रभावित होता है। यदि वर्षा तेज हो, वर्फ का तूफान हो, आँधी हो तो हवाई जहाज को विवश होकर उतरना पड़ता है। कोहरा होने पर हवाई जहाज का सकुशल उतरना कठिन हो जाता है। हवा की तेजी और उसका रुख हवाई जहाज की चाल को धीमा या तेज कर देती है। यही कारण है कि हवाई जहाजों के उड़ने का समय दिया जाता है परन्तु बहुधा किसी स्थान पर पहुँचने का समय नहीं दिया जाता। बहुत अधिक गरमी और तापक्रमों का जल्दी-जल्दी बदलना भी हवाई मार्ग के लिए अनुकूल नहीं पड़ता। यही कारण है कि हवाई मार्ग रेगिस्तानों के ऊपर से होकर नहीं जाते।

धरातल की बनावट का भी हवाई मार्ग पर प्रभाव पड़ता है। जहाज के उतरने के लिए चौरस मैदान की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक मशीन एक निश्चित ऊँचाई तक ही सकुशल उड़ सकती है। यदि मार्ग में बहुत ऊँचे पहाड़ हों तो कठिनाई हो सकती है। इसी कारण हवाई मार्ग नीचे मैदानों में से ही होकर जाते हैं। योरोप में आल्पस पर्वत तथा संयुक्तराज्य अमेरिका के राकी पर्वत पर उड़ते समय हवाई जहाज घाटियों और दर्रों में से होकर जाते हैं।

जो कुछ भी हो भविष्य में हवाई जहाज रेल और समुद्र के जहाजों से माल ले जाने में प्रतिस्पर्धा कर सकें इसकी सम्भावना नहीं है। हवाई जहाजों का उपयोग युद्ध में, यात्रियों को ले जाने में, तथा हल्का परन्तु मूल्यवान सामान ले जाने में हो सकेगा।

१—योरोप और अमेरिका का मार्ग—इस मार्ग पर विशेष रूप से जर्मन और फ्रेंच हवाई जहाज उड़ते हैं। यह मार्ग अफ्रीका के अटलांटिक तट पर डाकर तक जाता है वहाँ से वह अटलांटिक को पार करके पैरानाम्बुको (Pernabuco) (ब्राजील में) पहुँचता है। पैरानाम्बुको और सैन्टियागो (चिली) एक हवाई मार्ग द्वारा जुड़े हैं। संयुक्तराज्य अमेरिका का हवाई मार्ग पैरानाम्बुको पर आकर मिलता है।

२—योरोप, एशिया और आस्ट्रेलिया के हवाई मार्ग पर फ्रेंच, डच और ब्रिटिश जहाज अधिकतर उड़ते हैं। ब्रिटिश हवाई मार्ग लन्दन से चलकर मार्सलीज, ऐथिंस, अलेक्जन्ड्रिया, कैरो, गाजा, बगदाद, बेहरिन, शरजा, कराची, जोधपुर, देहली, इलाहाबाद, कलकत्ता, रंगून, बैंगकाक, पिनांग, सिंगापुर, बटाविया, डारविन, ब्रिसबेन और सिडनी होता हुआ मैलबोर्न पर समाप्त होता है। फ्रेंच और डच भी इसी मार्ग का उपयोग करते हैं।

अभी कुछ समय हुआ सोवियत रूस ने एक नई लाइन खोली है जो मास्को और व्लाडिवास्टक को जोड़ती है।

३—योरोप और अफ्रीका के हवाई मार्ग—योरोप और अफ्रीका के बीच अधिकतर ब्रिटिश, फ्रेंच और इटैलियन हवाई जहाज चलते हैं। ब्रिटिश हवाई मार्ग साऊथैम्पटन (Southampton) से आरम्भ होता है और भूमध्यसागर को पार करके अलेक्जन्ड्रिया पहुँचता है वहाँ से वह खरतुम जाता है जहाँ से दो मार्ग हो जाते हैं। एक मार्ग पश्चिम में लैगास (Lagos) तक जाता और दूसरा दक्षिण में केप-टाऊन तक जाता है।

फ्रेंच—फ्रांसीसियों ने अफ्रीका में दो मार्ग स्थापित किये हैं। एक तो अफ्रीका के पश्चिमी समुद्र तट पर जाता है और फ्रेंच अफ्रीका (भूमध्य रेखा प्रदेश) तक जाता है। यह मार्ग डाकर होकर जाता है। दूसरा मार्ग सहारा और कांगों को पार करता हुआ मैडेगास्कर तक जाता है। इटैलियन लाइन त्रिपोली से कैरो होती हुई अबीसीनिया में अदिस अबाबा तक जाती है।

४—अमेरिका और एशिया का हवाई मार्ग—इस मार्ग पर अधिकतर संयुक्तराज्य अमेरिका के हवाई जहाज चलते हैं। यह मार्ग सैन फ्रांसिस्को से आरम्भ होता है
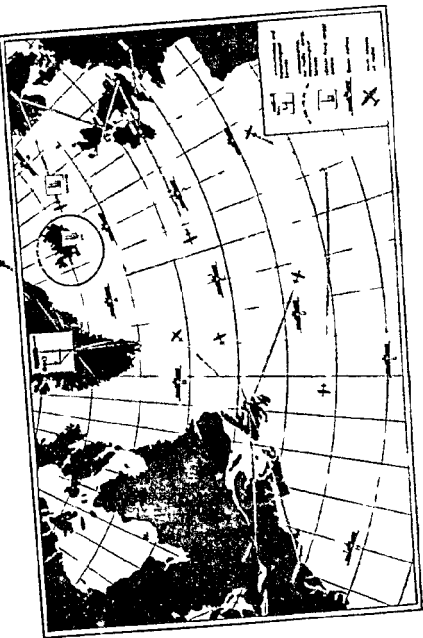
और प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean) के पार करके कैन्टन, होनोलूलू, मिडवे द्वीप (*Midway Islands*) वेक द्वीप (*Wake Island*) होता हुआ मैनिला जाता है।

जर्मनी के हवाई जहाज उत्तर में नार्वे, स्विडन और फिनलैंड से, पूर्व में पोलैंड से, दक्षिण में जैकोस्लावाकिया, यूगोस्लाविया, और ग्रास तथा इटली से और स्पेन तथा पुर्तगाल से सम्बन्ध जोड़ते हैं। फ्रैंच तथा डच लाइन योरोप में जर्मनी की प्रतिद्वन्द्वी हैं।

हवाई मार्गों की उन्नति में संयुक्तराज्य अमेरिका सब से उन्नत देश है। वहाँ कई अन्तर महादेशीय वायु मार्ग हैं। मुख्य हवाई अड्डे पूर्व में बस्टन, न्यूयार्क और वाशिंगटन हैं तथा लास ऐंजिल्स पश्चिम में है।

स्थायी हवाई मार्गों की लम्बाई

संयुक्तराज्य अमेरिका	७१,२००
फ्रांस	४१,०००
जर्मनी	३३,०००
ब्रिटन	१५,०००
भारत	६,३००

व्यापारिक केन्द्र (Trade Centres) व्यापारिक केन्द्रों को स्थापित करने में दो प्रकार के प्रभाव काम करते हैं। एक तो वह कारण अथवा प्रभाव जो केन्द्र के पृष्ठ प्रदेश (Hinterland) का निर्माण करते हैं दूसरे वे कारण जो कि केन्द्र की स्थिति निर्धारित करते हैं।

किसी व्यापारिक केन्द्र का पृष्ठ प्रदेश (Hinterland) कैसा होगा यह वहाँ की भूमि, जलवायु, खनिज पदार्थ के उपस्थित होने या न होने तथा अन्य भौगोलिक परिस्थितियों पर निर्भर रहता है। यदि ऊपर लिखी हुई बातें अनुकूल हुई तो उस क्षेत्र की औद्योगिक उन्नति हो सकेगी, जनसंख्या घनी आबाद होगी, और उस क्षेत्र में व्यापार बहुत होगा। क्योंकि वह क्षेत्र बहुत सा माल बाहर भेजेगा और बहुत सा माल बाहर से मँगवायेगा। यह तो साधारण नियम हुआ किन्तु किसी प्रदेश के औद्योगिक विकास पर भी यह निर्भर रहता है। कृषि प्रधान देशों में जनसंख्या बिखरी होती है इस कारण वहाँ अपेक्षाकृत कम व्यापारिक केन्द्र होते हैं किन्तु उद्योग प्रधान देशों में जनसंख्या घनी होती है और वहाँ बहुत से बड़े बड़े व्यावसायिक तथा व्यापारिक केन्द्र होते

है। कृषि प्रधान क्षेत्र में व्यापारिक केन्द्र बहुधा बड़े नहीं होते क्योंकि उनका पृष्ठ प्रदेश (Hinterland) अधिक माल का विनिमय नहीं कर सकता। इसके विपरीत औद्योगिक क्षेत्र का केन्द्र बहुत बड़ा होता है।

व्यापारिक केन्द्र किस स्थान पर स्थापित होता इसका विवेचन हम पहले परिच्छेद में "नगर बसने के कारण" में कर चुके हैं। संक्षेप में निम्नलिखित कारणों से किसी स्थान पर केन्द्र स्थापित होता है। पीने योग्य जल की सुविधा, रहने योग्य स्थान जो सुरक्षित हों, मार्गों के मिलन केन्द्र पर, राजनैतिक तथा धार्मिक दृष्टि से महत्व पूर्ण स्थान पर।

मार्गों का मिलन केन्द्र (Junction) बहुत प्रकार का हो सकता है। जहाँ समुद्रीय तथा स्थल मार्ग मिलते हैं वहाँ बन्दरगाह बन जाते हैं। बन्दरगाह का महत्व उनके पृष्ठ प्रदेश (Hinterland) पर निर्भर है। जितना ही पृष्ठ प्रदेश धनी होगा उतना ही बन्दरगाह भी समृद्धिशाली होगा। प्रकृति ने समुद्र तट के समीप चाहे कितना अच्छा प्राकृतिक बन्दरगाह बना दिया हो किन्तु जब तक कि उसका पृष्ठ प्रदेश उन्नत और धनी न होगा तब तक वह उन्नति नहीं कर सकता। उदाहरण के लिए माल्टा द्वीप में वलेटा और लंका में ट्रिंकोमाली बहुत ही अच्छे प्राकृतिक बन्दरगाह हैं किन्तु उनका कोई भी व्यापारिक महत्व नहीं है क्योंकि उनका पृष्ठ प्रदेश धनी नहीं है और गमनागमन के साधनों की असुविधा है।

समृद्धिशाली पृष्ठ प्रदेश के अतिरिक्त बन्दरगाहों में जहाजों के ठहरने, घूम सकने, तथा माल लादने तथा उतारने की भी सुविधा होना चाहिए। पिछले कुछ वर्षों में बहुत से छोटे-छोटे बन्दरगाह व्यापारिक दृष्टि से महत्वहीन हो गए। क्योंकि जहाज बड़े बड़े बनने लगे इस कारण वे प्रत्येक बन्दरगाह में नहीं जा सकते (Queen Elizabeth) जैसे बड़े बड़े जहाजों को घूमने के लिये कम से कम आधे मील का अर्द्धव्यास चाहिए। समुद्र तट का कटा हुआ किनारा जिसमें छोटे छोटे द्वीप हों, नदियों के मुहाने, गहरी और संकीर्ण खाड़ियाँ, अच्छे बन्दरगाह स्थापित करने के अनुकूल स्थान होते हैं। जो बन्दरगाह नदियों के मुहाने पर विशेषकर ऐसी नदियों के मुहाने पर जिनमें कि जहाज जा सकते हों स्थित होते हैं, वे अत्यन्त सुविधा जनक होते हैं, क्योंकि जहाज माल से लदे बहुत दूर अन्दर तक जा सकते हैं और माल को रेलवे स्टेशनों पर उतार देते हैं। ऐसे बन्दरगाह ही संसार के सबसे महत्व पूर्ण बन्दरगाहों में से हैं। लंदन, लिवरपूल, न्यूयार्क तथा कलकत्ता स्चुयैरी बन्दरगाह हैं। कहीं कहीं आवश्यकता अनुभव होने पर बन्दरगाह बनाया भी जाता है। मदरास और डोवर ऐसे ही बने हुए बन्दरगाह हैं। अच्छे बन्दरगाह को बर्फ और कुहरे से स्वतन्त्र रहना अति आवश्यकीय है।

बन्दरगाहों के व्यापारिक महत्व पर ज्वार और भाटा का भी बहुत प्रभाव रहता है। ज्वार भाटा के द्वारा बन्दरगाहों का खुले हुये समुद्र से सम्बन्ध रहता है। यदि किसी स्थान पर ज्वार और भाटा का उतार-चढ़ाव १५ फीट से अधिक है तो बन्द डाक (Closed Dock) वाला बन्दरगाह बनाया जाता है जिससे कि पानी के ऊँचा उठने पर डाक के अन्दर खड़ा हुआ जहाज ऊँचा न उठ जावे नहीं तो यदि ज्वार भाटे के साथ जहाज अधिक उठे और नीचे चला जाय तो माल लादने और उतारने में कठिनाई हो। जहाँ १५ फीट से चढ़ाव उतार कम होता है और गहराई काफी होती है वहाँ खुला हुआ बन्दरगाह बनाया जाता है। ऐसे बन्दरगाह में जहाज हर समय आ जा सकते हैं किन्तु बन्द डाक वाले बन्दरगाह में जहाजों को ज्वार के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ती है जब पानी ऊँचा उठता है तब वह उसके साथ बन्दरगाह में आता है। अमेरिका के बन्दरगाह दूसरी तरह के हैं और लन्दन इत्यादि दूसरे बन्दरगाह पहली तरह के हैं।

कुछ बन्दरगाह अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के केन्द्र बन जाते हैं। कारण यह है कि यदि कोई बन्दरगाह अनुकूल स्थिति होने के कारण दो या उससे अधिक व्यापारिक मार्गों का मिलन केन्द्र बन जाता है तो समीपवर्ती प्रदेशों से तटीय व्यापार करने वाले जहाज माल को उस केन्द्रीय बन्दरगाह (Entrepot) तक ले जाते हैं। वहाँ माल बहुत इकट्ठा हो जाता है और भिन्न-भिन्न व्यापारिक मार्गों की ओर भेज दिया जाता है। अधिक सुविधायें होने पर दूर दूर के देशों से माल इन केन्द्रीय बन्दरगाहों (Entrepots) में आता है और वहाँ से अन्य देशों को जाता है। उदाहरण के लिए भारत की चाय लन्दन को जाती है फिर वहाँ से अन्य देशों को जाती है। लन्दन और राटर्डम (Rotterdam) ऐसे ही बन्दरगाह हैं। किन्तु अब भविष्य में केन्द्रीय बन्दरगाहों (Entrepots) का महत्व कम होगा, क्योंकि जैसे जैसे भिन्न-भिन्न देशों का वैदेशिक व्यापार बढ़ता जायेगा वैसे प्रत्येक देश किसी वस्तु विशेष को केन्द्रीय बन्दरगाह (Entrepot) से न मँगाकर उत्पत्ति-स्थान से सीधे मँगा लेगा। उदाहरण के लिये आस्ट्रेलिया का ऊन इत्यादि अब संयुक्तराज्य को लन्दन के द्वारा न भेजा जाकर सीधा भेजा जाता है।

बन्दरगाहों को बहुत अधिक सुविधायें होने के कारण क्रमशः वे प्रमुख व्यापारिक औद्योगिक केन्द्र बन जाते हैं और वहाँ बैंक बहुत स्थापित हो जाते हैं क्योंकि वैदेशिक व्यापार के कारण बैंकों की बहुत आवश्यकता होती है। व्यवसायी लोग क्रमशः अपने कारखानों को बन्दरगाहों में ही स्थापित करना चाहते हैं क्योंकि वहाँ से माल बाहर भेजने में व्यय कम होता है। यही कारण है कि लिवरपूल संसार की प्रमुख कपास की मंडी है। लन्दन संसार की रबर और ऊन की सबसे बड़ी मंडी है।

लन्दन और न्यूयार्क ससार के मुख्य द्रव्य बाजार (Money Markets) हैं। वास्तव म बन्दरगाह बहुत जल्दी ही बड़ा नगर बन जाता है।

बड़े नगरों का भौगोलिक बटवारा

यदि हम पृथ्वी के चित्र को देखें तो हमें ज्ञात होगा कि (अ) उत्तर पूर्वी सयुक्तराज्य अमेरिका, (क) पश्चिमी योरोप (ग) जापान में बड़े नगर बहुत अधिक सख्या में हैं। दक्षिणी पश्चिमी सयुक्तराज्य अमेरिका में पूर्वी तथा दक्षिणी योरोप में, चीन म, भारत म दक्षिण अमेरिका के श तोष्ण कटिबन्धीय भाग में बड़े नगर साधारण अधिक सख्या में हैं। इस सम्बन्ध में एक बात और भी ध्यान देने के योग्य है कि उष्ण कटिबन्धीय दक्षिण अमेरिका, दक्षिण पूर्वी एशिया, तथा समस्त अफ्रीका और आस्ट्रेलिया म जितने भी बड़े नगर हैं व समुद्र तट के समीप हैं।

बड़े नगरों क इस बटवारे के नीचे लिखे मुख्य कारण हैं।

(१) मनुष्य की कार्य क्षमता पर जलवायु का प्रभाव।
(२) भूमि की धरातल की बनावट, मिट्टी और जलवायु का खेतो की पैदावार पर प्रभाव।
(३) समुद्र तट का विस्तार।
(४) खनिज पदार्था तथा अन्य प्राकृतिक साधनो का स्थिति
(५) आदर्श घनत्व (Optimum Density) से जनसख्या कितनी अधिक या कम घनी है।
(६) सभ्यता का स्तर।

यदि ध्यान म देखा जावे तो हमें यह ज्ञात होगा कि उन प्रदेशो में जहाँ प्राकृतिक देन जनसख्या की तुलना में अधिक है बड़े नगर अधिक पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त समुद्र तथा बड़ी झीलों के तट पर भी बड़े नगर अधिक पाये जाते हैं। बन्दरगाह अन्य नगरो की अपेक्षा अधिक बड़े होते हैं इसका मुख्य कारण यह है कि बन्दरगाहों को अपने पृष्ठ प्रदेश (Hinterland) से तो सहायता मिलती ही है व अन्य प्रदेशों से भी व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं क्योंकि जल के द्वारा यातायात बहुत सस्ता है। बन्दरगाहों में विदेशों से माल ही नहीं आता वरन् विदेशों से मनुष्य, विचार, तथा कार्य प्रणाली भी आती है। इसके अतिरिक्त बन्दरगाहों के बहुत बड़े नगर बनने का एक कारण यह भी है कि अधिकतर समुद्र तट के पास (विशेषकर डेल्टा में,) ससार की सबसे अधिक उपजाऊ मिट्टी पाई जाती

है। समुद्रतट अधिकतर स्वास्थ्यप्रद होता है। यही कारण है कि समुद्रतट के समीप इसमें अधिक बड़े नगर मिलते हैं।

कुछ महत्वपूर्ण बन्दरगाह

योरोप

योरोप के महत्वपूर्ण बन्दरगाह उत्तर पश्चिमी तट पर हैं। हैम्बर्ग एल्ब नदी पर, रटरडम (Rotterdam) राइन नदी पर ऐंटवर्प शेल्ड (Scheldt) नदी पर और हैवरे सन नदी पर मुख्य हैं। इनका पृष्ठ प्रदेश (Hinterland) बहुत विस्तृत और धनी है।

भूमध्यसागर (Mediterranean Sea) के बन्दर स्वेज नहर के खुल जाने से महत्वपूर्ण बन गए हैं। जबसे स्वेज नहर बनी है तबसे भूमध्य सागर व्यापार का प्रमुख मार्ग बन गया है। इसके मुख्य बन्दरगाह मार्सेलीज, नेपिल्स, जिनोआ और ट्रीस्ट हैं। कालासागर और बाल्टिक समुद्र भीतरी सागर हैं इस कारण उसमें महत्वपूर्ण बन्दरगाह नहीं है फिर भी कुस्तुनतुनिया (Constantinople) और कोपिनहेगिन (Copenhagen) अच्छे बन्दरगाह हैं।

लंदन

ब्रिटेन की राजधानी लन्दन टेम्स नदी पर समुद्र से ६५ मील दूर है। यह ठाक राइन और शेल्ड (Scheldt) नदियों के सामने स्थित है जो योरोप के प्रमुख व्यापारिक मार्ग हैं। टेम्स में ज्वार भाटा (Tides) आने पर समुद्र का पानी २० फीट तक ऊँचा चढ़ जाता है इस कारण नदी में रेत नहीं जम पाता। यह संसार का सबसे बड़ा केन्द्रीय बन्दरगाह (Entrepot Port) है। संसार भर से माल आता है और फिर उसको भिन्न भिन्न देशों को भेज दिया जाता है। यद्यपि इसका महत्व कम होता जा रहा है। यहाँ ऊन, अनाज, लकड़ी, मांस, मक्खन, शराब, तम्बाकू, रबर, फल, गलीचे इत्यादि वस्तुएँ विदेशों से आती हैं। लन्दन ब्रिटेन का प्रमुख बन्दरगाह है वह यहाँ का ३० से ४०% तक निर्यात करता और २५% ब्रिटेन को आने वाला माल यहीं आता है। लन्दन में कागज, रासायनिक पदार्थ, नकली रेशम, कपड़ा सीने, फरनीचर, तथा जेवर बनाने के कारखाने हैं।

लिवरपूल

लिवरपूल ब्रिटेन का दूसरा प्रमुख बन्दरगाह है किन्तु जहाँ तक माल के बाहर भेजने का प्रश्न है यह लन्दन से भी अधिक माल बाहर भेजता है और इंगलैंड के औद्योगिक केन्द्रों को यहीं से कच्चा माल जाता है। यहाँ कपास, ऊन, आयरलैंड से मक्खन और की वस्तुएँ, लकड़ी तथा अनाज बाहर से आती हैं तथा सूती वस्तु, ऊनी वस्तु

स्पात का सामान, चीनी मिट्टी के बर्तन, रासायनिक पदार्थ इत्यादि बाहर भेजे जाते हैं। लिवरपूल का पृष्ठ प्रदेश लंकाशायर, यार्कशायर, स्टैफोर्डशायर, तथा चेशायर की कोटिका है। यहाँ आटा बनाने, शक्कर तैयार करने, रसायनिक पदार्थ तथा साबुन बनाने के कारखाने हैं।

ब्रिटेन में कारडिफ कोयला बाहर भेजने का प्रमुख बन्दरगाह है। कोयले के अतिरिक्त लोहा, अनाज और लकड़ी का भी व्यापार होता है। कारडिफ (Cardiff) बन्दरगाह के समीप ही लोहे के कारखाने हैं।

मैंचेस्टर

मैंचेस्टर को लिवरपूल से मैंचेस्टर नहर से जोड़ दिया गया है इस कारण इसका महत्व बढ़ गया है। यहाँ बाहर से कपास आती है और कपड़ा बाहर भेजा जाता है लंकाशायर का धन्धा मैंचेस्टर के समीप (२० मील के अन्दर) ही केन्द्रित है। यह लिवरपूल का प्रतिद्वन्द्वी बन्दरगाह है।

हैम्बर्ग

हैम्बर्ग जर्मनी का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण बन्दरगाह है। यह एल्ब नदी पर स्थित है और समुद्र से ७० मील दूर है। यह अपने घनी व्यापारिक क्षेत्र से नदियों और रेलों द्वारा जुड़ा हुआ है। हैम्बर्ग जर्मनी के सब बन्दरगाहों को मिलाकर जितना व्यापार होता है उससे अधिक व्यापार करता है। इस बन्दरगाह पर बाहर से कहवा, कोकोआ, शक्कर, कोयला, कपास, ऊन, और तैयार माल बाहर से आता है तथा तैयार माल, नमक शक्कर तथा दूध और मक्खन बाहर भेजता है। अब ऐम्स वैसर और इसा नहर के बन जाने से रूर के औद्योगिक प्रदेश से सीधा सम्बन्ध जलमार्ग द्वारा हो गया है इस कारण राटर्डम और ऐन्टवर्प का बहुत सा व्यापार हैम्बर्ग ने खींच लिया है।

राटर्डम

राटर्डम राइन की सहायक नदी न्यूमास (New-mass) पर स्थित है और उसको समुद्र से एक गहरी नहर (New-waterway) से जोड़ दिया गया है। यह जर्मनी के प्रसिद्ध औद्योगिक प्रदेश वैस्ट फैलिया तथा अन्य औद्योगिक केन्द्र तथा हालैंड और बैलजियम इसका पृष्ठ प्रदेश हैं। इसा नहर के बन जाने से रूर प्रदेश का व्यापार हैम्बर्ग की ओर चला जाता है।

ऐंटवर्प

यह बैलजियम का बन्दरगाह है और शेल्ड (Scheldt) के मुहाने पर स्थित है। यह संसार का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बन्दरगाह है। यह एक केन्द्रीय बंदरगाह (Entrepot Port) है। इसके पृष्ठ प्रदेश में बेलजियम, पूर्वीय फ्रांस, राइन की घाटी

तथा रूर का प्रदेश सम्मिलित है। यह रटर्डम और हैम्बर्ग का प्रतिद्वन्दी बंदरगाह है।

मार्सलीज (Marscelles) फ्रांस का प्रमुख बंदरगाह है। यह बंदरगाह रोन के मुहाने से ३० मील दूर है। रोन के मुहाने पर होने के कारण यह अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गया है। एक गहरी नदी द्वारा रोन से जोड़ दिया गया है। स्वेज नहर के बन जाने से यह पूर्व से अत्यधिक व्यापार करता है। इसके अतिरिक्त उत्तरी अफ्रीका तथा फ्रेंच अफ्रीका से भी यह बहुत व्यापार करता है। इस बंदरगाह पर गेहूँ, तिलहन, शक्कर, कहवा, खालें, रेशम तथा मसाला बाहर से आता है।

उत्तरी अमेरिका उत्तरी अमेरिका के मुख्य बंदरगाह मांट्रियल, न्यू यार्क, बोस्टन, हैलीफैक्स, न्यू अरलियन्स, मोबाइल और गलैवैस्टन अटलांटिक महासागर पर और सैन फ्रैंसिसको, सियेटल, वैंकोवर, पोर्टलैंड और ओकलैंड प्रशान्त महासागर पर मुख्य बंदरगाह हैं। अटलांटिक महासागर के बंदरगाहों के व्यापार प्रदेश बहुत उन्नत और धनी हैं किन्तु प्रशान्त महासागर के बंदरगाहों का व्यापार क्षेत्र धनी नहीं है।

बालटीमोर चेसापीक की खाड़ी पर बड़ा बंदरगाह है। यह मध्य अपलेशियन प्रदेश से जलमार्गों द्वारा जुड़ा हुआ है। यहाँ लोहे और स्टील का सामान, तम्बाकू, तथा रासायनिक खाद, तथा फलों का धन्धा बहुत होता है।

बोस्टन यह न्यू इंगलैंड का व्यापार द्वार है। यह एक सुरक्षित खाड़ी पर स्थित है। अटलांटिक महासागर के सामुद्रिक मार्गों की दृष्टि से इसकी स्थिति बहुत अच्छी है। यह रेल द्वारा पोर्टलैंड, न्यू ब्रंजविक, मांट्रियल, और न्यूयार्क से जुड़ा है। यह योरोप के सबसे पास है। यह सारे वर्ष खुला रहता है। इस पर खालें, कपास, ऊन बाहर से आती हैं। यहाँ शक्कर, सूती कपड़ा, कागज, चमड़ा, लोहा और स्टील का धन्धा केन्द्रित है।

मांट्रियल यह ओटावा और सेंट लारेंस नदियों के जंकशन पर स्थित है और वहाँ तक समुद्र से जहाज आ जा सकते हैं। यह कनाडा का सबसे महत्वपूर्ण बंदरगाह है। यह लिवरपूल के न्यू यार्क की अपेक्षा अधिक पास है। यह संसार का एक बहुत बढ़िया बंदरगाह है किन्तु इसमें एक दोष यह है कि यह जाड़ों में जम जाता है।

यह मिसीसिपी नदी के मुहाने पर स्थित है। यह मैक्सिको की खाड़ी से १० मील है। इसका पृष्ठ प्रदेश (Hinterland) मिसीसीपी **न्यू आरलियन्स** और मिसूरी का घनी प्रदेश है। यहाँ से कपास बाहर बहुत भेजी जाती है। इसके अतिरिक्त यहाँ से पैट्रोलियम और गेहूँ बाहर भेजा जाता है। यहाँ से पशु, लकड़ी और मक्का भी बाहर जाती है।

न्यू यार्क संयुक्तराज्य अमेरिका का प्रमुख बंदरगाह है। इस पर कोयले, लकड़ी, गेहूँ का बहुत व्यापार होता है। न्यू यार्क का बंदरगाह बहुत **न्यू यार्क** अच्छा है और यह अपने घनी व्यापार प्रदेश में नहरों और रेलों से जुड़ा है।

प्रशान्त महासागर के बंदरगाह महत्वपूर्ण नहीं हैं क्योंकि वे बड़े बंदरगाह नहीं हैं और जहाजों के ठहरने के लिये पूरी सुविधायें नहीं हैं। उनके व्यापार क्षेत्र घनी और विस्तृत नहीं हैं। प्रशान्त महासागर के तट पर उद्योग धन्धों की उन्नति नहीं हुई है और भीतरी प्रदेश उनसे बहुत दूर हैं। इनमें सैनफ्रैंसिसको महत्वपूर्ण है। उससे लकड़ी, गेहूँ और फल बाहर जाते हैं और चाय, रेशम, और शक्कर पूर्व से आते हैं।

दक्षिण अमेरिका के मुख्य बन्दरगाह रायोडी जैनरो, ब्यूना सायंस, वालपरैजो, **दक्षिण अमेरिका** मांटविडियो ग्वेक्विल तथा बहिया ब्लांका हैं।

ब्यूना सायंस (Buenos Aires) अरजैनटाइन की राजधानी है और प्लेट नदी पर स्थित है। नदी छिछली है इस कारण उसको हमेशा खोदना पड़ता है। यहाँ से गेहूँ, मक्का, तथा तिल बाहर भेजा जाता है। वालपरैजो चिली (Chile) के घनी खनिज प्रदेश का बंदरगाह है। नाइट्रेट, ताँबा, चाँदी और सोना यहाँ से बाहर जाता है। यह रेल द्वारा ब्यूनासायंस से जुड़ा हुआ है। मांटविडियो यूरेग्वे की राजधानी है। यह एक महत्वपूर्ण बंदरगाह है। यह छिछला है इस कारण बड़े जहाजों को दो मील दूर ठहरना पड़ता है। ग्वेक्विल एक अच्छा बंदरगाह है। यहाँ से आइवरी नट (Ivory nuts) और कहवा बाहर भेजा जाता है।

एशिया में करांची, मद्रास, बम्बई, कलकत्ता, रंगून, सिंगापूर और हांगकांग मुख्य बंदरगाह हैं। सिंगापूर स्ट्रेट्स सैटिलमेंट के दक्षिण में है। यहाँ से रबर, टिन, कोपरा, अन्नानास, बाहर भेजा जाता है और लोहे स्टील का सामान, यंत्र, तम्बाकू और पैट्रोलियम यहाँ आता है। हांगकांग कैंटन नदी पर है। कैंटन नदी जो ६०० मील तक स्टीमरों द्वारा खेई जा सकती है चीन की पैदावार को यहाँ लाती है।

यहाँ चावल, शक्कर, कपास, चाय, कोयला, अफीम, तेल इत्यादि का व्यापार होता है।

सड़क, रेल, जहाज तथा हवाई जहाजों के अतिरिक्त डाक की सुविधा, तार तथा केबिल, (समुद्री तार)—बेतार का तार, टेलीफोन तथा रेडियो ने भी व्यापार को बहुत प्रोत्साहन दिया है और समस्त पृथ्वी को एक सूत्र में बाँध दिया है। आज जो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार इतना अधिक बढ़ सका है वह इन सुविधाओं के कारण ही।

नीचे दिए हुए विवरण से यह स्पष्ट हो जावेगा कि आधुनिक सदेशवाहक साधनों की उन्नति अभी थोड़े समय से ही हुई है :—

सन् १८४० में ब्रिटेन में पैनी पोस्ट आरम्भ हुआ।
,, १८४६ में रायटर की न्यूज एजेंसी स्थापित हुई।
,, १८५० में बिजली के द्वारा तार का उपयोग प्रारम्भ हुआ।
,, १८६६ में प्रथमबार अटलांटिक महासागर में केबिल (Cable) डाला गया।
,, १८७४ में अन्तर्राष्ट्रीय पोस्टल यूनियन स्थापित हुई जिसका प्रत्येकदेश सदस्य है।
,, १८७६ में टेलीफोन का उपयोग आरम्भ हुआ।
,, १९०१ में बेतार के तार का उपयोग आरम्भ हुआ।
,, १९०२ में प्रथम बार प्रशान्त महासागर में समुद्री तार डाला गया।
,, १९०७ में अटलांटिक के पार बेतार के तार का प्रबन्ध हुआ।
,, १९२७ में बेतार का टेलीफोन चलाया गया।

आज तो सदेश-वाहक साधनों में इतनी अधिक उन्नति हो गई है कि कुछ मिनटों में ही किसी समाचार को पृथ्वी के प्रत्येक देश में पहुँचा दिया जा सकता है। इससे व्यापार में बहुत सुविधा हो गई है। यदि डाक से पत्र इत्यादि भेजने का व्यय कम हो जाये तथा अन्य सुविधायें प्राप्त हो जायें तो व्यापार को और भी प्रोत्साहन मिल सकता है।

अभ्यास के प्रश्न

१—पनामा नहर का क्या व्यापारिक महत्व है, उससे किस देश के व्यापार को अधिक प्रोत्साहन मिला? विस्तार पूर्वक लिखिए।

२—स्वेज नहर के खुलने से योरोप और पूर्व के व्यापार पर क्याप्रभाव पड़ा? समझा कर लिखिए। स्वेज नहर के व्यापारिक महत्व को बतलाइए।

३—जलमार्ग से माल भेजने में व्यय कम क्यों होता है?

४—पनामा और स्वेज नहर की व्यापारिक मार्ग की दृष्टि से तुलना कीजिए।

५—सेंटो रासैरी कैनाल का जल मार्ग इतना अधिक महत्वपूर्ण क्यों है? विस्तारपूर्वक लिखिए।

६—'कनाडा रेलवे लाइनों की देन है' इस मत की विवेचना कीजिए।

७—अटलांटिक महासागर के समुद्री मार्ग का विवरण दीजिए और उसके व्यापारिक महत्व को बतलाइए।

८—भारत से उत्तरी अमेरिका के प्रशान्त महासागर तक जाने के लिए कौन सा मार्ग सुविधाजनक है उनका वर्णन कीजिए।

९—योरोप और एशिया के जलमार्ग का विवरण दीजिए।

१०—अच्छे बन्दरगाह के लिए किन बातों की आवश्यकता है विस्तारपूर्वक लिखिए।

११—केप आव गुड होप रूट तथा भूमध्यसागर के जल मार्ग की तुलना कीजिए।

१२—उत्तरी अमेरिका के जलमार्ग का वर्णन कीजिए।

१३—व्यापारिक केन्द्रों की उन्नति के लिए कौनसी व्यापारिक सुविधाओं की आवश्यकता है!

१४—नीचे लिखे बन्दरगाहों की उन्नति के कारण बतलाइए—लिवरपूल, न्यूयार्क, हैम्बर्ग, ऐन्टवर्प और सिंगापूर।

तेरहवाँ परिच्छेद

जनसंख्या और नगर

पृथ्वी पर जनसंख्या एक सी नहीं है। कहीं तो जनसंख्या घनी है तो कहीं बिखरी। जनसंख्या का यह वितरण अत्यन्त सामाजिक और आर्थिक महत्व की बात है। कुछ स्थानों में जनसंख्या इतनी घनी है कि यह कल्पना ही नहीं की जा सकती कि वहाँ मनुष्य कैसे आराम से रह सकता है। इसके विपरीत कुछ ऐसे प्रदेश भी मिलेंगे जहाँ कि आबादी इतनी बिखरी हुई है कि मनुष्य का जीवन एकाकी और नीरस सा हो जाता है। कहीं कहीं गाँवों में सैकड़ों मनुष्य प्रति वर्ग मील के हिसाब से निवास करते हैं तो कहीं आबादी प्राय नहीं होती। चीन तथा भारत के मैदानों और योरोप के घने औद्योगिक देशों में जहाँ आबादी बहुत घनी है वहाँ कनाडा व उत्तरी भाग और अमेजन के निचले प्रदेश में आबादी बहुत बिखरी है। यहाँ हम जनसंख्या के घनत्व के सम्बन्ध में विचार करेंगे कि जनसंख्या के घनत्व (Density) में यह अन्तर क्यों है।

जनसंख्या के घनी और बिखरी होने के कारण और उसके परिणाम

जनसंख्या के घनी और बिखरी होने के मुख्यत भौगोलिक कारण हैं। कुछ दशाओं में आबादी के घने अथवा बिखरी होने का कारण स्पष्ट होता है। उदाहरण के लिए ग्रीनलैंड या अतिशीत और अरेबिया अथवा सहारा का अत्यन्त सूखा होना वहाँ की निर्जनता और बिखरी आबादी का मुख्य कारण है। किन्तु कुछ दशाओं में आबादी के घनत्व के कारण अधिक पेचीदा हैं—जैसे उत्तर पश्चिमी योरोप और पूर्वी संयुक्तराज्य अमेरिका। इन भूभागों की घनी आबादी के बहुत से सम्बन्धित कारण हैं। हमें इन सम्बन्धित कारणों और उसके परिणामों का अध्ययन करना है।

जो लोग घनी आबादी अर्थात् बड़े-बड़े केन्द्रों में सटे हुए फ्लैटों और कमरों में चार पाँच मंजिल वाली इमारतों और बिखरे हुए झोपड़ों में रहते हैं उनके सामाजिक जीवन, दृष्टिकोण और कार्य एक से नहीं हो सकते। विस्तृत मैदानों में रहने वाला ग्रामीण नगरों के जीवन और उसकी समस्याओं को नहीं समझता।

घना और बिखरा आबादी के गुण-दोष

जो लोग घनी आबादी में रहते हैं उनमें सामूहिक भावना उदय होती है और बिखरी हुई आबादी में व्यक्ति की भावना जाग्रत होती है। घनी आबादी में रहने वाला व्यक्ति अधिक लोगों से परिचित हो सकता है और जो लोग भाड़ में रहते हैं यदि उनमें तनिक भी महत्वाकांक्षा, साहस और पुरुषार्थ होता है तो वह शीघ्र ही किसी दल या समूह का नेता बन जाता है। घनी आबादी का सब मिलाकर सम्पत्ति अधिक होने के कारण शिक्षा, चिकित्सा और अन्य सामाजिक सुविधायें यहाँ सरलता से उपलब्ध हो सकती हैं। जहाँ आबादी बिखरा होती है वहाँ ये सुविधायें उपलब्ध नहीं हो पातीं और यदि होती भी हैं तो भी दूरी के कारण उनका पूरा उपयोग नहीं हो पाता। व्यक्तियों का नेतृत्व, सामूहिक जीवन और सगठित जीवन घना आबादी की देन है। आज नगरों से ही हमें राजनैतिक, सामाजिक तथा धार्मिक नेतृत्व प्राप्त होता है। यह लोगों के समीप और घने आबादी वाले स्थानों में रहने से जो शिक्षा मिलती है उसका परिणाम है।

किन्तु घनी आबादी में सब गुण ही हों ऐसी बात नहीं है। अधिक घनी आबादी में छोटे-छोटे कम हवादार मकानों, हवा के दूषित होने, गदगी बढ़ने की समस्या खड़ी हो जाती है। स्वास्थ्य-कर खेलों और मनोरंजन के लिए स्थान तक नहीं रहता। इससे बीमारियाँ फैलने, पतन की ओर ले जाने वाले मनोरंजन और अस्वास्थ्यकर आदतें फैलती हैं। घनी आबादी में व्यक्ति भाड़ में डूब जाता है उसके व्यक्तित्व का विकास नहीं हो सकता है और अधिकांश लोग नौकरी करते हैं इस कारण वे आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र न होकर दूसरों पर निर्भर रहते हैं। किसान अथवा पशु पालन करने वाला आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र होता है और भीड़ से दूर रहता है। नगरों में मनोरंजन अधिकतर व्यापारिक होता है। इस कारण मनुष्य अपना बहुत सा समय श्रम रहित कार्यों में व्यय करता है और अपने परिवारवालों के साथ बैठ कर बातचीत करने, पढ़ने, सोचने के लिए कम समय पाता है। विचारों की परिपक्वता एकान्त जीवन से ही आती है और भीड़-भाड़ में नहीं हो सकती। संसार को अधिकांश धार्मिक विचार और दर्शन उन्हीं लोगों से मिले हैं जो एकान्त में रहते थे। रात्रि को खेतों की रखवाली करते समय, दिन में जानवरों को चराते समय मनुष्य के मन में जो विचार उठते हैं उसकी जो सूझ होती है वह शोर-गुल वाले नगरों में रहने वालों को नहीं हो सकती।

किन्तु बिखरी हुई आबादी में रहने वालों को कुछ कठिनाइयाँ भी हैं। ये बहुधा सोचने विचारने वाले और चुप रहते हैं और अच्छे वक्ता नहीं बन पाते किंतु जब

तेरहवाँ परिच्छेद

जनसंख्या और नगर

पृथ्वी पर जनसंख्या एक सी नहीं है। कहीं तो जनसंख्या घनी है तो कहीं बिखरी। जनसंख्या का यह वितरण अत्यन्त सामाजिक और आर्थिक महत्व की बात है। कुछ स्थानों में जनसंख्या इतनी घनी है कि यह कल्पना ही नहीं की जा सकती कि वहाँ मनुष्य कैसे आराम से रह सकता है। इसके विपरीत कुछ ऐसे प्रदेश भी मिलेंगे जहाँ कि आबादी इतनी बिखरी हुई है कि मनुष्य का जीवन एकाकी और नीरस सा हो जाता है। कहीं कहीं गाँवों में सैकड़ों मनुष्य प्रति वर्ग मील के हिसाब से निवास करते हैं तो कहीं आबादी प्राय नहीं होती। चीन तथा भारत के मैदानों और योरोप के घने औद्योगिक देशों में जहाँ आबादी बहुत घनी है वहाँ कनाडा के उत्तरी भाग और अमेज़न के निचले प्रदेश में आबादी बहुत बिखरी है। यहाँ हम जनसंख्या के घनत्व के सम्बन्ध में विचार करेंगे कि जनसंख्या के घनत्व (Density) में यह अन्तर क्यों है।

जनसंख्या के घनी और बिखरी होने के कारण और उसके परिणाम

जनसंख्या के घनी और बिखरी होने के मुख्यत भौगोलिक कारण हैं। कुछ दशाओं में आबादी के घने अथवा बिखरी होने का कारण स्पष्ट होता है। उदाहरण के लिए ग्रीनलैंड का अतिशीत और अरेबिया अथवा सहारा का अत्यन्त सूखा होना वहाँ की निर्जनता और बिखरी आबादी का मुख्य कारण है। किन्तु कुछ दशाओं में आबादी के घनत्व के कारण अधिक पेचीदा है—जैसे उत्तर पश्चिमी योरोप और पूर्वी संयुक्तराज्य अमेरिका। इन भूभागों की घनी आबादी के बहुत से सम्बन्धित कारण हैं। हमें इन सम्बन्धित कारणों और उनके परिणामों का अध्ययन करना है।

जो लोग घनी आबादी अर्थात् बड़े-बड़े केन्द्रों में सटे हुए फ्लैटों और कमरों में चार पाँच मंजिल वाली इमारतों और बिखरे हुए झोपड़ों में रहते हैं उनके सामाजिक जीवन, दृष्टिकोण और कार्य एक से नहीं हो सकते। विस्तृत मैदानों में रहने वाला ग्रामीण नगरों के जीवन और उनकी समस्याओं को नहीं समझता।

जो लोग घनी आबादी में रहते हैं उनमें सामूहिक भावना उदय होता है और बिखरी हुई आबादी में व्यक्ति की भावना जाग्रत होती है। घनी आबादी में रहने वाला व्यक्ति अधिक लोगों से परिचित हो सकता है और जो लोग भीड़ में रहते हैं यदि उनमें तनिक भी महत्त्वाकांक्षा, साहस और पुरुषार्थ होता है तो वह शीघ्र ही किसी दल या समूह का नेता बन जाता है। घनी आबादी का सब मिलाकर सम्पत्ति अधिक होने के कारण शिक्षा, चिकित्सा और अन्य सामाजिक सुविधायें वहाँ सरलता से उपलब्ध हो सकती हैं। जहाँ आबादी बिखरी होती है वहाँ ये सुविधायें उपलब्ध नहीं हो पातीं और यदि होती भी हैं तो भी दूरी के कारण उनका पूरा उपयोग नहीं हो पाता। व्यक्तियों का नेतृत्व, सामूहिक जीवन और संगठित जीवन घनी आबादी की देन है। आज नगरों से ही हमें राजनैतिक, सामाजिक तथा धार्मिक नेतृत्व प्राप्त होता है। यह लोगों के समीप और घने आबादी वाले स्थानों में रहने से जो शिक्षा मिलती है उसका परिणाम है।

घनी और बिखरी आबादी के गुण दोष

किन्तु घनी आबादी में सब गुण ही हों ऐसी बात नहीं है। अधिक घनी आबादी में छोटे-छोटे कम हवादार मकानों, हवा के दूषित होने, गन्दगी बढ़ने की समस्या खड़ी हो जाती है। स्वास्थ्यकर खेलों और मनोरंजन के लिए स्थान शेष नहीं रहता। इससे बीमारियाँ फैलने, पतन की ओर ले जाने वाले मनोरंजन और अस्वास्थ्यकर आदतें फैलती हैं। घनी आबादी में व्यक्ति भीड़ में डूब जाता है उसके व्यक्तित्व का विकास नहीं हो सकता है और अधिकांश लोग नौकरी करते हैं इस कारण वे आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र न होकर दूसरों पर निर्भर रहते हैं। किसान अथवा पशु पालन करने वाला आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र होता है और भीड़ से दूर रहता है। नगरों में मनोरंजन अधिकतर व्यापारिक होता है। इस कारण मनुष्य अपना बहुत सा समय श्रम रहित कार्यों में व्यय करता है और अपने परिवारवालों के साथ बैठ कर बातचीत करने, पढ़ने, सोचने के लिए कम समय पाता है। विचारों की परिपक्वता एकान्त जीवन से ही आती है और भीड़ भाड़ में नहीं हो सकती। संसार को अधिकांश धार्मिक विचार और दर्शन उन्हीं लोगों से मिले हैं जो एकान्त में रहते थे। रात्रि को खेतों की रखवाली करते समय, दिन में जानवरों को चराते समय मनुष्य के मन में जो विचार उठते हैं उसकी जो सूझ होती है वह शोर-गुल वाले नगरों में रहने वालों को नहीं हो सकती।

किन्तु बिखरी हुई आबादी में रहने वालों को कुछ कठिनाइयाँ भी हैं। वे बहुधा सोचने विचारने वाले और चुप रहते हैं और अच्छे वक्ता नहीं बन पाते किन्तु जब

अवसर आता है तो उनमें कार्य करने की आश्चर्यजनक फुर्ती और क्षमता होती है।

जहाँ तक स्वास्थ्य रक्षा का प्रश्न है बिखरी आबादी में रहने वालों का लाभ है। शुद्ध हवा, रोशनी और जगह की वहाँ कमी नहीं होती जैसा शहरों में होता है। किंतु साथ ही वहाँ यह दोष भी है कि चिकित्सा की समुचित व्यवस्था नहीं हो पाती।

ऊपर के विवेचन से हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि साधारण घनी आबादी अधिक श्रेयस्कर है। अब हम उन कारणों का अध्ययन करेंगे जिनका प्रभाव जन संख्या के घनत्व पर पड़ता है क्योंकि उनका व्यापार से भी सम्बन्ध है इस कारण आर्थिक भूगोल के विद्यार्थी को उन कारणों का अध्ययन कर लेना चाहिए।

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि पृथ्वी पर घनी आबादी के कुछ ही प्रदेश हैं शेष में बिखरी हुई आबादी है। गाँवों की आबादी तो खेती की उत्पत्ति पर ही निर्भर है। जहाँ गहरी खेती होती है और प्रति एकड़ पैदावार अधिक होती है वहाँ ग्राम प्रदेशों में आबादी घनी होती है। यह तभी सम्भव है जब उपजाऊ भूमि हो, यथेष्ट वर्षा हो और लम्बा गरम मौसम हो जिसमें फसल उत्पन्न हो सके। चीन, आयरलैंड और पूर्वी भारत के घने आबाद प्रदेश इसके उदाहरण हैं। शक्ति के साधनों और कच्चा माल मिलने की सुविधा शहरों की घनी आबादी का कारण होता है। पश्चिमी योरोप तथा पूर्वी संयुक्तराज्य अमेरिका के औद्योगिक प्रदेश इसके उदाहरण हैं। नील नदी की घाटी में घनी आबादी का मुख्य कारण सिंचाई की सुविधा है। घनी आबादी वाले देश घने आबाद रहते हैं। चाहे उसमें अधिक उपजाऊ प्रदेश खाली ही क्यों न पड़े हों। इसका मुख्य कारण है कि मनुष्य अपने निवास-स्थान को छोड़ना पसन्द नहीं करता। जब वह विवश हो जाता है तब अवश्य ही वह अपना निवास-स्थान छोड़ता है। यही कारण है कि घने आबाद प्रदेशों से कम आबादी वाले प्रदेशों को प्रवास बहुत धीरे होता है। यही नहीं घनी आबादी वाले प्रदेशों से कम आबादी वाले प्रदेशों में प्रवास को राजनैतिक कारण तथा जाति द्वेष भी रोकते हैं। उदाहरण के लिए अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड इत्यादि देशों में भारतीयों और चीनियों को बसने नहीं दिया जाता।

नगरों के बसने के कारण

नगर स्वयं ही उदय नहीं हो जाते। उनके बसने के कुछ कारण होते हैं। व्यापार नगरों के निर्माण में मुख्यतः सहायक होता है किन्तु बहुधा ऐसा भी होता है कि नगर के बसने का मूल कारण और कुछ होता है और जब नगर बस जाता है तो वहाँ व्यापार की वृद्धि होती है। हम संक्षेप में यहाँ नगर बसने के कारणों का उल्लेख करेंगे।

१—धार्मिक स्थान—धार्मिक स्थान महत्वपूर्ण नगर बन जाते हैं। धार्मिक भावना से प्रेरित होकर लाखों व्यक्ति वहाँ तीर्थ यात्रा करने आते हैं इस कारण फिर वहाँ व्यापार इत्यादि की भी वृद्धि हो जाती है। मक्का, मदीना रेगिस्तान में इसी कारण नगर बन सके, बनारस तथा हरिद्वार भी धार्मिक स्थान होने के कारण ही महत्वपूर्ण हैं।

२—स्वास्थ्यप्रद स्थान—बहुत से स्थान इस कारण नगर बन गए हैं कि वे स्वास्थ्यप्रद हैं या मनोरजन के स्थान हैं या उनका दृश्य अच्छा है। जहाँ लोग कल कारखानों के नगरों में काम करने के पश्चात् छुट्टी मनाते हैं और थकावट को दूर करते हैं। पहाड़ी स्थान तथा समुद्र के किनारे छोटे छोटे स्थान इसी कारण नगर बन जाते हैं। भारत म नैनीताल, मसूरी इत्यादि इसी कारण महत्वपूर्ण बन गये हैं कि वे गर्मियों में भी ठडे रहते हैं। गर्मी के दिनों म लाखों आदमी इन पहाड़ी स्थानों पर जाते हैं। योरोप में समुद्र के किनारे इसी प्रकार बहुत से स्थान हैं जहाँ लोग छुट्टियों में रहने जाते हैं।

३—खनिज केन्द्र—जहाँ खनिज पदार्थ निकलते हैं वहाँ भी नगर बस जाते हैं। पश्चिमी आस्ट्रेलिया में कालगूर्ली और कालगूर्डी सोने की खानों के केन्द्र हैं। वे मरुभूमि में बसे हुए हैं यद्यपि उन नगरों के लिए ४०० मील दूरी से पानी पाइप लाइनों द्वारा ले जाना पड़ता है। प० बगाल और बिहार की कोयले की खानों के प्रदेश में बहुत से नगर बस गए हैं।

४—जिस स्थान पर दो प्रदेशों का मिलन होता हो वहाँ भी नगर बस जाता है क्योंकि वहाँ उन दोनों देशों की पैदावार का विनिमय होता है। उदाहरण के लिए आल्पस के नीचे मिलन नगर बसा है। यहाँ इटली के मैदान तथा आल्पस प्रदेश की पैदावार का विनिमय होता है।

५—जहाँ जल विद्युत् तैयार की जाती है वहाँ भी नगर बस जाते हैं। उदाहरण के लिये सयुक्तराज्य अमेरिका में सेंटपाल, नफैलो, मिनियापोलिस इत्यादि।

६—रेलवे जकशन और बन्दरगाह बहुधा बड़े नगर बन जाते हैं क्योंकि वे बड़ी व्यापारिक मडी बन जाते हैं जहाँ माल आता और जाता है।

७—राजधानियाँ भी बड़े नगर बन जाते हैं। उदाहरण के लिए देहली, वाशिंगटन, पेरिस इत्यादि।

८—बहुत से नगर इस कारण महत्वपूर्ण हैं क्योंकि उनका सैनिक दृष्टि से महत्व है और वहाँ फौजी छावनियाँ हैं उदाहरण के लिए एडिन, पेशावर इत्यादि।

९—पिछले दिनों में महत्वपूर्ण शिक्षा केन्द्र भी बड़े नगर बन गए हैं। उदाहरण के लिए आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज।

१०—दो घाटियों का जकशन जो बहुधा दो नदियों का जकशन भी होता है महत्वपूर्ण नगर बन जाता है।

११—दो सड़कों का जकशन भी शीघ्र नगर बन जाता है क्योंकि वह व्यापारिक मंडी बन जाता है।

अभ्यास के प्रश्न

१—घनी तथा बिखरी आबादी के गुण-दोष लिखिए।

२—घनी आबादी के होने के मुख्य कारण बतलाइए।

३—नगरों के बढ़ने के मुख्य कारणों की विवेचना कीजिए।

४—मक्का, नैनीताल, देहली तथा कानपुर महत्वपूर्ण नगर क्यों बन गए?

चौदहवाँ परिच्छेद

मुख्य व्यापारिक देश

यदि हम पृथ्वी के प्रत्येक भाग के आर्थिक भूगोल का अध्ययन करें तो हमको ज्ञात होगा कि दो प्रकार के देश हैं। एक तो वे देश जिनकी औद्योगिक उन्नति हो चुकी है और जो तैयार माल बाहर भेजते हैं। दूसरे वे देश जो कृषि-प्रधान देश हैं और जो कच्चा माल तथा खाद्य पदार्थ बाहर भेजते हैं। सर्व प्रथम औद्योगिक क्रान्ति योरोप में हुई इस कारण योरोपीय देशों में औद्योगिक उन्नति हो गई। औद्योगिक उन्नति के फल स्वरूप इन देशों में पूँजी इकट्ठी होने लगी और आबादी तेजी से बढ़ने लगी। इस क्रान्ति से योरोपीय देश शक्तिशाली हो गए, उन्होंने एशिया, अफ्रीका, तथा अमेरिका महाद्वीपों को ढूँढ़ निकाला और उन पर अपना राजनैतिक प्रभुत्व स्थापित कर लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि इन औद्योगिक योरोपीय देशों को कच्चा माल प्राप्त करने तथा अपने तैयार माल को बेचने के क्षेत्र अनायास ही मिल गए। इस प्रकार औद्योगिक क्रान्ति सफल हुई और योरोपीय देश औद्योगिक उन्नति की दौड़ में बहुत आगे निकल गए। अन्य महाद्वीप राजनैतिक दासता के कारण अपने उद्योग धन्धों की उन्नति न कर सके। वे पिछड़े रहे। किन्तु अब क्रमशः पिछड़े हुए देश भी औद्योगिक उन्नति करने का प्रयत्न कर रहे हैं। फिर भी अभी तक एशिया, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया तथा अमेरिका मुख्यतः कृषि प्रधान देश ही बने हुये हैं और औद्योगिक देशों को कच्चा माल देते हैं। हाँ संयुक्तराज्य अमेरिका तथा जापान अवश्य ही प्रथम श्रेणी के औद्योगिक देश बन गए हैं।

एशिया

एशिया का महाद्वीप संसार के सब महाद्वीपों से बड़ा है। इसका क्षेत्रफल लगभग १७२ लाख वर्ग मील है। पृथ्वी की लगभग एक तिहाई भूमि और आधी जनसंख्या का यह भूभाग निवास स्थान है। संसार की प्राचीन सभ्यताओं का जन्म इसी महाद्वीप के देशों में हुआ। एशिया देश किसी समय अत्यन्त समृद्धिशाली था। संसार में भारत और चीन की कारीगरी की धूम थी। किन्तु आज एशिया औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। परन्तु एशिया के कुछ देशों में औद्योगिक उन्नति के सभी साधन मौजूद हैं और भविष्य में वह समय शीघ्र आने वाला है जब कि यह महाद्वीप भी औद्योगिक उन्नति करेगा।

एशिया की बनावट कुछ विचित्र है। इस महाद्वीप के मध्य में पामीर का ऊँचा पठार है। जिससे निकलकर दो पर्वत मालायें दोनों ओर (पूर्व-पश्चिम) को फैलती हैं। पूर्वी पर्वतमाला एक सा चली गई है किन्तु पश्चिम में यद्यपि श्रेणियाँ बहुत हैं किन्तु ऊँची और एक-सी नहीं हैं। इन टूटी-फूटी पर्वत मालाओं की अनेक श्रेणियों ने पश्चिम में ईरान का पठार तथा अन्य कम ऊँचे प्रदेश बहुतायत से बना दिये हैं। यही कारण है कि अफगानिस्तान, फारस तथा एशिया माइनर अधिक उन्नति कर सके। पूर्व में पर्वत श्रेणी बहुत ऊँची तथा एक सी चली गई है। इस श्रेणी की दो शाखायें हैं। एक हिमालय तथा तिब्बत की श्रेणियाँ, दूसरी क्यूनलुन, स्टैनोवा तथा याबलोनिया की श्रेणियाँ जो उत्तर की ओर जाती हैं। इन ऊँची पर्वत श्रेणियों के मध्य में तथा इनके दक्षिण में विस्तृत उपजाऊ मैदान हैं जिनमें घनी जनसंख्या निवास करती है। उत्तर में साइबेरिया का विशाल मैदान है जहाँ की जलवायु बहुत ही ठंडी है। परन्तु सोवियत रूस की सरकार के प्रयत्नों के फलस्वरूप यहाँ गमनागमन के साधनों की उन्नति हो रही है और खेती की तो तीव्र गति से उन्नति की जा रही है। भविष्य में साइबेरिया अनन्त राशि में गेहूँ तथा अन्य अनाज उत्पन्न करेगा।

पश्चिम में ईरान का पठार है जो अधिकांश शुष्क और पथरीला है। पश्चिम में अरब का रेगिस्तान है। आर्थिक दृष्टि से पश्चिमी भाग महत्त्वहीन है। अधिकांश जनसंख्या खेतीबारी और विशेषकर पशुपालन से निर्वाह करती है। हाँ ईरान, इराक तथा पश्चिमी मरुभूमि में तेल मिलता है। इसी तेल के कारण फिलिस्तीन, इराक, फारस तथा अन्य प्रदेशों में काफी राजनैतिक उथल पुथल हुई है।

एशियाई देश पिछली शताब्दी में राजनैतिक दृष्टि से या तो योरोपीय जातियों की अधीनता में रहे हैं अथवा उनके प्रभाव क्षेत्र में हैं। इस कारण वे अपने उद्योग धन्धों की उन्नति ही न कर सके। परन्तु बीसवीं शताब्दी में एशियाई राष्ट्रों में नव जागरण हुआ है और वे अपने उद्योग धन्धों की उन्नति करने में विशेष रूप से सचेष्ट हैं। फलस्वरूप अफगानिस्तान, ईरान, तथा अन्य देशों में आधुनिक ढंग के कारखाने स्थापित किए जा रहे हैं।

साइबेरिया ही एक ऐसा विशाल किन्तु आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ भूभाग है जो भविष्य में खेती की दृष्टि से उन्नति करेगा। किन्तु पश्चिम एशियाई देश पथरीले, शुष्क एवं खनिज पदार्थों से हीन हैं। केवल ईरान तथा इराक के क्षेत्र में तेल निकलता है। अन्यथा इन प्रदेशों में खेती-बारी स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये होती है किन्तु यहाँ का मुख्य धन्धा पशु पालन है।

पाँच बड़े द्वीपों और ४००० छोटे द्वीपों का यह देश एक पर्वतमाला का बचा हुआ भाग है। इसका क्षेत्रफल १,५१,००० वर्ग मील है।

जापान

यह ब्रिटिश द्वीपसमूह से कुछ बड़ा है। सारा देश पहाड़ी है और अधिकांश पहाड़ ज्वालामुखी हैं। देश में ५० से अधिक प्रज्ज्वलित ज्वालामुखी हैं। भूकम्पों के द्वारा जापान की बहुत हानि हो चुकी है। ये ज्वालामुखी पहाड़ जंगलों से भरे हुए हैं इस कारण देश के भीतरी भाग में न तो अधिक आबादी ही है और न उद्योग धंधे और खेती-बारी के लिये सुविधायें हैं।

इस देश का धरातल एक सा नहीं है। भीतर की ओर पहाड़ फैले हुए ही हैं। पहाड़ी ढाल बहुत अधिक हैं। इस कारण वर्षा के दिनों में नदियाँ बड़े वेग से बहकर पहाड़ों की मिट्टी को बहाकर समुद्रतट के समीप जमा देती हैं। यही कारण है कि जापान के पास जल विद्युत् का एक विशाल कोष है। अत तटीय मैदान बहुत उपजाऊ है जहाँ आबादी घनी है। देश का धरातल ऊबड़ खाबड़ होने के कारण रेलों तथा मार्गों के बनाने में रुकावट डालता है। धरातल का बनावट ठीक न होने के कारण रेलें बहुत हेर फेर से ले जाई गई हैं। जापान की नदियाँ सड़कों के निकालने में बाधक हैं। वर्षा के दिनों में इन नदियों में भयंकर बाढ़ आता है। बाढ़ आने से गाँवों को बहुत हानि पहुँचता है और सड़कें व्यर्थ हो जाती हैं। तटीय मैदानों में समुद्रीय मार्ग की सुविधा तथा तटीय रेलों के कारण बड़े बड़े औद्योगिक केन्द्र तथा व्यापारिक केन्द्र समुद्रतट के समीप ही हैं। भीतर की ओर गमनागमन के साधनों की असुविधा है।

जापान की जलवायु दक्षिण से उत्तर को ओर बदलती जाती है तथा पूर्व और पश्चिम की जलवायु में भी बहुत भिन्नता है। इसका कारण यह है कि जापान के द्वीप दक्षिण अक्षांशों (S Latitudes) से उत्तर अक्षांशों (N Latitudes) तक फैले हुए हैं। उत्तर में उत्तर एशिया की ठंडी हवायें बहती हैं जो इसको और भी अधिक ठंडा बना देती हैं। पूर्व में गरम समुद्र की धारा बहने के कारण पूर्वी भाग गरम रहता है। जापान का उत्तरी-पश्चिमी भाग जाड़ों में बहुत ठंडा रहता है क्योंकि साइबेरिया की ठंडी हवायें वहाँ चलती हैं। परन्तु दक्षिणी पूर्वी भाग जाड़ों में कम ठंडा रहता है। पहाड़ों की श्रेणियाँ ठंडी हवा को रोक लेती हैं और पूर्व में गरम धारा बहती है। गरमियों में मानसून दक्षिण से चलती है इस कारण दक्षिण पूर्व में सबसे अधिक वर्षा होती है।

जापान में जलवायु की भिन्नता के कारण बहुत तरह के वन पाये जाते हैं। उत्तरी भाग में शीतोष्ण कटिबन्ध के वन (कोणधारी) पाये जाते हैं जिनमें पाइन, फर (सनोवर), तथा साइप्रेस इत्यादि के वृक्ष बहुत हैं। दक्षिण में कपूर, बलूत के वृक्ष

अधिक मिलते हैं। फारमोसा में ऊष्ण कटिबन्ध के वृक्ष मिलते हैं। यहाँ के वनों में बाँस, वटवृक्ष और कपूर के वृक्ष बहुत पाये जाते हैं। जापान में कागज के काम का शहतूत के वृक्ष बहुत पाये जाते हैं जिनपर पर रेशम के कीड़े भी पाले जाते हैं। इस लकड़ी से छातों तथा अन्य वस्तुओं के लिये कागज तैयार किया जाता है।

यद्यपि जापान की अधिकाश भूमि पथरीली है और वनों तथा एक प्रकार की बाँस जैसी घास से आच्छादित होने के कारण खेती के योग्य नहीं है परन्तु फिर भी खेती यहाँ का मुख्य धधा है। देश के समस्त क्षेत्रफल का केवल १६% खेती के योग्य है। खेती यहाँ बहुत गहरी होती है, छोटे-छोटे खेतों पर किसान बहुत परिश्रम के साथ खेती करते हैं। खाद का बहुत अधिक उपयोग किया जाता है जिससे प्रति एकड़ अधिक से अधिक धान उत्पन्न किया जा सके। यहाँ की मुख्य पैदावार चावल और रेशम है। ज्वार, बाजरा, मक्का तथा जौ कम उपजाऊ भूमि पर उत्पन्न किया जाता है जहाँ सिंचाई की सुविधा नहीं होती। उत्तर के ठडे प्रदेश में गेहूँ और सोयाबीन उत्पन्न किये जाते हैं। पहाड़ों के ढालों पर (विशेषकर प्रशान्त महासागर की ओर) चाय के बाग हैं। चाय के बाग टोकियो से नागोया तक फैले हुए हैं। जापान चाय उत्पन्न करने वाले देशों में पाँचवाँ स्थान रखता है किन्तु यहाँ भारत या सीलोन की भाँति चाय के बड़े-बड़े बाग नहीं हैं केवल छोटे-छोटे एक दो एकड़ के खेत हैं जहाँ चाय के पेड़ पैदा किये जाते हैं। जापान की आबादी बहुत घनी है। अतएव खाद्य पदार्थ उत्पन्न करने में ही किसान सारी शक्ति लगाता है। कच्चा माल, जापान में रेशम के अतिरिक्त उत्पन्न नहीं किया जाता है। जापान ससार में सबसे अधिक कच्चा रेशम उत्पन्न करता और विदेशों को भेजता है। दक्षिणी जापान की गरम तथा नम जलवायु रेशम के कीड़े पालने के लिए सर्वथा उपयुक्त है।

शहतूत के वृक्ष को यहाँ बढ़ने नहीं देते वरन छाँट-छाँट कर झाड़ी बना देते हैं जिससे वह अधिक से अधिक पत्तियाँ उत्पन्न कर सके। भूमि की कमी के कारण किसान शहतूत की झाड़ियों के बीच में अपनी फसलें बोता है। अन्दर के पहाड़ी ढालों पर जहाँ और कुछ पैदा नहीं हो सकता शहतूत का पेड़ जम आता है और कीड़े पालने का धन्धा होता है।

जापान के उत्तरी भाग तथा पहाड़ी मैदानों को छोड़कर बाकी सब मैदानों में चावल उत्पन्न होता है। चावल की खेती के लिए यहाँ सिंचाई की आवश्यकता होती है। ऊँचे मैदानों में चावल बहुत कम होता है। लगभग एक तिहाई खाद्य

की भूमि पर वर्ष में दो फसलें चावल की उत्पन्न की जाती हैं। शेष भूमि पर केवल एक फसल उत्पन्न की जाती है। जापान में पशुपालन अधिक नहीं होता। इसका कारण यह है कि बाँस की घास जो समस्त देश में पाई जाती है दूसरी घास को उगने नहीं देती और पशु इस घास को खाते नहीं हैं। फिर भी पहाड़ी मैदानों पर पशु चराने का धन्धा होता है। ऊँचे मैदानों पर जहाँ सिंचाई की सुविधा नहीं है गेहूं, जौ, ज्वार, बाजरा, मक्का और आलू उत्पन्न होता है।

जापान संसार में चावल उत्पन्न करने वालों में तीसरा स्थान रखता है। फिर भी जापान प्रति वर्ष बहुत सा चावल मँगाता है। करोड़ों जापानियों का भोजन केवल चावल और मछली है। जापानी प्रातःकाल नाश्ते में, दोपहर के भोजन में और रात्रि के भोजन में चावल ही खाते हैं। चावल ऊँचे प्रदेशों और नीचे मैदानों पर उत्पन्न होता है। जितनी भूमि पर खेती होती है उसके ५१ % भूमि पर चावल उत्पन्न होता है।

चावल की खेती

एप्रिल के महीने में धान को नर्सरी के पौधे में बो दिया जाता है और मई महीने में नर्सरियों में धान के पौधे लहलहाने लगते हैं। जब धान नर्सरियों में उगता है खेतों को जोतने में लगे रहते हैं। जून के महीने में धान के पौधों को नर्सरियों से उखाड़ कर खेतों में लगाया जाता है। उस समय खेतों में बच्चे, स्त्री पुरुष सभी लगे रहते हैं और अक्टोबर और नवम्बर में धान को काटा जाता है। जाड़े में धान के खेतों पर गेहूँ और जौ उत्पन्न किया जाता है।

भोज्य पदार्थों को यदि छोड़ दें तो जापान की मुख्य पैदावार शहतूत है। शहतूत के पत्तों पर रेशम के कीड़े को पालना यहाँ के किसानों का मुख्य धन्धा है। शहतूत का वृक्ष हान्स्यू द्वीप के मध्य में बहुत अधिक होता है। जापान के उत्तरी भाग में अधिक ठंड पड़ने के कारण बसंत में शहतूत की पत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं। इस कारण उत्तर में यह धन्धा महत्वपूर्ण नहीं है। रेशम के धन्धे की इतनी अधिक उन्नति का कारण यहाँ सस्ते मजदूरों का होना तथा राज्य का प्रोत्साहन है। इसके अतिरिक्त कुछ तम्बाकू, सन और लोहा भी यहाँ उत्पन्न होता है।

जापान में मछली बहुत खाई जाती है। यहाँ के समुद्र में बहुत प्रकार की मछलियाँ पाई जाती हैं। समुद्र तट के टूटे-फूटे होने के कारण मछलियाँ पकड़ने में सुविधा होती है। समुद्र तट के लाखों मनुष्य इस धन्धे में लगे हुए हैं। किसान भी इस धन्धे को करते हैं। यहाँ हैरिंग (Herring), मैकेरेल (Mackerel), सारडीन (Sardine) तथा पीली पूँछ वाली मछली बहुत पाई जाती है। उत्तर प्रशान्त महासागर में ह्वेल (Whale) तथा सील (Seal) भी पकड़ी जाती है।

जापान में खनिज पदार्थों की बहुत कमी है। खनिज पदार्थों की दृष्टि से जापान निर्धन देश है। कोयला जापान में कम पाया जाता है और जो कुछ

का कोयला है वह घटिया है। जो कुछ भी कोयला जापान में पाया जाता है वह होकैडो (Hokkaido) तथा क्यूशू प्रदेशों में मिलता है। यद्यपि जापान में
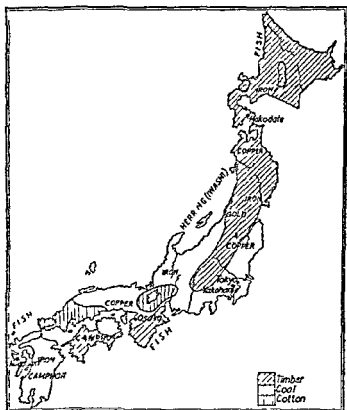
जापान के औद्योगिक क्षेत्र

कोयला कम है परन्तु प्रकृति ने जल शक्ति बहुत प्रदान की है। जापान ने अपनी जल शक्ति का खूब ही उपयोग किया है। मध्य-हान्शू के पहाड़ों से निकलने वाली नदियों व झरनों से बहुत अधिक बिजली उत्पन्न की जाती है। इस बिजली का प्रशान्त महासागर के तट पर टोकियो तथा नोबी के मैदानों में स्थित औद्योगिक केन्द्रों में उपयोग होता है। प्रकृति ने कोयले की कमी को जल शक्ति कर दे पूरा कर दिया है।

जापान में अन्य औद्योगिक देशों की अपेक्षा लोहा भी कम है। केवल दो क्षेत्रों में लोहा मिलता है—(१) उत्तर-पूर्वी हान्शू में कामेशी (Kamaishi)

की खानें, तथा दूसरी पश्चिमी होकेडो में कुचान की खानें। जापान में ताँबा भी मिलता है। इनके अतिरिक्त इचिगो तथा यूगो (Echigo & Ugo) की खानों से थोड़ा मिट्टी का तेल भी निकलता है। जापान में जो थोड़ा लोहा निकलता है उससे देश की माँग पूरी नहीं हो सकती, इस कारण लोहा बाहर से मँगाना पड़ता है।

जापान में उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में आधुनिक ढंग के कारखानों की स्थापना प्रारम्भ हुई और बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में उसने आश्चर्यजनक औद्योगिक उन्नति कर ली। वहाँ म खनिज पदार्थों की कमी है तथा कच्चा माल भी वह उत्पन्न नहीं करता फिर भी उसने इतनी शीघ्र औद्योगिक उन्नति कर ली यह वास्तव में आश्चर्य की बात मालूम पड़ती है। वहाँ की औद्योगिक उन्नति के मुख्य तीन कारण हैं जिनसे वहाँ के उद्योग धन्धों की उन्नति सम्भव हो सकी।

(१) सस्ती जल शक्ति की अधिकता (२) कुशल सस्ते मज़दूरों का बहुतायत जिन्हे काम की आवश्यकता थी (३) तैयार माल की खपत के लिए चीन और भारत जैसे विशाल देशों का समीप होना। यदि देखा जाये तो सस्ते और कुशल मजदूरों की बहुतायत ही वहाँ की औद्योगिक उन्नति का मुख्य कारण है।

रेशम का धन्धा

जापान में रेशम का धन्धा सब से अधिक महत्वपूर्ण है। इसमें काम करने वाले किसान भी हैं और औद्योगिक मज़दूर भी। रेशमा कीड़े का पालन करना तथा ककून इकट्ठा करना किसान का धन्धा है और रेशमी कारखानों में मजदूर काम करते हैं। चावल के उपरान्त रेशम के कीड़े पालना ही जापानी किसान का मुख्य कार्य है।

जापान यद्यपि चीन से कम रेशम उत्पन्न करता है किन्तु जापान का रेशमी धन्धा अधिक वैज्ञानिक ढंग से किया जाता है और अधिक उन्नत है। सरकार ने रेशम के धन्धे को उन्नत करने का विशेष प्रयत्न किया है। चीन में रीलिंग इत्यादि हाथ से होता है किन्तु जापान में वाष्प द्वारा कारखानों में होता है।

रेशम की रीलिंग के लिए जापान में नीचे लिखी विशेष सुविधायें हैं। (१) शुद्ध जल की बहुतायत (रेशम के कारखानों को पानी की बहुत आवश्यकता होती है)। (२) धधा रेशम उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों म केन्द्रित है। दक्षिण और दक्षिण-पूर्व के तराय नीचे मैदानों म अपेक्षाकृत ठंडा और सूखा वायु होती है।

जापान ने रेशम के उत्पन्न करने में विशेष उन्नति की है और रेशम की रीलिंग करने के लिये एक विशेष पद्धति निकाली है जिससे रेशम अधिक चमकदार और सुन्दर हो जाता है जिसकी संयुक्तराज्य अमेरिका में बहुत खपत है। जापान जितना रेशम बाहर भेजता है उसका ६५% संयुक्तराज्य अमेरिका को जाता है।

जापान में रेशमी कपड़े तैयार करने का धंधा अत्यन्त महत्वपूर्ण है। रेशमी कपड़ा आज भी बहुत कुछ हाथ-कर्घों से बुना जाता है, परन्तु आधुनिक ढंग के कारखाने भी कपड़ा तैयार करते हैं। पिछले कुछ वर्षों में नकली रेशम का धन्धा भी जापान में बहुत उन्नति कर गया। रेशमी कपड़ा तैयार करने वाले केन्द्रों में फूकी (Fukui) कानोज़ीवा (Kanoziva) तथा कवामाटा (Kwamata) मुख्य हैं। ऊनी कपड़े का धन्धा भी तीव्र गति से उन्नति कर रहा है और जापान आस्ट्रेलिया के ऊन का प्रमुख खरीदार बन गया है। इन धन्धों से भी अधिक महत्वपूर्ण धन्धा सूती कपड़े का है। बढ़िया सूत कातने के लिये कपास संयुक्तराज्य अमेरिका से मँगाई जाती है। सूती कपड़े के धन्धे के मुख्य केन्द्र ओसाका(Osaka) कोब (Kobe) याकोहामा (Yakohama) और टोकिओ (Tokio) हैं। जापान में सूती धन्धे की आश्चर्यजनक उन्नति के नीचे लिखे कारण हैं —(१) यथेष्ट सस्ते मजदूर, (२) चीन तथा भारत इत्यादि पूर्वी देशों के विस्तृत बाजारों का पास होना (३) घटिया और बढ़िया कपास को मिला कर बारीक सूत कातने की पद्धति का आविष्कार, (४) राज्य द्वारा धन्धे को आर्थिक सहायता, (५) सूती कपड़े की बिक्री का उत्तम संगठन। जापान में खिलौने बनाने का धन्धा बहुत उन्नति कर गया है। आज जापान खिलौने बनाने में संसार का प्रमुख देश बन गया है। ये खिलौने अन्य बड़े धन्धों के बचे हुए कच्चे माल तथा सैलूलौज से बनाये जाते हैं। पिछले वर्षों में जापान ने स्पात के अन्य सामान, तथा मशीनें बनाने में भी यथेष्ट प्रगति की है। इनके अतिरिक्त नागासाकी, कोब तथा टोकिओ में जहाज बनाने का धन्धा भी तेजी से बढ़ रहा है। ऊपर वर्णित धन्धे तो उन्नत अवस्था में हैं ही, परन्तु पिछले कुछ वर्षों से चमड़े तथा शक्कर का धन्धा भी उन्नति करता जा रहा है।

१९१४ के युद्ध के समय जापान में लोहे और स्पात का धन्धा उन्नति कर गया क्योंकि बाहर से लोहा और मशीनें आ नहीं सकती थीं। किन्तु जापान में धन्धे के लिए यथेष्ट लोहा नहीं है इस कारण लोहा मंचूरिया, चीन, स्ट्रेटसैटिलमेंट से मँगाना पड़ता है। जापान में कुल लोहे का अनुमान ४०,०००,००० टन है। थोड़ा लोहा चोजन में भी मिलता है। जापान की निर्धनता का तो इसी से पता चलता है कि संयुक्तराज्य अमेरिका में जितना लोहा एक वर्ष में निकलता है वह इससे अधिक है। जापान में कुल अनुमानित कोयला ८,०००,०००,००० टन है किन्तु वह इतना घटिया है कि उसका कोक नहीं बनाया जा सकता। जापान कोयला भी चीन और मंचूरिया (मचकाऊ) से मँगाता है। जहाँ तक लाइमस्टोन (चूने के पत्थर) का प्रश्न है इसकी जापान में अधिकता है।

१६१४ के युद्ध समय से कागज का धन्धा भी जापान में उन्नति कर गया है। आज जापान संसार का प्रमुख कागज उत्पन्न करने वाला देश बन गया है और चीन को कागज भेजता है।

कागज का धन्धा

जापान में दो प्रकार का कागज का धन्धा है। एक तो हाथ से कागज घरों में बनाया जाता है दूसरे कारखानों द्वारा कागज तैयार किया जाता है। जापान में पिछले एक हजार वर्षों से हाथ से कागज बनाने का धन्धा होता आया है। हाथ के धन्धे में कागज शहतूत के पेड़ को भीतरी छाल से तैयार किया जाता है। हाथ का बना कागज बहुत मोटा, सुन्दर, चिकना और टिकाऊ होता है।

आधुनिक ढंग से कागज बनाने के धंधे के लिए नीचे लिखी सुविधायें जापान में उपलब्ध हैं —

(१) हास्यू, होकैडो में कोणधारी वनों की बहुतायत,

(२) जल प्रपातों (Waterfalls) की बहुतायत,

(३) आधुनिकतम बढ़िया यंत्रों का उपयोग,

(४) बाहर से आने वाले कागज पर भारी कर।

(५) देश में बढ़ती हुई कागज की माँग।

यही कारण है कि जापान में कागज बनाने के आधुनिक ढंग के बहुत से कारखाने स्थापित हो गए और यह धंधा पनप उठा।

रासायनिक धंधा —जापान में रासायनिक (Chemical) धन्धा भी पिछले दिनों में बहुत उन्नति कर गया है। संसार में जितना प्राकृतिक कपूर तथा मैन्थल कपूर तैयार होता है वह सब का सारा जापान में तैयार होता है। जापान का इस धन्धे पर एकाधिपत्य है। इसके अतिरिक्त यहाँ कोलतार, गंधक का तेज़ाब, आयोडीन (Iodine) पोटेशियम आयोडाइड (Potassium Iodide) तथा रासायनिक खादें (Fertilisers) मुख्य हैं।

जापान का प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र टोकियो से नागासाकी तक फैला हुआ है। यह क्षेत्र बहुत अधिक घना आबाद है और मुख्य धन्धे इसी क्षेत्र में केन्द्रित हैं। इस प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र के उत्तर में रेशम का धंधा विशेष रूप से केन्द्रित है। जापान का विदेशी व्यापार विशेषत: चीन, भारत तथा संयुक्तराज्य अमेरिका से होता है। जापान के मुख्य बन्दरगाह याकोहामा, कोबे, ओसाका तथा नागासाकी हैं।

जापान पिछले ४० वर्षों में दो ओर विशेष प्रयत्नशील था। एक तो अपने उद्योग धंधों की तेजी से उन्नति करना दूसरे अपने साम्राज्य को बढ़ाना। जापानी राज्य शक्ति पिछले वर्षों में उद्योग धंधों को प्रोत्साहन देने तथा चीन महाराष्ट्र

को दूर जाने म प्रयत्नशील रही। इसका मुख्य कारण यह था कि जापान का जन संख्या बढ़ रहा या उसको काम देने के लिए औद्योगिक उन्नति की आवश्यकता थी परन्तु खनिज पदार्थों तथा कच्चे मालों की कमी के कारण तथा तैयार माल के लिए एशियाई बाजारों पर एकाधिपत्य जमा लेने के उद्देश्य से जापान ने पूर्वी एशिया को अपने प्रभुत्व म लाने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया। पिछले वर्षों में जापान का जो भयकर साम्राज्यवादी स्वरूप हमारे सामने आया उसका कारण यही था। किन्तु दूसरे महायुद्ध (१९३९-४५) में पराजित हो जाने के फलस्वरूप तथा नगरों के बम्ब वर्षा से ध्वस हो जाने के कारण जापान के धन्धों को बहुत हानि पहुँचा है। उसके धधे नष्ट हो गए। किन्तु अब जापान फिर अपने धन्धों को जावित करने का प्रयत्न कर रहा है।

चीन

चीन एक विशाल देश है। इसका अधिकाश पहाड़ों से घिरा है। पूर्व में समुद्रतट के समीप तथा नदियों की घाटियों में मैदान हैं। चीन प्राकृतिक दृष्टि से तीन भागों में बाँटा जा सकता है। उत्तरी चीन, मध्य चीन और दक्षिणी चीन। उत्तरी चीन के पूर्वी भाग में चौड़ा तटीय मैदान है और अन्दर की तरफ ऊँचा प्रदेश है। इस भाग में ह्वागहो नदी बहती है। पर्वतीय भाग में नदियों की घाटी पीली मिट्टी (Loess Soil) से ढकी हुई है। पीली मिट्टी बहुत उपजाऊ है। यह मिट्टी हवाओं द्वारा लाई गई है और ह्वागहो नदी के मैदानों पर बिछा दी गई है।

ह्वागहो नदी व्यापारिक मार्ग की दृष्टि से काम की नहीं है क्योंकि नदी म रेता अधिक बहकर आता है। नदी का धरातल ऊँचा हो जाता है। इस कारण नावें उसमें नहीं चल सकतीं।

मध्य चीन यागटिसी कियाग नदी का प्रदेश है। इस प्रदेश का आर्थिक महत्व यागटिसी कियाग नदी पर निर्भर है। यह प्रदेश पश्चिम मे तिब्बत के ऊँचे पठार से क्रमश. नीचा होता गया है, और पूर्व में मैदान हैं। इस प्रदेश के प्रान्त भिन्न भिन्न ऊँचाई पर हैं। पश्चिम में जैचुआन का प्रान्त सबसे ऊँचा है, परन्तु उसके मध्य में लाल मिट्टी वाला (Red Basin) नीचा मैदान है। इसके पूर्व में हूपेह तथा हूनान कुछ कम ऊँचे हैं। इसके भी पूर्व कियांगसी तथा आन्हवी के प्रान्त तथा पूर्व के मैदान नीचे हैं। यागटिसी कियाग का प्रदेश बहुत उपजाऊ है। लाल मिट्टी का मैदान ससार में अत्यन्त उर्वर प्रदेशों में से है। इस प्रदेश में खेती के ही द्वारा २००० मनुष्य प्रति वर्ग मील निर्वाह करते हैं। पूर्व के मैदान भी बहुत उपजाऊ और घने आबाद हैं।

दक्षिण चीन अधिकांश पर्वतीय तथा ऊँचा है। इसमें सी-कियांग नदी का बेसिन तथा कैन्टन का डेल्टा महत्वपूर्ण हैं। पश्चिम में ऊँचाई अधिक और पूर्व में कम है।
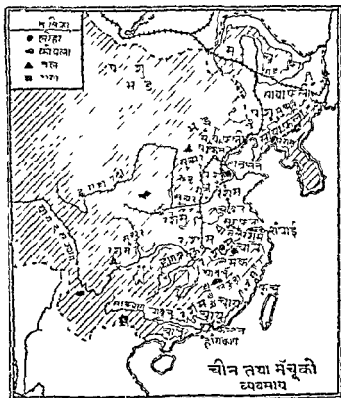
चीन के औद्योगिक क्षेत्र

चीन एक विशाल देश है, इस कारण यहाँ जलवायु की भिन्नता विशेष रूप से पाई जाती है। गर्मियों में दक्षिण तथा मध्य में खूब गर्मी पड़ती है किन्तु उत्तर में गर्मी कम हो जाती है। जाड़ों में उत्तर चीन में शीत बहुत अधिक होता है किन्तु दक्षिण में कम है। चीन में वर्षा गर्मियों में ही होती है। किन्तु वर्षा उत्तर में कम होती है। यांगटिसीकियांग के प्रदेश में वर्षा गर्मी तथा जाड़े दोनों में ही होती है।

चीन में मानसून बहुत अनिश्चित है। किसी वर्ष वर्षा बहुत होती है तो किसी वर्ष बहुत कम। इस कारण खेती भी बहुत अनिश्चित होती है। जिस वर्ष वर्षा अधिक होती है बाढ़ से और जिस वर्ष सूखा पड़ जाता है पानी की कमी से अकाल पड़ जाता है। खेती नष्ट हो जाती है। करोड़ों मनुष्यों की स्थिति दयनीय हो जाती है।

जलवायु की दृष्टि से चीन को कई भागों में विभक्त किया जा सकता है।

(१) दक्षिण और दक्षिण पूर्व चीन में जिसमें क्वांगसी प्रान्त का जलवायु क्वांगटुंग और फ्यूकिन का अधिकांश सम्मिलित है। इस प्रदेश में गरमी खूब पड़ती है और वर्षा ६० होती है। मध्य चीन जो कि यांगटिसी नदी का प्रदेश है। इसमें गरमी और वर्षा दक्षिण से कम है और जैसे जैसे उत्तर में बढ़ते जाइये वर्षा और गरमी कम होती जाती है। उत्तरी चीन की जलवायु गर्मियों में गरम और जाड़ों में अधिक ठंडी है। वर्षा गर्मियों में ही होती है और उत्तर में कम होता है। चीन में कुछ प्रान्तों (निंगसिया, सूयान, चहार और सिंकियांग) में वर्षा केवल १०" से १६" ही होती है। उत्तर में कुछ मरुभूमि है। तिब्बत का पठार ठंडा और शुष्क है।

चीन का मुख्य धंधा खेती ही है। खेती के साथ ही किसान मुर्गी पालने तथा रेशम उत्पन्न करने का धंधा भी करता है। आज से कुछ वर्ष पूर्व तक चीन में अफीम उत्पन्न करने का धंधा बहुत महत्त्वपूर्ण था किन्तु जबसे चीन में राज्य ने अफीम खाने के विरुद्ध प्रचार करना आरम्भ किया तबसे अफीम की पैदावार लगभग समाप्त हो गई और उसके स्थान पर कपास तथा गन्ने की खेती की जाने लगी है। चीन कृषि प्रधान देश है फिर भी जनसंख्या बहुत ही घनी है। इस कारण मैदान ही नहीं पहाड़ों के ढालों पर भी वनों को साफ करके खेती करना आरम्भ कर दिया गया है। चीनी किसान इतनी गहरी खेती (Intensive) करता है कि उसका छोटा सा खेत एक बाग का रूप धारण कर लेता है। अपने घर का कूड़ा करकट, मुर्गियों के द्वारा उत्पन्न की हुई खाद सभी वह अपने खेत में डाल देता है। खेती के अतिरिक्त वह मुर्गी पालकर तथा रेशम उत्पन्न करके अपनी आय को बढ़ाता है। इस प्रकार गहरी खेती करने के उपरान्त ही वह उस थोड़ी सी भूमि पर निर्वाह कर सकता है।

चीन के उत्तरी भाग में गेहूं, सोयाबीन, मूँगफली, तथा मक्का मुख्यतः पैदा होते हैं। मध्य तथा दक्षिण में चावल, कपास, रेशम, चाय तथा गन्ना मुख्य पैदावारें हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि मध्य तथा दक्षिण में गेहूँ इत्यादि अनाज उत्पन्न ही नहीं होते, अथवा उत्तर में कपास तथा रेशम उत्पन्न नहीं होता।

यांगटिसी कियांग घाटी में रेशम बहुत उत्पन्न होता है। उत्तर में भी कुछ रेशम उत्पन्न होता है किन्तु वहाँ शहतूत का वृक्ष नहीं होता, इस कारण बलूत (Oak) के वृक्ष की पत्तियों पर कीड़े पाले जाते हैं। यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि सर्वत्र खेती के साथ चीन में मुर्गी पालने का धन्धा भी होता है। चीन का रेशम बहुत अच्छा नहीं होता, क्योंकि कीड़ों को वैज्ञानिक ढंग से नहीं पाला जाता है। यदि रेशम को उत्पन्न करने में सावधानी की जाय तो चीन का रेशम अच्छी जाति का हो सकता है।

यद्यपि इस समय यह देश कृषि पर ही अवलम्बित है, परन्तु इसकी खानों में अत्यन्त सम्पत्ति भरी पड़ी है। चीन में संयुक्तराज्य अमेरिका को छोड़कर सब देशों से अधिक कोयला पाया जाता है। कोयले की खानें घनी आबादी वाले प्रदेशों में पाई जाती हैं। शांसी, शेंसी (Shenshi), शान्टुंग, होप्ये (Hopei) तथा होनान में कोयले की बहुत खानें हैं, जिनमें अनन्त राशि में कोयला भरा पड़ा है। शांसी प्रान्त की खानों से बहुत कोयला निकाला जाता है। यही नहीं कि चीन में कोयला बहुत है वरन् वहाँ उत्तम जाति का कोयला मिलता है। शांसी में अधिकांश कोयला ऐंथ्रासाइट (Anthracite) है।

चीन में लोहा भी बहुत पाया जाता है। शांसी, हूपेह (Hupeh) तथा कियांगसू (Kiangsu) प्रान्त में लोहे की बहुत खानें हैं। यहाँ अच्छी जाति का लोहा मिलता है।

कोयले और लोहे के अतिरिक्त चीन के जेचुआन, हूनान, यूनान तथा शांसी प्रान्त में तेल भी यथेष्ट मिलता है। दक्षिण चीन में टिन निकाला जाता है। इनके अतिरिक्त चीन में ऐन्टिमनी (Antimony) तथा वोलफ्रम (Wolfram) भी बहुत पाया जाता है।

चीन में यद्यपि खनिज पदार्थ यथेष्ट हैं, परन्तु अभी उनको निकाला नहीं गया है। खानों को खोदने में सबसे बड़ी असुविधा मार्गों का न होना है। चीन में रेलों का विस्तार नहीं हुआ। अधिकांश व्यापार नहरों तथा नदियों के द्वारा होता है। इसके अतिरिक्त चीन में पूँजी की भी कमी है।

चीन औद्योगिक दृष्टि से भी बहुत पिछड़ा हुआ है। आधुनिक ढंग के कारखाने अधिकतर सूती कपड़े के हैं। यह धंधा यांगटिसी कियांग प्रदेश के कियांगसू, शान्टुंग, हूपेह और होप्ये प्रान्तों में केन्द्रित है। शंघाई इसका प्रधान केन्द्र है।

चीन का वैदेशिक व्यापार अधिकतर जापान और संयुक्तराज्य अमेरिका से है। परन्तु युद्ध के कारण जापान का व्यापार कम हो गया है।

मचकाऊ जापान का आधीन स्वतंत्र राज्य है। मचकाऊ (मचूरिया) में अधिकतर खेती होती है। गेहूँ, सोयाबीन मक्का और चुकन्दर
मंचकाऊ की खेती यहाँ अधिक होती है। मंचूरिया में कोयला और लोहा पाया जाता है। जापान के प्रभाव में होने पर जापानी पूँजीपति यहाँ के खनिज पदार्थों को खोदने का प्रयत्न कर रहे थे, किन्तु अब वह जापान के अधिकार से निकल गया है।

मंगोलिया मुख्यत मरुभूमि है, जनसंख्या बिखरी है और मुख्य धन्धा पशुओं को चराना है। पूर्वी तुर्किस्तान भी शुष्क प्रदेश है। यहाँ रूई,
मंगोलिया, पूर्वी चावल, जौ और फल की खेती होती है, किन्तु मुख्यत पशु
तुर्किस्तान तथा पालन ही यहाँ का भी धन्धा है। तिब्बत एक पहाड़ी देश है।
तिब्बत आर्थिक दृष्टि से उसका कोई महत्व नहीं। पशु पालन तथा खेती यहाँ का मुख्य धन्धा है।

चीन के सम्बन्ध में कुछ ज्ञातव्य बातें

नाम	क्षेत्रफल वर्गमील	जनसंख्या	प्रति वर्गमील जनसंख्या
चीन (मुख्य)	१,५३२,८००	४५१,७००,०००	२६४
मचकाऊ (मचूरिया)	४४२,६२६	३३ ६६७,६२०	७६ २
मंगोलिया	१३६७,६५३	१,८०० ०००	१ ३
सिनकियाग (चीनी तुर्किस्तान)	५५०,५७६	२ ५१६,५७६	४ ५
तिब्बत	७००,०००	३,०००,०००	४ २°

चीन में चावल, गेहूँ, चाय, रेशम कपास, तम्बाकू, मूगफली, अडी, लाख, कपूर मोम, ज्वार, जौ, तिलहन, चमड़ा, खाल, ऊन, लकड़ी,
चीन की पैदावार मुख्य पैदावार हैं।

चीन में केवल १८% भूमि पर खेती होती है। इस कारण जनसंख्या अधिक होने के कारण चीनी किसान अत्यन्त गहरी खेती (Intensive Cultivation) करता है। उसके घर में तथा खेत पर जो भी कूड़ा-करकट तथा घास-फूस होता है उसकी खाद बनाकर खेत में डालता है। हड्डी की खाद का वहाँ बहुत अधिक उपयोग होता है, इस कारण भूमि की उपजाऊ शक्ति बनी रहती है। चीनी किसान सावधानी से खेती करता है जिस प्रकार कोई बगीचा लगाता हो। उसके खेत में जाइये। उसमें कई फसलें एक साथ भिन्न भिन्न कतारों में खड़ी पाइयेगा। जब एक

फसल उग रही है तो दूसरी पकने वाली है। इस प्रकार वह अपना निर्वाह छोटे से खेत पर करता है।

चीन के खनिज पदार्थ — यहाँ खनिज पदार्थ बहुत हैं। कोयला, लोहा, सोना, गन्धक, चीनी मिट्टी, चूना, ताँबा, चाँदी, टंगस्टन, मैंगनीज, राँगा, सीसा, नमक तथा मिट्टी का तेल यहाँ के मुख्य खनिज पदार्थ हैं।

चीन के धन्धे — सूत कातना, आटा पीसना, पिग आयरन तथा स्पात, रेशमी कपड़े, सूती कपड़े, ऊनी कपड़े, चीनी मिट्टी के बर्तन मुख्य हैं। यहाँ आधुनिक ढंग के कारखाने तो कम हैं, किन्तु कुटीर उद्योग धन्धे (Cottage Industries) महत्वपूर्ण हैं।

मचूरिया (पैदावार) — सोयाबीन, कपास, रेशम, चावल, चुकन्दर, मक्का, बाजरा, गेहूँ, मछली, फर, पाइन, स्प्रूस, सनोवर, ओक (बलूत) तथा अन्य बहुमूल्य लकड़ी यहाँ की मुख्य पैदावार है।

खनिज पदार्थ — लोहा, कोयला, सोना, सीसा, मैंगनीज, ताँबा तथा ग्रेफाइट यहाँ के मुख्य खनिज पदार्थ हैं।

धन्धे — यहाँ रेशम, सूती-ऊनी कपड़े का धन्धा, रासायनिक कार्य, सोयाबीन का तेल, चीनी मिट्टी के बर्तन, शीशा, कागज, आटा, चुकन्दर की चीनी का धन्धा भी होता है। जो कुछ थोड़े धन्धे यहाँ बड़े वे जापानी पूँजीपतियों के कारण बढ़ सके हैं।

मंगोलिया — यहाँ की मुख्य पैदावार गेहूँ, बाजरा, खाल, फर, ऊन, भेड़-बकरी और सुअर हैं। खनिज पदार्थों में केवल सोना निकलता है।

सिनकियांग — यहाँ की मुख्य पैदावार, रेशम, कपास, खाल और ऊन है और सोना यहाँ का मुख्य खनिज पदार्थ है।

तिब्बत — तिब्बत में जौ, दाल, अंगूर, नासपाती, भेड़, याक, भैंस, सुअर और ऊँट होते हैं। सोना और नमक तथा बोरैक्स यहाँ के मुख्य खनिज हैं।

समस्त चीन में २४८, २८७,०००,००० टन कोयला कूता जाता है, जिसमें १,६६६,०००,००० टन मचुकाउ में है और शेष चीन में है। इस देश में

लगभग १,०००,०००,००० टन लोहा भरा पड़ा है। और ३,२७४०,०००,००० पीपे मिट्टी का तेल और पैट्रोलियम (१ पीपा=४२ गैलन) भरा है।

चीन प्राकृतिक देन का अत्यन्त धनी देश है, किन्तु उसकी औद्योगिक उन्नति नहीं हो सकी थी। औद्योगिक उन्नति की दृष्टि से वह अत्यन्त पिछड़ा राष्ट्र था। परन्तु अब वह रूसी प्रभाव के क्षेत्र में आने के कारण उन्नति कर रहा है।

सायबेरिया

सायबेरिया विशाल देश में जिसका क्षेत्रफल ५,२००,००० वर्ग मील है, केवल १५,०००,००० मनुष्य निवास करते हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि सायबेरिया का एक चौथाई भाग १,३००,००० वर्ग मील हो बसने के योग्य है। पिछले दिनों जब सोवियत रूस ने अपने देश की औद्योगिक योजनाओं के द्वारा आर्थिक उन्नति का प्रयत्न किया तब सायबेरिया के खनिज पदार्थों की ओर उसका ध्यान गया और वहाँ खनिज पदार्थों का निकालने का धंधा बढ़ा। इन पचवर्षीय योजनाओं के फलस्वरूप सायबेरिया में कोयले का धंधा और कुजनेटज (Kuznetzk) घाटी का लोहे और स्पात का धंधा बहुत उन्नति कर गया।

सायबेरिया का उत्तरी भाग टुंड्रा है जो अत्यन्त ठंडा है। इस प्रकार यह खेती के अयोग्य है। टुंड्रा के दक्षिण में कोणधारी वन हैं जिनको तेगा (Taiga) कहते हैं। पाइन, लार्च, सायबेरियन फर (सनोबर) स्प्रूस तथा सिडार के मूल्यवान वन हैं। कोणधारी वन का उत्तरी भाग खेती के अयोग्य है। दक्षिण में अवश्य खेती हो सकती है। यहाँ की मुख्य फसलें सन, ओट, राई, जौ, गेहूँ दक्षिण भाग में उत्पन्न होती हैं। कुछ जिलों में दूध का धंधा भी बढ़ रहा है।

काली मिट्टी का प्रदेश (Black Earth Region)

काली मिट्टी का प्रदेश सायबेरिया का खेती की दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण प्रदेश है। यहाँ खेती की बहुत उन्नति हुई है। गेहूँ यहाँ बहुत पैदा होता है और उसके उपरान्त ओट और राई का नम्बर आता है। सायबेरिया में जितनी भूमि पर खेती होती है उसकी ६० % भूमि पर ये ही तीन वस्तुएँ उत्पन्न की जाती हैं। सायबेरिया का दक्षिण-पश्चिमी भाग अत्यन्त सूखा है और दक्षिण-पूर्वी भाग पहाड़ी है। इस कारण यहाँ खेती की अधिक उन्नति नहीं हो सकती है।

सायबेरिया के धन्धे वन

सायबेरिया में वन बहुत विस्तृत और घने हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि ८००,०००,०००, से १३००,०००,००० एकड़ भूमि पर वन खड़े हैं। सायबेरिया के वन संयुक्तराज्य अमेरिका के वनों से अधिक विस्तृत और मूल्यवान हैं, किन्तु अभी तक इन वनों का अधिक उपयोग नहीं हो सका है।

इन वनों में लकड़ी के अतिरिक्त फर बहुत इकट्ठे किये जाते हैं और यहाँ से बहुत बड़ी राशि में फर बाहर भेजे जाते हैं।

सायबेरिया खनिज पदार्थों की दृष्टि से धनी है। यहाँ कोयला और लोहा बहुत पाया जाता है। कुजनेट्ज घाटी (Kuznetz Basin) इरक्यूटस्क घाटी (Irkutusk Basin) किरगिज के स्टेप्स के मैदान (Kirgiz Steppe) उत्तरी कराफ्ट (सखालीन) में बहुत कोयले की खानें हैं। कुजनेट्ज से ४० मील दूर दक्षिण में टेलबेस (Telbes) के समीप बहुत घना लोहे का क्षेत्र है। सायबेरिया के अन्य महत्त्वपूर्ण खनिज पदार्थों में सोना, सीसा, जिंक, चाँदी अल्टाई प्रदेश तथा ट्रांस बैकाल प्रदेश में बहुत पाया जाता है। चाँदी और सीसा किरगिज स्टेप्स के मैदानों में भी बहुत पाये जाते हैं।

उत्तरी कराफ्ट (सखालीन) में पैट्रोलियम बहुत पाया जाता है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि वहाँ १,३००,०००,००० से ३,३००,०००,००० पीपे पैट्रोल भरा पड़ा है। दूसरी पञ्चवर्षीय योजना के अनुसार सोवियत रूस ने १९३७ तक २२,०००,००० टन पिग आयरन, २५०,०००,००० टन कोयला और १००,०००,०००,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न करने की योजना बनाई थी, जो पूरी हो गई।

योरोप (Europe)

योरोप आस्ट्रेलिया को छोड़कर अन्य सब महाद्वीपों से छोटा है। परन्तु सब से अधिक घना आबाद है। इसका मुख्य कारण यह है कि योरोप में उद्योग धन्धों की विशेष उन्नति होने के कारण वह अपेक्षाकृत घना है। योरोप में उद्योग धन्धों की उन्नति के साथ ही गहरी खेती (Intensive agriculture) के कारण भी आबादी घनी है।

इस आर्थिक उन्नति का कारण योरोप की भौगोलिक स्थिति में छिपा है। योरोप का अधिकांश शीतोष्ण कटिबन्ध में है। इस कारण जलवायु परिश्रम करने, खेती बारी तथा उद्योग धन्धों के अनुकूल है। ठंडी जलवायु होने के कारण श्रमी कुशल और परिश्रमी हैं। वास्तव में यदि देखा जाये तो योरोप एशिया महाद्वीप का पश्चिमी प्रायद्वीप है। इस कारण रूस को छोड़कर कोई ऐसा देश नहीं है जो समुद्र से दूर हो। समुद्र का तट अधिकतर टूटा फूटा है, इस कारण जलवायु पर समुद्र का और भी अधिक प्रभाव पड़ता है। योरोप में जलवृष्टि साधारणतया प्रत्येक भाग में होती है। केवल रूस में जलवृष्टि कम होती है। इसका कारण यह है कि रूस समुद्र से बहुत दूर पड़ता है। जल पैदावार के लिये अत्यन्त आवश्यक वस्तु है, इस कारण योरोप के प्रत्येक भाग में पैदावार हो

सकती है। एशिया की भाँति अरब, गोबी तथा राजस्थान के रेगिस्तान यहाँ नहीं हैं। योरोप के दक्षिण प्रायद्वीपों की जलवायु उष्ण है, क्योंकि भूमध्यसागर (Mediterranean Sea) इनके दक्षिण में है और उत्तर में आल्प्स पर्वत की श्रेणियाँ हैं जो ठंडी हवाओं का दक्षिण की ओर आने से रोकती हैं।

योरोप में समताप रेखायें (Isotherms) उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर दौड़ती हैं। दक्षिण प्रायद्वीपों फ्रांस, बेलजियम, ब्रिटेन तथा हालैंड को छोड़कर अन्य सब देशों में जाड़े के महीनों में तापक्रम शून्य तक पहुँच जाता है।

योरोप में गर्मी और वर्षा पैदावार के लिए यथेष्ट होने के कारण लगभग सब भूमि जोती जा सकती है। केवल रूस के दक्षिण पूर्वी भाग में, तथा स्पेन के मध्य भाग में वर्षा न होने के कारण खेती नहीं हो सकती। उत्तर और पश्चिम में पतझड़ के महीनों में अधिक वर्षा होती है। गर्मियों में पूर्व के देशों में वर्षा अधिक होती है। भूमध्यसागर के प्रायद्वीपों में वर्षा जाड़ों में होती है, गर्मियों में वर्षा नहीं होती।

योरोप को भौगोलिक आधार पर चार भागों में बाँटा जा सकता है—(१) पश्चिमी योरोप, (२) भूमध्यसागर का भाग, (३) मध्य योरोप तथा (४) पूर्वी योरोप।

पश्चिमी योरोप आल्प्स पर्वत के उत्तर-पश्चिमी भाग को कहते हैं। इस भाग पर समुद्र का बहुत प्रभाव है। इस भाग में जाड़े के दिनों में (नार्वे को छोड़कर) अत्यधिक शीत नहीं पड़ता। और गर्मियों में कम गर्मी होती है। वर्षा यहाँ खूब होती है। इस भाग में लता, फलों की पैदावार तथा दूध मक्खन का धंधा खूब होता है किन्तु यह भाग योरोप का सबसे अधिक महत्वपूर्ण औद्योगिक प्रदेश है। इसकी औद्योगिक उन्नति के मुख्य दो कारण हैं (१)—कोयले और लोहे की बहुतायत तथा (२) समुद्र के समीप होने से व्यापारिक मार्ग की सुविधा। तट टूटा होने के कारण यहाँ बहुत अच्छे बन्दरगाह हैं। इस भाग के समुद्रतट पर मछली पकड़ने का धंधा भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

मध्य योरोप में जाड़ों में भयंकर शीत होता है। वर्षा वर्ष भर होती है। यद्यपि पश्चिमी योरोप से यहाँ वर्षा कम होती है परन्तु फिर भी खेती के लिए काफी होती है। पश्चिमी भाग में गर्मी अधिक होती है। इस कारण यह भाग खेती की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है। यद्यपि कोयला और लोहा इस प्रदेश में अधिक नहीं पाये जाते, परन्तु थोड़े बहुत मिलते हैं। इस कारण उद्योग धंधों की भी उन्नति (विशेषकर जर्मनी में) हो सकी है। हाँ, समुद्र तक माल ले जाने की सुविधा

जनक मार्ग न होने के कारण धंधे केवल रूर (Ruhr) प्रदेश में ही केन्द्रित हैं। राइन नदी के कारण समुद्र तक माल ले जाने की जो सुविधा है उसके कारण इस भाग में धंधे केन्द्रित हो गए हैं।

भूमध्यसागर के भाग में वर्षा कम होती है और जो कुछ भी वर्षा होती है वह केवल जाड़ों में। इस कारण खेती के लिये यहाँ सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। अधिकांश प्रदेश पहाड़ी है। और खनिज पदार्थ यहाँ नहीं पाये जाते। इस कारण *औद्योगिक उन्नति की दृष्टि से यह भाग अधिक उन्नति नहीं कर सका। हाँ,* जल-विद्युत् उत्पन्न करने की इस भाग में अधिक सुविधा है। इस कारण कुछ उद्योग-धंधे यहाँ पनप गए हैं (विशेषकर इटली में)। अनाज और फलों की खेती ही यहाँ का मुख्य धंधा है।

पूर्वी भाग में बहुत उपजाऊ प्रदेश हैं जिनमें गेहूँ तथा अन्य अनाज बहुतायत से उत्पन्न होते हैं। उत्तर में बहुमूल्य वन हैं जिनसे कीमती लकड़ी मिलती है। यद्यपि तेल के अतिरिक्त अन्य खनिज पदार्थ इस भाग में नहीं हैं, किन्तु फिर भी कहीं-कहीं उद्योग धंधों की उन्नति हुई है।

वास्तव में योरोप का व्यापारिक महत्व बहुत अधिक है। औद्योगिक क्रान्ति के उपरान्त योरोप ने बहुत तेजी से औद्योगिक उन्नति की। इन कारखानों की उत्पत्ति इतनी अधिक बढ़ी कि उसकी खपत के लिए उपनिवेश और अधीन देशों की आवश्यकता पड़ी। इसी प्रकार साम्राज्यवाद (Imperialism) का प्रादुर्भाव हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी तथा बीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक योरोप का हिस्सा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में बहुत अधिक था। किन्तु अब क्रमशः उसका महत्व धीरे-धीरे कम हो रहा है, क्योंकि योरोप के बाहर भी देश औद्योगिक उन्नति कर रहे हैं।

ब्रिटिश द्वीप-समूह

ब्रिटिश द्वीपसमूह वास्तव में योरोप की पश्चिमी सीमा है। इस छोटे से देश के धरातल की बनावट इतनी भिन्न है कि उसको देखकर आश्चर्य होता है। इस भिन्नता का कारण यह है कि यह द्वीप-समूह किसी समय योरोप से जुड़ा होने के कारण भिन्न भिन्न प्रकार की धरातलों का सम्मिलित प्रदेश था। यही कारण है कि नार्वे की चट्टानें स्काटलैंड में तथा बेलजियम की चट्टानें डेवन (Davon) और कार्नवाल (Cornwall) में दिखलाई देती हैं। स्काटलैंड, इंगलैंड तथा वेल्स के अतिरिक्त लगभग ५००० छोटे छोटे द्वीप भी इस समूह में सम्मिलित हैं।

सकती है। एशिया की भाँति अरब, गोबी तथा राजस्थान के रेगिस्तान यहाँ नहीं हैं। योरोप के दक्षिण प्रायद्वीपों की जलवायु उष्ण है, क्योंकि भूमध्यसागर (Mediterranean Sea) इनके दक्षिण में है और उत्तर में आल्प्स पर्वत की श्रेणियाँ हैं जो ठंडी हवाओं को दक्षिण की ओर आने से रोकती हैं।

योरोप में समताप रेखायें (Isotherms) उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर दौड़ता हैं। दक्षिण प्रायद्वीपों फ्रांस, बेलजियम, ब्रिटेन तथा हालैंड को छोड़ कर अन्य सब देशों में जाड़े के महीनों में तापक्रम शून्य तक पहुँच जाता है।

योरोप म गर्मी और वर्षा पैदावार के लिए यथेष्ट होने के कारण लगभग सब भूमि जोती जा सकती है। केवल रूस के दक्षिण-पूर्वी भाग में, तथा स्पेन के मध्य भाग में वर्षा न होने के कारण खेती नहीं हो सकती। उत्तर और पश्चिम में पतझड़ के महीनों में अधिक वर्षा होती है। गर्मियों में पूर्व के देशों में वर्षा अधिक होती है। भूमध्यसागर के प्रायद्वीपों में वर्षा जाड़ों में होती है, गर्मियों म वर्षा नहीं होती।

योरोप को भौगोलिक आधार पर चार भागों में बाँटा जा सकता है—(१) पश्चिमी योरोप, (२) भूमध्यसागर का भाग, (३) मध्य योरोप तथा (४) पूर्वी योरोप।

पश्चिमी योरोप आल्प्स पर्वत के उत्तर-पश्चिमी भाग को कहते हैं। इस भाग पर समुद्र का बहुत प्रभाव है। इस भाग में जाड़े के दिनों में (नार्वे को छोड़कर) अत्यधिक शीत नहीं पड़ता। और गर्मियों में कम गर्मी होती है। वर्षा यहाँ खूब होती है। इस भाग में खेती, फलों की पैदावार तथा दूध-मक्खन का धंधा खूब होता है, किन्तु यह भाग योरोप का सबसे अधिक महत्वपूर्ण औद्योगिक प्रदेश है। इसकी औद्योगिक उन्नति के मुख्य दो कारण हैं (१)—कोयले और लोहे का बहुतायत तथा (२) समुद्र के समीप होने से व्यापारिक मार्ग की सुविधा। तट टूटा होने के कारण यहाँ बहुत अच्छे बन्दरगाह हैं। इस भाग के समुद्रतट पर मछली पकड़ने का धंधा भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

मध्य योरोप में जाड़ों म भयंकर शीत होता है। वर्षा वर्ष भर होती है। यद्यपि पश्चिमी योरोप से यहाँ वर्षा कम होती है। परन्तु फिर भी खेती के लिए काफ़ी होती है। पश्चिमी भाग में गर्मी अधिक होती है। इस कारण यह भाग खेती की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है। यद्यपि कोयला और लोहा इस प्रदेश म अधिक नहीं पाये जाते, परन्तु थोड़े बहुत मिलते हैं। इस कारण उद्योग धंधों की भी उन्नति (विशेषकर जर्मनी में) हो सकी है। हाँ, समुद्र तक माल ले जाने की सुविधा

ब्रिटेन के औद्योगिक और धनी राष्ट्र होने के कारण

१—ब्रिटेन का जलवायु न तो अत्यधिक ठंडा है और न यहाँ अधिक गर्मी ही पड़ती है। अतएव खेती में कोई रुकावट नहीं होती और न इतना वर्फ ही पड़ता है कि गमनागमन के साधनों में रुकावट हो। मनुष्यों में खूब स्फूर्ति रहती है और अधिक ठंड या अधिक गरमी नहोने के कारण खेतों और कारखानों में खूब काम होता है। अंग्रेज मजदूर जो इतना कुशल मजदूर है यह बहुत कुछ यहाँ की जलवायु के कारण ही है।

२—ब्रिटेन का समुद्रतट इतना कटा फटा है कि ब्रिटेन का कोई भी स्थान
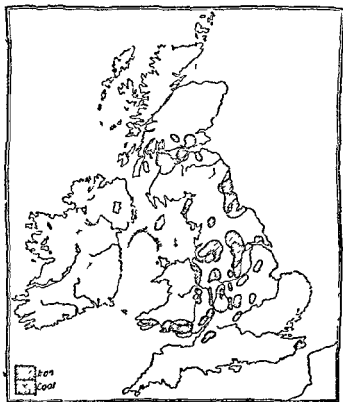
समुद्र से ७० मील से अधिक नहीं है। समुद्र के समीप होने से औद्योगिक केन्द्रों के तैयार माल को विदेशों में आसानी से भेजा जा सकता है।

३—ब्रिटेन की स्थिति आदर्श है जिससे ब्रिटेन के व्यापार और धन्धों की बहुत उन्नति हो सकी है। ब्रिटेन योरोप के महाद्वीप से सटा हुआ है। इंग्लिश चैनल उसे योरोप से पृथक् करती है। इस कारण व्यापार के लिए उसे बहुत सुविधा है। साथ ही समुद्र द्वारा पृथक् होने के कारण उस पर किसी देश के आक्रमण का भय नहीं है। हाँ, पिछले युद्ध में उस पर हवाई हमले अवश्य हुए हैं और उससे ब्रिटेन की क्षति भी बहुत हुई, किन्तु फिर भी आक्रमणों से बचे रहने के कारण उसकी औद्योगिक उन्नति बिना किसी रुकावट के हो सकी है। यही नहीं ब्रिटेन उन्नत संसार के मध्य में स्थित है, इस कारण प्रत्येक उन्नत राष्ट्र के वह पास है। योरोप के प्रमुख औद्योगिक राष्ट्र जर्मनी, फ्रांस और बेलजियम उसके समीप ही दक्षिण पूर्व में है। संयुक्तराज्य अमेरिका अटलांटिक महासागर द्वारा सरलता से पहुँचा जा सकता है। यही नहीं ब्रिटेन योरोप के महाद्वीप के छिछले तटीय समुद्र (Continental Shelf) में स्थित है, इस कारण ज्वार ऊँचा उठता है जिससे बन्दरगाह में जहाज अन्दर तक पहुँच सकते हैं।

४—ब्रिटेन में कोयला और लोहा यथेष्ट है; साथ ही कोयले और लोहे की खानें पास-पास हैं। इससे उद्योग धन्धों की उन्नति में बड़ी सहायता मिलती है।

५—यद्यपि ब्रिटेन की नदियाँ जलमार्ग की दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं हैं, किन्तु उनके मुहानों में जहाज भली भाँति आ सकते हैं। इस कारण वे महत्वपूर्ण हैं।

६—ब्रिटेन की समृद्धि मानवीय और आर्थिक कारणों से भी हुई है। यहाँ के श्रमजीवी बहुत निपुण हैं। यहाँ पूँजी की बहुतायत है और गमनागमन के साधन बहुत उन्नत हैं। इतना छोटा देश है, किन्तु उसमें २५,००० मील रेलवे लाइन है। यहाँ सड़कें भी बहुत बढ़िया हैं जिनके कारण मोटर ट्रैफिक बहुत होती है। और औद्योगिक केन्द्रों म देश की अधिकांश जनसंख्या निवास करती है।

७—ब्रिटिश साम्राज्य संसार में सबसे बड़ा साम्राज्य है। इस कारण ब्रिटेन के तैयार माल के लिए सहज में ही बाजार मिल जाता है।

८—ब्रिटेन की व्यापारिक नाविक शक्ति सबसे अधिक है। ब्रिटेन के पास जितने अधिक व्यापारिक जहाज हैं उतने किसी भी देश के पास नहीं हैं। इस कारण ब्रिटेन का विदेशी व्यापार बहुत बढ़ा-चढ़ा है।

९—आरम्भ में औद्योगिक क्रान्ति ब्रिटेन में ही हुई। यन्त्रों का आविष्कार, वाष्प के द्वारा उत्पादन कार्य तथा रेलों का प्रादुर्भाव सबसे पहले ब्रिटेन में ही हुआ था। इस कारण ब्रिटेन को आधुनिक ढंग के कारखानों को खड़ा करने का अवसर अन्य देशों की अपेक्षा सौ वर्ष पहले मिल गया। अस्तु वह पृथ्वी का औद्योगिक नेता बन गया जिसका प्रभाव अभी तक रहा।

किन्तु अब ब्रिटेन का उतना ऊँचा स्थान नहीं रह सकेगा। कारण यह है कि आबादी बहुत घनी होने के कारण यहाँ भूमि का मूल्य बहुत बढ़ गया है, मजदूरी बहुत ऊँची है तथा ब्रिटेन जल शक्ति में अधिक धनी नहीं है। भविष्य में जल विद्युत् का अधिकाधिक उपयोग में आवेगा। साथ ही अन्य देशों ने बाहर से आने वाले माल पर अत्यधिक चुंगी बिठा दी है, इस कारण ब्रिटेन के व्यापार को रुकावट होने लगी है। यही नहीं पिछले युद्ध (१९३९-४५) में बमवर्षा के कारण ब्रिटेन के धन्धों को हानि पहुँची है। ब्रिटेन की बहुत सी पूँजी नष्ट हो गई है। वह अमेरिका तथा भारत का ऋणी हो गया है और अमेरिका एक प्रबल प्रतिद्वन्द्वी के रूप में सामने आया है। भारत तथा अन्य उपनिवेशों का स्वतन्त्र हो जाना भी उसके व्यापारिक पद को नीचा कर देगा।

जनसंख्या

ब्रिटेन संसार का एक बहुत ही घना आबाद देश है। इंगलैंड, स्कॉटलैंड और वेल्स की जनसंख्या १९४८-४९ में ५०,१६२,२६६ थी। यहाँ की जनसंख्या का प्रति वर्गमील ६९२ औसत है। बेलजियम और जावा को छोड़कर संसार में इतना घना आबाद कोई राष्ट्र नहीं है। उत्तर इंगलैंड तथा दक्षिण वेल्स बहुत घने आबाद हैं, क्योंकि वे औद्योगिक प्रदेश हैं। अभी कुछ वर्षों से दक्षिण-पूर्व में विशेषकर लंदन के समीपवर्ती प्रदेश में आबादी बहुत घनी हो गई है। उत्तर के औद्योगिक प्रदेश में १००० मनुष्य प्रति वर्ग मील रहते हैं। खेती की दृष्टि से जो प्रदेश महत्वपूर्ण हैं वहाँ ५०० मनुष्य प्रति वर्ग मील आबादी है, किन्तु पहाड़ी प्रदेश में आबादी कम है।

ब्रिटेन में खनिज-पदार्थ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। ब्रिटेन के मुख्य खनिज पदार्थ नीचे लिखे हैं —

खनिज	(हजार टनों में)
कोयला	२२८,०००
लोहा	१४,२०००
सीसा	३८
जिंक	१६
टिन	३
जिप्सम (Gypsum)	१,०९२
रेत का पत्थर (Sand Stone)	४,३४६
चूने का पत्थर (Lime Stone)	१५,९२६
खड़िया	१०,१६७

ब्रिटेन में लोहा और कोयला समीप ही पाये जाते हैं। कोयला यहाँ बहुत बड़ी राशि में पाया जाता है। वार्षिक उत्पत्ति में तथा जहाँ तक कोयले का प्रश्न है ब्रिटेन का ससार में तीसरा स्थान है। देश की लगभग चालीस लाख जनसख्या इस पर निर्भर है। अधिकांश ब्रिटेन की कोयले की खानें समुद्र के पास हैं; इस कारण उनका महत्व अधिक है। ब्रिटेन में कोयले का तटीय व्यापार बहुत होता है और वह अच्छी जाति का है। ब्रिटेन के विदेशी व्यापार में कोयले का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है और कुल निर्यात (Export) का ५% है।

ब्रिटेन की कोयले की खानें —

१—पैनाइन पर्वतमाला

(१) नार्थम्बरलैंड और डरहम, (२) यार्क, डर्बी, नाटिंगहम, (३) दक्षिणी लकाशायर, (४) उत्तरी स्टैफर्डशायर

२—मिडलैंड का मैदान

(५) वारविक (Warwick), (६) दक्षिण स्टैफर्डशायर, (७) लीस्टरशायर

३—वेल्स के पहाड़

(८) उत्तरी वेल्स, दक्षिणी वेल्स

(६) येअरशायर, कनाडड

(१०) ब्रिस्टल, ऐडिनबरा और आयरलैंड में किलकैनी (Kilkenny) के छोटे खनिज केन्द्र हैं।

ब्रिटेन की कोयले की खानों में स्काटलैंड की खानें १४%, यार्क नाटिंगहम और डर्बी शायर की खानें ३१%, लकाशायर की कोयले की खानें ६%, मिडलैंड की ११% और वेल्स की १६% कोयला उत्पन्न करती हैं।

दक्षिण वेल्स की कोयले की खाने बहुत महत्वपूर्ण हैं। १६२० तक यह प्रदेश ससार को सबसे अधिक कोयला विदेशों को भेजता था। किन्तु पिछले वर्षों से वेल्स के कोयले का निर्यात (Export) कम हो गया है, क्योंकि ब्रिटेन का कोयला महँगा पड़ता है और सयुक्तराज्य अमेरिका का कोयला ससार के बाजार में सस्ता बिकता है। फ्रास और स्वीडन जो ब्रिटेन का कोयला मँगाते थे वहाँ जलविद्युत् की उन्नति होने के कारण कोयले की माँग कम हो गई। यही नहीं आस्ट्रेलिया और अफ्रीका जो पहले ब्रिटेन से बहुत कोयला मँगाते थे वहाँ कोयले की खानें निकल आई हैं, इस कारण उन्होंने कोयला मँगाना प्राय: बद कर दिया है।

यार्क, डर्बी और नाटिंगहम शायर की कोयले की खानें लोहे की खानों के पास हैं। साथ ही समुद्र के समीप होने से यहाँ से कोयला बाहर जाने में सुविधा है।

स्कैन्डिनेविया, डैनमार्क और बाल्टिक प्रदेश को कोयला इन्हीं खानों से जाता है। शेफील्ड का स्पात का धंधा और ऊन का धन्धा इन्हीं खानों पर निर्भर है।

लंकाशायर को कोयले की खानों पर सूती वस्त्र का धंधा केन्द्रित है।

मिडलैंड की कोयले की खानों की उन्नति का कारण वहाँ का लोहे और स्पात का धंधा है। १९२९ के उपरान्त लोहे के धन्धे की अवनति होने के कारण इन खानों की स्थिति भी खराब हो गई है।

स्काटलैंड की येअरशायर की खानों का कोयला मुख्यतः विदेशों को जाता है। क्लाइड के मुहाने के समीप जो जहाज बनाने का धंधा है वह लैनार्कशायर की कोयले की खानों तथा लोहे की खानों पर निर्भर है।

लोहे की खानें

ब्रिटेन में लोहे की खानें नीचे लिखे स्थानों पर स्थित हैं —उत्तरी लैनार्कशायर, क्लाइड घाटी (Clyde Basin) उत्तरी स्टैफोर्डशायर और दक्षिण वेल्स।

दक्षिण वेल्स की लोहे की खानें प्रायः समाप्त हो आई हैं और यहाँ का लोहे का धन्धा स्पेन और फ्रांस के लोहे पर निर्भर है। ब्रिटेन का सबसे महत्वपूर्ण लौह प्रदेश दक्षिण पूर्व इंगलैंड में है जहाँ से ब्रिटेन का ८५% लोहा निकलता है। मुख्य लोहे के खनिज केन्द्र नीचे लिखे हैं —(१) क्लीवलैंड की पहाड़ियाँ, (२) लिंकनशायर, (३) नार्थम्पटन शायर, (४) उत्तरी आक्सफोर्ड शायर के बैनबरी स्थान में। देश की खानों से निकलने वाला लोहा यथेष्ट नहीं होता, इस कारण लोहा बाहर से मँगाना पड़ता है।

लोहा और कोयले को छोड़ कर अन्य धातुओं की दृष्टि से ब्रिटेन धनी नहीं है, परन्तु ब्रिटिश साम्राज्य के अन्दर वे धातुयें मिल जाने की सुविधा है। उदाहरण के लिए ब्रिटेन में पैट्रोलियम, मैंगनीज, टंगस्टन, ताँबा, एलूमीनियम निक्ल और क्रोम बिलकुल नहीं होता। इन धातुओं को बाहर से मँगाना पड़ता है।

ब्रिटेन में खेती

ब्रिटेन मुख्यतः औद्योगिक देश है। वहाँ की बहुत थोड़ी जनसंख्या खेती पर निर्भर है। स्काटलैंड की ३% और इंगलैंड की २% जनसंख्या खेती में लगी हुई है। आयरलैंड की ५३% जनसंख्या खेती पर निर्भर है। खेती के योग्य भूमि की कमी होने के कारण वहाँ बहुत गहरी खेती होती है। पिछले युद्ध में इस बात का प्रयत्न किया गया कि खेती की पैदावार को बढ़ाया जावे। इस आन्दोलन के फलस्वरूप लगभग ७० लाख एकड़ नई भूमि पर खेती की जाने लगी है। इसी बीच में खेती की पैदावार में भी कल्पनातीत वृद्धि हुई है।

गेहूँ में १०६%, जौ ११५%, ओट ५८%, आलू १०२%, चुकन्दर ३७%, सब्जी ३४%, फल ५५% की वृद्धि युद्ध के ६ वर्षों में हुई है।

ब्रिटेन में पशुपालन भी एक महत्वपूर्ण धन्धा है। पशु दूध, मांस और खाल के लिए पाले जाते हैं। आयरलैंड मक्खन के धंधे के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

एक समय था जब कि ब्रिटेन में भेड़ पालने का धंधा बहुत उन्नत दशा में था। ब्रिटेन की आर्थिक समृद्धि भेड़ पर ही निर्भर थी। यद्यपि ऊन का ब्रिटेन के आर्थिक जीवन में इतना महत्वपूर्ण स्थान नहीं है, किंतु फिर भी भेड़ पालने का धंधा महत्वपूर्ण है। वहाँ २ करोड़ ६० लाख भेड़ें हैं। मुख्य भेड़ पालने वाले प्रदेश नीचे लिखे हैं —(१) पैनाइन पर्वतमाला, (२) वैल्श पहाड़ी प्रदेश, (३) स्काटलैंड का पर्वतीय प्रदेश, (४) आयरलैंड।

मछली का धंधा

मछली का धंधा ब्रिटेन का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण धन्धा है। देश की लगभग २०% जनसंख्या मछली के धन्धे पर निर्भर है। पूर्वी तट पर यह धन्धा मुख्यत केन्द्रित है। उत्तरी-सागर में मुख्यत हैडाक, हेरिंग, काड़, और मैकरेल मिलती हैं। विक (Wick), ऐबरडीन (Aberdeen), पीटरहैड, स्टोन हैविन (Stone Heaven), हल (Hull), ग्रिम्सबी (Grimsby) और यारमाऊथ (Yarmouth) मुख्य बन्दरगाह हैं, जहाँ मछली के धंधे के केन्द्र हैं। इंगलिश चैनल में पिलचर्ड मिलती है।

यद्यपि मछली का धंधा ब्रिटेन का बहुत उन्नत धन्धा है, किंतु फिर भी ब्रिटेन को संयुक्तराज्य अमेरिका, कनाडा और नार्वे से मछली मँगानी पड़ती है।

ब्रिटेन की नदियों में सामन और ट्राउट (Trout) जाति की मछलियाँ पाई जाती हैं।

ब्रिटेन के धंधे

ब्रिटेन संसार का मुख्य औद्योगिक राष्ट्र है। वहाँ के मुख्य धंधे लोहा और इस्पात, सूती वस्त्र, ऊनी वस्त्र तथा रासायनिक धंधे हैं। अधिकतर ब्रिटेन के धन्धे कोयले की खानों पर केन्द्रित हैं। पिछले कुछ दिनों से वहाँ विद्युत् का भी उपयोग होने लगा है।

सूती वस्त्र का धन्धा

अठारहवीं शताब्दी के अन्त में ब्रिटेन में जो सूती वस्त्र-व्यवसाय उन्नति कर गया उसके ये कारण थे—(१) ब्रिटेन की सामुद्रिक शक्ति बढ़ी चढ़ी होने के कारण तथा विशाल साम्राज्य होने के कारण उसे कच्चा माल (कपास) मिलने की सुविधा थी और

साम्राज्यान्तर्गत देशों में उनका माल बिकता था। (२) जिन देशों में कपास उत्पन्न होती थी वे औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े थे। (३) ब्रिटेन का जलवायु सूती वस्त्र-व्यवसाय के लिए उपयुक्त था। यहाँ की हवा में स्वाभाविक नमी रहती है। (४) ब्रिटेन में कोयले की अधिकता तथा रंगाई और धुलाई के लिए उपयुक्त मीठा जल भी अधिक राशि में उपलब्ध है। (५) उस समय ब्रिटेन में पावरलूम तथा सूत कातने की मशीनों का आविष्कार हुआ था, इस कारण यहाँ यंत्र इत्यादि के मिलने की सुविधा थी। (६) भारत तथा अन्य पुराने सूती वस्त्र उत्पन्न करने वाले देश राजनैतिक पराधीनता में पड़े थे। यही नहीं योरोप में राजनैतिक अशान्ति थी।
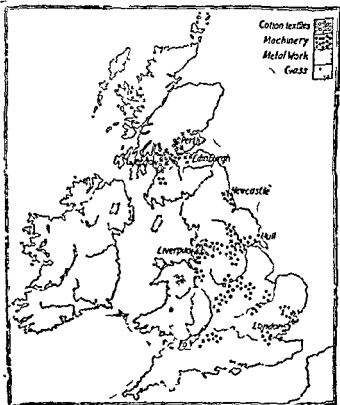
ब्रिटेन में यह धन्धा मुख्यतः लंकाशायर में केन्द्रित है। लंकाशायर में इस धंधे के केन्द्रित होने के भौगोलिक कारण हैं।

सूती वस्त्र व्यवसाय के लिए नम वायु की आवश्यकता होती है। नहीं तो तार टूट जाता है। लंकाशायर को पछुआ हवाओं से यथेष्ट नमी मिलती है। इसके

अतिरिक्त लंकाशायर संयुक्तराज्य अमेरिका के बन्दरगाहों के सामने पड़ता है। इस कारण कपास के मँगाने में सुविधा है। इसके अतिरिक्त कोयला, चूने का पत्थर और पानी यथट है। लिवरपूल का बन्दरगाह समीप ही है। पीढ़ियों का अनुभव, मजदूरों की कुशलता, टैक्सटाइल मशीनों का आविष्कार तथा मैंचेस्टरशिप कैनाल के कारण भी यह धन्धे का केन्द्र बन गया।

ब्रिटेन कपास उत्पन्न नहीं करता। वहाँ कपास संयुक्तराज्य अमेरिका, मिश्र, पीरु, सूडान और ब्राजील से आती है।

लंकाशायर में भिन्न भिन्न केन्द्रों में धन्धे का रूप भिन्न है। वहाँ प्रत्येक केन्द्र किसी वस्त्रविशेष को तैयार करता है। उदाहरण के लिये उत्तर के केन्द्र प्रैस्टन (Preston), ब्लैकबर्न (Black Burn) और बर्नले (Burnley) में सूती वस्त्र बुनने का धन्धा केन्द्रित है और दक्षिणी केन्द्रों अर्थात् ओल्डहम (Oldham), बोल्टन (Bolton) और बरी (Bury) में सूत कातने का धन्धा केन्द्रित है। यही नहीं वहाँ भिन्न भिन्न केन्द्रों में केवल विशेष कपड़े ही तैयार किये जाते हैं। कोई कोई केन्द्र किसी एक देश के लिए ही कपड़ा तैयार करता है। एक कारखाना केवल शर्टिंग ही तैयार करता है तो दूसरा केवल कोटिंग। इस प्रकार धन्धा वहाँ वैज्ञानिक ढंग से संगठित है।'

लंकाशायर के अतिरिक्त स्काटलैंड के ग्लासगो (Glasgow) और पैस्ले (Paisley) में भी यह धन्धा केन्द्रित है। पैस्ले में डोरा बहुत तैयार किया जाता है और ग्लासगो को वे सभी सुविधायें हैं जो लंकाशायर को उपलब्ध हैं।

ब्रिटेन के सूती वस्त्र के मुख्य ग्राहक निम्नलिखित हैं :—भारत, चीन, मिश्र, जर्मनी, हालैंड, टर्की, पश्चिमी द्वीपसमूह, दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका, मध्य अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, जापान, कनाडा, संयुक्तराज्य अमेरिका, स्पेन, इटली, फ्रांस और स्विटजरलैंड। ब्रिटेन भी जापान, फ्रांस और जर्मनी से सूती वस्तुयें मँगाता है।

प्रथम महायुद्ध (१९१४) तक ब्रिटेन का संसार के वस्त्र-बाजार पर एकछत्र राज्य था, किन्तु इसके उपरान्त संयुक्तराज्य अमेरिका और मुख्यत जापान ने उससे बहुत से पूर्वी बाजार उससे छीन लिये। लंकाशायर के धन्धे के पतन का केवल यही कारण नहीं है, एक दूसरा भी कारण है। वह यह है कि बहुत पूर्वी देश जो पहले ब्रिटेन से कपड़ा मँगाते थे अब स्वयं उत्पन्न करने लगे हैं और बहुत से देशों में बाहर से आने वाले कपड़े पर भारी चुंगी बिठा दी गई है। इसके विपरीत जापान को बहुत सी सुविधायें हैं जैसे चीन का विस्तृत बाजार समीप होना। वहाँ मजदूर बहुत सस्ते हैं और राज्य धन्धे को प्रोत्साहन देता है।

१६१३ में ब्रिटेन ने कुल ७,०००,०००,००० गज कपड़ा बाहर भेजा था जिसमें से ३,०००,०००,००० गज भारत में आया, किन्तु १६३७ में ब्रिटेन ने कुल १,६००,०००,००० गज कपड़ा बाहर भेजा और उसमें से कुल ४००,०००,००० गज कपड़ा भारत मे आया। १६१३ में ब्रिटेन ने २,१००,०००,००० पौंड कपास बाहर से मँगवाई, किन्तु १६३७ में केवल १२००,०००,००० पौंड ही कपास बाहर से आई।

ऊपर दिये हुए आँकड़ों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्रिटेन का धन्धा अवनति का ओर है। यद्यपि वहाँ धंधे को पुन संगठित करने के प्रयत्न हो रहे हैं, किन्तु फिर भी वह पूर्व दशा म कभी नहीं पहुँच सकता।

लोहे और स्पात की उत्पत्ति की दृष्टि से संसार म ब्रिटेन का चौथा स्थान है। कोयला और लोहा समीप ही मिलने के कारण ही यह धंधा इतना उन्नत हो गया है। ब्रिटेन में मुख्य पाँच स्पात क्षेत्र हैं।

लोहे और स्पात का धन्धा

यह ब्रिटेन का मुख्य लोहे और स्पात का प्रदेश है। लोहा, कोयला और लाइमस्टोन समीप ही मिलने के कारण यह प्रदेश अत्यन्त महत्व पूर्ण बन गया है। बरमिंघहम (Birmingham), कवेन्ट्री (Coventry), डडले और रैडिच (Redditch) इस धंधे के मुख्य केन्द्र हैं। बरमिंघहम में मुख्यत मोटरकार, साइकिल, रेलवे का समान, मशीन, टूल, बिजली के आपरेटस बनाये जाते हैं, कावेंट्री में मोटरकार और सायकिल बनती हैं। रैडिच में सुई का धंधा केन्द्रित है और डडले में जंजीरों का धन्धा।

(१) काला प्रदेश (Black country)

आरम्भ में शेफील्ड में लोहे का खाने थीं और जंगल की लकड़ी तथा पानी था, किन्तु अब यहाँ लोहा समाप्त हो चुका है। लिंकनशायर तथा स्वीडन से अधिकांश लोहा आता है। यहाँ कैंची, छुरी, चाकू, ब्लेड इत्यादि बहुत तैयार होते हैं। इसके अतिरिक्त मैंगनीज स्पात, क्रोमियम स्पात और टंग्स्टन स्पात बहुत अधिक तैयार होता है। इसके अतिरिक्त इस प्रदेश में राथरहैम (Ratherham) और चैस्टरफील्ड (Chesterfield) मुख्य केन्द्र हैं।

(२) शैफील्ड (Sheffield)

टाइन (Tyne), वियर (Wear) और टीस (Tees) प्रदेश में लोहा गलाया जाता है। हार्टिलपूल (Hartlepool) में जहाजों का धन्धा केन्द्रित है। डार्लिंगटन में रेलवे ऐंजिन बनते हैं और मिडिल्सबरो (Middlesborough) एक प्रमुख इंजिनियरिंग केन्द्र है। टाइन प्रदेश में न्यूकैसिल

(३) उत्तर पूर्वी तट

(Newcastle) है जहाँ आधुनिक ढंग के जहाज बनते हैं। वियर में सडरलैंड (Sunderland) मुख्य केन्द्र है जहाँ माल ढोने की नावें तैयार होती हैं।

(४) फरनेस प्रदेश (Furness District)

यह उत्तर पश्चिमी तटीय प्रदेश स्पात और पिग आयरन उत्पन्न करता है। बरो (Barrow) में जहाज बनाने का धन्धा है।

(५) दक्षिण वेल्स (South Wales)

दक्षिण वेल्स में टिनप्लेट तैयार होते हैं। लोहा स्पेन और अलजीरिया से आता है और टिन मलाया, बोलीविया, तथा नाइजीरिया से।

(६) स्काटलैंड की मध्य घाटी (Midland Valley of Scotland)

इसका महत्व इंजिनियरिंग और जहाज बनाने के धन्धे के कारण है। ग्लासगो, ग्रीनोक, और डम्बर्टन इसके केन्द्र हैं।

जहाज बनाने का धन्धा (Ship Building Industry)

यह ब्रिटेन का एक मुख्य धन्धा है। इसकी उन्नति के मुख्य कारण नीचे लिखे हैं —

१ गहरे नदियों के मुहाने,
२ कोयले और लोहे के धन्धों का समीप ही केन्द्रित होना,
३ जहाजों की बढ़ती हुई माँग,

क्लाइड नदी पर स्थित ग्लासगो संसार के सामुद्रिक जहाज बनाने का सब से बड़ा केन्द्र है। टाइन, वियर, और टीज नदियों के मुहानों पर भी यह धन्धा स्थापित है। बैल्फास्ट, बरो और ब्रोकेनहेड (Brokenhead) इस धन्धे के अन्य मुख्य केन्द्र हैं।

ऊन का धन्धा (Woollen Industry)

यह धन्धा ब्रिटेन का अत्यन्त महत्वपूर्ण धन्धा है किन्तु अब यह उतना महत्वपूर्ण नहीं है। यह धंधा मुख्यतः यार्कशायर में केन्द्रित है। यार्कशायर की जलवायु इस धंधे के उपयुक्त है। पैनाइन पर्वतमाला से जो जल मिलता है वह ऊन साफ करने और रंगने के लिए बहुत अच्छा है। पैनाइन पर्वतमाला पर भेड़ चराई जाती हैं इस कारण वहाँ ऊन भी उपलब्ध है। वहाँ जल शक्ति की भी सुविधा थी, किन्तु अब तो कोयला ही उपयोग में लाया जाता है। यह समुद्रतट के समीप है। इन्हीं कारणों से ऊनी धंधा यहाँ केन्द्रित हो गया।

वेस्ट राइडिंग आव यार्कशायर (West Riding of Yorkshire) जहाँ कोयला बहुतायत से मिलता है, इस धंधे का केन्द्र है। लीड्स, (Leeds) हडर्सफील्ड, हैलीफैक्स और ब्रैडफोर्ड मुख्य केन्द्र हैं। स्थानीय ऊन यथेष्ट नहीं होता इस कारण आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, न्यूजीलैंड, अरजैनटाइन और यूरुग्वे से ऊन मँगाया जाता है। ब्रिटेन का बना हुआ ऊनी कपड़ा मुख्यत. जर्मनी, जापान, स्वीडन, नारवे, रूस, डैनमार्क, इटली, स्पेन, और संयुक्तराज्य अमेरिका को जाता है।

इनके अतिरिक्त रासायनिक धंधे, शीशे का सामान, नकली रेशम, जूट, चमड़े का धंधा भी ब्रिटेन में महत्त्वपूर्ण है। रासायनिक धंधा तथा शीशे का धंधा लैनाशायर और चैशायर में केन्द्रित है। मिडलैंड के नगर चमड़े के धंधे के लिये महत्त्वपूर्ण हैं। जूट का धंधा डंडी (Dundee) में केन्द्रित है।

ब्रिटेन का विदेशी व्यापार

ब्रिटेन संसार में वैदेशिक व्यापार की दृष्टि से संयुक्तराज्य अमेरिका के उपरान्त दूसरे स्थान पर है। ब्रिटेन के बाहर जाने वाले माल का ८० % पक्का माल (Manufactured Articles) होता है। केवल कोयला ही ब्रिटेन का मुख्य पदार्थ है जो तैयार माल नहीं है और बाहर भेजा जाता है। ब्रिटेन का निर्यात मुख्यत लोहे का सामान, ऊनी वस्त्र, सूती वस्त्र, रासायनिक पदार्थ, कागज, मशीनें, चमड़े का सामान, तम्बाकू, जूट, शस्त्र इत्यादि हैं।

बाहर से आने वाली वस्तुओं को हम तीन श्रेणियों में बाँट सकते हैं —

१. भोज्य पदार्थ — गेहूँ, गेहूँ का आटा, मक्का, ओट, दाल, चावल, जौ, रई, दूध की वस्तुएँ मक्खन इत्यादि, मछली मांस, फल, शक्कर मसाले, चाय, कहवा, कोको, शराब, तम्बाकू, तथा सब्जी। भोज्य पदार्थ ब्रिटेन के आयात व्यापार में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

२. कच्चा माल — कपास, ऊन, सन, जूट, रेशम, हेम्प, रबर, फर, लकड़ी तिलहन, पैट्रोलियम, खाल, हाथी दाँत, चमड़ा कमाने के पदार्थ, कच्चा लोहा, ताँबा, सीसा, मैंगनीज जिंक, टिन, सोना चाँदी इत्यादि।

३. तैयार माल (Manufactured goods) — सूत, सूती कपड़ा, चमड़े का सामान, लोहे का सामान, शीशे का सामान, बिजली का सामान, रेशम कपड़ा, और चीनी मिट्टी के बर्तन।

दूसरे महायुद्ध (१९३९—४५) के उपरान्त ब्रिटेन का विदेशी व्यापार और भी कम हो गया है। संयुक्तराज्य अमेरिका अकस्मात् उदय हुआ और ब्रिटेन की बहुत सी पूँजी नष्ट हो गई अत उसकी औद्योगिक स्थिति कमजोर पड़ गई।

आयरलैंड का उत्तरी भाग उपजाऊ है परन्तु कहीं-कहीं भूमि खेती के योग्य नहीं है। यहाँ गेहूँ, जौ, सन और ओट की पैदावार बहुत अधिक होती है। खेती का धन्धा यहाँ का मुख्य धंधा है। खेती के उपरान्त मक्खन तथा सुअर पालने के धन्धे महत्त्वपूर्ण हैं। बेलफास्ट यहाँ का मुख्य बन्दरगाह है जहाँ जहाजी बेड़े बनते हैं। इसके अतिरिक्त सन के कपड़े का धन्धा भी यहाँ केन्द्रित है।

आयरलैंड

आयरलैंड का मध्य प्रदेश बहुत उपजाऊ है, परन्तु पानी का (Drainage) बहाव अच्छा न होने के कारण यहाँ दलदल बहुत है। अधिकांश भूमि पर घास है। खेती थोड़ी भूमि पर ही होती है। पूर्व में गेहूँ, जौ और ओट की पैदावार होती है। घास के मैदानों पर गायें बहुत चराई जाती हैं। डबलिन इस प्रदेश का मुख्य व्यापारिक केन्द्र है। यहाँ शराब तथा पापलिन कपड़ा बनाने के कारखाने हैं।

दक्षिण आयरलैंड बहुत उपजाऊ है। जौ की पैदावार यहाँ बहुत अधिक होती है इस कारण जौ की शराब बनाई जाती है। किन्तु मक्खन का धन्धा यहाँ का सब से महत्त्वपूर्ण धन्धा है। आयरलैंड प्रतिवर्ष बहुत सा मक्खन इंगलैंड को भेजता है। दक्षिण में ही यह मक्खन तैयार होता है क्योंकि यहाँ घास के मैदान बहुत हैं। मक्खन के साथ साथ सुअर पालने का धन्धा भी यहाँ महत्त्वपूर्ण है क्योंकि मक्खन निकले हुए दूध को पिलाकर सुअरों को मोटा किया जाता है।

ब्रिटिश द्वीप समूह में मछली पकड़ने का धन्धा भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। लगभग दस लाख मनुष्य इस धन्धे में लगे हुए हैं। उत्तरी-सागर में मछलियाँ बहुत पकड़ी जाती हैं। मछली पकड़ने के मुख्य स्थान डोगर बैंक के समीप हैं।

ब्रिटेन अत्यन्त समृद्धिशाली देश है। इस देश की औद्योगिक उन्नति के बहुत से कारण हैं। इस देश की भौगोलिक परिस्थिति ही इसकी उन्नति का मूल कारण है। देश की जलवायु शीतोष्ण होने के कारण औद्योगिक उन्नति के लिए बहुत ही अनुकूल है। इसके अतिरिक्त कोयला यहाँ बहुत अधिक निकाला जाता है, जिसके कारण यहाँ विशेष रूप से औद्योगिक उन्नति सम्भव हो सकी। लोहा भी यहाँ यथेष्ट मिलता है। इस कारण स्पात तथा यन्त्रों को बनाने का धन्धा जो अन्य धन्धों का मूल है यहाँ स्थापित हो सका है। यन्त्रों का आविष्कार सर्वप्रथम यहीं हुआ था। इस कारण आधुनिक ढंग के कारखाने सर्वप्रथम यहाँ ही स्थापित हुए और ब्रिटेन औद्योगिक उन्नति में अग्रणी बन गया। ब्रिटेन की औद्योगिक उन्नति का एक कारण यह भी है कि यहाँ के श्रमजीवी बहुत कुशल तथा परिश्रमी हैं।

औद्योगिक उन्नति के साथ ही साथ ब्रिटेन का व्यापार भी खूब ही चमका। व्यापारिक उन्नति में उसका टूटा फूटा समुद्रतट जलमार्गों की सुविधा, अच्छे

बन्दरगाह तथा नाविक शक्ति विशेष सहायक रहे हैं। ब्रिटेन का व्यापार मुख्यत योरोप से है। परन्तु ब्रिटेन से बाहर जाने वाला तैयार माल अधिकतर साम्राज्य के अन्तर्गत देशों को जाता है और बाहर से आने वाली वस्तुओं में से अधिकांश योरोप तथा अमेरिका से आती हैं।

फ्रांस

धरातल

फ्रांस का अधिक भाग मैदान है। कहीं-कहीं टूटी फूटी पर्वत श्रेणियाँ भी हैं जो मार्गों के लिए बाधक नहीं होतीं। दक्षिण पूर्व में पैरीनीज तथा आल्पस पर्वत मालायें हैं जिन्हें काटकर रेलें निकाली गई हैं। माउन्ट सेनिस की सुरंग आल्पस पर्वत माला को पार करती है। फ्रांस के मध्य में भी ऊँचा प्रदेश है। पूर्व की ओर सेवीनान पर्वत श्रेणी है जो रोन की घाटी के पास एक साथ नीची हो जाती है। फ्रांस में अधिकांश पठार हैं जिनके चारों ओर नीचे मैदान हैं। इन्हीं मैदानों में अधिकांश जनसंख्या निवास करती है।

जलवायु

फ्रांस की जलवायु अच्छी है। दक्षिण में होने के कारण यहाँ का तापक्रम ऊँचा रहता है जिसके कारण खेती बारी भली भाँति हो सकती है। गर्मियों में दक्षिण-पश्चिमी हवायें चलती हैं जिनसे वर्षा होती है। उत्तरी-सागर के समीप पतझड़ में भी वर्षा होती है। भूमध्य सागर के तट के समीप जाड़ों में वर्षा होती है। दक्षिण में गर्मी अधिक होती है और गर्मियों में वर्षा बिलकुल ही नहीं होती। जर्मन सीमा के पास के प्रदेश में गर्मियों में गर्मी और जाड़ों में भयकर जाड़ा पड़ता है।

पैदावार

देश की भूमि का पाँचवाँ भाग पहाड़ों से घिरा है। एक चौथाई में पठार हैं तथा बाकी में उपजाऊ मैदान हैं। फ्रांस की भूमि उपजाऊ तथा जलवायु खेती के अनुकूल होने से फ्रांस कृषि प्रधान देश है। फ्रांस की लगभग आधी जनसंख्या गाँवों में रहती है। फ्रांस में गेहूँ बहुत उत्पन्न होता है। रूस को छोड़कर फ्रांस योरोप में सबसे अधिक गेहूँ उत्पन्न करता है। गेहूँ के अतिरिक्त राई (Rye) तथा जौ भी उत्पन्न होता है। अनाज के अतिरिक्त आलू भी यहाँ खूब उत्पन्न होता है।

परन्तु फ्रांस की मुख्य पैदावार अंगूर है। मध्य तथा दक्षिण फ्रांस की नदियों की घाटियों में अंगूर बहुत अधिक उत्पन्न होता है। सीन (Seine), राइन (Rhine) तथा गैरोन (Garonne) नदियों की घाटियों में तथा भूमध्य सागर के प्रदेश में अंगूर बहुत अधिक उत्पन्न होता है। प्रत्येक क्षेत्र में कोई विशेष ब्राँड की शराब

तैयार की जाती है। शैम्पेन की शराब पैरिस के पूर्वी जिले में बनाई जाती है। फ्रांस में खेती के साथ साथ पशु पालन भी होता है।

खनिज पदार्थ

फ्रांस में खनिज पदार्थ की कमी है। जो कुछ भी कोयला निकाला जाता है वह उत्तर के प्रान्त में जो जर्मनी और बेलजियम से जुड़ा हुआ है। इसी प्रदेश में फ्रांस का लगभग दो तिहाई कोयला खोदा जाता है। यद्यपि कोयला साधारणतः अच्छा होता है किन्तु अधिक गहराई पर मिलने के कारण उसको खोदने में व्यय अधिक होता है। इसके अतिरिक्त पूर्वी पहाड़ों के समीपवर्ती प्रदेश में रोन नदी के घाटी में भी कोयले की खानें हैं।

कोयले की कमी को प्रकृति ने जल शक्ति के द्वारा पूरा कर दिया है। भाग्यवश फ्रांस के उन प्रदेशों में जलशक्ति बहुत है, जहाँ कोयले का अभाव है। फ्रेंच आल्पस, पैरीनीज तथा मध्य के ऊँचे प्रदेश में जल शक्ति बहुत है। पहले (१६१४) योरोपीय युद्ध के समय फ्रांस में जल शक्ति का अत्यधिक उपयोग किया गया, क्योंकि उस समय फ्रांस की कोयले की खानें जर्मनी के अधिकार में पहुँच गई थीं। पिछले युद्ध १६४० के फलस्वरूप भी फ्रांस की सब कोयले की खानें जर्मनी के अधिकार में पहुँच गईं।

उद्योग धन्धे

फ्रांस में उद्योग धन्धे कृषि की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण हैं। किन्तु फ्रांस में बनाया हुआ माल संसार में अपनी सुन्दरता तथा कारीगरी के लिए प्रसिद्ध है। फ्रांस के उद्योग धन्धे बेलजियम तथा जर्मनी के सीमाप्रान्त से लगे हुए कोयले की खानों के समीप केन्द्रित हैं। इनके अतिरिक्त फ्रांस के दक्षिण-पूर्व के जिलों में भी उद्योग धन्धे केन्द्रित हैं। उत्तर का औद्योगिक प्रदेश जर्मनी के द्वारा (१६४० के युद्ध में) अपने अधिकार में कर लिया गया।

सूती कपड़े का धन्धा फ्रांस का अत्यन्त महत्वपूर्ण धन्धा है। अलसैस तथा लोरेन प्रान्त इस धन्धे के मुख्य प्रदेश हैं। वोसजेज (Vosges) की घाटियों में सूती कपड़ा वर्षों पर बहुत समय से तैयार किया जाता है। मुलहाऊस तथा कोलमर इस धन्धे के प्रधान केन्द्र हैं। सेंट डी इपीनल (St de Epinal) में भी सूती कपड़े का धन्धा केन्द्रित है। रेशम का धन्धा दक्षिण में केन्द्रित है। लियान (Lyons) तथा सेंट इटने (St Etienhe) इसके मुख्य केन्द्र हैं। लियान तथा इटने का जल रंगाई के लिए बहुत उपयोगी है। इसके अतिरिक्त रोस तथा पैरिस में भी यह धन्धा होता है।

उत्तर पूर्व में नैन्सी तथा लांगवे के जिलों में लोहा मिलता है, इस कारण इस प्रदेश में लोहे का धन्धा पनप गया है। किन्तु लोहा गलाने के

जमनी तथा बलाजयम से मँगाना पड़ता है। क्रूजा (Creusot) लाहे के धन्धे का प्रधान केन्द्र है। यहाँ मशीन, एंजिन, रेल के डिब्बे तथा अन्य भारी वस्तुए बनता हैं। ब्राइ (Briey) के बेसिन म लाहे का धन्धा खूब उन्नत हुआ है और स्पात के कारखाने भी स्थापित किए गए हैं। लिला तथा पेरिस मे लोहे के कारखाने हैं।

ऊनी कपड़े का धन्धा अधिकतर उत्तर म पाया जाता है। उत्तर में ऊन अधिक उत्पन्न होता है। कोयला समीप ही मिलता है। इस कारण यहाँ यह धन्धा उन्नति कर गया है। पेरिस ऊन की प्रधान मण्डी है। ऊन का धन्धा फ्रांस का मुख्य धन्धा है। रौबेक्स (Roubaix) रीम्स (Reims) तथा अमीन्स (Amiens) इसके मुख्य केन्द्र हैं।

इनके अतिरिक्त चीनी मिट्टी के बर्तन, शीशा के बर्तन तथा घड़ियों का धन्धा भी फ्रांस के उत्तर म होता है।

जलमार्ग

फ्रांस में जलमार्ग बहुत महत्वपूर्ण हैं। यहाँ पृथ्वी समतल है। इस कारण नावों के आने जाने में कोई रुकावट नहीं होती। फ्रांस के पूर्व तथा पश्चिम की नदियों म जो नहरें निकाली गई हैं वे वहा के मुख्य मार्ग हैं। इनमें मारनी-राइन नहर (Marne Rhine canal) अधिक महत्वपूर्ण है जो राइन और सीन के जलमार्गों को जोड़ता है। बरगण्डी की नहर सीन और रोन नदियों को मिलाता है। मारसलीज-रोन-नहर (Marseilles and Rhone canal) मारसलीज बन्दरगाह को रोन की घाटी से मिलाती है। पेरिस जलमार्गों का प्रधान केन्द्र है और प्रत्येक भाग के जलमार्ग इससे आकर मिलते हैं। यद्यपि रेलों के कारण नहरों का महत्व घट गया है परन्तु फिर भी भारी वस्तुओं को ले जाने म इनका बहुत उपयोग होता है।

फ्रांस के मुख्य बन्दरगाह निम्नलिखित हैं —

मारसलीज (Marseilles), हैवर (Havre) रोयन (Rouen) बोर्डियो (Bordeaux) डनकर्क (Dunkirk) और नैनटेज (Nantes)। फ्रांस के बन्दरगाह उत्तरी सागर, अटलांटिक महासागर तथा भूमध्यसागर पर होने के कारण संसार के मुख्य व्यापारिक मार्गों पर हैं। इस कारण इनका व्यापारिक महत्व अधिक है। फ्रांस का व्यापार अधिकतर अपने साम्राज्य के देशों से होता है।

जर्मनी — यह देश तीन प्राकृतिक भागों में बाँटा जा सकता है। (१) उत्तर के मैदान (२) मध्य का पर्वतीय प्रदेश (३) आल्पस पर्वत श्रेणियों का दक्षिणी भाग। उत्तर का मैदान समतल है किन्तु भूमि उपजाऊ नहीं है और न यहाँ खनिज पदार्थ ही अधिक पाये जाते हैं। मध्य पर्वतीय प्रदेश उपजाऊ है और यहाँ लकड़ी और खनिज पदार्थ भी मिलते हैं। आल्पस का पर्वतीय प्रदेश पैदावार के लिए उपयोगी नहीं है, परन्तु जिन नदियों की घाटियों में जलवायु अनुकूल है वहाँ खेती बारी होती है। उत्तर के मैदान उपजाऊ न होने के कारण घने आबाद नहीं हैं। मध्य का पठार बहुत घना आबाद है क्योंकि यहाँ की भूमि उपजाऊ है और यहाँ उद्योग धन्धे भी उन्नति कर गए हैं।

जलवायु — जर्मनी की जलवायु पश्चिम और पूर्व में भिन्न है। इसका कारण यह है कि पश्चिम में समुद्र का जलवायु पर अधिक प्रभाव है तथा पूर्व में समुद्र का प्रभाव नहीं है। उत्तर-पश्चिम में न तो जाड़े में अत्यधिक शीत और न गर्मियों में अधिक गर्मी ही पड़ती है। राइन की घाटी में गर्मियों में तेज गर्मी पड़ती है। किन्तु जाड़ों में अधिक ठंड नहीं होती। वर्षा सब महीनों में होता है किन्तु अधिकतर पानी गर्मियों में ही बरसता है। उत्तरी सागर (Nantes) के समीप वर्षा सालों में सबों में एक सी होती है। परन्तु पूर्व में गर्मियों में अधिक वर्षा होती है। उत्तर के नीचे मैदानों में वर्षा २०" से ३०" तक तथा दक्षिण के पर्वतीय प्रदेश में इससे अधिक होती है।

जर्मनी की भौगोलिक परिस्थिति इतनी अच्छी नहीं है जितनी की अन्य देशों की, फिर भी बीसवीं शताब्दी में जर्मनी ने आश्चर्यजनक औद्योगिक उन्नति की है। यद्यपि जर्मनी की भूमि उपजाऊ नहीं है, और वर्षा भी यथेष्ट नहीं होती है। फिर भी लगभग ४४% भूमि पर खेती की जाती है। जर्मनी में नमक और पोटाश बहुत निकाला जाता है। इस कारण खेती के लिये उत्तम और सस्ती खाद मिलने की सुविधा है। उत्तर तथा उत्तर पूर्व में बड़े बड़े फार्मों की अधिकता है। जिन पर गहरी खेती (Intensive Cultivation) होती है।

जर्मनी में कोयला और लोहा दोनों ही यथेष्ट राशि में मिलते हैं। लक्समबर्ग की खानों से बहुत लोहा निकाला जाता है। इसी कारण लोहे और स्पात का धन्धा यहाँ अधिक उन्नति कर गया है। जर्मनी में नमक और पोटाश की बहुतायत के कारण यहाँ रासायनिक पदार्थों को बनाने का धन्धा भी बहुत उन्नतिशील है।

खनिज पदार्थों की अधिकता के अतिरिक्त जर्मनी की स्थिति ने भी उसे औद्योगिक देश बनने में बहुत सहायता पहुँचाई है। योरोप के मध्य में होने के कारण इसका

योरोप के सभी देशों से सम्बन्ध हो गया है। आल्पस पर्वत माला में सुरंग बन जाने के कारण जर्मनी का भूमध्यसागर के अन्य देशों से भी सम्बन्ध हो गया है। इसके अतिरिक्त राइन और यल्ब नदियाँ जर्मनी के मुख्य औद्योगिक केन्द्रों को उत्तरी सागर (North Sea) से जोड़ती हैं। मार्गों की सुविधा ही के कारण जर्मनी का व्यापार बहुत बढ़ गया है।

जर्मनी की औद्योगिक उन्नति का श्रेय बहुत कुछ जर्मन सरकार को भी है। १८७० के उपरान्त राज्य ने उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन तथा सहायता देने की नीति को अपनाया और तभी से जर्मनी ने औद्योगिक उन्नति की। किन्तु जर्मनी के उद्योग धन्धों की उन्नति का मुख्य कारण वहाँ की वैज्ञानिक खोज है। जर्मनी के विश्व विद्यालयों तथा संस्थाओं में जितनी अधिक वैज्ञानिक खोज हुई है उतनी कहीं नहीं हुई। यही नहीं, खेती की उन्नति भी बहुत कुछ वैज्ञानिक खोज के ही कारण हुई है। यदि देखा जाय तो जर्मनी की औद्योगिक उन्नति में प्रकृति ने इतनी सहायता नहीं दी जितनी कि जर्मनी के वैज्ञानिकों ने। यह जर्मन जाति के परिश्रम का ही फल था कि जर्मनी एक उन्नत राष्ट्र बन सका था।

१९१९ के उपरान्त जर्मनी के योरोपीय महायुद्ध में परास्त हो जाने के फलस्वरूप उसकी बहुत हानि हुई। जर्मनी के अफ्रीका के सारे उपनिवेश उससे छीन लिए गये। यही नहीं जर्मनी का लोरेन लोहे की खानों का प्रान्त तथा एलसेस सूती कपड़े के धन्धे का प्रान्त फ्रांस को दे दिया गया। सिलीशिया की कोयले की खानों का प्रदेश पोलैंड को दिया गया। पोसन का उपजाऊ प्रान्त भी जर्मनी के हाथ से निकल गया। किन्तु पिछले वर्षों में जर्मनी ने यह प्रान्त अपने पड़ोसियों से फिर छीन लिये। यही नहीं उसने इन प्रान्तों के अतिरिक्त पोलैंड, आस्ट्रिया, चेकोस्लावाकिया को भी उदरस्थ कर लिया। पर १९३९—४५ के युद्ध के फलस्वरूप ये सब प्रदेश जर्मनी के अधिकार से निकल गये और उसका औद्योगिक महत्व घट गया। यही नहीं युद्ध के हारने के फल स्वरूप उसके कारखानों को भी हटा कर विजेता देश अपने यहाँ ले गये। अब तो ऐसा प्रतीत होता है कि जर्मनी केवल खेतिहर देश बना दिया जावेगा।

जर्मनी में जो आल्पस पर्वत की श्रेणियाँ हैं वे केवल उनकी बाहरी शाखायें हैं।

आल्पस का पर्वतीय प्रदेश

इस पर्वत श्रेणी के उत्तर में डैन्यूब नदी तक भूमि है। वह हिम नद (Glaciers) द्वारा लाई हुई मिट्टी से बनी है। यद्यपि यह प्रदेश बहुत उपजाऊ नहीं है फिर भी घाटियों में खेती होती है। डैन्यूब की घाटी में भूमि उपजाऊ है इसलिए वहाँ पैदावार बहुत होती है। इस प्रदेश की ऊँचाई अधिक होने के कारण गर्मी कम और वर्षा

अधिक होती है, पहाड़ों के ढाल सघन वन से ढके हुये हैं। इन ढालों पर घास बहुत होती है इस कारण दक्षिण पर्वतीय प्रदेश में पशु बहुत चराये जाते हैं। डैन्यूब की घाटी में पैदावार बहुत होती है, यहाँ की मुख्य पैदावार गेहूँ तथा हाप्स (Hops) है जिससे शराब बनाई जाती है। इस प्रदेश में खनिज पदार्थ अधिक नहीं हैं केवल थोड़ा सा लिगनाइट जाति का कोयला मिलता है। परन्तु यहाँ जल बहुत है इस कारण यहाँ नदियों के जल से बिजली खूब उत्पन्न की गई है।

जल शक्ति

दक्षिण जर्मनी और आल्पस में जल विद्युत् बहुत उत्पन्न की जाती है नेकार (Neckar) से जो नहरें निकाली गई हैं उनके जल से विद्युत् बनाई जाती है। मेन नदी, बवेरिया की झीलें, वालचेन्सी (Walchensee) तथा कोचेलसी (Kochelsee), से भी बिजली उत्पन्न की जाती है। बवेरिया में मुलडार्फ (Muhldorf) के समीप इनवर्क के पावर स्टेशन से एक लाख घोड़ा की शक्ति (Horse Power) उत्पन्न की जाती है। अर्ज गैब्रिज (Erz Gebrige) तथा रूर (Ruhr) प्रदेश में नदियों पर बाँध बनाकर पानी को रोक लिया गया है और उससे जलशक्ति उत्पन्न की गई है। *इसके अतिरिक्त ब्लैक फारेस्ट (Black forest) तथा वोस्जेस (Vosges)* प्रदेश की नदियों से भी विद्युत् उत्पन्न की जाती है।

राइन का प्रदेश (Rhine Valley)

राइन की घाटी अत्यन्त उपजाऊ प्रदेश है, यही कारण है कि यहाँ खेती बारी अधिक होती है और जनसंख्या घनी है। यह घाटी दोनों ओर पहाड़ों से घिरी है इस कारण ठंडी हवायें इस प्रदेश तक नहीं पहुँच सकतीं और बसंत के मौसम में यहाँ गरमी रहती है। इस प्रान्त में खेती बारी मुख्य धन्धा है।

यहाँ अंगूर बहुत अधिक उत्पन्न होता है। पर्वतों के ढालों तथा मैदानों में अंगूर की खेती होती है। इसके अतिरिक्त हाप्स (Hops), तम्बाकू तथा चुकंदर भी यहाँ बहुतायत से उत्पन्न होता है। इस कारण शराब, शक्कर, तथा सिगरेट बनाने का धन्धा यहाँ बहुत उन्नति कर गया है। राइन घाटी के समीप ही कुछ पर्वतीय प्रदेश हैं जिनमें ब्लैक फारेस्ट (Black forest) मुख्य है। इन वनों में पाइन के वृक्षों की भरमार है। लकड़ी का धंधा यहाँ का मुख्य धंधा है। लकड़ी के खिलौने, घड़ियाँ, वाद्य (बाजे) तथा दूसरी तरह का लकड़ी का सामान यहाँ बहुत बनता है। ओडेनवाल्ड (Odenwald) में भी लकड़ी का धंधा खूब पनप गया है इसके पश्चिमी ढाल पर फलों के बाग लगाये गए हैं।

जूरा (Jura)

यह प्रदेश अधिक उपजाऊ नहीं है। घास के मैदान यहाँ अधिक हैं जिन पर गायें तथा अन्य पशु बहुत अधिक संख्या में चराये जाते हैं। उपजाऊ स्थानोंमें खेती बारी भी होती है। न्यूरम्बर्ग (Nauremberg) में लिथो का पत्थर मिलता है। संसार भर में यहीं से ही लिथो का पत्थर भेजा जाता है। यहाँ लोहे की भी बहुत सी खानें हैं।

उत्तर के नीचे मैदान

उत्तर के नीचे मैदान यद्यपि बहुत उपजाऊ नहीं हैं इस कारण यहाँ बहुत अच्छी फसल उत्पन्न नहीं की जा सकती, फिर भी इस विशाल भूभाग में खेती बहुत होती है। इस प्रदेश का क्षेत्रफल लगभग ८०,००० वर्ग मील है। परन्तु उसमें आधी भूमि खेती-बारी के काम आती है। रई (Rye) यहाँ की मुख्य पैदावार है। समस्त जर्मनी की दो तिहाई रई (Rye) इस प्रदेश में उत्पन्न की जाती है। इसके अतिरिक्त ओट और गेहूँ की पैदावार भी यहाँ बहुत होती है। सैक्सनी और सिलीशिया में गेहूँ की बहुत पैदावार होती है। उत्तरी मैदानों में आलू भी बहुत उत्पन्न होता है। आलू यहाँ का मुख्य भोज्य पदार्थ है। इसकी शराब भी तैयार की जाती है। चुकन्दर की पैदावार मैगबर्ग (Magcburg) तथा सिलीशिया के प्रान्त में बहुत होती है। चुकन्दर की खेती में यहाँ बहुत से मनुष्य लगे हुए हैं। मैगबर्ग शक्कर के धंधे का केन्द्र है। चुकन्दर का छिलका तथा गूदा पशुओं को खिलाया जाता है। इस कारण इस प्रदेश में पशुपालन भी होता है। इस प्रदेश में खनिज पदार्थ अधिक नहीं मिलते।

सैक्सनी

यह पथरीला प्रदेश है और खेती बारी के योग्य नहीं है। गेहूँ, रई, (Rye) और आलू की पैदावार अधिक होती है। नदियों की उपजाऊ घाटियों में फलों के बाग हैं पर ढालों पर जंगल बहुत पाये जाते हैं तथा भेड़ें चराई जाती हैं। खनिज पदार्थ अवश्य यहाँ अधिक मिलते हैं। लोहा, टिन, रांगा और चाँदी यहाँ निकाला जाता है। इनमें लोहे की खानें विशेष महत्व की हैं। ज्वीकाऊ (Zwickau) तथा केमिट्ज (Chemnitz) में लोहा अधिक निकाला जाता है। ज्वीकाऊ की खानों में लोहे के समीप ही कोयला भी मिलता है। इसी कारण इस प्रदेश में लोहा का धन्धा पनप गया है। यहाँ के पर्वतीय ढालों पर मैरिनो जाति की भेड़ बहुत पाली जाती है। इस कारण यहाँ ऊनी कपड़े का धंधा भी होता है। इस प्रदेश में लकड़ा तथा पानी की बहुतायत होने के कारण यहाँ कागज और घड़ी घड़ियों का धन्धा केन्द्रित है।

खेती की अपेक्षा जर्मनी में उद्योग धन्धे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। जर्मनी की औद्योगिक उन्नति में कोयले तथा जल शक्ति की बहुतायत विशेष सहायक हुई है। रूर (Ruhr), सैक्सनी (Saxony) तथा सिलीशिया (Silesia) मुख्य कोयले के प्रदेश हैं। रूर योरोप की सबसे बड़ी कोयले की खान है। लिगना इट—प्रशा, (Prussia) थूरिंजिया और सैक्सनी में बहुत निकलता है।

जर्मनी के उद्योग-धन्धे

लोहे का धन्धा विशेष रूप से कोयले पर निर्भर है। १६१६ के उपरान्त लोरेन का प्रान्त छिन जाने से जर्मनी में लोहे की कमी हो गई थी इस कारण जर्मनी को लोहा बाहर से मँगाना पड़ता था। किन्तु १६३६ के युद्ध म जर्मनी ने लोरेन का प्रान्त फिर ले लिया। जहाँ जहाँ कोयले की खानें हैं वहाँ-वहां लोहे और स्पात का धन्धा केन्द्रित है। जर्मनी संसार में सबसे अधिक स्पात बाहर भेजता था। दूसरे युद्ध के उपरान्त उसकी स्थिति फिर गिर गई।

जर्मनी में निम्नलिखित लोहे और स्पात के मुख्य केन्द्र हैं। राइनलैंड वेस्टफालिया (Rhineland Westphalia), सीज (Siege), लाहन (Lahn), डिल (Dill Dt) तथा अपर हेयास (Heass), सिलीशिया (Silesia) उत्तर-पूर्व तथा मध्य जर्मनी, दक्षिण जर्मनी तथा सैक्सनी। इनमें राइनलैंड वेस्टफालिया मुख्य केन्द्र है, जहाँ देश का ८०% से अधिक पिग आयरन तथा स्पात तैयार किया जाता है। एसन (Essen), मुलहीम (Mulhiem), हैगेन (Hagen) रूर के प्रदेश में तथा ड्यूसेलडार्फ (Dusseldorf) डुसबर्ग (Duisburg) और रूराट (Ruhrort) राइन नदी के प्रदेश में लोहे और स्पात के धन्धे के मुख्य केन्द्र हैं। सोलिंजन (Solingen) में चाकू, छुरी और कैंची अच्छी बनती हैं। ड्यूसेलडार्फ में युद्ध सामग्री तैयार की जाती है।

सूती कपड़े का धन्धा जर्मनी के भिन्न भिन्न भागों में फैला हुआ है। यद्यपि सूती कपड़े के केन्द्र मुख्यत. कोयले की खानों के समीप स्थित हैं परन्तु वैसे हर एक भाग में कपड़े के कारखाने स्थापित हो गए हैं। रूर की कोयले की खानों पर सूती कपड़े का धन्धा बहुत उन्नति कर गया है। बर्मन (Barmen), एलबरफील्ड (Elberfield) तथा क्रेफेल्ड (Crafeld) में ऊनी और रेशमी कपड़ा बहुत तैयार किया जाता है। क्रेफेल्ड रेशमी कपड़ा बनाने का मुख्य केन्द्र है। सैक्सनी का प्रान्त कपड़े के धन्धे की दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण है। यहाँ का मुख्य केन्द्र कैमिट्ज (Chemnits) है। कैमिट्ज को जर्मनी का मेनचेस्टर कहते हैं। यहाँ सूती कपड़ा बहुत तैयार होता है और मशीनें भी बनती हैं। ज्वीकाऊ (Zwickau) भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण केन्द्र है। मोजे, बनियायनें इत्यादि वस्तुएँ सैक्सनी तथा वुरटम्बर्ग के केन्द्रों में बहुत

तैयार होते हैं। स्टटगार्ट (Stuttgart) यहाँ का मुख्य केन्द्र है। इनके अतिरिक्त बवेरिया के पहाड़ी प्रान्त में सूत कातने का धन्धा चलता है क्योंकि वहाँ जल शक्ति उपलब्ध है। बवेरिया में इसार (Isar) तथा इन (Inn) नामक नदियों से जलशक्ति उत्पन्न की जाती है जिससे यहाँ के धन्धे चलते हैं। अल्म (Ulm) तथा आग्सबर्ग (Augsburg) इस प्रदेश में सूती कपड़े के धन्धे के मुख्य केन्द्र हैं।

सूती कपड़े के धन्धे के अतिरिक्त जर्मनी में रासायनिक धन्धों (Chemical Industries) की बहुत उन्नति हुई है। इसका मुख्य कारण यह है कि जर्मनी में नमक और पोटाश बहुत पाया जाता है। उत्तर के मैदानों में नमक की चट्टानें बहुत मिलती हैं। इसके अतिरिक्त थूरिंजिया (Thuringia) की घाटियों में भी पोटाश बहुत मिलता है। पोटाश की अधिकता के कारण यहाँ रासायनिक खाद बनाने का धन्धा भी बहुत उन्नति कर गया है जिससे खेती को बहुत लाभ पहुँचा है। पोटाश तथा नमक के अतिरिक्त कोयले के कारण भी बहुत से रासायनिक धन्धे स्थापित हो गए हैं। जर्मनी ने कोलतार से रंग बनाने में आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की है। जल विद्युत् के द्वारा भी इन धन्धों को बहुत सहायता मिली और अधिकतर ये धन्धे ऐसे स्थानों पर ही केन्द्रित हैं जहाँ जल विद्युत् है। इन धन्धों के केन्द्र अधिकतर नदियों के किनारे पर हैं, क्योंकि इन धन्धों के लिए भारी कच्चे माल की आवश्यकता होती है। लुडविगशेफन (Ludwigshafen) जो मैनहीम नदी पर स्थित है रंग बनाने का मुख्य केन्द्र है।

मिट्टी के बर्तन तथा शीशे के बर्तन बनाने का धन्धा भी यहाँ महत्त्वपूर्ण है। मध्य के ऊँचे प्रदेश में यह धन्धा स्थापित है। जेना (Jena) शीशे के धन्धे का मुख्य केन्द्र है। इसके अतिरिक्त रूर (Ruhr) तथा उत्तर के मैदान में भी यह धन्धा खूब चलता है। जहाँ जल तथा लकड़ी की लुग्दी मिलने की सुविधा है वहाँ कागज का धन्धा केन्द्रित है। कागज बनाने के केन्द्र बाल्टिक प्रदेशों से भी लुग्दी मँगाते हैं। ऐसचैफेनबर्ग (Aschaffenburg), लिपजिग (Leipzig) तथा स्टटगार्ट (Stuttgart) कागज बनाने के मुख्य केन्द्र हैं।

दूसरे महायुद्ध (१६३६) में पराजित होने के फल स्वरूप जर्मनी के उद्योग धन्धों को भयंकर हानि पहुँची है। यही नहीं कि चैकोस्लोवाकिया, पोलैंड, आस्ट्रिया, हंगरी इत्यादि देश जिन्हें जर्मनी ने अपने राष्ट्र में मिला लिया था वे उससे छीन लिए गए तथा उस पर मित्र राष्ट्रों का कब्जा हो गया। उसके बहुत से कारखाने रूस तथा मित्र राष्ट्रों में उठा कर ले जाये गये। जर्मनी के आर्थिक ढाँचे पर मित्र राष्ट्रों का अधिकार है। ऐसा प्रतीत होता है कि जर्मन राष्ट्र को फिर अपने धन्धों

का पुन संगठन करने में बहुत समय लगेगा। आज तो जर्मनी पगु और निर्बल कर दिया गया है। उसके धधों को इस प्रकार नष्ट कर दिया गया है कि वह बहुत समय के लिए औद्योगिक नहीं बन सकता।

रूस

रूस का धरातल बिलकुल चौरस है। पर्वतीय प्रदेश बहुत कम है किन्तु इस विशाल मैदान म दलदल बहुत हैं तथा ककड़ पत्थर की कमी के कारण मार्गों को बनाने में कठिनाई होती है। इस देश में नदियाँ ही मुख्य मार्ग हैं। नदियो को नहरों से जोड़ दिया गया है जिससे आने-जाने में सुविधा हो गई है। रूस में ५१,८०० जल-मार्ग हैं। बहुत सी नदियो में दूर तक स्टीमर जा सकते हैं। किन्तु उत्तर की नदियाँ जाड़े में जम जाती हैं इस कारण उन दिनों वे व्यापार के काम की नहीं रहतीं। रूस के मुख्य बदरगाह बारसा, तथा आरकैंजिल वर्ष में ६ महीने जमे रहते हैं। वालगा जो देश के अन्दर बहुत दूर तक बहती है एक बन्द समुद्र (Caspian Sea) में गिरती है इस कारण व्यापार के लिए उपयोगी नहीं है। किन्तु सोवियत सरकार ने अपनी पचवर्षीय योजनाओं (Five Year Plan) के द्वारा देश में जो कृषि तथा औद्योगिक क्रान्ति कर डाली है उसके फल स्वरूप सड़कों तथा रेलों का भी खूब विस्तार हुआ है। अस्तु रूस म अब मार्गों की कठिनाइयाँ नहीं है।

रूस म ठड अधिक होती है। गर्मियो में गर्मी भी यथेष्ट पड़ती है। जाड़े में तापक्रम हिमांक (Freezing Point)से भी नीचे उतर जाता है तथा जुलाई में तापक्रम ४६° फै० से ८०° फै० तक पहुँच जाता है। रूस में वर्षा कम होती है। पश्चिम म वर्षा कुछ अधिक होती है किन्तु पूर्व में २०" से भी कम होती है।

जलवायु की दृष्टि से देश को तीन प्राकृतिक भागों में बाँटा जा सकता है। उत्तर में टुड्रा का प्रदेश है जिसके दक्षिण में वन प्रदेश हैं। वनों के दक्षिण में स्टेप्स (Steppes) के मैदान हैं।

टुड्रा का प्रदेश अत्यन्त ठंडा है इस कारण वह वीरान है और वहाँ कुछ उत्पन्न नहीं होता। टुड्रा के दक्षिण में सघन वन हैं। ससार में वन-सम्पत्ति की दृष्टि से रूस सबसे धनी देश है।

साइबेरिया एशिया के उत्तर म ६००० मील तक फैला है। इसका अधिकाश ५०° उत्तर अक्षांश रेखा के उत्तर में है। अतएव जाड़ों में यहाँ बहुत ठड और गर्मियों में गर्मी पड़ती है। वर्षा साधारण होती है। जाड़े में सब नदियाँ और समुद्र जम जाते हैं इस कारण उनका उपयोग नहीं हो सकता।

साइबेरिया का उत्तरी भाग टुड्रा है जिस पर अधिकांश शीतकाल में बर्फ जमी रहती है। इस कारण आर्थिक दृष्टि से यह भाग महत्वपूर्ण नहीं है। टुड्रा के दक्षिण

में टैगा अर्थात सघन व घ्यारा वन हैं जिनमें पाइन (Pine), स्प्रस (Spruce), लार्च (Larch) और फर (Fir) अधिक पाये जाते हैं। वनों के दक्षिण में स्टेप्स के मैदान हैं जो उपजाऊ हैं।

रूस तथा साइबेरिया मुख्यत कृषि प्रधान देश हैं। अनाज यहाँ अधिक राश में उत्पन्न होते हैं। राई (Rye) यहाँ का मुख्य भोज्य पदार्थ है और उत्तर में टुंड्रा तथा दक्षिण-पूर्व के सूखे प्रदेशों को छोड़ कर सारे रूस में राई उत्पन्न होती है। उत्तर में जाड़े अधिक लम्बे होने के कारण तथा दक्षिण पूर्व में वर्षा की कमी के कारण गेहूँ भी उत्पन्न नहीं हो सकता। गेहूँ उत्पन्न करने वाला क्षेत्र यूक्रेन से उत्तर पूर्व की दिशा में साइबेरिया से अल्टाई पहाड़ों तक फैला हुआ है। यूक्रेन का क्षेत्र गेहूँ उत्पन्न करने वाले अन्य क्षेत्रों से अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि एक तो यहाँ वर्षा निश्चित है दूसरे यह काले सागर के समीप स्थित है इस कारण ओडेसा इत्यादि बन्दरगाहों के द्वारा गेहूँ आसानी से बाहर भेजा जा सकता है। डान (Don)-घाटी का उपजाऊ क्षेत्र भी महत्वपूर्ण है क्योंकि रोस्टव (Rostov) से उस प्रदेश का अनाज बाहर भेजा जा सकता है। साइबेरिया के अनाज को रेल द्वारा बहुत दूर ले जाना पड़ता है। तब कहीं वह बिन्दुओं को भेजा जा सकता है, इस कारण साइबेरिया की उत्पत्ति अभी बहुत अधिक बढ़ी नहीं है।

गेहूँ के क्षेत्र में चुकन्दर भी उत्पन्न होता है किन्तु यूक्रेन (Ukrain) में इसकी पैदावार विशेष रूप से अधिक होती है। ओट और जौ गेहूँ के क्षेत्र के अतिरिक्त मध्य और उत्तर रूस तथा साइबेरिया के वनों को साफ करके निकाली हुई भूमि पर भी पैदा किया जाता है। यूक्रेन में मक्का भी खूब पैदा होती है। गेहूँ क्षेत्र के सूखे भाग में ज्वार बाजरा भी उत्पन्न होता है। गेहूँ क्षेत्र में तिलहन (Oil Seeds) भी खूब उत्पन्न किया जाता है। मध्य तथा पश्चिमी रूस में फ्लैक्स (Flax) और हेम्प (Hemp) बहुत होता है। आलू सर्वत्र उत्पन्न होता है। यूक्रेन में तम्बाकू की भी अच्छी पैदावार होती है।

वन—रूस तथा साइबेरिया के वन दो अरब एकड़ भूमि पर फैले हुए हैं। इन वनों में लकड़ी का कोई ठिकाना नहीं है। मार्गों की असुविधा के कारण इन वनों का अभी तक पूरा उपयोग नहीं होता है। लकड़ी का तार (Wood Tar Pitch) उत्तर के वनों में तैयार किया जाता है और आर्केंजल से विदेशों को भेजा जाता है। कागज का धंधा भी अब तेजी से उन्नति कर रहा है।

मछलियाँ—सोवियत रूस में मछली का धंधा भी महत्वपूर्ण है। स्टर्जियन (Sturgeon) नामक मछली कैस्पियन सागर तथा वोल्गा में बहुत पकड़ी जाती है। यहाँ लगभग १,१५,००० मछुए तथा उनके कुटुम्ब के लोग इस धंधे में लगे

हैं। मुरमान तथा श्वेत सागर (White Sea) के समुद्रतट पर काड (Cod) तथा हेरिंग (Herring) बहुत पकड़ी जाती हैं। उत्तरी महासागर (Arctic Ocean) से सील (Seil) पकड़ी जाती है जिसका तेल निकाला जाता है। पूर्व साइबेरिया के समुद्र में सामन (Salmon) और काड (Cod) बहुत मिलती हैं। अभी तक जापानी ही इस क्षेत्र में मछली पकड़ते थे किन्तु अब सोवियत सरकार ने इस ओर ध्यान दिया है और इस ओर भी मछली पकड़ने का धन्धा बढ़ रहा है।

सोवियत रूस में खनिज पदार्थ भी यथेष्ट मिलते हैं। साइबेरिया के अतिरिक्त रूस में तीन मुख्य प्रदेश हैं जहाँ कोयला निकलता है—(१) मास्को के दक्षिण में, (२) यूराल के पर्वतीय प्रदेश में, (३) डानेट्ज़ बेसिन (Donetz Basin) यूक्रेन के प्रदेश में। इनमें कोयला उत्पन्न करने वाले प्रदेश औद्योगिक प्रदेशों के समीप हैं, इस कारण उनकी स्थिति बहुत ही अनुकूल है।

लोहे की खानें पश्चिमी यूराल और यूक्रेन में पाई जाती हैं। यूक्रेन की लोहे की खानें नीपर नदी (Dnieper) की निचली घाटी में हैं जिनसे मिली मेंगनीज की खानें हैं। संसार की उत्पत्ति का लगभग आधा प्लेटिनम रूस में निकलता है। यूराल और यूक्रेन में प्रतिवर्ष ५० टन लोहा निकाला जाता है। रूस में लगभग ३३ करोड़ टन कोयला, पचास लाख टन लोहा, प्रतिवर्ष निकाला जाता है। इनके अतिरिक्त यूराल पर्वतीय प्रदेश में चाँदी और ताँबा भी निकलता है।

साइबेरिया में सोना बहुत से स्थानों पर पाया जाता है। विशेषकर ट्रान्स बैकालिया के प्रदेश में बहुत निकाला जाता है। इनके अतिरिक्त Yenseisk, Vitimsk और आमूर में भी सोना निकाला जाता है। ताँबा किरगिज में भी निकाला जाता है। किन्तु अल्टाई में भी यथेष्ट ताँबा पाया जाता है जिसका उपयोग नहीं किया गया है। जिंक और सीसा भी यहाँ बहुत मिलता है। कोयला और लोहा टोमस्क (Tomsk) के दक्षिण, किरगिज के स्टेप मैदानों, इरकुटस्क (Irkutsk) के पूर्व में, और ट्रांस बैकालिया में मिलता है।

मिट्टी के तेल तथा पैट्रोलियम ट्रान्स काकेशिया के प्रदेश में बहुत मिलता है। इसके अतिरिक्त कैस्पियन सागर के पूर्वी किनारे, उत्तर काकेशिया तथा ग्राजनी (Grozny) और मैकाक में भी तेल की खानें हैं।

रूस अभी तक औद्योगिक दृष्टि से उन्नत नहीं था किन्तु पचवर्षीय योजनाओं की सफलता के उपरान्त रूस ने बड़ी तेजी से औद्योगिक उन्नति की है। लोहे और

स्पात का धन्धा यूराल के पश्चिमी प्रदेश (पर्म) और यूक्रेन में बहुत उन्नति कर गया है। यूक्रेन में नायपेट्रोवस्क (Dnepropetrovsk) लोहे और स्पात के धन्धे का मुख्य केन्द्र है। मास्को, लैनिनग्रेड तथा मध्य रूस के अन्य केन्द्रों में लोहे तथा स्पात की वस्तुयें बनती हैं। इन औद्योगिक केन्द्रों में सूती कपड़े का धन्धा भी केन्द्रित है। तुर्किस्तान, काकेशस तथा मिश्र से कपास आती है। पेन्ज़ा (Penza) सिम्बर्स्क (Simbirsk) मास्को तथा लैनिनग्रेड में ऊनी कपड़े का धंधा भी केन्द्रित है। मास्को, लेनिनग्रड तथा ब्लाडिमर (Vladimir) में रबर की वस्तुयें तैयार की जाती हैं।

रूस का अधिकतर व्यापार एशियाई देशों से है। योरोपीय देशों को वह अनाज भेजता है और एशियाई देशों को तैयार माल भेजता है।

पिछले योरोपीय महायुद्ध के फल स्वरूप रूस ने आधा पोलैंड (पूर्वी भाग) पर फिर अपना अधिकार कर लिया। लिथूनिया, लैटविया और इस्थोनिया सोवियत संघ में सम्मिलित हो गए और फिनलैंड का कुछ हिस्सा भी रूस ने ले लिया। अभी थोड़ा ही समय हुआ रूस ने रूमानिया से अपने पुराने प्रदेश बैसेरेबिया और बुकोविना छीन लिए थे। पचवर्षीय योजनाओं के फल स्वरूप रूस को संसार के प्रमुख औद्योगिक देशों में गणना होती है।

इटली

इटली का क्षेत्रफल ११६,७०० वर्ग मील और जनसंख्या ४ करोड़ के लगभग है। उत्तरी प्रदेशों में आल्प्स पर्वत माला की ऊँची दीवार के कारण पहले गमनागमन की असुविधा थी, किन्तु अब पर्वत मालाओं में सुरंग बना कर उन्हें सरलता से पार कर लिया गया है। आल्प्स के अतिरिक्त पेनाइन पर्वत श्रेणियाँ इस देश के मध्य में फैली हुई हैं। पूर्व में पो-नदी का उपजाऊ मैदान है क्योंकि नदी ने आल्प्स पर्वत से उपजाऊ मिट्टी लाकर यहाँ जमा कर दी है। पो-नदी का मैदान वास्तव में ऐड्रियाटिक समुद्र का एक भाग था।

इटली की जलवायु धरातल के अनुसार भिन्न है। उत्तर के प्रदेश में ऊँचाई के कारण तापक्रम नीचा होना चाहिए, परन्तु आल्प्स पर्वतमाला उत्तर से ठंडी हवा को आने नहीं देता इस कारण बहुत सी घाटियों में मैदानों से भी कम सरदी पड़ती है। यहाँ जनवरी का तापक्रम ७४° फै० रहता है। इटली के दक्षिण प्रायद्वीप में जहाँ समुद्र का प्रभाव जलवायु पर अधिक पड़ता है जनवरी का तापक्रम ४०° फै० से ५०° फै० तक रहता है और गर्मियों में तापक्रम ७५° फै०

तक पहुँच जाता है। वर्षा अधिकतर जाड़े में होती है। दक्षिण भाग में वर्षा गर्मियों में बिलकुल नहीं होती परन्तु उत्तर में जाड़े और गर्मी दोनों में ही वर्षा होती है। आल्पस के पर्वतीय प्रदेश में वर्षा ४०" से ५०" तक होता है। सारे देश में ३०" से ४०" का औसत है।

यद्यपि इटली पर्वतीय प्रदेश है परन्तु फिर भी यहाँ की भूमि बहुत उपजाऊ है। देश में ऐसी भूमि बहुत कम है जिस पर पैदावार नहीं हो सकती। इटली में अनाज बहुत उत्पन्न होता है फिर भी बहुत सा अनाज बाहर से मँगाना पड़ता है। यहाँ फलों की पैदावार बहुत होती है। इटली में कुछ उद्योग धन्धे उन्नत अवस्था में हैं किन्तु ये धन्धे स्थानीय कच्चे माल पर ही निर्भर रहते हैं।

इटली में कोयला और लोहा न होने के कारण औद्योगिक उन्नति अभी तक नहीं हो सकी। यहाँ जलशक्ति बहुत है परन्तु अभी तक जलशक्ति की अधिक उन्नति नहीं हो सकी है।

इटली में गेहूँ और अंगूर बहुत उत्पन्न होते हैं, यही यहाँ की मुख्य पैदावार है। ये दोनों फसलें इटली के एक तिहाई भूमि पर उत्पन्न की जाती हैं। इटली में टस्कैनी की चियांटी (Chianti), पीडमांट की अस्ती (Asti) और सिसली की मर्सिला नामक शराब प्रसिद्ध हैं। पो नदी के प्रदेश में जहाँ सिंचाई की सुविधा है चावल उत्पन्न होता है। गेहूँ के अतिरिक्त मक्का भी इटली में अधिक उत्पन्न होती है। दक्षिण प्रायद्वीप तथा आल्पस पर्वतीय प्रदेश की घाटियों में जैतून (Olive) बहुत उत्पन्न होता है।

अनाज तथा खाद्य पदार्थों के अतिरिक्त इटली में रेशम और चुकन्दर भी बहुत उत्पन्न होता है। पीडमांट, लमबार्डी तथा वैनेशिया के प्रदेशों में रेशम के कीड़े बहुत पाले जाते हैं। मिलन रेशम के धन्धे का मुख्य केन्द्र है। मैदान में चुकन्दर बहुत उत्पन्न होता है और देश की माँग को पूरा करने के लिये शक्कर तैयार की जाती है। सिसली में थोड़ी सी कपास उत्पन्न होती है।

इटली में फलों की पैदावार बहुत होती है। अंजीर, बादाम, आलूबुखारा तथा पिश्ता बहुत अधिक बाहर भेजा जाता है। इनके अतिरिक्त सन्तरा, नींबू, टमाटर तथा ताजे साग प्रतिदिन ऐक्सप्रेस ट्रेन से आस्ट्रिया और जर्मनी को भेजे जाते हैं। उत्तर के मैदानों में दूध और मक्खन का धन्धा होता है। भेड़े पालने का धन्धा भी उत्तर में होता है।

स्पात का धन्धा यूराल के पश्चिमी प्रदेश (पर्म) और यूक्रेन में बहुत उन्नति कर गया है। यूक्रेन में नीपरोपेट्रोवस्क (Dneporpetrovsk) लोहे और स्पात के धन्धे का मुख्य केन्द्र है। मास्को, लैनिनग्रेड तथा मध्य रूस के अन्य केन्द्रों में लोहे तथा स्पात की वस्तुयें बनती हैं। इन औद्योगिक केन्द्रों में सूती कपड़े का धन्धा भी केन्द्रित है। तुर्किस्तान, काकेशस तथा मिश्र से कपास आती है। पेन्ज़ा (Penza) सिम्बर्स्क (Simbirsk) मास्को तथा लैनिनग्रेड में ऊनी कपड़े का धंधा भी केन्द्रित है। मास्को, लेनिनग्रड तथा व्लाडिमर (Vladimir) में रबर की वस्तुयें तैयार की जाती हैं।

रूस का अधिकतर व्यापार एशियाई देशों से है। योरोपीय देशों को वह अनाज भेजता है और एशियाई देशों को तैयार माल भेजता है।

पिछले योरोपीय महायुद्ध के फलस्वरूप रूस ने आधा पोलैंड (पूर्वीभाग) पर फिर अपना अधिकार कर लिया। लिथूनिया, लैटविया और इस्थोनिया सोवियत रूस में सम्मिलित हो गए और फिनलैंड का कुछ हिस्सा भी रूस ने ले लिया। अभी थोड़ा ही समय हुआ रूस ने रूमानिया से अपने पुराने प्रदेश बैसेरेबिया और बुकेनिया छीन लिए थे। पंचवर्षीय योजनाओं के फल स्वरूप रूस की संसार के प्रमुख औद्योगिक देशों में गणना होती है।

इटली

इटली का क्षेत्रफल ११६,७०० वर्ग मील और जनसंख्या ४ करोड़ के लगभग है। उत्तरी प्रदेशों में आल्पस पर्वत माला की ऊँची दीवार के कारण पहले गमनागमन की असुविधा थी, किन्तु अब पर्वत मालाओं में सुरंग बना कर उन्हें सरलता से पार कर लिया गया है। आल्पस के अतिरिक्त एपीनाइन पर्वत श्रेणियाँ इस देश के मध्य में फैली हुई हैं। पूर्व में पो-नदी का उपजाऊ मैदान है क्योंकि नदी ने आल्पस पर्वत से उपजाऊ मिट्टी लाकर यहाँ जमा कर दी है। *पो-नदी का मैदान वास्तव में ऐड्रियाटिक समुद्र का एक भाग था।*

इटली का जलवायु धरातल के अनुसार भिन्न है। उत्तर के प्रदेश में ऊँचाई के कारण तापक्रम नीचा होना चाहिए, परन्तु आल्पस पर्वतमाला उत्तर से ठंडी हवा को आने नहीं देती इस कारण बहुत सी घाटियों में मैदानों से भी कम सर्दी पड़ती है। यहाँ जनवरी का तापक्रम ७४° फ़ै० रहता है। इटली के दक्षिण प्रायद्वीप में जहाँ समुद्र का प्रभाव जलवायु पर अधिक पड़ता है जनवरी का तापक्रम ४०° फ़ै० से ५०° फ़ै० तक रहता है और गर्मियों में तापक्रम ७५° फ़ै०

नर पहुँच जाता है। वर्षा अधिकतर जाड़े में होती है। दक्षिण भाग में वर्षा गर्मियों में बिलकुल नहीं होती परन्तु उत्तर में जाड़े और गर्मी दोनों में ही वर्षा होता है। आल्पस के पर्वतीय प्रदेश म वर्षा ४०" से ५०" तक होता है। सारे देश म ३०" से ४०" का औसत है।

यद्यपि इटली पर्वतीय प्रदेश है परन्तु फिर भी यहाँ की भूमि बहुत उपजाऊ है। देश म ऐसी भूमि बहुत कम है जिस पर पैदावार नहीं हो सकती। इटली में अनाज बहुत उत्पन्न होता है फिर भी बहुत सा अनाज बाहर से मँगाना पड़ता है। यहाँ फलों की पैदावार बहुत होती है। इटली में कुछ उद्योग धन्धे उन्नत अवस्था में हैं किन्तु य धन्धे स्थानीय कच्चे माल पर ही निर्भर रहते हैं।

इटली म कोयला और लोहा न होने के कारण औद्योगिक उन्नति अभी तक नहा हो सकी। यहाँ जलशक्ति बहुत है परन्तु अभी तक जलशक्ति की अधिक उन्नति नहा हो सकी है।

इटली म गेहूँ और अगूर बहुत उत्पन्न होते हैं, यही यहाँ की मुख्य पैदावार है। ये दोनों फसलें इटली के एक तिहाई भूमि पर उत्पन्न की जाती हैं। इटली में टस्केनी की चिपाटा (Chianti), पीडमाट की अस्ती (Asti) और सिसली की मर्सिना नामक शराब प्रसिद्ध हैं। पो नदी के प्रदेश में जहाँ सिंचाई की सुविधा है चावल उत्पन्न होता है। गेहू के अतिरिक्त मक्का भी इटली में अधिक उत्पन्न होता है। दक्षिण प्रायद्वीप तथा आल्पस पर्वतीय प्रदेश को घाटियों में जैतून (Olive) बहुत उत्पन्न होता है।

अनाज तथा खाद्य पदार्थों के अतिरिक्त इटली म रेशम और चुकदर भी बहुत उत्पन्न होता है। पीडमाट, लमबार्डी तथा वेनेशिया के प्रदेशों में रेशम के कीड़े बहुत पाले जाते हैं। मिलन रेशम के धन्धे का मुख्य केन्द्र है। मैदान में चुकदर बहुत उत्पन्न होता है और देश की माँग को पूरा करने के लिये शक्कर तैयार की जाती है। सिसली म थोड़ी सी कपास उत्पन्न होती है।

इटली में फलों की पैदावार बहुत होती है। अजीर, बादाम, आलूबुखारा तथा पिश्ता बहुत अधिक बाहर भेजा जाता है। इनके अतिरिक्त सतरा, नींबू, टमाटर तथा ताजे साग प्रतिदिन ऐक्सप्रेस ट्रेन से आस्ट्रिया और जर्मनी को भेजे जाते हैं। उत्तर के मैदानों मे दूध और मक्खन का धन्धा होता है। भेड़ पालने का धन्धा भी उत्तर मे होता है।

इटली में खनिज पदार्थों की अधिकता नहीं है थोड़ा निम्नश्रेणी का लिगनाइट कोयला टस्कैनी और अम्ब्रिया में निकलता है। यल्वा के द्वीप में लोहा खूब निकलता है। सार्डीनिया तथा आल्प्स में भी थोड़ा लोहा निकलता है। इटली संसार में गंधक उत्पन्न करने वाले देशों में प्रमुख है। अधिकतर गंधक सिसली से निकलती है। इटली में संगमरमर तथा अन्य इमारती पत्थर बहुत निकलता है। टस्कैनी के मुसा-करारा (Massa Carrara) से संसार प्रसिद्ध संगमरमर पत्थर निकलता है।

इटली में कोयले की बहुत कमी है किन्तु जलशक्ति की बहुतायत है। पिछले वर्षों में जलशक्ति का अधिकाधिक उपयोग करने का प्रयत्न किया गया है। इस समय लगभग ४० लाख घोड़ों की शक्ति (Horse Power)की बिजली उत्पन्न की जाती है। रेलों और कारखानों में बिजली का उपयोग किया जा रहा है। सूती कपड़े तथा रेशमी कपड़े के धंधे यहाँ महत्वपूर्ण हैं। सूती कपड़े का धंधा उत्तर के केन्द्रों और नेपिल्स में केन्द्रित है। उत्तर के सूती कपड़े के केन्द्रों में नकली रेशम का धंधा बहुत उन्नति कर गया है।

इसके अतिरिक्त रासायनिक उद्योग धंधे यहाँ विशेष उन्नति कर गये हैं। ट्यूरिन में मोटरकार बनाने का धंधा केन्द्रित है। इटली योरोप तथा अमेरिका को रेशम, शराब, गंधक तथा भोज्य पदार्थ भेज कर तैयार माल (Manufactured Articles) मँगाता है।

उत्तरी अमेरिका

उत्तरी अमेरिका ने थोड़े से समय में जो आश्चर्यजनक उन्नति कर ली है उसके कतिपय कारण हैं। उत्तरी अमेरिका उन्नत राष्ट्रों के समीप है तथा यहाँ की जलवायु योरोप निवासियों के लिये सर्वथा अनुकूल है। इसके अतिरिक्त यहाँ की भूमि खेतीबारी के लिए बहुत उपयोगी है। यहाँ कोयला, लोहा तथा अन्य खनिज पदार्थ भी बहुत पाये जाते हैं। यही कारण है कि उत्तरी अमेरिका इतनी जल्दी उन्नति कर सका है।

उत्तरी अमेरिका के दोनों ओर अर्थात् पूर्वी तथा पश्चिमी किनारों पर दो पर्वत मालायें हैं जो दक्षिण से उत्तर की ओर फैली हुई हैं। इन दोनों पर्वत मालाओं के बीच का देश या तो मैदान है अथवा पठार है। ये पर्वत मालायें महाद्वीप की पूरी लम्बाई में फैली हुई हैं। इस कारण इनकी पश्चिम श्रेणियों में पठार बन गये हैं। पूर्व की ओर क्रमशः इस पर्वतमाला के ढाल मैदान में परिणत हो गए हैं। इस महाद्वीप के दक्षिण में पठार है। इसका कारण यह है कि समुद्र ने नीची भूमि को डुबो दिया है और केवल ऊँची भूमि ही रह गई है। उत्तरी अमेरिका में पूर्वी भाग से पश्चिमी भाग के लिये जो मार्ग हैं वे राकी पर्वत माला के दर्रों से होकर जाते हैं। इन दर्रों की ऊँचाई ८००० फीट तक है।

उत्तरी अमेरिका में झीलें बहुत हैं। विशेषकर वे झीलें जो सेन्ट-लारेन्स नदी से जुड़ी हैं। बड़ी झीलें, (Great lakes) व्यापार के लिए उपयोगी हैं। ये झीलें नदी और नहरों से इस प्रकार जुड़ी हुई हैं कि इन में जहाज आ जा सकते हैं। इन झीलों में जहाज सुपीरियर झील पर स्थित पोर्टआर्थर तक पहुँच जाते हैं। उत्तर अमेरिका में अन्य नदियाँ भी व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

उत्तरी अमेरिका की जलवायु अक्षांश रेखाओं के अनुसार ही भिन्न भिन्न भागों में भिन्न है। परन्तु यहाँ की जलवायु पर बाहरी प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। अमेरिका का पूर्वी किनारा एशिया के पूर्वी किनारे से गरम है परन्तु पश्चिमी किनारा योरोप के पश्चिमी किनारे से ठंढा है। पश्चिम की पर्वत श्रेणियाँ नम हवा को अन्दर जाने से रोकती हैं। इस कारण पश्चिमी प्रदेश अधिकतर शुष्क है और बिना सिंचाई के खेती बारी नहीं हो सकती। उत्तरी अमेरिका में कोई पर्वतमाला पूर्व से पश्चिम की ओर फैली हुई नहीं है। इस कारण उत्तरी अमेरिका के मैदानों पर उत्तर से सर्द हवा बहती है। इन हवाओं का प्रभाव दक्षिणी भाग में भी दृष्टिगोचर होता है। इसका फल यह है कि मिसीसिपी नदी का मुहाना जम जाता है। टैक्सास (Texas) के दक्षिण में २४° तक पाला पड़ता है जिससे नारंगी की फसल को हानि पहुँच जाती है।

पहाड़ों के अतिरिक्त उत्तर में हडसन की खाड़ी, दक्षिण में मैक्सिको की तथा मध्य में झील समूह का भी जलवायु पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इन झीलों से केवल गर्मी और सर्दी की अधिकता ही कम नहीं होती वरन ग्रीष्म काल में इनके कारण थोड़ी वर्षा भी होती है। उत्तर पूर्व में वर्षा कम होती है अतएव इस स्थानीय वर्षा का यहाँ बहुत महत्व है।

उत्तरी अमेरिका में गर्मियों के दिनों में समस्त महाद्वीप गर्म हो जाता है। ठंढी और नम हवा अटलांटिक और प्रशांत महासागर से पृथ्वी की ओर बहती है। हवा को पर्वतीय प्रदेश पार करने में पानी देना पड़ता है। पश्चिम में वैंकोवर (Vancouver) तक वर्षा अच्छी होती है परन्तु दक्षिण में, तथा अन्दर की तरफ वर्षा कम हो जाती है। इसका कारण यह है कि प्रशांत महासागर की हवाओं का रुख दाहिनी ओर हो जाता है और वे मैक्सिको की ओर बहती हैं। प्रशान्त महासागर के तट पर सैनफ्रैंसिस्को तक दक्षिण में अच्छी वर्षा हो जाती है। वैंकोवर से सैनफ्रैंसिस्को तक पतझड़ में वर्षा होती है। परन्तु इसके दक्षिण में वर्षा नहीं होती।

अटलांटिक समुद्रतट पर मैक्सिको की खाड़ी के समीप तथा उत्तर में ४०° अक्षांश रेखा (Latitude) तक तथा पश्चिम में ६५° पश्चिम देशांतर

(Longitude) तक, ४० से ६०° तक पानी बरसता है। ६५° पश्चिम देशांतर से १००° पश्चिम देशांतर तक, २० से ३०° तक वर्षा होती है। मैक्सिको के पठार पर भी इतना ही वर्षा होती है। प्रशान्त महासागर तट पर ही वर्षा होती है अन्दर की तरफ वर्षा नहीं होती।

अटलांटिक तथा प्रशान्त महासागर के परतीर ढालों पर वन एक से नहीं हैं। परन्तु दोनों किनारों के वन प्रदेश एक उत्तरी वन प्रदेश की

वनस्पति

पट्टी से जुड़े हुए हैं जो जंगलों से ढकी है। उत्तरी अमेरिका में बहुत तरह के वृक्ष पाये जाते हैं। काला तथा सफेद स्प्रूस, देवदार, लार्च (Larch) और बीच (Beech) मुख्य हैं। परन्तु यहाँ की लकड़ी कागज बनाने के अतिरिक्त किसी भी धन्धे में काम नहीं आ सकती क्योंकि ठंड अधिक पड़ने के कारण उत्तरी प्रदेश में वृक्ष अधिक नहीं बढ़ते। उत्तरी प्रदेश में पाइन (Pine) का वन अधिक फैला हुआ है। यहाँ पाइन, स्प्रूस, हेमलाक (Hem lock) तथा चीड़ के वृक्ष बहुतायत से पाये जाते हैं। मिशीगन के वन प्रदेश में बलूत (Oak) बहुत पाया जाता है। प्रशान्त महासागर के समीप वर्षा प्रदेश में चीड़, हैमलाक तथा स्प्रूस, मध्य में सनोवर (Fir) अन्दर की ओर पाइन, चीड़, तथा लाल सनोवर (Red fir) भी मिलता है। दक्षिण में रॉकी पहाड़ पर महागनी (Mahogany), पीला पाइन स्प्रूस, तथा साल (Sal) के वृक्ष पाये जाते हैं।

उत्तरी अमेरिका के वनों से रहित भाग को हम तीन भागों में बाँट सकते हैं — प्रथम उत्तरी टुंड्रा का प्रदेश, दूसरा घास का मैदान और तीसरे सूखा प्रदेश। टुंड्रा उत्तर का वह प्रदेश है जहाँ बर्फ जमी रहती है और पैदावार नहीं हो सकती। जब बर्फ पिघल जाती है तब कुछ घास और झाड़ियाँ दिखलाई देती हैं। घास के मैदान बहुत दूर तक फैले हुए हैं। यह विस्तृत मैदान बहुत उपजाऊ है और यहीं पर खेती होती है। सूखा भाग पश्चिम में है जहाँ पैदावार बहुत कम होती है।

यद्यपि कनाडा क्षेत्रफल में योरोप के बराबर है, किन्तु अभी तक उसकी अधिक उन्नति नहीं हो सकी है। इसका मुख्य कारण

कनाडा

यह है कि जलवायु की प्रतिकूलता के कारण देश का बहुत बड़ा भाग उजाड़ है।

कनाडा का धरातल रॉकी पर्वतमाला के पूर्व में चौरस है। उत्तर में टुंड्रा है, पूर्व में टुंड्रा की सीमा ५८° उत्तर अक्षांश रेखा तक है। टुंड्रा के दक्षिण में वन

प्रदेश हैं। पश्चिम वन प्रदेश के दक्षिण में उपजाऊ मैदान हैं जो संयुक्तराज्य अमेरिका की सीमा तक फैले हुये हैं। अब वन प्रदेशों को भी साफ किया गया है और उनमें खेती की जा रही है।

कनाडा में वर्षा गर्मियों में होती है और जाड़े में बर्फ गिरती है। पूर्व में बर्फ अधिक गिरती है और पश्चिम में बहुत कम। पूर्व में वर्षा अधिक होती है और पश्चिम में कम होती है। पश्चिम में बिना सिंचाई के खेती नहीं हो सकती। कनाडा की जलवायु गेहूँ की पैदावार के लिये बहुत अनुकूल नहीं है क्योंकि फसल के पकते समय कभी कभी पाला पड़ जाता है जिससे फसल नष्ट हो जाती है किन्तु अब ऐसे बीज उत्पन्न किये जा रहे हैं जो शीघ्र पक जाते हैं।

कनाडा के मुख्य धन्धे चार हैं —(१) खेती—विशेषकर गेहूँ की खेती (२) वनों से लकड़ी तथा पदार्थ प्राप्त करना (३) पशुपालन तथा (४) खनिज पदार्थों को निकालना।

खेती की दृष्टि से प्रेरी (Prairies) प्रदेश के प्रान्त तथा पूर्व के प्रान्त महत्वपूर्ण हैं। मैनाटोबा (Manitoba), सैसक्चुआन (Saskatchewan) और अल्बर्टा (Alberta) में गेहूँ बहुत अधिक उत्पन्न किया जाता है। पूर्वी प्रान्तों में खेती के साथ साथ दूध मक्खन का धन्धा तथा पशु पालन भी होता है। गेहूँ को उत्पन्न करने की दृष्टि से कनाडा संसार के प्रमुख राष्ट्रों में से है। कनाडा में गेहूँ की उत्पत्ति को बढ़ाया जा रहा है। कनाडा में गर्मियों के दिन कम होते हैं इस कारण जल्दी पकने वाले बीज उत्पन्न किये जा रहे हैं। पश्चिम में वर्षा कम होती है। वहाँ सिंचाई के साधन उपलब्ध किये जा रहे हैं। जहाँ सिंचाई के साधन उपलब्ध नहीं हैं वहाँ सूखी खेती (Dry farming) की जा रही है। जिन प्रदेशों में खेती नहीं हो सकती वहाँ दूध तथा मक्खन का धन्धा, भेड़ पालने का धन्धा तथा फलों को उत्पन्न करने का धन्धा होता है।

कनाडा के वनों में अत्यन्त बहुमूल्य लकड़ी तथा अनन्त राशि में वन सम्पत्ति भरी पड़ी है। यहाँ नदियों के द्वारा वनों की लकड़ी को औद्योगिक केन्द्र तक लाने की सुविधा है। अतएव यह धन्धा बहुत महत्वपूर्ण है। (वनों के परिच्छेद में देखो),

कनाडा खनिज पदार्थों के लिये धनी है। कोयला यहाँ सब प्रान्तों में ^ ० है। परन्तु खानें उन्हीं स्थानों पर खोदी जाती हैं जहाँ से कोयला बाहर भेजा

सकता है। अधिकतर बंदरगाहों के समीप ही कोयले की खानें हैं। नोवास्कोशिया (Nova-Scotia), वैंकोवर (Vancouver) द्वीप तथा ब्रिटिश कोलम्बिया में कोयला निकाला जाता है। अलबर्टा के पश्चिम भाग तथा क्राऊ नेस्ट (Crows' Nest) दर्रे में कोयला पाया जाता है। कनाडा में लोहा अधिक नहीं निकलता परन्तु ज्यारजिया (Georgia) की खाड़ी के समीप तथा नवोस्कोशिया (Nova-Scotia) में लोहा निकाला जाता है। कनाडा के यूकन (Yukon) प्रान्त में सोना निकलता है। ओन्टेरियो (Ontario) कनाडा का मुख्य खनिज प्रांत है। कनाडा संसार में सबसे अधिक सीसा (Lead) उत्पन्न करता है। ओन्टेरियो प्रांत के सडबरी (Sudbury) जिले से संसार का ८५% सीसा (Lead) निकलता है। कनाडा संसार का ८६% एसबेस्टास (Asbestos) उत्पन्न करता है।

औद्योगिक उन्नति की दृष्टि से कनाडा पिछड़ा हुआ है। इसका मुख्य कारण कुशल श्रमियों की कमी तथा घने आबाद प्रांतों में कोयले का अभाव है। क्रमशः जल विद्युत् के अधिक उत्पन्न होने से यह कठिनाई कम होती जा रही है। जो कुछ भी उद्योग धंधे हैं वे पूर्व के प्रांतों में केन्द्रित हैं जहाँ कोयला तथा जल विद्युत् दोनों ही हैं। लोहा, स्पात, कागज, चमड़ा तथा सूती कपड़े के धंधे इनमें मुख्य हैं।

कनाडा का जलमार्ग संसार में अद्वितीय है। इस जलमार्ग का उपयोग संयुक्त राज्य अमेरिका तथा कनाडा दोनों ही करते हैं। सेंट लारेंस नदी उन बड़ी-बड़ी झीलों से जुड़ी हुई है जो स्वयं एक दूसरे से नहरों द्वारा सम्बन्धित हैं। समुद्री जहाज इन झीलों के द्वारा कनाडा के मध्य भाग तक पहुँच सकते हैं। इनमें वेलैंड (Welland) नहर, जो न्यागरा से समान दूरी पर बहकर न्यागरा जलप्रपात को शेष झीलों से जोड़ती है, महत्वपूर्ण है। इस नहर को २५ स्थानों पर फाटकों से रोक कर पानी को ऊँचा उठा दिया गया है। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण सूनहर (Soo Canal) है जो सुपीरियर और ह्यूरन झीलों को जोड़ता है। इस जल-मार्ग के द्वारा जहाज अन्दर बहुत दूर तक जा सकते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका की ओर से जहाज डुलूथ (Duluth) तक जा सकते हैं। इस मार्ग को और छोटा बना करने ज्यार्जियन नहर को बनाया गया है। इस नहर को बनाकर ओटावा नदी को निपसिंग झील से मिला दिया गया और निपसिंग झील को ह्यूरन झील से मिला दिया गया है। सेंट-लारेंस का मार्ग एप्रिल से नवम्बर तक खुला रहता है। शेष महीनों में जम जाता है।

कनाडा में तीन मुख्य रेल पथ हैं—(१) कनैडियन पैसिफिक रेलवे, (२) ग्राड ट्रक पैसिफिक रेलवे, (३) कनैडियन नार्दर्न रेलवे। ये तीनों ही रेल पूर्व से पश्चिम को मिलाती हैं। इन रेलों को पश्चिम के राकी पर्वत माला के प्रदेश में कहीं कहीं ५००० फीट से भी अधिक ऊँचाई को पार करना पड़ता है। कनाडा की रेलों को बनाने में बहुत परिश्रम और धन व्यय करना पड़ा था। सच तो यह है कि यदि ये रेलें पश्चिम को पूर्व से न जोड़ती तो पश्चिमी कनाडा एक जनशून्य भूभाग रहता।

धरातल के बनावट की दृष्टि से संयुक्तराज्य अमेरिका तीन भागों में बाँटा जा सकता है—(१) पश्चिम में राकी पर्वतमाला का पहाड़ी संयुक्तराज्य अमेरिका भाग, (२) पूर्व का अपलेशियन पर्वतमाला का पहाड़ी प्रदेश, (३) मैदान। पश्चिम के पहाड़ी प्रदेश में चौड़ी-चौड़ी घाटियाँ, नदियों की घाटियाँ तथा ऊँचे पठारों की बहुतायत है। इनमें कैलीफोर्निया की घाटी बहुत उपजाऊ और आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मैदान पश्चिम में राकी पर्वतमाला के समप ऊँचे तथा पूर्व में नीचे हैं। मैदानों के मध्य में प्रेरी (Prairies) हैं। अपलेशियन पर्वतमाला का पहाड़ी प्रदेश पश्चिम की भाँति अधिक ऊँचा नहीं है। यह प्रदेश ऊँचे नीचे पठारों और घाटियों से भरा हुआ है।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि संयुक्तराज्य अमेरिका के पूर्वी भाग में वर्षा अधिक होती और जैसे जैसे पश्चिम की ओर बढ़ते जाते हैं वैसे वैसे ही वर्षा कम होती जाती है। १००° देशान्तर इन दो भागों को विभक्त करती है। इसके पश्चिम में शुष्क भाग है और पूर्व में वर्षा अधिक है। पूर्व भाग में खेती बहुत होती है और घास भी बहुतायत से उत्पन्न होती है। पश्चिमी भाग में वर्षा कम होने से सिंचाई अथवा सूखी खेती (Dry farming) होती है और घास उत्पन्न होती है जिसके कारण पशुपालन खूब होता है।

उत्तरी अमेरिका में पश्चिमी भाग में सूखी खेती (Dry farming) की रीति खूब सफल हुई है। सूखी खेती का सिद्धान्त यह है कि वर्षा के पूर्व खेत खूब जोता जाता है फिर नीचे की भूमि को दबा कर ठोस बना दिया जाता है जिससे वर्षा का जल अधिक गहराई तक न जा सके और पौधा उसका उपयोग कर सके। इसके ऊपर मिट्टी बिछा दी जाती है (लगभग ३") जिससे नीचे का पानी सूख नहीं पाता। जिस भूमि पर इस रीति से खेती होती है उस पर प्रतिवर्ष खेती नहीं की जाती है वरन एक वर्ष भूमि को विश्राम देकर खेती की जाती है। इस रीति से फसल बहुत अच्छी होती है। संयुक्तराज्य अमेरिका में खेती अन्य देशों की भाँति नहीं होती। खेती का वर्गीकरण इस प्रकार हुआ है कि एक क्षेत्र में एक ही वस्तु उत्पन्न

होती है। उदाहरण के लिए गेहूँ का क्षेत्र (Wheatbelt), कपास का क्षेत्र और मक्का का क्षेत्र पृथक् पृथक् हैं।
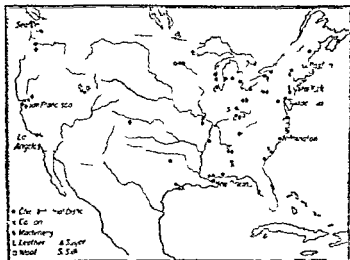
संयुक्तराज्य के उत्तरी मध्य भाग में गेहूँ बहुत उत्पन्न होता है। यहां गर्मियों में गर्मी और जाड़े में कड़ाके की सर्दी पड़ती है। पूर्व में वर्षा ४० और पश्चिम में १५" होती है। इस प्रदेश में संयुक्तराज्य का दो तिहाई गेहूँ उत्पन्न होता है उत्तरी तथा दक्षिणी डकोटा (Dakota) और मिनेसोटा रियासतों में बसंत में उत्पन्न होता है, तथा नैब्रास्का, कैनसास, मिसूरी, इंडियाना ओहियो तथा इलीनियास में जाड़ा में गेहू उत्पन्न होता है। गेहूँ अधिक होने के कारण आटा तैयार करने का धन्धा यहाँ बहुत अधिक उन्नति कर गया है। इनके अतिरिक्त पश्चिम में कैलीफोर्नि[illegible] न राज्यों में भी गेहूँ उत्पन्न होता है।

अटलांटिक समुद्र के समीप तथा मैक्सिको की खाड़ी का प्रदेश कपास क्षेत्र है। संयुक्तराज्य अमेरिका संसार में सब से अधिक कपास उत्पन्न करता है। फिर भी कपास की माँग इतनी अधिक है कि पूरी नहीं हो सकती। कपास उत्पन्न करने योग्य जितनी भी उपजाऊ भूमि थी सब जोती जा चुकी है और उत्तर पश्चिम में जलवायु अनुकूल न होने के कारण कपास उत्पन्न नहीं की जा सकती। टैक्सास, आरकैनसास, पीडमाट का पठार तथा दक्षिण पूर्वी समुद्रतट मुख्यतः कपास उत्पन्न करते हैं। बौल-वीविल (Bollweevill) नामक कीड़े के कारण संयुक्तराज्य अमरिका को कपास की खेती को बहुत हानि पहुँचती है। किन्तु अमेरिकन विशेषज्ञों ने नये कपास के पौधे (Sea Island Cotton) को पैदा करके समस्या को हल कर लिया है।

कपास क्षेत्र के दक्षिण भाग में चावल की बहुत पैदावार होती है, मिसीसिपी नदी के प्रदेश में गन्ना खूब उत्पन्न होता है। इनके अतिरिक्त तम्बाकू, जौ और ओट के क्षेत्र भी हैं। संयुक्तराज्य के पूर्वी तथा पश्चिमी समुद्रतट के प्रदेश में फलों की पैदावार तथा दूध मक्खन का धन्धा केन्द्रित है।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि संयुक्तराज्य में घास तथा चारे की बहुतायत है। इस कारण यहाँ सुअर, गाय, बैल और भेड़ बहुत अधिक पाली जाती हैं। पूर्व में सुअर अधिक पाले जाते हैं क्योंकि वहाँ मक्का बहुत उत्पन्न होता है। पश्चिम में गाय और बैल अधिक पाले जाते हैं क्योंकि यहाँ घास के मैदान अधिक हैं। पश्चिम के पहाड़ी प्रदेशों में भेड़ अधिक पाली जाती हैं। पश्चिम में पाले गए पशु भी मक्का उत्पन्न करने वाले क्षेत्र में लाकर मोटे किए जाते हैं इस कारण वहाँ मांस का धन्धा अधिक उन्नति कर गया है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में केवल खेती की पैदावार ही बहुत अधिक नहीं है वरन् खनिज पदार्थ भी इस देश में अनन्त राशि में भरे पड़े हैं। कोयला, लोहा, तेल तथा अन्य खनिज पदार्थ यहाँ की खानों में भरे हुए हैं। संयुक्तराज्य अमरिका खनिज पदार्थों की दृष्टि से अन्य सब देशों से धनी है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में खेती की उन्नति के फलस्वरूप कच्चा माल Raw Materials बहुतायत से उत्पन्न होता है। कोयला, लोहा, तेल तथा जल शक्ति की बहुतायत है, वनों में अत्यधिक वन-सम्पत्ति भरी पड़ी है, जलवायु औद्योगिक उन्नति के लिए सर्वथा अनुकूल है, मार्गों की सुविधा है तथा माल की खपत के लिए उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका के बाजार समीप ही हैं। संक्षेप में संयुक्तराज्य अमेरिका को औद्योगिक उन्नति करने की सभी सुविधायें मौजूद हैं इसी कारण पिछले कुछ वर्षों में संयुक्त राज्य अमेरिका के उद्योग धन्धों की उन्नति आश्चर्यजनक गति से हुई है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में पूर्व की रियासतों में ही सारे उद्योग धन्धे केन्द्रित हैं। जितने भी धन्धे संयुक्तराज्य अमेरिका में स्थापित हैं वे लगभग सभी न्यू इंगलैंड की रियासतों तथा अपलेशियन पर्वत प्रदेश की रियासतों में केन्द्रित हैं। कोयला, जल शक्ति की बहुतायत तथा जलवायु की अनुकूलता इसका मुख्य कारण है। अधिकतर औद्योगिक केन्द्र कोयले की खानों के समीप अथवा समुद्रतट पर स्थित हैं। इस प्रदेश में लोहा, स्पात, कागज, सूता, ऊनी और रेशमी कपड़े का धन्धा तथा चमड़े का धन्धा मुख्य है।

संयुक्तराज्य अमेरिका की खनिज सम्पत्ति

संसार में खनिज सम्पत्ति की दृष्टि से संयुक्तराज्य अमेरिका सबसे अधिक धनी देश है। लोहा, कोयला, पैट्रोलियम तथा अन्य आवश्यक खनिज पदार्थ संयुक्तराज्य अमेरिका में इतनी बड़ी राशि में पाये जाते हैं कि जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। यही कारण है कि वह आज संसार का सब से अधिक औद्योगिक दृष्टि से उन्नतिशील और समृद्धिशाली राष्ट्र है।

कोयला — ऐसा अनुमान किया जाता है कि संयुक्तराज्य अमेरिका में संसार के कोयले का आधा भंडार सुरक्षित है। आज संसार में जितना कोयला खोदकर निकाला जाता है उसका एक तिहाई कोयला संयुक्तराज्य अमेरिका उत्पन्न करता है। नीचे लिखे इस देश के मुख्य कोयले के क्षेत्र हैं।

(१) अपलेशियन कोयले का क्षेत्र—यह पैनसिलवेनिया, आहियो, पूर्वी कैन्टकी, वरजीनिया टैनेसी से अलबामा तक फैला हुआ है। यह संयुक्तराज्य अमेरिका का सबसे बड़ा कोयले का क्षेत्र है और देश का लगभग आधा कोयला इस क्षेत्र से निकाला जाता है। संसार में यह सब से बड़ा कोयले का क्षेत्र है। इसमें बिटूमिनस और एन्थ्रासाइट जाति का उत्तम कोयला निकलता है।

मध्य कोयले का क्षेत्र— यह क्षेत्र इंडियाना, इलीनोयस आयोवा, कनसास तथा मिसूरी रियासतों में फैला हुआ है। इस क्षेत्र से स्थानीय आवश्यकता के लिए कोयला प्राप्त होता है। इसमें साधारण कोयला निकलता है।

गल्फ कोस्ट का कोयले का क्षेत्र—इसमें लिगनाइट के समान घटिया कोयला निकलता है। यह मैक्सिको की खाड़ी के समीपवर्ती प्रदेश, टैक्सास तथा दक्षिणी अलाबामा में फैला हुआ है।

राकी पर्वत प्रदेश का क्षेत्र— यह कोयले का क्षेत्र उत्तरी राकी प्रदेश में फैला है। इसका कोयला लिगनाइट जाति का है। इस प्रदेश में

जनसंख्या बहुत कम है इस कारण अधिक कोयले की आवश्यकता न होने के कारण इस प्रदेश में कोयला निकालने का अधिक प्रयत्न नहीं किया गया है।

प्रशान्त तट का क्षेत्र—प्रशान्त महासागर के तटीय प्रदेश पर बहुत कम कोयला है। केवल एक कोयले का क्षेत्र है जिससे थोड़ा कोयला निकलता है। परन्तु यह महत्वपूर्ण है क्योंकि उधर कोयला नहीं मिलता।

पैट्रोलियम —संयुक्तराज्य अमेरिका संसार की कुल उत्पत्ति का ६० % पैट्रोलियम उत्पन्न करता है। संयुक्तराज्य अमेरिका में अपलेशियन तेल क्षेत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त दूसरा महत्वपूर्ण तेल क्षेत्र कैनसास, ओक्लेहामा, तथा टैक्सास में फैला हुआ है। इससे लगा हुआ तीसरा तेल क्षेत्र टैक्सास तथा लूजियाना व समीप प्रदेश में है। इनके अतिरिक्त कैलीफोर्निया तथा राकी प्रदेश के तेल क्षेत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

कच्चा अशुद्ध तेल पाइप लाइनों द्वारा अटलांटिक समुद्रतट पर स्थित शोधन कारखानों में लाया जाता है जहाँ उसको शुद्ध किया जाता है। इस प्रदेश में ६० हजार मील तेल का पाइप लाइन है। संयुक्तराज्य अमेरिका के तेल शोधन कारखानों में मैक्सिको तथा वेनीजुला का भी तेल आता है।

लोहा —संयुक्तराज्य अमेरिका में लोहा बहुत पाया जाता था। किन्तु मुख्यतः लोहा दो क्षेत्रों से निकाला जाता है। सब से बड़ा और महत्वपूर्ण लौह क्षेत्र सुपीरियर झील प्रदेश में है जहाँ संसार में सबसे अधिक लोहा प्रकृति ने छिपा रक्खा है। सुपीरियर झील प्रदेश की विशेषता यह है कि लोहा ऊपर ही मिल जाता है। थोड़ा खोदने से ही लोहा निकल आता है इस कारण लोहा खोदने में व्यय बहुत कम होता है। इस प्रदेश का लोहा पिट्सबर्ग को जाता है जो देश का स्पात बनाने का सबसे बड़ा केन्द्र है।

अलबामा लौह प्रदेश में भी अनन्त राशि में लोहा भरा पड़ा है। अलबामा लौह प्रदेश को यह सुविधा है कि उसके समीप ही कोयला और चूने का पत्थर (लाइमस्टोन) मिलता है अस्तु वहाँ लोहा और स्पात कम खर्च में तैयार हो सकता है। संयुक्तराज्य अमेरिका संसार की उत्पत्ति का २५ % लोहा उत्पन्न करता है।

ताँबा —संयुक्तराज्य अमेरिका ताँबा भी बहुत अधिक राशि में उत्पन्न करता है। संसार का कुल उत्पत्ति का एक तिहाई ताँबा संयुक्तराज्य अमेरिका में उत्पन्न होता है। मोनटाना, उटाह (Utah) और अरीज़ोना की पश्चिमी मुख्य ताँबे के क्षेत्र हैं। झीलों के दक्षिणी तट पर मि

जाता है। इतना अधिक ताँबा उत्पन्न करने पर भी विदेशों से ताँबा मँगाना पड़ता है।

ताँबे के अतिरिक्त संयुक्तराज्य सीसा और जिंक (जस्ता) भी संसार में सबसे अधिक उत्पन्न करता है। संसार का एक चौथाई सीसा और एक तिहाई ज़िंक (जस्ता) संयुक्तराज्य अमरिका उत्पन्न करता है।

उद्योग धन्धे — संयुक्तराज्य अमरिका में औद्योगिक उन्नति के सभी साधन उपलब्ध हैं। यहाँ औद्योगिक कच्चा माल बहुत उत्पन्न होता है। कोयला तथा अन्य खनिज पदार्थ बहुतायत से पाये जाते हैं। जल विद्युत् को उत्पन्न करने की सभी सुविधायें हैं और अमेरिका में कल्पनातीत पूंजी है। संयुक्तराज्य अमरिका की स्थिति भी अच्छी है। उसके पूर्व में योरोप है जहां से प्रारम्भ में अमेरिका में यन्त्र और विचार आये और पश्चिम में एशिया है जो कि अमरिका के माल के लिए अच्छा बाजार है। इसके अतिरिक्त संयुक्तराज्य अमेरिका एक तरुण राष्ट्र है जिसके निवासियों में साहस, उत्साह तथा लगन है। संयुक्तराज्य अमेरिका में अद्वितीय जलमार्ग हैं जिससे यातायात की विशेष सुविधा है। यही कारण है कि संयुक्तराज्य अमेरिका संसार का सब से अधिक औद्योगिक दृष्टि से उन्नत राष्ट्र है।

सूती वस्त्र का धंधा मुख्यतः उत्तर-पूर्व में न्यू इंगलैंड की रियासतों में स्थित है। दक्षिणी रियासतों से इस प्रदेश को कपास मिलती है। इस धंधे के यहाँ केन्द्रित होने का मुख्य कारण नम जलवायु तथा जल विद्युत् की सुविधा है। रोड द्वीप, मचेस्टर, लावल, फालरिवर और मैसाच्युसेट्स इसके मुख्य केन्द्र हैं। पिछले कुछ वर्षों से दक्षिणी रियासतों में सूती वस्त्र का धंधा तेजी से बढ़ रहा है। इन रियासतों के लिए सबसे बड़ी सुविधा यह है कि वहां कपास पैदा होती है। वरजिनिया, जार्जिया तथा करोलिना में सूती वस्त्र का धंधा केन्द्रित है। यहाँ मजदूरी भी सस्ती है तथा कोयला समीप ही दक्षिणी अपलेशियन तथा अलबामा क्षेत्र से मिलता है।

संयुक्तराज्य अमरिका में ऊनी धंधा न्यू इंगलैन्ड में केन्द्रित है। इस प्रदेश में मैसाच्युसेट्स, रोड द्वीप, न्यू यार्क, फिलाडैलफिया तथा बाल्टीमोर ऊनी धंधे के मुख्य केन्द्र हैं। संयुक्तराज्य अमेरिका कच्चा ऊन आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड से मँगवाता है।

संयुक्तराज्य में रेशम का धंधा भी तेजी से पनप रहा है। अमरिका में रेशमी वस्त्र की माँग बहुत अधिक है क्योंकि वह एक धनी देश है। न्यू यार्क, न्यूजर्सी, तथा पैनसिलवेनिया इस धंधे के मुख्य केन्द्र हैं। कच्चा रेशम विदेशों से मँगवाया जाता है।

न्यू इंगलैंड की रियासतें तथा उत्तर मध्य प्रदेश में चमड़े के जूते का धंधा केन्द्रित है। संयुक्तराज्य के उत्तर मध्य भाग में मांस बनाने का धंधा केन्द्रित है जहाँ कि पश्चिमी रियासतों में मक्का खिलाकर मोटे किए हुए जानवर काटे जाते हैं। शिकागो तथा सेंट लुई (St. Luis) मांस के धंधे के प्रधान केन्द्र हैं। मांस के धंधे में जो खाल मिलती है वह जूते के धंधे में काम आती है।

संयुक्तराज्य अमेरिका में कागज बनाने का धंधा भी बहुत उन्नत अवस्था में है। शिकागो तथा फिलडेलफिया इस धंधे के प्रधान केन्द्र हैं। इस धंधे के लिए नरम लकड़ी विसकौनसिन, मिचिगन और मिनीसोटा रियासतों के जंगलों से प्राप्त होती है।

संयुक्तराज्य अमेरिका संसार में सबसे अधिक लोहा और स्पात बनाता है। लोहे का धंधा मुख्यत: कोयले की खानों के पास केन्द्रित है। पैनसेलवेनिया रियासत सबसे अधिक स्पात तैयार करती है। पिट्सबर्ग संसार में स्पात बनाने का सबसे बड़ा केन्द्र है। पिट्सबर्ग को कोयला अपलेशियन कोयले के क्षेत्र से प्राप्त होता है। इस प्रदेश में लोहा बिलकुल नहीं मिलता। लोहा झील प्रदेश (Lake Region) से ही यहाँ आता है। क्रमश: लोहे और स्पात का धंधा पश्चिम की ओर बढ़ रहा है क्योंकि वहाँ लोहा मिलता है। बफेलो, डैट्राइट, क्लीवलैंड, शिकागो इत्यादि जो सभी झील प्रदेश में स्थित हैं इस धंधे के मुख्य केन्द्र हैं। झील प्रदेश के जलमार्गों की सुविधा के कारण माल बाहर भेजने तथा पूर्व से कोयला मँगाने की सुविधा है।

बरमिंघम में लोहे तथा स्पात का धंधा तेजी से बढ़ता जारहा है। यहाँ कोयला, लोहा, तथा चूने का पत्थर सभी आवश्यक वस्तुएँ मिलती हैं। अस्तु बरमिंघम क्षेत्र में उत्तरी क्षेत्र से अधिक सुविधायें हैं। फिर भी पूर्वारम्भ के लाभ (Advantage of Early Settlement) के कारण उत्तरी केन्द्र अधिक महत्वपूर्ण हैं।

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि संयुक्तराज्य अमेरिका में गेहूँ और फल बहुत उत्पन्न होते हैं। अस्तु गेहूँ उत्पन्न करने वाले प्रदेश में आटा बनाने का धंधा तथा कैलीफोर्निया में फल सुरक्षित रखने का धंधा बहुत उन्नति कर गया है।

उत्तर मध्य प्रदेश में मिनीसोटा और मिनियापोलिस आटा बनाने के मुख्य केन्द्र हैं। यह केन्द्र गेहूँ उत्पन्न करने वाले क्षेत्र में हैं और इन्हें नाइगरा तथा सेंट ऐन्थनी जल-प्रपात से उत्पन्न होने वाली जल विद्युत् मिलती है। सेंट लुई भी आटा बनाने का मुख्य केन्द्र है कैलीफोर्निया में फल बहुत अधिक उत्पन्न होते हैं। यहाँ से ताजे फल, सूखे फल, अथवा मुरब्बा इत्यादि बाहर बहुत भेजा जाता है।

वरजिनिया और करौलिना में सिगरेट तथा सिगार बनाने का धंधा बहुत उन्नति कर गया है क्योंकि वहाँ उत्तम प्रकार की तम्बाकू बहुत अधिक उत्पन्न होती है।

के अयोग्य है। परन्तु गोरे लोग White Australia Policy के अनुसार एशियाई देशों के निवासियों को आकर रहने देना नहीं चाहते। इस कारण यह प्रदेश जनशून्य है। केवल समुद्रतट के समवर्ती मैदानों में आबादी है। यद्यपि आस्ट्रेलिया का बहुत-सा प्रदेश मरुभूमि है परन्तु मरुभूमि में भी जहाँ सोना मिलता है वहाँ खनिज केन्द्र स्थापित हो गए। मरुभूमि के अतिरिक्त आस्ट्रेलिया में ऐसा भी प्रदेश है जो उपजाऊ बनाया जा सकता है परन्तु वे भाग भी जनसंख्या की कमी के कारण अभी तक वीरान पड़े हुए हैं।

पानी की कमी के कारण आस्ट्रेलिया में खेती-बारी के लिए सिंचाई की आवश्यकता है। परन्तु इस देश में सिंचाई के साधन भी अधिक उपलब्ध नहीं हैं। अधिकांश नदियाँ गरमियों में सूख जाती हैं। केवल "मरे" और उसकी सहायक "मरमबिजी" अवश्य ही वर्ष भर बहती हैं। भीतर की ओर इन नदियों से सिंचाई की जाती है। इसके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया में सिंचाई का एक दूसरा साधन भी है। पूर्वी पर्वतमाला के पश्चिम में जो मैदान हैं उनमें पाताल-तोड़ कुयें (Artesian-wells) बनाये गए हैं। इन कुओं की विशेषता यह है कि पृथ्वी खोदने पर जल बड़े वेग से ऊपर उठता है, या तो पानी बाहर आ जाता है, अथवा वह इतना ऊपर उठ जाता है कि पम्प के द्वारा उपयोग में लाया जा सके। कुछ लोगों का विचार है कि भविष्य में पृथ्वी के गर्भ का जल कम हो सकता है। इस कारण उसे किफायत से खर्च किया जाता है। किन्तु अधिकतर यह नमकीन होने के कारण खेती-बारी के लिए उपयोगी नहीं है केवल भेड़ों को स्नान कराने तथा पिलाने के काम में आता है।

आस्ट्रेलिया के मुख्य तीन धंधे हैं। कृषि, पशुपालन विशेषकर भेड़ों का पालना और खनिज पदार्थों का निकालना। आर्थिक दृष्टि से आस्ट्रेलिया के दक्षिण पूर्वी नीचे मैदान महत्वपूर्ण हैं। यह मैदान उत्तर में कारपेन्टेरिया (Carpentria) की खाड़ी से दक्षिण के समुद्रतट तक फैले हुए हैं।

खेती में गेहूँ आस्ट्रेलिया की मुख्य पैदावार है। आस्ट्रेलिया में जितनी भूमि पर खेती होती है उसका लगभग दो तिहाई भूमि पर गेहूँ उत्पन्न किया जाता है। न्यू साऊथ वल्स, विक्टोरिया, दक्षिण आस्ट्रेलिया और पश्चिमी आस्ट्रेलिया (का वह भाग जिसमें, भूमध्यसागर (Mediterranean Type) की सी जलवायु है) में गेहूँ बहुत उत्पन्न होता है। मरे-डार्लिंग घाटी (Murray Darling Basin) में भी गेहूँ की बहुत अधिक पैदावार होती है।

गेहूँ के अतिरिक्त आस्ट्रेलिया में फलों की पैदावार भी अधिकता से होती है। वैसे तो जहाँ भी वर्षा यथेष्ट है अथवा सिंचाई के साधन उपलब्ध

हैं वहाँ फलों की पैदावार होती है, परन्तु विक्टोरिया और दक्षिण आस्ट्रेलिया में फल बहुत उत्पन्न होते हैं। इन रियासतों में अंगूर भी बहुतायत से उत्पन्न होता है और पिछले वर्षों में अंगूर को शराब बनाने का धंधा यहाँ अधिक उन्नति कर गया है। उत्तर में कपास तथा गन्ने की पैदावार होती है। इनके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया में मक्खन का भी धन्धा होता है।

आस्ट्रेलिया में खनिज पदार्थों को निकालने का धंधा महत्वपूर्ण है। सोने के ही लालच में आरम्भ में बहुत से लोग आस्ट्रेलिया में आकर बसे थे। किन्तु अब सोने को निकालने का पहले जैसा महत्व नहीं है। कोयला और सोना आस्ट्रेलिया में बहुत पाया जाता है। इसके अतिरिक्त तॉबा, चाँदी, सीसा (Lead), टिन और जिंक भी निकाला जाता है।
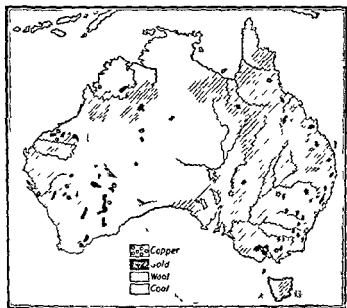
क्वीन्सलैंड में माऊट मारगन (Mount Morgan) चारटर्स-टावर (Chartirs Tower) और जिम्पी, विक्टोरिया में बैंडिगो, और पश्चिम आस्ट्रेलिया में कूलगार्डी (Coolgardie), माऊन्ट-मारगैरट (Mount Margaret) तथा मरचिसन (Marchisón) मुख्य सोने की खानों के केन्द्र हैं। किन्तु अब

खानों से सोना कम निकलने लगा है और सोने का धधा अपना महत्व खोता जा रहा है।

न्यू-कैसिल और सिडनी कोयले का खानों के मुख्य केन्द्र हैं जहाँ से बहुत अधिक राशि में कोयला निकाला जाता है। न्यू-साऊथ वेल्स का ब्रोकिनहिल (Broken Hill) खनिज केन्द्र प्रसिद्ध है। आस्ट्रेलिया का ६०% चाँदी, सीसा, रागा तथा ताँबा इन्हीं खानों से निकलता है।

आस्ट्रेलिया के शुष्क भाग में खेती तो नहीं हो सकता किन्तु यह प्रदेश भेड़ पालने के लिये उपयुक्त है यही कारण है यहाँ भेड़ पालने का धधा बहुत होता है। आस्ट्रेलिया ससार में सबसे अधिक और सबसे बढ़िया ऊन उत्पन्न करता है। ससार प्रसिद्ध मोरिनो जाति की भेड़ यहीं पाली जाती हैं।

आस्ट्रेलिया में उद्योग धधा की बहुलता नहीं है। फिर भी खेती के लिए यत्र बनाने, ऊनी कपड़ा तैयार करने, तथा चमड़े की वस्तुएँ बनाने का धधा बहुत तेजी से उन्नति कर गया है। क्रमश ये धधे और भी अधिक उन्नति करेंगे इसमें सदेह नहीं है। आस्ट्रेलिया का विदेशी व्यापार मुख्यत ब्रिटेन से है।

न्यूजीलैंड

न्यूजीलैंड आस्ट्रेलिया के पूर्व में तीन बड़े तथा अनेक छोटे टापुओं का एक उपनिवेश है जो १९०७ में पृथक् राज्य बना दिया गया। ये द्वीप एक पर्वतमाला के बचे हुए भाग हैं, इस कारण धरातल पथरीला है। यहाँ वर्षा खूब होती है। इस कारण यह देश वनों से आच्छादित है। पाइन (Pine) यहाँ बहुतायत से होता है।

दक्षिण द्वीप में कैन्टरबरी के मैदान बहुत उपजाऊ हैं जहाँ गेहूँ की खेती बहुत होती है। न्यूजीलैंड के निवासियों का मुख्य धधा खेती करना, गाय और भेड़ चराना है। पिछले कुछ वर्षों से फलों की खेती भी तेजी से बढ़ गई है। उत्तर में अगूरों की पैदावार होती है। न्यूजीलैंड भेड़ का मास, ऊन तथा मक्खन और गेहूँ अधिक उत्पन्न करता है। ये ही वस्तुएँ विदेशों को भेजी जाती हैं। इस देश का व्यापार अधिकतर ब्रिटेन से होता है।

अफ्रीका

अफ्रीका का महाद्वीप यद्यपि पुरानी दुनिया का एक भाग है परन्तु वह पिछड़ी हुई दशा में है। इस महाद्वीप का अधिकतर भाग योरोपीय शक्तियों के अधीन है। यहाँ के मूल निवासी पश्चिमी देशों के पूँजीपतियों द्वारा खोले हुए कारखानों तथा सोने की खानों में कुली बन कर कार्य करते हैं। वैसे अधिकाश भाग में मूल निवासियों का मुख्य पेशा खेती करना अथवा पशुपालन है। इस महाद्वीप में जो कुछ भी औद्योगिक

उन्नति दृष्टिगोचर होती है वह योरोपियन पूँजीपतियों के द्वारा ही हुई है परन्तु श्रमजीवी समुदाय में या तो मूल निवासी हैं अथवा भारतीय।
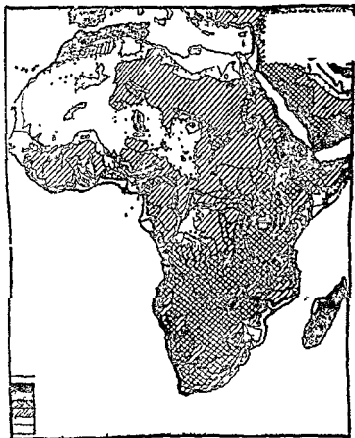
अफ्रीका के प्राकृतिक विभाग

इस महाद्वीप का क्षेत्रफल ११, ५०, ००० वर्ग मील है। यह महाद्वीप एक विशाल पठार के रूप में फैला हुआ है। उत्तरी भाग कुछ नीचा है किन्तु दक्षिणी भाग बहुत ऊँचा है। अफ्रीका के पठार में बहुत बड़ी घाटियाँ हैं। इन घाटियों में बहुत बड़ी झील बन गई हैं। जार्डन, मृत सागर तथा लाल सागर इन्हीं घाटियों में हैं। दक्षिण में यद्यपि घाटियों में झीलें बहुत हैं परन्तु हैं बहुत छोटी।

अफ्रीका का महाद्वीप अधिकतर उष्ण कटिबन्ध में है इस कारण जलवायु सारे

महाद्वीप में एकसा ही है। यदि पर्वतीय प्रदेश को छोड़ दें तो शेष सारा प्रदेश गरमियों में बहुत गरम और जाड़ों में कम ठंढा है। पर्वतीय प्रदेश में जाड़ों में ठंढ बहुत पड़ती है।

इस महाद्वीप में वर्षा एकसी नहीं होती। उत्तरी भाग में गरमियों के दिनों में जब सहारा की मरुभूमि बहुत गरम होती है और हवा बहुत हल्की हो जाती है तब भूमध्य रेखा पर लगातार वर्षा होने की सीमा उत्तर में आ जाती है। जुलाई में वर्षा की सीमा २० अक्षांश रेखा तक होती है। दक्षिण में वर्षा सरदी और गरमी के आरम्भ में होती है। भूमध्य सागर के प्रदेश उष्ण कटिबन्ध की सीमा पर होने से सूखे हैं, क्योंकि कर्क रेखा (Cancer) पर हवा भारी होती है। इस प्रदेश में दक्षिण से चलने वाली हवायें भी वर्षा नहीं करतीं क्योंकि वे सहारा से आती हैं। दक्षिण में भी मकर रेखा (Capricorn) के समीप हवा भारी होती है इस कारण वहाँ से हवा दूसरी ओर चलती है और वर्षा नहीं होता। केप अन्तरीप में पश्चिमी हवाओं से वर्षा खूब होती है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि भूमध्य रेखा के दोनों ओर वर्षा बहुत होती है किन्तु उत्तर में वर्षा होती ही नहीं है।

पैदावार

जलवायु के अनुसार ही यहाँ की पैदावार भी भिन्न है। उत्तर तथा दक्षिण में भूमध्य सागर की जलवायु होने के कारण वहाँ जैसी ही पैदावार होती है। भूमध्य सागर तथा भूमध्य रेखा से बीच में रेगिस्तान है। भूमध्य रेखा के समीपवर्ती प्रदेश में सघन वन हैं, ये वन इतने सघन हैं कि इनमें मार्गों की सुविधा नहीं है। बाकी प्रदेश शुष्क है। जहाँ सिंचाई की सुविधा है वहाँ पैदावार होती है। दक्षिण में मरुभूमि कम है कि

उत्तर में सहारा का विशाल प्रदेश एक भयंकर मरुभूमि है जहाँ पैदावार बिलकुल ही नहीं होती।

इस महाद्वीप में बहुत सी जातियाँ निवास करती हैं। उत्तर में अरब, दक्षिण सहारा में सुडानी, तथा बन्टू निवास करते हैं और दक्षिण अफ्रीका में हब्शी तथा जुलू जातियाँ निवास करती हैं।

मिस्र

यह देश नील नदी के मुहाने से वादी हल्फा तक फैला हुआ है। इसके पूर्व में लाल सागर और पश्चिम में मरुभूमि है। अधिकांश जनसंख्या नील नदी से सींचे जाने वाले प्रदेश में ही निवास करती है। विस्तृत मरुभूमि में नील नदी एक विशाल जल स्रोत के समान बहती है। इस देश में लगभग १०,००० वर्ग मील भूमि खेती के योग्य है और इस थोड़ी सी भूमि पर एक करोड़ चालीस लाख मनुष्य निवास करते हैं। खेती बारी ही इस जनसंख्या का आधार है। यहाँ उद्योग धंधे उन्नत नहीं हुए हैं। ग्रीष्मकाल की वर्षा के कारण नील नदी में जो बाढ़ आती है उसी से खेती की सिंचाई होती है। नील नदी में २६ जून के आस पास बाढ़ आना प्रारम्भ होता है, क्रमशः जल अधिक बढ़ने लगता है और जल का रंग लाल मिट्टी मिल जाने से लाल हो जाता है। यह लाल मिट्टी बहुत उपजाऊ होती है। सितम्बर के महीने में नदी का पानी दोनों किनारों से ऊपर उठ जाता है और दोनों ओर पृथ्वी पर बहने लगता है। यदि पानी २७ फीट से भी अधिक ऊँचा उठ जावे तो बहुत हानि की सम्भावना रहती है। बाढ़ के दिनों में नील नदी के बाँधों पर दृष्टि जाती है क्योंकि बाँधों के टूट जाने से बहुत हानि हो सकती है।

मिस्र का जलवायु पैदावार के लिए बहुत ही अनुकूल है। यदि जल मिल सके तो प्रत्येक स्थान पर पैदावार होती है। यहाँ कपास, मक्का, गन्ना, बाजरा, ज्वार खजूर और चावल की पैदावार खूब होती है। मिस्र में पृथ्वी पर जमा हुआ शोरा बहुत मिलता है। इस कारण खाद देने की सुविधा है। शोरा तथा नील नदी ने मिस्र को उद्यान बना दिया है। यदि किसी वर्ष बाढ़ कम आती है अथवा अत्यधिक आती है तो अकाल पड़ जाता है। दोनों ही दशाओं में अकाल पड़ जाता है। मिस्र में कपास बहुत उत्पन्न होती है। साथ ही यहाँ की कपास बढ़िया होता है। लंकाशायर, जापान तथा देशों को मिस्र से कपास जाता है।

दक्षिण अफ्रीका

दक्षिण अफ्रीका में मुख्यतः पशु पालन, खेती और खनिज ये ही तीन धन्धे मुख्य हैं। दक्षिण अफ्रीका में लगभग ४ करोड़ भेड़ तथा ८० लाख बकरे हैं और प्रतिवर्ष बहुत सा ऊन विदेशों का यहाँ

महाद्वीप में एकसा ही है। यदि पर्वतीय प्रदेश को छोड़ दें तो शेष सारा प्रदेश गरमियों में बहुत गरम और जाड़े में कम ठंडा है। पर्वतीय प्रदेश में जाड़ों में ठंड बहुत पड़ती है।

इस महाद्वीप में वर्षा एकसी नहीं होती। उत्तरी भाग में गरमियों के दिनों में जब सहारा की मरुभूमि बहुत गरम होती है और हवा बहुत हल्की हो जाती है तब भूमध्य रेखा पर लगातार वर्षा होने की सीमा उत्तर में आ जाती है। जुलाई में वर्षा की सीमा टिम्बक्टू की अक्षांश रेखा तक होती है। दक्षिण में वर्षा सरदी और गरमी के आरम्भ में होती है। भूमध्य सागर के प्रदेश उष्ण कटिबन्ध की सीमा पर होने से सूखे हैं, क्योंकि कर्क रेखा (Cancer) पर हवा भारी होती है। इस प्रदेश में दक्षिण से चलने वाली हवायें भी वर्षा नहीं करतीं क्योंकि वे सहारा से आती हैं। दक्षिण में भी मकर रेखा (Capricorn) के समीप हवा भारी होता है इस कारण वहाँ से हवा दूसरी ओर चलती है और वर्षा नहीं होती। इस अन्तरीप में पश्चिमी हवाओं से वर्षा खूब होती है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि भूमध्य रेखा के दोनों ओर वर्षा बहुत होती है किन्तु उत्तर में वर्षा होती ही नहीं है।

जलवायु के अनुसार ही यहाँ की पैदावार भी भिन्न है। उत्तर तथा दक्षिण में भूमध्य सागर की जलवायु होने के कारण वहाँ जैसी ही पैदावार होती है। भूमध्य सागर तथा भूमध्य रेखा के बीच में रेगिस्तान हैं। भूमध्य रेखा के समीपवर्ती प्रदेश में सघन वन हैं, ये वन इतने सघन हैं कि इनमें मार्गों की सुविधा नहीं है। बाकी प्रदेश शुष्क है। जहाँ

पैदावार

सिंचाई की सुविधा है वहाँ पैदावार होती है। दक्षिण में मरुभूमि कम है किन्तु

उत्तर में सहारा का विशाल प्रदेश एक भयंकर मरुभूमि है जहाँ पैदावार बिलकुल ही नहीं होती।

इस महाद्वीप में बहुत सी जातियाँ निवास करती हैं। उत्तर में अरब, दक्षिण सहारा में सुडानी, तथा बन्टू निवास करते हैं और दक्षिण अफ्रीका में हैब्शी तथा जुलू जातियाँ निवास करती हैं।

मिस्र यह देश नील नदी के मुहाने से वादी हल्का तक फैला हुआ है। इसके पूर्व में लाल सागर और पश्चिम में मरुभूमि है। अधिकांश जनसंख्या नील नदी से सींचे जाने वाले प्रदेश में ही निवास करती है। विस्तृत मरुभूमि में नील नदी एक विशाल जल स्रोत के समान बहती है। इस देश में लगभग १०,००० वर्ग मील भूमि खेती के योग्य है और इस थोड़ी सी भूमि पर एक करोड़ चालीस लाख मनुष्य निवास करते हैं। खेती बारी ही इस जनसंख्या का आधार है। यहाँ उद्योग धंधे उन्नत नहीं हुए हैं। ग्रीष्मकाल की वर्षा के कारण नील नदी में जो बाढ़ आती है उसी से खेती की सिंचाई होती है। नील नदी में २६ जून के आस पास बाढ़ आना आरम्भ होती है, क्रमशः जल अधिक बढ़ने लगता है और जल का रंग लाल मिट्टी मिल जाने से लाल हो जाता है। यह लाल मिट्टी बहुत उपजाऊ होती है। सितम्बर के महीने में नदी का पानी दोनों किनारों से ऊपर उठ आता है और दोनों ओर पृथ्वी पर बहने लगता है। यदि पानी २७ फीट से भी अधिक ऊँचा उठ जावे तो बहुत हानि की सम्भावना रहती है। बाढ़ के दिनों में नील नदी के बाँधों पर पहरा रहता है क्योंकि बाँधों के टूट जाने से बहुत हानि हो सकती है।

मिस्र का जलवायु पैदावार के लिए बहुत ही अनुकूल है। यदि जल मिल सके तो प्रत्येक स्थान पर पैदावार होती है। यहाँ कपास, मक्का, गन्ना, बाजरा, ज्वार खजूर और चावल की पैदावार खूब होती है। मिस्र में पृथ्वी पर जमा हुआ शोरा बहुत मिलता है। इस कारण खाद देने की सुविधा है। शोरा तथा नील नदी ने मिस्र को उद्यान बना दिया है। यदि किसी वर्ष बाढ़ कम आती है अथवा अत्यधिक आती है तो अकाल पड़ जाता है। दोनों ही दशाओं में अकाल पड़ जाता है। मिस्र में कपास बहुत उत्पन्न होती है। साथ ही यहाँ की कपास बढ़िया होता है। लंकाशायर, जापान तथा देशों को मिस्र से कपास जाता है।

दक्षिण अफ्रीका दक्षिण अफ्रीका में मुख्यतः पशु पालन, खेती और खनिज ये ही तीन धन्धे मुख्य हैं। दक्षिण अफ्रीका में लगभग ४ करोड़ भेड़ें तथा ८० लाख बकरे हैं और प्रतिवर्ष बहुत सा ऊन विदेशों को यहाँ

से भेजा जाता है। गाय और बैलों की संख्या यहाँ एक करोड़ के लगभग है। दूध और मक्खन का धन्धा यहाँ उन्नत अवस्था में है और मक्खन तथा पनीर यहाँ से विदेशों को भेजा जाता है।

दक्षिण अफ्रीका में मक्का की खेती बहुत होती है किन्तु गेहूँ कम उत्पन्न होता है। केप कालोनी में फल बहुतायत से उत्पन्न होते हैं।

खनिज पदार्थों की दृष्टि से दक्षिण अफ्रीका बहुत धना है। ट्रान्सवाल की सोने की खानों में अत्यन्त राशि में सोना भरा पड़ा है। किम्बरले तथा जोन्सबर्ग की हीरे की खानों से संसार के अधिकांश हीरे निकलते हैं। दक्षिण अफ्रीका के ट्रान्सवाल, आरेंज फ्री स्टेट तथा जुलूलैन्ड में कोयला बाहर भेजा जाता है। इनके अतिरिक्त ताँबा टिन भी यहाँ निकाला जाता है। दक्षिण अफ्रीका का प्रदेश विशेष उन्नति कर गया है। यहाँ गमनागमन की सुविधायें उपलब्ध हैं और व्यवसाय भी खूब होता है।

द्वितीय खंड

पन्द्रहवाँ परिच्छेद

भारत की प्रकृति

भारत एक विशाल देश है जिसका क्षेत्रफल ११, ३८, ८१४ वर्गमील है। इसकी जनसंख्या १९५१ की जनगणना के अनुसार ३५, ६८, ९१, ६२४ है। इसकी उत्तर से दक्षिण तक लम्बाई २००० मील तथा चौड़ाई भी लगभग इतनी ही है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की दृष्टि से भारत की स्थिति बहुत अच्छी है। पूर्वी गोलार्द्ध में उसकी स्थित मध्य में है और वह हिन्दमहासागर के तट पर स्थित है। इस कारण भिन्न भिन्न देशों से व्यापार सम्बन्ध स्थापित करने में उसे बहुत बड़ी प्राकृतिक सुविधा है। अफ्रीका, योरोप, आस्ट्रेलिया तथा पूर्वी एशिया और अमेरिका को जो भी समुद्री मार्ग हैं वे भारत को उसकी स्थिति के कारण सुलभ हैं और वह उन मार्गों पर पड़ता है। यह भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये बहुत लाभदायक बात है। उत्तर में पहाड़ों तथा दक्षिण में समुद्र के कारण भारत की प्राकृतिक सीमायें निर्धारित हो गई हैं।

स्थिति

यद्यपि उत्तर के पहाड़ों ने भारत को एशिया के अन्य देशों से पृथक् कर दिया है और इस कारण उन देशों से स्थल द्वारा व्यापार करने में रुकावट होती है किन्तु फिर भी उत्तर पश्चिम में बहुत से दर्रे हैं जिनमें भारत अपने पड़ोसी एशियाई देशों से व्यापार करता है।

भारत के विभाजन के फल स्वरूप भारत की यह प्राकृतिक सीमा नष्ट हो गई। अब काश्मीर से पूर्वी पंजाब में होकर राजस्थान तथा सौराष्ट्र की सीमा भारत

और पाकिस्तान की सीमा बन गई है। यद्यपि राजनैतिक कारणों ने भारत का विभाजन हो गया है परन्तु भौगोलिक दृष्टि से यह एक देश है।

पूर्व की ओर हिमालय की श्रेणियों ने भारत को ब्रह्मा से अलग रक्खा है।

भारत के उष्ण और शीतोष्ण कटिबन्ध के मध्य में बसे होने के कारण यहाँ सभी प्रकार की जलवायु और वनस्पतियाँ तथा पैदावार पाई जाती हैं। कहीं घने जंगल हैं तो कहीं उजाड़ निर्जन मरुस्थल हैं। उत्तर से दक्षिण तथा पूर्व से पश्चिम अधिक विस्तार होने के कारण देश की प्राकृतिक अवस्था में बड़ी भिन्नता पाई जाती है। कहीं गगनचुम्बी पर्वत मिलते हैं तो कहीं नदियों की उपजाऊ घाटियाँ हैं तो कहीं पठार और कहीं मैदान हैं। नदियों की अधिकता ने देश धन धान्य से परिपूर्ण है।

भारत का समुद्र तट

भारत का समुद्र तट कटा हुआ नहीं है और न तट के पास बहुत से छोटे छोटे द्वीप ही हैं। इस कारण भारत के समुद्र तट पर अधिक प्राकृतिक बन्दरगाह नहीं हैं। समीप का तटवर्ती समुद्र छिछला चौरस और रेतीला है। इस कारण उस पर अच्छे बन्दरगाह अधिक नहीं हैं। कच्छ की खाड़ी, खम्भात की खाड़ी, पाम्बन डमरूमध्य, और गंगा के डेल्टा पर ही समुद्र तट कटा हुआ है। ये सब छिछली हैं इस कारण उनको बराबर मिट्टी निकालते रहने की आवश्यकता होती है तब वह जहाजों के लिए उपयोगी हो सकते हैं।

जहाँ तक क्षेत्रफल का प्रश्न है भारत संसार के सबसे बड़े देशों में है। एशिया में तो वह निश्चय ही सबसे बड़ा देश है। हम यहाँ एशिया के कुछ बड़े देशों का क्षेत्रफल देते हैं —

भारत	१२ लाख	वर्ग	मील
साइबेरिया	१६ ,,	,,	,,
चीन (खास)	१५ ,,	,,	,,
मंगोलिया	१३ ,,	,,	,,
पाकिस्तान	४ ,,	,,	,,

अन्य महाद्वीप में

यारोपीय रूस	७५ लाख	वर्ग	मील
कनाडा	३५ ,,	,,	,,
ब्राजील	३२ ,,	,,	,,
संयुक्तराज्य अमेरिका	२६ ,,	,,	,,
आस्ट्रेलिया	२६ ,,	,,	,,

भारत के क्षेत्रफल के सम्बन्ध में एक बात ध्यान देने की है कि यहाँ अधिकांश भूमि मनुष्य के उपयोग में आती है किन्तु रूस और कनाडा का बहुत सा भाग मनुष्य के लिए व्यर्थ है। आस्ट्रेलिया का अधिकांश भाग मरुभूमि है और ब्राजील का अधिकांश भाग सघन वनों से आच्छादित है। संयुक्तराज्य अमेरिका में भी पश्चिमी रियासतों में लाखों एकड़ भूमि मरुभूमि हैं। इस दृष्टि से भारत का क्षेत्रफल यथेष्ट है और जहाँ तक भूमि का सम्बन्ध है भारत संसार के प्रमुख देशों में है।

जहाँ तक जनसंख्या का प्रश्न है चीन को छोड़कर भारत की जनसंख्या संसार में सबसे अधिक है। चीन की जनसंख्या के बारे में अभी तक निश्चय पूर्वक कुछ भी ज्ञात नहीं हो सका है। वहाँ तो जनसंख्या को केवल कूता गया है कोई मनुष्य गणना नहीं हुई है।

भिन्न भिन्न देशों की जनसंख्या १६३६ में इस प्रकार थी:—भारत तथा पाकिस्तान ३८२० लाख, साइबेरिया ६० लाख, चीन ४५०० लाख (?) मंगोलिया ६० लाख, सोवियत रूस १६४० लाख, कनाडा ११० लाख, ब्राजील ४१० लाख, संयुक्त राज्य अमेरिका १३१० लाख, आस्ट्रेलिया ७० लाख।

भारत के इस विस्तृत क्षेत्रफल और बड़ी जनसंख्या के कारण कुछ विद्वान भारत को एक महाद्वीप कहते हैं। किन्तु वास्तविक बात तो यह है कि भारत एक बड़ा देश है। प्रकृति ने उसे एक भौगोलिक इकाई बनाया है, उसे भौगोलिक एकता प्रदान की है। यद्यपि आज एक राजनैतिक कुचक्र के कारण भारत का विभाजन हो गया है किन्तु यह दोनों राज्यों के लिए अहितकर है और भारत तभी समृद्धिशाली और उन्नत हो सकता है जब कि भारत के दो टुकड़े मिलकर एक हो जावें। वास्तव में प्रकृति ने भारत को एक देश बनाया है। मनुष्य के राजनैतिक पागलपन ने उसे विभाजित कर दिया है।

यद्यपि पराधीन रहने के कारण भारत आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा राष्ट्र बना रहा किन्तु भारत में प्राकृतिक देन बहुत है। भारत प्राकृतिक देन का धनी देश है। तभी कुछ लोगों ने कहा है भारत एक धनी देश है जिसमें निर्धन मनुष्य रहते हैं। कारण यह है कि हम पराधीनता तथा अन्य कारणों से उस प्राकृतिक देन का पूरा उपयोग नहीं कर सके, उद्योग-धंधों की उन्नति नहीं कर सके। किन्तु अब जब भारत स्वतंत्र हुआ है तो भविष्य में उनके आर्थिक विकास की बहुत आशा है। भविष्य में वह संसार में प्रमुख औद्योगिक राष्ट्र बनेगा इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

भारत का आर्थिक भूगोल हमें बतलाता है कि भारत के भावी आर्थिक विकास के लिए उसके पास कौन से साधन हैं और उनका किस प्रकार पूरा पूरा उपयोग किया जा सकता है।

भारत एक विशाल देश है। यहाँ समतल मैदान, गगनचुम्बी ऊँचे पर्वत, नदियों की घाटियाँ, विस्तृत मरुभूमि, सघन वन सभी प्रकार के प्रदेश देखने को मिलते हैं। किन्तु पृथ्वी की बनावट के अनुसार हम देश को चार भागों में बाँट सकते हैं।

(१) हिमालय का पहाड़ी प्रदेश जो उत्तर में स्थित है।
(२) गंगा का मैदान।
(३) दक्षिण का पठार जो मैदान के दक्षिण में है।
(४) तटीय मैदान जो दक्षिण पठार के पूर्व और पश्चिम में है।

पर्वतीय प्रदेश

दक्षिण पठार के उत्तर पूर्व में जो प्रदेश है और जो आज पर्वतीय प्रदेश तथा गंगा के मैदान के नाम से प्रसिद्ध है किसी समय समुद्र के नीचे छिपा हुआ था। जिस समय दक्षिण पठार ज्वालामुखी विस्फोट के कारण लावा से ढक गया उसी समय पृथ्वी के धरातल में ऐसा भयंकर परिवर्तन हुआ कि जिससे उत्तर के छिछले समुद्र का धरातल ऊँचा उठकर संसार के सबसे ऊँचे पर्वत में परिणत हो गया। इस नवीन पर्वत श्रेणी से नदियों ने प्रतिवर्ष अनन्त राशि में मिट्टी तथा रेत ला लाकर इस छिछले समुद्र को पाटना आरम्भ कर दिया और क्रमशः इस विस्तृत क्षेत्र को उन्होंने संसार के सबसे अधिक उपजाऊ मैदानों में परिणत कर दिया।

उत्तर का विशाल हिमालय पर्वत संसार भर के पहाड़ों से अधिक ऊंचा है। इसकी पर्वत श्रेणियाँ पामीर से आरम्भ होती हैं। इस उत्तरी पर्वतीय प्रदेश में हिमालय की केवल एक ही श्रेणी नहीं है वास्तव में हिमालय पर्वत प्रायः तीन समानान्तर श्रेणियों से बना है। मैदान के किनारे वाली श्रेणी मैदान की तरह ही मिट्टी, बालू, और कंकड़ की बनी है। यह श्रेणी अधिक ऊँची नहीं है। इसे शिवालिक के नाम से पुकारते हैं। इसके उत्तर में दूसरी श्रेणी है जो पचास साठ मील चौड़ी और ६००० से १२००० फ़ुट तक ऊँची है। शिवालिक तथा इस श्रेणी के बीच में खुले हुए मैदान हैं। दूसरी श्रेणी के उत्तर में हिमालय की तीसरी श्रेणी है जो सबसे अधिक ऊंची है। इस श्रेणी की औसत ऊँचाई २०,००० फ़ीट है। हिमालय की प्रसिद्ध चोटियाँ नंगा पर्वत, नन्दा देवी, सरगामाथ। (माउंट एवरेस्ट) किंचिनचिंगा और धौलागिरी इत्यादि श्रेणियाँ इसी में हैं। इस श्रेणी की कई चोटियाँ

साल भर तक बरफ से ढकी रहती हैं। इस श्रेणी के दर्रे भी १६००० से १८००० फीट तक ऊँचे हैं। इस कारण इनको पार करके तिब्बत के पठार में जाना बहुत दुष्कर है। मार्ग अत्यन्त दुर्गम होते हैं। केवल पगडण्डियाँ मात्र ही होती हैं। मनुष्य अथवा पशु का तनिक भी पैर फिसलने पर हजारों फुट गहरे खड्डों में गिरने की आशंका प्रत्येक चरण बनी रहती है। नदियाँ भयंकर तथा अत्यन्त गहरी कन्दराओं में होकर बहती हैं जिन्हें रस्से के पुल से पार करना पड़ता है। यही कारण है कि हिमालय उत्तर भारत तथा तिब्बत में एक अभेद्य दीवार की भाँति खड़ा है और किसी प्रकार का आवागमन तथा व्यापार कठिन है। योरोप में आल्प्स के दर्रे ४०००

प्राकृतिक दशा

से ८००० फीट तक ऊँचे हैं। इन दर्रों में से होकर रेलवे लाइनें इटली को जर्मनी आस्ट्रिया, तथा स्वीटजरलैंड से जोड़ती हैं। इस कारण वहाँ का व्यापार बढ़ गया है। किन्तु हिमालय की अभेद्य दीवार ने भारत को अपने पड़ोसी देशों से सर्वथा पृथक् कर दिया है।

पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी के मोड़ के आगे हिमालय की शाखायें दक्षिण की ओर चली गई हैं। पत्काई, नागा तथा लुशाई पहाड़ियाँ आसाम को ब्रह्मा से पृथक करती हैं। मनीपुर राज्य में होती हुई ये पहाड़ियाँ ब्रह्मा के अराकान योमा से मिल जाती हैं और इरावदी के मुहाने के पश्चिम की ओर नाग्रस अन्तरीप में समाप्त हो गई हैं। इनके अतिरिक्त जयन्तिया, खासी और गारो आसाम की घाटी को सिलहट और कछार से अलग करती हैं। हिमालय की पूर्वी श्रेणियाँ सघन वन से आच्छादित हैं।

हिमालय की तीसरी श्रेणी जिसे महान् हिमालय के नाम से पुकारा जाता है और दूसरी श्रेणी के बीच में चौड़ी घाटियाँ हैं। काठमाण्डू की घाटी और काश्मीर की घाटी। ये बहुत चौड़े मैदान हैं जो पाँच हजार फीट की ऊँचाई पर स्थित हैं और चारों ओर ऊँचे पहाड़ों से घिरे हुए हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि यहाँ पहले विशाल झील थीं जो मिट्टी से भर जाने के कारण मैदानों में परिणत हो गई।

इसी प्रकार शिवालिक और हिमालय के बीच में चौड़ी घाटियाँ हैं जिन्हें दून कहते हैं। इसीलिए देहरादून नाम पड़ा है। हिमालय से जो मिट्टी और पत्थर तेज नदियाँ बहाकर लाती हैं उनके जमने से ये घाटियाँ बनी हैं। इन नदियों के बहाव में शिवालिक पहाड़ी से रुकावट पड़ती है इस कारण ये नदियाँ बहुत सी मिट्टी और पत्थर उन मैदानों में जमा कर देती हैं जो शिवालिक और हिमालय की प्रारम्भिक पहाड़ियों के बीच में हैं।

हिमालय की श्रेणियों से मिले हुए वे मैदान हैं जिन्हें भाभर कहते हैं और जिनमें नदियों की लाई मिट्टी, रेत और पत्थर जम जाता है। भाभर में वास्तव में चूने के पत्थर का बाहुल्य है इस कारण छोटी छोटी नदियाँ यहाँ सूख कर अन्दर बहती हैं और केवल बड़ी नदियाँ ही ऊपर रह जाती हैं। ये भाभर के मैदान उत्तर और उत्तर पश्चिम में अधिक विस्तृत हैं किन्तु पूर्व में कम विस्तृत हैं।

यह जल जो भाभर में सूख जाता है वहाँ फिर प्रकट होता जहाँ कि मैदान आरम्भ होते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि हिमालय के समीपवर्ती मैदानों का बहुत सा भाग 'नम' दलदल हो जाता है। इसे तराई कहते हैं। 'तराई' के मैदानों में जहाँ बहुत नमी रहती है, घने जंगल खड़े हैं। यहाँ का जलवायु अधिक नम होने के कारण मनुष्य निवास के उपयुक्त नहीं है। तराई का विस्तार पूर्व में अधिक जलवृष्टि के कारण अधिक है, पश्चिम में वह बहुत कम है।

भारत पर हिमालय का प्रभाव

हिमालय का हमारे देश के आर्थिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। हिमालय का भारत के जलवायु पर गहरा प्रभाव है। भारत के उत्तरी भाग में जो वर्षा होती है उसका मुख्य कारण हिमालय पर्वत ही है। मानसून इन पहाड़ों से टकराकर सारा पानी उत्तर के मैदानों में गिरा देती हैं। यदि उत्तर में हिमालय की श्रेणियाँ न होतीं तो मानसूनी हवायें उत्तर भारत को पार करके चली जातीं और वह सूखा रेगिस्तान बन जाता। केवल हिमालय से यही लाभ नहीं है वरन् उसका ढाल और जल का बहाव इस प्रकार का है कि जो नदियाँ भारत की सीमा के बाहर उत्तर तिब्बत से निकलती हैं वे भी दक्षिण की ओर मुड़ कर भारत के मैदानों में आ जाती हैं। इस प्रकार जो वर्षा भारत की ओर होती है और जो वर्षा भारत की सीमा के बाहर होती है उन सब का लाभ भारत को मिलता है। हिमालय से निकली हुई नदियों पर ही हमारे देश का मुख्य धंधा खेती निर्भर है। हिमालय पर बर्फ जमा रहने के कारण उससे निकली हुई नदियों में गर्मियों में भी यथेष्ट जल रहता है जिससे सिंचाई होती है।

हिमालय उत्तर की अत्यन्त ठंडी हवाओं को उत्तर के मैदानों में आने से रोक लेता है। यदि उत्तर में हिमालय की ऊँची श्रेणियाँ न होतीं तो उन ठंडी हवाओं से उत्तर के मैदानों की खेती को बहुत हानि पहुँचती।

इसके अतिरिक्त उन पहाड़ों पर जो सघन वन हैं उनमें बहुमूल्य लकड़ी, घास, जड़ी-बूटियाँ, छाल, फल, गोंद, इत्यादि पदार्थ अनन्त राशि में भरे पड़े हैं। उनका बहुत से धन्धों में कच्चे पदार्थ (Raw material) के रूप में उपयोग होता है (हिमालय की वन सम्पत्ति के विषय में आगे विस्तारपूर्वक लिखा गया है)। जो कुछ भी हिमालय की वनसम्पत्ति के विषय में हमें ज्ञात है उससे यह तो कहा ही जा सकता है कि प्रकृति ने इन वनों में अटूट सम्पत्ति भर दी है। देश के बहुत से धंधे जैसे कागज, दियासलाई, तारपीन का तेल इत्यादि वनों की लकड़ी पर ही निर्भर हैं।

हिमालय ने भारत की प्राकृतिक सीमा बना दी है और विदेशी आक्रमण से भारत की रक्षा का प्रबंध कर दिया है। केवल उत्तर पश्चिम में बोलन और खैबर के दर्रे ही ऐसे खुले मार्ग थे कि जिनसे भारत का अपने पड़ोसी राष्ट्रों से सम्बन्ध स्थापित हो गया था। शताब्दियों से भारत का अपने पड़ोसी अफगानिस्तान से [illegible] था वह इन्हीं दर्रों का प्रसाद था। इन दर्रों से केवल व्यापारी ही आते रहे हों यही बात नहीं है भारत पर बाहर से जितने आक्रमण हुए हैं वह इन्हीं दर्रों के द्वारा हुए थे।

यदि भविष्य में हिमालय के प्रदेश में जलविद्युत् की उन्नति हो जिसके लिए वहाँ बहुत सुविधा है तो हिमालय के वनों में मिलने वाले कच्चे माल से हिमालय प्रदेश में उद्योग धन्धों की स्थापना हो सकती है।

हिमालय से यह सब लाभ होते हुए भी यह तो कहना होगा कि यह उत्तर में एक महान् अभेद्य दीवार की भाँति खड़ा है और उसने भारत का चीन इत्यादि एशियाई राष्ट्रों से व्यापारी सम्बन्ध स्थापित होने में रुकावट डाला है।

गंगा का मैदान

हिमालय के दक्षिण में गंगा का उपजाऊ मैदान है। यह संसार के अत्यन्त उपजाऊ प्रदेशों में से है। इसकी भूमि अत्यन्त उपजाऊ है। इस कारण यह बहुत घना आबाद है। यह वह प्रदेश है जहाँ भारत की प्राचीन सभ्यता का जन्म हुआ था। इस भाग में, उत्तरी राजस्थान, पूर्वी पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार पश्चिमी बंगाल तथा आधा आसाम सम्मिलित है। यह मैदान पश्चिम में अधिक चौड़ा और पूर्व में कम चौड़ा है। इसका क्षेत्रफल ४ लाख वर्ग मील है। इस विशाल मैदान में कहीं पत्थर का नाम तक नहीं है। इस मैदान में खोदने पर १००० फीट गहराई तक कहीं चट्टानों का चिह्न दृष्टिगोचर नहीं हुआ। राजस्थान का विस्तार ४०० मील लम्बा और १०० मील चौड़ा है। अरावली पहाड़ ने इसे दो भागों में बाँट दिया है। दक्षिणपूर्वी भाग गंगा का बेसिन है। वास्तव में यही भाग मरुभूमि है। यह मरुभूमि हवा द्वारा उड़ा कर लाई बालू से बना है। उत्तर में भाभर तथा तराई को छोड़ कर शेष मैदान में गंगा की सहायक नदियों का जाल बिछा हुआ है और इनके द्वारा लाई हुई मिट्टी से ही यह मैदान बना है।

उत्तर में जहाँ हिमालय की श्रेणियाँ आरम्भ होती हैं वहाँ पर असंख्य नदियों ने कंकड़ और पत्थर के ढेर इकट्ठा कर दिए हैं। ये पथरीले ढाल हिमालय पहाड़ के एक सिरे से दूसरे सिरे तक पाये जाते हैं। इन्हें भाभर कहते हैं। इस "भाभर" प्रदेश में चूना अधिक होने के कारण छोटी छोटी नदियों और नालों का पानी इस प्रदेश में सूख जाता है। केवल बड़ी बड़ी नदियों का पानी ऊपर बहता है। अतएव इस प्रदेश में खेती नहीं हो सकती। "भाभर" ५ मील से लेकर २० मील तक चौड़ा है। खेती न हो सकने के कारण इस प्रदेश में प्रायः आबादी नहीं है।

"भाभर" के आगे जमीन मैदान में मिल जाती है। यहाँ पर वह पानी जो भाभर में अन्दर चला जाता है पृथ्वी पर प्रकट होता है। इससे यहाँ दलदल और नमी बहुत है। इस नम प्रदेश में लम्बी घास और सघन वन हैं परन्तु नमी अधिक होने के कारण यहाँ मलेरिया का अधिक प्रकोप रहता है इस कारण आबादी बहुत कम है। इस मलेरिया के प्रदेश को तराई कहते हैं। पश्चिम में वर्षा कम होती है।

इस कारण पश्चिम में मैदानों तथा भाभर के बीच में तराई नहीं है। पूर्व तथा मध्य में तराई का प्रदेश है जो कि भाभर से अधिक चौड़ा है।

गंगा के मैदानों के दक्षिण में पठार हैं। यह पठार का प्रदेश भारत का सबसे प्राचीन हिस्सा है। यह पठार का प्रदेश कई बड़े और छोटे पठारों में विभाजित है। यह पठार अरावली तथा पश्चिमी और पूर्वी घाटों द्वारा एक दूसरे से पृथक् कर दिये गये हैं।

पठार

दक्षिण का पठार असंख्य वर्षों से समुद्र के गर्भ में नहीं गया है। वास्तव में यह भाग खुली घाटियों का प्रदेश है। यहाँ ढाल अधिक नहीं है और नदियाँ धीरे धीरे बहती हैं। कहीं-कहीं पहाड़ियों का ढाल बहुत अधिक है परन्तु अधिकतर प्रायद्वीप म पर्वत श्रेणियाँ नहीं मिलतीं।

गंगा के दक्षिण में मालवा और बुंदेलखंड की जमीन धीरे-धीरे ऊँची होती गई है। मालवा पठार में विंध्याचल पर्वत ऊँचा और लम्बा है। यह बम्बई प्रदेश से आरम्भ होकर मध्यप्रदेश बघेलखंड, उत्तर-प्रदेश में होते हुये बिहार उड़ीसा प्रदेश में सोन घाटी तक फैला हुआ है। यह पहाड़ गंगा के प्रदेश को नर्मदा, ताप्ती और महानदी से मिलने वाले पानी से पृथक् करता है।

मालवा पठार के पश्चिम में अरावली की पहाड़ियाँ हैं। उत्तर पूर्व की ओर ये पहाड़ियाँ पतली होती गई हैं और देहली के समीप ये पहाड़ियाँ समाप्त हो गई हैं। अरावली की पहाड़ियों को बनास, माही और लूनी नदियाँ पार करती हैं। ये नदियाँ अरब सागर में जाकर गिरती हैं। चम्बल नदी पूर्व की ओर बह कर जमुना में मिल जाती है। माउंट आबू इस पर्वत माला का सबसे ऊँचा स्थान है।

नर्मदा के दक्षिण को दक्षिण का ऊँचा पठार कहते हैं। यह त्रिभुजाकार है और सब तरफ से पहाड़ों से घिरा हुआ है। उत्तर में सतपुड़ा की पर्वत श्रेणी है। नर्मदा की घाटी विंध्याचल और सतपुड़ा को पृथक् करती है। सतपुड़ा की पर्वत श्रेणी में महादेव की पहाड़ियाँ सबसे ऊँची हैं जिस पर पंचमढ़ी स्थित है। सतपुड़ा की पहाड़ियाँ पूर्व में छोटा नागपूर तक फैली हुई हैं। सतपुड़ा में सब नदियाँ गहरी घाटियों में होकर बहती हैं। सतपुड़ा के दक्षिण में ताप्ती की घाटी है। नर्मदा और ताप्ती की चौड़ी घाटियों में लावा से उत्पन्न हुई मिट्टी पाई जाती है जो उपजाऊ है।

पठार के पश्चिमी किनारे पर पश्चिमी घाट तथा पूर्वी किनारे पर पूर्वी घाट स्थित हैं। पश्चिमी घाट एक अभेद्य दीवार की भाँति पठार के पश्चिमी किनारे पर खड़ा है। इसमें से होकर आने जाने का मार्ग केवल कुछ दर्रों में से होकर

है। इनमें मोर घाट और थाल घाट मुख्य हैं। पश्चिमी घाट तथा समुद्र में अधिक अन्तर नहीं है। इस कारण पश्चिमी तट का मैदान बहुत पतली पट्टी की भाँति है। पश्चिमी घाट को पार करके अरबसागर में गिरने वाली नदियाँ बहुत कम हैं। परन्तु पश्चिमी घाट के पूर्व तथा पश्चिम में निकलने वाली बहुत सी नदियाँ हैं। पश्चिमी ढाल से निकल कर अरबसागर में गिरने वाली नदियों की सख्या बहुत अधिक है किन्तु वे बहुत छोटी हैं। जो नदियाँ पश्चिमी ढाल से निकलती हैं, वे लम्बी हैं। उनकी घाटियाँ चौड़ी हैं और उनके मुहाने बड़े हैं। भारत का पश्चिमी किनारा किसी समय अफ्रीका से मिला हुआ था। बाद को बीच की भूमि समुद्र के गर्भ में चली गई। पृथ्वी के इस परिवर्तन के समय इस पर्वतश्रेणी का प्रादुर्भाव हुआ।

पूर्वी घाट श्रेणी, पश्चिमी घाट की भाँति ऊँची और एकसी नहीं है। बहुत से स्थानों पर नदियों ने इस पर्वत श्रेणी को काट कर अपने डेल्टे बना लिये हैं। इस पहाड़ी तथा समुद्र के बीच में एक नीचा मैदान है जो पश्चिमी समुद्र तट के मैदान के समान है। केवल अन्तर इतना ही है कि पूर्वी तटीय मैदान अधिक चौड़े और विस्तृत हैं। पूर्वी घाट नीचे और बहुत टूटे फूटे हैं। इस कारण यहाँ मार्ग आसानी से बनाये जा सकते हैं। पूर्वी घाट दक्षिण में नीलगिरि पहाड़ियों के द्वारा पश्चिमी घाट से जुड़े हुये हैं।

नर्मदा और ताप्ती की घाटियों में बड़े विस्तीर्ण तथा उपजाऊ मैदान हैं। नर्मदा के मैदान जबलपुर से हरदा तक २०० मील की लम्बाई में फैले हुये हैं। इस नदी की घाटी १२ मील से लेकर ३५ मील तक चौड़ी है। ताप्ती के मैदान की लम्बाई १५० मील तथा चौड़ाई ३० मील है। ताप्ती की सहायक अमरावती का मैदान भी १०० मील लम्बा तथा ४० मील चौड़ा है। परन्तु जो नदियाँ पूर्व की ओर बहती हैं उनकी घाटियों में मैदान नहीं हैं। इन नदियों के अतिरिक्त प्रायद्वीप में ऐसी भी नदियाँ हैं जो गंगा और जमुना में जाकर मिलती हैं।

भारत के दक्षिणी पर्वतों में नीलगिरि का पहाड़ मुख्य है। इसी पर्वत पर उटकमंड स्थित है। पालघाट नदी के दक्षिण में नीलगिरि पर्वत के समान ही अनामलाई का पठार भी है। इनके अतिरिक्त और भी छोटे-छोटे पठार हैं जिनके किनारे के पास की भूमि बहुत नीची है। परन्तु पहाड़ों को बने अभी बहुत समय नहीं हुआ इस कारण नदियाँ अब भी अपनी घाटियाँ बना रही हैं।

दक्षिण पठार चारों ओर मैदानों से घिरा है। उत्तर में गंगा का मैदान, तथा पूर्व का तटीय मैदान है। दक्षिण में भी पूर्व का तटीय मैदान तटीय मैदान, तथा पश्चिम में पश्चिम का तटीय मैदान है।

पूर्वी घाट और बंगाल की खाड़ी के बीच में करोमंडल का चौथा विस्तृत उपजाऊ समतल तटीय मैदान है पश्चिमी घाट और अरब सागर का तटीय मैदान तंग है और मालाबार के नाम से प्रसिद्ध है।

भारत में मुख्य चार प्रकार की मिट्टी हैं—(१) लाल मिट्टी, (२) काली कपास की मिट्टी जिसे रेगर मिट्टी भी कहते हैं (३) गंगबार मिट्टी

मिट्टी मिट्टी (Alluvial Soil) यह मिट्टी बहती हुई नदी की धारा के साथ आकर जम जाती है। (४) लैटोराइट (Laterite) मिट्टी।

लाल मिट्टी (Crystalline Soil) विंध्य के नीचे सारे प्रायद्वीप में पाई जाती है। यह मिट्टी सारे मद्रास प्रदेश में, मैसूर प्रदेश में और बम्बई के दक्षिणोत्तर में पाई जाती है। यह मिट्टी हैदराबाद के पूर्वी हिस्से में भी फैली है तथा मध्यप्रदेश से उड़ीसा प्रान्त, छोटा नागपुर और पश्चिमी बंगाल के दक्षिण तक फैली हुई है। यह मिट्टी बुंदेलखंड और राजस्थान के कुछ भागों में भी पाई जाती है।

इस मिट्टी का रंग गाढ़ा लाल, भूरा या काला होता है। इस जमीन का गहराई और उपजाऊपन भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न है और इसका तत्व भी भिन्न भिन्न प्रकार का होता है साधारणतः ऊँची जगहों में यह कम उपजाऊ, कम गहरी, पथरीली और हलके लाल रंग की होती है। जहाँ इस जमीन की गहराई अधिक होती है वहाँ यदि पानी यथेष्ट परिमाण में मिल जाये तो खूब अच्छी फसल हो सकती है। इस मिट्टी में नत्रजन (Nitrogen), स्फुरिक अम्ल (Phosphoric Acid) और ह्यूमस (Humus) की कमी होती है। किन्तु पोटाश और चूना यथेष्ट होता है।

काली कपास की मिट्टी या रेगर भूमि दक्षिण की सारी ऊँची भूमि (Table-land) में पाई जाती है। यह मिट्टी लगभग दो लाख वर्ग मील में फैली हुई है। बम्बई प्रदेश में, सारे बरार में, हैदराबाद या मध्य प्रदेश के पश्चिमी हिस्से में, तथा मद्रास प्रदेश के बिलारी, करनाल, कड़ापा, कोयमबटूर और टिनावली जिलों में पाई जाती है। किन्तु प्रत्येक स्थान पर मिट्टी एक सी उपजाऊ नहीं है। पहाड़ियों के ऊपर यह मिट्टी कम गहरी और कम उपजाऊ है। जहाँ वर्षा अच्छी होती है वहाँ यह मिट्टी खूब उपजाऊ है। घाटियों में पाई जाने वाली काली मिट्टी बहुत अधिक उपजाऊ है। रेगर या काली मिट्टी बहुत बढ़िया दानेदार और काली होती है। यह बहुधा गीली और चिकनी होती है। एक अच्छी वर्षा के थोड़े दिनों ही बाद खेती के योग्य हो जाती है। गीली भूमि सूखने पर सिकुड़ जाती है और उसमें बहुत सी दरारें पड़ जाती हैं। इसका काला रंग इसके कणों में लोहे के मिले रहने के कारण है। इस मिट्टी में चूना (Calcium) और

मैगनीशियम कार्बोनेट (Magnesium Carbonate) यथेष्ट परिमाण में मिलते हैं। किन्तु नत्रजन (Nitrogen) की इसमें भी कमी है।
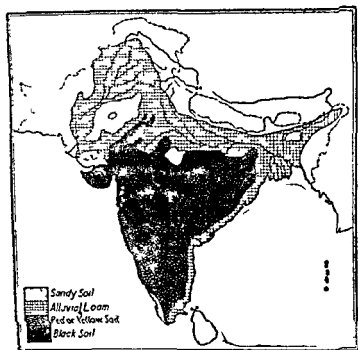
मिट्टी

पानी के बहाव से बह कर आई हुई मिट्टी (Alluvial soil) भारत में सबसे अधिक पाई जाती है और यह अत्यधिक उपजाऊ है। सतलज नदी से लेकर गंगा के कछार तक इस प्रकार की मिट्टी फैली हुई है। इसका क्षेत्रफल तीन लाख वर्ग मील है। प्रायद्वीप के दोनों किनारों पर यह जमीन कम या अधिक चौड़ाई में पाई जाती है। अधिकतर यह भूमि गोदावरी, कृष्णा और कावेरी के मुहानों और उसके आसपास फैली है। इस मिट्टी में फ़ॉस्फ़रिक अम्ल (Phosphoric acid), नत्रजन (Nitrogen) तथा ह्यूमस (Humus) की कमी है किन्तु चूना और पोटाश काफी है।

गंगा के मैदान में उत्तर राजस्थान, पूर्वी पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल और आधा आसाम का भाग आ जाता है। इसकी पश्चिम में चौड़ाई ३०० मील और पूर्व में केवल ६० मील ही है। इस जमीन की गहराई १६०० फ़ीट है और अधिकतर इसकी मिट्टी हिमालय से आती है।

कछारी भूमि (Alluvial soil) बहुत उपजाऊ होता है और खेती के लिए विशेष उपयोगी होती है। साधारण पानी से ही उसकी उपजाऊ शक्ति बहुत बढ़ जाती है। इस भूमि में नत्रजन (Nitrogen) तो कम होती है किन्तु स्फुरिक अम्ल (Phosphoric acid) तथा पोटाश काफी होता है। चूना इसमें बहुत होता है।

लेटराइट (Laterite) एक विशेष प्रकार की मिट्टी होती है। यह मिट्टी उपजाऊ नहीं होती। इस कारण इस पर खेती नहीं हो सकती। इसका रंग लाल होता है। यह मिट्टी मोटी होती है। इसमें पत्थर अधिक पाये जाते हैं। लेटराइट मिट्टी अधिकतर पहाड़ियों और पठारों के सिरे पर पाई जाती है। यह दक्षिण, मध्य भारत, मध्य प्रदेश, राजमहल, उड़ीसा दक्षिण बम्बई, मालाबार तथा आसाम में पाई जाती है। इस मिट्टी में पोटाश, स्फुरिक अम्ल (Phosphoric acid) और चूना कम होता है किन्तु ह्यूमस अधिक होता है। इस जमीन में तेजाब अधिक होता है। इस जमीन में खेती करने के लिए खाद देने के अतिरिक्त इसमें तेजाब को कम करने की आवश्यकता होती है।

इन चारों प्रकार की मिट्टी में प्रत्येक में तीन प्रकार की मिट्टी होती है। (१) चिकनी, (२) मटियार, (३) बलुई। जिस जमीन के परमाणुओं का आकार बहुत छोटा होता है वे एक दूसरे से सटे हुए रहते हैं और इनमें से किसी भी दो परमाणुओं के बीच में बहुत कम स्थान होता है तो उस मिट्टी को चिकनी मिट्टी कहते हैं। इस मिट्टी में पानी बहुत कठिनाई से प्रवेश करता है और अधिकतर उसके ऊपर ही रह जाता है। जो कुछ भी पानी इसके भीतर प्रवेश कर जाता है वह देर तक उसके अन्दर बना रहता है। इस प्रकार की चिकनी मिट्टी बिहार और पश्चिमी बंगाल में पाई जाती है। इस पर धान और जूट की खेती खूब होती है।

जब मिट्टी के परमाणु काफी बड़े होते हैं और दो परमाणुओं के बीच की जगह काफी होती है तो उस मिट्टी को बलुई मिट्टी कहते हैं। रेतीली मिट्टी में पानी बहुत आसानी से मिट्टी को पार करके नीचे पहुँच जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि इस मिट्टी में पानी अधिक देर तक नहीं ठहर सकता और इस पर खेती करने के लिए अत्यधिक सिंचाई की आवश्यकता होती है। ऐसी जमीन में बहुत कम पैदावार होती है। इसमें बाजरा, ज्वार इत्यादि साधारण अनाज ही उत्पन्न किए जा सकते हैं।

दोमट या मटियार मिट्टी उसे कहते हैं जिसके परमाणु न तो चिकनी मिट्टी की तरह छोटे हों और न बलुई मिट्टी की तरह बड़े हों। यह मिट्टी खेती के लिए अन्य दोनों प्रकार की मिट्टियों से अच्छी होती है। इसमें सब प्रकार की फसलें उत्पन्न की जा सकती हैं।

पश्चिमी बंगाल में गर्मी खुश्क नहीं होती। जिन दिनों उत्तर-पश्चिमी भारत में गर्मी और खुश्की के कारण हरियाली का चिह्न भी नहीं होता और धूल उड़ा करती है उन दिनों में आसाम, पश्चिमी बंगाल में सब कहीं हरियाली रहती है। गुजरात, मध्य प्रदेश, मध्य भारत बिहार, उत्तर प्रदेश खुश्क हैं और न आसाम की तरह नम हैं। यह कर्क रेखा से भी अधिक दूर नहीं। इसलिए यहाँ गर्मियों में खूब गर्मी और सर्दी में ठंड पड़ती है।
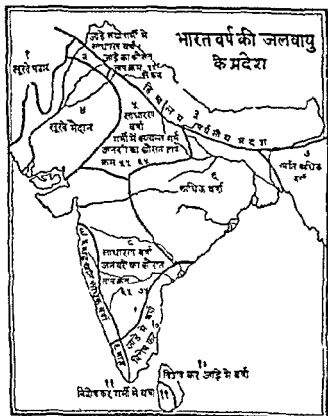
तापक्रम पर ऊँचाई का भी बहुत प्रभाव पड़ता है। जैसे जैसे ऊँचाई बढ़ती जाती है वैसे ही वैसे तापक्रम कम होता जाता है। ३०० फीट की ऊँचाई पर १° तापक्रम कम हो जाता है। इसी कारण हिमालय की ऊँची चोटियों पर जून में भी बरफ जमा रहता है जब भारत के उत्तरी मैदानों में भीषण गर्मी है।

भारत का जो भाग भूमध्य रेखा के समीप है वह त्रिभुजाकार है। जिससे उस पर समुद्र का अधिक से अधिक प्रभाव पड़ता है। पठार की ऊँचाई भी गरमी को कुछ कम कर देती है। उत्तर के मैदानों को तिब्बत से चलने वाली ठंडी हवाओं से हिमालय को ऊँची दीवार रक्षा करती है। यदि उत्तर में हिमालय के ऊँचे पहाड़ न खड़े होते तो सर्दियों में उत्तर के मैदानों में भयंकर शीत पड़ता।

भारत में जलवृष्टि मानसूनी हवाओं के द्वारा होती है। भारत का जलवायु बहुत कुछ मानसूनी हवाओं द्वारा प्रभावित होता है अतएव इनके विषय में हमें विस्तारपूर्वक जान लेना चाहिये।

मानसून

इस देश में जलवृष्टि के विचार से वर्ष दो हिस्सों में बाँटा जा सकता है। पहला सूखे महीने, जिसमें वर्षा बिलकुल नहीं होती। दूसरे वर्षा के महीने। दिसम्बर से लेकर मई तक भारत में सूखे दिन होते हैं और इन दिनों में पृथ्वी से समुद्र की ओर चलने वाली हवाओं की प्रधानता रहती है। इन सूखी हवाओं के चलने से तापक्रम बहुत घटता बढ़ता रहता है। जून से दिसम्बर तक यहाँ बरसात के दिन होते हैं। उन दिनों हवा समुद्र से पृथ्वी की ओर चलती है। इस कारण हवा में नमी अधिक होती है और तापक्रम का उतार-चढ़ाव अधिक नहीं होता।

गरमी के महीनों में भूमध्य रेखा के समीप हिन्द महासागर का औसत तापक्रम ७६° फै० होता है, परन्तु उन्हीं दिनों में भारतीय प्रायद्वीप का औसत तापक्रम ८२° फै० हो जाता है। अधिक गरमी के कारण स्थल की हवा हलकी होकर ऊपर उठ जाती है और भूमध्य रेखा की अधिक भारी हवा इसका स्थान लेने के लिए आती है। लगातार भाप के मिलते रहने से वह हवा नमी से लबालब भरी रहती है। पानी से भरी मानसून दक्षिण-पश्चिम से भारत की ओर चलती है और मालाबार तट से टकराती है।

गरमी में चलने वाली मानसून को दो शाखाओं में बाँटा जा सकता है (१) अरब सागर की मानसून (२) बंगाल खाड़ी की मानसून। बंगाल खाड़ी की मानसून पृथ्वी से बहुत दूर चल कर टकराती है और बहुत बड़े भाग पर वर्षा करती है। अरब सागर की मानसून में यद्यपि जल बहुत अधिक होता है, किन्तु उसका अधिकांश जल पश्चिमी घाट पर ही गिर जाता है। अरब सागर की मानसून का कुछ अंश नर्मदा की घाटी में होकर अन्दर पहुँचता है और छोटा नागपुर में बंगाल खाड़ी की मानसून से मिलता है। बंगाल की खाड़ी की मानसून अराकान तट से टकराती है। और उसके उपरान्त गारो और खासी की पहाड़ियों के रास्ते अन्दर घुसती है। इन्हीं पहाड़ियों की घाटियों के सामने चेरा पूँजी का पहाड़ी स्थान है जहाँ की औसत वर्षा ४३०' है। इस तरह रास्ते से निकलकर मानसून पश्चिम की ओर हिमालय के साथ बहती है और पूर्वी पंजाब में अरब सागर मानसून की दूसरी शाखा से मिलती

में वर्षा बहुत ही अनिश्चित है और इस पर निर्भर होने के कारण खेती भी अनिश्चित है।

गर्मियों की वर्षा की विशेषता यह है कि वह बहुत तेजी से और एक साथ बहुत होती है इस कारण बहुत सा जल नदियों द्वारा बह जाता है पृथ्वी उसको
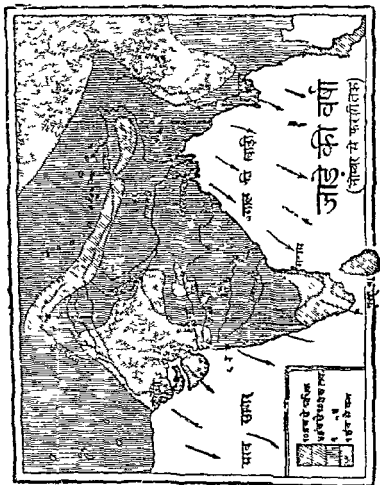
सोख नहीं पाती। इसका परिणाम यह होता है कि जल-वृष्टि का अधिक वेग होने के कारण बहुत सी भूमि कट जाती है और मिट्टी बह जाती है। भूमि के इस कटाव (Soil erosion) से खेतों को बहुत हानि पहुँचती है।

(२) अधिकांश वर्षा जून, जुलाई और अगस्त में होती है इससे ज्वार बाजरा की फसलें शीघ्र तैयार हो जाती हैं और इन दिनों के गर्म और नम जलवायु के कारण पौधों की खूब बढ़वार तथा उत्पत्ति होती है जिससे पशुओं को यथेष्ट चारा मिल जाता है।

(३) गर्मियों में तापक्रम बहुत जल्दी ही ऊँचा हो जाता है इस कारण भारत में फसलें शीघ्र पक कर तैयार हो जाती हैं। शीघ्र पकने के कारण यहाँ की पैदावार उतना बढ़िया नहीं होती जितना अन्य देशों की। जाड़े और गर्मियों दोनों की फसलों के लिए यह बात लागू होती है क्योंकि दोनों ही फसलें गर्मी में पकती हैं।

(४) वर्षा क्योंकि वर्ष में तीन चार महीनों ही होता है इस कारण वर्ष का शेष भाग सूखा रहता है। इसका परिणाम यह होता है कि यहाँ घास के मैदान नहीं हैं। जो कुछ भी घास वर्षा के दिनों में उगती है वह वर्षा के उपरान्त धूप की तेजी से जल जाती है। इस कारण भारत में चारे की कमी रहती है और जो कुछ चारा होता है वह घटिया होता है।

(५) वर्षा पश्चिम में कम होता है (उत्तर प्रदेश और पूर्वी पंजाब) और यहीं उपजाऊ मैदान ऐसे हैं जहाँ जाड़े में यथेष्ट जाड़ा पड़ता है इस कारण ही यहाँ जो शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone) की पैदावार है खूब उत्पन्न होता है।

(६) भीषण गर्मी के उपरान्त वर्षा के आने से बहुत से रोग उत्पन्न हो जाते हैं। उदाहरण के लिए कुछ भागों में मलेरिया का भीषण प्रकोप होता है। जहाँ वर्षा अधिक होती है वहाँ मलेरिया के कारण जनसंख्या की कार्य क्षमता नष्ट हो जाती है।

(७) गर्मी और नमी होने के कारण वर्षा के दिनों में बीमारियों की ही बढ़वार नहीं होती मनुष्य में आलस्य और पुरुषार्थहीनता भी उत्पन्न हो जाती है। इससे उत्पादन-कार्य पर प्रभाव पड़ता है। किन्तु यह बुरा प्रभाव केवल उन्हीं प्रदेशों में दिखाई देता है जहाँ वर्षा अधिक होती है।

(८) भारत में वर्षा बहुत ही अनिश्चित है। किसी वर्ष वर्षा बहुत कम होती है और सूखा पड़ जाता है। फसल नहीं होती। दुर्भिक्ष पड़ जाता है। दूसरे वर्ष वर्षा अधिक होने से नदियों में बाढ़ आ जाती है। उससे भी फसलों को हानि पहुँचती है। इस कारण भारतीय ग्रामीण निराशावादी और भाग्यवादी बन गया है।

(९) क्योंकि वर्षा वर्ष के केवल तीन गर्मियों के महीनों में होती है और वह भी अनिश्चित इस कारण जाड़े में फसलें उत्पन्न करने के लिए सिंचाई की

बहुत अधिक आवश्यकता होती है। यही कारण है कि भारत की खेती सिंचाई पर बहुत कुछ निर्भर है और खेती के लिए सिंचाई का यहाँ इतना महत्व है। भारत में प्राचीन काल से ही सिंचाई की योजनाओं की ओर इतना अधिक ध्यान दिया गया उसका यही कारण है।

अभ्यास के प्रश्न

१—मानसूनी जलवायु से आप क्या अभिप्राय है। उसकी क्या विशेषताएँ हैं?

२—भारत की वर्षा की क्या विशेषताएँ हैं और उनका भारत के आर्थिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है?

३—भारत में वर्षा का वितरण एक सा क्यों नहीं है? भिन्न भिन्न भागों में वर्षा कम और अधिक क्यों है?

४—हिमालय का आर्थिक महत्व क्या है विस्तार पूर्वक लिखिए।

५—गंगा के मैदान इतने उपजाऊ क्यों हैं?

६—भारत में पाई जाने वाली मिट्टियों का संक्षेप में वर्णन कीजिए और उनके गुण दोष बतलाइए।

७—भूमि का कटाव (Soil erosion) क्या है, उससे क्या हानियाँ हैं और उसको किस प्रकार रोका जा सकता है?

८—रेहर मिट्टी और गंगा के मैदानों की मिट्टी का खेती के लिए क्या महत्व है समझा कर लिखिए।

सोलहवाँ परिच्छेद

वन-सम्पत्ति

ब्रिटिश सत्ता के स्थापित होने के पूर्व भारत में वन-सम्पत्ति बहुत अधिक थी। इसके उपरान्त जनसंख्या की बढ़ती के कारण खेती के लिए अधिक भूमि की आवश्यकता हुई। साथ ही रेल, इमारतों और जलाने के लिए अधिकाधिक लकड़ी की माँग बढ़ने लगी। लकड़ी की बढ़ती हुई माँग तथा खेती योग्य भूमि की अधिकाधिक माँग के कारण बहुत से जंगल काट कर साफ कर दिए गए। इस प्रकार बहुत से मूल्यवान वन नष्ट हो गए। उस समय तक सरकार ने वनों की रक्षा की ओर ध्यान ही नहीं दिया।

१८५७ की राज्यक्रान्ति के उपरान्त सरकार ने वनों की ओर ध्यान दिया और उनकी रक्षा तथा उन्नति के लिए प्रत्येक प्रदेश में वन विभागों की स्थापना की गई। अब प्रदेशीय वन विभाग प्रदेशों में वनों की देख भाल तथा उनका प्रबन्ध करते हैं।

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में किसान बहुत कुछ वनों पर निर्भर रहते हैं। पर्वतों पर खड़े हुए वनों को नष्ट कर देने से मैदानों में रहने वालों का जीवन सकट-मय हो जाता है। वर्षा का पानी तथा नदियाँ स्वच्छन्दतापूर्वक बहती हैं। इसका फल यह है कि उपजाऊ भूमि रेत से पट जाती है। भूमि का कटाव (Erosion of soil) होने लगता है और भीषण बाढ़ें आती हैं जिससे खेती और आबादी नष्ट हो जाती है। वनों का जलवायु पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। हरे वृक्ष बादलों को आकर्षित करते हैं। अतएव वन आच्छादित प्रदेश में अधिक वर्षा होती है। वृक्ष प्रति दिन वायु को पत्तियों के द्वारा जल देते रहते हैं। इस कारण गर्म देशों में वन प्रदेशों का तापक्रम कम रहता है। वनों के वृक्षों की जड़ें वनों की भूमि को जल सोखने वाला बना देती हैं। इस कारण वर्षा का जल व्यर्थ न बहकर पृथ्वी में सूख जाता है और नीचे पानी अधिक इकट्ठा हो जाता है जिससे सिंचाई में सुविधा होती है।

भारत में जलाने की लकड़ी की कमी के कारण किसान गोबर को जला डालता है। इस नाशकारी प्रथा के कारण भूमि को यथेष्ट खाद नहीं मिलती और भूमि कमजोर होती जाती है। यदि ऊसर तथा बंजर भूमि पर वृक्ष लगाये जाय तो खाद की समस्या हल हो सकती है। भारत के वनों में अनन्त राशि में घास

उत्पन्न होती है। इन वनों में लगभग एक करोड़ पशु प्रतिवर्ष चरते हैं। इसके अतिरिक्त घास दूर-दूर भेजी जाती है। भारत के किसी न किसी भाग में प्रतिवर्ष

भारत के वन

दुर्भिक्ष पड़ता है। लाखों पशु बिना चारे मर जाते हैं। यदि वन विभाग चारे को इकट्ठा कर तथा पशुओं को चरने का अधिक सुविधा दे तो चारे की समस्या कुछ हद तक हल हो सकती है। वनों के समीपवर्ती गाँवों के किसान पशुओं को चराकर, तथा वनों की जड़ी बूटियों, फल तथा औषधियों को इकट्ठा करके अपना गुजर करते हैं। इनके अतिरिक्त वनों से हमें बहुमूल्य लकड़ी तथा अन्य कच्चा माल मिलता है जिसके आधार पर बहुत उद्योग धंधे पनप सकते हैं।

भारत के वन

भारत में बहुत तरह के वन हैं। भिन्न भिन्न भागों में जलवायु तथा भूमि की भिन्नता के कारण वनस्पति भी भिन्न है। अधिकांश देश में उष्ण कटिबन्ध की वनस्पति पाई जाती है। साधारणत अन्य देशों में उष्ण कटिबन्ध की वनस्पति का विभाजन वर्षा के आधार पर निम्नलिखित प्रकार से होता है —

(१) सर्वदा हरे रहने वाले वन, (२) पतझड़ वाले वन, (३) सवाना (४) काँटेदार वृक्षों के वन, (५) स्टेप (Steppe) के मैदान, किन्तु भारत
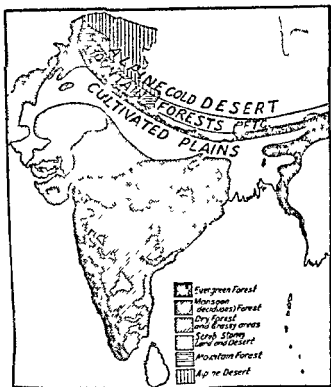
भिन्न भिन्न प्रकार के वन

में सवाना तथा घास के विस्तृत मैदान नहीं मिलते। यहाँ तो सर्वदा हरे रहने वाले वन, पतझड़ के वन, तथा काँटेदार वन ही पाये जाते हैं।

अर्द्ध उष्ण (Sub Tropical), शीतोष्ण कटिबन्ध तथा ठंडे वन (Alpine Vegetation) भारत में केवल पहाड़ों पर पाये जाते हैं। अर्द्ध उष्ण वन वास्तव में उष्ण वनों और शीतोष्ण वनों के बीच में स्थित हैं। जैसे-जैसे ऊँचाई बढ़ती जाती है वैसे उष्ण कटिबन्ध की वनस्पति अर्द्ध उष्ण कटिबन्ध और शीतोष्ण कटिबन्ध की वनस्पति में परिणत होती जाती है। कहीं कहीं तो अर्द्ध उष्ण कटिबन्ध की वनस्पति प्रकट ही नहीं होती है। पश्चिमी तथा मध्य हिमालय में चीड़ (पाइन) वनों के रूप में यह बिलकुल स्पष्ट है। पूर्व हिमालय में भी अर्द्ध उष्ण वनस्पति का

जहाँ जहाँ पानी के बहाव से भूमि का कटाव (Erosion of Soil) होता है वहाँ वहाँ वन लगाने से कटाव को रोका जा सकता है और खेती की भूमि को नष्ट होने से बचाया जा सकता है।

अभ्यास के प्रश्न

१—भारत में कितने प्रकार के वन मिलते हैं और वे कहाँ हैं विस्तारपूर्वक लिखो।

२—भारत में कौन सी मूल्यवान लकड़ियाँ मिलती हैं और वे किन वनों में पाई जाती हैं ?

३—भारत में अन्य उपयोगी वनोत्पन्न पदार्थ (Minor Forest produce) का क्या महत्व है ? यह पदार्थ विशेष रूप से कहाँ मिलते हैं ?

४—भारत की वन सम्पत्ति का पूरा पूरा उपयोग क्यों नहीं है ? कारण सहित लिखिये।

———

सत्रहवाँ परिच्छेद

खनिज सम्पत्ति (Mineral Wealth)

लोहा

भारत के बहुत से प्रदेशों में लोहा पाया जाता है किन्तु बिहार, उड़ीसा, तथा मैसूर में लोहा बहुत अधिक निकलता है। हैदराबाद और मध्यप्रदेश में भी थोड़ा लोहा निकलता है। वास्तव में भारत का लौह प्रदेश बिहार और उड़ीसा में है। लोहे की खानें सिंहभूम जिले और क्योंझर, बोनाई, तथा मयूरभंज रियासतों में हैं। इनके अतिरिक्त उड़ीसा की अन्य रियासतों में भी लोहे की खानें हैं। इन खानों में अनन्त मात्रा में लोहा भरा पड़ा है। [illegible] का कथन है कि ये खानें संसार की अत्यन्त धनी खानों में से हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि इन खानों में २८३२० लाख टन लोहा मौजूद है। यही नहीं इन खानों में बहुत लोहा भरा हुआ है साथ ही इनमें बहुत अच्छी जाति का लोहा मिलता है। खानों में लोहा बहुधा ऊपर की सतह में ही मिल जाता है, इस कारण उसको खोद कर निकालने में कम खर्च होता है। कहीं कहीं तो मैदानों में ही लोहा निकलता है।

इन पहाड़ियों में "बोनाई" रियासत की "[illegible]" पहाड़ी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस पहाड़ी के समान दूरी पर और भी पहाड़ियाँ हैं जिनमें लोहा निकलता है। इस कच्चे लोहे में लगभग ६०% शुद्ध लोहा निकलता है। इस प्रदेश में हैमेटाइट कच्चा लोहा (Hematite Ore) ही मिलता है। मैगनेटाइट (Magnetite) जाति का कच्चा लोहा नाम को भी नहीं मिलता।

बिहार, उड़ीसा के अतिरिक्त मध्यप्रदेश में भी लोहे का स्थान है। चाँदा जिले में कम से कम दस पृथक् खानें हैं जिनमें कुछ तो बहुत बड़ी हैं। मध्यप्रदेश के द्रुग जिले में पहाड़ियों के रूप में कच्चा लोहा मिलता है और ये खानें बस्तर राज्य तक फैली हुई हैं।

मैसूर में कादूर जिले की खानें बहुत धनी हैं और उनमें अच्छी जाति का लोहा मिलता है।

भारत में ताता आयरन स्टील कम्पनी जिसका कारखाना जमशेदपूर में है, इंडियन आयरन एंड स्टील कम्पनी जिसका कारखाना आसनसोल में है और बंगाल आयरन कम्पनी जिसका कारखाना कुल्टी में है, कच्चे लोहे का अधिक उपयोग
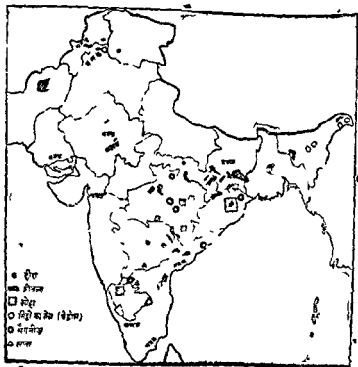
खनिज पदार्थ

करते हैं। इंडियन आयरन स्टील कम्पनी सिंगभूमि जिले की गुआ की खानों से लोहा लेती है। इन खानों का लोहा बी० एन० रेलवे आसनसोल लाती है। ताता कम्पनी की लोहे की खानें सिंगभूमि जिले के "कोलहन" लौह प्रदेश तथा "क्योंझर" रियासत में हैं, परन्तु १९२६ तक ताता कम्पनी अपना सारा लोहा मयूरभंज राज्य की खानों से ही लाती थी। इसका मुख्य कारण यह है कि मयूरभंज की खानें कारखाने के बहुत समीप हैं और बी० एन० आर० इन खानों को कारखाने से जोड़ती है। किन्तु अब ताता कम्पनी "कोलहन" की खानों से भी लोहा निकालती है।

मयूरभंज में "गुरुमहिसानी" ओकामपद तथा बादाम पहाड़ तीन अत्यन्त महत्वपूर्ण लोहे की खानें हैं। इन खानों का लोहा भी सिंगभूमि तथा उड़ीसा की ही

तरह है। अब ताता कम्पनी सबसे अधिक लोहा सिंहभूमि जिले के कोल्हन प्रदेश नौआमुंडी खानों से निकालती है। बंगाल आयरन कम्पनी भी कोल्हन लौह प्रदेश (सिंहभूम में) की पानसिरा बुरु तथा, बुराबुरु, खानों में लोहा निकालती है। ये खानें बी० एन० आर० के मनहार पुर स्टेशन के समीप हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि पानसिरा बुरु की खान में एक करोड़ टन लोहा है और "बुराबुरु" में लगभग १५ करोड़ टन लोहा भरा हुआ है। लोहा हैमेटाइट जाति का है, और कच्चे लोहे में ६४ शुद्ध लोहा है।

मैसूर राज्य में भद्रावती के कारखाने में कमानगुंडी की खानों से निकला हुआ लोहा काम में लाया जाता है। ये खानें भद्रावती से २८ मील की दूरी पर हैं। इन
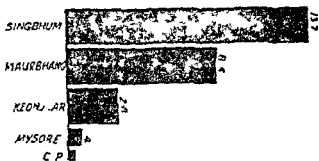
भारत के विभिन्न प्रदेशों में लोहे का अनुमान

इन खानों के कच्चे लोहे में ६४ शुद्ध लोहा है। वैसे मैसूर राज्य में बाबाबुदान की खानों में बहुत अच्छी जाति का लोहा (हैमेटाइट) यथेष्ट भरा हुआ है, किन्तु अभी उसका उपयोग नहीं होता। मैसूर की खानों में लोहा ३ करोड़ टन से ६ करोड़ टन तक अनुमान किया जाता है।

मध्यप्रदेश में दुर्ग जिले में राजहारा पहाड़ियों में लोहा यथेष्ट है और वह हैमेटाइट (Hematite) जाति का है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि यहाँ लगभग ७५ लाख टन लोहा है। सम्भव है कि इससे अधिक भी हो। चाँदा जिले में लोहारा पहाड़ियों में लोहा पाया जाता है। किन्तु मध्यप्रदेश का लोहे की खानें कोयले की खानों से बहुत दूर हैं इस कारण उनका उपयोग नहीं होता है।

मदरास प्रदेश में सलेम और नेलोर जिलों में बहुत लोहा भरा पड़ा है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि यहाँ की खानों में लोहा इतना अधिक भरा पड़ा कि जिसका ठीक अनुमान ही नहीं किया जा सकता। यह लोहा मैगनेटाइट

(Magnettte) जाति का है। किन्तु यहाँ भी कोयला न होने के कारण इस लोहे का उपयोग नहीं किया जा सकता।

ऊपर दिये हुये विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि जहाँ तक लोहे का प्रश्न है भारत बहुत धनी है। यहाँ का लोहा बहुत अच्छा है और कच्चे लोहे में शुद्ध लोहे का ६०% से भी अधिक है। अभी तक लोहे का धधा पूरी तरह से उन्नत नहीं हुआ है इस कारण उसका पूरा उपयोग नहीं हो सका है। जितना लोहा
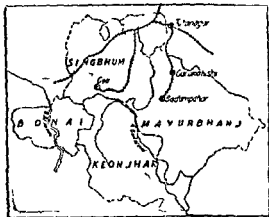
भारत के लौह-केन्द्र

इस समय भारत में निकाला जाता है, उसका आधे के लगभग सिंगभूमि की खानों मे निकाला जाता है, और अधिकाश कच्चा लोहा ताता के कारखाने मे काम आता है।

भिन्न भिन्न लौह केन्द्रों में जो कच्चे लोहा का कोष अनुमान किया जाता है वह नीचे लिखे अनुसार है :—

सिंगभूमि जिले की खानें	१०४७०	लाख टन
क्योंझर ,,	६८८०	,, ,,
बोनाई ,,	६४८०	,, ,,
मयूरभञ्ज ,,	१८०	,, ,,

मद्रास के नेलौर और सेलम जिले के लोहे के सबन्ध मे विशेषज्ञों का कथन है कि वह समाप्त नहीं होने वाला है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि यह लौह क्षेत्र सब से धनी है। यहाँ के मुख्य लौह केन्द्र जहाँ लोहा अधिक भरा है नीचे लिखे हैं। (१) गोदामलाई (२) थाल्लामलाई (३) कोलीमलाई (४) थिरतामलाई

(५) बंजामलाई (६) सिनगापट्टी। यहाँ कोयला न होने के कारण इनका उपयोग नहीं हो सकता।

भारत में प्रतिवर्ष ३० लाख टन लोहा निकाला जाता है। इसका अधिकांश भाग सिंगभूमि जिले, क्योंझर और मयूरभंज से निकलता है। भविष्य में भारत विदेशों को लोहा भेज सकेगा।

कच्चे लोहे की वार्षिक उत्पत्ति

प्रदेश	टनों में
उड़ीसा :—	
क्योंझर	३०,००,०००
मयूरभंज	३०,००,०००
सिंगभूमि	१,२०,००,०००
मध्य प्रदेश	८००
मैसूर	२४,०००

CENTRAL PROVINCES
38·5
MADRAS PRES^CY
17·6
SINGHBHUM & GUNGPUR S.S.
8&0 7 5
BOMBAY(·5)
MYSORE (08)
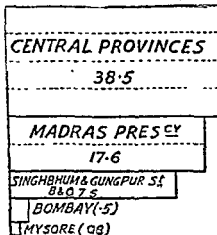
भारतीय प्रदेशों में लोहे का वितरण

मैंगनीज (Manganese) — मैंगनीज भारत में प्रायद्वीप के भाग में बहुत मिलता है। संसार में रूस को छोड़कर भारत सब देशों से अधिक मैंगनीज उत्पन्न करता है। मैंगनीज का उपयोग स्पात बनाने में होता है। अतएव मैंगनीज निकालने का धंधा स्पात के धंधे पर निर्भर है।

भारत में स्टील अधिक नहीं बनाया जाता इस कारण अधिकांश मैंगनीज योरोप और अमेरिका को भेजा जाता है।

भारत में निम्नलिखित प्रदेशों में मैंगनीज पाया जाता है —

मदरास :—गंजाम, बेलारी, सादूर तथा विजगापट्टम।

बम्बई :—नामकोट, पंचमहल, छोटा उदयपुर, रत्नगिरी और धारवार।

मध्य भारत :—झबुआ।

मध्य प्रदेश :—बालाघाट, भंडारा, छिंदवाड़ा, नागपूर, सिओनी और जबलपुर।

बिहार :—सिंगभूमि

उड़ीसा :—गंगपूर और क्योंझर

मैसूर :—चीतलदुर्ग, कादूर, शिमोगा और तुमकुर

भारत से बाहर जाने वाले मैंगनीज का अधिक भाग ब्रिटेन को जाता है। इसके अतिरिक्त फ्रांस, जर्मनी, जापान, बैलजियम, को भी यहाँ से मैंगनीज भेजा जाता है।

दूसरे महायुद्ध के पूर्व भारत में वार्षिक मैंगनीज की उत्पत्ति इस प्रकार थी

मध्य प्रदेश	३,८५,१७६	टन
मदरास	१,७५,५७१	टन
उड़ीसा	७४,६६६	टन
बम्बई	४,८६६	टन
मैसूर	८७१	टन

युद्ध के पूर्व मैंगनीज की वार्षिक उत्पत्ति का मूल्य लगभग चार करोड़ तीस लाख रुपये था।

ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि मध्य प्रदेश सब से अधिक मैंगनीज उत्पन्न करता है। देश में जितना मैंगनीज उत्पन्न होता है उसका लगभग ६०% मध्य प्रदेश में निकलता है। विजगापट्टम का बन्दरगाह बन जाने से धंधे को और भी अधिक प्रोत्साहन मिला है क्योंकि विजगापट्टम-रायपूर रेलवे बन जाने से मैंगनीज सरलता से विजगापट्टम के बन्दरगाह पर पहुँच जाता है और वहाँ से विदेशों को चला जाता है। इस बन्दरगाह के बनने से पूर्व मध्य प्रदेश को बम्बई और कलकत्ता बन्दरगाहों पर निर्भर रहना पड़ता था इस कारण मैंगनीज को विदेशों को भेजने में असुविधा होती थी।

मदरास, मध्य प्रदेश के आधे से कुछ अधिक मैंगनीज उत्पन्न करता है। मुख्य उत्पत्ति-केन्द्र बेलारी, सादूर और विजगापट्टम जिले हैं। अधिकांश मैंगनीज विजगापट्टम के बन्दरगाह से विदेशों को भेज दिया जाता है। उड़ीसा में केवल

जयपुर और सिंगभूमि से मैंगनीज निकालते हैं। इसका वार्षिक उत्पत्ति ८०००० टन है। बम्बई और मैसूर में दस प्र मैंगनीज की खानें बहुत से स्थानों पर पायी जाती हैं किन्तु उत्पादन अधिक नहीं है।

पिछले कुछ वर्षों मे यद्यपि भारत के स्पात के कारखानों में मैंगनीज की खपत बढ़ रहा है फिर भी ७ लाख टन वार्षिक उत्पत्ति में से केवल ६०,००० टन ही काम में आता है, शेष विदेशों को भेजा जाता है।

✓ संसार में भारत का स्थान अभ्रक उत्पन्न करने वालों में प्रथम है। भारत में तीन प्रमुख अभ्रक क्षेत्र हैं। बिहार का क्षेत्र जो ७० मील अभ्रक (Mica) लम्बा और १२ मील चौड़ा है। मानभूमि, हजारी बाग, मुंगेर और गया जिले में हैं। दूसरा क्षेत्र मदरास के नैलोर तथा नालगिरी जिला में है। तीसरा क्षेत्र अजमेर मेरवाड़ा और जयपुर और मेवाड़ में है। भारत मे अधिकांश अभ्रक बिहार के क्षेत्र से निकाला जाता है। अभ्रक का अधिकतर उपयोग बिजली के काम में होता है। भारत से बहुत सा अभ्रक ब्रिटेन और संयुक्तराज्य अमेरिका को जाता है।

भारत में जितना अभ्रक उत्पन्न होता है उसका ८० % बिहार की खानों से निकलता है। सब से महत्वपूर्ण खानें कोडरमा के जंगल में तथा उसके आस-पास स्थित हैं। नेलोर जिले में जो अभ्रक का क्षेत्र है वह मदरास के नगीन मैदान में स्थित है। यह क्षेत्र ६० मील लम्बा और १० मील चौड़ा है। यहाँ का अभ्रक हरा होता है। नैलोर बिहार के उपरान्त सब से अधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र है।

अजमेर मेरवाड़ा तथा दक्षिण राजस्थान के राज्यों में अभ्रक बहुत है किन्तु अभी इसको निकाला नहीं गया था किन्तु पिछले दिनों में यहाँ भी यह निकाला जाने लगा है। महायुद्ध के समय तथा आज अजमेर मेरवाड़ा तथा दक्षिण राजस्थान (मेवाड़) में अभ्रक निकालने का धंधा बहुत उन्नति कर गया है।

कुछ दिन से ट्रावंकोर के इरानिआल तालुका और मैसूर के हसान जिले से भी अभ्रक निकाला जाने लगा है।

अभ्रक का बिजली के धन्धे में बहुत उपयोग होता है।

भारत में बहुत प्राचीन काल से ताँबे का प्रचलन था और ताँबा निकाला जाता था। वर्तमान समय में बिहार के सिंगभूमि जिले में ताँबा (Copper) ताँबा बहुत निकाला जाता है। भारत का यही मुख्य ताँबे का क्षेत्र है। १९१८ में ताँबे को निकालने और गलाने का

कारपारथम का है जो "मौभद्र" घाट शिला पर स्थित है। संसार के ताँबे की उत्पत्ति की तुलना में भारत का स्थान नगण्य है।

ताँबा बिहार के हजारी बाग जिले, उत्तर प्रदेश के कुमायूँ कमिश्नरी, तथा सिक्किम राज्य में भी पाया जाता है, किन्तु अभी तक निकाला नहीं जाता।

वोलफ्रेम (Wolframe)

वोलफ्रेम से टंगस्टन (Tungsten) बनाया जाता है। बढ़िया स्पात बनाने के लिए टंगस्टन का उपयोग होता है। बिना स्पात के औजार हथियार तथा यन्त्र बनाये जाते हैं उसको तैयार करने के लिए टंगस्टन की आवश्यकता होती है। टंगस्टन एक अत्यन्त आवश्यक धातु है। वोलफ्रेम सबसे अधिक बर्मा में निकलता है। किन्तु अब बर्मा भारत का अंग नहीं है। भारत में बिहार के सिंहभूमि जिले में, मध्यप्रदेश में अगरगाँव, तथा जोधपुर राज्य दागाना में, वोलफ्रेम पाया जाता है। किन्तु सिंहभूमि के अतिरिक्त और कहीं निकाला नहीं जाता।

बाक्साइट (Bauxite)

बाक्साइट का उपयोग एलूमीनियम के बनाने में होता है भारत में बाक्साइट प्रायद्वीप में बहुत मिलता है।

मध्यप्रदेश में कटनी, बालाघाट, मण्डला तथा सरगूजा राज्य में बाक्साइट पाया जाता है। मध्यभारत के रीवाँ तथा भोपाल राज्यों में, तथा छोटा नागपुर, बिहार, और उड़ीसा में, बम्बई प्रदेश के सतारा तथा कैरा जिला में, मैसूर तथा काश्मीर में बाक्साइट पाया जाता है किन्तु अभी तक अधिक निकाला नहीं जाता। यदि सस्ती बिजली मिलने की सुविधा हो तो एलूमीनियम का धन्धा भारत में विशेष उन्नति कर सकता है। कुछ एलूमीनियम के कारखाने भारत में स्थापित हो गए हैं किन्तु अभी तक यह धन्धा भारत में अधिक उन्नति नहीं कर सका है। इसके दो कारण हैं —एक तो भारत में एलूमीनियम के बर्तनों का चलन नहीं है और दूसरे यहाँ सस्ती बिजली मिलने की सुविधा नहीं है।

ऐसा अनुमान किया जाता है कि भारत में २५ करोड़ टन बाक्साइट का सुरक्षित भंडार पृथ्वी के गर्भ में छिपा है। अभी तो भारत में केवल बम्बई के कैरा जिले (कापादवज खानों) से और जबलपुर की कटनी की खानों से बाक्साइट निकाला जाता है। भारत में बाक्साइट की वार्षिक उत्पत्ति चौदह हजार टन के लगभग है।

सीसा, चाँदी और जस्ता (Lead, Silver, Zinc)

भारत में सीसा, चाँदी और जस्ता बहुत कम पाया जाता है। थोड़ी चाँदी कोलार तथा अनन्तपुर की सोने की खानों से निकलती है।

भारत में सीसा और जस्ता केवल उदयपुर के समीप जावर की खान से निकाला जाता है। इस दृष्टि से यह खान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अत्यन्त प्राचीन काल से इस खान से चाँदी, जस्ता तथा सीसा निकाला जाता रहा है।

पत्थर

भारत में अत्यन्त प्राचीन समय से पत्थर का उपयोग इमारतों के बनाने में किया जाता रहा है। भारत की ऐतिहासिक इमारतें ताज, किले, और राजस्थान के राज्यों के प्रसिद्ध महल, तथा प्रसिद्ध हिन्दू मन्दिर पत्थर के बने हुए हैं। इमारती पत्थर अधिकतर विंध्य पर्वत माला तथा अरावली की पहाड़ियों से प्राप्त होता है। राजस्थान के सभी राज्यों तथा मध्य प्रदेश के अधिकांश में इमारत के लिए पत्थर निकाला जाता है। दक्षिण भारत में अग्निमय चट्टान मदरास में, ग्रैनाइट पत्थर आरकोट तथा मैसूर में तथा बम्बई और हैदराबाद में केवल निकाला जाता है। मध्यप्रदेश में भी विंध्य का पत्थर काम में आता है।

संगमरमर

संगमरमर पत्थरों में सर्वश्रेष्ठ है। यह मध्यप्रदेश के बैतूल, नागपूर, छिंदवाड़ा, और जबलपूर में पाया जाता है। जोधपुर, किशनगढ़ तथा अजमेर का सफेद संगमरमर भारत प्रसिद्ध है। जोधपुर में मकराना की खानों से निकला हुआ संगमरमर सबसे अच्छा होता है। आगरे का ताजमहल और कलकत्ते का विक्टोरिया मैमोरियल इसी पत्थर के बने हैं। राजस्थान के जैसलमेर, उदयपुर और जयपूर में पीला, काला और सफेद संगमरमर निकाला जाता है।

स्लेट

स्लेट पूर्वी पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा बिहार के हिमालय प्रदेश से निकाला जाता है।

क्रोमियम (Chromium)

क्रोमियम का उपयोग स्पात बनाने में होता है। जंग न लगने वाला स्पात बनाने में क्रोमियम की आवश्यकता होती है। क्रोमियम मैसूर, तथा बिहार के सिंहभूमि जिले में मिलता है। भारत अधिकांश क्रोमियम विदेशों में भेज देता है।

सोना

भारत में सोना तथा अन्य बहुमूल्य धातुएं बहुत कम मिलती हैं। भारत में चाँदी बिल्कुल ही नहीं मिलती। थोड़ा सा सोना मैं मिलता है। भारत में जो भी सोना निकलता है उसका अधिकांश भाग मैसूर में कोलार की खान का खानों से ह मिलता है। कोलार की खान की खानों में बिजली से काम होता है। कावेरी नदी कृष्णराजसागर हाइड्रोइलैक्ट्रिक प्लान्ट से उत्पन्न होने वाली बिजली का उपयोग

होता है। कोलार की खानें बहुत ही गहरी (६५००० फीट) हैं और उनमें गर्मी बहुत होती है। मैसूर के बाहर केवल हैदराबाद राज्य की हुट्टी की खानों से ही कुछ सोना निकाला जाता है।

इसके अतिरिक्त आसाम, उड़ीसा, छोटा नागपुर, तथा मैसूर में नदियों के रेत धोकर सोना निकाला जाता है। किन्तु महत्वपूर्ण नहीं है।

सीमेंट बनाने के पदार्थ

सीमेंट बनाने के लिए खड़िया, चूने का पत्थर, चीका मिट्टी तथा ऐसे ही दूसरे पदार्थों की आवश्यकता होती है। इन्हें फूँक कर सीमेंट बनाया जाता है। विंध्य पर्वतीय प्रदेश में ये पदार्थ यथेष्ट मिलते हैं। बिहार तथा सौराष्ट्र में भी ये पदार्थ मिलते हैं। मद्रास प्रदेश में भी ये पदार्थ पाये जाते हैं। किन्तु सीमेंट के धंधे के लिए सबसे अधिक आवश्यक और महत्वपूर्ण कोयला है। यह धंधा कोयले पर निर्भर है।

शीशा बनाने के पदार्थ

शीशा बनाने का धन्धा भारत के पुराने धन्धों में से है। अत्यन्त प्राचीन काल से कुछ स्थानों में शीशे की चूड़ियाँ तथा शीशा की अन्य वस्तुयें बनती हैं। किन्तु आधुनिक ढंग के कारखानों की स्थापना अभी थोड़े ही दिनों से हुई है। प्रारम्भ में शीशे के कारखानों को स्थापित करने में सफलता नहीं मिली क्योंकि शीशे को तैयार करने के लिए उपयुक्त रेत नहीं मिला। किन्तु अब पश्चिमी बंगाल में राजमहल की पहाड़ियों में उत्तर-प्रदेश में नैनी के पास लोहगरा तथा बोरगढ़ में, तथा बड़ौदा और बीकानेर राज्यों में शीशा बनाने के लिए उपयुक्त अच्छा रेत मिल गया है। अधिकांश रेत पत्थर के रूप (Sand Stone) में मिलता है। इन पत्थरों को पीस कर रेत बनाया जाता है। रेत के अतिरिक्त सोडा, राख (ash) तथा चूना भी शीशा बनाने के लिए आवश्यक है। नैनी के समीप चूना भी मिलता है।

ईंट तथा मिट्टी के बर्तन

मध्यप्रदेश, मध्यभारत, राजस्थान, तथा पूर्वी पंजाब में अधिकांश मकान पत्थर के बने होते हैं क्योंकि वहाँ पत्थर बहुतायत से मिलता है। किन्तु उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल, तथा आसाम में अधिकांश मकान ईंट, मिट्टी और खपरैल से बने होते हैं। इन प्रदेशों में पत्थर नहीं मिलते और मिट्टी ईंट तथा खपरैल बनाने के उपयुक्त है। यही कारण है कि इन प्रदेशों में ईंट बनाने का धन्धा विशेष उन्नति कर गया है। प्रत्येक शहर तथा कस्बे के समीप ईंटों के भट्टे मिलते हैं, क्योंकि उत्तर के गंगा तथा ब्रह्मपुत्र के मैदानों में मिट्टी ईंट बनाने के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है। इस धन्धे के लिए अच्छी मिट्टी तथा कण्डे और लकड़ी की आवश्यकता

होती है। पश्चिमी बंगाल में ईंट के भट्ठों में कोयले का उपयोग होता है। उत्तर प्रदेश में अधिकतर लकड़ी का उपयोग होता है।

भारत में अधिकतर छोटे छोटे भट्ठों में हाथ से ईंटें बनाई जाती हैं। ऐसे भट्ठे शहरों के पास होते हैं जहाँ की मिट्टी बहुत अच्छी नहीं होती। दूसरे ईंट का शीघ्र ही सुखाया नहीं जा सकता इस कारण ईंट वायु से जल को सोख लेता है और पकने पर चटक जाती है। किन्तु मशीनों के द्वारा ईंट बनाने से यह कठिनाई उपस्थित नहीं होती। यंत्रों द्वारा ईंट बनाने के बड़े कारखानों को स्थापित करने में एक कठिनाई यह उपस्थित होती है कि वह उसी स्थान पर खड़े किए जा सकते हैं जहां अच्छी मिट्टी बहुतायत में मिल सके। यह आवश्यक नहीं है कि ऐसे स्थान शहरों के पास हों। यदि सड़कों का अधिक विस्तार हो तो मोटर लारियों के द्वारा कम किराये में ईंटों को ले जाने की सुविधा हो जाये तो बड़े-बड़े कारखाने ऐसे स्थानों पर अधिक स्थापित किए जायेंगे जहाँ अच्छी मिट्टी मिलती है और कोयला मिलने की सुविधा है। अभी तक यंत्रों द्वारा ईंट बनाने के कारखाने कम ही हैं।

भारत में मिट्टी के बर्तनों का उपयोग बहुत अधिक होता है, सुराही, चिलम मटका प्रत्येक भारतीय के घर में दिखाई देते हैं। साथ ही शादी तथा अन्य अवसरों पर भी मिट्टी के बर्तनों की बेहद माँग होती है। प्रत्येक गाँव, कस्बे और शहर में लाखों की संख्या में कुम्हार इस धंधे में लगे हुए हैं। ये बर्तन शीघ्र ही टूट जाते हैं तथा एक बार काम में लाये जाने के उपरान्त इनको फेंक दिया जाता है। इस कारण इनकी माँग बराबर बनी रहती है। इन बर्तनों पर ग्लेज नहीं होता है। मिर्जापुर जिले में चुनार नामक स्थान मिट्टी के बर्तनों के लिए मुख्य है।

कुछ दिनों से भारत में चीनी मिट्टी के बर्तनों का भी प्रचार तेजी से बढ़ रहा है। इस धन्धे के लिए देश में विस्तृत क्षेत्र है। चीनी मिट्टी के बर्तनों के कारखानों के लिए अच्छी मिट्टी, सस्ता कोयला और मार्ग की सुविधा आवश्यक है। भारत के कई प्रदेशों में चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने के लिए उपयुक्त मिट्टी मिलती है और देश में बहुत से कारखाने स्थापित हो गए हैं। भारत में चीनी मिट्टी के बर्तनों के कारखानों के तीन प्रमुख केन्द्र हैं। कलकत्ता, रानीगंज, झरिया तथा ग्वालियर। कलकत्ता के समीपवर्ती क्षेत्र में स्थापित कारखाने संथाल परगना तथा भागलपुर जिले की मिट्टी उपयोग में लाते हैं। रानीगंज तथा बिहार के कुछ जिलों में भी अच्छी मिट्टी मिलती है। रानीगंज के क्षेत्र में कोयले की सुविधा के कारण बहुत से कारखाने स्थापित किये गये हैं। ग्वालियर के कारखानों में ग्वालियर राज्य में मिलने वाली मिट्टी काम में आती है। यहाँ के कारखाने जबलपुर से भी मिट्टी

मँगाते हैं। इनके अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी चीनी मिट्टी के बर्तनों के कारखाने हैं।

ईंट के अतिरिक्त चूने का भी मकान बनाने में बहुत उपयोग होता है। चूना चूने के पत्थर (Lime Stone) से तैयार किया जाता है। चूने का पत्थर रीवा राज्य के सतना जिले में जबलपुर के कटनी नामक स्थान पर, आसाम में सिलहट में, दक्षिण बिहार तथा मध्यभारत के सिहरा नामक स्थान पर बहुत मिलता है। कंकड़ से भी चूना तैयार किया जाता है। कंकड़ देश के बहुत बड़े भाग में पाया जाता है। कंकड़ को फूँक कर पीसा जाता है तब चूना तैयार होता है। उत्तर तथा दक्षिण भारत में कंकड़ का उपयोग सड़क बनाने में भी होता है।

नमक

नमक दैनिक उपयोग की वस्तु है। भारत में जितना भी नमक तैयार किया जाता है उसके मिलने के तीन साधन हैं। (१) समुद्र का जल (२) नमक की झीलों से (३) नमक की पहाड़ियों से। जितना नमक भारत में बनाया जाता है उसका दो तिहाई समुद्र के जल से, पाँचवाँ हिस्सा झीलों से तथा आठवाँ हिस्सा नमक की पहाड़ियों से निकलता है।

BOMBAY & SIND 621,000 TONS
MADRAS 500,000 TONS
NORTHERN INDIA 471,000 TONS
ADEN 335,000 TONS
BURMA 37,000 TONS
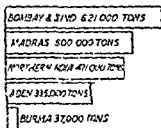
भारत में खाने के काम में आने वाला साधारण नमक ही तैयार किया जाता है। क्योंकि इन स्थानों से साधारण नमक ही निकलता है। देश में औद्योगिक नमक बहुत कम निकलता है। केवल उत्तर प्रदेश तथा बिहार में कुछ नीलाथोथा (Saltpetre) निकलता है तथा पूर्वी पंजाब में जिप्सम (Gypsum) पाया जाता है किन्तु उसकी माँग न होने के कारण निकाला नहीं जाता।

भारत में खाने योग्य साधारण नमक का धंधा आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त महत्व पूर्ण है। इस धंधे पर सरकार का पूर्ण एकाधिपत्य (Monopoly) था और प्रति वर्ष इससे भारत सरकार को करोड़ों रुपये की आमदनी होती थी। १९३० में महात्मा

गाधी द्वारा नमक सत्याग्रह किये जाने के कारण यह धधा राजनैतिक दृष्टि से म महत्वपूर्ण हो गया है।

भारत में समुद्र के जल से नमक अधिकतर बम्बई तथा मदरास के तट पर निकाला जाता है। पश्चिमी तट पर सबसे अधिक नमक तैयार किया जाता है। बम्बई प्रदेश सबसे अधिक नमक तैयार करता है। बम्बई म अधिकाश नमक जल का सूर्य की गरमी से सुखा कर बनाया जाता है। खम्भात की खाड़ी के समीप धरउना तथा चद्दारवाड़ा में सरकारी नमक के कारखाने हैं। इनके अतिरिक्त नमक के अन्य कारखाने बम्बई नगर के चारों ओर स्थापित हैं। नमक के कारखाने ऐसे स्थान पर स्थापित किये जाते हैं जो समुद्र के ज्वार भाटे के तल से नीचा हो। ऐसे स्थान के चारों ओर एक पक्का मजबूत बाँध बना दिया जाता है। इस घेरे म बाहरी तथा भीतरी जल भण्डार होते हैं तथा नमक बनाने का बड़ा हौज होता है। जब पानी ऊंचा उठता है तो बाहरी जल भडार भर जाता है। इस भडार से पानी भीतरी भडार में जाता है वहाँ से पानी नमक के हौज में भेजा जाता है। नमक के हौज में कुछ दिन रहने के उपरान्त ऊपरी सतह पर नमक के कण जम जाते हैं। जब यह कण एक इंच मोटे हो जाते हैं तब नमक हौज के किनारे पर इकट्ठा कर दिया जाता है और नमक को सुखा लिया जाता है। हौज का पानी निकाल कर उसमें नया पानी भर दिया जाता है। नमक बनाने का काम जनवरी से जून तक होता है।

बम्बई के नमक का एक बड़ा हिस्सा रान नमक के नाम से प्रसिद्ध है क्योंकि यह नमक रन आफ-कच्छ (*Rann of Cutch*) के समीपवर्ती कुओं के जल से बनाया जाता है। रान के समीप सबसे बड़ा कारखाना खाराघोडा नामक स्थान पर है। यहाँ बड़े-बड़े कुओं के पानी से नमक तैयार किया जाता है। नवम्बर से एप्रिल तक नमक बनाने का सीजन होता है।

पूर्वी तट पर मदरास प्रदेश में हो चार नमक के कारखाने स्थित हैं। नमक बनाने का ढंग वही है जो बम्बई म है। उत्तर के जिलों म जनवरी के अन्त से लेकर जुलाई के प्रारम्भ तक नमक बनाया जाता है। दक्षिण म मार्च या एप्रिल में काम शुरू होता है और अक्टूबर तथा नवम्बर तक चलता है। मदरास का नमक प्रदेश में बिकता है और सीलोन को भेजा जाता है।

कच्छ के तट से पश्चिम राजस्थान तथा बहावलपुर राज्य म जो विस्तृत मरुभूमि फैली हुई है उसमें बहुत सी बड़ी और छोटी नमक की झीलें हैं। इनमें सामर तथा डीडवाना झीलें बहुत बड़ी हैं। इन झील से नमक निकाला जाता है। इन झीलों के अतिरिक्त कुछ ऐसे स्थान भी हैं जहाँ पृथ्वी के नीचे

बहने वाला नमकीन पानी निकाल कर उससे नमक बनाया जाता है। उदाहरण के लिये पचमद्रा का नमक का कारखाना। इस प्रदेश में जो नमक मिलता है उसका कारण यह है कि दक्षिण पश्चिम से चलने वाली हवायें कच्छ की खाड़ी (Rann of Cutch) के प्रदेश से बहुत बारीक नमक के कणों को उड़ाकर लाती हैं और राजस्थान के मध्य में बिछा देती हैं। वर्षा ऋतु का पानी इस नमक को बहाकर इन झीलों में इकट्ठा कर देता है।

नमक की झीलों में साभर सबसे बड़ी है। पूरी भरी होने पर इसका क्षेत्रफल ६० वर्ग मील होता है। जब झील का पानी सूख जाता है तो झील की मिट्टी के ऊपर नमक जम जाता है। झील में एक किनारे पर एक बहुत बड़ा बाँध बनाया गया है और झील का पानी इस तालाब में पम्प के द्वारा पहुँचाया जाता है। इस बड़े जल भंडार से पानी छोटे भंडारों में पहुँचाया जाता है। अन्त में उन हौजों में ले जाया जाता है जहाँ पानी भाप बन कर उड़ जाता है और केवल नमक ही रह जाता है। साभर का नमक उत्तरप्रदेश तथा राजस्थान में बिकता है।

पत्थर का नमक पूर्वी पंजाब की नमक की पहाड़ियों (Salt Range) से ही निकलता है। नमक अधिकतर उन पहाड़ियों में खेरवा की खानों से निकलता है परन्तु कुछ नमक वार्चा और नूरपुर की खानों से भी निकाला जाता है। सैकड़ों वर्षों से खेरवा की खानों में नमक निकाला जाता रहा है किन्तु १८७० से आधुनिक ढंग से खानों को खोदा जाने लगा है

नमक पर एकाधिपत्य स्थापित करके भारत सरकार ने नमक जैसी दैनिक आवश्यकता की वस्तु को निर्धन भारतीयों के लिए महँगा बना दिया था। इसी कारण देश में नमक कर का इतना अधिक विरोध हुआ। हर्ष की बात है कि राष्ट्रीय सरकार ने नमक कर को उठा दिया।

नीलाथोथा (Saltpeter) नीलाथोथा औद्योगिक खनिज है। इसकी बहुत बड़ी माँग है। यह मुख्यत बिहार और उत्तर प्रदेश में निकाला जाता है। इसके तैयार होने का मुख्य केन्द्र फर्रुखाबाद है। भारत में जितना भी नीलाथोथा तैयार होता है उसका अधिकांश भाग विदेशों को चला जाता है थोड़ा सा आसाम के चाय के बागों में काम आता है।

सोडा (Soda) सोडा बहुत से धंधों में काम आता है। विशेषकर साबुन बनाने और शीशा बनाने में इसका बहुत उपयोग होता है। यह बिहार के चंपारन, मुजफ्फरपुर जिला और सारन राज्य में, उत्तर प्रदेश

से बनारस, आजमगढ़, जौनपुर, गाज़ीपुर जिलों में, बरार, शेरपुर और राजस्थान के साभर झील के प्रदेश में निकलता है। अधिकांश सोडा बाहर चला जाता है। भारत में सोडा बनाने का धंधा शीघ्र ही स्थापित होना चाहिये क्योंकि इस धंधे पर बहुत से धंधे निर्भर हैं।

जिप्सम (Gypsum) यह खाद बनाने के काम में आता है और कुछ विशेष प्रकार के कागज बनाने में भी इसका उपयोग होता है। भारत में सीमेंट के धंधे में भी इसका बहुत उपयोग होता है। अभी तक इसको अधिक नहीं निकाला गया है किन्तु इसकी खानें ट्रावनकोर, गोदावरी, और विजगापट्टम (मदरास के जिले) उड़ीसा, मध्यप्रदेश और अजमेर मेरवाड़ा में हैं।

ऐसबसटस (Asbestos)) अग्नि से बचाने के लिये जो वस्तुएँ तैयार की जाती हैं उनके तैयार करने में यह काम आता है। भारत में बंगलौर, मैसूर, अजमेर मेरवाड़ा और मदरास के कुडापा जिले में निकलता है।

क्रोमाइट (Chromite) यह फैरोक्रोम, क्रोमाइट लवण, और क्रोमाइट ईंटें बनाने के काम में आता है। इससे क्रोमियम लवण भी बनता है जो रंगने और चमड़ा कमाने के काम में आता है। भारत में जितना क्रोमाइट निकलता है उसका ६४% मैसूर में निकलता है। वहाँ शिमोगा और हसन मुख्य केन्द्र हैं। मैसूर के अतिरिक्त सिंहभूमि में भी देश की उत्पत्ति का एक तिहाई क्रोमाइट निकाला जाता है। इनके अतिरिक्त रांची (बिहार) और भागलपुर (बिहार) में भी क्रोमाइट निकलता है। सारा का सारा क्रोमाइट विदेशों को भेज दिया जाता है।

ऐंटीमनी (Antimony) नरम धातुओं से मिलाने के लिए यह एक उपयोगी धातु है। यद्यपि अभी भारत में ऐंटीमनी निकाला नहीं जाता है किन्तु भविष्य में इसकी बहुत सम्भावना है और वह महत्वपूर्ण खनिज होगा। मैसूर के चीतलदुर्ग में ऐंटीमनी की खानें हैं।

बहुमूल्य पत्थर यद्यपि हीरा इत्यादि बहुमूल्य पत्थर निकालने का धंधा देश में बहुत पुराना है किन्तु भारत में अब बहुमूल्य पत्थर बहुत कम निकलता है। अनन्तपुर बैलारी, कृष्णा, गंटूर, और गोदावरी जिलों में (मदरास), उड़ीसा के सम्भलपुर जिले में, मध्यप्रदेश के चाँदा जिले, बुंदेलखंड तथा मध्य भारत के राज्यों में कुछ हीरा निकलता

औद्योगिक मिट्टियाँ — बिहार, उड़ीसा, जबलपूर, मैसूर, देहली और मदरास में चीनी मिट्टी मिलती है जिससे चीनी मिट्टी के बर्तन बनते हैं। राजस्थान, मैसूर, तथा मध्यप्रदेश में (Fullers earth Clays) पाई जाती है।

कोबाल्ट (Cobalt) — कोबाल्ट खेतरी (जयपूर-राजस्थान) तथा नैपाल में बहुत मिलता है।

भारत की खनिज सम्पत्ति — प्रकृति ने भारत को खनिज पदार्थ भी अधिक राशि में दिये हैं। पिछले दिनों में खनिज पदार्थों के सम्बन्ध में जो जाँच हुई है उससे पता चलता है कि भारत खनिज पदार्थों की दृष्टि से निर्धन नहीं है। बहुत से नवीन खनिज प्रदेशों का पता लगा है। प्रतिवर्ष ४० करोड़ रुपये का खनिज पदार्थ भारतीय खानों से निकाला जाता है।

जितनी भी धातुयें और खनिज भारत में निकलती हैं उनमें मुख्य नीचे लिखी हैं :—लोहा, कोयला, मैंगनीज, अबरख, नमक, पैट्रोलियम।

मुख्य खनिज पदार्थों की उत्पत्ति

	१९४० में
लोहा	१७ करोड़ रुपये
कोयला	१'५ ,, ,,
मैंगनीज	४'३ ,, ,, (लड़ाई के पूर्व
सोना	३'२ ,, ,,
पैट्रोलियम	१ ८ ,, ,,
अबरख (mica)	१'६ ,, ,,
इमारती पत्थर	१ १ ,, ,,
नमक	७ ६६ ,, ,,
ताँबा	७ ७३ ,, ,,
फैरो मैंगनीज	०'२८ ,, ,,
नीलाथोथा (Saltpetre)	०'१६ ,, ,,
क्रोमाइन (Chromine)	०'०८ ,, ,,

सीसा, ताँबा और जिंक यद्यपि थोड़ा मिलता है किन्तु यह नहीं के बराबर है। गंधक भी मिलता है।

देश का विस्तार तथा जनसंख्या को देखते हुए यह कहना कठिन है कि देश में खनिज अत्यधिक है। हाँ, यह अवश्य कहा जा सकता है कि देश खनिज पदार्थों की दृष्टि से निर्धन नहीं है।

जहाँ तक खनिज पदार्थों का प्रश्न है ऐसा अनुमान किया जाता है कि कुछ महत्वपूर्ण खनिज पदार्थ भारत में यथेष्ट मात्रा में हैं और भारत उन्हें विदेशों में भेज सकता है। कुछ ऐसे खनिज पदार्थ हैं जो भारत की आवश्यकता को पूरा कर सकते हैं और कुछ ऐसे खनिज पदार्थ भी हैं जिनके लिए भारत को विदेशों पर निर्भर रहना होगा।

१ वे खनिज पदार्थ जिनको भारत बाहर भेज सकता है। अर्थात् भारत के पास यथेष्ट हैं।

लोहा, मैंगनीज, अबरख (Mica), बाक्साइट (Bauxite), जिप्सम (Gypsum) मैगनेसाइट (Magnesite)

२ वे खनिज पदार्थ जो भारत की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त हैं —

कोयला, सीमेंट के लिए आवश्यक पदार्थ, एलूमीनियम, सोना, ताँबा, क्रोम, इमारती पत्थर, संगमरमर, स्लेट, औद्योगिक मिट्टियाँ, सोडियम लवण और शोरा इत्यादि, लाइमस्टोन और डोलोमाइट, शीशा का रेत, बोरैक्स, नाइट्रेट, फासफेट्स, जिरकन (Zircon), आरसेनिक (Arsenic), एन्टीमनी (Antimon)) बहुमूल्य पत्थर, वैनेडियम (Vanadium)।

३ वे खनिज पदार्थ जिनके लिए भारत को मुख्यत विदेशों पर निर्भर रहना होगा।

चाँदी, निकल, पैट्रोलियम, गंधक, सीसा (Lead), जिंक, टिन, पारा, टंगस्टन, प्लैटिनम (Platinum), ग्रैफाइट (Graphite), अस्फाल्ट (Asphalt) पोटाश।

भारत में कुछ खनिज पदार्थ जैसे मैंगनीज, अबरख (Mica), एबोनाइट (Ebonite), क्रोमाइट (Chromite) केवल विदेशों को भेजने के लिए निकाले जाते हैं। यदि इसको शीघ्र रोका नहीं गया तो ये खनिज पदार्थ समाप्त हो जावेंगे। बात यह है कि खनिज पदार्थ कोई खेती की फसल तो हैं नहीं जो प्रतिवर्ष उत्पन्न की जा सकें और भूमि को खाद इत्यादि देकर पूर्ववत् उपजाऊ बनाये रक्खा जा सके। खानों में प्रकृति ने कुछ खनिज पदार्थ भर दिये हैं। उनके समाप्त हो जाने पर फिर मनुष्य के वश के बाहर की बात है कि उनको उत्पन्न कर सके। इस कारण खनिज पदार्थों का उपयोग किफायत के साथ होना चाहिये।

उनकी बचत करनी चाहिये। उनका व्यर्थ नष्ट होने से बचाना चाहिये। कच्चा खनिज पदार्थ विदेशों को भेजा जाने से रोक देना चाहिए। अभी तक अंग्रेज सरकार इस ओर ध्यान नहीं देती थी किन्तु राष्ट्रीय सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिए। नहीं तो हमारे बहुत से मूल्यवान खनिज पदार्थ समाप्त हो जायगे और देश की भावी औद्योगिक उन्नति को उससे धक्का पहुँचेगा।

अभ्यास के प्रश्न

१—भारत की खनिज पदार्थों के सम्बन्ध में कैसी स्थिति है और भारत सरकार की खनिज नीति क्या होना चाहिए समझा कर लिखिए।

२—भारत की लोहे के सम्बन्ध में क्या स्थिति है और लोहा कहाँ कहाँ मिलता है बतलाइए।

३—मैंगनीज कहाँ कहाँ निकाला जाता है और इस धंधे का भविष्य कैसा है?

४—भारत में नमक की उत्पत्ति पर एक छोटा निबंध लिखिए।

५—सोना और अभ्रक (Mica) कहाँ निकलता है और भारत की इन धातुओं के सम्बन्ध में क्या स्थिति है स्पष्ट लिखिए।

अठारहवाँ परिच्छेद

शक्ति के स्रोत (*Sources of Power*)

भारत औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है इस कारण यहाँ यांत्रिक शक्ति (Mechanical power) अन्य देशों की तुलना में कम उत्पन्न होती है। जैसे जैसे भारत में आधुनिक ढंग से उद्योग धंधों की उन्नति होगी वैसे ही-वैसे यांत्रिक शक्ति (Mechanical power) का अधिकाधिक उपयोग होगा। भारत कृषिप्रधान है और यहाँ खेती में पशु शक्ति का ही अधिक उपयोग होता है। खेत जोतने से लेकर फसल को मंडी में ले जाने तक सारी क्रियायें पशु शक्ति के द्वारा ही होती हैं। भारत में संसार में सब से अधिक गाय बैल (२१ करोड़) हैं परन्तु आधुनिक यंत्रों को चलाने में इन पशुओं का उपयोग नहीं हो सकता। प्रकृति ने बहती हुई जल धारा तथा वायु में भी अनन्त शक्ति भर रक्खी है। किन्तु जैसा आठवें परिच्छेद में कहा जा चुका है वायु तथा जल धारा में आधुनिक बड़े बड़े यंत्रों और कारखानों को चलाने के उपयुक्त नहीं है। भारत में तो हवा बहुत धीरे बहती है इस कारण उसका उपयोग साधारण कार्यों (जैसे पानी को खींचने इत्यादि) में भी नहीं हो सकता। केवल दक्षिण प्रायद्वीप के समुद्रतट पर हवा तेज बहती है। वहाँ हवा का उपयोग साधारण कार्यों में किया जा सकता है। जल धारा का भी उपयोग यहाँ उद्योग धंधे में नहीं हो सकता है क्योंकि मैदानों में धार तेज नहीं होती और गर्मी में नदियाँ सूख जाती हैं। भारत में जंगलों की कमी के कारण ईंधन की भी बहुत कमी है।

अतएव लकड़ी उपयोग भी शक्ति उत्पन्न करने में नहीं हो सकता। घरों में ईंधन जलाने के लिए ही यथेष्ट लकड़ी प्राप्त नहीं होती फिर उद्योग धंधों के लिए लकड़ी जलाकर शक्ति उत्पन्न करने की कल्पना भी कैसे की जा सकती है। भारत में उद्योग धंधों के लिये मुख्य शक्ति के स्रोत कोयला और बिजली हैं। बर्मा के पृथक् कर दिये जाने से पैट्रोलियम की उत्पत्ति तो यहाँ नाम मात्र की रह गई है। अब हम इन शक्ति के साधनों का विवरण नीचे लिखेंगे—

कोयला संसार में शक्ति उत्पन्न करने का मुख्य साधन है। यदि कोयला न हो तो आधुनिक उद्योग धंधे बिल्कुल चौपट हो जाय। भारत में भी कोयला ही शक्ति उत्पन्न करने का मुख्य साधन है क्योंकि यहाँ अभी जल विद्युत् बहुत कम उत्पन्न की गई है।

कोयला

परन्तु प्रकृति ने भारत को यथेष्ट कोयला नहीं दिया। कोयले की दृष्टि में भारत बहुत धना नहीं है। १९३८ में भारत का कुल उत्पादन २५६ लाख टन के लगभग थी जबकि संसार का कुल उत्पादन १२२५० लाख टन था। इसका अर्थ यह हुआ कि संसार की कुल उत्पत्ति का भारत ने केवल २ कोयला उत्पन्न किया। संयुक्तराज्य प्रतिवर्ष जितना कोयला निकालता है उसका लगभग बीसवाँ हिस्सा भारत में निकलता है। और ब्रिटेन की तुलना में भारत पाँचवाँ हिस्सा कोयला निकलता है। संसार में कोयला उत्पन्न करने की दृष्टि से भारत का आठवाँ स्थान है। भारत जैसा विशाल देश बेलजियम फ्रांस और पोलैंड से भी कम कोयला उत्पन्न करता है। इसी से उसकी निर्धनता का परिचय मिलता है। भारत में केवल कोयले की कमी ही नहीं है। यहाँ अच्छी जाति का कोयला और भी कम है। भारत का बढ़िया कोयला ब्रिटेन के साधारण कोयले से भी घटिया है। ऐसा कोयला जिसका कोक बनाया जा सके भारत में कम ही मिलता है।

भारत का लगभग ६७ कोयला गोंडवाना चट्टानों से निकलता है। ये चट्टानें बहुत पुरानी हैं और अधिकतर रेत के पत्थर (Sandstone) तथा जमा हुई मिट्टी (Shale) की बनी हैं। इनमें रानीगंज, झरिया, बोकारो, करनपुरा तथा गिरीडिह कोयले के क्षेत्र प्रमुख हैं। ये कोयले के क्षेत्र बंगाल और बिहार में हैं और देश का लगभग ६० कोयला इन्हीं क्षेत्रों से निकलता है। ऊपर दिये हुये कोयले के क्षेत्रों के अतिरिक्त पालामऊ जिले में, डाल्टनगंज की खानों में, तथा गोदावरी की घाटी में सिंगरेनी, बल्लारपुर तथा वरोरा की खानें और मोहपानी तथा पचमढ़ी की खानें जो सतपुड़ा के समीप हैं, गोंडवाना चट्टानों के क्षेत्र में ही स्थित हैं। ये खान मध्यप्रदेश में स्थित हैं।

गोंडवाना चट्टानों के क्षेत्र के बाहर कोयला आसाम में भी पाया जाता है। इनके अतिरिक्त हैदराबाद रीवा तथा बीकानेर में भी कुछ कोयला पाया जाता है। आसाम में लखीमपुर जिले की खान अधिक महत्वपूर्ण है। महानदी और गोदावरी की घाटियों के उत्तर-पश्चिमी सिरों पर कोयले की खानें दक्षिण ट्रैप की चट्टानों में दबी हुई हैं। इस कारण उनके विषय में कुछ ज्ञात नहीं है।

भारत में झरिया की कोयले की खानें सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। भारत में जितना कोयला निकाला जाता है उसका लगभग आधा झरिया की कोयलों की खानों से निकलता है। यही नहीं कि झरिया की खानों से सबसे अधिक कोयला निकलता है किंतु यहाँ का कोयला अच्छी जाति का होता है। झरिया के कोयले में अधिक भाग उस प्रकार के कोयले का होता है जिसका कोक बन सकता है। भारत में कोक बनाने योग्य कोयला अधिक नहीं है और जो कुछ है वह झरिया की खानों से ही अधिकतर निकलता है। झरिया की खानों का क्षेत्रफल १५० वर्ग मील है। गिरिडीह की खान भी कोयला उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों में विशेष महत्वपूर्ण है। यह गोंडवाना चट्टानों की निचली तहें हैं किंतु अभी तक इस क्षेत्र की घाटियों सीम (Seam) को जो ऊपरी सतह में है खोदने का प्रयत्न नहीं किया गया। रानीगंज भी कोयले उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों में विशेष महत्वपूर्ण है। यहाँ की निचली चट्टानों में १८ सीम हैं और जिनकी मोटाई ३०० फीट है। रानीगंज कोयले के क्षेत्र में देश की कुल उत्पत्ति का एक तिहाई कोयला उत्पन्न होता है। इसका क्षेत्रफल ५०० वर्ग मील है जिसका अधिकांश भाग बर्दवान में है किंतु कुछ भाग बाँकुरा, मानभूम तथा संथाल परगने में भी है। रानीगंज की ऊपरी सतह में ६ मील सीम (Seam) हैं जो को खोदा जा सकता हैं और जिनकी मोटाई ५० फीट है।

गोंडवाना के उत्तर पश्चिमी सिरे पर उमरिया का क्षेत्र है। निजाम राज्य में जो सिंगरेनी की कोयले की खानें हैं वह गोंडवाना की चट्टानों का ही सिलसिला है। आसाम का कोयला गोंडवाना के कोयले से भिन्न होता है।

आसाम के कोयले में जल तथा तेल का अंश अधिक होता है। उसमें राख (ash) भी कम होता है। पंजाब के कोयले में राख (ash) अधिक होता है। आसाम का कोयला कोक बनाने के उपयुक्त नहीं है क्योंकि उसमें गंधक अधिक होती है। आसाम में माकुम की कोयले की खानें महत्वपूर्ण हैं। ये खानें एक रेल द्वारा ब्रह्मपुत्र नद पर स्थित डिब्रूगढ़ से जुड़ी हुई हैं। पंजाब में कोयला झेलम जिले में ड्डौत के पठार पर निकाला जाता है।

भारत सरकार ने १९३७ में कोयले के धंधे की जाँच कराने के लिए एक कमेटी बैठाई थी। कमेटी ने अनुमान लगाया है कि भारत में अच्छा कोयला जो १८ खानों में भरा हुआ है कुल १,४२६,०००,००० टन है। इस समय ११,५०० ००० टन अच्छा कोयला प्रतिवर्ष निकाला जाता है। इस प्रकार भारत का अच्छा कोयला जिससे कोक तैयार किया जा सकता है लगभग १२ वर्षों में समाप्त हो जायगा। इस समय जिस प्रकार कोयला खानों में निकाला जाता है वह अत्यन्त

दोषपूर्ण है और लगभग ५०% कोयला खानों में ही नष्ट हो जाता है। यदि खानों को खोदने के ढंग में सुधार हो और ५०% से अधिक कोयला निकाला जा सके तो कोक बनाने योग्य कोयला कुछ अधिक समय चल सकता है। परन्तु किसी भी दशा में अच्छा कोयला ६६ वर्ष से अधिक नहीं चल सकता।
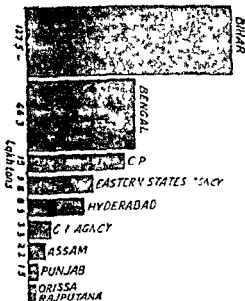
भारत में कोयले का प्रादेशिक अनुपात

भारत में सब प्रकार का कोयला (अच्छा और घटिया) ५४,०००,००,०००० टन है। इसमें से केवल ५% कोयला कोक बनाने योग्य है। झरिया के क्षेत्र में २०,०००,०००,००० टन रानीगंज के क्षेत्र में २१,०००,०००,००० टन और उत्तरी करनपुर में ८,६००,०००,००० टन कोयला भरा पड़ा है।

भारत में कोक बनाने योग्य कोयला अधिकतर झरिया की खानों से निकलता है। झरिया की खानों से प्रतिवर्ष एक करोड़ टन से कुछ अधिक कोयला निकलता है। डाक्टर फाक्स के मत से झरिया की खानों का जीवन ४१ वर्ष है। उनका मत है कि यदि खानों को खोदने के ढंग में उन्नति हो, बहुत सा कोयला खानों में ही नष्ट न हो जाय, और खानों में आग लगना रोका जा सके तो, अच्छा कोयला १०० वर्ष तक चल सकता है।

विशेषज्ञों का मत है कि साधारण कोयला भारत में १५० वर्ष तक चलेगा यद्यपि कोक बनाने योग्य कोयला भारत में कम ही है परन्तु फिर भी उसका उपयोग किफायत से नहीं हो रहा है। होना तो यह चाहिए था कि वह कोयला जिसका हार्ड कोक (Hard coke) बन सके वह केवल लोहे और स्पात के धन्धे में ही काम में लाया जाय। क्योंकि स्पात के धंधे के लिए हार्ड कोक (Hard coke) आवश्यक है। परन्तु भारत में यह अच्छा कोयला रेलवे तथा अन्य धंधों में भी काम में लाया जाता है जिनका काम घटिया कोयले से भी चल सकता है।

भारत का अधिकांश कोयला तो देश के अन्दर ही खप जाता है। थोड़ा सा कोयला सीलोन तथा पूर्व के देशों को जाता है। कोयले की समस्त उत्पत्ति का ३२ रेलों में, २४% लोहे के कारखानों में, २६% उद्योग धन्धों में तथा १६% घरों और छोटे-छोटे धंधों में खर्च होता है। कुछ दिनों से भारत में घरों में जलाने के लिए साफ्ट कोक (Soft coke) का प्रचार बढ़ रहा है। (Soft coke)
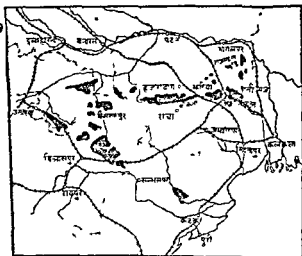
भारत में कोयले की खानें

घटिया कोयले से तैयार होता है। भारत में लकड़ी की कमी है। इस कारण गोबर जला दिया जाता है और खेतों को यथेष्ट खाद नहीं मिलती। यदि साफ्ट कोक का अधिक उपयोग बढ़ जाये तो खाद के लिए गोबर बच सकता है।

घटिया कोयले से कोयले की गौण वस्तुयें (By products) तैयार नहीं हो सकतीं। भारत में अभी जो कुछ गौण वस्तुयें तैयार की जा रही हैं वे उसी कोयले से निकलती हैं जो हार्ड कोक (Hard coke) बनाने के उपयुक्त होता है। ये गौण वस्तुयें कोलतार और अमोनिया सलफेट हैं। अमोनिया सलफेट अधिकतर जावा भेजा जाता है।

भारत की कोयले की खानें देश के एक कोने में स्थित हैं। अन्य देशों की तरह कोयले की खानों का नदियों अथवा नहरों के द्वारा कोयला भेजने की सुविधा प्राप्त नहीं है। रेलों से कोयला देश के सुदूर प्रदेशों तक ले जाने में अधिक व्यय होता है। पिछले युद्ध वर्षों में कोयले की खानों में आग अधिक लगने के कारण खानों को हानि पहुँची है।

देश के कोयले के भण्डार के विषय में ऊपर लिखी हुई जानकारी प्राप्त कर लेने के उपरान्त यह स्पष्ट हो जाता है कि कोयले की दृष्टि से भारत की स्थिति सन्तोषजनक नहीं है।

पैट्रोलियम

ब्रह्मा के भारत से पृथक् कर दिये जाने से भारत में पैट्रोल की उत्पत्ति बहुत कम रह गई है। जहाँ भारत में पैट्रोल की उत्पत्ति नाम मात्र की रह गई है वहाँ मिट्टी के तेल तथा पैट्रोल की खपत बढ़ती जा रही है। मोटर द्वारा आवागमन का प्रचार बढ़ने से पैट्रोल की माँग अधिकाधिक बढ़ रही है। भारत में पैट्रोलियम आसाम और पूर्वी पंजाब में निकलता है।

आसाम में खासी, जयन्तिया पहाड़ियों के दक्षिण तथा उत्तर पूर्व आसाम में तेल की खानें हैं। इनमें लखीमपुर जिले की डिगबोई की खानें विशेष महत्वपूर्ण हैं इनके अतिरिक्त बदरपुर तथा मसीमपुर की खानों से भी पैट्रोल निकाला जाता है। आसाम में लगभग ७ करोड़ गैलन पैट्रोल की वार्षिक उत्पत्ति होती है। आसाम की खानों की उत्पत्ति क्रमशः बढ़ रही है। आसाम की खानों से पैट्रोल के अतिरिक्त चिकना करने वाला तेल (Lubricating), मोम (Batching oil) तथा मिट्टी का तेल (Kerosene) निकलता है। आसाम की तेल की खानों का तेल बहुत घटिया होता है। यहाँ का मोम बहुत बढ़िया होता है। इस मोम की मोम बत्तियाँ बनाई जाती हैं और इंगलैंड भेजा जाता है।

भारत में मिट्टी के तेल तथा पैट्रोलियम की बहुत कमी होने के कारण तेल तथा पैट्रोलियम अधिकतर बाहर से ही आता है।

जहाँ प्रकृति ने भारत को कोयले तथा पैट्रोल की दृष्टि से निर्धन बनाया है वहाँ उसने भारत में जल विद्युत् को उत्पन्न करने के साधन उपलब्ध करके इस कमी को पूरा कर दिया है। भारत जल विद्युत् की दृष्टि से अत्यन्त धनी है किन्तु अभी तक यहाँ जल विद्युत् अधिक उत्पन्न नहीं की गई है। इसका मुख्य कारण यह है कि देश औद्योगिक उन्नति की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है।

जल विद्युत् (Hydro Electricity)

जल विद्युत् को उत्पन्न करने के लिये तीन बातों की आवश्यकता है — (१) अधिक वर्षा (२) जल प्रपात (३) सब मौसमों में एक सी धार का होना। जल विद्युत् के उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि बहुत ऊँचे से ही पानी गिरता हो। पानी का वजन तथा वह जिस ऊँचाई से गिरता है उस पर ही बिजली निर्भर होती है। यदि १००० पौंड पानी १० फीट की ऊँचाई से गिरता है तो वह उतनी ही बिजली उत्पन्न करेगा जितना १०० पौंड पानी १००० फीट की ऊँचाई से अथवा १०,००० पौंड दस फीट की ऊँचाई से गिर कर उत्पन्न करता है। पानी तेजी से बहता है अथवा धीरे बहता है इसका बिजली की उत्पत्ति पर कोई असर नहीं पड़ता।

भारत के बहुत से भागों में वर्षा यथेष्ट होती है। आसाम, हिमालय तथा पश्चिमी घाट पर वर्षा यथेष्ट होती है साथ ही धरातल ऊबड़ खाबड़ होने के कारण नदियाँ बहुत से स्थानों पर ऊँचे से नीचे तल पर गिरती हैं। अतएव जहाँ तक पहली दो आवश्यकताओं का सम्बन्ध है वे पूर्ण हो जाती हैं। परन्तु भारत में वर्षा प्रत्येक मौसम में नहीं होती। इस कारण नदियों में किन्हीं महीनों में तो अत्यधिक पानी होता है और उनमें बाढ़ आ जाती है और गरमी तथा जाड़े के महीनों में नदियों में पानी बहुत कम रह जाता है। इस कारण यहाँ बिजली उत्पन्न करने के लिए बड़े-बड़े बाँधों को बना कर जल इकट्ठा करना पड़ता है। वर्षा का जल इकट्ठा करके इन बाँधों में रोक लिया जाता है और उसको ऊँचाई से गिरा कर विद्युत् उत्पन्न की जाती है। यदि बाँध बनाकर पानी को इकट्ठा न किया जाय और जहाँ नदियाँ ऊँचाई से नीचे पर आती हैं वहाँ प्लांट (Plant) लगाया जावे तो विद्युत् उत्पन्न करना कठिन हो जाये। क्योंकि यदि प्लांट इतना बड़ा खड़ा किया जाय कि वह बाढ़ के समय जो अत्यधिक जल नदी में आयगा उसका उपयोग कर सके तो तीन महीने के उपरान्त जब पानी बहुत कम रह जायगा तो प्लांट बेकार हो जायगा और यदि छोटा प्लांट लगाया जावे तो वह बाढ़ के समय बेकार हो जावेगा अतएव भारत में बाँध बनाकर पानी को रोकना आवश्यक हो जाता है। इन बाँधों के बनाने में करोड़ों रुपये व्यय होते हैं। इस कारण बिजली उत्पन्न करने में अन्य

देशों की अपेक्षा यहाँ व्यय अधिक पड़ता है। भारत में कोयला बहुत सस्ता है। इस कारण उत्तर भारत के नगरों में कोयले से ही बिजली उत्पन्न की जाती है। जो स्थान कोयले की खानों के समीप हैं वहाँ कोयले से बिजली उत्पन्न करने में कम व्यय होता है।

पहाड़ी प्रदेशों और दक्षिण प्रायद्वीप के उन भागों में जो कोयले के क्षेत्र से बहुत दूर हैं कोयले को ले जाने में व्यय अधिक होता है। अतएव उन भागों में जहाँ बिजली की माँग है जल विद्युत् उत्पन्न की जा रही है। भारत में जल विद्युत् उत्पन्न करने के बड़े बड़े कारखाने उसी समय स्थापित किये गये जब कि कोयले का मूल्य बहुत बढ़ गया था

भारत में तीन प्रकार के जल विद्युत् उत्पन्न करने के कारखाने हैं—(१) वे कारखाने जो बड़े बड़े औद्योगिक तथा व्यापारिक केन्द्रों को बिजली देते हैं (२) वे कारखाने जो नहरों के जल से विद्युत् उत्पन्न करते हैं। (३) वे कारखाने जो पहाड़ी स्थानों को रोशनी देने के लिए बिजली उत्पन्न करते हैं।

पहले प्रकार के कारखानों में निम्नलिखित मुख्य हैं —

भारत में सबसे महत्त्वपूर्ण जल विद्युत् उत्पन्न करने के कारखाने पश्चिमी घाट के समीप स्थित हैं। पश्चिमी घाट पर घोर वर्षा होती

(१) पश्चिमी घाट के कारखाने है। उस जल से विद्युत् उत्पन्न करने का विचार भारत के प्रसिद्ध व्यवसायी ताता के मस्तिष्क की उपज था। ताता ने देखा कि बम्बई की मिलों को बंगाल से कोयला मँगाने में अधिक व्यय करना पड़ता है अतएव उन्होंने ताता हाइड्रो पावर कम्पनी स्थापित की। इस योजना के अनुसार लोनावला, वलवहान तथा शिवरता नामक तीन बड़ी झील बाँध बनाकर तैयार की गई। वर्षा का पानी इन झीलों में इकट्ठा किया जाता है और नहरों के द्वारा लोनावला की झील तक लाया जाता है। यहाँ से पानी पाइप लाइनों द्वारा १७२५ फीट ऊँचाई से खापोली के शक्ति गृह (Power house) के पास गिराया जाता है। खापोली के कारखाने में बिजली तैयार होती है। बाद को बिजली की अधिक माँग होने पर कुंडली के समीप एक झील और बनाई गई। अब इस कारखाने में लगभग ५१००० घोड़ों की शक्ति के बराबर बिजली तैयार होती है और बम्बई शहर में रोशनी करने तथा कपड़े की मिलों में काम आती है।

पहली योजना में ताता एंड सन्स को आशातीत सफलता मिली। बिजली की माँग इतनी थी कि वे उसे पूरा न कर सकते थे। अतएव उन्होंने आन्ध्रा वैली पावर सप्लाई कम्पनी (Andhra Valley Power Supply Co) नामक एक

दूसरा कम्पनी स्थापित की। इस योजना के अनुसार तोकेरवादी के समीप पश्चिमी घाट में एक बहुत बड़ा बाँध (½ मील लम्बा और १६२ फीट ऊँचा) बना कर आन्ध्रा नदी को रोक दिया गया है। इस बाँध के बन जाने से लगभग १२ मील लम्बी झील बन जाती है। इस झील का पानी पाइप लाइनों द्वारा १७५० फीट की ऊँचाई से भिवपुरी के पावर स्टेशन पर गिराया जाता है। यह पावर स्टेशन १ लाख घोड़ों की शक्ति के बराबर विद्युत् उत्पन्न कर सकती है। इस कारखाने से उत्पन्न हुई बिजली का उपयोग कतिपय मिलें, ट्राम कम्पनी तथा जी० आई० पी० रेलवे करती है। वास्तव में आन्ध्रा वैली योजना पहली योजना का विस्तार मात्र है।
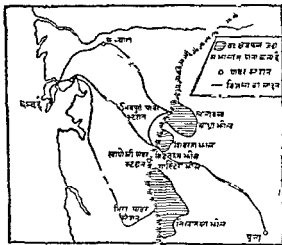
पश्चिमी घाट में जल-विद्युत् के कारखानें

ताता ने एक तीसरी कम्पनी ताता पावर कम्पनी स्थापित करके निलामुला योजना को भी पूरा कर दिया। मुलशी नामक स्थान पर एक बहुत बड़ा बाँध बना कर निलामुला नदियों को रोक दिया गया है। इस झाल से पानी १७५० फीट की ऊँचाई से भिरा नामक स्थान पर गिराया जाता है जहाँ शक्ति गृह (Power-house) बनाया गया है। इस कारखाने से उत्पन्न हुई बिजली का उपयोग कुछ मिलें, बी० बी० एंड० सी० आई० रेलवे तथा जी० आई० पी० रेलवे करती हैं।

निलामुला के १०० मील दक्षिण कोनया नदी के जल से विद्युत् उत्पन्न करने का भी विचार है। ताता एंड सन्स ने इसकी भी योजना बनाई है। जब

कभी यह योजना कार्य रूप में परिणत हुई तो इससे ३५०००० घोड़ा की शक्ति के बराबर बिजली उत्पन्न होगी। टाटा कम्पनी ने बड़ौदा राज्य में ओखा शक्ति गृह (Power Station) स्थापित किया है जिसमें १२,००० किलोवाट जल विद्युत् उत्पन्न हो रही है और २०,००० किलोवाट तक उत्पन्न की जा सकती है।

दक्षिण के जल विद्युत् उत्पन्न करने वाले कारखाने

मद्रास प्रदेश का दक्षिणी भाग तथा मैसूर कोयले के क्षेत्र से बहुत दूर हैं। वहाँ के अधिकांश बड़े नगर समुद्र से भी दूर हैं। इस कारण कोयले को मँगाने में बहुत व्यय पड़ता था। शक्ति उत्पन्न करने में अधिक व्यय होने के कारण यहाँ उद्योग धंधों का उन्नति नहीं हो सकती थी। जब से इस दक्षिण भाग में जल-विद्युत् उत्पन्न होने लगी है तब से मद्रास प्रदेश के दक्षिणी भाग तथा मैसूर के दक्षिणी प्रदेश में तेजी से उद्योग-धंधे उन्नति कर रहे हैं।

दक्षिण मद्रास प्रदेश के पावर स्टेशन

मदरास के दक्षिण भाग में जल विद्युत् उत्पन्न करने के लिए बहुत से उपयुक्त स्थान हैं। उनमें से कुछ स्थानों को चुन कर वहाँ पावर स्टेशन स्थापित किये गये हैं। इनमें नीलगिरी की पहाड़ियों में स्थित पायकारा विशेष महत्वपूर्ण है। पायकारा नदी को रोककर जल विद्युत् उत्पन्न की जाती है। जब यह योजना पूरी तरह से विकसित हो जायेगी तो इस शक्ति गृह से १००,००० घोड़ा की शक्ति के बराबर बिजली उत्पन्न की जा सकेगी। इस समय यहाँ ६५,००० घोड़ों की शक्ति के बराबर बिजली उत्पन्न होती है। पायकारा से उत्पन्न हुई बिजली के कारण तामिल प्रदेश में उद्योग धंधों में जैसे जीवन आ गया है। अनेक छोटे बड़े गाँवों, कस्बों और नगरों को बिजली इसी पावर स्टेशन से दी जाती है। पायकारा की बिजली के कारण इस प्रदेश की आशाजनक आर्थिक उन्नति हुई है। सस्ती बिजली के फलस्वरूप दक्षिण प्रदेश में आश्चर्य जनक गति से मिलें और कारखाने स्थापित होते जा रहे हैं। कोयम्बटूर में कपड़े की बहुत सी मिलें स्थापित हो गई हैं। थोड़े ही समय में कोयम्बटूर भी कपड़े की मिलों का एक मुख्य केन्द्र बन जायेगा।

पायकारा के अतिरिक्त मैटूर (Mettur) पापनाशम पालिनी पहाड़ियाँ, तथा पेरियर शक्ति गृहों (Power houses) से भी बिजली उत्पन्न की जाती है इन सभी स्थानों पर बाँध बनाकर जल को रोक दिया गया है और उसका उपयोग बिजली उत्पन्न करने में किया जाता है। मैटूर के समीप कपड़े तथा अन्य कारखाने इस शीघ्रता से स्थापित हो गये कि मैटूर से उत्पन्न होने वाली बिजली यथेष्ट नहीं

की खानों में काम आती है। यहाँ की बिजली मैसूर तथा बंगलौर में भी कारखानों तथा रोशनी के उपयोग में आता है। शिवसमुद्रम् शक्ति गृह से केवल २५००० घोड़ा की शक्ति उत्पन्न की जा सकता था। किन्तु बिजली की माँग अधिक होने के कारण कृष्ण राजा सागर नामक बाँध बना कर कावेरी के जल को रोक लिया गया है और इस प्रकार शिवसमुद्रम् शक्ति-गृह से अधिक शक्ति उत्पन्न की जा रही है। मैसूर में दो योजनायें बन कर तैयार हुई हैं। पहला योजना के अनुसार कावेरी की सहायक शिम्शा नदी के जल से विद्युत् उत्पन्न की जा रही है। दूसरी योजना मेकादाटू के नाम से प्रसिद्ध है। शिवसमुद्रम् के कटक में २५ मील पर कावेरी के जल से विद्युत् उत्पन्न की गई है। इन योजनाओं के पूरी हो जाने से मैसूर राज्य में यथेष्ट शक्ति उत्पन्न हो जायगी और मैसूर में तेजी से औद्योगिक उन्नति हो सकेगी। इस समय भी बिजली के कारण ही मैसूर में बहुत से धंधे खड़े हैं। शिम्शा शक्ति गृह से १६,००० किलोवाट और जोग जल प्रपात से ४८,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न हो रही है आगे चलकर १ लाख २० हजार तक उत्पन्न हो सकेगी।

काश्मीर में जल विद्युत्

काश्मीर में झेलम नदी के जल से बड़ामुल्ला नामक स्थान पर विद्युत् उत्पन्न की जाती है। बड़ामुल्ला से राजधानी श्रीनगर ५५ मील है जहाँ बिजली का उपयोग होता है। यह शक्ति गृह २०,००० घोड़ों की शक्ति उत्पन्न कर सकता है।

उत्तर भारत में मंडी का जल विद्युत् का कारखाना अधिक महत्वपूर्ण है। शिमला की पहाड़ियों के जोगेन्द्रनगर के समीप विद्युत् उत्पन्न की जाती है। मंडी योजना बहुत बड़ी योजना है। इसके तीन भाग हैं। अभी केवल पहला ही पूरा हुआ है। इसके द्वारा उत्पन्न होने वाली बिजली पूर्वी पंजाब के लगभग २० कस्बों को दी जा रही है। फीरोजपुर, लायलपुर, शिमला, गुरदासपुर, पटियाला, गुजरानवाला और अम्बाला को यही बिजली मिलती है। जब कभी यह योजना पूरी होगी तो इससे उत्पन्न की जाने वाली बिजली देहली, मेरठ सहारनपुर तथा करनाल जिलों को भी दी जायेगी। अभी योजना का एक भाग ही पूरा हुआ है। मंडी योजना से जितनी आशा थी वह उतनी सफल नहीं हुई। यही कारण है कि शेष दो भाग अभी पूरे नहीं किये गये।

उत्तर प्रदेश में जल-विद्युत्

सिंचाई की नहरों से सम्बन्धित जल-विद्युत् के कारखानों में गंगा की नहर बिजली उत्पन्न करने की योजना सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। गंगा की नहर के बहुत से जल प्रपातों (भोलानगर, चितौरा, सुमेरा) से बिजली उत्पन्न की जाती है।

मुज़फ्फरनगर के समीप ही बहादुराबाद मुख्य शक्ति-गृह है जहाँ से बिजली उत्पन्न करके भिन्न भिन्न स्थानों को भेजी गई है। बहादुराबाद के अतिरिक्त गाज़ियाबाद के मन्दर माझा तथा बुलन्दशहर के दक्षिण में पालरा पावर स्टेशन हैं जिनमें बिजली उत्पन्न की जाती है। इन सभी जल प्रपातों तथा शक्ति-गृहों में उत्पन्न होने वाली बिजली एक बिजली की बड़ी लाइन (Electric Grid) से सम्बन्धित
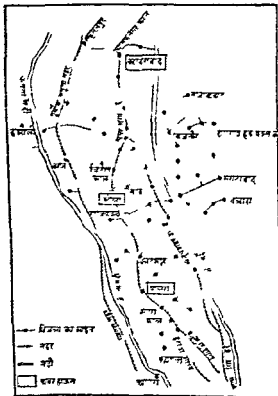
उत्तर प्रदेश की ग्रिड योजना

कर दी गई है। इसके द्वारा उत्तर प्रदेश के पश्चिमी ज़िलों को बिजली दी जाती है। सहारनपुर, मुज़फ्फरनगर, मेरठ, बुलन्दशहर, एटा अलीगढ़ आगरा, बिजनौर तथा मुरादाबाद ज़िलों को गंगा ग्रिड योजना की बिजली मिलती है। गंगा ग्रिड-योजना का महत्व इसलिए है कि इसके द्वारा उन ज़िलों में भी सिंचाई हो रही है जिनमें नहरें नहीं थीं। गंगा नहर की अनूपशहर शाखा में पानी बहुत कम रहता था।

इस कारण उसमें ठीक तरह से सिंचाई नहीं होती थी। अब बिजली के द्वारा काली नदी का जल इस नदी में डाल दिया जाता है। इस प्रकार नहर में यथेष्ट जल हो जाने से सिंचाई अच्छी तरह से अधिक क्षेत्र में हो सकती है। इसके अतिरिक्त गंगा-ग्रिड-योजना से उत्पन्न होने वाली बिजली के द्वारा ही ट्यूब वेल से सिंचाई होती है।

इसके अतिरिक्त कावेरी के मैट्टर बाँध से निकलने वाली नहरों के जल से तथा कावेरी के मुहाने में नहरों के जल से भी बिजली उत्पन्न की जाती है।

भारत के अधिकांश पहाड़ी स्थानों पर जल-विद्युत् उत्पन्न की जाती है क्योंकि वहाँ जल प्रपात होते हैं और वहाँ कोयला आसानी से नहीं पहुँच सकता। अतएव जल-विद्युत् उत्पन्न करना वहाँ आवश्यक तथा सुविधाजनक होता है।

ऊपर के विवरण से ज्ञात होगा कि भारत में अभी बहुत कम जल-विद्युत् उत्पन्न हुई है। जब तक भारत में औद्योगिक उन्नति नहीं होती तब तक यहाँ जल विद्युत् भी अधिक उत्पन्न नहीं की जा सकती। अनुमानतः भारत में जितनी जल विद्युत् उत्पन्न की जा सकती है उसकी ४ से भी कम उत्पन्न की गई है। भविष्य में भारत में औद्योगिक उन्नति के साथ साथ शक्ति की माँग बहुत बढ़ जायेगी। कोयले पैट्रोलियम की दृष्टि से देश निर्धन है। अतएव देश की भावी औद्योगिक उन्नति बहुत कुछ जल विद्युत् पर ही निर्भर रहेगी।

भारत में इस समय ३५ लाख किलोवाट से अधिक बिजली नहीं उत्पन्न हो रही है जबकि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में एक खरब ४५ अरब २ किलोवाट, जर्मन में ५५ अरब किलोवाट, ब्रिटेन में ३१ अरब किलोवाट, कनाडा में ०६ अरब किलोवाट और फ्रांस में २० अरब किलोवाट बिजली उत्पन्न होती है। इन देशों की तुलना में हमारे देश में बिजली की शक्ति बहुत कम उत्पन्न होती है। इसका एकमात्र कारण यह है कि देश में औद्योगिक उन्नति नहीं हुई है।

भारत की भावी औद्योगिक उन्नति के लिए जल-विद्युत् की उन्नति आवश्यक है। इसका कारण यह है कि एक तो भारत कोयले की दृष्टि से धनी नहीं है और जो कुछ भी कोयला है वह देश के पूर्व में है। इस कारण बहुत से प्रदेश कोयले के क्षेत्र से बहुत दूर हैं और वहाँ औद्योगिक उन्नति तभी हो सकती है जबकि शक्ति के साधन उपलब्ध किये जावें। अस्तु देश की भावी औद्योगिक उन्नति के लिए जल विद्युत् का महत्व स्पष्ट है। इसी कारण युद्ध के उपरान्त जो आर्थिक योजनायें बनाई गई हैं उनमें जल-विद्युत् की योजनाओं को पहला स्थान दिया गया है; कुछ योजनायें तो हाथ में ले ली गई हैं उन पर कार्य आरम्भ हो गया और कुछ योजनायें भविष्य में पूरी की जावेंगी। इसमें कोई संदेह नहीं कि जब ये योजनायें तैयार हो जावेंगी तब देश के प्रत्येक भाग में यथेष्ट शक्ति उत्पन्न

होगी और खेती तथा धन्धों का आश्चर्यजनक रीति से उन्नति होगी। अब हम यहाँ नवीन योजनाओं का संक्षिप्त विवरण देंगे। यह बात ध्यान में रखने की है कि भावी जल विद्युत् योजनाओं के साथ सिंचाई की योजनायें भी सम्बद्ध हैं।

दामोदर घाटी की योजना

नवीन योजनाओं में दामोदर घाटी योजना सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। यह एक बहुमुखी योजना है। इस योजना के पूरी हो जाने पर दामोदर नदी में जो भीषण बाढ़ें आती हैं उनको सात बड़े बाँध बना कर रोका जावेगा और इस प्रकार अपार जन धन की जो आज हानि होती है उससे रक्षा की जा सकेगी। नदी के जल से सिंचाई होगी उसमें नावों द्वारा माल लाने और ले जाने की सुविधा हो जावेगी और बहुत अधिक जल विद्युत् उत्पन्न की जावेगी जिससे बिहार और बंगाल में उद्योग धन्धों की उन्नति हो सकेगी।
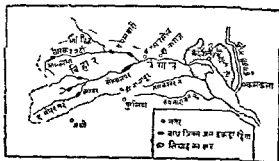
दामोदर घाटी की योजना

दामोदर नदी और उसकी सहायक बाराकर नदी पर बाँध बनाकर बाढ़ों को बिलकुल रोक दिया जावेगा। नीचे लिखे स्थानों पर बाँध निर्मित किये जावेंगे।

१ बाराकर नदी पर मलथान स्थान पर
२ दामोदर नदी के ऊपर सोनालापुर स्थान पर बाराकर एवं दामोदर नदी के संगम से ५ मील दूर है।
३ देवनबारी—बाराकर नदी पर
४ तिल्लैया—बाराकर नदी पर
५ अय्यर—दामोदर नदी पर
६ बोकारो—बोकारो नदी पर
७ मध्य कोनार

इन बाँधों में आज तक आई हुई बाढ़ से दुगनी बाढ़ नियन्त्रण करने की क्षमता रहेगा। इस प्रकार अब तक बाढ़ों से जो जन धन की हानि होती है वह सर्वथा रोकी जा सकेगी।

ये सात बाँध केवल बाढ़ नियन्त्रण में ही सहायक नहीं होंगे किंतु समस्त दामोदर घाटी को विद्युत्मय बना देंगे। सात बाँधों के अतिरिक्त एक और बाँध केवल बिजली उत्पन्न करने के लिए बनाया जावेगा। इन आठ बाँधों के निर्माण के फलस्वरूप दामोदर घाटी में लगभग ३००,००० किलोवाट विद्युत् शक्ति उत्पन्न होगी। यह विद्युत् शक्ति सेनाघाटी, दक्षिणी बिहार, पटना, डालमियानगर, जमशेदपुर तथा कलकत्ता तक पहुँचाई जा सकेगी।

इससे केवल बिजली ही उत्पन्न होगी यही बात नहीं है बिहार और पश्चिमी बंगाल में ७६०,१०१ एकड़ भूमि पर सिंचाई हो सकेगी जिससे वहाँ की ग्रामीण जनता को ६ या ७ करोड़ रुपये का वार्षिक लाभ होगा और खेती की पदावार बढ़ जावेगी।

दामोदर घाटी योजना के तैयार हो जाने पर इसमें नौका सचालन भी हो सकेगा। प्रस्तावित बाँध और जलकुंड बन जाने पर नदी का तेज बरसाती बहाव रोककर जल कुंडों में जल एकत्रित किया जावेगा और शीतकाल में यह जल नदी में छोड़ दिया जावेगा। जिससे नदी में नौका सचालन के लिए काफी जल हो जावेगा। इस प्रकार दामोदर नदी वर्ष भर नौका सचालन के योग्य हो जावेगी और इस क्षेत्र के उद्योग धंधों और खेतों को यातायात के सस्ते साधन उपलब्ध हो जावेंगे और मुहाने से आसनसोल तक दामोदर नदी नौका सचालन के योग्य बन जायगा। इसके द्वारा कोयला भी सस्ते दामों में इधर से उधर कलकत्ता तक भेजा जावेगा।

पूर्वी पंजाब की सरकार ने भाकरा बाँध की योजना की स्वीकृति दे दी है यह शीघ्र ही कार्यरूप में परिणत की जावेगी। सतलज नदी पर एक बड़ा बाँध बनाकर जल को बिजली उत्पन्न करने और सिंचाई के काम में लाया जावेगा। इस योजना के पूरा करने में ४२ करोड़ रुपया व्यय होगा और पूरी हो जाने पर पूर्वी पंजाब में ४५ लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होगी और २ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न की जावेगी।

भाकरा बाँध (Bhakra Dam)

पूर्वी पंजाब और उत्तर प्रदेश सरकार ने यमुना की दो सहायक नदियों टौंस और गिरी की योजना सम्मिलित रूप से हाथ में ली है। नाहन राज्य में इन नदियों के जल से ७५,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न की जावेगी। इस योजना में हरवटपुर

क्षेत्र	योजना या मालिक का नाम	शक्ति गृह	किस प्रकार की बिजली है	बिजली जो उत्पन्न हो रही है	बिजली जो उत्पन्न की जा सकती है
बम्बई	ताता पावर कम्पनी	भिरा	हाइड्रो इलेक्ट्रिक	८७५,०० कि० वा०	१०५,००० कि० वा०
,,	आन्ध्र वैली पावर सप्लाई कम्पनी	भिवपुरी	,,	४८,००० ,, ,,	६४,००० ,, ,,
,,	ताता हायड्रो इलैक्ट्रिक पावर सप्लाई कम्पनी	खापोली	,,	४८,००० ,, ,,	४८,००० ,, ,,
,,	जी० आई० पी० रेलवे	चोला	थरमल (कोयले से)	४०,००० ,, ,,	५०,००० ,, ,,
,,	अहमदाबाद इलैक्ट्रिक सप्लाई	अहमदाबाद	,,	१८५०० ,, ,,	८०,००० ,, ,,
बड़ौदा	ताता केमिकल वर्क्स	ओखा	,,	१२,००० ,, ,,	२०,००० ,, ,,
मदरास	मदरास सरकार	पायकारा	हायड्रो इलैक्ट्रिक	३६,६५० ,, ,,	५०,००० ,, ,,
,,	,, ,,	मेट्टूर	,, ,,	४२,००० , ,,	४२,००० ,, ,,
,,	,, ,,	पापनाशम	,, ,,	१७,५०० ,, ,,	२४,००० ,, ,,
,,	,, ,,	मोयार	,, ,	————	२०,००० ,, ,,
हैदराबाद	हैदराबाद राज्य	हैदराबाद	थरमल (कोयले से)	२०,००० ,, ,,	२०,००० ,, ,,
ट्रावकोर	ट्रावकोर राज्य	पल्लिवासल	हायड्रो इलैक्ट्रिक	२१,००० ,, ,,	३६,००० ,, ,,
मैसूर	मैसूर राज्य	शिवसामुद्रम्	,, ,,	४५,००० ,, ,,	४५,००० ,, ,,
,,	,, ,,	शिमशा	,, ,,	१६,००० ,, ,,	१६,००० ,, ,,
	,, ,,	जोग जल प्रपात	,, ,,	४८,००० ,, ,,	१२०,००० ,, ,,

मध्यप्रदेश	नागपूर इलैक्ट्रिक सप्लाई	नागपूर	थरमल (कोयले से)	५,७०० ,, ,,	१५,००० ,, ,,
बंगाल	इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी	बरनपूर	,, ,,	२६,००० ,, ,,	४०,००० ,, ,,
,,	कलकत्ता इलैक्ट्रिक सप्लाई	कलकत्ता	,, ,,	२६५,००० ,, ,,	४००,००० ,, ,,
,,	दिशोरागढ़	दिशोरागढ	,, ,,	१६,००० ,, ,,	१६,००० ,, ,,
,,	गौरीपूर इलैक्ट्रिक सप्लाई	गौरीपूर	,, ,,	२८,००० ,, ,,	२८,००० ,, ,,
,,	ऐसोशियेटेड इलैक्ट्रिक सप्लाई	शिवपूर	,, ,,	७,५०० ,, ,,	७५,००० ,, ,,
बिहार	पटना इ० स०	पटना	,, ,,	६,००० ,, ,,	१२,००० ,, ,,
,,	ताता आयरन एण्ड स्टील कम्पनी	जमशेदपूर	,, ,,	१०७,२००० ,, ,,	१३५,००० ,, ,,
उत्तर प्रदेश	उत्तर प्रदेश सरकार	गंगा की नहर	हायड्रो इलैक्ट्रिक	१८,९०० ,, ,,	२३,००० ,, ,,
,,	,, ,, ,,	कानपूर	थरमल (कोयले से)	६४,५०० ,, ,,	७५,००० ,, ,,
देहली	देहली सी० ई० पी० ए०	देहली	,, ,,	११,००० ,, ,,	१६,००० ,, ,,
पूर्वी पंजाब	पूर्वी पंजाब सरकार	जोगेन्द्रनगर	हायड्रो इलैक्ट्रिक	४८,००० ,, ,,	७२,००० ,, ,,
काश्मीर	काश्मीर राज्य	बड़ामुल्ला	हायड्रो इलैक्ट्रिक	२०,००० ,, ,,	२०,००० ,, ,,
				१७,२५,६००	१८,६०,८००

म बीस मील दूर देहरादून चकराता और सहारनपूर चकराता सड़कों के सकशन के समान शक्ति-गृह स्थापित किया जावेगा जहाँ बिजली उत्पन्न होगी।

उत्तर प्रदेश में कुछ महत्वपूर्ण योजनायें प्रादेशीय सरकार ने स्वीकार कर ली हैं जिन पर काम आरम्भ हो गया है। इनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण मिर्जापुर जिले में रिहाड योजना है।

रिहांड बाँध की योजना

रिहाड बाँध की योजना भी बहुत उद्देश्य वाली एक महत्वपूर्ण योजना है उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिले के कृषि तथा उद्योग धंधों की उन्नति के लिये इस योजना को कार्यान्वित किया जा रहा है।

मिर्जापूर जिले के पिपरिया गाँव के पास रिहाड नदी पर जहाँ रिहाड नदी सोन नदी मे मिलता है यह बाँध बनाया जावेगा। रिहाड नदी लगभग ५,१४८ वर्ग मील भूमि के जल को बहाती है। इस क्षेत्र में ५६ इन्च वर्षा होती है। नदी में अनन्त जल राशि व्यय में बहकर नष्ट हो जाती है। उसका कोई उपयोग नहीं हो पाता। रिहाड बाँध की योजना के अनुसार एक बड़ा बाँध बनाकर जिसका क्षेत्रफल १८० वर्ग मील होगा इस नदी के जल को रोक लिया जावेगा इस बाँध के द्वारा ढाई लाख किलोवाट जल विद्युत् उत्पन्न की जावेगी। बाँध के ठीक नीचे शक्ति गृह स्थापित किया जावेगा जहाँ बिजली तैयार होगी। इस योजना के द्वारा तैयार की जाने वाली बिजली की लागत व्यय लगभग डेढ़ पाई प्रति यूनिट होगा। यह सस्ती बिजली खेती की सिंचाई के और पानी पम्प करने के लिए बड़े बड़े कारखानों में तथा गृह-उद्योगों में काम आवेगी।

उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों में सिंचाई के कोई उन्नत साधन नहीं हैं। यहाँ फसलें अधिकतर वर्षा पर निर्भर रहती हैं। इस योजना के बन कर तैयार हो जाने पर इसके द्वारा २०००६ ट्यूब वेल (कुएँ) चलाये जा सकेंगे और घाघरा, जमुना तथा गंगा नदियों के पानी को पम्प करके ४०००० मील नहरें निकाली जा सकेंगी जिनसे २४ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी। इसके अतिरिक्त बिहार में भी इसके

आज उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिले आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं और वहाँ के २ करोड़ निवासी निर्धनता का जीवन व्यतीत करते हैं। इस योजना के कार्यान्वित हो जाने पर सिंचाई के साधन उपलब्ध हो जायेंगे और खेती की उन्नति हो सकेगी। यही नहीं बिजली के द्वारा गृह-उद्योग धंधों का विकास होगा तथा बड़े धंधे जैसे सीमैंट, रासायनिक खाद, सूती वस्त्र तथा अलूमीनियम इत्यादि पनप उठेंगे। आज जो क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है वह समृद्धिशाली हो उठेगा।

सरकार ने इस बाँध को बनाने के लिए एक सीमेंट का कारखाना स्थापित किया है जो १९५२ में सीमेंट उत्पन्न करने लगेगा। इस योजना को कार्यान्वित करने में लगभग ३१ करोड़ रुपया व्यय होगा।

हीराकुड बांध की योजना

महानदी प्रायद्वीप की एक महत्वपूर्ण नदी है। किन्तु महानदी के जल का अभी तक सिंचाई अथवा जल-विद्युत् उत्पन्न करने के लिए उपयोग नहीं किया गया। उड़ीसा का प्रदेश खनिज पदार्थों से भरा पड़ा है। यहाँ कोयला, लोहा, बाक्साइट, मैंगनीज, ग्रैफाइट, क्रोमाइट और अभ्रख बहुत बड़ी राशि में पृथ्वी के गर्भ में भरा हुआ है। महानदी प्रतिवर्ष ७ करोड़ ४० लाख एकड़ फीट पानी बहा ले जाती है।
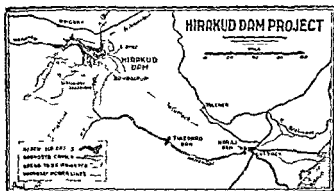
उड़ीसा का क्षेत्रफल अब ६०, २९ वर्ग मील है और एक करोड़ ५० लाख जनसंख्या है। संयुक्तराज्य अमेरिका की प्रसिद्ध टिनैसी घाटी से कई गुना यह प्रदेश साधन सम्पन्न है परन्तु महानदी के जल का पूरा-पूरा उपयोग न हो सकने के कारण यह प्रदेश निर्धन और अवनत दशा में पड़ा है।

इस प्रदेश को धन धान्य तथा उद्योग धन्धों से भरा पूरा करने के उद्देश्य से ही हीराकुड बाँध की योजना हाथ में ली गई है। हीराकुड बाँध की योजना बहुमुखी है। उसके द्वारा सिंचाई होगी, जल विद्युत् उत्पन्न होगी, नावों के द्वारा माल ढोने की सुविधा होगी और आज जो नदी में बाढ़ आने से विनाश होता है वह रोका जा सकेगा।

हीराकुड बाँध की योजना उड़ीसा के सम्बलपुर जिले में महानदी पर बनाई जा रही है। इस योजना के बन जाने पर इस प्रदेश में खेती, उद्योग धन्धों तथा खनिज धन्धों की आश्चर्यजनक गति से उन्नति होगी।

इस योजना के अन्तर्गत तीन बड़े बाँध बनाये जावेंगे—(१) हीराकुड (२) तिकरपारा, (३) नाराज। इन बाँधों के बन जाने पर केवल सिंचाई, बिजली, नौका-सञ्चालन, बाढ़ नियन्त्रण की सुविधायें ही प्राप्त नहीं होंगी किन्तु मलेरिया के प्रकोप को रोकने, मछली की पैदावार को बढ़ाने भूमि के कटाव को रोकने, तथा मनोरंजन की बहुमूल्य सुविधायें प्रदान की जावेंगी।

हीराकुड बाँध की योजना से लगभग ११ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी। दो शक्ति गृह भी स्थापित किए जावेंगे जो १२०,००० किलोवाट शक्ति उत्पन्न करेंगे। यह बिजली कटक और जमशेदपुर तक दी जावेगी तथा इस बिजली की लाइन मुचकुन्द शक्ति गृह को भी जोड़ेगी। ये बाँध बाढ़ों को रोक कर लगभग १२ लाख रुपए का लाभ करेंगे।

इस योजना के बन कर तैयार हो जाने पर सम्बलपुर के समीप लोहे, सीमेंट, शक्कर, कागज, रसायनिक पदार्थों के कारखाने खड़े हो जावेंगे। इस योजना के फलस्वरूप १४०,००० टन अधिक अनाज उत्पन्न होगा जिसका मूल्य ३½ करोड़ रुपए होगा। संक्षेप में इस योजना के बन जाने पर यह प्रदेश भारत में अत्यन्त समृद्धिशाली प्रदेशों में गिना जाने लगेगा।

कोसी योजना—बिहार में कोसी योजना सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। यह बहुउद्देशीय योजना है। इसके बन कर तैयार हो जाने पर सिंचाई, शक्ति उत्पादन, नौका वहन, बाढ़ों से समीपवर्ती प्रदेश की रक्षा, भूमि के कटाव को रोकने मलेरिया के प्रकोप का रोकना, भूमि को उपजाऊ बनाने की व्यवस्था की जावेगी। इसके अतिरिक्त मछली उत्पन्न करने की सुविधा भी प्राप्त होगी।

इस योजना के अन्तर्गत चत्रा घाटी में ७५० फीट की ऊँचाई पर नैपाल में, एक विशाल बाँध बनाया जावेगा जिसमें अनन्त जल राशि इकट्ठी की जावेगी। कोसी नदी पर दो बाँध बनाये जायगे —एक नैपाल में दूसरा नैपाल बिहार की सीमा

पर। नैपाल में इसकी नहरों से दस लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होगी और बिहार में पुर्निया, दरभगा, और मुजफ्फरपूर में बीस लाख एकड़ भूमि सींची जावेगी। इसके अतिरिक्त इस योजना से १८ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न होगी। इसको बनाने में ६० करोड़ रुपया व्यय होगा। इस पर कार्य आरम्भ हो गया है।
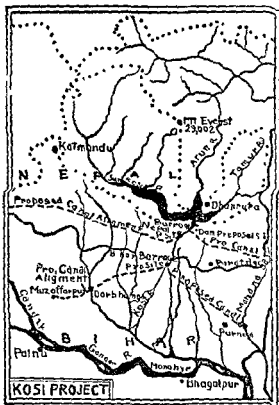
तुंगभद्रा योजना तुंगभद्रा नदी कृष्णा की सहायक नदी है। इस नदी पर एक बाँध बनाया जा रहा है। इससे मदरास और हैदराबाद में तीन लाख एकड़ भूमि सींची जावेगी और मदरास को थोड़ी जल विद्युत् प्राप्त होगी।

राजस्थान में भैंसरोड़ गाढ़ के पास चम्बल नदी पर एक जल विद्युत् योजना तैयार हो रही है जिसके बन जाने पर लगभग एक लाख किलोवाट बिजली तैयार होगी और राजस्थान के मेवाड़ राज्य को बिजली मिल सकेगी। राजस्थान में जोधपूर में जवाई बाँध योजना से सिंचाई होगी।

दूसरा महत्वपूर्ण योजना जिसे उत्तर प्रदेश की सरकार ने स्वीकार कर लिया है वह नायर बाँध (Navar Dam) का है। लैंसडौन (गढ़वाल) के पास नायर नदी के जल का (गंगा का सहायक) ६०० फीट ऊँचा बाँध बनाकर रोका जावेगा और उससे ३०,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न होगी।

इनके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश की अन्य योजनायें इस प्रकार हैं —(१) शारदा नहर से बनबसा के पास बिजली उत्पन्न करना। (२) बेतवा और केन नदियों के जल से बिजली उत्पन्न करना।

दक्षिण में भी कुछ महत्वपूर्ण योजनाएं हैं जिन पर शीघ्र ही कार्य आरम्भ हो जावेगा। इनमें गोदावरी की योजना सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। इस योजना के बन जाने पर २५ लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होगी और १५,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न होगी।

इनके अतिरिक्त महानदी और नर्मदा की भी योजनायें विचाराधीन हैं। भारत सरकार ने एक केन्द्रीय शक्ति बोर्ड बना लिया है जो राज्यों को बिजली उत्पन्न करने के सम्बन्ध में परामर्श देता है। ऐसा प्रतीत होता है कि भविष्य में भारत में यथेष्ट शक्ति उत्पन्न होगी और खेती तथा धन्धों की कायापलट हो जावेगी। जल विद्युत् की उन्नति से गृह-उद्योग धन्धों की भी आश्चर्यजनक उन्नति हो सकेगी।

अभ्यास के प्रश्न

१—भारत की भावी औद्योगिक उन्नति की दृष्टि से क्या भारत कोयले का धनी कहा जा सकता है? कोयले के क्षेत्र तथा भारत के औद्योगिक केन्द्रों की दूरी का ध्यान में रखकर बतलाइए कि हमारे शक्ति के साधन कौन हैं।

२—भारत में कोयला कहाँ पाया जाता है और किस प्रकार का कोयला यहाँ मिलता है विस्तारपूर्वक लिखिए।

३—भारत में जल विद्युत् के उत्पन्न करने में क्या कठिनाइयाँ हैं और भारत जल-शक्ति की दृष्टि से धनी है अथवा निर्धन?

४—भारत की मुख्य जल विद्युत् की योजनाओं का वर्णन कीजिए।

५—दामोदर घाटी योजना का वर्णन कीजिए और बतलाइये कि वह बन कर तैयार हो जावेगी तो विशेष महत्वपूर्ण क्या होगी।

६—जो नवीन योजनायें इस समय देश में जल विद्युत् की तैयार हो रही हैं उनका संक्षिप्त विवरण दीजिए।

७—यदि देश में बिजली बहुत अधिक उत्पन्न होने लगे तो उसका खेती और गृह उद्योग धन्धों पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

उन्नीसवाँ परिच्छेद

सिंचाई (Irrigation)

भारत में जल-वृष्टि

जलवायु के परिच्छेद में हम यह कह आये हैं कि मदरास समुद्रतट को छोड़ कर सारे देश में वर्षा गर्मियों के दिनों में होती है। जून के अन्तिम सप्ताह से लेकर सितम्बर तक यहाँ वर्षा होती है। वर्ष का शेष भाग अधिकतर सूखा रहता है। अतएव आसाम, पश्चिमी बंगाल के कुछ भाग, तराई तथा पश्चिमी समुद्रतट के मैदानों को छोड़ कर जहाँ वर्षा बहुत होती है सारे देश में रबी की फसल उत्पन्न करने के लिए सिंचाई की आवश्यकता होती है। वर्षा केवल मौसमी ही नहीं है किंतु अनिश्चित भी है। किसी वर्ष किसी भाग में वर्षा बहुत देर से आरम्भ होती है और शीघ्र ही समाप्त हो जाती है। कभी वर्षा बहुत जल्दी आरम्भ हो जाती है। वर्षा का केवल समय ही अनिश्चित नहीं है, कितना जल वृष्टि होगी यह भी अनिश्चित है। यदि किसी स्थान की औसत जल वृष्टि ५०' है तो वहाँ किसी वर्ष २५' भी वर्षा हो सकती है और किसी वर्ष ६०' या ७०' भी पानी बरस सकता है। भारत कृषि प्रधान देश है, खेती के लिए निश्चित और समय पर जल वृष्टि होना आवश्यक है। अस्तु भारत में जहाँ वर्षा ५०' से अधिक होती है उन भागों को छोड़ कर शेष भागों में सिंचाई की आवश्यकता है। यही कारण है कि भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से नहर, तालाब, बावड़ी तथा कुएँ बनाने की परिपाटी चली आ रही है। पूर्वी पंजाब, राजस्थान, मध्य भारत, उत्तर प्रदेश, दक्षिण प्रायद्वीप तथा बिहार खेती के लिए सिंचाई पर निर्भर हैं। यदि किसी वर्ष यहाँ वर्षा नहीं होती या कम होती है तो अकाल पड़ जाता है। देश को दुर्भिक्ष से बचाने के लिए सिंचाई के साधनों की बहुत आवश्यकता है। उत्तर पश्चिम के प्रदेश तो साधारणतः सिंचाई पर ही निर्भर हैं वहाँ तो बिना सिंचाई के खेती सम्भव ही नहीं है।

सिंचाई के साधनों की दृष्टि से भारत संसार में प्रथम स्थान रखता है। संसार में जितनी खेती की भूमि सींची जाती है उसका आधी के लगभग भारत

में है। भारत की स्थायी नहरों (Perennial canals) तथा उनकी शाखाओं की लम्बाई ही केवल ७५,००० मील है। संसार के अन्य किसी भी देश में इतनी बड़ी और इतनी अधिक नहरें नहीं हैं। स्थायी नहरों के अतिरिक्त यहाँ अस्थायी

सिंचाई के साधन के क्षेत्र

नहरें (Inundation canals) भी बहुत हैं। नहरों के अतिरिक्त लाखों की संख्या में कुएँ और तालाब हैं। फिर भी भारत की खेतों के लिए सिंचाई पूरी नहीं हो पाती।

भारत में रबी की फसल के लिए अधिकांश प्रदेशों में सिंचाई की आवश्यकता होती है। पूर्वी पंजाब, में बिना सिंचाई के खेती सम्भव नहीं है। कुछ भाग ऐसे हैं जहाँ वर्षा बहुत अनिश्चित है और अकाल की अधिक सम्भावना रहती है। अतएव वहाँ सिंचाई का प्रबंध करना आवश्यक हो गया है।

भारत में सिंचाई के मुख्य साधन हैं—(१) नहरें, (२) कुएँ (३) तालाब। उत्तर पश्चिम में नहरों की अधिकता है। उत्तर के मैदानों में कुओं से सिंचाई अधिक होती है। दक्षिण प्रायद्वीप और मदरास प्रदेश में तालाब और बाँधों से सिंचाई अधिक होती है। वैसे कुएँ प्रत्येक भाग में पाये जाते हैं और उनसे सिंचाई की जाती है। किस भाग में कौन सा सिंचाई का साधन अधिक महत्वपूर्ण है यह वहाँ की भौगोलिक परिस्थिति पर निर्भर है।

पूर्वी तथा पश्चिमी पञ्जाब की नहरें

नहरें नहर दो प्रकार की होती हैं (१) स्थायी नहर (Perennial canal) जो वर्ष भर सिंचाई के उपयोग में आती है। इन नहरों के सिरे पर फाटक इत्यादि से नदियों के पानी का नियन्त्रण किया जाता है जिससे वर्ष भर पानी नहर को मिल सकता . । अस्थायी अथवा बाढ़ वाली नहरें (Inundation canal) उसी समय सिंचाई के उपयोग में आती हैं जब नदी में बाढ़ आती है और नदी में पानी ऊँचा उठ जाता है। जब नदी में पानी नीचा हो जाता है तो ये नहरें व्यर्थ होती जाती हैं।

में है। भारत की स्थायी नहरों (Perennial canals) तथा उनकी शाखाओं की लम्बाई ही केवल ७५,००० मील है। संसार के अन्य किसी भी देश में इतनी बड़ी और इतनी अधिक नहरें नहीं हैं। स्थायी नहरों के अतिरिक्त यहाँ अस्थायी

सिंचाई के साधन के क्षेत्र

नहरें (Inundation canals) भी बहुत हैं। नहरों के अतिरिक्त लाखों की संख्या में कुएँ और तालाब हैं। फिर भी भारत की खेती के लिए सिंचाई पूरा नहीं हो पाती।

भारत में रबी की फसल के लिए अधिकांश प्रदेशों में सिंचाई की आवश्यकता होती है। पूर्वी पंजाब, में बिना सिंचाई के खेती सम्भव नहीं है। कुछ भाग ऐसे हैं जहाँ वर्षा बहुत अनिश्चित है और अकाल की अधिक सम्भावना रहती है। अतएव वहाँ सिंचाई का प्रबंध करना आवश्यक हो गया है।

भारत में सिंचाई के मुख्य साधन हैं—(१) नहरें, (२) कुएँ (३) *तालाब। उत्तर पश्चिम में नहरों की अधिकता है।* उत्तर के *मैदानों में* कुओं से सिंचाई अधिक होती है। दक्षिण प्रायद्वीप और मदरास प्रदेश में तालाब और बाँधों से सिंचाई अधिक होती है। वैसे कुएँ प्रत्येक भाग में पाये जाते हैं और उनसे सिंचाई की जाती है। किस भाग में कौन सा सिंचाई का साधन अधिक महत्वपूर्ण है यह वहाँ की भौगोलिक परिस्थिति पर निर्भर है।

पूर्वी तथा पश्चिमी पंजाब की नहरें

नहरें नहरें दो प्रकार की होती हैं (१) स्थायी नहर (Perennial canal) जो वर्ष भर सिंचाई के उपयोग में आती है। इन नहरों के सिरे पर फाटकों इत्यादि से नदियों के पानी का नियंत्रण किया जाता है जिससे वर्ष भर पानी नहर को मिल सकता। अस्थायी अथवा बाढ़ वाली नहरें (Inundation canal) उसी समय सिंचाई के उपयोग में आती हैं जब नदी में बाढ़ आती है और नदी में पानी ऊँचा उठ जाता है। जब नदी में पानी नीचा हो जाता है तो ये नहरें व्यर्थ होती जाती हैं।

नहरें उसी प्रदेश में बनाई जा सकती हैं जहाँ का नदियाँ बारहों मास बहने वाला हां। उत्तर भारत की सभी नदियाँ हिम आच्छादित हिमालय से निकलता हैं। इस कारण वे दक्षिण भारत की नदियों का भाँति गर्मी में सूखती नहीं। हिम के पिघलने से उनमें पानी बना रहता है। यदि धरातल पथरीला हो तो भी नहरें नहीं निकाली जा सकती क्योंकि नहर खादने में बहुत कठिनाई और बहुत अधिक व्यय होता है। उत्तर भारत में भूमि नरम है। वहीं पत्थर का नाम ही नहीं है। अतएव कम खर्च से नहर खुद सकती है। उत्तर भारत में नदियों का एक जाल सा बिछा हुआ है। इस कारण नहरें आसानी से निकाली जा सकीं। इसके अतिरिक्त उत्तर भारत में भूमि उपजाऊ है। ऊबड़ खाबड़ पठार प्रदेश नहीं है। इस कारण नहर का पानी प्रत्येक पग पर काम में आता है, व्यय में नहीं बहता। उत्तर-पश्चिम में वर्षा कम होने के कारण यहाँ खेती बिना सिंचाई के सम्भव ही नहीं है। यही कारण है भारत के उत्तर पश्चिम भाग में नहरों के द्वारा ही सिंचाई होता है।

इस प्रदेश का अधिकांश नहर पाकिस्तान की आर्थिक उन्नति की कुंजी हैं। पंजाब की नहर इन नहरों में सरहिन्द, ऊपरी चिनाब और रावी नहरें मुख्य हैं।

पूर्वी पंजाब का नहर पूर्वी पंजाब में नीचे लिखी मुख्य नहरें हैं —

पश्चिमी यमुना नहर — यह नहर सन् १८७० में बन कर तैयार हुई (यों यह नहर चौदहवीं शताब्दी में बनाई गई थी)। यह नहर यमुना नदी से निकली है और पूर्वी पंजाब में रोहतक तथा हिसार जिलों में एवं पटियाला तथा झींद रियासतों में ८ १०,००० एकड़ भूमि सींचती है। इस नहर की तीन प्रमुख शाखायें हैं—(१) दिल्ली शाखा, (२) हांसी शाखा (३) और सिरसा शाखा।

सरहिंद नहर — यह नहर सतलज नदी से रूपर के पास निकाली गई है और लुधियाना, फीरोजपूर, हिसार जिलों तथा नाभा राज्य को सींचती है। इस नहर द्वारा १८००,००० एकड़ भूमि की सिंचाई होती है यह नहर सन् १८८९ में बन कर तैयार हुई है। इसमें मिट्टी शीघ्र भर जाती है।

बारी दो आब नहर — यह नहर रावी नदी से माधुपुर के पास निकाली गई है और गुरदासपुर तथा अमृतसर जिलों को सींचती हुई पाकिस्तान के लाहौर जिले में चली जाती है।

सतलज घाटी की नहर १९३३ में बन कर तैयार हुई।

सतलज घाटी की नहरें (विस्तृत विवरण पाकिस्तान के परिच्छेद में पढ़िये) १६३३ में बन कर तैयार हुई थीं। इन नहरों के द्वारा बीकानेर राज्य, (बहावलपूर राज्य तथा पश्चिमी पंजाब में) लगभग पचास लाख एकड़ भूमि की सिचाई हुई। उन्हीं सतलज की नहरों में से एक नहर जो बीकानेर राज्य को सींचती है गंग नहर के नाम से प्रसिद्ध है। बीकानेर में इस नहर के द्वारा तीन लाख एकड़ भूमि की सिचाई होती है। यह इस नहर का ही प्रसाद है कि बीकानेर का गंगानगर का प्रदेश जो किसी समय मरुभूमि के टीलों से भरा था आज लहलहाते खेतों से भरा हुआ है।

राजस्थान की नहरें

बीकानेर की गंग नहर

राजस्थान के जोधपूर राज्य में सिंचाई की योजना शीघ्र ही तैयार हो जावेगी। जिससे जोधपूर राज्य में सिंचाई होगी।

उत्तर प्रदेश की नहरें

उत्तर प्रदेश में साधारणत. वर्षा अच्छी होती है और कुएँ बहुत हैं इस कारण नहरों के बिना भी खेती हो सकती है। पूर्वी पंजाब की भाँति उत्तर प्रदेश नहरों पर नितान्त निर्भर नहीं है। यहाँ की नहर वास्तव में दुर्भिक्ष से प्रदेश की रक्षा करने के लिए बनाई गई हैं। एक बार जब नहरें बन गईं तो फिर वे अधिक सुविधाजनक होने के कारण उपयोग में तो आती ही हैं। उत्तर प्रदेश में सबसे बड़ी नहरें गंगा की दोनों नहरें हैं अपर गंगा नहर तथा लोअर गंगा नहर। उत्तर प्रदेश की तराई में वर्षा अधिक होने के कारण बहुत-सी छोटी-छोटी नदियाँ तराई से निकल कर गंगा के मध्य में मिलती हैं। इससे यह लाभ होता है कि गंगा के ऊपरी भाग में नहर निकल जाने से पानी की जो कमी हो जाती है वह पूरी हो जाती है और बीच में से लोअर गंगा नहर निकाली जा सकी जो गंगा की घाटी के मध्य भाग को सींचती है। उत्तर प्रदेश की सभी बड़ी नदियों के साथ यही बात है। पूर्वी जमुना नहर तथा आगरा नहर जमुना से निकाली गई हैं। ये नहरें जमुना के दाहिने और बायें किनारे के भाग को सींचती हैं। कुछ वर्ष हुए उत्तर प्रदेश की सरकार ने अवध के जिलों में सिंचाई के लिए शारदा नहर निकाली है। शारदा नदी हिमालय से निकलती है। इसमें पानी बहुत है। अतएव इसी नदी से नहर निकाली गई है। यह नहर ६५० मील लम्बी है। इसकी शाखाओं और रजबाहों की लम्बाई ३६०० मील है। शारदा नहर १३ लाख एकड़ भूमि को सींचती है। आगे चल कर लोअर शारदा नहर के बनाने का भी विचार है।

नहरें उसी प्रदेश में बनाई जा सकती हैं जहाँ की नदियाँ बारहों मास बहने वाली हों। उत्तर भारत की सभी नदियाँ हिम आच्छादित हिमालय से निकलती हैं। इस कारण वे दक्षिण भारत की नदियों की भाँति गर्मी में सूखती नहीं। हिम के पिघलने से उनमें पानी बना रहता है। यदि धरातल पथरीला हो तो भी नहरें नहीं निकाली जा सकतीं क्योंकि नहर खोदने में बहुत कठिनाई और कल्पनातीत व्यय होता है। उत्तर भारत में भूमि नरम है। कहीं पत्थर का नाम ही नहीं है। अतएव कम खर्च से नहर खुद सकती है। उत्तर भारत में नदियों का एक जाल सा बिछा हुआ है। इस कारण नहरें आसानी से निकाली जा सकीं। इसके अतिरिक्त उत्तर भारत में भूमि उपजाऊ है। ऊबड़-खाबड़ वीरान प्रदेश नहीं है। इस कारण नहर का पानी प्रत्येक पग पर काम में आता है, व्यर्थ में नहीं बहता। उत्तर-पश्चिम में वर्षा कम होने के कारण यहाँ खेती बिना सिंचाई के सम्भव ही नहीं है। यही कारण है भारत के उत्तर-पश्चिम भाग में नहरों के द्वारा ही सिंचाई होती है।

इस प्रदेश की अधिकांश नहरें पाकिस्तान की आर्थिक उन्नति की कुंजी हैं। पंजाब की नहरें इन नहरों में सरहिन्द, ऊपरी चिनाव और रावी नहरें मुख्य हैं।

पूर्वी पंजाब की नहरें पूर्वी पंजाब में नीचे लिखी मुख्य नहरें हैं —

पश्चिमी यमुना नहर यह नहर सन् १८७० में बन कर तैयार हुई (या यह नहर चौदहवीं शताब्दी में बनाई गई थी)। यह नहर यमुना नदी से निकली है और पूर्वी पंजाब में रोहतक तथा हिसार जिलों पैप्सू की पटियाला तथा झींद रियासत में ८ १०,००० एकड़ भूमि सींचती है। इस नहर की तीन प्रमुख शाखायें हैं—(१) दिल्ली शाखा, (२) हांसी शाखा (३) और सिरसा शाखा।

सरहिंद नहर यह नहर सतलज नदी से रूपर के पास निकाली गई है और लुधियाना, फीरोजपुर, हिसार जिलों तथा नाभा राज्य को सींचती है। इस नहर द्वारा १८,००,००० एकड़ भूमि की सिंचाई होती है यह नहर सन् १८६२ में बन कर तैयार हुई है। इसमें मिट्टी शीघ्र भर जाती है।

बारी दोआब नहर यह नहर रावी नदी से मधुपुर के पास निकाली गई है और गुरदासपुर तथा अमृतसर जिले को सींचती हुई पाकिस्तान के लाहौर जिले में चली जाती है।

सतलज घाटी की नहरें १६३३ में बन कर तैयार हुईं।

सतलज घाटी की नहरें (विस्तृत विवरण पाकिस्तान के परिच्छेद में पढ़िये) १९३३ में बन कर तैयार हुई थीं। इन नहरों के द्वारा बीकानेर राज्य, (बहावलपुर राज्य तथा पश्चिमी पंजाब में) लगभग पचास लाख एकड़ भूमि की सिंचाई हुई। उन्हीं सतलज की नहरों में से एक नहर जो बीकानेर राज्य को सींचती है गंग नहर के नाम से प्रसिद्ध है। बीकानेर में इस नहर के द्वारा तीन लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती है। यह इस नहर का ही प्रसाद है कि बीकानेर का गंगानगर का प्रदेश जो किसी समय मरुभूमि के टीलों से भरा था आज लहलहाते खेतों से भरा हुआ है।

राजस्थान की नहरें

बीकानेर की गंग नहर

राजस्थान के जोधपुर राज्य में सिंचाई की योजना शीघ्र ही तैयार हो जावेगी। जिससे जोधपुर राज्य में सिंचाई होगी।

उत्तर प्रदेश की नहरें

उत्तर प्रदेश में साधारणतः वर्षा अच्छी होती है और कुएँ बहुत हैं इस कारण नहरों के बिना भी खेती हो सकती है। पूर्वी पंजाब की भाँति उत्तर प्रदेश नहरों पर नितान्त निर्भर नहीं है। यहाँ की नहर वस्तुतः दुर्भिक्ष से प्रदेश की रक्षा करने के लिए बनाई गई हैं। एक बार जब नहरें बन गई तो फिर वे अधिक सुविधाजनक होने के कारण उपयोग में तो आती ही हैं। उत्तर प्रदेश में सबसे बड़ी नहरें गंगा की दोनों नहरें हैं अपर गंगा नहर तथा लोअर गंगा नहर। उत्तर प्रदेश की तराई में वर्षा अधिक होने के कारण बहुत-सी छोटी-छोटी नदियाँ तराई से निकल कर गंगा के मध्य में मिलती हैं। इससे यह लाभ होता है कि गंगा के ऊपरी भाग में नहर निकल जाने से पानी की जो कमी हो जाती है वह पूरी हो जाती है और बीच में से लोअर गंगा नहर निकाली जा सकी जो गंगा की घाटी के मध्य भाग को सींचती है। उत्तर प्रदेश की सभी बड़ी नदियों के साथ यही बात है। पूर्वी जमुना नहर तथा आगरा नहर जमुना से निकाली गई हैं। ये नहरें जमुना के दाहिने और बायें किनारे के भाग को सींचती हैं। कुछ वर्ष हुए उत्तर प्रदेश की सरकार ने अवध के जिलों में सिंचाई के लिए शारदा नहर निकाली है। शारदा नदी हिमालय से निकलती है। इसमें पानी बहुत है। अतएव इसी नदी से नहर निकाली गई है। यह नहर ६५० मील लम्बी है। इसकी शाखाओं और बम्बों की लम्बाई ३६०० मील है। शारदा नहर १३ लाख एकड़ भूमि को सींचती है। आगे चल कर लोअर शारदा नहर के बनाने का भी विचार है।

उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग में वर्षा कम होती है अतएव यह भाग नहरों पर खेती के लिए निर्भर रहता है। उत्तर भारत में नीचे लिखी मुख्य नहरें हैं।

यह नहर हरिद्वार के पास गंगा से निकाली गई है। यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण नहर है। सन् १८५४ में यह बन कर तैयार हुई। रुड़की तक आने में इस नहर को बहुत ऊँचा नीची भूमि पर से बहना पड़ता है इसके फल स्वरूप इस नहर को सात स्थानों पर जल प्रपात के रूप में गिरना पड़ता है। इन्हीं जल प्रपातों पर
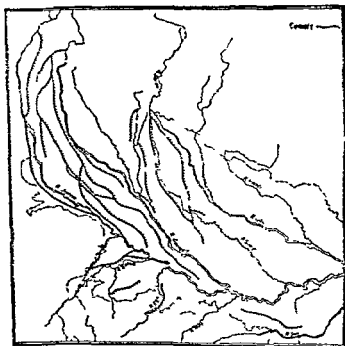
उत्तर प्रदेश की नहरें

जल-विद्युत् उत्पन्न की जाती है। इस नहर से दोआब के उत्तरी भाग में दस लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होती है। इस नहर की लम्बाई २१३ मील है परन्तु इसकी शाखाओं और उपशाखाओं की लम्बाई ३४०० मील है। यह नहर निचली गंगा नहर तथा आगरा नहर को भी पानी देता है।

यह नहर यमुना के दाहिने किनारे से देहली से ११ मील दूर ओखला नामक स्थान पर निकाली गई है। यह १८७४ में बन कर तैयार हुई। यह नहर देहली, गुड़गाँव, मथुरा और आगरा जिलों में २,८०,००० एकड़ भूमि को सींचती है।

आगरा नहर

यह नहर गंगा नदी से बुलन्दशहर जिले में नरौरा स्थान पर निकाला गई है और सन् १८७८ में बन कर तैयार हुई। इसके द्वारा लगभग दस लाख एकड़ भूमि सींची जाती है।

लोअर गंगा नहर

शारदा नहर भी उत्तर प्रदेश की एक महत्वपूर्ण नहर है। यह १६२८ में बन कर तैयार हुई। यह नैनीताल की सीमा के पास बनबसा स्थान से शारदा नदी से निकाली गई है। यह नहर रुहेलखण्ड और उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग को सींचती है।

शारदा नहर

सन् १६४१ में इस नहर को ३५२ मील लम्बी बढ़ा कर इसके पूर्वी सिंचाई के प्रदेश में १२५,००० एकड़ भूमि की और वृद्धि की गई। सन् १६४६ में सरकार ने अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन को गति देने के लिए इस नहर को ८०० मील और लम्बी करने की आज्ञा दी। शारदा नहर को लम्बा बढ़ाने का यह काय अब समाप्त हो गया है और उससे सिंचाई के क्षेत्र में और अधिक वृद्धि होगी। इस नहर से कुल मिलाकर ६० लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होती है।

यह नहर उत्तर प्रदेश के उत्तर पूर्वी भाग में सिंचाई करती है। यह फीरोज़ाबाद के पास यमुना नदी से निकाली गई है। इसकी शाखाओं तथा उपशाखाओं सहित लम्बाई ६०० मील है और इसके द्वारा मेरठ, सहारनपुर, मुज़फ़्फ़रनगर जिलों में चार लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होती है।

पूर्वी यमुना नहर

यह नहर बेतवा नदी से निकाला गई है और बुंदेलखंड में सिंचाई करती है।

बेतवा नहर

उत्तर भारत में जैसे-जैसे हम पूर्व की ओर बढ़ते जाते हैं वर्षा की अधिकता होती जाती है और उसकी अनिश्चितता कम होती जाती है। इस कारण सिंचाई की जरूरत भी कम होती जाती है। बिहार में भी वर्षा की अधिक कमी न होने के कारण सिंचाई की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती केवल उत्तर प्रदेश से सटे हुए उत्तरी बिहार में ही सिंचाई की आवश्यकता होती है। उत्तरी बिहार में सोन और त्रिवेणी नदियों की नहरें ही मुख्य हैं। ये नहरें सिंचाई करने और नावें चलाने दोनों ही काम में आती हैं।

बिहार की नहरें

सोन नदी से तीन नहरें निकाली गई हैं —(१) देहरी से बक्सर (२) देहरी से आरा, (३) देहरी से दीघा (पटना)।

त्रिवेणी की नहर गंडक नदी से निकाली गई है जो चम्पारन जिले को सींचती है।

प० बंगाल में सिंचाई के लिए केवल दो नहरें हैं —(१) मिदनापुर नहर (२) एडन नहर। मिदनापुर नहर मिदनापुर के पास कोसी नदी से निकलकर पूर्व में हुगली नदी से मिल जाती है। इस नहर का उपयोग सिंचाई करने और नाव चलाने दोनों के लिए होता है। किन्तु हुगली के पास यह केवल नाव चलाने के काम में आती है। इस नहर से अधिकतर चावल की सिंचाई होती है। एडन नहर दामोदर नदी से निकाली गई है। इससे बर्दवान जिले में सिंचाई होती है।

प० बंगाल की नहरें

इनके अतिरिक्त प० बंगाल में सोन, रूपनारायन, बेमरा नदियों से भी नहरें निकाली गई हैं किन्तु उनका उपयोग अधिकतर माल ढोने, पानी के लिए पानी देने तथा नीचे मैदानों के व्यर्थ पानी को बहा ले जाने के लिए होता है।

उत्तर प्रदेश में अधिकतर सिंचाई कुओं से होती है। नहरें केवल ३५ लाख एकड़ भूमि को सींचती हैं। अतएव नहरों की अपेक्षा कुएँ अधिक महत्वपूर्ण हैं। हाँ पश्चिमी जिलों में नहरें महत्वपूर्ण हैं। उत्तर प्रदेश में कुल जोती जाने वाली भूमि का ८३% भूमि सींची जाती है और नहरें इसकी तिहाई भूमि सींचती हैं। उत्तर प्रदेश में नहरों से एक यह भी लाभ है कि इनके कारण नदियों में अधिक बाढ़ नहीं आती। गेहूं, कपास, गन्ना सींची जाने वाली फसलों में मुख्य हैं।

मद्रास प्रदेश में भी नहरें महत्वपूर्ण सिंचाई के साधन हैं। मद्रास में जितनी भूमि सींची जाती है उसकी एक तिहाई नहरों से सींची जाती है। ये नहरें महानदी, गोदावरी, कृष्णा तथा कावेरी के डेल्टा में हैं। इन नदियों के डेल्टा में इतनी नमी नहीं है कि सिंचाई की आवश्यकता ही न पड़े। पूर्वी तट पर वर्षा अधिकतर जाड़ा में होती है। इस कारण गर्मियों की फसलों को सिंचाई की आवश्यकता होती है। बंगाल की खाड़ी में गिरने वाली नदियाँ उन प्रदेशों से निकली हैं जहाँ गर्मियों में वर्षा होती है अतएव गर्मियों (जुलाई, अगस्त, सितम्बर) में इन नदियों और नहरों में खूब पानी रहता है। इन नहरों का उपयोग माल लाने और ले जाने में भी होता है क्योंकि डेल्टा प्रदेश में रेलों का अधिक विस्तार नहीं हुआ है। नहरों से सींचे जाने वाली फसलों में चावल, ज्वार, बाजरा और कपास मुख्य हैं। कावेरी के डेल्टा में पहले बाढ़ वाली नहरें थीं। इस कारण सिंचाई में असुविधा होती थी

मद्रास की नहरें

मदरास सरकार ने कावेरी पर मैसूर में एक बहुत बड़ा बाँध बनवाया है जो ६०,००० क्यूबिक फीट पानी को रोक सकेगा। इस बाँध से ८८ मील लम्बी नहर निकाली गई है। इस बाँध के बन जाने से यह लाभ हुआ है कि १० लाख एकड़ भूमि जिसकी पहले सिंचाई ठीक नहीं होती थी अब भली प्रकार सींची जाती है और तीन लाख एकड़ भूमि और भी अधिक सींची जाती है जिस पर अब चावल की खेती होती है।
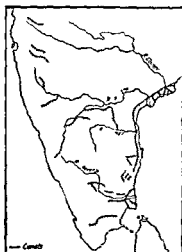
दक्षिण भारत की नहरें

दक्षिण की अन्य नहरें

इनके अतिरिक्त दक्षिण में निम्नलिखित मुख्य नहरें हैं—(१) भदरदरा बाँध की नहरें—पश्चिमी घाट के समीप ऊँचे बाँधों को बना कर गहरी घाटियों में पानी को रोक कर सिंचाई की जाती है। इनमें भदरदरा विशेष उल्लेखनीय है। यह संसार के अत्यन्त ऊँचे बाँधों में से है। बम्बई प्रदेश के अहमदनगर जिले में भदरदरा में प्रवरा नदी पर २७० फीट ऊँचा एक विशाल बाँध बनाया गया है। पश्चिमी घाट की वर्षा का पानी इसमें इकट्ठा होता है और इससे नहरें निकाल कर सिंचाई की गई है। भदरदरा के बाँध से प्रवरा की नहरों को पानी मिलता है जिससे उस भाग में गन्ने की खेती बहुत होती है। दूसरा बाँध भाटगर में है जो लायड (Lloyd) बाँध के नाम से प्रसिद्ध है। इससे निरा की नहरों को पानी मिलता है। निरा की नहरों से ६,७५००० एकड़ भूमि सींची जाती है। इन नहरों के फल स्वरूप इन घाटियों में गन्ने की खेती बहुत बढ़ गई है।

इन नहरों के अतिरिक्त दक्षिण में पैरियर की नहर (Periyar Project) विशेष महत्वपूर्ण है। पैरियर नदी कारडेमम की पहाड़ियों से निकल कर पश्चिम की ओर अरब सागर में बहती थी। इन पहाड़ियों के पूर्व में मदरास व मदुरा तथा तिनेवली जिले थे जिन्हें पानी की बहुत आवश्यकता थी। अतएव पश्चिम की तरफ एक बड़ा बाँध (१७५ फीट ऊँचा) बना कर नदी को एक झील में परिणत कर दिया गया। इस झील से १५० मील लम्बी एक नहर निकाली गई है जो पहाड़ में १½ मील लम्बी सुरंग (Tunnel) बनाकर पूर्व की तरफ लाई गई है और पूर्व के शुष्क जिलों को सींचती है।

गोदावरी की नहरें — गोदावरी नदी पर वेल झील के पास एक ९० फीट ऊँचा बाँध बनाकर उसके दोनों किनारों से नहरें निकाली गई हैं। ये नहरें लगभग ११७ मील लम्बी हैं। नासिक और अहमदनगर जिलों के एक ऐसे हिस्से में सिंचाई करती हैं जहाँ बहुधा दुर्भिक्ष पड़ा करता है।

भारत में लगभग ५ करोड़ एकड़ भूमि सींची जाती है। इस सींची हुई भूमि की आधी नहरों के द्वारा सींची जाती है, शेष कुओं और तालाबों से सींची जाती है। भारत में सिंचाई के लिए इतने साधन इकट्ठे करने पर भी केवल २०% खेती की भूमि सींची जाती है। ८०% वर्षा के जल पर ही अवलम्बित है।

जहाँ नहरों के बन जाने से सिंचाई की सुविधा हो गई है वहाँ कुछ कठिनाइयाँ भी उपस्थित हो गई हैं। नहरों के पानी से खेत सींचने पर किसान को जितना पानी उसने लिया है उसके अनुसार आबपाशी नहीं देनी होती वरन् उसने कितने बीघा जमीन सींची है उसके अनुसार देनी होती है। भिन्न भिन्न फसलों के लिए प्रति बीघा आबपाशी की दर भिन्न है। किसान चाहे कम पानी ले अथवा ज्यादा ले उसे निर्धारित आबपाशी देनी होगी। इसका परिणाम यह होता है कि किसान खेत में आवश्यकता से अधिक पानी दे देता है जिससे खेत को हानि पहुँचती है। उत्तर प्रदेश में तो इसी कारण बहुत सी भूमि पर रेह (alkali) जम गया। साधारणतः विश्वास किया जाता है कि नहर के पानी से सींची हुई फसल कुयें के पानी से सींची हुई फसल से कम होती है। किसान को नहर पर निर्भर रहना पड़ता है। कभी कभी जब उसकी फसल को पानी की अत्यन्त आवश्यकता होती है तब नहर में पानी नहीं आता और किसान को कठिनाई का सामना करना पड़ता है। फिर भी नहरों से देश को कल्पनातीत लाभ हुआ है और खेती का विस्तार हुआ है।

भारत में कुएँ अत्यन्त प्राचीन काल से सिंचाई के काम में आते रहे हैं। निर्धन किसान के लिए कुएँ ही अधिक उपयुक्त हैं क्योंकि

कुएं

वह अपने खेतों पर स्वयं कुएँ बना सकता है। उत्तर भारत में जिन स्थानों पर पानी बहुत गहरा नहीं है कच्चा कुआँ १००) में तैयार हो जाता है और पक्का कुआँ ३५०) में तैयार हो जाता है। यही कारण है कि भारतीय किसान कुओं का बहुत उपयोग करता है। हाँ दक्षिण प्रायद्वीप तथा मध्य भारत में कुओं में अधिक व्यय होता है क्योंकि वहाँ का धरातल पथरीला है। केवल किसान की आर्थिक दृष्टि से ही कुएँ उपयुक्त नहीं हैं वरन् भौगोलिक दृष्टि से भी भारत के अधिकांश भाग में कुएँ सिंचाई के लिए उपयुक्त हैं। भारत के अधिकांश भाग में मटियार मिट्टी है जिसके नीचे चिकनी मिट्टी की तह मिलती है। जो वर्षा का जल मिट्टी से छन-छन कर अन्दर पहुँचता है उसको चिकनी मिट्टी अधिक अन्दर नहीं जाने देती। जब कुएँ खोदे जाते हैं तो चिकनी मिट्टी के तह के समीप जल-स्रोत मिल जाता है। साधारणतः भारत में इसी प्रकार के सोते वाले कुएँ (Spring wells) हैं। जहाँ चिकनी मिट्टी की तह अधिक मोटी है वहाँ ट्यूब वेल (Tube well) बनाने से बहुत पानी मिल सकता है। किन्तु ट्यूब वेल के बनाने में व्यय अधिक होता है तथा उसके पानी को निकालने के लिये यान्त्रिक शक्ति (Machine Power) की आवश्यकता पड़ती है।

कुएं की उपयोगिता पृथ्वी के अन्दर बहने वाले जल पर निर्भर रहती है। पृथ्वी के अन्दर बहने वाला जल, वर्षा का जल, तराई में जो जल पृथ्वी द्वारा सोख लिया जाता है और नहरों तथा नदियों के जल का वह भाग जिसे पृथ्वी सोख लेती है, निर्भर रहता है। यदि वर्षा अधिक हो तो अन्दर पानी अधिक होगा। किन्तु पृथ्वी उसी समय जल अधिक सोखती है जबकि जल धीरे धीरे बहता हो। यदि पृथ्वी में जल बहुत गहराई पर मिलता है तो कुओं की सिंचाई के लिये उपयोगिता कम होती है क्योंकि सिंचाई में व्यय अधिक होता है। भारत में बहुत से भागों में पानी बहुत गहराई पर मिलता है। कुछ स्थानों पर कुओं का जल खारा होता है। खारा जल भी सिंचाई के काम में नहीं आ सकता। कहीं कहीं वर्षा न होने से अथवा कम होने से कुएँ सूख जाते हैं। ऐसे प्रदेशों में जब पानी की बहुत आवश्यकता होती है तभी कुओं में पानी नहीं होता।

निम्नलिखित प्रदेश मुख्यतः कुओं पर सिंचाई के लिए निर्भर हैं:—उत्तर प्रदेश-विशेषकर पूर्वी भाग, बिहार तथा पश्चिमी बंगाल। काली कपास वाली मिट्टी का प्रदेश, तथा मदरास और बम्बई प्रदेशों के दक्षिण जिले। इससे यह न समझना-

चाहिये कि अन्य भागों में कुआ से सिंचाई नहीं होती। राजस्थान के दक्षिणी भाग, पूर्वी पंजाब, मध्य भारत तथा मध्यप्रदेश भी बहुत कुछ कुओं पर निर्भर हैं। कुओं के द्वारा भारत में कुल सींची जाने वाली भूमि की एक चौथाई भूमि पर सिंचाई होती है। हिमालय की तराई, आसाम तथा पश्चिमी समुद्रतट में कुएँ बहुत कम हैं। प्राय सिंचाई के लिए उनका उपयोग नहीं होता। भारत में सबसे अधिक कुएँ उत्तर प्रदेश में हैं।

प्रदेशों में कुओं की संख्या

प्रदेश	क्षेत्रफल (एकड़ों में)	कुओं की संख्या
मदरास	१,३८८,०००	६४५,०००
बम्बई	७६८,०००	२६०,०००
उत्तर प्रदेश	५,५५४,०००	१,१३५,०००
पू० पंजाब	४,७४६,०००	३४०,०००
मध्यप्रदेश	१३४,०००	१२६,०००

भारत में कुओं के द्वारा लगभग ३ करोड़ भूमि पर सिंचाई होती है। कुओं में से पानी निकालने के लिए मनुष्य, पशु और आयल एंजिन तथा बिजली सभी का उपयोग होता है।

ऐसा कोई प्रदेश देश में नहीं है जहाँ कुओं की संख्या को बढ़ाया नहीं जा सकता। अब सरकार का ध्यान इस ओर गया है। यदि सरकार किसानों को आर्थिक सहायता दे तो कुओं की संख्या में विशेष वृद्धि हो सकती है। खाद्य समस्या को हल करने के लिए प्रादेशिक सरकारें किसानों को कुयें बनाने के लिए सहायता देती हैं।

उत्तर प्रदेश के ट्यूब वेल

कुछ वर्षों से उत्तर प्रदेश के कतिपय जिलों में सरकार ने ट्यूब वेल खुदवाये हैं जो गंगा नहर के पानी से उत्पन्न हुई बिजली से चलते हैं। अभी बदायूँ, मुजफ्फरनगर, बिजनौर, मेरठ, बुलन्दशहर, अलीगढ़ और मुरादाबाद जिलों में ही ट्यूब वेल खोदे गए हैं। एक ट्यूब वेल के तैयार करने में लगभग दस हजार रुपया व्यय होता है और वह एक हजार एकड़ को सींच सकता है। उत्तर प्रदेश में लगभग दो करोड़ रुपये व्यय करके लगभग १८०० ट्यूब वेल खोदे गए हैं और उनसे इन जिलों में सिंचाई होती है। जैसे अन्य जिलों में बिजली पहुँचती जावेगी वैसे ही वैसे वहाँ भी ट्यूब वेल खोदे जायेंगे। भविष्य में उत्तर प्रदेश में

ट्यूब वेल सिंचाई का एक महत्वपूर्ण साधन बन जायेगा। प्रादेशिक सरकार १५०० ट्यूब वेल और बनाने जा रही है।

ट्यूब वेल की सिंचाई के कुछ लाभ हैं जो नहरों द्वारा सिंचाई करने से प्राप्त नहीं होते। (१) ट्यूब वेल को एक बार बना देने के उपरान्त उसकी देख भाल तथा प्रबंध में बहुत कम व्यय होता है। इस कारण पानी सस्ते मूल्य पर दिया जा सकता है। (२) कुओं का पानी नहरों के पानी की अपेक्षा फसलों के लिए अधिक लाभदायक है। (३) प्रत्येक ट्यूब वेल पर एक आपरेटर (कर्मचारी) रहता है जो किसान के माँगने पर कुएँ को चलाकर पानी किसान को दे देता है। अर्थात् किसान को पानी की प्रतीक्षा नहीं करना पड़ती। जब उसे आवश्यकता होती है तभी उसे ट्यूब वेल से पानी मिल जाता है। नहरों से जल के लिए कभी कभी बहुत लम्बी प्रतीक्षा करनी पड़ती है। ट्यूब वेल पर मीटर लगा हुआ रहता है अतएव किसान जितना पानी लेता है उतना नाप लिया जाता है और उसी के अनुसार किसान को आबपाशी देनी होती है। इसका फल यह होता है कि किसान पानी की किफायत करता है।

ट्यूब वेल से एक लाभ और हुआ है। जो नहरें पश्चिमी जिलों की ओर बहती हैं वे जब अधिक पश्चिम में पहुँचती हैं तब उनमें पानी बहुत कम रह जाता है जिससे सिंचाई पूरी नहीं हो पाती। अब उन नहरों के दोनों ओर, उन जिलों में जहाँ पानी अधिक बरसता है और नहरों के पानी की अधिक आवश्यकता नहीं होती, ट्यूब वेल बनाये गए हैं जो पृथ्वी के नीचे बहने वाले पानी को नहर में डालते हैं जिससे नहरों में पानी अधिक रहे और पश्चिमी जिलों में ठीक प्रकार से सिंचाई हो सके।

आरम्भ में यह भय था कि इन ट्यूब वेलों के बनाने से कहीं पृथ्वी के नीचे का पानी अधिक गहराई पर न चला जाये। यदि पृथ्वी के अन्दर बहने वाला पानी अधिक गहराई पर चला जाये तो सोत के कुएँ सब सूख जायें और प्रदेश में खेती को भयंकर हानि होने की सम्भावना उत्पन्न हो जाये। उत्तर प्रदेश की सरकार ने इस बात की जाँच के लिए तीन विशेषज्ञों की कमेटियाँ बिठाईं। उन सबों का यही मत है कि ट्यूब वेल जितना पानी पृथ्वी से प्रतिवर्ष निकालेंगे उससे अधिक पानी प्रतिवर्ष पृथ्वी के अन्दर पहुँचता रहेगा। इस कारण अन्दर का पानी अधिक गहराई पर नहीं जा सकता।

अहमदाबाद की मिलों के लिए २१ ट्यूब वेल बनाये गए हैं जो चार लाख गैलन पानी प्रति घंटे देते हैं।

भारत में पाताल फोड़ (Artesian) कुएँ नहीं हैं। पाताल फोड़ कुओं को बनाने के लिये ६००० से १०००० फीट तक गहरा खोदना पड़ता है। अहमदाबाद के समीप छालोदा में एक पाताल फोड़ कुआँ है जो प्रतिदिन ६५०,००० गैलन पानी देता है। रात दिन कुएँ से पानी अन्दर के दबाव के कारण स्वयं निकल कर बहता है। सरकार गुजरात ने कुछ गाँवों में पाताल फोड़ ट्यूब वेल बनाने का विचार कर रही है।
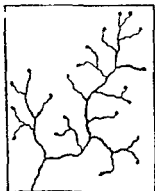
तालाब द्वारा इस प्रकार सिंचाई होती है

भारत में लगभग २०% (११७ लाख एकड़) सिंचाई कुओं द्वारा होती है। कुओं से पानी मनुष्यों द्वारा, बैल द्वारा, ढेंकुली, चरस, रहट, या तेल के इञ्जनों द्वारा निकाला जाता है। कुओं के द्वारा सिंचाई उत्तर प्रदेश में ५१ ५% पूर्वी पंजाब २८.४% और राजस्थान में अधिक होती है।

तालाब

तालाब भी सिंचाई के महत्वपूर्ण साधन हैं। दक्षिण प्रायद्वीप में तालाबों से सिंचाई होती है। राजस्थान, मध्यभारत हैदराबाद तथा मैसूर राज्यों में बड़े-बड़े बाँध बनाकर झीलें बनाई गई हैं जिनसे सिंचाई होता है। राजस्थान में उदयपुर, अलवर, भरतपुर, मध्य भारत में इंदौर, भूपाल और ग्वालियर में बड़े-बड़े तालाब बनाये गए हैं। उदयपुर की ढेबर झील (जय समुद्र) भारत का सबसे बड़ी नकली झीलों में से है। इसका क्षेत्रफल ५४ वर्ग मील है। हैदराबाद का निजाम सागर तथा मैसूर का कृष्ण राजा सागर नामक तालाबों से बहुत सिंचाई होती है। मैसूर के कृष्ण राजा सागर के पानी से बिजली उत्पन्न होने के अतिरिक्त १२०,००० एकड़ भूमि की सिंचाई होती है। दक्षिण भारत, मध्य भारत, दक्षिण राजस्थान तथा उत्तरी बिहार में तालाबों से सिंचाई अधिक होती है।

भारत में मदरास तथा उत्तर बिहार में तालाबों के द्वारा सिंचाई बहुत होती है। केवल मदरास प्रदेश में ३५,००० छोटे बड़े तालाब हैं जिनसे लगभग तीस लाख एकड़ भूमि सींची जाती है। बुन्देलखण्ड तथा मध्यप्रदेश में भी तालाब हैं।

दक्षिण प्रायद्वीप में ही अधिकतर तालाब पाये जाते हैं। इसका कारण यह है कि दक्षिण की नदियाँ गर्मी में सूख जाती हैं। अतः उनसे नहरें नहीं निकाली

भारत और पाकिस्तान के विभिन्न प्रदेशों म सिंचाई के साधन

जा सकतीं। पृथ्वी भी पथरीली है। इस कारण नहरें नहीं खोदी जा सकतीं। हाँ कुओं का सिंचाई के लिए अवश्य उपयोग होता है परन्तु कुओं के खुदवाने में भी व्यय बहुत होता है (१००० रु० के लगभग)। दक्षिण के पहाड़ी प्रदेश में बरसात के दिनों में सैकड़ों छोटे छोटे नदी नाले बरसात के पानी को बहा ले जाते हैं। गाँव के लोग बाँध बनाकर उन नालों को रोक देते हैं। भूमि पथरीली होने के कारण पानी को नहीं सोखती। गाँव की पंचायत इन तालाबों की देखभाल करती है और बाँध की मरम्मत करवाती है। दक्षिण में इन तालाबों को पटवँधा कहते हैं।

यह तो पहले ही बताया जा चुका है कि भारत में २०% खेती की मिट्टी सींची जाती है। कतिपय प्रदेशों में सिंचाई के साधनों के सम्बन्ध में नीचे दिए हुए आँकड़ों से प्रकाश पड़ेगा।

नाम	नहर	कुआँ	तालाब	अन्य
मदरास	४१%	१८%	३६%	५%
बम्बई	७९%	१४%	—	७%
उत्तर-प्रदेश	२३%	५१%	—	२६%

भारत में पाताल फोड़ (Artesian) कुएँ नहीं हैं। पाताल फोड़ कुओं को बनाने के लिये ६००० से १०००० फीट तक गहरा खोदना पड़ता है। अहमदाबाद के समीप ढालोदा में एक पाताल फोड़ कुआँ है जो प्रतिदिन ६५०,००० गैलन पानी देता है। रात दिन कुएँ से पानी अन्दर के दबाव के कारण स्वयं निकल कर बहता है। सरकार गुजरात ने कुछ गाँवों में पाताल फोड़ ट्यूब वेल बनाने का विचार कर रही है।

तालाब द्वारा इस प्रकार सिंचाई होती है

भारत में लगभग २०% (११७ लाख एकड़) सिंचाई कुओं द्वारा होती है। कुओं से पानी मनुष्यों द्वारा, बैल द्वारा, ढेंकुली, चरस, रहट, या तेल के इंजनों द्वारा निकाला जाता है। कुओं के द्वारा सिंचाई उत्तर प्रदेश में ५१.५% पूर्वी पंजाब २५.४% और राजस्थान में अधिक होती है।

तालाब

तालाब भी सिंचाई के महत्वपूर्ण साधन हैं। दक्षिण प्रायद्वीप में तालाबों से सिंचाई होती है। राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद तथा मैसूर राज्यों में बड़े-बड़े बाँध बनाकर झीलें बनाई गई हैं जिनसे सिंचाई होती है। राजस्थान में उदयपूर, अलवर, भरतपुर, मध्य भारत में इंदौर, भूपाल और ग्वालियर में बड़े-बड़े तालाब बनाये गए हैं। उदयपूर की ढेबर झील (जय समुद्र) भारत की सबसे बड़ी नकली झीलों में से है। इसका क्षेत्रफल ५४ वर्ग मील है। हैदराबाद का निजाम सागर तथा मैसूर का कृष्ण राजा सागर नामक तालाबों से बहुत सिंचाई होती है। मैसूर के कृष्ण राजा सागर के पानी से बिजली उत्पन्न होने के अतिरिक्त १२०,००० एकड़ भूमि की सिंचाई होती है। दक्षिण भारत, मध्य भारत, दक्षिण राजस्थान तथा उत्तरी बिहार में तालाबों से सिंचाई अधिक होती है।

भारत में मदरास तथा उत्तर बिहार में तालाबों के द्वारा सिंचाई बहुत होती है। केवल मदरास प्रदेश में ३५,००० छोटे बड़े तालाब हैं जिनसे लगभग तीस लाख एकड़ भूमि सींची जाती है। बुन्देलखंड तथा मध्यप्रदेश में भी तालाब हैं।

दक्षिण प्रायद्वीप में ही अधिकतर तालाब पाये जाते हैं। इसका कारण यह है कि दक्षिण की नदियाँ गर्मी में सूख जाती हैं। अस्तु उनसे नहरें नहीं निकाली

Punjab
U.P
Madras
Bihar
Sind
Rest of India
Canals
Wells
Tanks
Other Sources
billion acres

भारत और पाकिस्तान के विभिन्न प्रदेशों में सिंचाई के साधन

जा सकतीं। पृथ्वी भी पथरीली है। इस कारण नहरें नहीं खोदी जा सकतीं। हाँ कुओं का सिंचाई के लिए अवश्य उपयोग होता है परन्तु कुओं के खुदवाने में भी व्यय बहुत होता है (१००० रु० के लगभग)। दक्षिण के पहाड़ी प्रदेश में बरसात के दिनों में सैकड़ों छोटे-छोटे नदी नाले बरसात के पानी को बहा ले जाते हैं। गाँव के लोग बाँध बनाकर उन नालों को रोक देते हैं। भूमि पथरीली होने के कारण पानी को नहीं सोखती। गाँव की पंचायत इन तालाबों की देखभाल करती है और बाँध की मरम्मत करवाती है। दक्षिण में इन तालाबों को एरबँधा कहते हैं।

यह तो पहले ही बताया जा चुका है कि भारत में २०% खेतों की मिट्टी सींची जाती है। कतिपय प्रदेशों में सिंचाई के साधनों के सम्बन्ध में नीचे दिए हुए आँकड़ों से प्रकाश पड़ेगा।

प्रान्त	नहर	कुआँ	तालाब	अन्य
मद्रास	४१%	१९%	३६%	५%
बम्बई	७९%	१४%	—	७%
उत्तर-प्रदेश	२१%	५१%	—	२८%

बीसवाँ परिच्छेद

खेती (Agriculture)

भारत में खेती का महत्त्व

भारत कृषिप्रधान देश है। लगभग ७३% जनसंख्या प्रत्यक्ष रूप से खेती पर निर्भर है। इसी से कृषि का महत्व स्पष्ट है। गाँवों में किसानों के अतिरिक्त खेत मजदूर, बढ़ई, लुहार इत्यादि जो कारीगर हैं वे भी खेती पर ही निर्भर हैं। संसार में चीन के अतिरिक्त अन्य किसी भी देश में इतने अधिक मनुष्य खेती पर निर्भर नहीं हैं। यदि किसी वर्ष वर्षा की कमी से अथवा अन्य प्राकृतिक कारणों से फसलें नष्ट हो जाती हैं तो भारत का आर्थिक ढाँचा हिल उठता है। फसलों के नष्ट हो जाने से विदेशों को भेजी जानी वाली वस्तुएँ कम हो जाती हैं। किसान के पास रुपया नहीं होता। इस कारण वह विदेशों से आने वाले माल तथा भारतीय मिलों में तैयार माल को खरीद नहीं सकता। दूसरे शब्दों में भारत का व्यापार कम हो जाता है और उद्योग धन्धे शिथिल पड़ जाते हैं। सरकार को पूरी मालगुजारी नहीं मिलती। रेलों को माल ढोने के लिए कम मिलता है, किसान मेले और यात्राओं को कम जाते हैं। अतएव उन्हें घाटा होता है। कहने का तात्पर्य यह कि देश का सम्पूर्ण आर्थिक ढाँचा खेती पर अवलम्बित है।

खेती की दशा

जिस धन्धे पर देश की लगभग तीन चौथाई जनसंख्या निर्भर है उसकी दशा अत्यन्त गिरी हुई है। भारत में प्रति एकड़ भिन्न भिन्न फसलों की पैदावार अन्य देशों की अपेक्षा बहुत कम है। जहाँ प्रति एकड़ भारत में ८५ पौंड कपास उत्पन्न होती है वहाँ संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रति एकड़ २५० पौंड और मिश्र में ४०० पौंड कपास प्रति एकड़ उत्पन्न होती है। भारत में प्रति एकड़ इंगलैंड की तुलना में चौथा हिस्सा गेहूँ और जौ उत्पन्न होता है। क्यूबा और जावा की तुलना में

यहाँ प्रति एकड़ पैदावार बहुत ही कम होती है इसका मुख्य कारण यह है कि यहाँ वैज्ञानिक ढंग से खेती नहीं होती। बिना वैज्ञानिक ढंग से गहरी खेती (Intensive cultivaton) किये पैदावार बढ़ाई नहीं जा सकती। यही कारण है कि भारतीय किसान इतना निर्धन है। भारत की भूमि बहुत उपजाऊ है और जलवायु भी खेती के लिए अनुकूल है फिर भी जो यहाँ खेती की दशा अच्छी नहीं है उसके निम्न-लिखित मुख्य कारण हैं :—

(१) भारत में जनसख्या की बढ़वार के कारण अधिकाधिक जन-सख्या खेती-बारी पर निर्भर होती गई क्योंकि यहाँ उद्योग-धन्धों की उन्नति नहीं हुई है। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक किसान के पास भूमि बँटते बँटते बहुत कम रह गई। और वह थोड़ी सी मिट्टी भी एक चक में न होकर छोटे-छोटे टुकड़ों में इधर-उधर बिखरी होती है। यदि किसी किसान के पास कुल बीस बीघा जमीन है तो पाँच बीघा एक जगह, दो बीघा दूसरी जगह, १० बीघा तीसरी जगह और शेष चौथी जगह होती है। खेती के बिखरे होने के कारण किसान का बहुत सा समय नष्ट होता है, वह कुआँ बना कर सिंचाई नहीं कर सकता, फसल की रखवाली नहीं हो पाती। संक्षेप में खेती अच्छी तरह से नहीं हो सकती और खर्चा अधिक होता है।

(२) मिट्टी और मिट्टी के परिच्छेद में लिखा जा चुका है कि भारत की मिट्टी मे नत्रजन (Nitrogen) की कमी है। मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखने तथा उसको अधिक उपजाऊ बनाने के लिए खाद की आवश्यकता होती है। भारतीय किसान अपने खेतों को बहुत कम खाद देता है। भारतीय किसान के पास सबसे सस्ती और सबसे अच्छी खाद गोबर है किन्तु वह उसके कंडे बनाकर जला डालता है और बहुत कम खाद बनाता है। इस कारण खेतों को खाद बहुत कम मिलती है।

(३) अधिकतर किसान बीज सवाये या ड्योढे पर महाजनों से उधार लेता है। यह बीज बहुत घटिया होता है। इस कारण फसल अच्छी नहीं होती। कुछ वर्षों से सरकारी कृषि विभाग ने अच्छे बीज उत्पन्न करके उनको बीज गोदामों के द्वारा किसानों को उधार देने का प्रबंध किया है।

(४) भारत में खेती का काम बैलों से लिया जाता है। यद्यपि भारत में संसार के प्रत्येक देश से अधिक गाय और बैल (इक्कीस करोड़) हैं किन्तु यहाँ के बैल बहुत कमजोर और छोटे होते हैं। इस कारण वे अच्छी तरह से खेती का काम नहीं कर सकते। पशुओं की नस्ल बिगड़ जाने का कारण यह है कि भारत

में चारे की बहुत कमी है। पशुओं को भर पेट चारा नहीं मिलता और यहाँ अच्छे साँड़ भी नहीं है। इस कारण भारत में पशुओं की नस्ल खराब हो गई। वे कमज़ोर होते हैं।

(५) भारत में खेती के औज़ारों में भी कोई सुधार नहीं हुआ है। यद्यपि भारत में पश्चिमी देशों की भाँति खेती के यन्त्रों का उपयोग नहीं हो सकता। यहाँ छोटे हल्के और सस्ते औज़ार ही काम दे सकते हैं परन्तु फिर भी हल इत्यादि में सुधार की आवश्यकता है।

(६) भारत में वर्षा मौसमी और अनिश्चित है इस कारण सिंचाई की आवश्यकता होती है। परन्तु सिंचाई के साधन कम हैं। केवल २०% भूमि ही सींची जाती है।

(७) खेती का ढंग भी यहाँ वैज्ञानिक नहीं है। कृषिविभाग वैज्ञानिक ढंग की खेती का प्रचार करने का प्रयत्न कर रहा है।
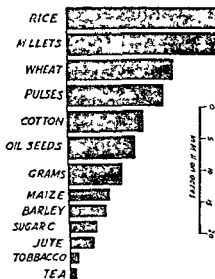
भारतीय खाद्य पदार्थों का अनुपात

ऊपर लिखे हुये कारणों से खेती की पैदावार प्रति एकड़ कम होती है। किसान निर्धन है। वह महाजन के कर्ज के बोझ से इतना दबा हुआ है कि ऋणमुक्त होने

की सम्भावना नहीं है जिस पर लगान बहुत अधिक है। इन्हीं सब कारणों से भारत में खेती की दशा गिरी हुई है।

भारत में भूमि का उपयोग

(लाख एकड़ों में)

कुल क्षेत्रफल	...	...	५५८०	लाख एकड़
वन प्रदेश	...		८३०	"
क्षेत्रफल जो खेती के लिए उपलब्ध नहीं है	..	..	६२०	"
वह भूमि जिस पर खेती नहीं होती परन्तु जिसे खेती योग्य बनाया जा सकता है	.	..	८६०	"
परती भूमि		...	५४०	"
वह भूमि जिस पर खेती होती है	..		२४१०	"
जिस भूमि पर दो फसलें होती हैं	..		३४०	"
सींची जाने वाली भूमि	..	...	४७०	"
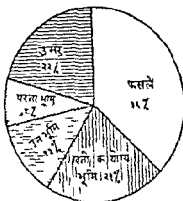
भारत में भूमि का उपयोग

अस्तु लगभग ५३% भूमि पर खेती होती है। जितनी भूमि पर खेती होती है उसका भिन्न-भिन्न फसलों में बँटवारा इस प्रकार है :—

	७%
तिलहन	१०%
गेहूँ	३५%
चावल	६%
कपास	६%
चना	६%
बाजरा	११%
जुआर	१%
गन्ना	
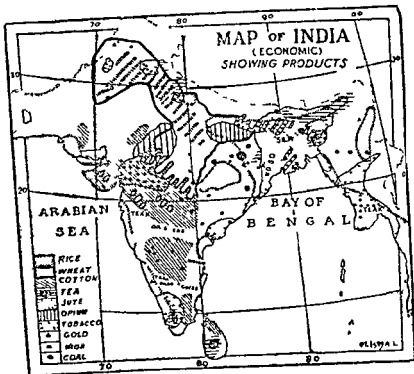
भारत में भिन्न भिन्न फसलों में लगी भूमि

भोजन उत्पन्न करने वाली फसलें ८०% भूमि घेर लेती हैं और २०% भूमि पर औद्योगिक कच्चा माल तथा अन्य फसलें उत्पन्न होती हैं। नीचे हम मुख्य फसलों की पैदावार और उनका क्षेत्रफल देते हैं —

फसल	लाख एकड़ों में	लाखों में
चावल	८०७	२७१ टन
गेहूं	३५७	१०४ ,,
तिलहन	२४४	५६ ,,
कपास	१४८	३५ गाँठ
गन्ना	४१	५४ टन
जूट	२१	६२ टन

(१ गाँठ में ४०० पौंड होता है)

चाय	८३३	४६४० पौंड
कहवा	१८९	२४२ पौंड

मुख्य फसलें (खाद्य पदार्थ)

चावल भारत की सबसे महत्वपूर्ण फसल है। देश में चावल उत्पन्न करने वाली भूमि सबसे अधिक है और सबसे अधिक जनसंख्या का यह भोजन है। चावल के लिए अधिक

चावल
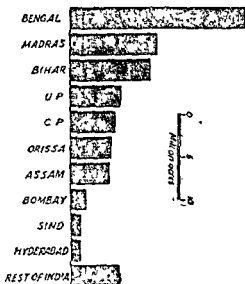
भारत और पाकिस्तान के विभिन्न प्रदेशों में चावल की उपज का अनुपात

गरमी, अधिक वर्षा तथा उपजाऊ भूमि की आवश्यकता होती है। भारत में पूर्वी बंगाल, आसाम, बिहार उड़ीसा तथा मदरास चावल उत्पन्न करने वाले प्रदेशों में मुख्य हैं। देश के तीन चौथाई चावल इन्हीं प्रदेशों में उत्पन्न होता है। इनके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, पूर्वी पंजाब, मध्यप्रदेश, बरार, तथा बम्बई में भी कुछ चावल होता है। पूर्वी बंगाल में खेती की लगभग तीन चौथाई भूमि पर चावल उत्पन्न होता है। यदि भारत की वर्षा का अध्ययन किया जाय तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि जिन प्रदेशों में वर्षा अधिक होती है उन्हीं प्रदेशों में चावल की पैदावार भी अधिक होती है। भीतर की तरफ जैसे जैसे वर्षा कम होती जाती है वैसे ही वैसे चावल की खेती भी कम होती जाती है। पूर्वी बंगाल और आसाम में चावल की खेती बिना सिंचाई के होती है किन्तु अन्य सब प्रदेशों में चावल की खेती उन्हीं इलाकों में होती है, जहाँ सिंचाई की सुविधा है। पूर्वी पंजाब की नहरों के प्रदेश में, मदरास की नदियों के डेल्टों में चावल उत्पन्न होता है। उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों तथा तराई में चावल उत्पन्न होता है। भारत में आठ करोड़ एकड़ से कुछ ही कम भूमि पर चावल की खेती होती है। उत्तर प्रदेश तथा पूर्वी पंजाब को छोड़ कर अन्य प्रदेशों में वर्ष में दो या तीन फसलें होती हैं। पूर्वी बंगाल में तीन फसलें उत्पन्न की जाती हैं। चावल की खेती बीज छिड़क कर और पौधे लगाकर दोनों ही तरह से होती है।

चावल की फसल को पानी की इतनी अधिक आवश्यकता होती है कि यदि अधिक दिनों फसल को वर्षा अथवा पानी न मिले तो फसल नष्ट हो जाती है। इसी कारण जहाँ वर्षा कम अथवा अनिश्चित होती है वहाँ सिंचाई की आवश्यकता होती है। पूर्वी बंगाल में कृषि विभाग ने ऐसा चावल उत्पन्न करने का प्रयत्न किया है जो शुष्कता को सहन कर सके और प्रति एकड़ पैदावार अधिक हो। पूर्वी बंगाल का "पेराल" ऐसा ही चावल है। प्रति एकड़ ३२ मन तक उसकी पैदावार होती है इसके अतिरिक्त अन्य दूसरे चावल भी हैं जो अच्छी किस्म के हैं।

यद्यपि भारत में चावल की खेती बहुत होती है और यह इस देश का मुख्य खाद्य पदार्थ है फिर भी चावल की पैदावार प्रति एकड़ यहाँ बहुत कम है। भारत में प्रति एकड़ ८३६ पौंड चावल उत्पन्न होता है जब जापान में प्रति एकड़ २३५० पौंड चावल उत्पन्न होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि यहाँ के बीज अच्छी किस्म के नहीं हैं और किसान भूमि में खाद नहीं डालता। चावल का प्रति एकड़ पैदावार बढ़ाने के लिए अच्छे बीज और खाद की बहुत आवश्यकता है।

भारत के भागों में जहाँ चावल उत्पन्न होता है बहुत घनी आबादी है इस कारण देश में ही अधिकांश चावल खप जाता है। अधिकतर चावल का व्यापार

अन्तर्प्रादेशीय है। पश्चिमी बगाल तथा मध्यप्रदेश से चावल उत्तर प्रदेश तथा बिहार को भेजा जाता है। मध्यप्रदेश म जनसख्या कम है। इस कारण चावल बाहर भेज दिया जाता है और पश्चिमी बगाल में चावल बहुत अधिक होता है। इस कारण कुछ बाहर भेजा जाता है। पहले भारत से चावल विदेशों को बहुत भेजा जाता था किन्तु बर्मा और पाकिस्तान के भारत से पृथक् कर दिए जाने के कारण अब चावल का निर्यात नहीं होता।

धान को कूट और साफ करके बेंचा जाता है। बहुत से किसान ढेंकली के द्वारा घर घर ही अपने धान को कूट और साफ कर लेते हैं। किन्तु क्रमश चावल को साफ करने वाली मिलों की सख्या बढ़ रही है। प० बगाल में चावल कूटने की बहुत अधिक मिल स्थापित हो गई हैं। हावड़ा तो इनका केन्द्र ही बन गया है। प० बगाल के अतिरिक्त बम्बई और मदरास में भी चावल कूटने के कारखाने हैं। धीरे धीरे किसान स्वय धान को कूटना और साफ करना छोड़ रहा है। वह अधिकतर अपने धान को मिला को बेंच देता है। मिलें ही उसे कूट और साफ करके बेंचती हैं। कुछ मिलों म चावल की भूसी को ही जलाकर शक्ति उत्पन्न कर लेते हैं। चावल का भूसा बहुत कडा होता है इस कारण उसको पशु नहीं खाते। जलाने, छप्पर छाने तथा चटाई बनाने में उसका उपयोग होता है।

भारत के भिन्न भिन्न प्रदेशों में चावल की उत्पत्ति नीचे लिखे अनुसार है —

प्रदेश	क्षेत्रफल
पश्चिमी बगाल	७६,३३००० एकड़
बिहार	६७,३८००० "
मद्रास	१०,२०३००० "
मध्य प्रदेश	६०७१,००० "
आसाम	४०,७८,००० "
उड़ीसा	५१,५६,००० "
उत्तर प्रदेश	७०,४५ ००० "

भारत म चावल पाँच करोड़ अस्सी लाख एकड़ से कुछ अधिक भूमि पर उत्पन्न होता है और १८५ लाख टन चावल उत्पन्न होता है।

यद्यपि भारत में इतना अधिक चावल उत्पन्न होता है किन्तु वह चावल की दृष्टि से स्वावलम्बी नहीं है। उसे प्रतिवर्ष लगभग २५ लाख टन चावल मुख्यत बर्मा स मँगवाना पड़ता है। कुछ चावल हिंदचीन तथा थाईलैंड से भी आता है।

चावल के उपरान्त गेहूँ सबसे महत्वपूर्ण अनाज है। जिन प्रदेशों में चावल उत्पन्न होता है वहाँ गेहूँ नहीं उत्पन्न होता और जहाँ चावल उत्पन्न नहीं होता वहाँ गेहूँ अधिक उत्पन्न होता है। इसका कारण यह है कि दोनों फसलों की जलवायु की आवश्यकतायें भिन्न हैं। भारत में गेहूँ की पैदावार गंगा की घाटी के पश्चिमी भाग में बहुत अधिक होती है। सम्पूर्ण देश में लगभग २ करोड़ ५० लाख एकड़ भूमि पर

गेहूँ
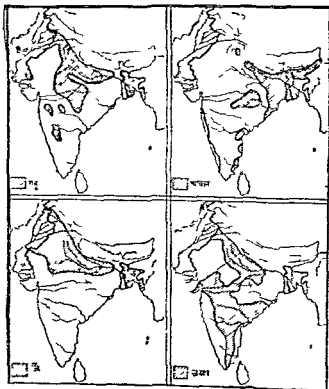
भारत की उपज

गेहूँ की खेती होती है जिसमें एक करोड़ ७० लाख एकड़ भूमि गंगा के पश्चिमी मैदानों में है। गेहूँ मुख्यत पूर्वी पंजाब, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, मध्य भारत, बिहार तथा बम्बई प्रदेश के नासिक तथा खानदेश के इलाके में उत्पन्न होता है।

भारत में गेहूँ जाड़े में पैदा होता है क्योंकि उन्हीं दिनों यहाँ की जलवायु गेहूँ की पैदावार के अनुकूल होती है। अक्टूबर मास में जब ठंड शुरू हो जाती है और गर्मी की ओस पड़ने लगती है तब गेहूँ बोया जाता है। गेहूँ मूल्यवान फसल है। इस कारण किसान भूमि को खूब जोतता है और खाद देता है। अधिकतर गेहूँ के
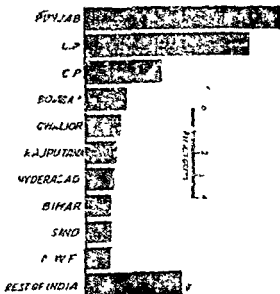
भारत और पाकिस्तान के विभिन्न प्रदेशों में गेहूँ की उपज का अनुपात

खेतों पर गर्मियों में कुछ भी नहीं बोया जाता। जाड़े में वर्षा हो जाने से गेहूँ का पौधा खूब बढ़ता है। किन्तु भारत में जाड़े में वर्षा कम होती है इस कारण गेहूँ की पैदावार वहीं अधिक होती है जहाँ सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं। फरवरी के अन्त में गर्मी पड़ना आरम्भ हो जाती है जिससे फसल पकने में सुविधा होती है। किन्तु भारत में जलवायु की दृष्टि से एक कमी है जिस कारण यहाँ का गेहूँ बहुत बढ़िया नहीं होता। कारण यह है कि फरवरी के अन्त में गर्मी पड़ना प्रारम्भ होती है और एक साथ गर्मी अधिक बढ़ जाता है। तापक्रम धीरे धीरे न बढ़ कर एक साथ बढ़ जाता है। इस कारण गेहूँ ठीक तरह से न पक कर झुलस जाता है। यही नहीं मार्च और एप्रिल में उत्तर भारत में गर्म शुष्क तेज हवा चलती है और कभी कभी ओले और तूफान भी आते हैं जिनसे गेहूँ की फसल को बहुत हानि पहुँच जाती है।

भारत में प्रति एकड़ उपज बहुत कम होती है। प्रति एकड़ यहाँ ६६० पौंड गेहूँ उत्पन्न होता है। ब्रिटेन, बेलजियम तथा डैनमार्क में एक एकड़ म यहाँ से तीन गुना गेहूँ उत्पन्न होता है। भारत में प्रति एकड़ उपज संयुक्तराज्य अमेरिका, कनाडा तथा अन्य नये देशा स भी कम है। संसार में गेहूँ की उत्पत्ति की दृष्टि से भारत का पाँचवाँ स्थान है। किन्तु भारत का अधिकांश गेहूँ यहीं खप जाता है। विदेशों को बहुत कम गेहूँ भेजा जाता है। हाँ अन्तर्प्रान्तीय व्यापार अवश्य होता है। पूर्वी पंजाब उत्तर प्रदेश तथा मध्यप्रदेश से गेहूँ प० बंगाल, राजस्थान तथा बम्बई को जाता है। बम्बई और राजस्थान म वहाँ की आवश्यकता की दृष्टि से गेहूँ कम उत्पन्न होता है। प० बंगाल म कलकत्ते में गेहूँ की बहुत माँग रहती है क्योंकि वहाँ उत्तर भारत, राजस्थान के गेहूँ खाने वाले लोग बहुत रहते हैं।

भारत में लगभग दो करोड़ एकड़ भूमि पर गेहूँ की खेती होती है और लगभग ५४ लाख टन गेहूँ उत्पन्न होता है। गेहूँ की पैदावार भिन्न भिन्न प्रदेशों म नीचे लिखे अनुसार है।

प्रदेश	क्षेत्रफल
पूर्वी पंजाब	३४,४७,०००
उत्तर प्रदेश	७७,५० ०००
मध्यप्रदेश .	१६,३१,०००
बम्बई .	२०,३३,०००
बिहार ...	११,६०,०००
मध्यभारत ...	१२,६६,०००
राजस्थान . . .	१४,१८,०००
ग्वालियर	७,६४,०००
हैदराबाद ...	२,००,०००

भारत आज खाद्यान्न की दृष्टि से स्वावलम्बी नहीं है। प्रतिवर्ष भारत को विदेशों से गेहूँ मँगवाना पड़ता है। गेहूँ संयुक्तराज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, पाकिस्तान से आता है।

चना (Gram) चना भारत का महत्वपूर्ण अनाज है। यह लगभग एक करोड़ पचास लाख एकड़ पर उत्पन्न किया जाता है। यह भी रबी की फसल है। गेहूँ जौ तथा सरसों क साथ मिलाकर अधिकतर बोया जाता है। चने को अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती। अतएव जहाँ सिंचाई की सुविधा नहीं है अथवा मिट्टी बहुत अच्छी नहीं है उस पर यह जौ क साथ उत्पन्न किया जाता है। चना और जौ गेहूँ उत्पन्न करने वाले प्रदेश म

निर्धनों का मुख्य भोजन है। उत्तर प्रदेश में सबसे अधिक चना उत्पन्न होता है। देश का आधा चना उत्तर प्रदेश में ही पैदा किया जाता है। चना उत्पन्न करने के लिए किसान को अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता और न अधिक खाद या सिंचाई का ही प्रबन्ध करना पड़ता है परन्तु चना बहुत सस्ता बिकता है। अतएव किसान चना या जौ उसी दशा में बोता है जबकि वह यह देख लेता है कि उसके खेत पर गेहूँ उत्पन्न नहीं हो सकता। उत्तर प्रदेश के अतिरिक्त पूर्वी पंजाब, बिहार, मध्यप्रदेश तथा दक्षिण प्रायद्वीप में भी चना उत्पन्न होता है। अधिकांश चना देश में ही खप जाता है। बहुत थोड़ा बाहर भेजा जाता है।

जौ (Barley)

जौ भी निर्धनों का भोजन है और चने के साथ अधिकतर उत्पन्न किया जाता है। जौ को भी अच्छी भूमि और पानी की अधिक आवश्यकता नहीं होती। भारत में लगभग पैंसठ लाख एकड़ भूमि पर जौ उत्पन्न होता है। देश का दो तिहाई जौ उत्तर प्रदेश में उत्पन्न होता है। थोड़ा सा जौ वैसे उन सभी प्रदेशों में उत्पन्न होता है जहाँ गेहूँ उत्पन्न होता है।

ज्वार बाजरा-रागी (Millets)

यह अनाज वास्तव में देश की अधिकांश जनसंख्या का मुख्य खाद्य पदार्थ है। ज्वार लगभग दो करोड़ पंद्रह लाख एकड़ में उत्पन्न होता है। बाजरा एक करोड़ तीस लाख एकड़ भूमि पर तथा रागी पैंतीस लाख एकड़ पर उत्पन्न होती है। ये अनाज देश के लिए अनाजों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इनका महत्व केवल इसलिए ही नहीं है कि देश की अधिकांश जनसंख्या इन पर निर्वाह करती है वरन इनका महत्व चारे की दृष्टि से भी बहुत अधिक है। ये मोटे अनाज अपेक्षाकृत कम उपजाऊ भूमि पर जो रेतीली या पथरीली हो अधिकतर उत्पन्न होते हैं। प्रायद्वीप में ये अनाज बहुत अधिक उत्पन्न होते हैं। पूर्व में ये अनाज कम उत्पन्न होते हैं।

ज्वार बाजरा की अपेक्षा अधिक नमी और अधिक चिकनी मिट्टी चाहता है। बाजरा तो रेतीली मिट्टी में खूब होता है। जहाँ खरीफ में चावल उत्पन्न नहीं होता वहाँ ज्वार बाजरा अवश्य उत्पन्न किया जाता है। बाजरा पूर्वी पंजाब, राजस्थान तथा मध्य भारत में बहुत उत्पन्न होता है। इन अनाजों को बाहर नहीं भेजा जाता और न अधिक अन्तर्प्रादेशीय व्यापार ही होता है क्योंकि यह स्थानीय उपयोग के लिए ही उत्पन्न किए जाते हैं।

मक्का भी भारत में मोटा अनाज समझा जाता है। मक्का लगभग साठ लाख एकड़ भूमि पर उत्पन्न की जाती है। मक्का के लिए उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। इस कारण इसकी अधिकतर पैदावार उत्तरप्रदेश, पूर्वी पंजाब, दक्षिण राजपूताना में होता है। कुछ वर्षा हो जाने के उपरान्त यह बोई जाती है और वर्षा समाप्त होते ही काट ली जाती है। यदि वर्षा देर से हो अथवा बीच में बहुत दिनों तक वर्षा न हो तो फसल को हानि पहुँचती है। भारत में मक्का खाने के उपयोग में ही लाई जाती है। मक्का का भूसा इतना कड़ा होता है कि वह चारे के उपयोग का नहीं होता।

मक्का (Maize)

भारत में ज्वार बाजरा रागी, मक्का मिलाकर बोई जाती है। उनके साथ ही उर्द, मूंग अरहर इत्यादि दालें भी उत्पन्न की जाती हैं। ये दालें खाद्य पदार्थ तो हैं ही इनसे एक लाभ यह भी है कि यह भूमि को उपजाऊ बनाती हैं। अरहर, उर्द, मूँग खरीफ में उत्पन्न की जाती और चना, मटर, तथा मसूर रबी में उत्पन्न की जाती हैं। अरहर पकने में अधिक समय लेती है। भारत में दालों का विशेष महत्व है क्योंकि भारतीयों के भोजन का दालें एक आवश्यक अंग हैं। इनमें प्रोटीन अधिक होता है। चना को भी मिलाकर भारत में लगभग चार करोड़ अस्सी लाख एकड़ भूमि पर दालें उत्पन्न होती हैं। भारत में अधिकांश दाल खप जाती है इस कारण बहुत कम बाहर भेजी जाती है।

दालें (pulses)

भारतवासी अधिकांश शाकाहारी हैं। वे मांस नहीं खाते। इस प्रकार भारत में भोजन की दृष्टि से सब्जी तथा फलों का यथेष्ट महत्व है। फिर भारतवासी अन्य देशों की तुलना में कम सब्जी और फल खाते हैं। क्रमशः देश में सब्जी और फलों की अधिकाधिक माँग बढ़ रही है। जैसे जैसे लोग सब्जी और फलों के स्वास्थ्य वर्धक गुणों को समझते जायेंगे वैसे उनकी माँग बढ़ती जायगी। सब्जी और फलों की पैदावार के लिए उपजाऊ भूमि यथेष्ट खाद, और जल की आवश्यकता होती है। सब्जी अधिकतर बड़े बड़े शहरों और कस्बों के समीप ही उत्पन्न की जाती है और स्थानीय माँग को पूरा करती है। किसी स्थान पर आवश्यकता से अधिक सब्जी उत्पन्न होती है तो रेलों और मोटरों द्वारा अन्य जिलों को भेज दी जाती है। किन्तु शीघ्र ही माल भेजने की कठिनाइयाँ, सब्जी और फलों के शीघ्र नष्ट हो जाने की सम्भावना, शीत भण्डार (Cold Storage) की सुविधा का न होना, तथा मार्ग की यह कुछ ऐसे कारण हैं जिनके फल स्वरूप अभी भारत में फलों की खेती

सब्जी फल (Fruits)

उन्नति नहीं कर सकी है। परन्तु धीरे धीरे फलों की खेती बढ़ती जा रही है इसमें तनिक भी सदेह नहीं। फल तथा सब्जी भारत में लगभग पचास लाख एकड़ भूमि पर उत्पन्न होते हैं।

भारत के प्रमुख फल आम, केला नारियल, नारगी, नींबू, सेब, नासपाती और अगूर हैं। आम अधिकार प० बगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश में उत्पन्न होता है। सिंचाई की सहायता से पूर्वी पजाब में भी आम के बाग लगाये गए हैं। गगा की घाटी के बाहर बबई प्रदेश में आम अधिक होता है। कोनकन में आम बहुतायत से उत्पन्न होता है जहाँ से आम बाहर भेजा जाता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि अन्य प्रदेशों म आम होता ही नहीं। दक्षिण राजस्थान, मध्यप्रदेश तथा मध्य भारत म बहुत थोड़ा आम होता है। आम की फसल गगा की घाटी में एक महत्वपूर्ण फसल है। आम क दिनों में गाँव के लोगों के भोजन का आम एक महत्त्वपूर्ण खाद्य-पदार्थ है। आम रेलो तथा मोटरों द्वारा अन्य प्रदेशों को भेजा जाता है। कुछ वर्षो से थोड़ा सा आम ब्रिटेन को भी जाने लगा है। दक्षिण भारत में केला और नारियल बहुत उत्पन्न होता है। मालाबार तथा कारोमडल तट के प्रदेश में नारियल और केला बहुत अधिक होता है। पश्चिमी बगाल में भी केला और नारियल उत्पन्न होता है।

नारगी भारत में प्रत्येक प्रदेश में उत्पन्न होती है परन्तु कुछ स्थानो मे विशेष रूप से उत्पन्न की जाती है। इनमें निम्नलिखित मुख्य हैं —नागपूर के आस पास की सिन्ध्रा, सिक्किम और बुतवाल (हिमाचल के निचले भाग में)। कुछ वर्षो स पूर्वी पजाब तथा उत्तर प्रदेश क हिमालय के निचले भागों में फलों की खेती तेजी से बढ़ रही है और नारगी भी उत्पन्न की जा रही है।

सब काश्मीर, कागड़ा और कुलू (पूर्वी पजाब में) तथा कुमायूँ की ठडी तथा सूखी घाटिया में बहुत उत्पन्न होता है। क्रमश सेब की पैदावार इन घाटियों में बहुत तेजी से बढ़ रही है। भारत भर का यहीं से जाता है।

आलू उत्तरी भारत में बहुत अधिक खाया जाता है। यह आसाम, प० बगाल, उत्तरप्रदेश, पूर्वी पजाब तथा दक्षिण में बहुत उत्पन्न होता है। इसकी सिंचाई की बहुत आवश्यकता है। योरप क कतिपय देशों में यह महत्त्वपूर्ण खाद्य पदार्थ है। इसका आटा तैयार किया जाता है, किन्तु यहाँ तो उसका साग के रूप में ही उपयोग होता है।

गन्ने गन्ने के लिये गमवार उपजाऊ मिट्टी अधिक गर्मी और अधिक जल की आवश्यकता है। भारत में गन्ना मार्च या अप्रैल में बोया जाता है और दिसम्बर, जनवरी, फरवरी और मार्च में फसल काटी जाती है। शक्कर व्यवसाय को सरक्षण protection) दे देने का परिणाम यह हुआ कि भारत में बहुत से शक्कर के कारखाने स्थापित हो गए और गन्ने की खेती बहुत तेजी से बढ़ गई। जहाँ सन् १६२६ ३० में केवल २५ लाख एकड़ पर गन्ना उत्पन्न किया गया वहाँ अब ४० लाख एकड़ पर गन्ना उत्पन्न किया जाता है। गन्ने की खेती मध्य गंगा की घाटी में सबसे अधिक होती है। भारत म सब से अधिक गन्ना उत्तरप्रदेश में (५४/) उत्पन्न होता है। पूर्वी पजाब (१५%) और बिहार (१०) उत्तर प्रदेश क उपरात सबसे अधिक गन्ना उत्पन्न करते हैं। ये तीनों प्रदेश देश का तीन चौथाई गन्ने से भी अधिक उत्पन्न करते हैं। इसका कारण यह है कि यहाँ नदियों द्वारा लाई हुई उपजाऊ मिट्टी प्रतिवर्ष बिछती रहती है, वर्षा अच्छी होती है और सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं।

भारत म प्रति एकड़ गन्ने की पैदावार जावा और क्यूबा की तुलना में बहुत कम होती है। इसका मुख्य कारण यह है कि यहाँ भूमि को यथेष्ट खाद नहीं मिलती। यहां नहीं जावा इत्यादि उष्ण कटिबंध के द्वीपों का गन्ना मोटा होता है। उसमें रस बहुत होता है। क्योंकि वहाँ वर्षा लगातार होती है। इस कारण रस अधिक होता है। भारत का गन्ना पतला होता है और उसमें रस भी कम होता है क्योंकि यहाँ वर्षा लगातार नहीं होती। अब लगभग सभी प्रदेशों म कोयम्बटूर का गन्ना पाया जाता है। यह देशी गन्ने से बहुत अच्छा होता है। विभाजन के उपरान्त भारत म लगभग ४० लाख एकड़ भूमि पर गन्ना उत्पन्न होता है और लगभग ५० लाख टन उत्पत्ति होती है।

गन्ने का क्षेत्रफल

उत्तर प्रदेश	१,६१०,००० एकड़
बिहार	३ ७५,००० ,,
पजाब	१,५४,००० ,,
बगाल	२,६६,००० ,,
मद्रास	६,८,००० ,,
बम्बई	७१,००० ,,
कुल भारत	१,११३०,०००

खजूर का वृक्ष पश्चिमी बंगाल, मध्यप्रदेश, मध्यभारत तथा मदरास में पाया जाता है। इसके रस से भी शक्कर तैयार की जाती है। एक वृक्ष से

खजूर (Date) प्रतिवर्ष एक मन गुड़ प्राप्त होता है। गुड़ से शक्कर तैयार की जाती है। जगौर में गुड़ से शक्कर बनाने का आधुनिक ढंग का एक कारखाना है। वैसे खजूर के गुड़ से शक्कर बनाने का धंधा अधिकतर पुराने ढंग से ही होता है। फसल के दिनों में खजूर के वृक्ष में खाँचे बनाकर उसमें मटके बाँध दिये जाते हैं। रात्रि में रस इकट्ठा हो जाता है जिसे कड़ाहों में औंट कर गुड़ बनाया जाता है।

उत्तेजक पेय पदार्थ (Stimulants

भारत संसार में सबसे अधिक चाय उत्पन्न करता है। किन्तु चाय के बाग कुछ पहाड़ी स्थानों पर ही पाये जाते हैं। आसाम का ब्रह्मपुत्र

चाय (Tea) तथा सुर्मा घाटी तो चाय का खान ही हैं। भारत की ६०% से अधिक चाय इन्हीं दो घाटियों में उत्पन्न होती है। इनके अतिरिक्त बंगाल के दार्जिलिंग और जलपायगुरी जिलों में भी चाय बहुत उत्पन्न होता है। उत्तर भारत में थोड़ी सी चाय पू० पंजाब, उत्तरप्रदेश तथा विहार के पहाड़ी
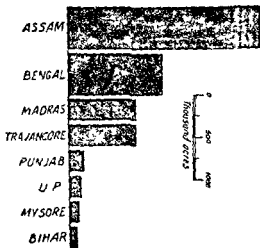
ढालों पर भी होती है। दक्षिण भारत में ट्रावंकोर तथा कोचीन राज्य तथा नीलगिरी, मालाबार तथा कोयम्बटूर में भी चाय बहुतायत से उत्पन्न होती है। दक्षिण के

इन चाय के बागों में देश की १६% चाय उत्पन्न की जाती है। आसाम और बंगाल के पहाड़ी ढालों पर देश की समस्त उत्पत्ति की तीन चौथाई चाय उत्पन्न होती है।

भारत में अधिकांश चाय के बाग २००० से ५००० फीट की ऊँचाई पर हैं। सुर्मा की घाटी में चौरस जमीन पर भी चाय के बाग लगाये गए हैं। वहाँ पानी

भारत में चाय के बाग

इकट्ठा नहीं होता। किन्तु चौरस मैदान पर उत्पन्न की गई चाय बहुत बढ़िया नहीं होती। चाय के पौधे को सलफेट आव अमोनिया (Sulphate of ammonia) की खाद की बहुत आवश्यकता होती है। चाय का वृक्ष प्रतिवर्ष छाँट दिया जाता है और उसकी कटी हुई डालों को गड्ढे में दाब कर उसकी खाद बनाई जाती है। इस प्रकार बनी हुई खाद का भी चाय के बागों में उत्तम उपयोग होता है। क्रमश: भारत में छायेदार वृक्षों को चाय के बागों में लगाना आरम्भ कर दिया गया है क्योंकि साये में चाय का वृक्ष अधिक पत्ती उत्पन्न करता है। भारत में केवल पूर्वी

पंजाब में कांगड़ा की घाटी में हरी चाय (Green tea) तैयार होती है और अन्य स्थानों पर काली चाय (Black tea) तैयार की जाती है। यह तो पहले ही बताया जा चुका है कि चाय की पत्ती को तैयार करने की विधि में भिन्नता होने से ही हरी और काली चाय तैयार होती है। प्रकृति से पत्ती हरी ही होती है।

पिछले वर्षों में भारत में चाय की उत्पत्ति बहुत अधिक बढ़ गई। भारतीय चाय का मुख्य बाजार ब्रिटेन है किन्तु वहाँ चाय पर बहुत अधिक चुंगी लगा दी गई है। अन्य देशों में भारतीय चाय को प्रतिस्पर्द्धा का सामना करना पड़ता है। अतएव १६३३ से भारत में चाय की उत्पत्ति को कम करने का प्रयत्न किया जा रहा है और देश में चाय की खपत बढ़ाने के लिये अनवरत प्रचार किया जा रहा है। चाय की उत्पत्ति कम करने की नीति अपनाने का परिणाम यह हुआ है कि घटिया बाग छोड़ दिये गये हैं और अन्य बागों में अधिक पत्ती उत्पन्न करने वाले वृक्ष लगाये जा रहे हैं। इसका परिणाम यह होगा कि भविष्य में कम क्षेत्रफल में अधिक चाय उत्पन्न हो सकेगी। इस समय चाय के बागों के मालिक इस बात का प्रयत्न कर रहे हैं कि कम भूमि पर अधिक चाय उत्पन्न करके उत्पादन व्यय को कम किया जाय साथ ही बढ़िया चाय तैयार की जाय।

भारत में चाय की पैदावार ईस्ट इण्डिया कम्पनी के प्रयत्नों से आरम्भ हुई। आरम्भ से ही अंग्रेजी पूँजीपतियों ने सारे चाय के बागों को अपने हाथ में ले लिया था। चाय का धन्धा सोलह आने अंग्रेज पूँजीपतियों के हाथ में रहा। भारतीय स्वाधीनता से अंग्रेजों के एकाधिकार का अब क्रमशः ह्रास हो रहा है। कुछ वर्षों से चाय के धंधे की हालत बहुत अच्छी नहीं है।

भारत में चाय की खेती

आसाम	... .	३६६,०००	एकड़
पश्चिमी बंगाल	. .....	१६६,०००	,,
बिहार	. .. .	४,०००	,,
मदरास	.. ..	७८,०००	,,
पूर्वी पंजाब	... .	१०,०००	,,
उत्तर प्रदेश	.. ..	६,०००	,,
मैसूर	.. ..	५,०००	,,
ट्रावंकोर	....	७७,०००	,,
त्रिपुरा	....	११,०००	,,
कोचीन	....	२,०००	,,

भारत में जितनी चाय उत्पन्न होती है उसकी ७३% चाय केवल आसाम और पश्चिमी बंगाल में उत्पन्न होती है। पिछले दिनों में दक्षिण भारत में चाय की उत्पत्ति बहुत होने लगी है और वहाँ लगभग १८% चाय उत्पन्न होती है। भारत में चाय की कुल उत्पत्ति ६ करोड़ पौंड से कुछ कम होती है।

कहवा(Coffee) कहवा उत्पन्न करने वाले देशों में भारत का कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। यहाँ कहवा विशेष कर दक्षिण में ही उत्पन्न होता है। मैसूर, ट्रावनकोर, कोचीन प्रदेशों और मदरास और कुर्ग में कहवा उत्पन्न होता है। देश की आधे से अधिक कहवा उत्पन्न करने वाली भूमि केवल मैसूर राज्य में है और २७ भूमि मदरास तथा कुर्ग में है। प्रति एकड़ सबसे अधिक कहवा कोचीन में उत्पन्न होता है और सबसे कम मैसूर में। भारतीय कहवा ब्रिटेन और फ्रांस को भेजा जाता है।

भारत में लगभग दो लाख एकड़ भूमि पर कहवे की खेती होती है, और लगभग ३५ लाख पौंड कहवा उत्पन्न होता है। भिन्न भिन्न प्रदेशों में कहवे की उत्पत्ति नीचे लिखे अनुसार —

मैसूर		१०१,०००	एकड़
मदरास	...	५४,०००	,,
कुर्ग	...	४२,०००	,,
कोचीन		२,०००	,,
ट्रावनकोर	.. .	१,०००	,,

तम्बाकू (Tobacco) तम्बाकू भारत की एक महत्वपूर्ण फसल है। संसार के तम्बाकू उत्पन्न करने वाले देशों में भी भारत का स्थान ऊँचा है। पृथ्वी की सम्पूर्ण तम्बाकू की उत्पत्ति का पाँचवाँ भाग भारत उत्पन्न करता है। भारत में तम्बाकू का सर्वत्र प्रचार है। इसका उपयोग पीने, खाने और सूँघने में बहुत होता है इस कारण अधिकांश तम्बाकू देश में ही खप जाती है। फिर भी भारत से प्रतिवर्ष काफी तम्बाकू की पत्ती विदेशों में भेज दी जाती है।

भारत में पश्चिमी बंगाल और मदरास में तम्बाकू होती है, परन्तु उत्तर प्रदेश बिहार, मध्यप्रदेश, मध्यभारत तथा गुजरात में भी इसकी अच्छी पैदावार होती है। फसल तैयार होने पर पत्तियों को काट लिया जाता है और फिर छाया में सुखा कर पत्तियों को बाजार में बेचा जाता है।

तम्बाकू को कूट कर उसमें शीरा मिलाकर हुक्के के लिये तम्बाकू तैयार की जाती है। यहाँ बीड़िया का भी बहुत प्रचार है। मध्यप्रदेश, बम्बई तथा मदरास में बीड़ी बनाने का धंधा बहुत पनप गया है। मध्यप्रदेश तथा मदरास में बीड़ी बनाने के बड़े-बड़े कारखाने हैं किन्तु जहाँ भी पलास मिलता है वहाँ ही यह धंधा छोटे रूप में चलता है। कुछ वर्षों में यहाँ सिगरेट और सिगार बनाने के आधुनिक ढंग के कारखाने भी स्थापित हो गए हैं। अधिकतर यह धंधा मदरास प्रदेश में
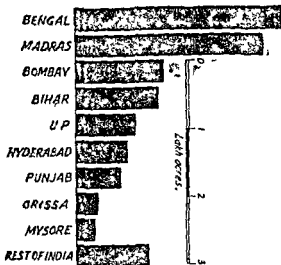
भारत और पाकिस्तान के विभिन्न प्रदेशों में तम्बाकू की उत्पत्ति का अनुपात

केन्द्रित है। डिंडीगुल, मदरास, त्रिचनापॉली, कोकोनडा, कालीकट तथा पांडेचेरी में सिगार और सिगरेट के कारखाने स्थापित हो गए हैं। इन कारखानों स्थापित हो जाने से विदेशों से बहुत कम सिगरेट और सिगार आते हैं। परन्तु भारत की तम्बाकू बढ़िया न होने के कारण सिगरेट और सिगार भी बहुत बढ़िया नहीं बनते इस कारण विदेशों से अब भी सिगरेट और सिगार आते हैं।

भारत में लगभग ८० अरब बीड़ी प्रतिवर्ष तैयार होती हैं। बीड़ी का धंधा उन प्रदेशों में बहुत अधिक पनप गया है जहाँ कि बीड़ी बनाने के लिये पलास की पत्तियाँ मिलती हैं। मध्य प्रदेश तथा बरार सबसे अधिक बीड़ी तैयार करते हैं देश के सम्पूर्ण उत्पादन की २५% बीड़ी मध्यप्रदेश में तैयार होता है। जबलपुर, गोंदिया नागपुर

बीड़ी का धंधा

तथा कानठी म बोडी के बड़े कारखाने हैं। मध्यप्रदेश के बाद मदरास और बम्बई मे बीड़ा बनाने का धधा महत्वपूर्ण है। मदरास और बम्बई प्रत्येक देश की उत्पत्ति का २० बीड़ी उत्पन्न करते हैं। उत्तर में देहली भी बीड़ी बनाने का एक मुख्य केन्द्र है। उत्तर प्रदेश, बिहार, और प० बगाल में बड़े नगरों में बीड़ी बनाने का धधा होता है। हैदराबाद और मैसूर में भी बोड़ी बनाने का काम बहुत होता है।

अफीम

अफीम की खेती के लिए उपजाऊ भूमि तथा अधिक जल की आवश्यकता है। अफीम अक्टूबर में बाई जाती है और मार्च में इकट्ठी की जाती है। शुरू से आखीर तक फसल को सींचना होता है। किसानों को सारी अफीम सरकार को बेचनी पड़ती है। चीन को अफीम भेजना जब से बद कर दिया गया तब से भारत में अफीम की खेती

भारत म कपास

बहुत कम रह गई। अब तो थोड़ी सी अफीम उत्तर प्रदेश, बिहार, प० बंगाल, मध्यभारत के देशी राज्यों में उत्पन्न की जाती है। अधिकांश अफीम दवाई के लिए विदेशों को भेज दी जाती है।

औद्योगिक कच्चा माल (Industrial Raw Materials)

कपास (Cotton) भारत की फसलों में कपास सबसे महत्वपूर्ण है। यही नहीं कि यहाँ की मिलों में कपास की खपत होती है और उससे कपास के किसान को रुपया मिलता है वरन प्रतिवर्ष ३० करोड़ रुपया से ऊपर की कपास भारत से विदेशों में मुख्यतः जापान को भेजी जाती है। किसान के लिए कपास को खेती रुपया प्राप्त करने का एक मुख्य साधन है।

C P
BOMBAY
HYDERABAD
PUNJAB
MADRAS
BOMBAY STS
C I STS
BARODA
SIND
PUNJAB STS
U P
GWALIOR
RAJPUTANA
REST OF INDIA
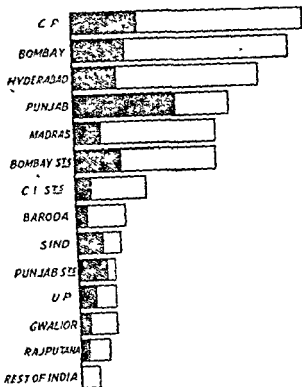
भारत और पाकिस्तान के विभिन्न प्रदेशों में कपास की उत्पत्ति का अनुपात

भारत में लगभग दो करोड़ दस लाख एकड़ भूमि पर कपास की खेती होती है। यदि कपास को उत्पन्न करने वाले प्रदेशों पर नजर डाली जाय तो यह स्पष्ट हो जाता है कि देश की अधिकांश कपास उन प्रदेशों में उत्पन्न होती है जहाँ कि

वाली कपास वाली मिट्टी मिलती है। देश की दो तिहाई से अधिक कपास बम्बई, मध्यप्रदेश और मदरास में उत्पन्न होती है। बम्बई में भड़ौच और खानदेश, मध्यप्रदेश में बरार और मदरास में तिनेवली कपास उत्पन्न करने के प्रमुख क्षेत्र हैं। उत्तर में और उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग में भी कपास अच्छी उत्पन्न होती है। इनके अतिरिक्त मालवा तथा दक्षिण राजस्थान में भी कपास की खेती होती है। कपास वाली काली मिट्टी कपास की खेती के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है। काली मिट्टी की विशेषता यह है कि वह उपजाऊ होने के साथ ही साथ गहरी है और जल को सुरक्षित रखने का उसमें प्रधान गुण है। कपास के लिए अधिक जल की आवश्यकता नहीं होती और काली मिट्टी के प्रदेश में साधारण वर्षा ही होती है। यही नहीं इन प्रदेशों में अधिक गरमी भी नहीं होती और यहाँ पाला कभी नहीं पड़ता। इस कारण यह प्रदेश कपास की खेती के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है।

भारत में भिन्न भिन्न जातियों की कपास उत्पन्न होती हैं। किन्तु भारतीय कपास साधारणतया छोटे रेशे वाली घटिया होती है। देशी कपास में भड़ौच की कपास सबसे अच्छी और लम्बी होती है। इसके अतिरिक्त कपास आमरावती बरार में, घोलेरा गुजरात में, धारवार बम्बई प्रदेश के दक्षिण में तथा प० बंगाल उत्तर भारत में उत्पन्न होती है। इन सबों में प० बंगाल जाति की कपास सबसे घटिया है। वैसे देशी कपास सभी घटिया और छोटे रेशे वाली होती हैं। कृषि विभागों ने विदेशों की बढ़िया कपास तथा देशी कपास के सम्पर्क से अच्छी बढ़िया कपास उत्पन्न करने का प्रयत्न किया है। इनमें मदरास के दक्षिण पूर्व में उत्पन्न होने वाली कम्बोडिया कपास मुख्य है। देश में वस्त्र व्यवसाय की उन्नति के साथ साथ बढ़िया कपास की माँग बढ़ती जा रही है। इस कारण प्रत्येक प्रदेश में इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि बढ़िया कपास उत्पन्न की जावे। क्योंकि बहुत *बढ़िया कपड़ा घटिया कपास के सूत से उत्पन्न नहीं किया जा सकता। घटिया* कपास से मोटा सूत ही काता जा सकता है। पिछले वर्षों में भारतीय वस्त्र मिलों ने बढ़िया साड़ियाँ तथा अन्य बारीक कपड़ा को अधिकाधिक बनाना शुरू कर दिया है। इस कारण बढ़िया कपास की विशेष माँग हो गई है। भारतीय मिलों को कपास मिश्र से मंगाना पड़ता है। भविष्य में भारतीय वस्त्र व्यवसाय की उन्नति बहुत कुछ इस बात पर निर्भर रहेगी कि भारत बढ़िया कपास यथेष्ट उत्पन्न कर सकेगा या नहीं।

भारत में प्रति एकड़ कपास की पैदावार बहुत कम अर्थात् ६० पौंड के लगभग है। जिन प्रदेशों में सिंचाई की सुविधा है वहाँ प्रति एकड़ कपास अधिक

उत्पन्न होती है और जहाँ सिंचाई की सुविधा नहीं है वहाँ कपास बहुत कम उत्पन्न होती है। परन्तु भारत में अधिकांश कपास की फसल सींची नहीं जाती क्योंकि जहाँ सिंचाई की सुविधा है वहाँ कपास अधिक नहीं होती। काली कपास वाली मिट्टी के प्रदेश में कपास की फसल सींची नहीं जाती। पू० पंजाब, उत्तर प्रदेश, तथा दक्षिण पूर्वी मद्रास में अधिकतर कपास की फसल सींची जाती है। किन्तु उत्तर

भारत में पाट (जूट)

का जलवायु कपास के लिए उतना उपयुक्त नहीं है जितना कि प्रायद्वीप का।

कपास की उत्पत्ति

प्रदेश	कुल उत्पत्ति का %
बम्बई	११ %
पूर्वी पंजाब	४ ,,
मध्यप्रदेश बरार	२० ,,
हैदराबाद	१७ ,,

मदरास	१८ ,,
अन्य प्रदेश (उत्तर प्रदेश आदि)	३० ,,

विभाजन के पूर्व भारत ससार में लम्बे रेशे को कपास उत्पन्न करने वाला दूसरा देश था। *उस समय भारत बहुत अधिक राशि में कपास जापान को* भेजता था। कुछ कपास ब्रिटेन, इटली और चीन को भी जाती थी। विभाजन के फलस्वरूप देश में कपास का टोटा पड़ गया। इसके विपरीत पाकिस्तान कपास बाहर भेजने वाला देश बन गया। भारत को पाकिस्तान से कपास मंगवानी पड़ती है। अब प्रयत्न किया जा रहा है कि भारत में कपास की पैदावार को बढ़ाया जावे और लम्बे रेशे वाली कपास उत्पन्न की जावे।

ससार में भारत और पाकिस्तान ही ऐसे देश हैं जो जूट उत्पन्न करते हैं। यह भी अधिकांश जूट बगाल की ही देन थी। देश भर में लगभग उन्तीस लाख एकड़ पर जूट उत्पन्न होता थी जिसमें से १६ लाख एकड़ भूमि केवल बगाल में थी। शेष बिहार, आसाम और उड़ीसा में है। बगाल और आसाम में जूट की पैदावार अधिकतर ब्रह्मपुत्र की घाटी में होता थी। बात यह है कि ब्रह्मपुत्र में बाढ़ आता है तो उसके द्वारा लाई हुई उपजाऊ मिट्टी खेतों पर बिछ जाती है जिससे प्रतिवर्ष उनकी उत्पादन-शक्ति बढ़ती रहती है। जूट की फसल भूमि को शीघ्र ही कमजोर कर देती है। ब्रह्मपुत्र नदी प्रतिवर्ष भूमि को उर्वरा बनाता रहती है। इसी कारण जूट की पैदावार मैमनसिंह, ढाका, पबना, रगपूर तथा बोगरा जिलों में जो ब्रह्मपुत्र के समीप हैं अधिक होती है। ब्रह्मपुत्र केवल भूमि को उर्वरा नहीं बनाती वरन जूट को सड़ाने के लिए भी उसका पानी उपयुक्त है जो कि अत्यन्त आवश्यक है। उत्तर बगाल में प्रति एकड़ सबसे अधिक जूट (४०० पौंड) उत्पन्न होता है।

जूट (jute)

जूट केवल भारत में ही उत्पन्न होता है। इसी से कनवैस, टाट, बोरा तथा अन्य वस्तुयें बनती हैं। *यही कारण है कि कपास की तरह यह भी एक अत्यन्त* महत्वपूर्ण व्यापारिक फसल है और बंगाल के किसान को इसी के द्वारा रुपया प्राप्त *होता था।*

विभाजन के फलस्वरूप सारे जूट के कारखाने (६७%) भारत में रह गए। पाकिस्तान में एक भी जूट का कारखाना नहीं गया और अधिकांश कच्चा जूट (७३%) पाकिस्तान में चला गया। पाकिस्तान का अनुमानत. ७३% कच्चा जूट पूर्वी पाकिस्तान में उत्पन्न होता है और केवल २३% कच्चा जूट भारत में उत्पन्न होता है। इस विभाजन से एक बहुत बड़ी कठिनाई यह उपस्थित हो गई है कि भारतीय मिलों को कच्चा जूट कैसे मिले। पाकिस्तान और

भारत के सम्बध खराब हैं। अस्तु भारत सरकार इसका प्रयत्न कर रही है कि शीघ्र ही भारत में ही जूट की अधिक उत्पन्न किया जाय जिससे कि भारत को पाकिस्तान पर अवलम्बित न रहना पड़े। उड़ीसा, बिहार, मालाबार, तथा दक्षिण के अन्य स्थानों पर जूट की खेती को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। इसी उद्देश्य से एक जूट बोर्ड स्थापित किया गया है। जूट के अतिरिक्त अन्य रेशेदार पदार्थों को भी काम में लाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

भारत में जूट उत्पन्न करने वाले प्रदेश

	क्षेत्रफल
पश्चिमी बंगाल	२१८,००० एकड़
बिहार	१५६,००० ,,
उड़ीसा	२०,००० ,,
आसाम	१७३,००० ,,
कूच बिहार	२०,००० ,,
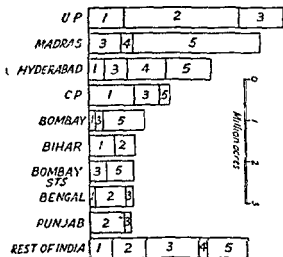
भारत के विभिन्न भागों में जूट का अनुपात

भारत में ५८०,००० एकड़ भूमि पर जूट की खेती होती है और १, ६५८,००० गाँठें उत्पन्न होती हैं। अब भारत में अधिक जूट उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जा रहा है। आशा है कि कुछ वर्षों में दक्षिण भारत में जूट की उत्पत्ति बढ़ जावेगी।

जहाँ जूट उत्पन्न नहीं हो सकता वहाँ सन उत्पन्न होता है। बम्बई, मदरास और मध्यप्रदेश में सन बहुतायत से उत्पन्न होता है। इसके

सन

अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, पू० पंजाब और प० बंगाल में भी इसकी पैदावार होती है। सन का उपयोग रस्सी, जाल और कागज बनाने में होता है। भारत में सन भी बहुत अच्छी जाति का नहीं होता है, क्योंकि यहां सन के बीज की तरफ अधिक ध्यान दिया जाता है। सन की विशेषता यह है कि बीज और छिलके की अच्छी पैदावार एक ही पौधे में नहीं हो सकती। जो बीज छिलका अधिक और अच्छा उत्पन्न करेगा वह बीज अधिक उत्पन्न नहीं कर सकता और जो बीज अधिक उत्पन्न करेगा वह छिलका अधिक और अच्छा उत्पन्न नहीं कर सकता।

भारत तिलहन उत्पन्न करने वाले देशों में मुख्य है। प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये का तिलहन यहाँ से विदेशों को मुख्यतः फ्रांस को जाता है। सरसों,

तिलहन

राई, सन का बीज, बिनौला तिल, अंडी और मूँगफली यहाँ के मुख्य तिलहन हैं। इनके अतिरिक्त नारियल और महुआ के फलों से भी तेल निकाला जाता है।

सरसों प० बंगाल, बिहार, उड़ीसा, पू० पंजाब और उत्तर प्रदेश में बहुतायत से उत्पन्न होती है। अधिकतर यह गेहूं और जौ के साथ उत्पन्न होती है। यह सबसे महत्वपूर्ण तिलहन है। यह फ्रांस, ब्रिटन, इटली तथा बेलजियम को जाती है।

सन का बीज—(देखो सन)।

तिल की खेती कम उपजाऊ भूमि पर होती है। तिल की पैदावार लगभग प्रत्येक प्रदेश में होती है।

अंडी की पत्ती पर अंडी (रेशम) के कीड़े पाले जाते हैं। इसके तेल से साबुन तथा मशीनों को चिकना करने वाले तेल तैयार किये जाते हैं।

अंडी

इसका तेल औषधि के रूप में भी उपयोगी है। इसकी पैदावार उत्तर भारत में अधिक होती है।

मूँगफली के लिये रेतीली भूमि और सूखी जलवायु चाहिए। इसकी पैदावार दक्षिण में बहुत होती है। पश्चिमी भारत में भी मूँगफली की

मूँगफली

खेती बढ़ती जा रही है। यह अधिकतर फ्रांस को भेजी जाती है। मूँगफली को न सिंचाई की आवश्यकता है और न इसकी खेती में अधिक परिश्रम ही करना पड़ता है। संसार में भारत सबसे अधिक मूँगफली उत्पन्न करता है। यह उष्ण प्रदेश की पैदावार है अस्तु यह मुख्यतः दक्षिण

भारत में उत्पन्न की जाती है। फसल मई-अगस्त में बोई जाती है और नवम्बर-जनवरी में काटी जाती है। यह मुख्यत मदरास, बम्बई और हैदराबाद में उत्पन्न की जाती है। कुछ वर्षों से मध्य प्रदेश में भी मूँगफली खूब उत्पन्न होती है। थोड़ी मूँगफली मैसूर में भी होती है।

भारत में लगभग २६ लाख एकड़ भूमि पर मूँगफली की उत्पत्ति होती है। अधिकतर मूँगफली फ्रांस, बेल्जियम, आस्ट्रिया, हंगरी, जर्मनी और ब्रिटेन को जाती है।

बिनौला—कपास का बीज होता है (देखो कपास)।

नारियल — नारियल की पैदावार दक्षिण में बहुत होती है। भारत से प्रतिवर्ष बीस लाख गैलन नारियल का तेल विदेशों मुख्यत इगलैंड को भेजा जाता है। नारियल की जटाओं के रस्से बनते हैं जो विदेशों को भेजे जाते हैं। नारियल भी बहुत बड़ी संख्या में विदेशों को भेजे जाते हैं।

भारत में लगभग २५ लाख एकड़ भूमि पर नारियल उत्पन्न होता है। मदरास, ट्रावकोर-कोचीन, तथा मैसूर मुख्यत इसको उत्पन्न करते हैं। इसके अतिरिक्त उड़ीसा, प० बगाल और आसाम में भी इसकी पैदावार होती है। मदरास में इसकी पैदावार मुख्यत मालाबार, दक्षिण कनारा, तथा पूर्वी गोदावरी जिलों में होती है।

भारत में कच्चे नारियल का उपयोग उसके जल को पीने के लिए होता है। पक्के नारियल की गरी निकाली जाती है जिसका तेल निकलता है। भारत में नारियल देवपूजा के भी बहुत काम आता है। गरी खाने तथा मिठाई बनाने के काम आती है।

महुआ — महुआ का वृक्ष तराई के प्रदेश, मध्य भारत और प० बगाल के उस भाग में उत्पन्न होता है, जहाँ वर्षा कम होती है। इसकी शराब भी बनाई जाती है। गुठली का तेल निकाला जाता है।

भारत अधिकतर तिलहन ही बाहर भेजता है, तेल नहीं भेजता क्योंकि तेल का धंधा यहाँ अभी उन्नत नहीं हुआ है।

तिलहन के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में भारत का स्थान

महुआ	१०० %
अडी	१०० ,,
सरसों	३६ ,,
मूँगफली	२६ ,,

तिल	१३%
बिनौला	१ ,,
पोस्ता	७५ ,,

भारत में लगभग ७० लाख टन तिलहन उत्पन्न होता है तथा लगभग दो करोड़ एकड़ भूमि पर तिलहन की खेती होती है। भारत तिलहन उत्पन्न करने वाले देशों में प्रमुख है।

रबर (Rubber) भारत में संसार की समस्त उत्पत्ति का केवल २% (१६ हजार टन) रबर उत्पन्न होती है। रबर मुख्यतः दक्षिण में उत्पन्न होती है। मद्रास, कुर्ग, मैसूर, ट्रावंकोर और कोचीन मुख्यतः रबर उत्पन्न करते हैं।

रबर की उत्पत्ति

ट्रावंकोर	६०%
मदरास	१० ,,
कोचीन	८ ,,
कुर्ग	२ ,,
मैसूर	२० ,,

भारतीय रबर के बाग में ३०,००० मजदूर काम करते हैं। भारतीय रबर मुख्यतः विदेशों को भेजी जाती है। भारत की रबर विशेषकर ब्रिटेन, सीलोन, हालैंड, स्ट्रेटसेटिलमेंट और जर्मनी को जाती है। कोचीन के बंदरगाह से ही सारी रबर बाहर जाती है।

पशु पक्षी, मछलियाँ तथा रेशम मनुष्य का पशु पक्षी तथा अन्य जन्तुओं से घनिष्ठ सम्बन्ध है। बहुत सी वस्तुओं के लिए तो हम पशु पक्षियों पर नितान्त निर्भर हैं। प्राचीन काल में हमारे पूर्वजों ने कुछ पशु पक्षियों को पालतू बनाया जिनका उपयोग हम आज भी करते हैं। हमारे पूर्वजों ने बहुत पहले ही इस बात को समझ लिया था कि केवल शिकार पर भोजन के लिए निर्भर रहना बुद्धिमानी नहीं है। अतएव उन्होंने घास खाने वाले पशुओं को पाल कर उनकी नस्ल को उत्पन्न करना शुरू किया क्योंकि घास खाने वाले पशु कैद में रह कर भी फलते-फूलते हैं और स्वभाव से हिंसक नहीं होते। बाद को मनुष्य ने पशुओं का उपयोग अन्य उत्पादक कार्यों में भी करना शुरू कर दिया। अब हम यहाँ भारत के उन पशुओं के विषय में लिखेंगे जिनका आर्थिक महत्व है।

आर्थिक दृष्टि से जो पशु महत्वपूर्ण हैं उनकी संख्या हम नीचे देते हैं :

भारतीय पशुओं की संख्या

गाय बैल	१३ करोड़
भैंस भैंसा	४ करोड़
बकरी	५ ,,
भेड़	४ ,,
घोड़े	१½ ,,
खच्चर	१½ ,,
ऊँट	६० लाख

भारत कृषि प्रधान देश है जहाँ का किसान छोटे छोटे खेतों पर खेती करता है। अस्तु यहाँ कृषि यन्त्रों का अधिक उपयोग नहीं हो सकता। गाय और बैल और न बिजली और भाप का ही अधिक उपयोग हो सकता है। यही कारण है कि यहाँ खेती के लिए बैल अत्यन्त आवश्यक पशु है। खेत जोतने से लेकर फसल को मंडी ले जाने तक सारी क्रियायें बैल की सहायता से ही होती हैं। भारत में २१ करोड़ के लगभग गाय बैल थे। संसार में इतने अधिक गाय-बैल किसी भी देश में नहीं थे। पृथ्वी के एक तिहाई गाय बैल भारत में थे (सब देशों के गाय बैलों की संख्या ६६ करोड़ है)।

यद्यपि भारत में गाय को पूज्य मानते हैं और गाय तथा बैल दूध और खेती के लिए आवश्यक हैं, फिर भी इनकी नस्ल इतनी बिगड़ गई है जिसका कुछ ठिकाना नहीं। कुछ नस्लों को छोड़ कर शेष गाय और बैल इतने निर्बल और खराब हैं कि वे अधिक उपयोगी नहीं रहे हैं।

साधारण भारतीय गाय दिन में सेर भर दूध देती है जबकि डेनमार्क में साधारण गाय १८ सेर से कम दूध नहीं देती। १६ सेर प्रति दिन से कम दूध देने वाली गाय को डेनमार्क में पालना लाभदायक नहीं समझा जाता और वह मांस के कारखानों को बेंच दी जाती है। साधारण भारतीय बैल भी इतना छोटा और निर्बल होता है कि वह भारी हल तथा अच्छे यन्त्रों को खींच ही नहीं सकता। यद्यपि देश में गौवंश का अत्यधिक ह्रास हो गया है किन्तु फिर भी कुछ नस्लें अब भी बची हुई हैं जो अच्छी हैं। मैसूर का अमृतमाल, धन्नी पंजाब में, गिर काठियावाड़ तथा पश्चिमी राजस्थान में, हरियाना और शाहीवाला पंजाब में और आंगलो मद्रास में मैसूर की अच्छी नस्लें हैं।

भारत में पशुओं की नस्ल के बिगड़ने के मुख्य तीन कारण हैं (१) चारे की कमी, (२) अच्छे साँडों की कमी और रद्दी साँडों से नस्ल पैदा कराना (३)

पशुओं की चिकित्सा का ठीक प्रबन्ध न होना, देश में पशुओं को महामारी का प्रकोप।

भैंस

भारत में गाय की नस्ल इतनी बिगड़ गई है कि वह दूध देने योग्य नहीं रही। भैंस ने उसका स्थान ले लिया है। गाय खेती के लिए बैल उत्पन्न करने के लिए ही पाली जाती है। भैंस के दूध में घी अधिक होता है किन्तु भैंसे का खेती में उपयोग नहीं होता। इस कारण उसकी ओर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता और न कोई उसे अच्छी तरह खिलाता ही है। हाँ, भैंसे का उपयोग बोझा ढोने में अवश्य होता है। भारत में ६ करोड़ के लगभग भैंस और भैंसे हैं।

बकरी

बकरी गरीबों की गाय है। वह हर एक चीज़ खा लेती है। इस कारण उसको पालने में खर्च बहुत कम होता है। जितनी चारागाह की भूमि पर एक गाय रह सकती है उस पर बारह बकरियाँ निर्वाह कर सकती हैं। बकरी का मांस के अतिरिक्त और कोई उपयोग नहीं होता। हाँ, पहाड़ी जाति के बकरे रेशम के समान मुलायम ऊन उत्पन्न करते हैं।

घी दूध का धन्धा (Dairy Industry)

भारत जैसे देश में जहाँ बहुत सी जनसंख्या मांस नहीं खाती दूध सब उम्र के स्त्री पुरुषों और बच्चों के लिए सबसे अधिक पौष्टिक भोजन है। देश के लिए दूध का इतना अधिक महत्त्व होते हुए देश में दूध का अकाल है। गाँवों में साधारण किसान को अपने कुटुम्ब के लिए दूध नहीं मिलता। शहरों में भी ठीक दामों में अच्छा दूध नहीं मिलता। इसका मुख्य कारण यह है कि गाय तो बहुत कम दूध देती है, दूध देने वाला जानवर भैंस है किन्तु गाय को पालना इसलिए आवश्यक है क्योंकि वह बैल उत्पन्न करती है। साधारण किसान गाय बैल दोनों को नहीं पाल सकता। इस कारण वह बिना दूध के रहता है। जिन किसानों की दशा अच्छी होती है वह भैंस पालते हैं और घी बेचते हैं। इसका फल यह होता है कि गाँवों में दूध का अभाव रहता है और घी महत्त्वपूर्ण धंधा बन गया है।

भारत में दूध की उत्पत्ति ८० करोड़ मन वार्षिक थी। ८० करोड़ मन दूध का मूल्य लगभग ३ अरब रुपये होता है। संसार में संयुक्तराज्य अमेरिका को छोड़ कर अन्य किसी भी देश में इतना दूध उत्पन्न नहीं होता। इससे यह न समझ लेना

चाहिये कि यहाँ दूध खूब होता है। संसार में प्रति मनुष्य पीछे यहाँ प्रति दिन सब से कम दूध उत्पन्न होता है। भिन्न भिन्न देशों में प्रति मनुष्य पीछे प्रति दिन दूध की उत्पत्ति इस प्रकार है :—न्यूज़ीलैंड २४४ औंस, डेनमार्क १४८ औंस, कनाडा ६६ औंस, उत्तर प्रदेश अमेरिका ३७ औंस, जर्मनी ३४ औंस, ब्रिटेन १४ औंस, फ्रांस ३३ औंस और भारत ८ औंस। ध्यान रहे कि ब्रिटेन इत्यादि देशों में मक्खन इत्यादि दूध की वस्तुयें बहुत बड़ी राशि में बाहर से आती हैं। इस कारण वहाँ प्रति दिन प्रति मनुष्य पीछे दूध का उपयोग उत्पत्ति से अधिक होता है। उदाहरण के लिए ब्रिटेन में प्रति दिन प्रति मनुष्य पीछे १४ औंस दूध उत्पन्न होता है और ३६ औंस का उपयोग होता है। भारत में प्रति दिन प्रति मनुष्य पीछे केवल ७ औंस का उपभोग होता है।

डाक्टर नार्मन राइट ने हिसाब लगाया है कि इस ८० करोड़ मन में से लगभग ५२% दूध का घी बनता है। १५% का खोवा, दही इत्यादि बनता है और शेष पीने के काम में आता है। भारत में मक्खन की बड़े बड़े शहरों के अतिरिक्त कहीं माँग नहीं है। साथ ही यहाँ मक्खन के धंधे की उन्नति करने में कुछ कठिनाइयाँ भी हैं। जहाँ छावनियाँ हैं वहाँ बड़ी बड़ी डेयरी हैं नहीं तो अधिकतर नगरों में या तो पास वाले गाँवों से दूध आता है या शहर में रहने वाले ग्वाले अपनी गाय भैंसों का दूध बेचते हैं। मक्खन का धंधा तो देश में नाम मात्र का ही होता है। कुछ मक्खन विदेशों से आता है। घी बनाना देश का महत्वपूर्ण धंधा है किन्तु घी में मिलावट इतनी अधिक होने लगी है कि यदि किसी प्रकार इसको न रोका गया तो घी के धंधे को भयंकर धक्का लगेगा।

भारतीय किसान वर्ष में ४ से ६ महीने बेकार रहता है। यदि दूध, घी और मक्खन के धंधे को सहकारी समितियों के द्वारा संगठित किया जाय तो गाँवों में यह धंधा चमक उठे और किसान की आय बढ़ जाये।

मांस का धंधा

भारत में एक बहुत बड़ी जनसंख्या धार्मिक भावना के कारण मांस नहीं खाती। जो जातियाँ मांस खाने से परहेज नहीं करतीं उन्हें भी मांस खाने को बहुत कम मिलता है। बात यह है कि कोई भी घनी आबादी वाला देश अधिक मांस उत्पन्न नहीं कर सकता। योरोप के धनी आबाद देश नई दुनिया से मांस मँगा कर खाते हैं। निर्धन भारतीय विदेशों से मांस मँगा कर नहीं खा सकता। यही कारण है कि यहाँ मांस का धंधा महत्वपूर्ण नहीं है। बड़े बड़े शहरों और छावनियों के केन्द्रों में मांस का धंधा अवश्य होता है।

भेड़ शीतोष्ण कटिबन्ध का जानवर है। वहाँ यह खूब पलती फूलती है। बहुत गरम प्रदेशों म ऊन खराब हो जाता है। वास्तव म भेड़ पहाड़ी प्रदेश का जानवर है। वह पहाड़ों पर ही अपना भोजन प्राप्त कर लेती है। इस दृष्टि से भेड़ पालने का धन्धा बहुत सस्ता है क्योंकि इसके लिए वह भूमि खराब नहीं करनी पड़ती जो कि खेती के काम की हो।

भेड़ (ऊन का धन्धा)

भारतीय भेड़ खराब नस्ल की है। भारत में मदरास, काश्मीर तथा हिमालय के अन्य भाग और पू० पजाब में ऊन उत्पन्न होता है। भारतीय भेड़े बहुत कम और घटिया ऊन उत्पन्न करती हैं। एक भेड़ यहाँ वर्ष म दो पौंड से अधिक ऊन उत्पन्न नहीं करती। हिमालय प्रदेश मे एक बकरा मिलता है जिसका बाल ऊन के समान होता है। राजस्थान म भी ऐसे बकरे मिलते हैं जो ऊन के समान बाल उत्पन्न करते हैं।

भारत म फारस, अफगानिस्तान, तिब्बत, नैपाल और आस्ट्रेलिया से ऊन आता है। आस्ट्रेलिया के अतिरिक्त और सब देशों से खुश्की के रास्ते ऊन आता है। शिकारपुर, अमृतसर, आदि ऊन की मुख्य मंडियाँ हैं। आस्ट्रेलिया का ऊन बहुत अच्छा होता है। उसकी खपत ऊनी कपड़े के कारखाना में ही होती है।

भारत में ऊनी कपड़ों की मिलों का वितरण

बम्बई	३
थाना	१
बड़ौदा	१
बगलौर	१
बैलारी (मदरास)	१
श्रीनगर	१
धारीवाल	१
अमृतसर	१
कानपुर	१
मिर्जापुर	१
भागलपुर	१
	१२

युद्धकाल म दो ऊनी मिलों की स्थापना उत्तर प्रदेश म और हुई है, किन्तु अभी वे खड़ी नहीं हो सकी हैं।

रेशम के कीड़े पालने का धन्धा

भारत में चार तरह के रेशम के कीड़े पाये जाते हैं। रेशम (जो शहतूत की पत्ती पर रहता है), टसर, अंडी और मूँगा।

रेशम के कीड़ों को दो तरह से पाला जाता है। एक बाहर पेड़ों पर, दूसरे मकानों के अन्दर कमरों में। जब रेशम का कीड़ा रेशम उगल कर ककून (Cocoon) बना लेता है तो यह ककून इकट्ठे कर लिए जाते हैं और किसान इन्हें बेंच देते हैं।

रेशम के कीड़े के लिए शहतूत की पत्ती अत्यन्त आवश्यक है। काश्मीर से लेकर आसाम तक हिमालय के साथ साथ शहतूत का वृक्ष जंगली अवस्था में पैदा होता है और उस पर जंगली रेशम का कीड़ा मिलता है। प० बंगाल, मैसूर और काश्मीर में शहतूत के बड़े-बड़े बाग लगाए गए हैं। भारत में शहतूत की पत्तियों की फसल बहुत अच्छी होती है। एक बार पेड़ लगा देने के उपरान्त फिर उसकी अधिक देख भाल करने की जरूरत नहीं रहती। वर्ष में दो बार पत्तियों की फसल होती है—फरवरी मार्च और अक्टूबर नवम्बर में। हर तीसरे साल वृक्ष को कलम कर दिया जाता है जिससे और भी अधिक पत्तियाँ निकलें।

ककून इकट्ठा कर लेने पर उन्हें भाप दी जाती है, फिर रीलिंग (Reeling) अर्थात् रेशम के तार को निकालने की क्रिया की जाती है। भारत में कीड़े की नस्ल खराब हो गई है। इसके अतिरिक्त भाप देने तथा रीलिंग की क्रिया भी आधुनिक ढंग से नहीं की जाती। इस कारण भारत का रेशम घटिया होता है। मैसूर तथा काश्मीर विदेशों से अच्छे रेशम के कीड़े मँगवा कर रेशम के धंधे की उन्नति करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

विदेशों में भारतीय रेशम की बहुत कम पूँछ होती है। विदेशी व्यापारी भारत से रेशम मँगाने के बजाय ककून मँगाना अधिक पसन्द करते हैं। क्योंकि यहाँ रीलिंग खराब होता है। यहाँ तक कि भारत के रेशम बुनने वाले भी चीन, जापान और इटली के रेशम को काम में लाते हैं। इन देशों से प्रति वर्ष बहुत सा रेशम भारत में आता है।

आसाम और बंगाल सरकारों ने भी अपने अपने प्रदेशों में इस धंधे की उन्नति करने का प्रयत्न किया है। दो स्कूल इस धंधे की शिक्षा देने के लिए खोले गए हैं। मैसूर प्रदेश ने जापान से और काश्मीर ने फ्रांस से रेशम के कीड़े पालने के विशेषज्ञ बुलाये हैं जो उक्त प्रदेशों में इस धंधे की उन्नति का प्रयत्न कर रहे हैं। काश्मीर में श्रीनगर में एक बहुत बड़ी सिल्क फैक्ट्री है। बनारस तथा शान्तीपुर

तेल बनाने और खाद के लिये भी होता है। मद्रास मछली विभाग मछली पकड़ने वाले को मछली पकड़ने का आधुनिक ढंग, तेल निकालना तथा उनको सुरक्षित रखना इत्यादि आवश्यक बातें सिखाता है। इसके लिए मछली विभाग ने स्कूल खोले हैं।

बम्बई के समुद्रतट पर भी बहुत से मछुआरे मछली पकड़ने का धन्धा करते हैं। बम्बई का समुद्रतट अच्छा है और वहाँ मौसम भी अच्छा रहता है, इस कारण वहाँ मछली पकड़ने की अधिक सुविधा है। प्रामफ्रेट (Promfret), सोल (Soles), सी पर्च (Sea perches), *यहाँ की मुख्य मछलियाँ हैं।* बम्बई के मछुए अपनी नाव पर एक सप्ताह का खाने का सामान लेकर समुद्र में मछली पकड़ने चले जाते हैं। कभी कभी वे हफ्तों समुद्र पर ही मछली पकड़ते रहते हैं।

भारत में खाद्य पदार्थों की समस्या (Food Problem of India)

भारत की जनसंख्या तेजी से बढ़ती जा रही है किन्तु खाद्य पदार्थों को उत्पन्न करने में कोई उन्नति नहीं हो रही है। खाद्य-पदार्थों को उत्पन्न करने वाली भूमि का क्षेत्रफल कुछ घट ही रहा है, बढ़ नहीं रहा है। इसका मुख्य कारण यह है किसान महत्त्वपूर्ण व्यापारिक फसल अधिक उत्पन्न करने लगा है क्योंकि उसको उनके उत्पन्न करने से पैसा अधिक मिलता है। इस कारण भारत में खाद्य पदार्थों का टोटा पड़ गया है और पिछले महायुद्ध ने तो भारत में खाद्य पदार्थों की समस्या को और भी कठिन कर दिया है।

भारत में गेहूँ और चावल दो मुख्य खाद्य पदार्थ हैं। भारत में चावल की औसत वार्षिक उत्पत्ति २५५ लाख टन है किन्तु भारत में २०८ लाख टन चावल की कमी है। पहले यह कमी बर्मा से मँगाकर पूरी की जाती थी किन्तु युद्धकाल में बर्मा से चावल आना बन्द हो गया।

जहाँ तक गेहूँ का प्रश्न है भारत की स्थिति बहुत बुरी है। यदि फसल अच्छी हो तो साधारण वर्षों में भारत में १०० लाख टन की आवश्यकता होती है और लगभग १०१ लाख टन गेहूँ उत्पन्न होता है, किन्तु युद्ध के कारण स्थिति में बहुत अन्तर हो गया है। किसान आज पहले से अधिक गेहूँ खाने लगा है क्योंकि उसकी आर्थिक स्थिति सुधर गई है, साथ ही जो असंख्य फौजें रक्खी गई उनको भी गेहूँ पर रक्खा गया, इस कारण गेहूँ की कमी पड़ गई।

भारत का विभाजन हो जाने ने भी स्थिति खराब हो गई। पाकिस्तान में वे प्रदेश चले गए जिनमें जनसंख्या को देखते हुए खाद्यान्नों की बहुलता थी और जो अन्य प्रदेशों को अनाज भेजते थे पश्चिमी पंजाब देश का खलियान था।

विभाजन के फलस्वरूप जो लाखों की संख्या में शरणार्थी इस देश में अधिक आये उससे भी स्थिति और बिगड़ गई।

भारत में जनसंख्या के बढ़ जाने से जो खाद्य पदार्थों का टोटा हो गया उसको नीचे लिखे उपायों से पूरा किया जा सकता है।

(१) भूमि पर गहरी खेती कराने का प्रयत्न करना। इसके लिए अधिकाधिक खाद का उपयोग करना होगा। गहरी खेती के लिए सिंचाई के साधनों में वृद्धि होने की आवश्यकता है।

(२) खेती की उन्नति वैज्ञानिक ढंग से की जावे जिससे कि प्रति एकड़ भूमि की उपज अधिकाधिक बढ़ाई जा सके। ध्यान रहे इस समय प्रति एकड़ भारत में खेती की पैदावार संसार में सबसे कम है।

(३) नई बंजर भूमि को तोड़ कर उस पर खेती की जावे।

(४) कपास, जूट, तिलहन इत्यादि फसलों के क्षेत्र फल को सीमित कर दिया जावे क्योंकि यह अधिकतर विदेशों को भेजी जाती है जहाँ प्रतिस्पर्द्धा अधिक है और लाभ कम होता है।

(५) बागों, बगलों और मकानों में गृह वाटिका लगाने का आन्दोलन आरम्भ किया जाय जिससे लोग घरों में ही सब्जी उत्पन्न कर सकें।

(६) मछलियों की ओर अभी तक इस देश में तनिक भी ध्यान नहीं दिया गया। केवल मदरास में समुद्री मछली के धंधे को वैज्ञानिक ढंग पर संगठित करने का प्रयत्न किया गया है। प० बंगाल में नदियों और तालाबों में भी बहुत मछली उत्पन्न की जाती है किन्तु प० बंगाल और बम्बई तट पर समुद्री मछली के धन्धे को तनिक भी प्रोत्साहन नहीं दिया गया। यदि मछली के धन्धे का वैज्ञानिक ढंग से संगठन किया जा सके तो मछली की उत्पत्ति को बहुत बढ़ाया जा सकता है।

(७) चारे की पैदावार को बढ़ाने का प्रयत्न किया जावे, चारा उत्पन्न करने वाली फसलें अधिकाधिक उत्पन्न की जावें और घास का अधिक मितव्ययितापूर्वक उपयोग हो तो अधिक दूध उत्पन्न किया जा सकता है।

भारत सरकार ने खाद्यान्न की कमी को पूरा करने के लिए "अधिक अन्न उपजाओ" आन्दोलन आरम्भ किया है। बंजर भूमि को खेती के योग्य बनाने के लिए विदेशों से बहुत बड़ी संख्या में ट्रैक्टर मँगवाये गए हैं जो कि प्रादेशिक सरकारों को नई जमीन तोड़ने के लिए दिए गए हैं। उत्तर प्रदेश, मध्यभारत, राजस्थान, पैप्सू और पूर्वी पंजाब बहुत सी नई जमीन को खेती के योग्य बनाया गया है। खाद की कमी को पूरा करने के लिए बिहार में सिंदरी नामक स्थान पर एक

बहुत बड़ा कारखाना कृत्रिम खाद बनाने के लिए खड़ा किया गया है। दक्षिण में भी एक कारखाना स्थापित करने की योजना है। यहां नहीं किसानों को कम्पोस्ट खाद बनाने के लिए उत्साहित किया जा रहा है, सरकार ने सिंचाई की योजनाओं को कार्यान्वित किया है किसानों को सरकार कुंये बनाने के लिए ऋण देता है।

इतना सब होने पर भी अभी तक भारत खाद्यान्न की दृष्टि से आत्मनिर्भर नहीं हुआ है। एक कठिनाई यह है कि कपास और जूट की दृष्टि से भी भारत आत्मनिर्भर नहीं है। भोजन और कच्चे पदार्थों की दृष्टि से भारत तभी आत्म-निर्भर हो सकता है जब कि सरकार और जनता दोनों का सहयोग हो।

अभ्यास के प्रश्न

१—भारत में खेती की दशा गिरी हुई क्यों है ? कारण सहित लिखिए।

२—भारत में गेहूँ और चावल की खेती कहाँ होती है ! उस पर प्रकाश डालिए।

३—भारत में दूध और घी के धन्धे का क्या दशा है ? विस्तारपूर्वक लिखिए।

४—नीचे लिखी फसलों के सम्बन्ध में नोट लिखिए —चाय, कहवा, रबर।

५—भारत में जूट और कपास की खेती का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।

६—एक मानचित्र बनाइये और उसमें चाय, जूट, गेहूँ और कपास उत्पन्न करने वाले क्षेत्र को दिखलाइए।

७—भारत में खाद्य पदार्थों की कमी के क्या कारण हैं और खाद्य पदार्थों की कमी को किस प्रकार दूर किया जा सकता है ?

८—भारत में गन्ने की खेती का विस्तार-पूर्वक वर्णन कीजिए और बतलाइए कि गन्ना कहाँ मिलता है ?

९—भारत में ऊन और रेशम उत्पन्न करने के धन्धे का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

१०—नीचे लिखी फसलों के सम्बन्ध में एक छोटा लेख लिखिये :—
चाय, कपास या गन्ना।

इक्कीसवाँ परिच्छेद

उद्योग धंधे (Industries)

भारत कृषिप्रधान देश है। देश की लगभग तीन चौथाई जनसंख्या खेती पर ही निर्भर है। ईस्ट इंडिया कम्पनी के आने के पूर्व भारत के धन्धे बहुत अच्छी दशा में थे। भारत में वस्त्र व्यवसाय, लोहे का धन्धा जहाज बनाने का धन्धा लकड़ी का सामान इत्यादि धन्धे बहुत उन्नत अवस्था में थे। देश के राजनैतिक पतन के साथ यहाँ ईस्ट इण्डिया का प्रभुत्व स्थापित हो गया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारत के धंधों को नष्ट करने का जैसा घृणित प्रयत्न किया वह किसी से छिपा नहीं है। इधर ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने देश के धन्धों को नष्ट करने का प्रयत्न किया उधर इंगलैंड की सरकार ने भारतीय वस्त्र पर १५०% चुंगी लगाकर तथा भारतीय जहाजों को टेम्स में न आने देने का नियम बनाकर भारतीय व्यवसाय को गहरा धक्का लगाया। उसी समय इंगलैंड में औद्योगिक क्रान्ति (Industrial Revolution) हुई और वहाँ बड़े बड़े पुतलीघर और कारखाने स्थापित हुये। अब क्या था, भारत सरकार ने मुक्तद्वार (Free Trade) नीति को अपना कर भारत को इंगलैंड के पुतलीघरों में बने हुए तैयार माल का बाजार बना डाला। रहे सहे धन्धे भी नष्ट हो गये। भारत पूर्णतः कृषिप्रधान देश बन गया।

आधुनिक ढंग के कारखानों की स्थापना भारत में वस्तुतः उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में हुई। आरम्भ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के रिटायर्ड कर्मचारियों तथा ब्रिटिश व्यवसायियों ने ही वस्त्र तथा जूट के कारखाने स्थापित किये। बाद को क्रमशः भारतीय व्यवसायियों ने भी कारखाने स्थापित करना आरम्भ कर दिये। फिर भी आज तक अधिकांश भारतीय धंधों पर विदेशी पूँजीपतियों का ही प्रभुत्व है।

आरम्भ में कलकत्ता और बम्बई में कारखाने खोले गये। यही कारण है कि आज भी वे देश के प्रमुख औद्योगिक केन्द्र हैं। बम्बई और कलकत्ता बन्दरगाह थे। इन्हीं व्यापारिक केन्द्रों का पश्चिम से अधिक सम्बन्ध था। देश का कच्चा माल विदेशों को जाने के लिए यहाँ इकट्ठा होता था। रेलवे लाइनों के द्वारा ये व्यापारिक

भयंकर परिस्थिति का सामना करना पड़ा। जापान और मैंचेस्टर की प्रतिस्पर्द्धा के कारण भारतीय व्यवसाय को घाटा होने लगा। बहुत आन्दोलन के पश्चात् भारत सरकार को विवश होकर धंधे को संरक्षण (protection) प्रदान करना पड़ा। साथ ही देश में विदेशी वस्त्र बहिष्कार और स्वदेशी आन्दोलन के फलस्वरूप भारतीय वस्त्र व्यवसाय को बहुत सहायता और प्रोत्साहन मिला जिससे व्यवसाय खूब चमक उठा।

सूती वस्त्र व्यवसाय देश का सबसे महत्वपूर्ण धंधा है। सूती कपड़े के कारखाना में ५ लाख मजदूरों से अधिक काम करते हैं। देश के सब कारखानों में जितने मजदूर काम करते हैं उनसे एक चौथाई से अधिक केवल वस्त्र व्यवसाय में लगे हुये हैं। इसीसे इस धंधे की महत्ता प्रतीत होती है।

भारत के वस्त्र व्यवसाय को दो बड़ी सुविधायें प्राप्त है। एक तो कपास भारत में ही उत्पन्न होती है, दूसरे भारत कपड़े की खपत का बहुत बड़ा बाजार है। भारत कपड़े की खपत का इतना बड़ा बाजार है कि जिसका ठीक ठीक अनुमान करना भी कठिन है। भारत के बाजार की विशालता तो इसी से ज्ञात होती है कि यद्यपि जापान और ब्रिटेन से जितना कपड़ा आता है, वह देश की उत्पत्ति की तुलना में नगण्य है है, फिर भी ब्रिटिश तथा जापानी कपड़े का भारत सबसे बड़ा ग्राहक है।

भारत में वस्त्र व्यवसाय के केन्द्र कपास उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों में स्थापित हैं। बम्बई सबसे बड़ा वस्त्र व्यवसाय का केन्द्र है बम्बई कपास का सबसे बड़ी मंडी है। यहीं से कपास विदेशों को जाती है। अतएव बम्बई की मिलों को कपास मिलने में बहुत सुविधा रहती है। यही नहीं, बम्बई को मशीनरी विदेशों से मँगाने की भी सुविधा है, रेल का किराया नहीं देना पड़ता। प्रारम्भ में ये सुविधायें बहुत महत्वपूर्ण थीं। किन्तु अब बम्बई को कुछ असुविधाओं का सामना करना पड़ रहा है। बम्बई में कारपोरेशन टैक्स इत्यादि अधिक है। मजदूरों की मजदूरी कुछ अधिक है, जमीन की बहुत कमी है और कपड़े की खपत के क्षेत्रों से बम्बई दूर पड़ता है। इसके विपरीत अहमदाबाद, नागपुर इत्यादि केन्द्रों में व्यय कम है। मजदूरी सस्ती है तथा वे कपड़े की खपत के क्षेत्र के बीच में हैं। ऊपर दिये हुए कारणों से बम्बई तथा अन्य केन्द्रों में प्रतिस्पर्द्धा उठ खड़ी हुई है और बम्बई की अपेक्षा अन्य केन्द्रों को सुविधायें अधिक हैं। यही कारण है कि बम्बई की मिलें बढ़िया कपड़े बनाने का विशेष प्रयत्न कर रही हैं।

बम्बई और अहमदाबाद सूती कपड़े के प्रमुख केन्द्र है। भारत में सूती कपड़े की जितनी मिल हैं उनकी लगभग आधी इन दो औद्योगिक केन्द्रों में हैं। बम्बई और अहमदाबाद की मिलें देश का लगभग आधा सूत और दो तिहाई कपड़ा उत्पन्न

करती हैं। इन दो केन्द्रों के अतिरिक्त शोलापुर, नागपुर, कलकत्ता, कानपुर, कोयम्बटूर, मद्रास भी सूती कपड़े के महत्वपूर्ण केन्द्र हैं। इनके अतिरिक्त इंदौर, ब्योवर, हाथरस, तथा अन्य स्थानों पर जहाँ कपास उत्पन्न होती है सूती कपड़े के केन्द्र स्थापित हो गये हैं।

बम्बई प्रदेश में सूती कपड़े के प्रमुख केन्द्र

भारत में मिलें जो सूत तैयार करती हैं वह बहुत मोटा होता है। भारत का अधिकांश सूत ३० नम्बर से कम का होता है। ४० नम्बर से ऊपर का सूत तो बहुत थोड़ा उत्पन्न होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि भारत में अच्छी और लम्बे पूल वाली कपास उत्पन्न नहीं होती। ४० नम्बर से अधिक बारीक सूत कातने के लिए भारत में कपास उत्पन्न ही नहीं होती है। अहमदाबाद और बम्बई में जो ४० नम्बर से भी अधिक बारीक सूत काता जाता है वह संयुक्त राज्य अमेरिका तथा मिश्र की कपास से तैयार किया जाता है। पिछले वर्षों में भारतीय मिलों ने अपने उत्पादन को बहुत बढ़ा लिया है और जितना कपड़ा तथा सूत भारतीय मिलें देश में तैयार करती हैं उसकी तुलना में विदेशों से आया हुआ कपड़ा तथा सूत नहीं के बराबर है। फिर भारत में स्वयं मिलें ही कपड़ा तैयार नहीं करतीं, हाथ कर्घों से भी देश की एक चौथाई कपड़ा तैयार होता है। यदि देश की मिलों तथा हाथ कर्घों से तैयार होने वाले कपड़े को लें तो विदेशों से आने वाला कपड़ा उनकी तुलना में १५ % से अधिक नहीं है। १९३९ के योरोपीय महायुद्ध के फलस्वरूप भारतीय व्यवसाय को और भी प्रोत्साहन मिलेगा और भविष्य में भारत वस्त्र की दृष्टि से यदि स्वावलम्बी हो जाये तो आश्चर्य न होगा। किन्तु हमारे वस्त्र व्यवसाय की भावी उन्नति इस बात

पर निर्भर रहेगी कि भारत में बढ़िया कपास उत्पन्न की जा सकेगी या नहीं। वस्त्र व्यवसाय के लिये इस बात की नितान्त आवश्यकता है कि यहाँ बढ़िया कपास उत्पन्न की जाय। इंडियन काटन कमेटी इस दिशा में प्रयत्नशील है।

१६४७ में देश का विभाजन हो जाने के उपरान्त सिन्ध और पश्चिमी पंजाब पाकिस्तान में चले गए। इंडियन काटन कमेटी ने पिछले वर्षों में लम्बे फूल वाली कपास उत्पन्न करने का जो कुछ प्रयास किया था वह इन्हीं क्षेत्रों में किया था। इसका परिणाम यह हुआ कि देश में जो कुछ भी लम्बे फूल वाली कपास पैदा होती थी वह पाकिस्तान में चली गई। भारत को अब लम्बी फूल वाली कपास पाकिस्तान और मिस्र से मँगवानी पड़ेगी। विभाजन के फलस्वरूप अच्छी कपास की समस्या और जटिल हो गई है यद्यपि कपड़े की दृष्टि से पाकिस्तान निर्धन है। वहाँ केवल १२ सूती कपड़े के कारखाने हैं, जबकि सम्पूर्ण भारत में ४१६ कारखाने थे। पाकिस्तान को प्रतिवर्ष लगभग ५० करोड़ गज कपड़ा भारत से मँगाना होगा। किन्तु भारत तथा पाकिस्तान में राजनैतिक खिंचाव के कारण पाकिस्तान में भारत के वस्त्र का बहिष्कार करने का प्रयत्न किया जा रहा है। इससे भारत के लिये यह भी समस्या उठ खड़ी होगी कि भविष्य में अपने कपड़े के लिए विदेशों में बाजार ढूँढ़ने का प्रयत्न किया जाय।

भारत से थोड़ा सा कपड़ा प्रतिवर्ष दक्षिण और पूर्वी अफ्रीका, इराक, ईरान, और लंका को जाता है। जो कुछ भी कपड़ा विदेशों को जाता है वह बम्बई से ही जाता है। बात यह है कि बम्बई की मिलों को अहमदाबाद, नागपुर, कोयमबटूर तथा कानपुर इत्यादि भीतरी केन्द्रों से प्रतिद्वन्द्विता करने में कठिनाई होती है। भीतरी केन्द्रों को बहुत सी सुविधायें प्राप्त हैं जो कि बम्बई को प्राप्त नहीं हैं। अतएव बम्बई की मिलों ने दो बातों का ध्यान देना शुरू किया है। एक तो बढ़िया और बारीक कपड़ा बनाने, दूसरे समीपवर्ती एशियाई देशों में कपड़े बेचने का प्रयत्न किया जा रहा है।

भारतीय सूती वस्त्र व्यवसाय की विशेषता यह है कि इस धंधे पर देशी पूँजीपतियों का प्रभुत्व है। इस धंधे में अधिकांश पूँजी भारतीयों की है और प्रबन्ध भी भारतीयों के हाथ में है।

भारत में सूती मिलों का वितरण

बम्बई	७८
अहमदाबाद	६०
शोलापुर	११

शेष बम्बई प्रदेश	२६
बम्बई प्रदेश पश्चिम भारत	१४
बड़ौदा	१६
अजमेर	४
राजस्थान	१
मध्यभारत	१४
नागपूर	७
मध्यप्रदेश के अन्य केन्द्र	१२
हैदराबाद	६
कोयमबटूर	२६
मदूरा	६
मदरास	२
मदरास के अन्य केन्द्र	१२
मदरास प्रदेश	२
मैसूर	२३
फ्रेंच भारत	३
पूर्वी पजाब	१०
देहली	५
कानपूर	१३
शेष उत्तर प्रदेश	१०
बिहार	१
पश्चिमी बगाल	२६
	४६०

जूट (Jute) जूट की फसल काट लेने के उपरान्त वह खेत पर ही दो या तीन दिन के के लिए छोड़ दी जाती है। फिर उसके बोझ बाँधकर तालाब में सड़ने के लिए पानी में डुबो दिये जाते हैं। भाग्यवश वर्षा के दिनों में पू० बगाल में खारे और मीठे पानी के तालाब और पोखरों की कमी नहीं रहती। सड़ाने की क्रिया जुलाई में होती है और लगभग १५ दिन लग जाते हैं। जब पौधा सड़ जाता है तब जूट का रेशा डठल से छुड़ा लिया जाता है। उसे धोकर फिर सुखा लेते हैं और गाँठ बाँधकर उसे बेच देते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में जूट को स्थान क्रिमियन युद्ध के उपरान्त मिला। इस युद्ध के फलस्वरूप डंडी (स्काटलैंड) के निनन के धधे को रूस से सन मिलना

बंद हो गया था। उस समय ईस्ट इंडिया कंपनी ने यहाँ से जूट को भेजना शुरू कर दिया। तभी से भारतीय जूट की माँग बढ़ गई।

भारत में सर्वप्रथम सन् १८५५ में श्री आकलैंड महोदय ने सिरामपुर के निकट रिसरा में एक जूट का कारखाना खोला जिसमें जूट की कताई होती थी। १८५९ ई० में कलकत्ते में जूट के कपड़े को तैयार करने के लिए एक कारखाना
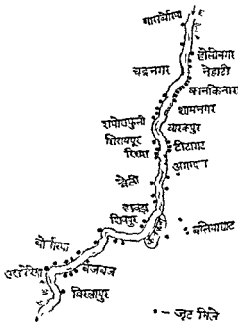
भारत में जूट के प्रमुख केन्द्र

खोला गया। इसके उपरान्त जूट के कारखाने बहुत तेजी से स्थापित होने लगे। किन्तु भारत के अधिकांश कारखाने पूर्वी बङ्गाल में वह भी कलकत्ते के उत्तर और दक्षिण में हुगली के दोनों ओर केन्द्रित हैं। पूर्वी बङ्गाल में ६४ मिलें हैं जबकि मदरास में ४, उड़ीसा में ३ और उत्तर प्रदेश में केवल एक कारखाना है। जूट के कारखानों का पूर्वी बङ्गाल में केन्द्रित होने का मुख्य कारण यह है कि उत्तर और पूर्वी बंगाल में जूट की पैदावार होती है। मिलें हुगली के दोनों किनारों पर स्थित हैं। जूट नदियों अथवा सड़कों के द्वारा इन मिलों में लाया जाता है। साथ ही तैयार जूट का सामान नावों द्वारा कलकत्ते को आसानी से भेज दिया जाता है। यही नहीं इस जूट क्षेत्र के समीप ही कोयला मिलने में कम व्यय होना है।

कन्द्रों में बने हुये पिग आयरन को विदेशों में कलकत्ते के बन्दरगाह से ही भेजा आता है।

भारत में सबसे बड़ा लोहे और स्पात का कारखाना जमशेदपूर में स्थापित है। क्योंकि जमशेदपूर का टाटा आयरन वर्क्स अधिकतर स्पात बनाता है। इस कारण कोयल की अपेक्षा लोहे के क्षेत्र से अधिक समीप है। वास्तव में टाटा आयरन
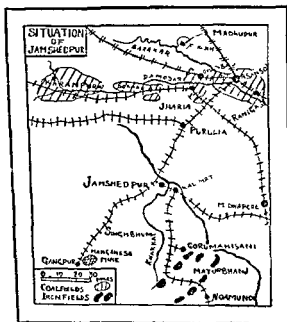
जमशेदपुर

वर्क्स के स्थापित होने के उपरान्त ही लोहे और स्पात का धन्धा इस देश में महत्व पूर्ण धन्धा बन सका। टाटा आयरन वर्क्स के स्थापित होने से देश के औद्योगिक विकास के इतिहास में एक नया परिच्छेद खुल गया। स्वर्गीय जे० एन० टाटा प्रथम श्रेणी के जन्म-जात व्यवसायी थे। उन्होंने अनुभव किया कि बिना स्पात के धन्धे को उन्नति हुए देश की औद्योगिक उन्नति नहीं हो सकती। जब उन्होंने स्पात तैयार करने के लिए कारखाना स्थापित करने की बात चलाई तो विशेषज्ञों ने उनका हतोत्साह किया। उनका कहना था कि भारत में स्पात तैयार ही नहीं किया जा सकता। किन्तु श्री टाटा महोदय इस प्रकार निराश होने वाले व्यक्तियों में से नहीं थे। वे अमेरिका गए और वहाँ से श्री० सी० एम० वेल्ड के नेतृत्व में एक

स्पात विशेषज्ञों के दल को लाए। खोज करने के उपरान्त श्री वेल्ड महोदय ने राजारा पहाड़ियों में जो मध्यप्रदेश में हैं संसार की अत्यन्त घनी लोह की खानों को ढूंढ निकाला। किन्तु आरम्भ म राजारा पहाड़िया के कच्चे लोहे को निकालना कठिन था। इस कारण गुरुमेशनी खानों क लाहे को भरिया के कोयले से गलाना निश्चय किया।

टाटा श्रायरन स्पात कम्पनी ने अपने कारखाने को स्थापित करने लिए साक्ची नामक सथाली गाँव चुना जो कि बाद को जमशेदपूर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। जमशेदपूर बिहार के सिंगभूमि मे है। इसके उत्तर में सुब्रनरेखा तथा खोरकाई नदी पश्चिम में बहती हैं। वास्तव में जमशेदपूर इन दोना नदिया द्वारा बनाई हुई एक घाटी म स्थित है। यह घाटी केवल तीन मील चौड़ी है, इसके उत्तर और दक्षण में पहाड़ियाँ हैं जिनमें लोह का खानें हैं। जिन खाना म टाटा ने कारखाने के लिए लोहा आता है व इन्हीं पहाड़ियों में ६० मील की दूरी पर हैं और कोयला भरिया का खानों स आता है जो कि यहाँ स १०० मील की दूरी पर है। सुब्रनरेखा तथा खोरकाई नदियों से पानी मिलता है। लाह और स्पात क धंधे के लिए मीठे और साफ पानी की बहुत आवश्यकता हाती है। ये नदियाँ छोटा होने क कारण गरमी में सूख जाती हैं। इस कारण नदिया का पानी सूखने के पूर्व ही एक बड़ तालाब म पम्प करके इकट्ठा कर लिया जाता है। टाटा क कारखाने का बी० यन० और कलकत्ता तथा बम्बई स जोड़ती है। अतएव टाटा का सामान बड़ी सुविधा से कलकत्ता और बम्बई की मंडियों में पहुँच सकता है।

टाटा के कारखाने को केवल लाइमस्टोन या डोलोमाइट दूर से मँगाना पड़ता है। अच्छा लाइमस्टोन जमशेदपूर स २०० मील की दूरी पर मिलता है। जो लाइमस्टोन पास मिलता है वह घटिया है। अब ताता का कारखाना गंगपूर में पागपोश की खानों मे लाइमस्टोन निकालता है परन्तु वह शुद्ध लाइमस्टोन से घटिया होता है। इसके अतिरिक्त मैंगनीज और जिन रासायनिक पदार्थो (Chemicals) की आवश्यकता हाती है वे पास ही मिल जाते हैं।

जमशेदपूर जिस प्रदेश में स्थित है वहाँ आबादी कम है तथा जो कुछ भी है वह सथाली लोगों की है जो कारखाने में काम करना पसन्द नहीं करते। इस कारण यहाँ अधिकांश मजदूर बिहार तथा उत्तर प्रदेश के हैं। आरम्भ में इस कारखाने में अधिकतर कुशल मजदूर विदेशों से बुलाए गए थे। किन्तु अब अधिकतर कुशल मजदूर भारतीय हो हैं। हाँ, थोड़े से विदेशी मुख्यत अमेरिकन कुशल मजदूर अवश्य हैं।

अतएव भद्रावती के कारखाने में लकड़ी के कोयले का ही उपयोग किया जाता है। भारत में केवल भद्रावती का ही कारखाना ऐसा है जहाँ लकड़ी का कोयला काम में आता है। कच्चा लोहा केमानगुन्दी की खानों से आता है। ये खानें बाबा बुदान की पहाड़ियों में स्थित हैं और भद्रावती से केवल २६ मील दक्षिण में हैं। लाइम स्टोन भद्रावती से केवल १३ मील पूर्व में भाण्डिगुड्डा नामक खानों से आता है। कच्चे लोहे तथा लाइमस्टोन की दृष्टि से भद्रावती की स्थिति अन्य कारखानों से अच्छी है। हाँ, यहाँ का कच्चा लोहा बहुत अच्छा नहीं है।

लोहा और स्पात के अतिरिक्त इन कारखानों में बहुत सी रासायनिक वस्तुयें कोक से तैयार होती हैं। इनमें सलफेट आफ अमोनिया और कोलतार मुख्य हैं। टाटानगर में कुल्टी तथा अन्य स्थानों पर जहाँ लोहा गलाने के लिए कोक काम में लाया जाता है कोलतार तथा अमोनिया सलफेट तैयार किया जाता है और भद्रावती में जहाँ लकड़ी का कोयला काम में लाया जाता है लकड़ी का एलकोहल (Wood Alcohol) तथा लकड़ी का तार (Wood Tar) तैयार किया जाता है। भद्रावती में लोहे के कारखाने की गौण वस्तुओं विशेषकर स्लैग (Slag) का उपयोग करने के लिए सीमेंट का कारखाना अभी थोड़े दिन हुए स्थापित किया गया है।

भारत में १९३८ में १८०५ लाख टन कच्चा लोहा निकाला गया जब कच्चे लोहे के संसार की उत्पत्ति ७ करोड़ ५० लाख टन थी। इसी वर्ष भारत के कारखानों ने १५७६००० टन पिग आयरन तैयार किया जब कि पृथ्वी के सब देशों की उत्पत्ति ८ करोड़ ३० लाख टन थी। इसी वर्ष भारत के कारखानों ने ९८२,००० टन स्पात तैयार किया जब कि पृथ्वी के सब देशों की स्पात की उत्पत्ति १० करोड़ के लगभग थी। कच्चे लोहे से पिग आयरन तथा स्पात का अधिक होने का कारण यह है कि पुराना रद्दी लोहा भी इसमें सम्मिलित कर लिया गया है।

भारत में जितना पिग आयरन तैयार होता है उतने की देश में खपत नहीं होती। प्रतिवर्ष ३१% के लगभग पिग आयरन विदेशों को भेजा जाता है।

भारत सरकार ने जो औद्योगिक नीति की घोषणा की है उसके अनुसार भविष्य में लोहे और स्पात के जो नये कारखाने स्थापित होंगे वह राज्य स्थापित करेगा। कुछ समय हुआ राज्य ने दो लोहे के बड़े कारखाने स्थापित करने की इच्छा प्रकट की थी। अस्तु भविष्य में लोहे और स्पात के धंधे का राष्ट्रीयकरण होना अवश्यम्भावी है।

शक्कर का धंधा (Sugar Industry)

सन् १६३१ के पूर्व भारत प्रतिवर्ष लगभग २० करोड़ रुपये की शक्कर विशेष कर जावा से मँगाता था। देश में गृह उद्योग धंधे के रूप में हाथ से शक्कर बनाने धंधा प्रचलित था और कुछ कारखाने भी थे किन्तु देश की माँग को पूरा करने के लिए बाहर से शक्कर मँगानी पड़ती थी। टैरिफ बोर्ड की सिफारिश पर भारत सरकार ने शक्कर के धंधे को संरक्षण प्रदान किया जिससे फलस्वरूप आश्चर्यजनक गति से शक्कर के कारखाने स्थापित होने लगे और भारत शीघ्र ही शक्कर की दृष्टि से स्वावलम्बी बन गया। शक्कर का धंधा इस बात का प्रमाण है कि यदि सरकार धंधों को संरक्षण और प्रोत्साहन दे तो देश में आश्चर्यजनक तेजी से औद्योगिक उन्नति हो सकती है। यदि जनता को यह विश्वास हो कि सरकार धंधों को प्रोत्साहन देगी तो पूँजी की कमी नहीं रहेगी। शक्कर के व्यवसाय में जो चालीस करोड़ रुपये की पूँजी लगी है वह इस बात का प्रमाण है।
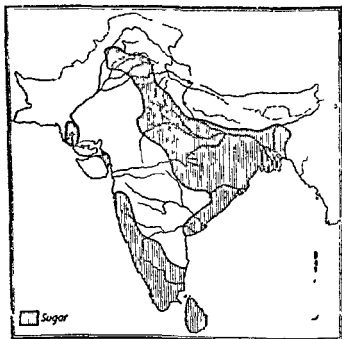
भारत में चीनी की पैदावार

सूती वस्त्र की तरह शक्कर के धंधे को भी यह सुविधा है कि देश में ही इसकी

खपत के लिए विशाल क्षेत्र है। टैरिफ बोर्ड ने १६३१ में अनुमान किया था कि भारत में ६० करोड़ रुपये का शक्कर का खपत होती है। क्रमशः देश में शक्कर की माँग चाय पीने की आदत के साथ साथ बढ़ती जा रही है। इस माँग पर शक्कर का धंधा निर्भर है।
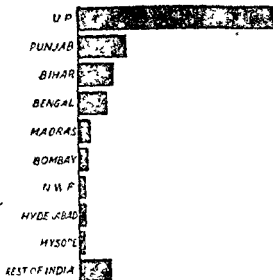
भारत और पाकिस्तान में शक्कर की उत्पत्ति का अनुपात

शक्कर के धंधे के लिए इस बात की नितान्त आवश्यकता है कि कारखाने के समीप ही गन्ने की खेती हो जिससे गन्ना मिलने में कठिनाई न हो। उत्तर भारत विशेषकर उत्तर प्रदेश के उत्तरी भाग तथा बिहार में गन्ने की खेती कुछ क्षेत्रों में केन्द्रित है जिससे वहाँ शक्कर के कारखाने खड़े करने में विशेष सुविधा होती है। शक्कर के धंधे को एक सुविधा यह भी है कि उसके लिए बाहरी ईंधन की बहुत कम आवश्यकता होती है। गन्ने को पेरने के बाद जो खोई बचती है उसी को बायलर में जलाकर शक्ति उत्पन्न की जाती है, किन्तु केवल खोई से ही काम नहीं चलता कुछ ईंधन, कोयला या लकड़ी भी जलाना पड़ता है। उत्तर भारत के गाँवों में यथेष्ट ईंधन मिलता है। इसके अतिरिक्त बहुत से कारखाने तराई के पास हैं जहाँ ईंधन बहुत आसानी से मिल सकता है। यही कारण है कि शक्कर के बहुत से कारखाने लकड़ी जलाते हैं और कुछ कोयला भी जलाते हैं। शक्कर के कारखानों में पानी की भी आवश्यकता होती है परन्तु बहुत पानी की आवश्यकता नहीं होती। पानी या तो

द्यूब वेल खोद कर तैयार किया जाता है अथवा नहरों से ले लिया जाता है। शक्कर के धंधे में कुशल मजदूरों की आवश्यकता बहुत कम होती है। अकुशल मजदूर गाँवों में सस्ती मजदूरी पर सब कहीं यथेष्ट संख्या में मिल जाते हैं। अतएव शक्कर के धंधे का स्थानीयकरण गन्ने की पैदावार पर निर्भर है।

भारत में लगभग १५० शक्कर के कारखाने हैं। इनमें अधिकांश गंगा की घाटी में हैं। लगभग ७५ ,, कारखाने उत्तर प्रदेश तथा बिहार में हैं। भारत में जितनी शक्कर उत्पन्न की जाती है उसकी ८०° केवल उत्तर प्रदेश और बिहार में ही उत्पन्न होती है। पिछले वर्षों में भारतीय शक्कर के कारखानों तथा खंडसारी से इतनी अधिक शक्कर उत्पन्न होने लगी है कि वह भारत की माँग से अधिक होती है। उत्तर प्रदेश तथा बिहार की सरकार ने १९४१ में शक्कर की उत्पत्ति को कम करने का प्रयत्न किया क्योंकि यदि कारखानों को जितनी शक्कर वे बना सकते थे बनाने दी जाती तो इतनी अधिक शक्कर उत्पन्न होती कि उसकी खपत देश में हो ही नहीं सकती। पिछले वर्ष की बची हुई बहुत सी शक्कर कारखानों के गोदामों में भरी पड़ी थी। अतएव शक्कर की उत्पत्ति को कम करने की आवश्यकता हुई। भविष्य में शक्कर की उत्पत्ति को और भी कम करने का प्रयत्न किया जा रहा है। भारतीय शक्कर का धंधा इस समय ऐसी अवस्था में पहुँच गया है कि यदि भारतीय कारखानों को विदेशों में शक्कर भेजने दी जाय तो भारतीय शक्कर संसार के बाजार में अन्य देशों की शक्कर से प्रतिस्पर्द्धा में टिक सकती है। परन्तु भारत सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय शक्कर समझौते को स्वीकार कर लिया है जिसके अनुसार सरकार ने शक्कर का बाहर भेजा जाना बन्द कर दिया है। इस समय शक्कर के धंधे की दशा दयनीय हो रही है। यदि भारत सरकार ने विदेशों को शक्कर भेजने की आज्ञा न दी तो भविष्य में शक्कर की उत्पत्ति को कम करना होगा और गन्ने की खेती को भी कम करना होगा। भारत सरकार ने शक्कर के धंधे पर आबकारी कर (Excise Tax) भी लगा दिया है और प्रतिवर्ष गन्ने का भाव भी निर्धारित करती है। धंधे को गिरने से बचाने के लिए यह आवश्यक है कि शक्कर को बाहर भेजने दिया जाय।

बड़े बड़े कारखानों के अतिरिक्त गन्ना उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों में खंडसारी धंधा भी चलता है। हाथ से बनी हुई शक्कर का मूल्य बाजार में कुछ ऊँचा रहता है क्योंकि साधारण भारतीयों का विश्वास है कि हाथ की बनी शक्कर अच्छी होती है

भारत में शक्कर की मिलें

उत्तर प्रदेश	७२
बिहार	३३
मद्रास	१०

बम्बई	१०
पश्चिमी बंगाल	६
उड़ीसा	२
पूर्वी पंजाब	३
शेष	११
	१५०

भारत में शक्कर की उत्पत्ति

(हजार टनों में)

	मिल	खण्डसारी
पूर्वी पंजाब (काश्मीर और देहली सहित)	१८	१
उत्तर प्रदेश	५३०	१२६
बिहार	२४२	४
पश्चिमी बंगाल	२०	२
मध्य भारत	५	१
राजस्थान	१	—
मदरास	३०	—
बम्बई	५३	—
मैसूर	२५	—
हैदराबाद	१	—
उड़ीसा	१	—
	६२७	१३७

१९३७ के शक्कर सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय समझौते के अनुसार भारत बर्मा को छोड़कर कहीं अन्य किसी देश को शक्कर नहीं भेज सकता था। किन्तु १९३९ में युद्ध छिड़ जाने के कारण अन्तर्राष्ट्रीय समझौता नहीं चल सका। उसी समय भारत का शक्कर का धंधा ऐसी तेज़ी से बढ़ा कि भारत में आवश्यकता से अधिक शक्कर उत्पन्न होने लगी। अतएव भारत को ब्रिटेन को शक्कर भेजने की अनुमति मिल गई। जब जापान से भी युद्ध छिड़ गया, और जावा और फिलीपाइन्स से शक्कर मिलना बन्द हो गई तो ब्रिटिश साम्राज्य में केवल भारत ही शक्कर उत्पन्न करने वाला रह गया। अस्तु, भारत को ब्रिटिश साम्राज्य तथा ईरान और इराक को भी शक्कर भेजनी पड़ी। भारत में शक्कर का बाजार बहुत परिवर्तनशील है।

ट्यूब वेल खोद कर तैयार किया जाता है अथवा नहरों से ले लिया जाता है। शक्कर के धंधे में कुशल मजदूरों की आवश्यकता बहुत कम होती है। अकुशल मजदूर गाँवों में सस्ती मजदूरी पर सब कहीं यथेष्ट संख्या में मिल जाते हैं। अतएव शक्कर के धंधे का स्थानीयकरण गन्ने की पैदावार पर निर्भर है।

भारत में लगभग १५० शक्कर के कारखाने हैं। इनमें अधिकांश गंगा की घाटी में हैं लगभग ७५ कारखाने उत्तर प्रदेश तथा बिहार में हैं। भारत में जितनी शक्कर उत्पन्न की जाती है उसकी ८०% केवल उत्तर प्रदेश और बिहार में ही उत्पन्न होती है। पिछले वर्षों में भारतीय शक्कर के कारखानों तथा खंडसारी से इतनी अधिक शक्कर उत्पन्न होने लगी है कि वह भारत की माँग से अधिक होती है। उत्तर प्रदेश तथा बिहार की सरकार ने १९४१ में शक्कर की उत्पत्ति को कम करने का प्रयत्न किया क्योंकि यदि कारखानों को जितनी शक्कर वे बना सकते थे बनाने दी जाती तो इतनी अधिक शक्कर उत्पन्न होती कि उसकी खपत देश में हो ही नहीं सकती। पिछले वर्ष की बची हुई बहुत सी शक्कर कारखानों के गोदामों में भरी पड़ी थी। अतएव शक्कर की उत्पत्ति को कम करने की आवश्यकता हुई। भविष्य में शक्कर की उत्पत्ति को और भी कम करने का प्रयत्न किया जा रहा है। भारतीय शक्कर का धंधा इस समय ऐसी अवस्था में पहुँच गया है कि यदि भारतीय कारखानों को विदेशों में शक्कर भेजने दी जाय तो भारतीय शक्कर संसार के बाजार में अन्य देशों की शक्कर से प्रतिस्पर्द्धा में टिक सकती है। परन्तु भारत सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय शक्कर समझौते को स्वीकार कर लिया है जिसके अनुसार सरकार ने शक्कर का बाहर भेजा जाना बन्द कर दिया है। इस समय शक्कर के धंधे की दशा दयनीय हो रही है। यदि भारत सरकार ने विदेशों को शक्कर भेजने की आज्ञा न दी तो भविष्य में शक्कर की उत्पत्ति को कम करना होगा और गन्ने की खेती को भी कम करना होगा। भारत सरकार ने शक्कर के धंधे पर आबकारी कर (Excise Tax) भी लगा दिया है और प्रतिवर्ष गन्ने का भाव भी निर्धारित करती है। धंधे को गिरने से बचाने के लिए यह आवश्यक है कि शक्कर को बाहर भेजने दिया जाय।

बड़े बड़े कारखानों के अतिरिक्त गन्ना उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों में खंडसारी धंधा भी चलता है। हाथ से बनी हुई शक्कर का मूल्य बाजार में कुछ ऊँचा रहता है क्योंकि साधारण भारतीयों का विश्वास है कि हाथ की बनी शक्कर अच्छी होती है

भारत में शक्कर की मिलें

उत्तर प्रदेश	७२
बिहार	३३
मद्रास	१०

बम्बई	१०
पश्चिमी बंगाल	६
उड़ीसा	२
पूर्वी पंजाब	३
शेष	११
	१५०

भारत में शक्कर की उत्पत्ति

(हजार टनों में)

	मिल	खंडसारी
पूर्वी पंजाब (काश्मीर और देहली सहित)	१८	१
उत्तर प्रदेश	५३०	१२६
बिहार	२४२	४
पश्चिमी बंगाल	२०	२
मध्य भारत	५	१
राजस्थान	१	—
मद्रास	१०	—
बम्बई	५३	—
मैसूर	२५	—
हैदराबाद	१	—
उड़ीसा	१	—
	६२७	१३७

१६३७ के शक्कर सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय समझौते के अनुसार भारत बर्मा को छोड़कर कहीं अन्य किसी देश को शक्कर नहीं भेज सकता था। किन्तु १६३९ में युद्ध छिड़ जाने के कारण अन्तर्राष्ट्रीय समझौता नहीं चल सका। उसी समय भारत का शक्कर का धंधा ऐसी तेजी से बढ़ा कि भारत में आवश्यकता से अधिक शक्कर उत्पन्न होने लगी। अतएव भारत को ब्रिटेन को शक्कर भेजने की अनुमति मिल गई। जब जापान से भी युद्ध छिड़ गया और जावा और फिलीपाइन्स से शक्कर मिलना बन्द हो गई तो ब्रिटिश साम्राज्य में केवल भारत ही शक्कर उत्पन्न करने वाला रह गया। अस्तु, भारत को ब्रिटिश साम्राज्य तथा ईरान और इराक को भी शक्कर भेजनी पड़ी। भारत में शक्कर का बाजार बहुत परिवर्तनशील है।

यदि शक्कर का मूल्य बढ़ जाता है तो माँग कम हो जाती है, निर्धन व्यक्ति उसका खाना छोड़ देते हैं। यदि मूल्य गिर जाता है तो माँग बेहद बढ़ जाती है।

दियासलाई का धंधा (Match Industry)

दियासलाई एक अत्यन्त दैनिक आवश्यकता की वस्तु है। दियासलाई के लिए लकड़ी, सस्ते मजदूर और रासायनिक पदार्थ तथा बाजार की आवश्यकता होती है। भारत में मजदूरी बहुत सस्ती है और देश में ही विस्तृत खपत का क्षेत्र है। किन्तु दियासलाई बनाने के लिए उपयुक्त लकड़ी का यहाँ अभाव है। यद्यपि भारत में वे वृक्ष पाये जाते हैं जिनकी लकड़ी दियासलाई बनाने के लिये उपयुक्त है, किन्तु ये वन बिखरे हुये हैं। तथा लकड़ा यथेष्ट मात्रा में नहीं मिलती। टैरिफ बोर्ड ने एक प्रेस दियासलाई के लागत व्यय का जो अनुमान लगाया है वह इस प्रकार है। मजदूर ५ आना, लकड़ी ३ आना। रासायनिक पदार्थ १ आना, अन्य व्यय ५ आना। इससे स्पष्ट हो जाता है कि लागत व्यय में मजदूरी का अंश सबसे महत्वपूर्ण है। मजदूरी के उपरान्त लकड़ी पर ही सबसे अधिक व्यय होता है।

कलकत्ता और बम्बई दियासलाई के कारखानों के दो मुख्य केन्द्र हैं। कलकत्ते के कारखानों में अधिकतर भारतीय लकड़ी काम में लाई जाती है। दियासलाई के उपयुक्त भारतीय लकड़ी अधिकतर सुन्दरवन तथा अण्डमन द्वीप से आती है। कलकत्ते के कारखानों में गेनवा नामक लकड़ी का बहुत उपयोग होता है। सुन्दरवन में गेनवा के बहुत बड़े जंगल हैं। गेनवा के अतिरिक्त पपीता, धूपु दिद्दू, और बकोता की लकड़ी का उपयोग होता है। यह अण्डमन द्वीप से आती है।

बम्बई के अधिकतर कारखानों में ऐसपेन (Aspen) लकड़ी का उपयोग होता है। यह लकड़ी फिनलैंड तथा रूस से मँगाई जाती है। किन्तु कुछ दियासलाई के कारखाने गुजरात, बम्बई के अन्य भागों तथा उत्तर प्रदेश में हैं जो सेमल, आम तथा सलाई इत्यादि भारतीय लकड़ियों को काम में लाते हैं। दियासलाई की बत्ती के लिए आम की लकड़ी बहुत अच्छी होती है। सेमल बक्स बनाने के लिए तो बहुत अच्छा होता है किन्तु बत्ती बनाने के लिए अच्छी नहीं होती। कुछ कारखानों ने सेमल के जंगल लगाये हैं जहाँ से अपने लिए लकड़ी प्राप्त करते हैं।

१९२० में भारत लगभग डेढ़ करोड़ रुपए से अधिक की दियासलाई विदेशों से विशेषकर स्वीडन से मँगाता था, किन्तु भारत सरकार ने दियासलाई के धंधे को भी संरक्षण प्रदान किया तो स्वीडन के पूँजीपतियों और दियासलाई के व्यवसायियों ने भारत में ही कारखाने स्थापित कर दिये। स्वीडिश दियासलाई के कारखानों ने

लगभग सारे दियासलाई व्यवसाय की हथिया लिया। इसका फल यह हुआ है कि भारत दियासलाई नाम मात्र को ही विदेशों से मँगाता है। दियासलाई की दृष्टि से भी भारत स्वावलम्बी बन गया है। प्रतिवर्ष भारत के कारखाने ढाई करोड़ ग्रास बक्स दियासलाई तैयार करते हैं। भारत सरकार ने दियासलाई पर आबकारी कर लगा दिया है। दियासलाई वस्तुतः एक विदेशी व्यवसाय है। इस पर विदेश (स्वीडन) पूँजीपतियों का एकाधिपत्य है। भारतीय पूँजी तथा प्रबन्ध इस व्यवसाय में बिलकुल नहीं है। इस समय भारत में ३० दियासलाई के कारखाने चल रहे हैं जिनमें प्रतिदिन ५०० ग्रोस दियासलाई तैयार होती है।

चमड़े का धंधा (Leather Industry)

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि भारत में पशुओं की संख्या बहुत है। साथ ही प्रतिवर्ष पशुओं की महामारी के कारण लाखों की संख्या में पशु मरते हैं। साथ ही मांस के लिए भी पशु मारे जाते हैं। भारत में खाल बहुत होती है। यहाँ से प्रतिवर्ष लगभग आठ करोड़ रुपये का माल विदेशों को विशेष कर ब्रिटेन को जाता है। धन-सम्पत्ति के परिच्छेद में यह बतलाया जा चुका है कि चमड़ा कमाने के लिए जिन वृक्षों की छालें तथा फलों (मैरीबोलन) की आवश्यकता होती है वह भारत के वनों में बहुत पाये जाते हैं। भारत में पुराने ढंग से चमड़ा पकाने की रीति बहुत समय से प्रचलित थी। आज भी चमार पुरानी रीति से ही चमड़ा पकाते हैं। किन्तु सबसे पहले आधुनिक ढंग से चमड़ा तैयार करने तथा चमड़े का सामान बनाने के लिए सरकार ने कारखाने खोले। बात यह थी कि सेना की आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए बढ़िया चमड़े की आवश्यकता थी। अतएव सरकार ने कानपुर में गवर्नमेंट हारनैस सैडिलरी फैक्टरी स्थापित की। कुछ समय के उपरांत अन्य पूँजीपतियों ने भी चमड़े के कारखाने खोले। क्रमशः कानपुर चमड़े के धंधे का केन्द्र बन गया। कानपुर में खाल की मंडी है, पानी मिलने की सुविधा है और बबूल की छाल भी मिल जाती है। मदरास और बम्बई में भी चमड़े के कारखाने खोले गए। दक्षिण भारत में चमड़ा कमाने के काम में आने वाली छाल बहुत मिलती है इस कारण चमड़े का धंधा दक्षिण में केन्द्रित हो गया। मदरास में चमड़े के सबसे अधिक कारखाने हैं। इनके अतिरिक्त आगरा, सहारनपुर तथा अन्य स्थानों पर भी चमड़े का धंधा होता है। पिछले महायुद्ध के उपरांत भारत में क्रोम पद्धति द्वारा क्रोम चमड़ा तैयार होने लगा है। भारत सरकार ने धंधे को विदेशी चमड़े की प्रतिस्पर्द्धा से बचाने के लिए उसे संरक्षण प्रदान कर दिया है। १९३९ के योरोपीय महायुद्ध के फलस्वरूप चमड़े के धंधे की विशेष उन्नति हुई है।

चमड़ा कमाने के धंधे का विस्तार

भारत प्रतिवर्ष २ करोड़ गाय और बैलों की तथा ३५ लाख भैंसों की खालें उत्पन्न करता है। २ करोड़ चौंसठ लाख बकरे तथा ३० लाख भेड़ों की खालें भी उत्पन्न होती हैं।

इसमें से लगभग ६० % गाय बैल और भैंसों की खालें तथा ४० % भेड़ बकरियों की खालों को भारत में कमाया जाता है और उनका चमड़ा बनाया जाता है। शेष विदेशों को भेज दी जाती है।

चमड़ा कमाने के केन्द्र, मदरास, कानपूर, बाटानगर (कलकत्ता), देहली, आगरा और सहारनपूर में केन्द्रित हैं। बाटानगर, कानपूर तथा आगरा और कलकत्ते में जूते बनाने का धंधा बहुत उन्नति कर गया है। महायुद्ध के समय पशुओं की सेना के लिए मारने के कारण खालों की उत्पत्ति बढ़ गई और सेना के उपयोग के लिए चमड़े की उत्पत्ति भी बहुत बढ़ाई गई। लगभग ४० चमड़ा कमाने के छोटे कारखाने स्थापित हुए और कानपूर की नार्थवैस्ट टैनरी ने अपनी उत्पत्ति को कई गुना कर दिया। युद्ध के पूर्व वह कारखाना १००० जोड़े प्रतिदिन तैयार करता था। अब वह ६००० जोड़ प्रतिदिन तैयार करता है। इसी प्रकार बाटानगर के कारखाने ने अपनी उत्पत्ति को दुगना कर दिया है।

शीशे का धंधा (Glass Industry)

भारत में शीशे का धंधा बहुत पुराना है, किन्तु आधुनिक ढंग के कारखाने पिछले ३० या ३५ वर्षों में ही स्थापित हुये हैं।

शीशे के धंधे के लिए अच्छा रेत और कोयला अत्यन्त आवश्यक है। भारत में शीशा बनाने योग्य रेत की कमी नहीं है। पूर्वी बंगाल की राजमहल पहाड़ियों में, नैनी (इलाहाबाद) के पास लोहगरा और बारगढ़ में, विंध्या के रेतीले पत्थरों को पास कर, खानदेश (बड़ौदा) के रेतीले पत्थरों तथा साबरमती नदी से, बीकानेर, जयपूर में सवाई माधोपूर, तथा पंजाब में होशियारपूर जिले से शीशा बनाने योग्य रेत मिलता है। नैनी के पास पाया जाने वाला रेत अधिकांश कारखानों में काम आता है। सोडा तथा ऐश (Soda and Ash) बाहर से मँगाया जाता है।

भारत में अधिकांश कारखाने गंगा के मैदान में स्थित हैं। बात यह है कि यद्यपि भारत में मुख्य कच्चा माल (Raw Material) मिलता है, किन्तु कठिनाई इस बात की है कि कारखाने कहाँ खड़े किये जायें। क्योंकि सब वस्तुयें एक स्थान में नहीं मिलतीं। अतएव गंगा के मैदान में देश के ५५ कारखानों में से ४१ कारखाने स्थित हैं। इन मैदानों में रेलों का एक जाल सा बिछा हुआ है जिससे सब सामान को इकट्ठा करने में सुविधा होती है। अधिकांश शीशे के कारखाने

उत्तर प्रदेश में है। फीरोजाबाद इस धंधे का सबसे बड़ा केन्द्र है। इसके अतिरिक्त बम्बई, जबलपुर, लाहौर, अम्बाला, नैनी, बहजोई, कलकत्ता में भी बड़े बड़े कारखाने हैं।

यद्यपि देश में आधुनिक ढंग के कारखाने स्थापित हो गये हैं फिर भी विदेशों से मुख्यतः यूरोप और जापान से भारत में सवा करोड़ रुपये के लगभग का सामान आता है। यहाँ के कारखानों में अधिकतर चिमनी, बोतल, ग्लास (Sheet glass) और प्लेट ग्लास बहुत कम तैयार होता है।

बड़े बड़े कारखानों के अतिरिक्त भारत में पुराने ढंग से भी शीशे का सामान तैयार किया जाता है। अधिकतर ये घटिया चीजें होती हैं नदियों के रेत तथा रेह से तैयार किया जाता है। इस कारण अच्छा और साफ नहीं होता। उत्तर प्रदेश में फीरोजाबाद तथा दक्षिण में बेलगाँव इसके मुख्य केन्द्र हैं। फीरोजाबाद में चूड़ियाँ बहुत बनती हैं।

सीमेंट (Cement Industry)

सीमेंट का धंधा भी कुछ ही वर्षों में यहाँ उन्नति कर गया है। १९१४-१८ के प्रथम यूरोपीय महायुद्ध के समय भारत में बहुत कम सीमेंट बनाया जाता था। अधिकांश सीमेंट विदेशों से आता था। किन्तु अब बहुत थोड़ा सीमेंट विदेशों से आता है। सम्भावना इसी बात की है कि शीघ्र ही भारत सीमेंट की दृष्टि से भी स्वावलम्बी हो जायेगा। ८० से अधिक सीमेंट तो इस समय भी भारतीय कारखाने ही तैयार करते हैं।

सीमेंट के लिए लाइम स्टोन (Lime Stone), चिकनी मिट्टी (Clay) तथा कोयले की आवश्यकता होती है। थोड़ा जिपसम (Gypsom) भी आवश्यक है। भारत में लाइमस्टोन बहुत अच्छा और ढेरों मिलता है। मिट्टी भी मिलती है। देश में जिपसम निकाला जाता है किन्तु बहुत दूर से लाना पड़ता है। कोयले की भी यही दशा है। अधिकांश सीमेंट के कारखाने उन स्थानों पर स्थापित किये गये हैं जहाँ अच्छा लाइमस्टोन मिलता है, किन्तु जहाँ भारतीय सीमेंट के कारखानों को लाइमस्टोन और चिकनी मिट्टी मिलने की सुविधा है वहाँ सबसे बड़ी कमी यह है कि कोयले की खानें बहुत दूर हैं। इस कारण कोयले के लिए बहुत व्यय करना पड़ता है।

लाइमस्टोन और चिकनी मिट्टी के मिक्सचर को तेज आँच देकर सीमेंट तैयार किया जाता है। मिक्सचर में तीन चौथाई कैलसियम कारबोनट (Calcium Carbonate) तथा एक चौथाई चिकनी मिट्टी रहती है। मिक्सचर में थोड़ा सा जिपसम भी रहता है। कहीं कहीं लाइमस्टोन ऐसा पाया जाता है कि जिसमें

सभी आवश्यक चीजें ठीक मात्रा में मिलती हैं और अन्य वस्तुयें नहीं मंगानी पड़तीं।

मदरास और काठियावाड़ के सीमेंट के कारखानों को छोड़ कर और सभी कारखाने देश के भीतरी भाग में स्थित हैं। इस कारण वे सीमेंट को अपने क्षेत्र में आसानी से बेच सकते हैं। हाँ मदरास, और काठियावाड़ के सीमेंट के कारखानों को बन्दरगाहों में हैं विदेशी सीमेंट की प्रतिद्वंद्विता का सामना करना पड़ता है। भारत सरकार ने बाहर से आने वाले सीमेंट पर ६० की ड्यूटी लगा दी है। सीमेंट के कारखाने ग्वालियर कटनी बूँदी, बिहार मिर्जापुर, काठियावाड़ और मदरास में हैं अब तो सीमेंट के कारखानों का संघ बन गया है। इस कारण धंधा और भी संगठित रूप से उन्नति कर रहा है। भारत के कारखानों में लगभग १२ लाख टन सीमेंट तैयार होता है। सन् १९३७ में भारत के कारखानों में ११४ लाख टन सीमेंट तैयार हुआ। जब कि संसार भर के सब देशों ने ८० लाख टन से कुछ कम सीमेंट तैयार किया। १९३८ में संयुक्त राज्य अमेरिका ने १८३ लाख टन, जर्मनी ने १५६ लाख टन ब्रिटेन ने ७६ लाख टन और भारत ने १२ लाख टन सीमेंट उत्पन्न किया। १९३८ में संसार के सब देशों ने ८२५ लाख टन सीमेंट तैयार किया था।

की लुग्दी मिलानी पड़ती है। बाँस का बना कागज चिकना और सुन्दर होता है। यद्यपि बाँस से बना कागज बढ़िया नहीं होता किन्तु सस्ता होता है। भारत में सस्ते कागज की अधिक माँग है इस कारण भविष्य में बाँस से ही अधिकांश कागज तैयार किया जावेगा। बाँस बम्बई, मद्रास, आसाम और बंगाल में बहुत उत्पन्न होता है।

भारत की अधिकांश कागज की मिलें कलकत्ते के समीप हैं। इसके कारण यह हैं कि कलकत्ते में कागज की बहुत माँग है, कोयला समीप ही मिलता है और गंगा के पानी का उपयोग हो सकता है। हाँ कच्चा माल अवश्य यहाँ से दूर है। पिछले कुछ वर्षों में कागज का मिलें उन प्रदेशों में भी स्थापित की गई हैं जहाँ कि घास या बाँस मिलता है। परन्तु इन सब से कागज का बाजार तथा कोयला दूर पड़ता है। उत्तर प्रदेश में सहारनपुर और लखनऊ, पंजाब में जगाधरी, हैदराबाद में सिरपुर, बम्बई, आसाम और ट्रावनकोर में फुटकर बिखरे हुए कारखाने स्थापित किये गये हैं। किन्तु कागज के धंधे के प्रधान केन्द्र कलकत्ता या समीपवर्ती प्रदेश हैं जहाँ टीटागढ़ इंडिया पेपर मिल्स और बंगाल पेपर मिल्स के कारखाने हैं।

भारत में साधारणतः घास के कागज को बनाने के लिए घास का लुग्दी में लकड़ी की लुग्दी मिलाई जाती है। अब कुछ कारखाने बाँस की लुग्दी काम में लाने लगे हैं। बढ़िया कागज बनाने के लिए कारखाने विदेशों से लकड़ी की लुग्दी मंगाते हैं और उससे कागज तैयार करते हैं। भारत में पहाड़ी तो बहुत कम उत्पन्न होता है। इस समय देश में १४ पेपर मिल कागज तैयार कर रही हैं परन्तु फिर भी भारत में जितना कागज तैयार होता है उससे दुगने से अधिक कागज विदेशों से मंगाना पड़ता है। अधिकांश विदेशों से आने वाला कागज समाचार पत्र तथा पुस्तकों की छपाई के काम आता है। भारत में साधारणतया एक करोड़ का कागज विदेशों से आता है। १९३९ में योरोपीय महायुद्ध के कारण बाहर से कागज का आना प्रायः बन्द हो गया। इस कारण देश की मिलों को अपना उत्पादन बढ़ाने का अपूर्व अवसर मिला।

सन् १९३८ में भारत के कारखानों ने ६० हजार टन कागज तैयार किया। १९३९ के योरोपीय महायुद्ध के प्रारम्भ हो जाने से कागज का विदेशों से आना कम हो गया है और भारतीय कारखानों ने अपना उत्पादन को बढ़ा दिया है। १९४७ में संसार भर में नौ करोड़ टन के लगभग कागज और ६० लाख टन बोर्ड तैयार हुआ था। अब मध्य प्रदेश में एक नई कागज की मिल बन रही है। इसमें अखबारी कागज (Newsprint) बनेगा। अभी तक भारत में अखबारी कागज (Newsprint) नहीं बनता है।

भारत में कागज बनाने के केन्द्र

पश्चिमी बंगाल—कांकिनारा, टीटागढ़, रानीगंज और नैहाटी।
बम्बई—बम्बई, पूना, अहमदाबाद।
उत्तर प्रदेश—लखनऊ, सहारनपुर।
बिहार—डालमियाँ नगर।
उड़ीसा—ब्रजराज नगर।
पूर्वी पंजाब—जगाधरी।
मैसूर—भद्रावती।
ट्रावनकोर—पुनालुर।
हैदराबाद—सिरपुर।

इनके अतिरिक्त मध्यप्रदेश में नेपा मिल्स तथा अन्य स्थानों पर भी कागज के कारखाने स्थापित किए गए हैं।

कुटीर उद्योग धन्धे (Cottage Industry)

भारत में बहुत प्राचीन काल से कुटीर उद्योग धंधे महत्वपूर्ण रहे हैं और आज भी कुटीर उद्योग धंधे नष्ट नहीं हो गये हैं। गाँवों में कुटीर उद्योग धंधे आज भी जीवित दशा में हैं। भारत में बड़े-बड़े कारखाने केवल बड़े बड़े औद्योगिक केन्द्रों और नगरों में ही दृष्टिगोचर होते हैं। कुटीर उद्योग धंधे किसी स्थान विशेष पर केन्द्रित नहीं हैं। वे देश भर में बिखरे हुये हैं। कुछ जातियाँ विशेष उन धंधों को करती हैं। बस नाम से काम चला लेता है वही पुराने ढंग से काम होता है, औजार बहुत साधारण होते हैं और अधिकतर गाँवों में ही तैयार हो जाते हैं। कच्चा माल भी गाँवों में ही उत्पन्न होता है और तैयार माल की भी खपत गाँवों में ही होती है। कुटीर उद्योग धंधे के साथ-साथ कारीगर खेती भी करते हैं। जब खेती से अवकाश मिलता है तो धंधे के द्वारा कुछ कमा लेते हैं। इन धंधों में कोई सुधार नहीं हुआ है। वही पुराने ढंग का डिजाइन वे लोग तैयार करते हैं और वही पुराने औजारों को काम में लाते हैं।

यम तो देश भर में कुटीर उद्योग धंधे फैले हुए हैं परन्तु कोई कोई स्थान वहाँ के कारीगरों की कुशलता के कारण विशेष प्रसिद्ध हो गया है। उस स्थान में कोई धंधा विशेष केन्द्रित हो जाता है। उदाहरण के लिए बनारस का रेशम का धंधा, पीतल के बर्तन इत्यादि।

कुटीर उद्योग धंधों में हाथ करघे से कपड़ा तैयार करने का धंधा सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। यह अनुमान किया जाता है कि देश में लगभग पचास लाख बुनकर इस धंधे में लगे हुये हैं। हाथ करघों से देश की कुल कपड़े की माँग का २५% कपड़ा

उत्पन्न होता है और देश में जितना कपड़ा तैयार होता है उसका लगभग ४० करघा हाथ कर्घो से तैयार होता है। देश म लगभग २५ लाख कर्घे चलते हैं। वैसे तो देश के प्रत्येक भाग में हाथ कर्घे से कपड़ा तैयार होता है किन्तु जिन प्रदेशों म रेलवे लाइन तथा गमनागमन की सुविधा कम है वहाँ यह धंधा अधिक महत्वपूर्ण है। आसाम, पश्चिमी बंगाल, मद्रास तथा राजस्थान में यह धंधा विशेष महत्वपूर्ण है। आसाम में लगभग ४५०,००० कर्घे हैं। हाथ कर्घे के बुनकर अब मिलों का सूत काम म लाते हैं। कुछ वर्षों पूर्व तक हाथ कर्घों के बुनकर अधिकतर विदेशी सूत को काम में लाते थे किन्तु कुछ वर्ष हुये कि भारत सरकार ने विदेशों से आने वाले सूत पर ड्यूटी लगा दी जिससे हाथ कर्घे के बुनकर अब देशी मिलों का सूत ही काम में लाते हैं। भारत सरकार ने प्रादेशिक सरकारों के द्वारा हाथ कर्घे के धंधे को सहायता दी थी। आज प्रत्येक प्रदेश में प्रादेशिक सरकारें इस धंधे को सहायता और प्रोत्साहन दे रही हैं।

हाथ कर्घे के धन्धे को देशी मिलों की प्रतिस्पर्द्धा का सामना करना पड़ता है। हाथ कर्घे के बुनकरों के सामने कुछ कठिनाइयाँ हैं। वे आधुनिक डिजाइनें तैयार नहीं कर सकते, बाजार में कौन सी डिजाइन अधिक पसंद की जाती है यह मालूम करने का उनके पास कोई साधन नहीं होता और न वे अपने माल को अच्छी तरह से बाजार में बेंच ही सकते हैं।

उत्तर प्रदेश में प्रादेशिक सरकार ने हैंड-लूम एमपोरियम स्थापित किए हैं अथवा सहकारी यूनियन को सहायता दी है जो हाथ कर्घे के द्वारा तैयार कपड़े बेंचती है। हाथ कर्घे का धंधा देश का एक महत्वपूर्ण धन्धा है। यदि सहकारी बुनकर समितियों के द्वारा इस धंधे का संगठन किया जाय और एक प्रादेशिक सहकारी बुनकर यूनियन सम्मिलित समितियों के कपड़े को बेंचने का प्रबन्ध करे, बुनकर समितियों को सूत देने का प्रबन्ध करे नये डिजाइनों का आविष्कार करवा कर समिति के सदस्यों को बतलाये, लोगों की रुचि का अध्ययन करे तथा कर्घे इत्यादि की उन्नति का प्रयत्न करे तो यह धन्धा विशेष उन्नति कर सकता है।

हाथ कर्घे के धंधे के अतिरिक्त पूर्वी पंजाब, काश्मीर तथा उत्तर प्रदेश म गलीचे और कम्बल का धन्धा महत्वपूर्ण है। काश्मीर के गलीचे विदेशों को भेजे जाते हैं। किन्तु अब धंधे की दशा अच्छी नहीं है क्योंकि इस धन्धे को मिलों द्वारा बने हुए गलीचों का मुकाबला करना पड़ता है। हाथ से बने हुये गलीचे अधिक मूल्य के होते हैं। इस कारण उनकी माँग कम हो रही है। कम्बल का धन्धा उत्तर प्रदेश मिरजापुर, राजस्थान, पूर्वी पंजाब में बहुत प्रचलित हैं।

इन धन्धों के अतिरिक्त पीतल के बर्तन, चमड़े की चीज, लकड़ी, तेल पेरना, कुम्हारी, लुहारी, रस्सा बनाना इत्यादि मुख्य कुटीर धन्धे हैं। भारत में कुटीर धन्धे का विशेष महत्त्व है। ग्राम उद्योग संघ इस ओर विशेष प्रयत्न कर रहा है। इसके अतिरिक्त प्रादेशिक सरकारें भी कुटीर धन्धों को प्रोत्साहन दे रही हैं।

भारत में कुछ नवीन धंधे

भारत में युद्ध काल में कुछ नवीन धन्धों का प्रारम्भ हुआ है। जिनमें नीचे लिखे मुख्य हैं

समुद्री जहाज बनाने का धन्धा

भारत का समुद्रीय और तटीय व्यापार बहुत अधिक है। भारत का समुद्रीय व्यापार २½ करोड़ टन और यात्रियों की संख्या दो लाख पचास हजार के लगभग है। तटीय व्यापार ७० लाख टन है और यात्रियों की संख्या २० लाख है। इसका मूल्य ४ अरब रुपये के लगभग है अतएव इस बड़े व्यापार के लिए देश की नाविक शक्ति को बढ़ाना आवश्यक है। अभी तक विदेशी समुद्री जहाज ही भारत के व्यापार को करते हैं। अभी तक भारत के जहाज केवल २ समुद्रीय व्यापार और २१% तटीय व्यापार करते हैं और देश में केवल ६३ जहाज हैं।

अभी तक कलकत्ता और विजगापट्टम में केवल नाव बनाई जाती थीं और जहाजों की मरम्मत होती थी किन्तु अभी हाल में सिंधिया स्टीम नेवीगेशन कंपनी ने विजगापट्टम में जहाज बनाने का धंधा आरम्भ किया है और पहला जहाज बनकर तैयार हो गया है। विजगापट्टम के बन्दरगाह में पानी गहरा है इस कारण वहां बड़े जहाज बनाये जा सकते हैं। तातानगर ५५० मील है और बी० एन० आर० से विजगापट्टम जुड़ा है अस्तु स्पात मिलने की सुविधा है। छोटा नागपूर से आवश्यक लकड़ी मिल सकती है और गंगा इत्यादि से कच्चे का माल लेने जा रहा है। अतएव विजगापट्टम बन्दरगाह को वे सभी सुविधायें उपलब्ध हैं जो जहाज बनाने के लिए आवश्यक हैं।

अभी हाल में भारत सरकार ने घोषणा की है कि विजगापट्टम में जहाज बनाने के कारखाने को सरकार खरीद लेगी। दूसरे अर्थों में भविष्य में सरकार इस धंधे का राष्ट्रीयकरण करने जा रही है।

हवाई जहाज का धन्धा

लड़ाई के दिनों में बंगलौर में हवाई जहाज तथा उनकी मरम्मत करने का कारखाना स्थापित किया गया है। बंगलौर में हवाई जहाज बनाने के लिए सभी सुविधायें हैं। भद्रावती का लोहे का कारखाना समीप ही है दक्षिण मैसूर में हाइड्रोइलैक्ट्रिक की उन्नति होने के कारण जलविद्युत् का खूब विस्तार हुआ है,

बंगलौर की जलवायु भी उपयुक्त है, समुद्र से हटकर बंगलौर अन्दर की ओर है तथा वहाँ वैज्ञानिक इंस्टिट्यूट भी है।

मोटरकार का धन्धा

युद्ध के समय भारत में दो प्रसिद्ध व्यवसायियों (श्री वालचंद हीराचंद और श्री बिरला) ने दो बड़ी कंपनियाँ मोटरकार तैयार करने के लिए स्थापित की हैं। बिरला द्वारा स्थापित हिन्दुस्तान मोटर कंपनी ने मोटरकार बनाना आरम्भ कर दिया है। भविष्य में यह धन्धा उन्नति करेगा इसमें संदेह नहीं।

चितरंजन रेल के ऍंजिन बनाने का कारखाना

भारत सरकार के संरक्षण में ताता कंपनी ने रेल के ऍंजिन बनाने का एक बड़ा कारखाना स्थापित किया है जिसमें रेलवे ऍंजिन बनाये जाते हैं।

युद्ध के समय भारत की औद्योगिक दीनता का देश भर को अनुभव हुआ और बम्बई के प्रसिद्ध व्यवसायियों ने एक आर्थिक योजना तैयार की। यही नहीं भारत सरकार ने भी देश में उद्योग धन्धों की उन्नति के लिए योजनायें तैयार की हैं। देश में राष्ट्रीय सरकार के स्थापित हो जाने से अब यह आशा होती है कि शीघ्र ही देश के उद्योग धंधे उन्नति करेंगे।

अभ्यास के प्रश्न

१—भारत के वस्त्र व्यवसाय और जापान के वस्त्र व्यवसाय की तुलना कीजिये।

२—भारत की औद्योगिक उन्नति के लिए क्या देश में आवश्यक साधन उपलब्ध हैं? विस्तारपूर्वक लिखिए।

३—टाटानगर के स्पात के धन्धे को क्या सुविधायें प्राप्त हैं? भारत में लोहे और स्पात के धन्धे के सम्बन्ध में जो जानते हो उसका वर्णन कीजिए।

४—नीचे लिखे धन्धों के लिए देश में कौनसी भौगोलिक सुविधायें हैं? कागज, दियासलाई, सीमेंट और शीशा।

५—भारत में गृह उद्योग धन्धों की पिछड़ी हुई दशा का क्या कारण है? उनकी उन्नति के लिए क्या प्रयत्न किए जा सकते हैं?

बाईसवाँ परिच्छेद

गमनागमन के साधन

(Means of Transportation)

आधुनिक उद्योग धन्धे और व्यापार गमनागमन के साधनों पर अवलम्बित हैं। जिन धन्धों में कच्चा माल भारी है अथवा कोयले की अत्यन्त आवश्यकता होती है वे तो रेलवे लाइनों की सुविधा होते हुये भी कोयले की खानों से अथवा कच्चे माल से दूर स्थापित नहीं किये जा सकते। जिस प्रकार शक्ति आधुनिक उद्योग धंधों के लिए अत्यन्त आवश्यक है उसी प्रकार धंधों के लिये तथा व्यापार के लिए माल ढोने की सुविधाओं का होना अत्यन्त आवश्यक है। जिस देश में माल ढोने तथा गमनागमन के साधनों की कमी है वह कभी औद्योगिक तथा व्यापारिक उन्नति नहीं कर सकता।

भारत एक विशाल देश है, किन्तु यहाँ माल ढोने तथा गमनागमन के साधनों की सुविधायें बहुत कम हैं। अन्य देशों की तुलना में यहाँ सड़कों, रेलों और नदी नहरों के द्वारा माल ढोने की सुविधा कम है।

सड़कें

सड़कें भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से बनाई जाती रही हैं। यह गमनागमन का पुराना साधन है। मोहनजोदरो की खुदाई से यह सिद्ध हो गया है कि ईसा से कई हजार वर्ष पहले भी भारतीय पक्की सड़क बनाना जानते थे। सड़कें दो प्रकार की होती हैं, कच्ची (unmetalled) और पक्की (metalled)। कच्ची सड़कें वर्षा के दिनों में व्यर्थ हो जाती हैं। गाड़ियाँ उन पर नहीं चल सकतीं। कच्ची सड़कें बनाने में कुछ व्यय नहीं होता। परन्तु व्यापार की दृष्टि से उनका विशेष महत्व नहीं है। पक्की सड़कें अवश्य भारत में व्यापार तथा गमनागमन की मुख्य एवं महत्वपूर्ण साधन हैं। यद्यपि पक्की सड़कों पर भी पुल न होने से तथा वर्षा के दिनों में नदियों में बाढ़ आ जाने से उनका उतना महत्व नहीं है जितना रेलों का, किन्तु भारत जैसे विशाल देश में जहाँ रेलें अपेक्षाकृत कम हैं सड़कें महत्वपूर्ण मार्ग हैं। यदि भारत में पक्की सड़कों पर सब स्थानों पर पुल बना दिये जायें तो उनकी उपयोगिता

बहुत बढ़ आये। इस समय बहुत सी सड़कों पर पुल नहीं हैं। इसका फल यह होता है कि वर्षा के दिनों में उन सड़कों का अधिक उपयोग नहीं हो सकता। नवम्बर से जून तक जो अस्थायी पुल नदियों पर बना दिये जाते हैं उन पर प्रत्येक गाड़ी तथा जाने वाले व्यक्ति को उतराई देनी होती है। इससे असुविधा तो होती ही है खर्च भी होता है।

भारत में लगभग ३ लाख मील सड़कें हैं। इनमें लगभग एक चौथाई पक्की और शेष तीन चौथाई कच्ची सड़कें हैं। पक्की सड़कों में आधी से अधिक प्रायद्वीप
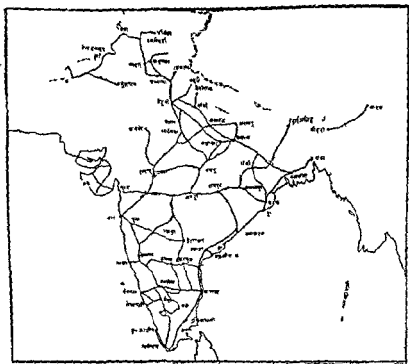
भारत की सड़कें

में हैं जहाँ पथरीली भूमि पर पक्की सड़कें बनाने में सुविधा होती है। कच्ची सड़कें अधिकतर उत्तर भारत विशेषकर गंगा के मैदान में हैं। क्योंकि गंगा के मैदान में भूमि नरम मिट्टी की बनी है और सड़क बनाने के लिये कंकड़ और पत्थर बहुत दूर से लाना पड़ता है जो वहाँ नहीं मिलता। देश की तीन चौथाई सड़कें

मैदान में हैं। यहाँ तथा उत्तर भारत में नदियों में बाढ़ आने की संभावना रहती है। बाढ़ों से पक्की सड़कों को बहुत हानि पहुँचती है। कच्ची सड़कों के बनाने में अधिक व्यय नहीं होता और वर्षा के उपरान्त उनको फिर बना दिया जाता है। इस कारण भी उत्तर भारत में कच्ची सड़कें अधिक हैं।

भारत जैसे विशाल देश की आवश्यकता को देखते हुये तथा अन्य देशों की तुलना में यहाँ सड़कें बहुत कम हैं।

प्रतिवर्ग मील क्षेत्रफल के पीछे भिन्न भिन्न देशों में सड़कों का माइलेज

जापान—३·००
ब्रिटेन—२·००
फ्रांस—१·८६
जर्मनी—१·१६
संयुक्त राज्य अमेरिका—१·००
भारत—·१८

प्रति १ लाख मनुष्यों के पीछे सड़कों का माइलेज

आस्ट्रेलिया—८२११
कनाडा—५८१४
संयुक्त राज्य अमरिका—२८५२
फ्रांस—१३६२
जापान—६८४
जर्मनी—५६५
रूस—५४७
ब्रिटेन—२७७
भारत—१४७

१९१४—१८ के प्रथम योरोपीय महायुद्ध के उपरान्त भारत में भी मोटर ट्रैफिक बहुत बढ़ी जिसके कारण भारत में सड़कों को बनाने की ओर सरकार का विशेष रूप से ध्यान गया। १९३६ के उपरान्त प्रत्येक प्रदेश में प्रादेशिक सरकारों ने अधिक सड़कें बनवाने के लिए योजनायें बनाईं और उसके लिए बहुत बड़ी रकमें अलहदा रख दी गईं। कारण यह था कि नये शासन विधान में गाँव वालों के हाथ

में मताधिकार पहुँच गया। गाँव वालों के लिए लगान कानून में सुधार और सड़कों को बनवाना, यही दो काम हैं जो कि उन्हें अधिक आकर्षित कर सकते हैं।

भारत में कुछ ट्रक सड़कें हैं जो देश के भिन्न भिन्न भागों को जोड़ती हैं। इन ट्रक सड़कों से अन्य सड़कें सम्बन्धित हैं। वस्तुत इन ट्रक सड़कों से देश की अन्य सड़कें मिलती हैं। इस कारण इनका व्यापारिक महत्व अधिक है। इनमें ग्राड ट्रक सड़क सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण है। यह सड़क पेशावर से कलकत्ते तक जाती है। इसके अतिरिक्त कलकत्ता से मदरास जाने वाली, मदरास से बम्बई जाने वाली, और बम्बई से देहली जाने वाली ट्रक सड़क भी महत्वपूर्ण हैं। यद्यपि ये सड़कें अच्छी अवस्था में रहती हैं और इन पर मोटर ट्रैफिक बहुत बढ़ गया है फिर भी इनमें सुधार की बहुत आवश्यकता है।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि दक्षिण में सड़कें अच्छी हैं। परन्तु राजस्थान, उड़ीसा और पूर्वी पंजाब में सड़कें बहुत कम हैं। पश्चिमी बंगाल में भी अधिकांश कच्ची सड़कें हैं। पूर्व में वर्षा तथा नदियों की अधिकता के कारण सड़क नहीं बन सकतीं। पहाड़ी भागों में विशेषकर दक्षिण राजस्थान-मालवा तथा हिमालय में पहाड़ी प्रदेश होने के कारण सड़कें बनाने में कठिनाई होती है।

१६२० के उपरान्त भारत में मोटर ट्रैफिक इतनी अधिक बढ़ गई है कि रेलों से भीषण प्रतिस्पर्द्धा होने लगी है। बात यह है कि मोटर बस थोड़े से फासले में चलती हैं इस कारण मुसाफिरों को अधिक सुविधा प्रदान कर सकती हैं। उदाहरण के लिए यदि इलाहाबाद जिले का कोई किसान अपने मुकदमें के लिए गाँव से प्रयाग आना चाहता है तो उसे मोटर कचहरी के समय पर पहुँचा सकती है और रात्रि होते वह मोटर द्वारा घर तक पहुँच सकता है। परन्तु रेलों के आने जाने का समय एक बहुत बड़े क्षेत्र की सुविधाओं को ध्यान में रखकर निश्चित किया जाता है। इसी प्रकार माल ले जाने में भी मोटर अधिकतर कीमती माल को ही ले जाते हैं और व्यापारी के गोदाम में सामान उतार देते हैं। यही नहीं व्यापारी भी अपने माल के साथ चला आता है। रेलवे लाइनें ये सब सुविधायें प्रदान नहीं कर सकतीं। यही नहीं सड़कें राज्य बनवाता है और मोटर उसका उपयोग करते हैं। यही कारण है सरकार ने पिछले दिनों पैट्रोल पर बढ़ाकर मोटरों से सड़कों के बनाने और उनकी मरम्मत करने में जो व्यय होता है उसका अधिकांश भाग वसूल करना शुरू कर दिया है। आवश्यकता इस बात की है कि रेलों और सड़कों की प्रतिस्पर्द्धा को कम किया जाय। बात यह है कि मोटरों द्वारा ७० या ८० मील से अधिक माल किफायत से नहीं भेजा जा सकता। अधिक दूरी तक माल ले जाने के लिए रेलों की आवश्य

कता फिर भी रहेगी। साथ ही मोटर से लाभ भी है। इस कारण दोनों प्रकार के साधनों की प्रतिस्पर्द्धा को कम करके उनमें सामञ्जस्य स्थापित करना चाहिए।

भारत में इस बात की आवश्यकता है कि गाँवों में अधिकाधिक सड़कें बनाई जावें। इस समय गाँवों में मार्गों की बहुत असुविधा है। खेती की पैदावार को मण्डियों तक लाने में बहुत असुविधा होती है। यदि गाँवों में सड़कें बन जावें तो मोटर द्वारा उनको मण्डियों और रेलवे लाइनों से जोड़ा जा सकता है। इससे जहाँ गाँवों की उन्नति होगी वहाँ रेलों को अधिक माल ढोने को मिलेगा। यदि गाँवों में मार्गों की सुविधा हो जाये तो वहाँ धन्धे भी पनप सकते हैं। बिना ग्रामीण मार्गों की उन्नति किए गाँवों की उन्नति नहीं हो सकती।

भारत तथा बर्मा में कार, लारी तथा मोटर साइकिल सब मिला कर लगभग दो लाख से कुछ कम हैं। इनमें १४% बम्बई में, १३.५% पश्चिमी बंगाल में, ११% मदरास में, १०.२५% बर्मा में, ८.५% उत्तर प्रदेश में, ६% पूर्वी पंजाब में, ३.४% बिहार में, ०.६% उड़ीसा में, ३.४% मध्यप्रदेश में, २.४% आसाम में, १% देहली में हैं। इसके अतिरिक्त अन्य प्रदेशों में लगभग १५% हैं।

पक्की सड़कों की दृष्टि से पश्चिमी बंगाल और मदरास प्रदेश का स्थान प्रथम है। इनके उपरान्त क्रमशः बम्बई, उत्तर प्रदेश, पूर्वी पंजाब और बिहार का नम्बर है। कच्ची और पक्की सड़कें मिलाकर सबसे अधिक सड़कें पश्चिमी बंगाल में हैं।

जलमार्ग (Water Transport)

यद्यपि भारत में बहुत सी नदियाँ हैं फिर भी आन्तरिक गमनागमन के लिए उनका उपयोग नहीं होता। अन्य देशों में नदियों के द्वारा बहुत माल एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जाता है। परन्तु भारत में नदियाँ का व्यापार की दृष्टि से अधिक महत्व नहीं है।

भारत में जल मार्गों की उन्नति न होने के दो कारण हैं। (१) यहाँ जल मार्गों की उन्नति में कुछ भौगोलिक कठिनाइयाँ हैं (२) भारत सरकार ने रेलवे कंपनियों के स्वार्थ की ओर अधिक ध्यान दिया और देश के जलमार्गों की उन्नति नहीं किया। ब्रिटिश पूँजी पतियों का रुपया रेलों में लगा था। वे नहीं चाहते थे कि जल मार्गों की उन्नति हो।

भारत में वर्षा के दिनों में नदियों में बाढ़ आती है, उस समय नदी की धारें बहुत तेज होती है। इस कारण उसमें नाव खेना कठिन होता है। गरमी के दिन, में अधिकांश नदियाँ सूख जाती हैं। केवल बड़ी नदियों में ही पानी रहता है। अस्तु

उन दिनों नदियों का उपयोग नहीं किया जा सकता। गर्मियों में बड़ी नदियों में भी पानी बहुत कम हो जाता है। अधिकतर नदियों के किनारे पर बहुत दूर तक रेती होती है इस कारण नदी के किनारे तक लदी हुई गाड़ियों का आना कठिन होता है। यही नहीं नदियाँ जल्दी जल्दी धारा बदलती हैं इस कारण भी उनका अधिक उपयोग नहीं किया जा सकता।

फिर भी यदि थोड़ी पूँजी लगाई जाती और नदियों के जलमार्ग को उन्नत करने का प्रयत्न किया जाता तो बहुत कम व्यय से देश में जलमार्गों का एक जाल बिछ जाता। गंगा और यमुना में बहुत दूर तक नावें आ जा सकती हैं। ब्रह्मपुत्र नदी में डिबरूगढ़ तक स्टीमर आते जाते हैं। पूर्वी बंगाल तथा आसाम में जलमार्गों का बहुत उपयोग होता है क्योंकि इस प्रदेश में बहुत सी छोटी छोटी सहायक नदियों की शाखायें बड़ी नदियों को जोड़ती हैं। इस प्रकार यहाँ जलमार्गों का एक जाल सा फैल गया है। इस प्रदेश में वर्षा के दिनों में नदियों में बहुत बाढ़ आती है। इस कारण रेलवे लाइनें कम हैं और सड़कें भी नहीं हैं। अतएव माल अधिकतर नदियों के द्वारा ही नावों से भेजा जाता है। जूट और चावल अधिकतर नदियों से ही ले जाया जाता है। यद्यपि दक्षिण की नदियाँ इतनी सुविधाजनक नहीं हैं। परन्तु यदि रेलवे लाइनों की १०% पूँजी भी इन नदियों को खेने योग्य बनाने में लगाई जावे तो गोदावरी, कृष्णा, भीमा और नीरा, व्यापारिक जलमार्ग बन सकता है।

सर० ए० काटन जो जलमार्गों के विशेषज्ञ थे, उन्होंने एक पार्लियामेंट की कमेटी के सामने कहा था, "मेरा कहना है कि भारत के लिए जलमार्ग अधिक उपयोगी सिद्ध होंगे। रेलवे लाइनों पर जितना व्यय हुआ है उससे आठवें हिस्से में नहरें बनाई जा सकती हैं जो माल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर बहुत कम खर्चे में ले जा सकती हैं। इन नहरों से सिंचाई भी होगी और वे व्यापारिक जलमार्ग का भी काम देंगी। राज्य को इन नहरों से घाटा नहीं होगा।" सर ए० काटन ने पूरी योजना बनाई थी। उनका कथन था कि ३ करोड़ पौंड में वे भारत के सब जल मार्ग बना सकते हैं। उनकी योजना के अनुसार कलकत्ते से गंगा के मार्ग से एक मार्ग बन सकता है। दूसरा मार्ग कोकोनाडा से सूरत तक गोदावरी और ताप्ती को जोड़ देने से बन सकता है। इसी प्रकार उन्होंने भारत में जलमार्गों की एक पूरी योजना तैयार की थी। किन्तु ब्रिटिश पूँजीपतियों ने इसका विरोध किया क्योंकि उनकी पूँजी रेलों में लगी हुई थी। अस्तु, भारत सरकार ने इस ओर ध्यान भी नहीं दिया।

बीसवीं शताब्दी में भारत में सिंचाई के लिए नहरों को बनाने का कार्य बड़े उत्साह से किया गया। इन नहरों में देश की बहुत पूँजी फँसी हुई है परन्तु भारत सरकार ने नहरों को जलमार्ग बनाने की ओर ध्यान नहीं दिया। भारत सरकार की उदासीनता का यह परिणाम हुआ कि देश में जलमार्गों की उन्नति न हो सकी।

भारत में थोड़ी सी ही नहरें हैं जिनके द्वारा माल आता जाता है। पंजाब की सरहिंद नहर में हिमालय से लकड़ी लाई जाती है। गंगा तथा जमुना की नहरों में भी थोड़ी खेती की पैदावार एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाई जाती है। बंगाल के पश्चिमी भाग की नहरें इस दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण हैं। हिजली और मिदनापुर की नहरें पश्चिमी जिलों की पैदावार को ले जाती हैं। दक्षिण में बकिंघम नहर एक महत्वपूर्ण जलमार्ग है। यह नहर कृष्णा को मदरास से जोड़ती है और तट से समान दूरी पर बहती है। बकिंघम नहर से चावल तथा कपास मदरास को भेजा जाता है। गोदावरी और कृष्णा की नहरों में भी नावें चलती हैं। पूर्व-तट की नदियों के डेल्टों में जो नहरें हैं वे सभी माल ले जाने के उपयोग में आती हैं। बिहार में सोन की नहर में भी बहुत माल आता है। अधिकतर इस नहर में कैमूर की पहाड़ी से पत्थर लाया जाता है।

जलमार्गों की दृष्टि से प० बंगाल, आसाम, मदरास और बिहार महत्वपूर्ण हैं। देश में कुल मिला कर केवल ३८०० मील खेई जाने वाली नहरें हैं। इनमें से दो तिहाई केवल मदरास और प० बंगाल में हैं। बकिंघम नहर और उड़ीसा नहर समुद्र के पानी को लेती हैं जिससे उनमें यथेष्ट पानी रहता है और उनमें बड़ी नावें आ जा सकती हैं। देश में ये ही दोनों नहरें सबसे बड़ी हैं।

गंगा नदी पर बिहार और प० बंगाल में, तथा ब्रह्मपुत्र नदी पर आसाम और प० बंगाल में स्टीमर चलते हैं। जितना अधिक जल नदी की धारा में होता है उतना ही बड़ा स्टीमर चल सकता है। हुगली नदी में बड़े बड़े जहाज कलकत्ते तक आ जा सकते हैं, किन्तु हुगली में भी बराबर खुदाई होती रहती है, नहीं तो रेत के कारण नदी की गहराई कम हो जाय और जहाज का आना जाना असम्भव हो जाय।

दामोदर घाटी, हीराकुड, कोसी तथा अन्य बहु उद्देशीय योजनायें बन जाने पर इन प्रदेशों में जलमार्ग की सुविधा हो जावेगा।

तटीय जलमार्ग। देश में अधिकतर बहुत सा माल समुद्र द्वारा एक बंदरगाह से दूसरे बन्दरगाह को जाता है। रेलवे कम्पनियाँ बहुत अधिक किराया ले

भारत में १६३६ के योरोपीय महायुद्ध के आरम्भ होने के समय लगभग ४२००० मील रेलवे लाइन थी। किन्तु युद्ध के समय कुछ रेलवे लाइनें उखाड़ दी गई हैं। भारत जैसे विशाल देश में अन्य देशों की तुलना में यह रेलवे माइलेज कम है। भिन्न भिन्न देशों में रेलवे माइलेज इस प्रकार है।

रेलवे लाइन (Railways)

ब्रिटिश द्वीप समूह—२३७००	मील
कनाडा—४२२००	"
आस्ट्रेलिया— ७४००	"
न्यूजीलैंड — ३७००	"
भारत—३३८६०	"
बि॰ अफ्रीका—१३६००	"
उत्तर प्रदेश अमेरिका—२५००००	"
मैक्सिको—१३४००	"
अरजैनटाइन २३५००	"
ब्राजील —१९६००	"
फ्रांस—२६८००	"
जर्मनी—३६०००	"
इटली—१६०००	"
पोलैंड — १२४००	"
स्वीडन —१०६००	"
शेष योरोप—७२१००	"
शेष ब्रिटिश साम्राज्य—५०००	"
शेष दक्षिण अमेरिका—१५३००	"
सोवियट रूस—४८५००	"
शेष एशिया—३८५००	"
शेष अफ्रीका—१७४००	"
शेष पृथ्वी—५६००	"

भारत में गमनागमन तथा माल ले जाने का रेलवे लाइन सबसे महत्त्वपूर्ण साधन है। यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि देश में कुल ३३८६० मील रेलवे लाइन है। जब कि बलजियम में प्रति एक हजार वर्ग मील पीछे २५० मील, ब्रिटेन २२० मील, जर्मनी में १७० मील, फ्रांस में १२५ मील, के लगभग है। इस

से यह देश पिछड़ा हुआ है। जिन देशों में औद्योगिक उन्नति हो चुकी है वहाँ प्रति एक हजार मील रेलवे माइलेज अधिक है।
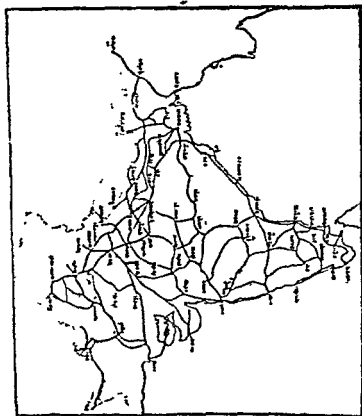
भारत के रेल मार्ग

भारत में सबसे अधिक रेलवे लाइनें गंगा के मैदान में हैं। देश का लगभग आधे से कुछ ही कम रेलवे माइलेज गंगा के मैदान में है। इसका कारण यह है कि यहाँ का धरातल चौरस है, कहीं भी पहाड़ियाँ नहीं हैं और भारत के अत्यन्त घने आबाद भाग इन्हीं मैदानों में हैं। उत्तर के मैदान बहुत उपजाऊ हैं और बड़ी-बड़ी व्यापारिक मंडियाँ तथा शहर इन मैदानों में हैं। परन्तु उत्तर के मैदानों में कुछ कठिनाइयाँ भी हैं। पूर्व में वर्षा अधिक होती है इस कारण नदियों में बाढ़ आती है और रेलवे लाइनों को हानि पहुँचाती है। साथ ही उत्तर के मैदानों में नदियों भी

बहुत हैं। इस कारण पुल बनाने में बहुत व्यय होता है। उत्तर की रेलवे लाइनें पूर्व में कलकत्ते पर समाप्त होती हैं।

उत्तर के मैदानों में मुख्य लाइना के अतिरिक्त शाखायें भी बहुत हैं। वस्तुत इन मैदानों में रेलवे लाइनों का एक जाल सा बिछा हुआ है। देश के अन्य किसी भी भाग में इतनी अधिक रेलवे लाइनें नहीं हैं। उत्तर के मैदानों की सबसे महत्वपूर्ण रेलवे लाइन ई० आई० आर० है। यह कलकत्ते को पश्चिम बंगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश से जोड़ती है। इसकी बहुत सी शाखायें हैं। यह रेलवे लाइन ईस्टर्न बंगाल रेलवे लाइन से नेहाटी पर, O T R से मोकमेह, पटना और भागलपुर पर, G I P से कानपुर, जबलपुर पर और E P R से गाजियाबाद पर मिलती है। सबसे अधिक माल ई आई० आर से ही आता जाता है। कानपुर में E I R, B B & C I R से भी मिलती है। ई० आई० आर० वास्तव में देश की सबसे महत्वपूर्ण रेलवे लाइन है। यह कलकत्ते के बन्दरगाह को बंगाल, बिहार और उड़ीसा के खनिज क्षेत्र तथा गंगा की उपजाऊ घाटी से जोड़ती है। १९२१ में भारत सरकार ने इसे अपने हाथ में ले लिया था।

अवध तिरहुत रेलवे (O T R) बंगाल के पश्चिमी भाग उत्तरी बिहार तथा उत्तर प्रदेश में फैली हुई है। O T R उत्तर प्रदेश में रुहेलखण्ड और कुमायूँ प्रदेश में फैली हुई है। O T R पर पैसेंजर ट्रैफिक के अतिरिक्त चावल, अनाज, शक्कर, तिलहन और खाल की ट्रैफिक बहुत है। इसके R K R Section पर शक्कर, हिमालय की लकड़ी तथा अनाज की ट्रैफिक बहुत है।

B N R कलकत्ते को नागपुर तथा मदरास से जोड़ती है। नागपुर पर यह G I P से मिली हुई है। इस प्रकार इसके द्वारा कलकत्ता और बम्बई के बन्दरगाह एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। वाल्टेर पर यह M & M S R से मिलती है। B N R झरिया की खानों को तथा टाटा कम्पनी की लोहे की खानों को जोड़ती है। यह रेलवे पहाड़ी और ऊबड़ खाबड़ प्रदेश में से होकर जाती है जहाँ आबादी घनी नहीं है।

प्रायद्वीप में रेलवे लाइनें कम हैं। इस भाग में धरातल पथरीला और ऊबड़ खाबड़ है। कहीं-कहीं पहाड़ियाँ मार्ग में आ गई हैं जिन्हें सुरंगें बना कर पार किया गया है। प्रायद्वीप के इस भाग में आबादी उतनी घनी नहीं है जितनी कि गंगा की घाटी में है। यहाँ उतनी पैदावार भी नहीं है। धरातल इतना अधिक ऊँच है कि G I P में बहुत से स्थानों पर दो ऐंजिन लगाने पड़ते हैं।

मे प्रायद्वीप में रलवे बनाना उत्तर का अपेक्षा अधिक व्यय-साध्य है। कहीं कहीं रेलव लाइनों को किसी पहाड़ का अथवा गार को बचाने के लिए बहुत चक्कर काट कर जाना पड़ता है। और कहीं कहीं पुल बनाकर इन खाइयों को पार करना पड़ता है।

0 प्रायद्वीप में G I P सबसे महत्वपूर्ण रेलवे लाइन है। यह प्रायद्वीप में फैली हुइ है। मध्यप्रदेश, मध्यभारत, दक्षिण पश्चिम राजस्थान और प्रायद्वीप का अधिकाश इस लाइन पर ही निर्भर है। यह बम्बई और मद्रास, बम्बई और देहली को जोड़ती है। यद्यपि यह रल कम घने आबाद वाले प्रदेश में मे होकर जाती है फिर भी अकेला लाइन होने के कारण इसका बहुत महत्व है। यह उत्तर भारत को बम्बई के बन्दरगाह स जोड़ती है और भारत के कपास उत्पन्न करने वाले भाग की मुख्य रल है। कपास के अतिरिक्त यह तिलहन अनाज, सन, खनिज पदार्थ, शक्कर, तम्बाकू, और लकड़ी बम्बई की ओर ले जाती है। यह भी राज्य का रेलवे है।

B B & C. I R भी बहुत लम्बी रेल है। राजस्थान, मालवा और गुजरात में फैली हुइ है। यह राजस्थान, मालवा और गुजरात को बम्बई से जोड़ती है। इसके अतिरिक्त यह देहली, उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों को भी जोड़ता है। नमक, कपास, अनाज, लकड़ी, अफीम, ऊन और लकड़ी की ट्रैफिक इसके द्वारा होता है।

M & S M R प्रायद्वीप के दक्षिण भाग में फैली हुई है। यह G I P से रायचूर पर और B N R से वाल्टर पर मिलती है। यह एक ओर मदरास और कलकत्ता तथा दूसरी ओर मदरास और बम्बइ को मिलाती है। यह जिस प्रदेश में है वह घना आबाद और उपजाऊ है। इस पर अनाज, कपास, तिलहन, नमक, शक्कर, तम्बाकू लकड़ी और खाल की ट्रैफिक बहुत होती है।

भारत में थार और राजस्थान की मरुभूमि तथा छोटा नागपुर और उड़ीसा के पथरीले एव ऊबड़ खाबड़ प्रदेश में रेलवे लाइनों का विस्तार नहीं हुआ है। इन प्रदेशों में आबादी बहुत कम है। अतएव रेलवे लाइनों को अधिक आवश्यकता भी नहीं है।

पिछले कुछ वर्षों मे भारत सरकार ने रेलवे लाइनों को अपने अधिकार में लेने की नीति बना ली है। आकवर्थ रेलवे कमेटी की सिफारिश के अनुसार इस नीति

को अपनाया गया है। देश की औद्योगिक तथा व्यापारिक उन्नति बहुत कुछ रेलों पर निर्भर है। इस कारण यह आवश्यक है कि रेलों की नीति भारतीय धंधों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण हो। रेलवे कम्पनियों के प्रति भारतीयों को यही शिकायत रही है कि उन्होंने भारतीय धंधों को प्रोत्साहन नहीं दिया। अब भारतीय रेलों के राज्य के अधिकार में आ जाने से यह शिकायत दूर हो गयी।

रेलों के विस्तार से देश को बहुत से लाभ हुये हैं। भारत जैसा विशाल देश एक सूत्र में बँध गया। रेलों के द्वारा आन्तरिक तथा विदेशी व्यापार भी बहुत बढ़ गया है। रेलवे लाइनों के समीप बड़ी-बड़ी व्यापारिक मंडियाँ तथा औद्योगिक केन्द्र स्थापित हो गये हैं। रेलवे लाइनों को बनाने तथा उनके लिये आवश्यक वस्तुओं को बनाने तथा डिब्बों की मरम्मत करने के लिए बहुत सी वर्कशाप खोली गई हैं जिनसे देश में कुशल मज़दूरों की संख्या बढ़ी है। बहुत से धंधे देश में केवल इसलिए स्थापित हुये हैं क्योंकि रेलवे लाइनों के खुलने से देश में उन वस्तुओं की माँग उत्पन्न हो गई। रेलवे लाइनों के खुल जाने से हमारे गाँवों की दूरी भी नष्ट हो गई। रेलों के बनने से पूर्व भारतीय गाँव आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी थे। प्रत्येक गाँव में स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ही फसल उत्पन्न की जाती थी। रेलों के बन जाने से व्यापारिक खेती सम्भव हो सकी। आज जो भिन्न भिन्न प्रदेशों में कपास, जूट इत्यादि की बहुत खेती होती है उसका केवल यही कारण है कि रेलों द्वारा यह माल बाहर भेजा जा सकता है। संक्षेप में रेलों के बन जाने से सारा भारत एक हो गया इस दृष्टि से उनका सामाजिक तथा राजनैतिक महत्व भी कम नहीं है।

जहाँ रेलों से बहुत से लाभ हुये हैं वहाँ रेलों के बनने से यहाँ के कुटीर उद्योग-धंधों को बहुत हानि पहुँची। बहुत से धंधे तो नष्ट हो गये। क्योंकि रेलों के बन जाने से विदेशों का तैयार माल गाँवों तक पहुँच जाता है। परन्तु रेलों के द्वारा ही भारतीय उद्योग-धंधों की स्थापना हो सकी है यह न भूल जाना चाहिए।

भारत में रेलवे लाइनों का निर्माण १८५० के बाद होना शुरू हुआ। आरम्भ में सरकार ने विदेशी कम्पनियों को एक निश्चित मुनाफे की गारंटी दी थी। जिस साल रेलों को घाटा होता तो सरकार उसे पूरा कर देती। ऐसा होने से विदेशी कम्पनियाँ मनमाना खर्च करने लगीं और सरकार को बहुत घाटा भरना पड़ा। अब सरकार ने रेलवे कम्पनियों से रेलों को ले लेने की नीति अपनाई। भारतीय रेलों का प्रबंध अब भी दोषपूर्ण है। तीसरे दर्जे के यात्रियों की कैसी दुर्दशा होती है यह किसी से छिपा नहीं है। माल भी हफ्तों पड़ा रहता है और व्यापारियों को डिब्बे नसीब

नहीं होते। रेलों के किराये की नीति भी ऐसी है कि जिससे धंधों की उन्नति में रुकावट होती है। इसके अतिरिक्त रेलों में जो सामान काम आता है वह विदेशों से मँगाया जाता है। देश में उस बनाने का प्रबंध नहीं किया जाता। आवश्यकता इस बात की है कि रेलों का प्रबंध राष्ट्र के हित को दृष्टि में रख कर किया जाय।

हवाई जहाज (Air Transport)

भारत अन्तर्राष्ट्रीय वायुमार्ग के रास्ते में है इस कारण इसका महत्व है। जिन जहाजों को योरोप से आस्ट्रेलिया अथवा सुदूर पूर्व को जाना होता है उन्हें भारत में से गुजरना पड़ता है। योरोप तथा सुदूर पूर्व और आस्ट्रेलिया को आने जाने वाले जहाज तीन राष्ट्रों के हैं। ब्रिटेन की हवाई लाइनें इम्पीरियल एयरवेज के नाम से प्रसिद्ध हैं, फ्रांस की एयरफ्रांस और हालैंड की K. L. M के नामों से प्रसिद्ध हैं।

इन सब लाइनों के जहाज करांची और कलकत्ते के मार्ग से जाते हैं। Imperial Airways और Indian Transcontinental Airways Ltd का सप्ताह में पाँच बार जहाज इगलैंड और भारत आता जाता है। योरोप से जो वायुमार्ग आस्ट्रेलिया को जाता है वह समुद्र तट के साथ साथ जाता है। अस्तु, करांची और कलकत्ता को वह छूता हुआ जाता है। डच लाइन (K L M) तथा फ्रैंच लाइन जो क्रमश ऐम्सटर्डम से बैंडयाग तथा पैरिस से हनोई तक जाती हैं करांची और कलकत्ते के मार्ग से ही जाती हैं। बीच में ये जहाज जोधपुर और इलाहाबाद के मार्ग से जाते हैं। इम्पीरियल एयरवेज तथा Indian Transcontinental Airways Ltd के जहाज करांची और कलकत्ता के बीच में दो मार्गों का अनुसरण करते हैं। एक मार्ग तो राजसमंद (उदयपुर), ग्वालियर, और इलाहाबाद होता हुआ कलकत्ता जाता है। दूसरा मार्ग जोधपुर, देहली, कानपुर और इलाहाबाद होता हुआ लखनऊ जाता है। इन तीनों विदेशी कम्पनियों के जहाजों को करांची और कलकत्ता पर उतरना ही पड़ता है। इसलिए ये दो प्रधान हवाई अड्डे बन गये हैं।

स्वतंत्र हो जाने के उपरान्त प्रजातंत्र भारत में वायु यातायात की शीघ्रता से उन्नति हुई और इस दृष्टि से भारत का संसार के राष्ट्रों में बहुत ऊँचा स्थान है। भारत में बम्बई, कलकत्ता, और दिल्ली ऐसे हवाई स्टेशन हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय ढंग पर नियमित किये जाते हैं। इनके अतिरिक्त भारत के निम्नलिखित सात प्रधान स्टेशन हैं—

१) अहमदाबाद, (२) इलाहाबाद, (३) लखनऊ (४) मद्रास (५)
((६) पटना (७) विजगापट्टम ।
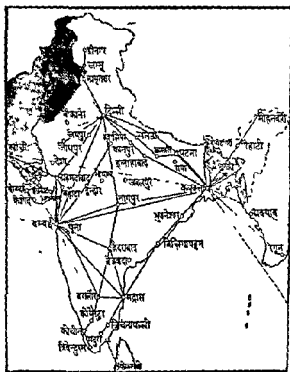
भारत के वायु मार्ग

भारत में १४ मध्य श्रेणी तथा २२ निम्नश्रेणी तथा २६ रियासती भारत के हवाई स्टेशन हैं। भारत सरकार ने १४ स्थानों पर नये हवाई स्टेशन बनाये हैं (१) अजमेर, (२) अलीगढ़ (३) बरहामपूर (४) कालीकट (५) कुडानोर (६) देहरादून (७) हुबली (८) मंगलोर (९) तेलोर (१०) उटकमंड (११) सेलम (१२) रत्नगिरी (१३) सागर और (१४) सूरत।

विभाजन के उपरान्त में २३ कम्पनियाँ और २ हवाइ मार्ग थे जिनकी लम्बाई १३२६५ मील थी। भारत में १६ दैनिक और ४२ साप्ताहिक सर्विस चलती हैं।

भारत में अग्रलिखित वायु मार्ग हैं —

हिमालय के दर्रों का मानचित्र

१—मकरान का दर्रा
२—बोलन का दर्रा
३—गोमल का दर्रा
४—खैबर का दर्रा
५—काराकोरम का दर्रा
६—शिपकी का दर्रा
७—चुम्बी घाटी का दर्रा
८—मनीपुर का दर्रा
९—तँगू गैर का दर्रा
१०—ऐन का दर्रा

११—तौंगूप का दर्रा

एक दूसरा भी रास्ता है जो 'लेह' (काश्मीर में) से काश्मीर और तिब्बत तक जाता है। यह अत्यन्त कठिन मार्ग है और इस मार्ग में काराकोरम का दर्रा (१८००० फीट) भी पड़ता है।

तिब्बत के लिए उत्तर भारत में दार्जिलिंग, नैनाताल और बेतिया से मार्ग जाते हैं।

उत्तर पूर्वी आसाम में 'लाडो' से बर्मा होकर जो मार्ग चीन को जाता है वह पिछले युद्ध में बहुत महत्वपूर्ण बन गया। पहले इस मार्ग का नाम लाडो बर्मा रोड था किन्तु अब शिन्वैल-रोड के नाम से पुकारते हैं। लाडो से यह मार्ग भी भामो तक जाता है। लाडो से एक स्वतंत्र मार्ग भी भामो तक जाता है। भामो से यह मार्ग पूर्व की ओर जाता है और ऊँचे पहाड़ों को पार करता हुआ 'कुनमिंग' पहुँचता है। लाडो से कुनमिंग तक १०४४ मील की दूरी है। यही मार्ग एक हजार

मील चलकर चुगकिंग पहुँचता है। युद्ध के समय इस मार्ग को बहुत अधिक सुधार दिया गया जिससे कि चीन को युद्ध सामग्री भेजी जाती थी। भविष्य में इस मार्ग के कारण भारत और चीन का व्यापार बढ़ेगा।

अभ्यास के प्रश्न

१—भारत में रेलों से क्या लाभ हुए हैं उनका वर्णन कीजिए।

२—उत्तर भारत के मैदानों में रेलों का विस्तार इतना अधिक क्यों हुआ है, विस्तार पूर्वक बतलाइए।

३—भारत के जलमार्गों का विवरण दीजिए।

४—रेल और सड़कों की प्रतिस्पर्द्धा से देश को क्या हानि है और उसे किस प्रकार दूर किया जा सकता है?

भारत में विदेशों से आने वाली मुख्य वस्तुओं का स्थान

दूसरे महायुद्ध के आरम्भ होने से पूर्व अर्थात् १६३८-३६ में भारत में केवल १४ करोड़ रुपये से कुछ अधिक का सूती वस्त्र आया। सूती वस्त्र भजने वालों में क्रमश मुख्य देश नीचे लिखे थे — ब्रिटन, जापान, चीन, स्विटजरलैंड, हालैंड, फ्रास, इटली, जर्मनी। मुख्य देश ब्रिटेन और जापान थे जो सूता वस्त्र भारत को भेजते थे। ब्रिटेन १० प्रतिशत और जापान ४३ प्रतिशत कपड़ा युद्ध के पूर्व भेजता था। पिछले दिनों भारत विशेषत मिश्र से कपास मँगवाने लगा है। युद्ध काल में विदेशों स आने वाला सूती कपड़ा बहुत कम हो गया और जापान का युद्ध आरम्भ हो जाने पर तो विदेशों से सूती वस्त्र आना प्राय बद हो गया।

सूती वस्त्र और कपास

युद्ध के पूर्व १६३६ में लोहा, स्पात तथा यत्र १६ करोड़ रुपये से अधिक क आये। पिछले दिनों भारत में मशीनों का आयात (Import) बढ़ रहा है। यह इस बात का चिन्ह है कि भारत में उद्योग धन्धों की उन्नति हो रही है। किन्तु युद्ध काल में मशीनों का आना बहुत कम हो गया। इस देश में मशीनों की बहुत माँग है क्योंकि देश में नये नये धन्धों के स्थापित करने की आवश्यकता है। अभी तो मशीनें बाहर स नहीं आ रही हैं क्योंकि मशीन बनाने के कारखाने अपने ही देशों को मशीनें नहीं द पा रहे हैं। किन्तु भविष्य में मशीनों का आयात (Impor) बहुत बढ जावेगा। इसमें तनिक भी सदेह नहीं है। युद्ध के पूर्व स्पात और मशीनें मुख्यत ब्रिटेन, जर्मनी, सयुक्तराज्य अमेरिका, बेलजियम, फ्रास और जापान से आती थीं।

लोहा और स्पात का सामान तथा मशीनें

मोटरकार इत्यादि — मुख्यत ब्रिटेन, सयुक्तराज्य अमेरिका, कैनाडा, जर्मनी, और इटली से आते हैं। प्रतिवर्ष ५ करोड़ रुपये के मोटर यहाँ आते हैं।

कागज — भारत में कागज ब्रिटेन, सयुक्तराज्य अमेरिका, जर्मनी, स्वीडन, और नारवे स आता है।

रेशम तथा रेशमी कपड़ा — जापान, चीन, इटली, और ब्रिटेन से आता है। जापान ७०% से अधि- रेशम भारत को भेजता था।

ब्रिटेन, जर्मनी, जापान तथा संयुक्तराज्य अमेरिका से आते हैं। १६३८ में
रासायनिक पदार्थ भारत ने ६ करोड़ रुपये के रासायनिक पदार्थ विदेशों से
(Chemicals) मँगवाये।

भारत में पैट्रोलियम तथा मिट्टी का तेल बर्मा, ईरान, चीन, बोरनियो, सुमात्रा,
पैट्रोलियम तथा संयुक्तराज्य अमेरिका से आता है।
मिट्टी का तेल

निर्यात (Export)

भारत युद्ध के पूर्व कपास मुख्यतः ब्रिटेन, जापान, जर्मनी, फ्रांस, इटली
बेलजियम, निदरलैंड और चीन को भेजता था। युद्ध के पूर्व
कपास सबसे अधिक कपास जापान लेता था (५५%)

किन्तु युद्ध काल में जापान से आने वाले सूती कपड़े के बन्द हो जाने के कारण एशिया और अफरीका में कपड़े का अकाल पड़ गया। अतएव भारत प्रतिवर्ष बहुत बड़ी राशि में कपड़ा ईराक, ईरान, स्ट्रेट सैटिलमेंट, मिश्र, दक्षिण अफ्रीका, अरेबिया इत्यादि देशों को भेजने लगा। भविष्य में भारत अपने इन बाजारों को कहाँ तक रख सकेगा यह कहना कठिन है।

घा	ई
ति ल	ई
क च्ची	रु ई
क च्चा	जू ट
मूं ग फ	ली

भारत १७ करोड़ रुपये से अधिक का कच्चा जूट विदेशों को भेजता था। ब्रिटेन
जर्मनी, संयुक्तराज्य अमेरिका, फ्रांस, इटली, बेलजियम और
जूट (कच्चा) स्पेन जूट मँगाने वालों में मुख्य थे। युद्ध के पूर्व ब्रिटेन
२६% और जर्मनी १६% जूट खरीदता था।

परन्तु जूट पैदा करने वाले भाग के पाकिस्तान में चले जाने से अब यह बात नहीं है।

जूट का सामान — जूट का सामान मोल लेने में संयुक्तराज्य अमेरिका, अर्जेनटाइन, बेलजियम, कनाडा, जापान मुख्य हैं। सबसे अधिक जूट का सामान (३२) संयुक्तराज्य अमेरिका लेता है। साधारणतः भारत २४ करोड़ रुपये का जूट का सामान बाहर भेजता था। किन्तु युद्ध में जूट के बोरे इत्यादि की माँग बहुत बढ़ गई। १९४२ में तो भारत ने ५८ करोड़ रुपये का जूट का सामान बाहर भेजा।

चाय (Tea) — भारत की चाय मुख्यतः ब्रिटेन, कनाडा, आस्ट्रेलिया, संयुक्तराज्य अमेरिका, ईरान, अरेबिया, तथा लंका को जाती है। ८६ चाय केवल ब्रिटेन ही मोल लेता है।

खालें (चमड़ा) — ब्रिटेन, संयुक्तराज्य अमेरिका, जर्मनी, जापान, इटली, और हालैंड मुख्यतः भारत से खालें खरीदते हैं। ब्रिटेन (६०) और संयुक्तराज्य अमेरिका (१५) सबसे अधिक खालें खरीदते हैं।

तिलहन (Oil-seeds) — तिलहन मुख्यतः ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, हालैंड, इटली, बेलजियम और सीलोन को जाता है। युद्ध के पूर्व ब्रिटेन २८० और इटली १६ तिलहन भारत से लेता था।

कच्चा धातुयें — ब्रिटेन, जापान, जर्मनी, बेलजियम, फ्रांस और संयुक्तराज्य अमेरिका को जाती हैं।

दूसरे युद्ध के फलस्वरूप भारत के विदेशी व्यापार में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। यद्यपि लड़ाई समाप्त हो गई, किन्तु पूर्ववत् व्यापार स्थापित होने में अभी कुछ वर्ष लगेंगे। युद्धकाल में भारत ने विदेशों को अधिकाधिक तैयार माल (Manufactured goods) भेजा और विदेशों से कच्चे माल (Raw materials) का आयात कम हो गया।

एक और भी परिवर्तन हुआ। योरोपीय देशों से भारत का व्यापार कम हो गया और ब्रिटेन तथा संयुक्तराज्य अमेरिका से व्यापार बढ़ गया। जापान से भी भारत का व्यापार कम हो गया। किन्तु क्रमशः जापान से हमारा व्यापार फिर बढ़ेगा।

भारत का व्यापार (Imports)

	कुल आयात का %
	१५.९२ ,,
कपास	१०.७६ ,,
तेल	९.८७ ,,
मशीन	७.७१ ,,
खनिज पदार्थ	७.०० ,,
अनाज, दाल, आटा	५.१३ ,,
मोटर इत्यादि	३ ५३ ,,
वैज्ञानिक औज़ार, अपरेटस, तथा यंत्र	२.८० ,,
नकली रेशम	२.३८ ,,
लकड़ी का सामान	२ ३८ ,,
कागज तथा बोर्ड	२.२७ ,,
रंग इत्यादि	१.९२ ,,
रासायनिक पदार्थ	१.९१ ,,
हार्ड वेयर	१.७२ ,,
लकड़ी	१.६४ ,,
कच्चा रेशम और रेशम का कपड़ा	१.५० ,,
खाद्य पदार्थ	१ ३५ ,,
ओषधियाँ	१.३३ ,,
शराब	१.०९ ,,
रबर का सामान	१.०५ ,,
मसाला	० ९१ ,,
फल	०.८६ ,,
शीशे के सामान	०.७४ ,,
अस्त्र शस्त्र	०.७२ ,,
हीरा जवाहरात तथा मोती	०.५८ ,,
पेंट	०.४९ ,,
तम्बाकू	

	कुल आयात का %
स्टेशनरी	०·४७ ,,
खाद	०·४६ ,,
शेष	११·५१ ,,
	१·०० ,,

भारत का निर्यात व्यापार

	कुल निर्यात का %
जूट (तैयार)	१६·०७ ,,
सूती वस्त्र	५·१४ ,,
चाय	१३·४८ ,,
तिलहन	७·८४ ,,
अनाज दाल आटा	५·२४ ,,
चमड़ा	४·०१ ,,
खनिज पदार्थ	३·३६ ,,
खाल	२·७६ ,,
ऊन और ऊनी कपड़ा	२·०६ ,,
खली	१·३४ ,,
फल	१·१५ ,,
तम्बाकू	१६·११ ,,
लाख	१ ,,
अबरख	०·८२ ,,
नारियल की जटायें	१·५८ ,,
तेल	०·५६ ,,
कोयला	०·५५ ,,
मसाला	०·५२ ,,
शेष	१·०० ,,

भारत के बन्दरगाह

भारत का समुद्रतट अधिक टूटा फूटा नहीं है। इस कारण यहाँ प्राकृतिक अच्छे बन्दरगाह कम ही हैं। पश्चिमी तट पर कैम्ब के उत्तर में नदियों की लाई हुई रेती से खाड़ियाँ पटती रहती हैं। इस कारण यहाँ कोई अच्छे बन्दरगाह नहीं हैं। पश्चिम तट के बन्दरगाहों के लिए एक कठिनाई यह है कि ज्वार भाटा का ग बहुत होता है। बम्बई एक द्वीप होने के कारण जहाजों के लिए अत्यन्त सुविधा

दनक है। पूर्व में कलकत्ते का बन्दरगाह महत्वपूर्ण है किन्तु वह नदी के मुहाने पर स्थित है। इस कारण जहाजों को घटों तक ज्वारभाटे की प्रतीक्षा में ठहरे रहना पड़ता है। जब पानी उठता है तब वे बन्दरगाह में आते हैं।

भारत मे निम्नलिखित बन्दरगाह हैं—
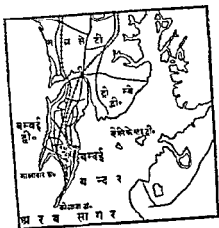
बम्बई का बन्दरगाह

काथला, बेदी, ओखा, पोरबन्दर, भावनगर, सूरत, बम्बई, मगलोर, तेलीचेरी, कालीकट, कोचीन, अलैपे, क्वीलन, तूतीकोरन, धनुष, कोडी, नेगापटम, कारीकल कुड्डालोर, मदरास, मछलीपट्टम, केकोनाडा, विजगापट्टम, विमलीपट्टम, गोपालपूर, बालासोर, चदबाली, कटक, पुरी, कलकत्ता।

बम्बई

बम्बई भारत का सबसे महत्वपूर्ण बन्दरगाह है। आज से २५ वर्ष पूर्व कलकत्ते का व्यापार बम्बई से अधिक था किन्तु प्रथम योरोपीय महायुद्ध के उपरान्त बम्बई का व्यापार कलकत्ते से बढ़ गया। १६३८ में बम्बई के बन्दरगाह में ५२ लाख टन के जहाज आये और गये और कलकत्ता में केवल ४३ लाख टन के जहाज आये और गये।

बम्बई को एक बड़ी सुविधा यह है कि पश्चिम तट के पश्चिमी घाट की ऊँची दीवार भीतरी प्रदेश से पृथक् किये हुये है किन्तु बम्बई के ठीक पीछे थाल घाट, पालघाट और भोर घाट के दर्रे हैं जिनके कारण सभी रेलवे लाइनों को बम्बई के बन्दरगाह पर ही आना पड़ता है। इसका अर्थ यह हुआ कि दक्षिण का उपजाऊ प्रदेश बम्बई का पृष्ठ प्रदेश (Hinterland) बन गया है जहाँ से खेती की पैदावार बम्बई के द्वारा विदेशों को भेजी जाती है। बम्बई ही भारत में एक ऐसा

मदरास, कोचीन, तूतीकोरन भी महत्वपूर्ण बन्दरगाह हैं किन्तु इन सबका व्यापार ६० करोड रुपये से अधिक नहीं है। अन्य बन्दरगाह केवल तटीय व्यापार के लिए ही उपयोगी हैं। उनका वैदेशिक व्यापार के लिए अधिक महत्व नहीं है।

इनके अतिरिक्त कुछ वर्ष हुये भारत सरकार ने विजगापट्टम का बन्दरगाह बनवाया है। यह बन्दरगाह मैंगनीज को बाहर भेजने के उद्देश्य से बनवाया गया है। मैंगनीज उत्पन्न करने वाला प्रदेश इस बन्दरगाह से लगा हुआ है।

पिछले कुछ वर्षों में विजगापट्टम भारत का महत्वपूर्ण बन्दरगाह बन गया है।

विजगापट्टम बन्दरगाह

यह कारोमंडल तट पर स्थित है और कलकत्ता तथा मदरास के बीच में है। कलकत्ते से यह ५०० मील दक्षिण में है और मदरास से यह ३२५ मील उत्तर में है। यहाँ से मैंगनीज, मूंगफली, मैरोबेलन्स (हर बहेड़ा), खालें अधिकतर विदेशों को भेजी जाती हैं और बाहर से आने वाले पदार्थों में शक्कर, कपास, लोहा, लकड़ी और मशीनें मुख्य हैं। विजगापट्टम बन्दरगाह पर सभी समुद्री जहाज तथा तटीय व्यापार में लगे हुये स्टीमर रुकते हैं।

विजगापट्टम उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश के पूर्वी भाग के व्यापार के लिए कलकत्ते से प्रतिस्पर्द्धा करता है। कलकत्ता की अपेक्षा विजगापट्टम इन प्रदेशों के अधिक पास है और बन्दरगाह की फीस इत्यादि भी कम है। विजगापट्टम बन्दरगाह के बन जाने से कलकत्ते के महत्व में कुछ कमी हो गई है। बी० यन० आर० की एक लाइन बन्दरगाह को मध्यप्रदेश के रायपुर से जोड़ती है इस कारण बन्दरगाह मध्यप्रदेश की मंडियों के समीप पड़ता है।

पिछले दिनों में काठियावाड़ के बन्दरगाह महत्वपूर्ण हो गये हैं। काठियावाड़ की भौगोलिक परिस्थिति ऐसी है कि वह राजस्थान और

काठियावाड़ के बन्दरगाह

समीपवर्ती प्रदेश के व्यापार को अच्छी तरह से कर सकते हैं। काठियावाड़ के बन्दरगाहों को एक लाभ यह है कि बन्दरगाह का खर्चा फीस इत्यादि बहुत कम है। मजदूरी भी यहाँ बहुत सस्ती है और यहाँ आय कर (Income Tax) तथा अन्य कर नहीं लगाये जाते। काठियावाड़ और राजस्थान में व्यापार बिना माल को बीच में उतारे चढ़ाये किया जा सकता है क्योंकि वहाँ रेलवे लाइनों की चौड़ाई एक सी है। किन्तु स्वतन्त्र भारत में रियासतें नहीं हैं। इन्हीं कारणों से काठियावाड़ के बन्दरगाह पिछले दिनों में अधिक महत्वपूर्ण बन गए हैं और वे बम्बई से प्रतिस्पर्द्धा करते हैं। इन बन्दरगाहों में प्रमुख काँडला है।

काठियावाड़ के मुख्य बन्दरगाह नीचे लिखे हैं :—(१) भावनगर, (२) बेदी बन्दर, (३) ओखा बन्दर, (४) नवलाखी, (५) वीरावल, (६) पोरबन्दर।
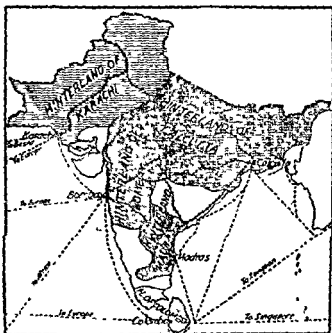
भारतीय बन्दरगाहों के पृष्ठ प्रदेश

(१) भावनगर

यह भावनगर स्थान की राजधानी है और खम्भात की खाड़ी के ऊपर पश्चिम की ओर स्थित है। बन्दरगाह में माल को सुरक्षित रखने के लिए सभी सुविधायें हैं और बन्दरगाह रेलवे लाइन द्वारा भिन्न-भिन्न बन्दरगाहों से सम्बन्धित है। जहाज बन्दरगाह से लगभग आठ मील दूरी पर ठहरते हैं और माल नावों द्वारा बन्दरगाह पर लाया जाता है। बन्दरगाह में रेत जमने के कारण १६३७ में नया गहरा बन्दरगाह बनवाया गया है जिसमें दो जहाज एक साथ रह सकते हैं। भावनगर का व्यापार तेजी से बढ़ रहा है। इसका महत्त्व तो इसी से स्पष्ट है कि १६२६ में बन्दरगाह से राज्य को जो आय थी आज उससे दस गुनी से भी अधिक आय होती है।

बदी बदर नवानगर का बन्दरगाह है। काठियावाड में सबसे पहले इसी बदरगाह ने उन्नति की। यह कच्छ की खाड़ी में स्थित है।

(२) बेदी बदर इस बदरगाह का समुद्रतट जहाजों के लिए बहुत उपयुक्त है और वर्ष के सब मौसमों में यह खुला रहता है।

बडौदा का यह मुख्य बन्दरगाह है। यह काठियावाड प्रायद्वीप (Peninsula) की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर स्थित है। इस कारण जितने भी

(३) ओखा जहाज समुद्र तट पर चलते हैं उनकी पहुँच के अन्दर है। इस बदरगाह में केवल एक दोष है। इसका मार्ग टेढ़ा मेढा और चक्करदार है और उसमे खतरा है। साथ ही यह जनसख्या बहुल प्रदेशों से बहुत दूर है।

मौरवी का यह प्रसिद्ध बदरगाह है और कच्छ की छोटी खाड़ी में स्थित है। बड़े जहाज बदरगाह से एक माल पर ठहरते हैं। फिर भी यह

(४) नवलाखा बन्दरगाह वर्ष भर खुला रहता है।

(५) बीरावल इस बन्दरगाह म छोटे जहाज भी आ सकते हैं।

यह एक महत्वपूर्ण बन्दरगाह है और पूर्वी अफ्रीका से इसका अधिक व्यापार होता है किन्तु वर्षा के दिनों म बन्दरगाह बन्द रहता है क्योंकि

(६) पोरबदर यह बिल्कुल खुला है।

कराची के पाकिस्तान म चले जाने से उसकी पूर्ति के लिए भारत सरकार ने

(७) कॉंधला कॉंधला बन्दरगाह को बनवाया है। यह कच्छ की खाड़ी में स्थित है।

काठियावाड़ के बन्दरगाहों पर विदेशों से शक्कर धातुओं का सामान, और कपास आता है। जो भी विदेशों से माल आता है उसका दो तिहाई से अधिक उन प्रदेशों के अतिरिक्त शेष भारत म खपता है। यहाँ से बाहर जाने वाली वस्तुओं म ऊन और तिलहन मुख्य है। युद्ध के पूर्व आयात व्यापार का प्रतिशत इस प्रकार था। ब्रिटेन ३५% जर्मनी १०% जापान ६ अन्य ३७% और निर्यात का ब्यौरा इस प्रकार था। ब्रिटेन ३६% जर्मनी १६ बेलजियम १०% जापान ५% अन्य देश ३३%।

यह कोयकण तट पर स्थित है। यह पोर्तुगीज भारत में है। इसका व्यापार क्षेत्र बम्बई, हैदराबाद और मैसूर तक फैला हुआ है। यहाँ से

मारमुगाओ मगनीज, मूगफली नारियल मुख्यत विदेशों को भेजे जाते हैं।

कालीकट यह कोचीन से ६० मील उत्तर में है। मौनसून के आरम्भ में यह बंद रहता है। यहाँ समुद्र छिछला है इस कारण जहाजों को बन्दरगाह से तीन मील दूर समुद्र में खड़ा होना पड़ता है। यहाँ से क्वायर- (नारियल का छिलका), कोपरा, कहवा, चाय, जिंजर, मूंगफली तथा मछली की खाद बाहर भेजी जाती है।

कोचीन कोचीन मदरास प्रदेश में एक बहुत महत्वपूर्ण बन्दरगाह है। बम्बई और कोलम्बो के बीच में यह सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। यहाँ से क्वायर, क्वायर की चटाइयाँ, कोपरा, नारियल का तेल, चाय और रबर मुख्यत विदेशों को भेजी जाती है।

तूतीकोरन यह मदरास का एक महत्वपूर्ण बन्दरगाह है, और दक्षिण प्रायद्वीप के दक्षिण में अन्तिम सीमा पर स्थित है। किन्तु बन्दरगाह छिछला है इस कारण उसको बराबर खोदते रहने की आवश्यकता पड़ती है। कपास, चाय, सैना की पत्तियाँ और प्याज मुख्यत. यहाँ से विदेशों को जाता है। इस बन्दरगाह का लंका से बहुत व्यापार होता है।

काँधला *करांची बन्दरगाह के पाकिस्तान में चले जाने के कारण उत्तर पश्चिमी प्रदेश* के लिए एक बड़े और आधुनिक बन्दरगाह की आवश्यकता अनुभव होने लगी। अतएव भारत सरकार ने काठियावाड़ के काँधला बंदरगाह को एक आधुनिक बड़े बंदरगाह में परिणत करने का काम आरम्भ कर दिया है। भविष्य में बड़ा से बड़ा जहाज इस बंदरगाह में आश्रय पा सकेगा। रेलवे लाइनों द्वारा इस बंदरगाह से भारत के भिन्न-भिन्न प्रदेशों से जोड़ने के लिए रेलवे का बंदरगाह तक विस्तार किया जा रहा है।

भारत के मुख्य व्यापारिक केन्द्र

बंदरगाहों के अतिरिक्त भारत के मुख्य व्यापारिक केन्द्र निम्न-लिखित हैं :—

कानपुर, देहली अहमदाबाद, अमृतसर, आगरा, आसनसोल, अमरावती, जयपुर, इंदौर, बंगलौर, बनारस, लखनऊ, नागपूर, हैदराबाद, बड़ौदा, ग्वालियर, जबलपूर, मदूरा, विजगापट्टम, शोलापुर, इलाहाबाद, मैसूर।

भारत में जितने भी बन्दरगाह हैं वे सभी व्यापारिक केन्द्र हैं। बंदरगाहों को व्यापारिक केन्द्र बन जाना स्वाभाविक है। अपने व्यापार क्षेत्र की पैदावार को वे आकर्षित करते हैं और बाहर से आये हुये माल को व देश के भिन्न-भिन्न भागों में भेजते हैं। भारत में कलकत्ता, बम्बई का सबसे बड़े औद्योगिक केन्द्र बन जाना

स्वाभाविक भी था। फिर बंदरगाहों से देश के व्यापार-मार्ग विशेषकर रेलवे लाइनें जुड़ा हैं। भीतरी प्रदेश के व्यापारिक केन्द्र भिन्न भिन्न कारणों से उन्नति कर गये हैं। कानपूर, अहमदाबाद, देहली, शोलापूर रेलवे जंकशन होने के अतिरिक्त ऐसे उपजाऊ और घने प्रदेशों के बीच में हैं कि उनका व्यापारिक केन्द्र बन जाना स्वाभाविक ही था। इन केन्द्रों में उद्योग धंधों के साथ ही बड़ी-बड़ी मंडियाँ स्थापित हो गई हैं और तैयार माल को समीपवर्ती केन्द्रों में भेजने की यहाँ से विशेष सुविधा है। उदाहरण के लिये उत्तर भारत में देहली कपड़ा, विसातखाने तथा अन्य वस्तुओं का वितरण केन्द्र (Distributing centre) बन गया है। कुछ केन्द्रों का महत्व राजनैतिक भी है। देहली, हैदराबाद, लखनऊ, जयपुर, ग्वालियर राजधानी होने के कारण भी महत्वपूर्ण हैं। फिर जहाँ गमनागमन की सुविधा हो और जन संख्या अधिक हो वह स्थान व्यापारिक केन्द्र तो बन ही जाता है।

इन प्रमुख केन्द्रों के अतिरिक्त भारत में छोटी बड़ी मंडियाँ बहुत हैं जिनमें खेत की पैदावार गाँवों से आती है। गमनागमन के साधनों का अभाव, छोटे-छोटे खेतों पर खेती का चलन, खेती की पैदावार की बिक्री का कोई समुचित प्रबन्ध न होने के कारण ये मंडियाँ और पैंठें महत्वपूर्ण हैं। किसान अपनी फसल को इन्हीं मंडियों में लाता है।

अभ्यास के प्रश्न

१—भारत के विदेशी व्यापार की विशेषताओं का वर्णन कीजिये।

२—भारत के निर्यात (Export) व्यापार की मुख्य वस्तुएँ कौन सी हैं और वे कहाँ जाती हैं।

३—भारत के आयात व्यापार (Import) की मुख्य वस्तुएँ क्या हैं और वे कहाँ से आती हैं।

४—कलकत्ता, बम्बई और विजगापट्टम बन्दरगाह की स्थिति और उनके व्यापार का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

स्वेविहर राष्ट्र इतना घना आबाद नहीं है। यही कारण है कि भारत निर्धन राष्ट्र है। अब हम यहाँ भारत के भिन्न भिन्न प्रदेशों की प्रति वर्ग मील पीछे जनसंख्या का विवरण देंगे।

भारत में प्रति वर्ग मील पीछे जनसंख्या

	१९३१	१९४१
समस्त भारत	२१३	२४६
देशी राज्य		
मद्रास	३५०	३६१
बम्बई	२३५	२७२
पश्चिमी बंगाल	६२७	७७६
उत्तर प्रदेश	४१५	५१८
पूर्वी पंजाब	२३८	२८७
बिहार	४६४	५२१
मध्यप्रदेश	१५६	१७०
आसाम	१५७	१८६
उड़ीसा	२४६	२७१
अजमेर मरवाड़ा	२११	२४३
अंडमन निकोबार	६	११
कुर्ग	१०३	१०६
देहली	१०११	१५९६
गण	११४	१३०

ऊपर के आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि केवल समस्त भारत की ही आबादी नहीं बढ़ी है वरन् सारे प्रदेशों की आबादी बढ़ गई है।

जनसंख्या का घना होना या बिखरा होना बहुत सी बातों पर निर्भर होता है। उनमें जलवायु, जीवन और धन की सुरक्षा, तथा जीवन निर्वाह के साधन मुख्य हैं। जहाँ तक जलवायु का प्रश्न है भारत के किसी भाग की जलवायु ऐसी नहीं है जो मनुष्य निवास के अयोग्य हो। जहाँ तक सुरक्षा का प्रश्न है १५ अगस्त १९४७ के बाद जो बर्बरता का नग्न दृश्य इस देश में उपस्थित हुआ है उसके कारण पंजाब, बंगाल, सिंध तथा सीमा प्रान्त में जीवन और धन की रक्षा न हो सकी और लाखों व्यक्तियों को अपने पैतृक गृह को छोड़ना पड़ा। परन्तु वह अस्थायी था और अब देश में सुरक्षा है। अस्तु केवल एक कारण रह जाता है जिस पर भारत में जनसंख्या का घनी अथवा बिखरी होना निर्भर है और वह है "जीवन

निर्वाह के साधन।" संसार के प्रत्येक देश में जनसंख्या का घनत्व मुख्यत जीवन निर्वाह के साधनों पर ही निर्भर रहता है।

भारत क्योंकि कृषि प्रधान देश है और भारत की अधिकांश जनसंख्या के निर्वाह का साधन कृषि है इस कारण भारत में जनसंख्या उन प्रदेशों में बहुत घनी है जहाँ खेती के लिए अच्छी सुविधायें हैं और उन प्रदेशों में छिदरी है जहाँ खेती के लिए सुविधायें कम हैं।

भारत में जनसंख्या का घनत्व

यदि भारत की जनसंख्या के चित्र को देखा जावे तो स्पष्ट ज्ञात हो जावेगा कि भारत में घनी आबादी वाले प्रदेश नीचे लिखे हैं —

(१) गंगा की घाटी के प्रदेश (२) दक्षिण में नदियों के डेल्टा प्रदेश (३) दक्षिणी पश्चिमी तटीय प्रदेश जिसमें ट्रावनकोर और कोचीन सम्मिलित हैं। ट्रावनकोर, कोचीन, तथा प० बंगाल और आसाम के कुछ जिलों में बहुत घनी आबादी (१००० मनुष्य प्रति वर्ग मील से ऊपर) है।

अतिरिक्त राष्ट्र इतना घना आबाद नहीं है। यही कारण है कि भारत निर्धन राष्ट्र है। अब हम यहां भारत के भिन्न भिन्न प्रदेशों की प्रति वर्ग मील पीछे जनसंख्या का विवरण देंगे

भारत में प्रति वर्ग मील पीछे जनसंख्या

	१९३१	१९४१
समस्त भारत	२१३	२४६
देशी राज्य		
मद्रास	३५०	३९१
बम्बई	२३५	२७२
पश्चिमी बंगाल	६९७	७७९
उत्तर प्रदेश	४१५	५१८
पूर्वी पंजाब	२३८	२८७
बिहार	४६४	५२१
मध्यप्रदेश	१५६	१७०
आसाम	१५७	१८६
उड़ीसा	[illegible]६	२७१
अजमेर मेरवाड़ा	२११	२४१

निर्वाह के साधन।" संसार के प्रत्येक देश में जनसंख्या का घनत्व मुख्यतः जीवन निर्वाह के साधनों पर ही निर्भर रहता है।

भारत क्योंकि कृषि प्रधान देश है और भारत की अधिकांश जनसंख्या के निर्वाह का साधन कृषि है इस कारण भारत में जनसंख्या उन प्रदेशों में बहुत घनी है जहाँ खेती के लिए अच्छी सुविधायें हैं और उन प्रदेशों में विरली है जहाँ खेती के लिए सुविधायें कम हैं।

भारत में जनसंख्या का घनत्व

यदि भारत की जनसंख्या के चित्र को देखा जावे तो स्पष्ट ज्ञात हो जावेगा कि भारत में घनी आबादी वाले प्रदेश नीचे लिखे हैं —

(१) गंगा की घाटी के प्रदेश (२) दक्षिण में नदियों के डेल्टा प्रदेश (३) दक्षिणी पश्चिमी तटीय प्रदेश जिसमें ट्रावनकोर और कोचीन सम्मिलित हैं। ट्रावनकोर, कोचीन, तथा प० बंगाल और आसाम के कुछ जिलों में बहुत घनी आबादी (१००० मनुष्य प्रति वर्ग मील से ऊपर) है।

हिमालय के पहाड़ी प्रदेश, राजस्थान, और थार की मरुभूमि, तथा छोटा नागपूर, बस्तर और उड़ीसा के सूखे प्रदेशों में आबादी बहुत ही बिखरी हुई है।

गंगा की घाटी में जनसंख्या जैसे जैसे उत्तर पश्चिम की ओर बढ़िये तो घटती जाती है क्योंकि वर्षा की मात्रा उत्तर पश्चिम की ओर घटती जाती है। किन्तु उत्तर-पश्चिम में भी जहाँ सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं जनसंख्या घनी है। गंगा की घाटी के डेल्टा प्रदेश में जनसंख्या बिखरी है क्योंकि वह दलदल और नम है।
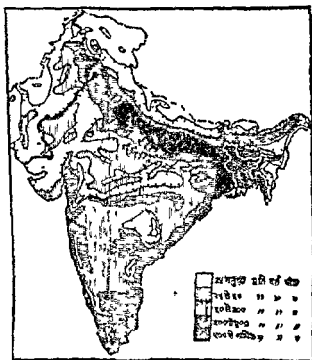
भारत की जनसंख्या

पूर्वी पंजाब में हिमालय के निकटवर्ती प्रदेश में जहाँ वर्षा अधिक है और सिंचाई के साधन भी प्रचुर मात्रा में हैं जनसंख्या घना है।

प्रायद्वीप में तटीय मैदानों को छोड़कर जनसंख्या प्रायः बिखरी है। इसका कारण यह है कि वहाँ का धरातल ऊबड़ खाबड़ है और अधिकांश वनों से घिरा है।

भारत की जनसंख्या की एक मुख्य विशेषता यह है कि देश की अधिकांश जनसंख्या या पेशों जनसंख्या खेती पर निर्भर है। पेशों के अनुसार जनसंख्या के अनुसार बटवारा का बँटवारा इस प्रकार है —

व्यवसाय या पेशा		जनसंख्या का प्रतिशत
१ कच्चे माल का उत्पत्ति		
खेती और शिकार आदि	६७ १०	
मछली पकड़ना	२%	६७ २
खान खोदना		
२ व्यापार उद्योग आदि		
उद्योग	१°	
यातायात	१५	१६ ६
व्यापार	५१	
	१६ ६%	
३, शासन, सरकारी नौकरी आदि		
सरकारी नौकर	० ६	
शासन विभाग में		
कार्यकर्ता	० ६%	
डाक्टर वकील आदि	१५	
४ अन्य पेशा	२७	
	० १%	२७
अपनी आय पर निर्भर	७ १%	
घरेलू नौकर		
जिनके पेशे के विषय में	५ १%	
ज्ञान नहीं है।	११	१३ ४
अनुत्पादक पेशे	१३ ४/	
		१००%

ऊपर के आँकड़ा में खेती पर अवलम्बित जनसंख्या वास्तव में कम दिखाई गई है क्योंकि बहुत से मजदूर—मुख्यत स्त्रियाँ जो खेती पर निर्भर हैं—घरेलू नौकरों में सम्मिलित कर लिए गए हैं और कुछ मजदूर अवकाश के समय धंधों में काम पा जाते हैं वे उद्योग पर निर्भर मान लिए गए हैं। विद्वानों का अनुमान है

कि भारत में कृषि पर निर्भर रहने वालों की सख्या ७३% के लगभग है। हर्ष की बात है कि राष्ट्रीय सरकार का ध्यान उद्योग धधों की ओर गया है। देश में इस बात की आवश्यकता है कि जनसख्या को कृषि पर इतना अधिक निर्भर न रहने दिया जावे।

गाँव और नगर

भारत मुख्यत गाँवों का देश है। १९३१ में देश की कुल जनसख्या का ११% नगर में रहता था और शेष गाँवों में रहता था। १९४१ की गणना के अनुसार १२ ८ जनसख्या नगरों में निवास करती है। यद्यपि शहरों की ओर प्रवास बढ रहा है फिर भी भारत मुख्यत गाँवों का ही देश है। किन्तु बड़े शहर तेजी से बढ़ रहे हैं। इसके दो मुख्य कारण हैं। बड़े नगरों में उद्योग धधे केन्द्रित हैं और मध्यम श्रेणी के व्यक्ति नगरों में ही रहना पसद करते हैं। इतना सब कुछ होने पर भी १९३१ में भारत में केवल ३५ नगर ऐसे थे जिनकी जनसख्या एक लाख से ऊपर थी और १९४१ की गणना के अनुसार ऐसे नगरों की सख्या ५८ थी।

१९४१ में ५८ नगरों को छोड़कर देश में ६, ९९, ८३१ गाँव और २५७५ कस्बे थे। विभाजन के फलस्वरूप अब भारत में पाँच लाख पचास हजार के लगभग गाँव हैं। इन गाँवों का बँटवारा इस प्रकार है।

गाँवों की जनसख्या	कुल जनसख्या का प्रतिशत
५,००० मनुष्यों से कम	२७ ५
५००० से १००० तक	२२
१ ०० से २०००	२०
२००० से ५०००	१५
५००० से १०,०००	४
१०,००० से २०,०००	२
२०,००० से ५०,०००	२
५०,००० से ऊपर	७
	१००

ऊपर की तालिका से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत गाँवों का देश है।

सन् १९५१ की जनगणना के अनुसार भारत की जनसख्या इ प्रकार है —

भारत की जनसंख्या

	क्षेत्रफल	जनसंख्या
आसाम	५४ ०८४	९,१२६,४४२
बिहार	७०,३६८	४०,२१८,९१६
बम्बई	११५,५७०	३५ ९४३,५५९
मध्यप्रदेश	१३०,३२३	२१,३२७,८९८
मदरास	१२७,७६८	५६,९५२,३३२
उड़ीसा	५९,८६६	१४,६४४,२९३
पूर्वी पंजाब	३७,४२८	१२,६३८,६११
उत्तर प्रदेश	११२,५२३	६३,२५४,११८
पश्चिमी बंगाल	२९,४७३	२४,७८६,६८३
हैदराबाद	८२,३१३	१८,६५२,६४२
मध्यभारत	४६,७१०	७,९४१,६६४
मैसूर	२९,४५८	४,६६३,८५८
पेप्सू	१०,०९९	१,८७३,२०५
राजस्थान	१२८,४२४	१५,२९७,९७९
सौराष्ट्र	२१,०६२	४,१३६,००५
ट्रावनकोर कोचीन	९,१४५	९,२६५,१६७
अजमेर	२,४२५	६९२,५०६
भूपाल	६९२१	८३८,१०७
बिलासपूर	४५३	१२७,५६६
कुर्ग	१५९३	२२९,२५५
देहली	५७४	१,७४३,९९२
हिमाचल प्रदेश	१०,६००	९८९,४३७
कच्छ	८४६१	५६७,८२५
मनीपूर	८६२०	५७९,०५८
त्रिपुरा	४०४९	४४९,९३०
विन्ध्यप्रदेश	२४६००	३,५७७,४११
अण्डमन निकोबार	३१४३	३०,३०९६३
सिकिम	२७४५	१३५,६४६
भूटान	५,८८८	१६६,६०९
सम्पूर्ण भारत का जोड़	१,१३८,८१४	३५,६८,९१,६२४

जबसे भारत में जनसंख्या की गणना हुई है तब से प्रत्येक दशाब्द में जन संख्या बढ़ जाती है। इससे यह तो स्पष्ट है कि भारत की

जनसंख्या की भविष्य बढ़वार

जनसंख्या बढ़ रही है। भारत में जनसंख्या ३३ से ३६ प्रति हजार व्यक्तियों के पीछे २२ या २३ मर जाते हैं। भारतीयों की आयु भी संसार के अन्य देशों के लोगों की आयु के मुकाबिले बहुत ही कम है। भारत में आयु की औसत केवल २७ वर्ष ही है, जब कि इंगलैंड, न्यूजीलैंड आदि देशों में लगभग ७६ के। इससे यह स्पष्ट है कि भारत की जनसंख्या की दशा बुरी है। अधिक बच्चों का उत्पन्न होना और अधिक व्यक्तियों का मरना अधिक रोगों और नीचे रहन सहन के दर्जे का प्रमाण है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि १५६० में भारत में दस करोड़ मनुष्य निवास करते थे (आइने अकबरी के अनुसार) और अब इस देश की जनसंख्या लगभग ३५ करोड़ है।

जनसंख्या के तेजी से बढ़ने के कारण परन्तु धनोत्पत्ति उसी अनुपात में अधिक न होने के कारण प्रति व्यक्ति पीछे वार्षिक आय बहुत कम है। नेशनल प्लैनिंग कमेटी ने प्रति व्यक्ति की आय ३० रु० वार्षिक कूती थी और सर्वश्री शिराज महोदय ने ६३ रु० कूती है। जो भी हो यह तो इससे सिद्ध होता ही है कि भारत संसार का अत्यन्त निर्धन देश है। यद्यपि प्रकृति ने उसे धनी बनाया है। बात यह है कि हमने प्रकृति की देन का पूरा पूरा उपयोग नहीं किया है। यदि वैज्ञानिक ढंग से गहरी खेती (Intensive cultivation) की जावे और उद्योग धंधों की तेजी से स्थापना हो तो भारत शीघ्र ही एक महान् समृद्धिशाली राष्ट्र बन सकता है।

अभ्यास के प्रश्न

१—भारत में जनसंख्या के घनत्व (Density) पर भौगोलिक परिस्थितियों का कहाँ तक प्रभाव है?

२—गंगा की घाटी में आबादी घनी क्यों है?

३—भारत में जनसंख्या और वर्षा का सम्बन्ध बतलाइए।

४—भारत में गाँवों की इतनी अधिकता क्या है?

पच्चीसवाँ परिच्छेद

पाकिस्तान का आर्थिक भूगोल

विस्तार

१५ अगस्त १९४७ को भारत स्वाधीन हो गया किन्तु साथ ही साथ भारत की एकता नष्ट हो गई और उसको दो स्वतन्त्र राष्ट्रों में विभाजित कर दिया गया। पश्चिमी पंजाब, सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान सिंध और पूर्वी बंगाल तथा आसाम का सिलहट का अधिकांश जिला पाकिस्तान में सम्मिलित कर दिये गए। शेष सारा देश भारत के अन्तर्गत रहा। भौगोलिक दृष्टि से पाकिस्तान दो भागों में बँट गया है—पश्चिमी पाकिस्तान और पूर्वी पाकिस्तान। पश्चिमी पाकिस्तान और पूर्वी पाकिस्तान में १ हजार मील से अधिक का अन्तर है। पश्चिमी पाकिस्तान में पश्चिमी पंजाब, सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान, सिंध सम्मिलित हैं। पूर्वी पाकिस्तान में पूर्वी बंगाल तथा आसाम का सिलहट का जिला सम्मिलित है।

पंजाब के नीचे लिखे जिले पश्चिमी पाकिस्तान में सम्मिलित कर दिये गए हैं :—गुजरानवाला, लाहौर, शेखूपुर, सियालकोट, अटक, गुजरात झेलम, मियांवाली, रावलपिंडी, शाहपुर, डेरागाजीखाँ, झंग, लायलपुर, मांटगोमरी, मुलतान, मुजफ्फरगढ़, गुरदासपुर का भाग।

पूर्वी बंगाल के नीचे लिखे जिले पूर्वी पाकिस्तान में चले गये हैं :—चटगाँव, नोआखाली, टिप्परा, बाकरगंज, ढाका, मेमनसिंह, जैसोर, मुर्शिदाबाद नदिया, फरीदपुर बोगरा, दीनाजपुर, माल्दा, पबना, राजशाही, रंगपुर, और आसाम का सिलहट का भाग।

बंगाल का कुल क्षेत्रफल (७७ हजार वर्ग मील) में से ५१ हजार वर्ग मील क्षेत्रफल पूर्वी बंगाल के रूप में पाकिस्तान में चला गया। शेष २६ हजार वर्गमील पश्चिमी बंगाल के रूप में भारत में रह गया है। इसका अर्थ यह हुआ कि लगभग ६६ % बंगाल पाकिस्तान में चला गया।

पंजाब का कुल क्षेत्रफल ६६ हजार वर्गमील था जिसमें ६२ हजार वर्ग मील भूमि पश्चिमी पंजाब के रूप में पाकिस्तान में चली गई। इसका अर्थ यह हुआ कि लगभग ६२% से कुछ अधिक पंजाब का प्रदेश पश्चिमी पंजाब में चला गया। ऊपर लिखे उन सभी प्रदेशों और प्रान्तों अर्थात् सम्पूर्ण सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान, सिंध, पश्चिमी पंजाब, पूर्वी बंगाल और सिलहट के जिले को मिलाकर पाकिस्तान का कुल क्षेत्रफल ४ लाख वर्गमील है। विभाजन के पूर्व कुल भारत का क्षेत्रफल १६ लाख वर्ग मील था। इस प्रकार पाकिस्तान को निकालकर वर्तमान भारत का क्षेत्रफल १२ लाख वर्गमील है। अस्तु पाकिस्तान में सम्पूर्ण भारत की केवल २५% और वर्तमान भारत में सम्पूर्ण भारत की ७५ भूमि है। अर्थात् वर्तमान भारत
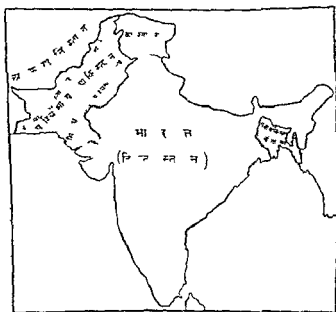
पाकिस्तान तथा भारत का क्षेत्रफल

का कुल पाकिस्तान क्षेत्रफल की दृष्टि से लगभग तीसरा भाग है। अस्तु भारत की तुलना में यह एक बहुत छोटा देश है।

पश्चिमी पाकिस्तान का क्षेत्रफल ३२५,००० वर्ग मील है और पूर्वी पाकिस्तान का क्षेत्रफल ७५,००० वर्ग मील है।

बंगाल की जनसंख्या १९४१ की मनुष्य गणना के अनुसार ६ करोड़ थी। इस बँटवारे के अनुसार पाकिस्तान में जानेवाले पूर्वी बंगाल के

जनसंख्या

भाग में ३ करोड़ ९७ लाख जनसंख्या चली गई। शेष २ करोड़ ३ लाख पश्चिमी बंगाल अर्थात् भारत में रह गई। अस्तु कुल बंगाल की ६५.९% जनसंख्या पाकिस्तान में चली गई। पूर्वी बंगाल की जनसंख्या में यदि सिलहट के जिले की जनसंख्या भी जोड़ दी जावे जो पाकिस्तान में सम्मिलित कर दिया गया है तो कुल पूर्वी पाकिस्तान की जनसंख्या ४ करोड़ १८ लाख है।

पाकिस्तान की सीमा

१९४१ में पंजाब की कुल जनसंख्या २ करोड़ ८४ लाख थी। विभाजन के कारण ५६% जनसंख्या अर्थात् १ करोड़ ५९ लाख जनसंख्या पाकिस्तान में चली गई शेष १ करोड़ २५ लाख पूर्वी पंजाब अर्थात् भारत में रह गई। किन्तु १५ अगस्त के उपरान्त पश्चिमी पंजाब में मनुष्यता को लज्जित करने वाला पाशविक हत्याकांड हुआ। उसके फल स्वरूप जो ५६ लाख हिन्दू सिक्ख पश्चिमी पाकिस्तान में थे उनमें से अधिकांश भारत चले आये यद्यपि पूर्वी पंजाब से भी कई लाख

मुसलमान भाग कर पाकिस्तान चले गए हैं। पूर्वी पाकिस्तान में जो एक करोड़ २१ लाख हिन्दू हैं उनमें से बहुत कम संख्या में पश्चिमी बंगाल में आये हैं।

१९४१ के अनुसार कुल पाकिस्तान की जनसंख्या ६ करोड़ ५६ लाख है और वर्तमान भारत की जनसंख्या लगभग ३५ करोड़ है। १९४१ में कुल भारत की जनसंख्या ३८,८६,९७,९५५ थी। इस प्रकार पाकिस्तान की जनसंख्या वर्तमान भारत की जनसंख्या का छठवाँ भाग है।

पाकिस्तान के भिन्न-भिन्न प्रान्तों की जनसंख्या १९४१ के आधार पर

पश्चिमी पाकिस्तान - करोड़ ३८ लाख

पश्चिमी पंजाब	१ करोड़ ५६ लाख
सिंध	४५ लाख ३५ हजार
सीमाप्रान्त	३० लाख ३८ हजार
बलूचिस्तान	५ लाख से कम
पूर्वी पाकिस्तान	४ करोड़ १८ लाख

यह तो हम ऊपर ही कह आये हैं कि पश्चिमी पाकिस्तान में ५६ लाख हिन्दू और सिक्ख रहते थे उनमें से अधिकांश भारत चले आए हैं।

वनसम्पत्ति (Forest wealth)

वन सम्पत्ति की दृष्टि से पाकिस्तान अत्यन्त निर्धन देश है। भारत के वन प्रदेश जिनमें बहुमूल्य लकड़ी तथा अन्य वन सम्पत्ति मिलती है या तो हिमालय प्रदेश में है अथवा दक्षिण भारत में है। पाकिस्तान में जो भाग हैं उनमें वन प्रदेश है ही नहीं। सीमा प्रान्त, बलूचिस्तान, सिंध और पश्चिमी पंजाब अत्यन्त सूखे प्रदेश हैं। वहाँ नाम मात्र को भी वन नहीं हैं। पूर्वी बंगाल में भी हिमालय का कोई भाग नहीं आता। अस्तु जहाँ तक वन सम्पत्ति का प्रश्न है पाकिस्तान अत्यन्त निर्धन है। अस्तु वे धंधे जो वन सम्पत्ति पर निर्भर हैं पाकिस्तान में खड़े नहीं किए जा सकते। केवल पूर्वी पाकिस्तान में बाँस इत्यादि के वन हैं।

खनिज पदार्थ (Minerals)

खनिज पदार्थों की दृष्टि से भी पाकिस्तान संसार के अत्यन्त निर्धन राष्ट्रों में है। पाकिस्तान के किसी भी भाग में लोहा तनिक भी नहीं पाया जाता। यही नहीं कि पाकिस्तान में लोहा इस समय निकाला नहीं जाता वरन लोहा पाकिस्तान में कहीं पाया ही

नहीं जाता। मैंगनीज (Manganese), मेगनेसाइट (Magnesite), अबरख (Mica), ताँबा, बाक्साइट (Bauxite), सीसा (Lead), सोना इत्यादि मुख्य धातुएँ तो नाम मात्र को भी नहीं पाई जातीं।

समस्त भारत में जितना कोयला पाया जाता है उसका ६८.१३ कोयला पश्चिमी बंगाल, बिहार, तथा गोंडवाना में पाया जाता है जो भारत में है। केवल १% कोयला पश्चिमी पंजाब और बलूचिस्तान में पाया जाता है। यह थोड़ा सा जो नाम मात्र का कोयला पाकिस्तान में पाया जाता है इतना घटिया है कि वह अधिक उपयोगी नहीं है।

पैट्रोलियम

भारत पैट्रोलियम की दृष्टि से निर्धन है। परन्तु जो कुछ पैट्रोलियम निकलता है वह मुख्यत आसाम के लखीमपुर ज़िले की डिग्बोई के कुओं से निकलता है, जो भारत में है। पाकिस्तान में केवल नाम मात्र को पैट्रोलियम अटक के क्षेत्र से निकलता है। पाकिस्तान के तैल क्षेत्र क्रमश सूख रहे हैं।

क्रोमाइट (Chromite)

पाकिस्तान में केवल क्रोमाइट ही एक ऐसा खनिज पदार्थ है जो यथेष्ट है। क्रोमाइट बलूचिस्तान में पाया जाता है। बलूचिस्तान में कुछ गंधक भी पाई जाती है। किन्तु क्रोमाइट और गंधक कोई ऐसे महत्वपूर्ण खनिज पदार्थ नहीं हैं जिन पर कोई धन्धा निर्भर हो। इनके अतिरिक्त पश्चिमी पंजाब में नमक की पहाड़ियाँ (Salt Range) हैं जहाँ से सेंधा नमक या लाहौरी नमक निकाला जाता है। यही पाकिस्तान की कुछ खनिज सम्पत्ति है। ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट है कि पाकिस्तान खनिज पदार्थों की दृष्टि से अत्यन्त निर्धन राष्ट्र है।

भूमि और जलवायु

जहाँ तक भूमि का प्रश्न है पश्चिमी पाकिस्तान में सीमा प्रान्त तथा बलूचिस्तान को छोड़कर समतल मैदान हैं। हां सीमाप्रान्त तथा बलूचिस्तान में पहाड़ी प्रदेश हैं। बलूचिस्तान और सीमाप्रान्त में घाटियों से घिरे हुए मैदान हैं। जहाँ तक मिट्टी का प्रश्न है मिट्टी यहाँ की उर्वरा है परन्तु जलवायु की दृष्टि से यह भाग बहुत शुष्क है। यही कारण है कि अधिकांश पश्चिमी पाकिस्तान में मरुभूमि जैसी जलवायु है। बलूचिस्तान और सीमाप्रान्त तो मानसून के रुख के बाहर हैं इस कारण वहाँ मानसून हवायें बिलकुल वर्षा नहीं करतीं। हाँ भूमध्यसागर से उठने वाले जाड़ों में अवश्य वर्षा करते हैं। सीमाप्रान्त तथा बलूचिस्तान में ८ इंच से अधिक वर्षा नहीं होती।

सिंध में तो और भी कम वर्षा होता है। यहाँ वर्षा का औसत ५ इंच है। मानसून हवायें इस प्रान्त में पहुँचते पहुँचते इतना कमजोर हो जाती हैं कि उनमें पानी नहीं रहता और इस प्रान्त म पहाड़ियाँ न होने के कारण उन हवाओं को कोई रुकावट नहीं मिलती इस कारण सिंध म वर्षा नहीं होता। पश्चिमी पंजाब भी अत्यन्त शुष्क है। पंजाब क दक्षिण पश्चिम म सहारनपुर का राज भी अत्यन्त सूखा प्रदेश है। यह भी पाकिस्तान म सम्मिलित हो गया है। पश्चिमी पंजाब म वर्षा का औसत १०-१५ इंच तक है। अतएव पश्चिमी पाकिस्तान की जलवायु अत्यन्त शुष्क है और मरुभूमि सदृश है। हाँ पूर्वी पाकिस्तान म वर्षा बहुत अधिक होता है। वहाँ की जलवायु नम है। परन्तु पश्चिमी पाकिस्तान में वर्षा बहुत कम होती है। वहाँ नदियों से नहरों को निकाल कर सिंचाई के साधन की खूब उन्नति की गई है। सिंचाई के साधनों की दृष्टि से पश्चिमी पाकिस्तान उन्नत है और इसी कारण यद्यपि यह प्रदेश अत्यन्त शुष्क है परन्तु वहाँ खेती खूब होती है।

नहरें

सीमाप्रान्त म केवल पशावर का मैदान उपजाऊ बन गया है क्योंकि यहाँ काबुल और स्वात नदियों की नहरों से सिंचाई होती है। बलूचिस्तान म सिंचाई के साधन नहीं हैं परन्तु कारेज द्वारा सिंचाई का साधन मुख्य है। भूमि भी पथरीली है इस कारण यहाँ की भूमि खेती के लिए उपयुक्त नहीं है। हाँ पश्चिमी पंजाब तथा सिंध में नहरों के द्वारा सिंचाई के साधनों की विशेष उन्नति की गई है इस कारण यहाँ खेती की खूब उन्नति हुई है। पश्चिमी पंजाब तथा सिंध की नीचे लिखी नहरें हैं।

पंजाब की नहरें

१—पंजाब में सबसे पहली "बाड़ी दो-आब नहर" (१८६० में) रावी नदी से निकाली गई। यह नहर लाहौर और अमृतसर जिलों को सींचती है। दस वर्ष बाद जमुना से एक नहर निकाल कर दक्षिण पंजाब को पानी दिया। किन्तु इन नहरों से नई भूमि खेती के योग्य नहीं बनाई गई। नहर के निकलने के पूर्व इन जिलों में कुओं से सिंचाई होता था। नहर निकाली जाने से सिंचाई की सुविधा अवश्य हो गई।

सबसे पहले (१८८८) मुलतान जिले को पानी देने के लिए सतलज नदी से एक नहर निकाली गई जिससे १,१०,००० एकड़ मरुभूमि पर खेती होने लगी और पास के राज्यों और जिलों से किसान आकर बस गए। इसके उपरान्त (१८९२ में) लोअर चिनाब नहर निकाली गई जो पच्चीस लाख भूमि से अधिक को सींचती है। इसके उपरान्त पंजाब में बड़ी शीघ्रता से नहरें निकाली जाने लगीं सन् १९०० में "लोअर झेलम नहर" निकाली गई और उसके पानी से शाहपुर जिले के रेतीले मैदानों पर लहलहाते हुए खेत दिखाई देने लगे।

इसके उपरान्त प्रसिद्ध ट्रिपिल प्रोजेक्ट (Triple project) बनाई गई। लाहौर के दक्षिण पश्चिम में माटगोमरी की मरुभूमि पड़ी हुई थी किन्तु उसके निकट रावी नदी में उसे सींचने के लिए जल नहीं था। पंजाब में केवल झेलम नदी ही ऐसी थी जिसमें आवश्यकता से अधिक पानी था किन्तु झेलम नदी सौ मील उत्तर में थी और बीच में चिनाव और रावी नदियाँ पड़ती थीं। अतएव समस्या यह था कि झेलम का पानी चिनाव और रावी नदियों को पार करके माटगोमरी में किस तरह लाया जाय। इसका हल करने के लिए तीन नहरें निकाली गई (१) "अपर झेलम नहर" जो झेलम का फिजूल पानी चिनाव में डाल देती है और रास्ते में ३५०,००० एकड़ भूमि सींचती है। झेलम के पानी से चिनाव में आवश्यकता से अधिक पानी हो जाता था। अतएव दूसरा नहर "अपर चिनाव नहर" निकाली गई जो रास्ते में गुजरात वाला, तथा शेखूपुर जिलों में साढ़े ६ लाख एकड़ भूमि को सींचती है। अन्त में यह नहर रावी पर एक पुल बनाकर उसके ऊपर से निकाली गई है। एक तीसरी नहर 'बारी दो आब नहर' इस नहर के पानी को ले जाकर मांटगोमरी को सींचती है। इस नहर के द्वारा सींची हुई मरुभूमि पर अब "लोअर बारी दो आब नहर" बस गई है।

इन नहरों के द्वारा सींची हुई भूमि पर तीन बड़ी (लायलपुर, शाहपुर, और माटगोमरी) कालोनी जिनका क्षेत्रफल ४५ लाख एकड़ है बसाई गई हैं। इनके अतिरिक्त ६ छोटी कालोनियाँ जिनका क्षेत्रफल पचास हजार एकड़ है और बसाई गई। सरकार ने इन नहरों के निकालने में जितना रुपया व्यय किया है उस पर २५ प्रतिशत प्रतिवर्ष सरकार को लाभ होता है।

इन नहरों के निकालने से पंजाब के पश्चिमी जिले जो पहले वीरान थे, अब बहुत उपजाऊ हो गए हैं। किसानों की हालत पहले से बहुत अच्छी है। पूर्व के घने आबाद जिलों से आकर किसान यहाँ बस गए हैं। इन नहरों के कारण ही पंजाब में इतनी अधिक गेहूँ की खेती होती है।

पंजाब के दक्षिण में सतलज नदी बहती है। उसके दोनों ओर ब्रिटिश राज्य तथा बहावलपूर में बरसाती नहरों से सिंचाई होती थी। बरसाती सतलज की नहरें नहरों से केवल उन्हीं दिनों सिंचाई होती थी जब नदी में बाढ़ आती थी किन्तु शेष महीनों में नहरें सूखी रहती थीं। इस समस्या को हल करने के लिए सतलज से स्थायी नहरें निकाली गईं। इन नहरों के निकल जाने से मरुभूमि उपजाऊ बन गई है। वीरान तथा शुष्क प्रदेश में लहलहाती खेती दिखाई देती है।

सतलज नदी पर चार स्थानों (फीरोजपुर, सुलेमान इसलाम, और पंजनद) पर बाँध बनाकर पानी को रोक दिया गया है और इन बाँधों से नदी के दोनों ओर ग्यारह नहरें निकाली गईं। इन नहरों से पचास लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती है। इसमें बीस लाख एकड़ भूमि पंजाब में २७ लाख एकड़ से अधिक बहावलपुर
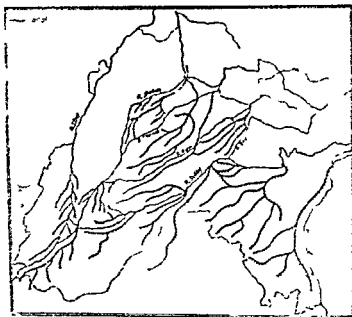
सतलज की नहरें

राज्य में, तथा शेष बीकानेर में सींची जाती है। इन नहरों से एक बहुत बड़ा लाभ यह हुआ है कि लगभग चैंतालीस लाख एकड़ मरुभूमि जिस पर पहले तनिक भी पैदावार नहीं होती थी अब उपजाऊ भूमि बन गई है। इन नहरों के बनाने में २४ करोड़ रुपये से अधिक व्यय हुआ है।

पंजाब में जितनी भूमि पर खेती होती है उसकी एक तिहाई भूमि नहरों के द्वारा सींची जाती है। सतलज की नहरें पंजाब में सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण हैं पंजाब में नहरों द्वारा सींची जाने वाली भूमि की एक चौथियाई भूमि सतलज की नहरों से सींची जाती है। सींची हुई भूमि पर गेहूँ और कपास की पैदावार अधिक होती है। कुछ चावल भी होता है। यद्यपि पंजाब में खेती नहरों पर ही निर्भर है किन्तु वहाँ कुओं से भी सिंचाई होती है। हाँ, पश्चिमी जिलों में कुयें कम हैं।

सिन्ध पाकिस्तान का सबसे अधिक सूखा प्रान्त है। सिन्ध नदी से बाढ़ वाली नहरें आस, पास की भूमि को सींचती थीं। बहुत से वर्षों

सिंध की नहरें से सिन्ध नदी के पानी को सिन्ध प्रान्त को सींचने के काम में लाने की बात सोची जा रही थी। परन्तु सिंध नदी को रोकने के लिए बाँध बनाने के लिए कहीं चट्टान वाली जमीन नहीं मिलती थी। अन्त में

सिन्ध की नहरें

इन्जिनियरों ने रेतीली भूमि पर ही सक्खर के पास एक विशाल बाँध बना कर नदी को रोक दिया। इस विशाल बाँध के बन जाने से सिंध नदी एक विशाल झील में

रूप में परिणत हो गई है। इस बाँध में ६६ दरवाजे हैं जिनमें स्पात के मजबूत फाटक लगाये गये हैं। इन फाटकों से नदी का पानी रोका जाता है और जब पानी जरूरत से ज्यादा होता है तब पानी नदी में जाने दिया जाता है।

सक्खर के बाँध से ७ नहरें निकाली गई हैं। तीन दाहिने किनारे से और चार बायें किनारे से। इन सातों नहरों तथा उनकी शाखाओं की लम्बाई ७००० मील है। इन नहरों में "रोहरी" नहर सबसे बड़ी है, इसकी लम्बाई २०० मील है और इसकी शाखाओं की लम्बाई २३०० बाय किनारे से रोहरी नहर तथा अन्य दो नहरें गैरपुर राज्य को सींचती हैं। "नीरा" नहर जो रोहरी नहर से पानी लेती है सुदूर जिलों को सींचती है। दाहिने किनारे पर उत्तर पश्चिमी नहर १०० मील लम्बी है। इसकी शाखाओं की लम्बाई ५०० मील है। यह उत्तर पश्चिमी सिंध को सींचती है। मध्य चावल की नहर (Central Rice Canal) ८७ मील लम्बी है। यह केवल वर्ष में पाँच महीने बहती है, किन्तु अपनी शाखों सहित ४६६००० एकड़ चावल की फसल को सींचेगी। जब इस प्रदेश में खेती का विस्तार होगा तो यह बहुत चावल उत्पन्न करेगी। दक्षिण पूर्वी नहर चावल के क्षेत्र दक्षिण पूर्व में पाँच लाख एकड़ भूमि सींचेगी। जब सक्खर बाँध की नहरों के पानी का पूरा पूरा उपयोग होने लगेगा तो इन नहरों के द्वारा ६० लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होगी। इस दशा में ८२३००० एकड़ पर चावल, १७३६००० एकड़ पर कपास तथा ज्वार, और ३३१८००० एकड़ भूमि पर गेहूँ और तिलहन उत्पन्न होगा। सक्खर बाँध की नहरों का महत्व तो इसी से प्रकट होता है कि नील नदी के द्वारा ईजीप्ट में केवल ५४ लाख एकड़ भूमि ही सींची जाती है।

सक्खर बाँध की नहरों का अभी पूरा विस्तार नहीं हो पाया है। इस कारण अपेक्षाकृत बहुत कम भूमि पर खेती होती है। अभी तक सिंध में बाढ़ वाली नहरों के आस पास ही खेती होती थी। जैसे-जैसे नहरों का विस्तार होता जायगा वैसे ही वैसे खेती भी बढ़ती जायेगी।

इन नहरों की एक विशेषता यह है कि इनकी शाखाएँ और बम्बे कम हैं। इसके दो कारण हैं—एक तो खेती यहाँ फैली हुई नहीं है, दूसरे सिंध की भयंकर गरमी तथा रेतीली भूमि पानी को बहुत दूर तक बहने नहीं देती।

अस्तु जहाँ तक सिंचाई के साधनों का *प्रश्न है पश्चिमी पाकिस्तान में उत्तम* सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं। सिंचाई के साधनों की दृष्टि से पाकिस्तान की स्थिति अच्छी है।

पाकिस्तान में २ करोड़ एकड़ भूमि सींची जाती है। पाकिस्तान में जितनी भी
भूमि पर खेती होती है उसकी ३६ प्रतिशत भूमि की सिंचाई होती है। जबकि
भारत में जोती जाने वाली भूमि का १८ प्रतिशत भूमि पर ही सिंचाई होती है।
कृषि की दृष्टि से पाकिस्तान की स्थिति अच्छी है। भारत में कुल जोती
जाने वाली भूमि का क्षेत्रफल २० करोड़ ६० लाख एकड़ है
कृषि तथा पैदावार इसमें से ४ करोड़ १८ लाख एकड़ पाकिस्तान में है। इसका
अर्थ यह हुआ कि कुल जोती जाने वाली भूमि की २०
प्रतिशत भूमि पाकिस्तान में है जबकि पाकिस्तान की जनसंख्या कुल भारत की
जनसंख्या को १५ प्रतिशत से कम है और पाकिस्तान का कुल क्षेत्रफल कुल भारत
के क्षेत्रफल का केवल १७ प्रतिशत है। क्षेत्रफल तथा संख्या को देखते हुए
पाकिस्तान के पास जोती जाने वाली भूमि का अपेक्षाकृत अधिक भाग पहुँच
गया है।

जहाँ तक मुख्य फसलों का प्रश्न है पाकिस्तान की स्थिति भारत की तुलना
में अच्छी है। भारत में जितनी भूमि पर चावल उत्पन्न होता है। उसकी २६·२७
भूमि पाकिस्तान में चली गई। पूर्वी पाकिस्तान में चावल अधिक होता है उसके
अतिरिक्त पश्चिमी पंजाब और सिंध में भी नहरों के प्रदेश में चावल उत्पन्न होता
है। गेहूँ उत्पन्न करने वाली २५ प्रतिशत भूमि पाकिस्तान में चली गई है।
पश्चिमी पंजाब के नहर प्रदेश तथा सक्खर बाँध के द्वारा सींचे जाने वाले सिंध
प्रान्त में मुख्यतः गेहूँ उत्पन्न होता है।

पाकिस्तान में गन्ना उत्पन्न करने वाली भूमि, उसके क्षेत्रफल तथा जनसंख्या
की तुलना में कम है। अर्थात् वहाँ केवल १५·४१ प्रतिशत गन्ने की भूमि है और
वह भी केवल पूर्वी बंगाल में है। जहाँ तक तिलहन का प्रश्न है पाकिस्तान का
हिस्सा उसके क्षेत्रफल तथा जनसंख्या को देखते कम है।

जूट, कपास और ऊन की दृष्टि से पाकिस्तान की स्थिति अच्छी है। पाकि-
स्तान में कुल जूट की उत्पत्ति का लगभग ७२ प्रतिशत जूट उत्पन्न होता है।
जहाँ तक कपास का प्रश्न है पाकिस्तान में कपास उत्पन्न करने वाली कुल भूमि
की केवल १३ प्रतिशत भूमि है। परन्तु वहाँ की कपास की विशेषता यह है कि
वहाँ लम्बे फूल वाली बढ़िया अमेरिकन जाति की कपास उत्पन्न होती है। जूट
पूर्वी पाकिस्तान में और कपास पश्चिमी पंजाब तथा सिंध में उत्पन्न होती है। इस
सम्बन्ध में यह बात ध्यान में रखने का है कि पाकिस्तान में एक भी जूट मिल नहीं
है और सूती कपड़े की भी बहुत थोड़ी फैक्टरियाँ हैं। सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान और

किन्तु औद्योगिक उन्नति के लिए पूंजी (Capital) की बहुत अधिक आवश्यकता होगी। पाकिस्तान में पहले ही पूंजी नहीं थी।

पूँजी की कमी

विभाजन के उपरान्त हिन्दू और सिक्ख व्यवसायी और पूंजीपति पाकिस्तान छोड़ कर भारत चले आये। अतः पूंजी और व्यावसायिक बुद्धि की दृष्टि से पाकिस्तान पिछड़ा हुआ है। जल विद्युत उत्पन्न करने तथा कारखानों की स्थापना करने के लिए उसे विदेशों से ऋण लेना होगा और इस प्रकार उसके ऊपर पूंजीपति राष्ट्रों का प्रभाव बढ़ जायेगा। यही नहीं पाकिस्तान में कुशल कारीगरों इंजिनियरों का भी बहुत कमी है। सारांश पाकिस्तान एक निर्धन खेतिहर राष्ट्र के रूप में रहेगा।

गमनागमन के साधनों की दृष्टि से भी पाकिस्तान अत्यन्त असमर्थ है। पाकिस्तान में केवल ६७४८ मील रेलवे लाइन है और उसमें भी बंगाल आसाम रेलवे तथा एन डब्लू० आर० रेलवे हैं जिनमें वर्षों में हानि हो रही है। सड़कें भी पाकिस्तान में बहुत कम हैं। पाकिस्तान में केवल दो बन्दरगाह हैं कराँची और चिटागाँव किन्तु कराँची को छोड़कर और कोई महत्वपूर्ण बन्दरगाह पाकिस्तान में नहीं है। पाकिस्तान के दो भाग पूर्वीय और पश्चिमीय एक दूसरे से इतनी दूर हैं कि उनका एक दूसरे से आर्थिक और व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होने में कठिनाई होगी।

गमनागमन के साधन और बन्दरगाह

पाकिस्तान की रेलें

पाकिस्तान में कुल ६७४८ मील रेलवे लाइन हैं जो सम्मिलित भारत की रेलवे की लम्बाई का २० प्रतिशत है। इसमें नार्थ वेस्ट रेलवे जोधपुर हैदराबाद रेलवे, तथा बंगाल आसाम रेलवे के भाग हैं। इन रेलवे लाइनों के जो हिस्से पाकिस्तान क्षेत्र में पड़ते हैं वे पाकिस्तान में चले गए।

पाकिस्तान का व्यापार

भारत में गेहूँ की कमी है जबकि पाकिस्तान में गेहूँ की कुछ अधिकता है अस्तु पाकिस्तान पाँच लाख टन के लगभग गेहूँ साधारणतः भारत को दे सकता है। भारत पाकिस्तान से ४० लाख गाँठ जूट खरीदेगा। भारत को प्रतिवर्ष १५ लाख गाँठ लम्बी रेशे वाली कपास चाहिये जो विदेशों से मँगाना होगी। पाकिस्तान उसे ८ लाख गाँठ लम्बी रेशे वाला कपास दे सकता है। पाकिस्तान को साधारणतः भारत से ५० करोड़ गज कपड़ा मँगाना होगा। इसी प्रकार पाकिस्तान को ३७ करोड़ पौंड शक्कर भी मँगानी होगी। पाकिस्तान को ३० लाख टन कोयला भी

पूँजी की कमी

किन्तु औद्योगिक उन्नति के लिए पूँजी (Capital) की बहुत अधिक आवश्यकता होगी। पाकिस्तान में पहले ही पूँजी नहीं थी। विभाजन के उपरान्त हिन्दू और सिक्ख व्यवसायी और पूँजीपति पाकिस्तान छोड़ कर भारत चले आये। अतएव पूँजी और व्यावसायिक बुद्धि की दृष्टि से पाकिस्तान पिछड़ा हुआ है। जल विद्युत उत्पन्न करने तथा कारखानों की स्थापना करने के लिए उसे विदेशों से ऋण लेना होगा और इस प्रकार उसके ऊपर पूँजीपति राष्ट्रों का प्रभाव बढ़ जायेगा। यही नहीं पाकिस्तान में कुशल कारीगरों इन्जिनियरों की भी बहुत कमी है। सारांश पाकिस्तान एक निर्धन पिछड़ा राष्ट्र के रूप में रहेगा।

गमनागमन के साधन और बन्दरगाह

गमनागमन के साधनों की दृष्टि से भी पाकिस्तान अत्यन्त असन्तुष्ट है। पाकिस्तान में केवल ६७४८ मील रेलवे लाइन है और उसमें भी बंगाल आसाम रेलवे तथा एन डब्लू० आर० रेलवे हैं जिनमें वर्ष में हानि होती है। सड़क भी पाकिस्तान में बहुत कम हैं। पाकिस्तान में केवल दो बन्दरगाह हैं करांची और चिटागाँव किन्तु करांची को छोड़कर और कोई महत्वपूर्ण बन्दरगाह पाकिस्तान में नहीं है। पाकिस्तान के दो भाग पूर्वीय और पश्चिमीय एक दूसरे से इतनी दूर हैं कि उनको एक दूसरे से आर्थिक और व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होने में कठिनाई होगी।

पाकिस्तान की रेलें

पाकिस्तान में कुल ६७४८ मील रेलवे लाइन हैं जो सम्मिलित भारत की रेलवे की लम्बाई की २० प्रतिशत हैं। इसमें नार्थ वेस्टर्न रेलवे, जोधपुर हैदराबाद रेलवे, तथा बंगाल आसाम रेलवे के भाग हैं। इन रेलवे लाइनों के जो हिस्से पाकिस्तान क्षेत्र में पड़ते हैं वे पाकिस्तान में चले गए।

पाकिस्तान का व्यापार

भारत में गेहूँ की कमी है जबकि पाकिस्तान में गेहूँ की कुछ अधिकता है अस्तु पाकिस्तान पाँच लाख टन के लगभग गेहूँ साधारणतः भारत को दे सकता है। भारत पाकिस्तान से ४० लाख गाँठ जूट खरीदेगा। भारत को प्रतिवर्ष १५ लाख गाँठ लम्बे रेशे वाली कपास चाहिये जो विदेशों से मँगाना होगी। पाकिस्तान उसे ८ लाख गाँठ लम्बे रेशे वाली कपास दे सकता है। पाकिस्तान को साधारणतः भारत से ५० करोड़ गज कपड़ा मँगाना होगा। इसी प्रकार पाकिस्तान को ३७ करोड़ पौंड शक्कर भी मँगानी होगी। पाकिस्तान को ३० लाख टन कोयला भी